[illegible]

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय

विषय संख्या १०५ / २८(३)
पुस्तक संख्या
आगत पञ्जिका संख्या ५४,७६२

पुस्तक पर किसी प्रकार का निशान लगाना वर्जित है। कृपया १५ दिन से अधिक समय तक पुस्तक अपने पास न रखें।

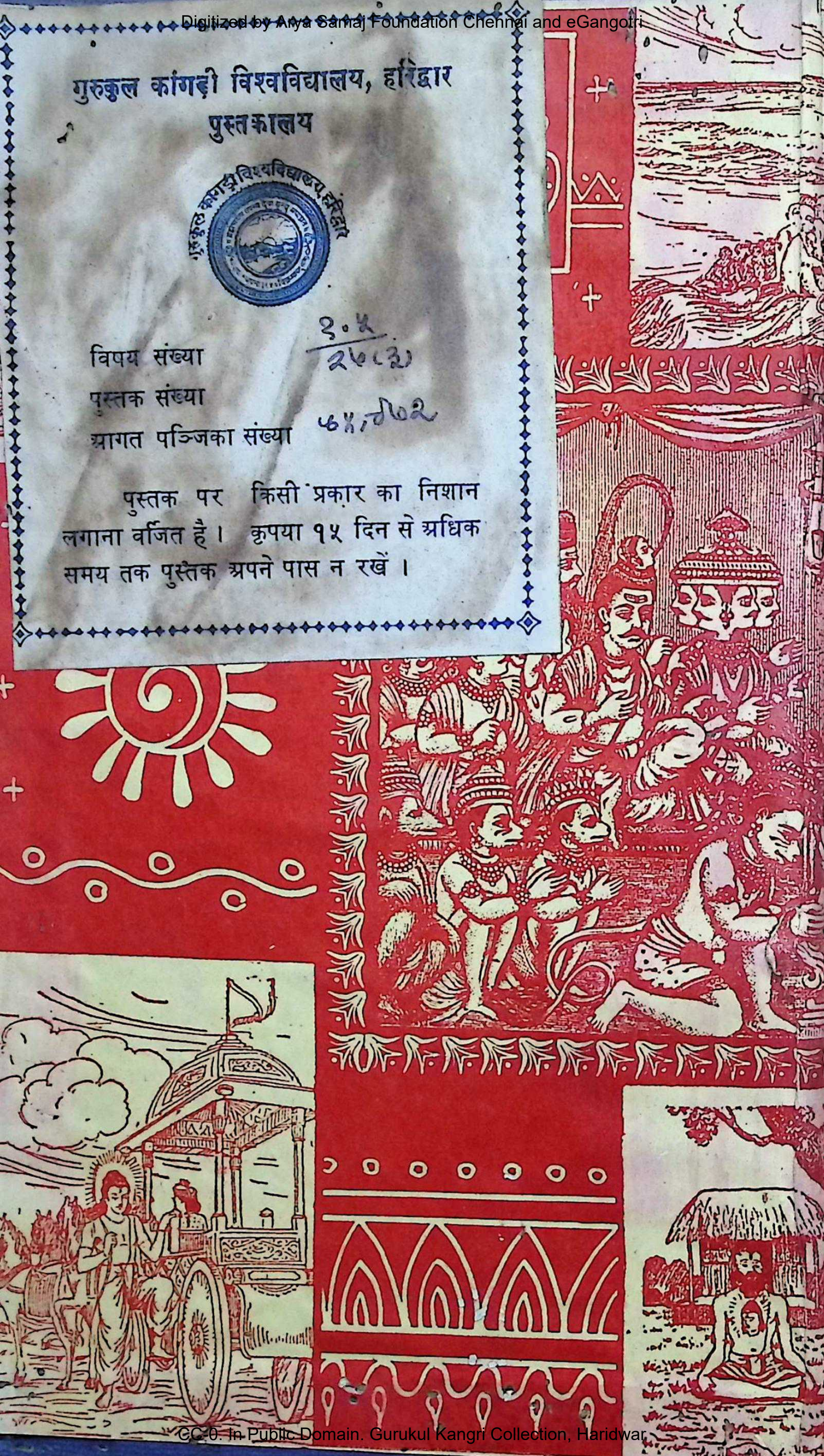

४५,७६२

॥ श्रीः ॥

काशी संस्कृत ग्रन्थमाला

१६८

45972

वाल्मीकिरामायणकोशः

(वाल्मीकिरामायणस्य नाम्नां विषयाणां च
व्याख्यात्मिका अनुक्रमणिका)

CHECKED 1973

रामकुमाररायः

सन्दर्भ ग्रन्थ
REFRENCE BOOK

यह पुस्तक वितरित न की जाय
NOT TO BE ISSUED

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-१

१९६५

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-१
मुद्रक : विद्याविलास प्रेस, वाराणसी-१
संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०२१
मूल्य : २०-००

१.५
२६(३)
४५,७६२
गुरुकुल ग्रन्थालय काँगड़ी

© Chowkhamba Sanskrit Series Office,
P. O. Box 8, Varanasi.
(INDIA)
Phone : 3145

THE

KASHI SANSKRIT SERIES

168

*****

VĀLMĪKI-RĀMĀYAṆA KOSHA

(Descriptive Index to the Names and Subjects
of Rāmāyaṇa)

Stock Verification-2024

BY

RAMKUMAR RAI

Stock Verification-2024
Stock Verification-2024

THE
CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
Post Box 8. Varanasi-1 (India) Phone : 3145.
1965

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः
卐 पुस्तक सं. 卐
आगत सं.
दिनांक
गुरुकुल पुस्तकालय काँगड़ी

लेखक

श्रीलश्रीजम्मू-कश्मीरराज्याधिपति

महामहिम श्रीकर्णसिंह जी सदरेरियासत

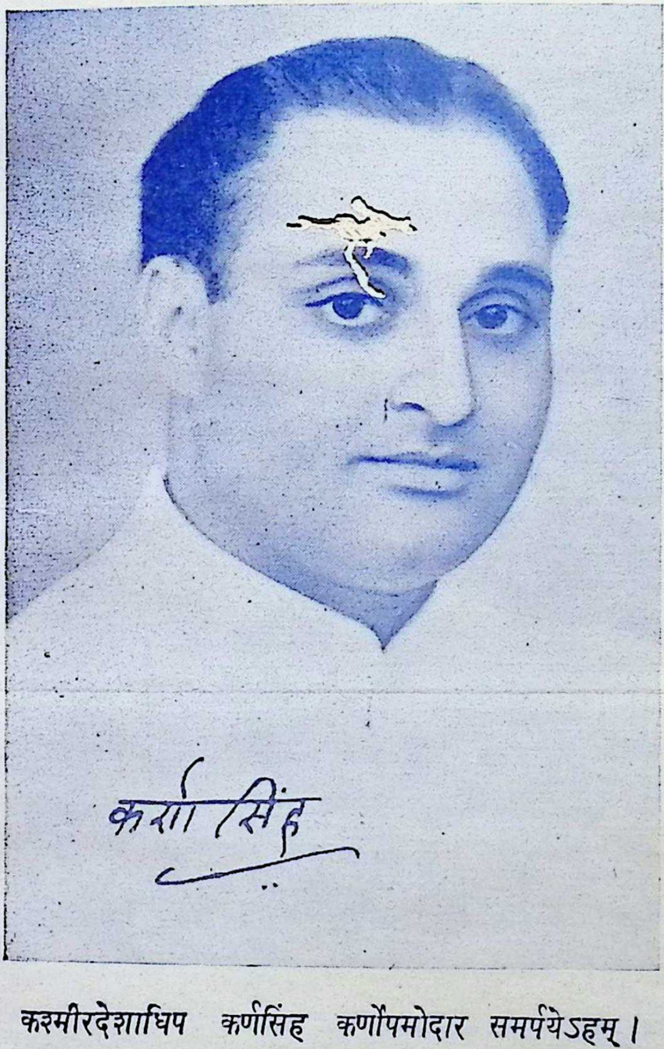

कर्ण सिंह

कश्मीरदेशाधिप कर्णसिंह कर्णोपमोदार समर्पयेऽहम् ।
वाल्मीकिरामायणशब्दकोषं निर्माय ते रामकुमाररायः ॥
वाग्वैभवं वीक्ष्य समुल्लसन्तं नहि त्वदन्यं परिलक्षयेऽतः ।
सरस्वतीभूपतिना त्वयैतद् धार्ष्ट्यं मदीयं ननु मर्षणीयम् ॥

प्राक्कथनम्

संस्कृतवाङ्मयस्य विस्तरः, तस्य च विविधानामङ्गानामुपाङ्गानां च स्वकीयं वैशिष्ट्यम् (अस्य वैशिष्ट्यस्य क्लिष्टता दुरूहता च केवलम् एकः पक्षो वर्त्तते) तथा प्रायशः ग्रन्थानां केवलं मूलरूपेणोपलब्धिः कस्यचनापि शोधनकर्त्तुः कार्यं निरतिशयं जटिलं सम्पादयति, यतो भारत्या नानाविधेषु क्षेत्रेषु तदनुसन्धानकर्त्तारः संस्कृतभाषातोऽपि परिचिता भवेयुरिति तु न, एवंविधकाठिन्यस्य निवारणार्थम् एकतो यत्र मूलग्रन्थानां हिन्दीभाषानुवादस्यावश्यकताऽस्ति, तत्रैव परतः प्रमुखग्रन्थानामेवंविधानां व्याख्यात्मककोशानामपि, यत्र कस्यचन ग्रन्थविशेषस्य निखिलसामग्र्याः सारांशस्तथा पूर्णसन्दर्भसंकेतोऽपि समुपलब्धो भवेत्।

ईदृशाः कोशा न केवलं तेषां कृते एव उपयोगिनः सन्ति, येषां संस्कृतसम्बन्धिभाषाज्ञानं नास्ति, अपि तु, तानपि निरर्थकश्रमतो दूरीकृत्य लाभान्वितान् कुर्वन्ति, ये संस्कृतभाषातः पूर्णरूपेण परिचिताः सन्ति। अतोऽस्यां दिशि किञ्चित् कार्यं कर्त्तुकामेन मया 'महाभारत-कोशस्य' निर्माणकार्यं प्रारब्धम्, तस्य च प्रथमो भागः पाठकानां

सेवार्थं पुरैव प्रस्तूय समुपस्थापितोऽपि। यदाऽदः कार्यं कुर्वन्नासं तदाऽयं विचारोऽपि मनसि प्रादुर्भूतः, यद्, वाल्मीकिरामायणमन्तरेण नहि मदीयस्य महाकाव्यसाहित्यस्य कार्यं पूर्णं स्याद् अनेनैवोद्देश्येन सहैव प्रस्तुतस्यास्य कोशस्यापि यत् निर्माणकार्यं कुर्वन्नासम्, तदेवाधुना सुसम्पन्नं भूत्वा प्रस्तुतं वर्त्तते। यद्यप्याभ्यामुभाभ्यां कोशाभ्यामेकस्या न्यूनतायाः परिमार्जना परिपूर्णा जाता, सम्भवतोऽत्र मदल्पज्ञताजन्यास्त्रुट्यः किं वा न्यूनता भवितुमर्हेयुः, तथापि अधुनाऽपि एकं महत्त्वपूर्णं क्षेत्रं, पुराणसाहित्यमपि बह्वंशतः असंस्पृष्टमेव वर्त्तते। अतः परमहं समेषामष्टादशपुराणानामपि ईदृग्विधकोशनिर्माणकार्यं सम्पादयेयम् यत् शीघ्रमेव सुसम्पन्नम् सद् भवतां पुरः समुपस्थापितं स्यात्।

वाल्मीकिरामायणस्य कोशनिर्माणे महाभारतापेक्षया एकं विशेषतः काठिन्यं वर्तते यत् सम्पूर्णोऽयं ग्रन्थः भगवतः श्रीरामचन्द्रस्येतिवृत्तेन सह सम्बद्धोऽस्ति, अपि च यान्यप्यन्यानि पात्राण्यत्र सन्ति, तानि सर्वाणि श्रीरामस्य क्रियाकलापस्य पूरकाणि तथा सहायकमात्राण्येव सन्ति। फलस्वरूपेण श्रीरामस्य नाम ग्रन्थेऽस्मिन् प्रायशः सर्वत्र विद्यते। तदनु लक्ष्मणोऽपि ऐहिकलीलायां प्रायः सदैव श्रीरामस्य सहचारिरूपेण दृश्यते। श्रीरामो यत्रैव याति, यथा; विश्वामित्रेण सह किं वा वने, तत्रैव लक्ष्मणश्छायासदृशस्तत्सहचर एव। अतः श्रीरामलक्ष्मणयोर्नाम्नोरावृत्तेः पूर्णनिर्देशः, यत्र प्रायः संपूर्णग्रन्थोद्धृतितुल्यं स्यात्, तत्रैव ततः कश्चन लाभो नासीत् एतदर्थमेव मया अनयोर्द्वयोर्नाम्नोरन्तर्गताः, तत्संबद्धाः मुख्य-मुख्याः घटना एव गृहीताः, अपि च, यत्र च कश्चन सर्गः केनचन एकेन द्वाभ्यां वा पूर्णतः संबद्धो वर्त्तते तत्र पूर्णसर्गस्य सारांशं निर्दिश्य तत्संख्यायाः समुल्लेखः कृतः, एवं रीत्या सीताऽपि विवाहादारभ्य रावणद्वारा अपहृतिपर्यन्तं सदैव श्रीरामेण सह वर्त्तमाना विद्यते। अतः अस्या नाम्नोऽन्तर्गता अप्येव

तत्सर्गाणां सर्गांशानां वा सारांशप्रदानपुरःसरं तत्संख्याया अपि निर्देशः कृतोऽत्र। एवंविधायाः प्रणाल्या आश्रयग्रहणमेतदर्थमप्यावश्यकमासीत्। यत्, अनेके सर्गाः प्रायशः पूर्णत एतत्संबद्धायाः कस्याश्चनैकस्या घटनाया उल्लेखं कुर्वन्ति, यथा—सीताया अपहरणानन्तरं बहुषु सर्गेषु तत्कृते श्रीरामविलापवर्णनं वर्त्तते। एवंविधेषु सर्गेषु अन्यानि यानि नामानि प्रसङ्गवशतः समागतानि, तेषां तु तदन्तर्गतश्लोकानुसारेण उल्लेखः सन्दर्भसंकेतश्च प्रदत्तौ, किन्तु श्रीरामस्य अन्तर्गतः केवलं तद्विलापस्यैवोल्लेखः कृतः, लक्ष्मणस्य सीतायाश्च कृतेऽपि अस्या एव पद्धत्या अनुसरणं कृतम्।

प्रस्तुतस्य कोशस्य कृते मुख्यरूपेण 'चौखम्बा विद्याभवन-वाराणसी' संबद्धं संस्करणमाधारीकृतमस्ति, यद्यपि, 'गीताप्रेस' संबद्धं संस्करणमपि पुरः स्थापितमस्ति। यत्रोभयोः संस्करणयोः परस्परं वैभिन्न्यं वर्तते, अथवा यदि कश्चन श्लोकः केवलं 'गीताप्रेस' संबद्धे संस्करणे एव उल्लिखितो वर्त्तते, तत्र तदनुसारेण निर्देशः कृतो विद्यते।

कोशस्य मूलविषयसमाप्त्यनन्तरं परिशिष्टत्रयमपि दत्तम्, यत्र क्रमशः वाल्मीकिरामायणे समुल्लिखितानां पशूनां पक्षिणां च, तरूणां वीरुधाञ्च, अस्त्राणां शस्त्राणाञ्च नामानि तथा तेषामेकैकशः सन्दर्भाणां संकेता अपि प्रदत्ताः सन्ति।

ग्रन्थे मुद्रणसंबन्धिन्यः काश्चन साधारण्यस्त्रुटितत्यः सन्ति, यासां कृतेऽहं पाठकान् प्रति क्षमां प्रार्थये। ग्रन्थस्य शीघ्रप्रकाशनं तथा सर्वतोभावेन सौन्दर्यदृष्ट्योत्कृष्टतां विधाय प्रस्तुतं कर्तुं 'चौखम्बा संस्कृत सीरीज' सञ्चालकगणः सविशेषधन्यवादपात्रतामर्हति। अहं यत् किमपि कार्यं कर्त्तुमशकम्, तद् अधिकांशतः उक्तसंचालकगणस्य निर्बाधसहयोगस्यैव परिणामः।

जम्मू-कश्मीरराज्यस्य 'सदरे-रियासत' पदवीधारिभिः श्रीमद्भिर्महाराजकर्णसिंहमहोदयैरमुं ग्रन्थं स्वस्मै समर्पितं कर्त्तुमनुमतिं प्रदाय मह्यं यदादरप्रदानं कृतं तत्कृतेऽहं तथा ग्रन्थप्रकाशक उभावप्याजीवनमनुगृहीतौ भवेव। इति शम्।

रामकुमार रायः

प्राक्कथन

संस्कृत वाङ्मय का विस्तार, उसके विविध अङ्गों-उपाङ्गों की अपनी विशिष्टता—क्लिष्टता और दुरूहता इस विशिष्टता का केवल एक पक्ष है,—तथा अधिकांश ग्रन्थों का केवल मूलरूप में ही उपलब्ध होना, किसी भी शोधकर्त्ता का कार्य अत्यन्त जटिल बना देते हैं क्योंकि भारती के विभिन्न क्षेत्रों के अनुसन्धानकर्त्ता संस्कृत भाषा से भी परिचित हों ऐसी बात नहीं। इस कठिनाई को दूर करने के लिये एक ओर जहाँ मूलग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता है, वहीं दूसरी ओर, प्रमुख ग्रन्थों के ऐसे व्याख्यात्मक कोशों की भी, जिनमें किसी ग्रन्थ विशेष की समस्त सामग्री का सारांश तथा पूर्ण सन्दर्भ-संकेत उपलब्ध हो। ऐसे कोश न केवल उन लोगों के लिये ही उपयोगी हैं जिन्हें संस्कृत का भाषा-ज्ञान नहीं वरन् उन लोगों को भी अनावश्यक श्रम से बचाकर लाभान्वित करते हैं जो संस्कृत से भली-भाँति परिचित हैं। अतः इस दिशा में कुछ कार्य करने की दृष्टि से मैंने 'महाभारत कोश' का निर्माण आरम्भ किया और उसका प्रथम भाग पाठकों की सेवा में प्रस्तुत भी कर चुका हूँ। जब वह कार्य कर रहा था तभी यह विचार भी मन में उठा कि बिना 'वाल्मीकिरामायणकोश' के हमारे महाकाव्य-साहित्य का कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। इसी उद्देश्य से साथ ही साथ यह कोश भी बनाता रहा जो अब पूर्ण होकर प्रस्तुत हो रहा है। यद्यपि इन दो कोशों से एक कमी तो पूरी हो रही है—मेरी अल्पज्ञताजन्य त्रुटियाँ या कमियाँ इनमें हो सकती हैं—तथापि एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र, पुराण-

साहित्य, अभी भी बहुत सीमा तक अछूता है। अतः अब आगे मैं समस्त अष्टादश पुराणों के भी इसी प्रकार के कोश बना रहा हूँ जो शीघ्र ही प्रस्तुत होने लगेंगे।

वाल्मीकिरामायण के कोश-निर्माण में महाभारत की अपेक्षा एक विशेष कठिनाई है। यह सम्पूर्ण ग्रन्थ भगवान् श्रीराम के आद्योपान्त जीवन से सम्बद्ध है और जो भी अन्य पात्र इसमें हैं वे सब श्रीराम के क्रिया-कलापों के पूरक तथा सहायकमात्र हैं। फलस्वरूप श्रीराम का नाम ग्रन्थ में प्रायः सर्वत्र है। इनके बाद लक्ष्मण भी जन्म के बाद से प्रायः सदैव श्रीराम के साथ ही रहते हैं। श्रीराम जहाँ भी जाते हैं, जैसे विश्वामित्र के साथ या वन में, लक्ष्मण छाया की भाँति उनके साथ हैं। अतः श्रीराम और लक्ष्मण के नामों की आवृत्ति का पूर्ण निर्देश जहाँ प्रायः सम्पूर्ण ग्रन्थ को उद्धृत करने के समान होता, वहीं इससे कोई लाभ भी नहीं था। इसीलिये मैंने इन दोनों नामों के अन्तर्गत उनसे सम्बद्ध मुख्य-मुख्य घटनाओं को ही लिया है और जहाँ कोई सर्ग किसी एक या दोनों से पूर्णतः सम्बद्ध है वहाँ पूर्ण सर्ग का सारांश देकर उसकी संख्या का उल्लेख कर दिया है। इसी प्रकार सीता भी, विवाह के बाद से रावण द्वारा अपहृत होने तक, सदैव श्रीराम के साथ हैं। अतः इनके नाम के अन्तर्गत इनसे सम्बद्ध प्रायः सम्पूर्ण सर्गों या सर्गांशों का सारांश देकर उनकी संख्या का निर्देश मिलेगा। इस प्रणाली का आश्रय लेना इसलिये भी आवश्यक था कि अनेक सर्ग प्रायः पूर्णतः इनसे सम्बद्ध किसी एक घटना का ही उल्लेख करते हैं। उदाहरण के लिये, सीता का अपहरण हो जाने पर श्रीराम कई सर्गों में उनके लिये विलाप करते हैं। ऐसे सर्गों में अन्य जो नाम प्रसंगवश आ गये हैं उनका तो उनके अन्तर्गत श्लोकानुसार उल्लेख और सन्दर्भ-संकेत दिया गया है; किन्तु श्रीराम के नाम के अन्तर्गत केवल उनके विलाप का उल्लेख करके सम्पूर्ण सर्ग का ही उल्लेख किया गया है। लक्ष्मण और सीता के लिये भी इसी पद्धति का अनुसरण किया गया है।

प्रस्तुत कोश के लिये मुख्यरूप से 'चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी' के संस्करण को आधार माना गया है, यद्यपि गीताप्रेस-संस्करण भी सामने रक्खा गया है। जहाँ दोनों संस्करणों में भिन्नता है, अथवा यदि कोई श्लोक केवल 'गीता प्रेस संस्करण' में ही है, वहाँ तदनुसार निर्देश कर दिया गया है।

कोश के मूल विषय की समाप्ति के पश्चात् तीन परिशिष्ट भी दिये गये हैं जिनमें क्रमशः वाल्मीकि-रामायण में मिलनेवाले पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों, तथा अस्त्र-शस्त्रों के नाम और उनके एक-एक सन्दर्भ-संकेत दिये गये हैं।

ग्रन्थ में मुद्रण-सम्बन्धी कुछ साधारण अशुद्धियाँ हैं जिनके लिये मैं पाठकों से क्षमा-प्रार्थी हूँ।

ग्रन्थ के शीघ्र प्रकाशन, तथा इसे गेट-अप की दृष्टि से उत्कृष्ट बनाकर प्रस्तुत करने के लिये चौखम्बा संस्कृत सीरीज के संचालक-गण विशेष धन्यवाद के पात्र हैं। मैं जो कुछ भी कार्य कर सका हूँ वह बहुत कुछ इन लोगों के मुक्त सहयोग का ही परिणाम है।

जम्मू और कश्मीर के सदरे रियासत, श्री महाराज कर्णसिंह जी ने ग्रन्थ को अपने को समर्पित किये जाने की स्वीकृति देकर हमें जो आदर प्रदान किया उसके लिये मैं तथा ग्रन्थ के प्रकाशक जीवन-पर्यन्त आभारी रहेंगे।

रामकुमारराय

विषय-सूची

भूमिका

वाल्मीकिरामायण कोश ३–४२२

परिशिष्ट–१ : ४२५–२६
वाल्मीकिरामायण में मिलनेवाले पशु-पक्षियों के नाम

परिशिष्ट–२ : ४२७–२८
वाल्मीकिरामायण में मिलनेवाले पेड़-पौधों के नाम

परिशिष्ट–३ : ४२९–३१
वाल्मीकिरामायण में मिलनेवाले अस्त्र-शस्त्रों के नाम

वाल्मीकिय रामायण-कोश

(वाल्मीकीय रामायण के नामों और विषयों की
व्याख्यात्मक अनुक्रमणिका)

अंशुधान, एक ग्राम का नाम है जिसके निकट गङ्गा को पार करना दुस्तर जानकर भरत प्राग्वट नामक नगर में आ गये (२. ७१, ९)।

अंशुमान्, सगर के पौत्र और असमञ्ज के पुत्र का नाम है (१. ३८, २२; ७०,३८)। यह अत्यन्त पराक्रमी, मृदुभाषी तथा सर्वप्रिय थे। (१. ३८, २३)। राजा सगर की आज्ञा से यज्ञ-अश्व की रक्षा का उत्तरदायित्व सुदृढ़ और धनुर्धर महारथी अंशुमान् ने स्वीकार किया (१. ३९, ६)। "राजा सगर ने अपने पौत्र अंशुमान से इस प्रकार कहा : 'तुम शूरवीर, विद्वान् तथा अपने पूर्वजों के समान ही तेजस्वी हो। तुम अपने चाचाओं के पथ का अनुसरण करते हुये उस चोर का पता लगाओ जिसने मेरे यज्ञ-अश्व का अपहरण किया है।' अपने पितामह की इस आज्ञा से अंशुमान् ने अपने चाचाओं द्वारा पृथिवी के भीतर बनाये गये मार्ग का अनुसरण किया। वहाँ इन्हें एक हाथी दिखाई पड़ा जिसकी देवता, दानव, राक्षस, पिशाच, पक्षी और नाग आदि पूजा कर रहे थे। अंशुमान् ने उस हाथी से अपने चाचाओं का समाचार तथा अश्व चुरानेवाले का पता पूछा। हाथी का आशीर्वाद प्राप्त करके अंशुमान् उस स्थान पर पहुँचे जहाँ उनके चाचा (सगर-पुत्र) राख के ढेर हुये पड़े थे। इन्होंने अपने यज्ञ-अश्व को भी समीप ही विचरण करते देखा। गरुड़ के परामर्श के अनुसार इन्होंने गङ्गा के जल से अपने चाचाओं का तर्पण किया और तदुपरान्त अपने यज्ञ-अश्व को लेकर यज्ञ पूर्ण करने के लिये पितामह सगर के पास लौट आये (१.४१)।" 'पुरुषव्याघ्रः', (१. ४१, १४)। 'महातेजाः', (१. ४१, १५)। 'शूरश्च कृतविद्यश्च पूर्वैस्तुल्योऽसि तेजसा', (१. ४१, २)। 'वीर्यवान् महातपाः', (१. ४१, २२)। "सगर की मृत्यु के पश्चात् प्रजाजनों ने परम धर्मात्मा अंशुमान् को राजा बनाया। अंशुमान् अत्यन्त प्रतापी राजा

हुये। इनके पुत्र का नाम दिलीप था। अंशुमान् अपने पुत्र दिलीप को राज्य देकर रमणीय हिमवत् पर्वत-शिखर पर चले गये, और वहाँ बत्तीस सहस्र वर्षों तक कठिन तपस्या की (१.४२, १–४)।" 'सुधार्मिकः', (१. ४२, १)।, 'तपोधनः',. (१. ४२, ४)। 'तथैवांशुमता वत्सलोकेऽप्रतिमतेजसा', (१. ४४, ९), 'राजर्षिणा गुणवता महर्षिसमतेजसा। मत्तुल्यतपसा चैव क्षत्रधर्मस्थितेन च ॥' (१. ४४, १०)।

अकम्पन, एक राक्षस का नाम है जिसने लङ्का में जाकर रावण को राक्षसपुरी, जनस्थान, के विनाश का समाचार दिया था (३. ३१, १–२)। "रावण ने जब इससे इस प्रकार राक्षसों का विनाश करनेवाले का नाम पूछा तो इसने रावण से अभय की याचना करते हुए राम के शारीरिक बल और पराक्रम का वर्णन किया। अन्त में राम के वध के एकमात्र उपाय के रूप में इसने रावण को सीता का अपहरण करने का परामर्श दिया (३. ३१, ३.९. १२-१४. २१. २२)।" "वालिपुत्र अङ्गद के हाथ से वज्रदंष्ट्र की मृत्यु के पश्चात् रावण ने अकम्पन को सेनापति बनाते हुये कहा: 'अकम्पन सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों के ज्ञाता हैं। उन्हें युद्ध सदा ही प्रिय है, और वे सर्वदा मेरी उन्नति चाहते हैं। वे राम और लक्ष्मण, तथा महाबली सुग्रीव को भी परास्त करते हुये निःसन्देह ही अन्य भयानक वानरों का भी संहार करेंगे।' (६. ५५, १–४)।" 'रथमास्थाय विपुलं तप्तकाञ्चन भूषणम्। मेघाभो मेघवर्णश्च मेघस्वनमहास्वनः।', (६. ५५, ७)। 'नहि कम्पयितुं शक्यः सुरैरपि महामृधे। अकम्पनस्ततस्तेषामादित्य इव तेजसा ॥', (६. ५५, ९)। 'स सिंहोपचितस्कन्धः शार्दूलसमविक्रमः। तानुत्पातानचिन्त्यैव निर्जगाम रणाजिरम् ॥', (६. ५५, १२)। जिस समय यह अन्य राक्षसों के साथ लङ्का से निकला उस समय ऐसा महान् कोलाहल हुआ मानो समुद्र में हलचल मच गई और वानरों की विशाल सेना भी भयभीत हो गई (६. ५५, १३–१५)। इसने वानर सेना का भयंकर संहार किया (६. ५५, २८)। वानरों द्वारा अनेक राक्षसों का वध कर दिये जाने पर अकम्पन अपने रथ को उन्हीं वानरों के बीच ले गया और उन पर टूट पड़ा (६. ५६, १–८)। 'रथिनां वरः', (६. ५६, ६)। पर्वत के समान विशालकाय हनुमान् को अपने सम्मुख उपस्थित देखकर अकम्पन उन पर बाणों की वर्षा करने लगा (६. ५६, ११)। जब हनुमान् ने एक पर्वत उखाड़ कर उससे अकम्पन पर आक्रमण किया तब अकम्पन ने अर्ध चन्द्राकार बाणों से उस पर्वत को विदीर्ण कर दिया (६. ५५, १७. १८)। "अपने पर्वत के विदीर्ण हो जाने पर जब क्रोध में भर कर हनुमान् राक्षसों का संहार करने लगे तब वीर अकम्पन ने उन्हें देखा और देह को विदीर्ण कर देनेवाले चौदह पैने बाणों से हनुमान् को आहत

कर दिया । इस प्रकार आहत हनुमान् ने एक वृक्ष उखाड़ कर उससे अकम्पन के मस्तक पर प्रहार किया । इस भीषण प्रहार से अकम्पन भूमि पर गिर पड़ा और उसकी मृत्यु हो गई । (६. ५६, २९-३१) ।" 'योऽसौ गजस्कन्धगतो महात्मा नवोदितार्कोपमताम्रवक्त्रः । संकम्पयन्नागशिरोऽभ्युपैति ह्यकम्पनं त्वेनमवेहि राजन् ॥', (६. ५९, १४) । यह सुमालिन् और केतुमती का पुत्र था (७. ५, ३८. ४०) । यह सुमाली और रावण के साथ देवों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये भी गया था (७.२७, २८) ।

अकोप, महाराज दशरथ के एक मन्त्री का नाम है (१ .७, ३) ।

अक्ष, रावण के पुत्र, एक राक्षस का नाम है जिस पर हनुमान् ने लङ्का में प्रहार किया था (१. १, ७५) । रावण की आज्ञा से यह हनुमान् से युद्ध करने के लिये गया. और अन्त में हनुमान् ने इसका वध कर दिया (५. ४७ १–३६) । 'निशम्य राजा समरोद्धतोन्मुखं कुमारमक्षं प्रसमैक्षताग्रतः', (५. ४७, १) । 'प्रतापवान्काञ्चनचित्रकार्मुकः', (५. ४७, २) । 'ततो···वीर्यवान् नैर्ऋतर्षभः', (५. ४७, ३) । 'अमरतुल्यविक्रमः', (५. ४७, ६) । 'हरीक्षणो', (५. ४७, ८) । 'समाहितात्मा', (५. ४७, १०) । 'आशुपराक्रमः', (५. ४७, १२) । 'स तस्य वीरः सुमुखान् पतत्रिणाः सुवर्णपुङ्खान्सविषानिवोरगान् । समाधिसंयोगविमोक्षतत्त्वविच्छरानथ त्रीन् कपिमूर्ध्न्यताडयत् ॥', (५. ४७, १४) । 'कपिस्तस्तं रणचण्डविक्रमं प्रवृद्धतेजोबलवीर्यसायकम्', (५. ४७, १९) । 'वीर्यदर्पितः क्षतजोपमेक्षणः', (५. ४७, २०) । 'तमुत्पन्तं समभिद्रवद् बली स राक्षसानां प्रवरः प्रतापवान् । रथी रथश्रेष्ठतरः किरञ्छरैः पयोधरः शैलमिवाश्मवृष्टिभिः ॥', (५. ४७, २२) ।

अगस्त्य, एक ऋषि का नाम है जो अपने भ्राताओं सहित दण्डकारण्य में निवास करते थे (१. १, ४२) । वनवास के समय श्रीराम ने इनका दर्शन किया तथा इनके ही कहने से अनेक दिव्यास्त्र प्राप्त किये (१. १, ४३) । महर्षि वाल्मीकि ने दण्डकारण्य में आकर राम द्वारा अगस्त्य का दर्शन करने की घटना का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १९ : 'दर्शनं चाप्यगस्त्यस्य धनुषो ग्रहणं तथा' ।) । "अगस्त्य ने शाप देकर ताटकापति सुन्द को मार डाला । उसकी मृत्यु हो जाने पर ताटका तथा उसके पुत्र मारीच ने अगस्त्य पर आक्रमण किया किन्तु अगस्त्य ने इन दोनों को राक्षस बना दिया । (१. २५, १०-१३) ।" "वनवास के ठीक पूर्व श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा : 'अगस्त्य और विश्वामित्र, दोनों उत्तम ब्राह्मणों को बुलाकर उनकी रत्नों द्वारा पूजा करो । जिस प्रकार मेघ जल की वर्षा से कृषि को तृप्त करता है, उसी प्रकार तुम इन ब्राह्मणों को सहस्रों गायों, सुवर्णमुद्राओं, रजतद्रव्यों और बहुमूल्य मणियों द्वारा सन्तुष्ट करो।'

(२. ३२, १३–१४)।" 'अस्मिन्नरण्ये भगवन्नगस्त्यो मुनिसत्तमः ॥ वसतीति मया नित्यं कथाः कथयतां श्रुतम् ।', (३. ११, ३०-३१) । 'महर्षेस्तस्य धीमतः', (३. ११, ३२)। अगस्त्य ने समस्त लोकों के हित की कामना से मृत्यु-स्वरूप वातापि और इल्वल का वेगपूर्वक दमन करके दक्षिण दिशा को शरण लेने के योग्य बना दिया (३. ११, ५३–५४) । "देवताओं की प्रार्थना से महर्षि अगस्त्य ने श्राद्ध में शाकरूपधारी महान असुर वातापि का जान-बूझ कर भक्षण कर लिया। तदनन्तर 'श्राद्धकर्म सम्पन्न हो गया', ऐसा कहकर ब्राह्मणों के हाथ में अवनेजन का जल दे कर इल्वल ने अपने भ्राता वातापि का नाम लेकर पुकारा। इस पर उस ब्राह्मणघाती असुर से बुद्धिमान मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य ने हँसकर कहा : 'जिस जीवशाकरूपधारी तेरे भ्राता राक्षस को मैंने भक्षण करके पचा लिया है वह अब यमलोक में जा पहुँचा है।' मुनि के वचन को सुनकर इल्वल ने उनका वध करना चाहा, किन्तु उसने ज्योंही अगस्त्य पर आक्रमण किया, अगस्त्य ने अपनी अग्नि तुल्य दृष्टि से उस राक्षस को दग्ध कर दिया जिससे उसकी भी मृत्यु हो गई। (३. ११, ६१–६७)।" इनके आश्रम का वर्णन किया गया है (३. ११, ७३–७६. ७९–८०. ८६. ८९–९३) । इन्होंने राक्षसों का वध करके दक्षिण दिशा को शरण लेने के योग्य बना दिया (३. ११, ८१–८४) । एक बार पर्वतश्रेष्ठ विन्ध्य सूर्य का मार्ग रोकने के उद्देश्य से बढ़ने लगा था किन्तु महर्षि अगस्त्य के कहने पर नम्र हो गया (३. ११, ८५) । 'पुण्यकर्मा', (३. ११, ८१)। 'अयं दीर्घायुषस्तस्य लोके विश्रुतकर्मणः । अगस्त्यस्याश्रमः श्रीमान् विनीतमृगसेवितः ॥', (३. ११, ८६) । 'एष लोकार्चित साधुर्हिते नित्यं रतः सताम् । अस्मानधिगतानेष श्रेयसा योजयिष्यति ॥', (३. ११,८७)। इनके आश्रम में प्रवेश करके लक्ष्मण ने अगस्त्य के शिष्य से भेंट की और उससे अगस्त्य जी को राम के आगमन का संदेश देने के लिये कहा (३. १२, १–४) । लक्ष्मण की बात सुनकर उस शिष्य ने महर्षि अगस्त्य को समाचार देने के लिये उनकी अग्निशाला में प्रवेश किया, और दूसरों के लिये दुर्जय, मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य को राम के आगमन का समाचार दिया (३. १२, ५–९)। श्रीराम, सीता, तथा लक्ष्मण के आगमन का समाचार सुनकर अगस्त्य ने उन लोगों को तत्काल अपने पास लाने के लिये शिष्य को आज्ञा दी (३. १२, ९–१२) । श्रीराम, सीता, तथा लक्ष्मण के आश्रम में प्रवेश करते ही अपने शिष्यों से घिरे हुये मुनिवर अगस्त्य अग्निशाला से बाहर निकले (३. १२, २१) । "अगस्त्य का दर्शन करते ही श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा : 'अगस्त्य मुनि आश्रम से बाहर निकल रहे हैं। ये तपस्या के निधि हैं। इनके विशिष्ट तेज के अधिक्य से ही मुझे पता चलता है कि ये अगस्त्य जी ही हैं।'

(३. १२, २३) ।" इस प्रकार वचन कहने के पश्चात् श्रीराम ने अगस्त्य के दोनों चरण पकड़ लिये (३. १२, २४) । "महर्षि अगस्त्य ने श्रीराम को हृदय से लगाया और आसन तथा जल देकर उनका सत्कार किया; तदुपरान्त कुशल-समाचार पूछकर उनसे बैठने के लिये कहा (३. १२, २६) ।" "धर्म के ज्ञाता मुनिवर अगस्त्य जी पहले स्वयं बैठे फिर धर्मज्ञ श्रीराम हाथ जोड़ कर आसन पर विराजमान हुये । अगस्त्य ने श्रीराम को सम्बोधित करते हुये इस प्रकार कहा : 'आप सम्पूर्ण लोक के राजा, महारथी, और धर्म के अनुसार आचरण करने वाले हैं । आप मेरे प्रिय अतिथि के रूप में इस आश्रम पर पधारे हैं, अतएव आप हम लोगों के माननीय एवं पूजनीय हैं (३. १२, २८–३०) ।" इस प्रकार वचन के बाद महर्षि अगस्त्य ने फल, मूल, पुष्प, तथा अन्य उपकरणों से इच्छानुसार श्रीराम का पूजन किया और उन्हें अनेक दिव्यास्त्र अर्पित किये (३.१२,३१–३७) । अगस्त्य ने सीता के स्त्रियोचित गुणों तथा पतिपरायणता और लक्ष्मण के भ्रातृनिष्ठा की प्रशंसा की (३. १३, १–८) । 'महर्षि दीप्तमिवामलम्' , (३. १३, ९) । "श्रीराम ने मुनि अगस्त्य से पूछा : 'अब आप मुझे कोई ऐसा स्थान बताइये जहाँ सघन वन हो, जल की भी सुविधा हो, तथा जहाँ मैं आश्रम बना कर निवास कर सकूँ' । राम के इस कथन को सुनकर अगस्त्य ने थोड़ा विचार करने के पश्चात् पञ्चवटी नामक स्थान पर आश्रम बनाने का परामर्श देते हुए वहाँ तक पहुँचने के मार्ग का विस्तृत वर्णन किया (३. १३, ११–२२) ।" महर्षि के ऐसा कहने पर लक्ष्मण सहित श्रीराम ने उनका सत्कार करके उन सत्यवादी महर्षि से पञ्चवटी जाने की आज्ञा माँगी, और प्रस्थान किया (३. १३, २३–२४) । 'यथाख्यातमगस्त्येन मुनिना भावितात्मना', (३. १५, १२) । खर का वध कर देने पर अनेक राजर्षियों तथा महर्षियों सहित अगस्त्य ने भी राम का सत्कार करते हुये कहा : 'पाकशासन, पुरन्दर इन्द्र, शरभङ्ग मुनि के पवित्र आश्रम पर आये थे और इसी कार्य की सिद्धि के लिये महर्षि ने विशेष उपाय करके आपको पञ्चवटी के इस प्रदेश में पहुँचाया था । आपने हम लोगों का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य सिद्ध कर दिया है । अब बड़े-बड़े ऋषि-मुनि दण्डकारण्य के विभिन्न प्रदेशों में निर्भय होकर धर्म का अनुष्ठान करेंगे ।' (३. ३०, ३४–३७) ।" अगस्त्य द्वारा वातापि के वध का उल्लेख (३. ४३, ४२–४४) । "दक्षिण दिशा के स्थानों का परिचय देते हुये सुग्रीव ने वानरों से कहा : 'तुम लोग मलयपर्वत के शिखर पर बैठे, सूर्य के समान महान् तेज से सम्पन्न मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य का दर्शन करना और इसके बाद उन प्रसन्नचित्त महात्मा से आज्ञा लेकर ग्राहों से सेवित महानदी ताम्रपर्णी को पार करना ।' (४. ४१, १५–१६) ।" महर्षि अगस्त्य ने समुद्र के भीतर एक

सुन्दर सुवर्णमय पर्वत की स्थापना की जो महेन्द्र गिरि के नाम से विख्यात है (४. ४१, २०)। "सुग्रीव ने अंगदादि वानरों से कहा : 'तुम्हें कुञ्जर नामक पर्वत दिखायी देगा जिसके ऊपर विश्वकर्मा द्वारा निर्मित महर्षि अगस्त्य का एक सुन्दर भवन है। अगस्त्य का वह दिव्य भवन सुवर्णमय तथा नाना प्रकार के रत्नों से विभूषित है। उसका विस्तार एक योजन तथा उँचाई दस योजन है।' (४. ४१, ३४-३५)।" 'ताराङ्गदादिसहितः प्लवगः पवनात्मजः', (४.४५, ५)। 'अगस्त्याचरितामाशां दक्षिणां हरियूथपः', (४. ४५, ६)। "रावण के साथ युद्ध करते हुये जब श्रीराम थके और चिन्तित थे तब अगस्त्य ने उन्हें 'आदित्य-हृदय' नामक स्तोत्र बताया जिसके जप से शत्रुओं पर विजय प्राप्त हो सकती थी। अगस्त्य ने श्रीराम से कहा कि वे रावण के साथ युद्ध करने के पूर्व तीन बार इस स्तोत्र का जप करें। (६. १०५, १–२७)।" "श्री राम ने सीता से कहा : 'जिस प्रकार तपस्या से भावित अन्तःकरणवाले महर्षि अगस्त्य ने दक्षिण दिशा पर विजय प्रति की थी, उसी प्रकार मैंने भी रावण को विजित किया' (६. ११५, १४)।" राक्षसों का संहार करने के पश्चात् जब श्रीराम ने अपना राज्य प्राप्त कर लिया तो अनेक महर्षियों सहित अगस्त्य भी राम का अभिनन्दन करने के लिये अयोध्या आये (७. १, ३)। उस समय मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य ने राम को अपने आगमन की सूचना देने के लिये द्वारपाल को आज्ञा दी जिसका द्वारपाल ने पालन किया (६. १, ८–९)। राम ने अगस्त्य से इन्द्रजित् के जीवन-वृत्तान्त का वर्णन करने का आग्रह किया (७. १, २९–३६)। अगस्त्य ने इन्द्रजित् का वृत्तान्त सुनाना आरम्भ किया (७. २, १)। 'कुम्भयोनिर्महातेजा', (७.२,१)। 'ततः शिरः कम्पयित्वा त्रेताग्निसमविग्रहम्। तमगस्त्यं मुहुर्दृष्ट्वा स्मयमानोऽभ्यभाषत ॥', (७. ४, २)। मुनिवर विश्रवा के पूर्व भी लंका में राक्षसों के निवास के सम्बन्ध में श्रीराम ने अगस्त्य से प्रश्न किया (७. ४, १–७)। राम के इस प्रश्न के उत्तर में अगस्त्य ने लंका में बसने वाले आरम्भिक राक्षस-वंश का वर्णन किया (७. ४, ८)। राम के पूछने पर अगस्त्य ने रावण इत्यादि की तपस्या तथा वर-प्राप्ति का वर्णन किया (७. १०, २–४९)। अगस्त्य ने राम से शूर्पणखा तथा रावण आदि तीनों भ्राताओं के विवाह, और मेघनाद के जन्म का वर्णन किया (७. १२)। इन्होंने राम से रावण द्वारा बनवाये शयनागार में कुम्भकर्ण के सोने, रावण के अत्याचार, कुवेर द्वारा दूत भेजकर रावण को समझाने, तथा कुपित रावण द्वारा उस दूत के वध का वर्णन किया (७. १३)। इन्होंने राम से रावण द्वारा यक्षों पर आक्रमण तथा यक्षों की पराजय का वर्णन किया (७. १४)। इन्होंने मणिभद्र तथा कुवेर की पराजय और रावण द्वारा पुष्पक विमान के अपहरण

का वर्णन किया (७. १५)। इन्होंने नन्दीश्वर द्वारा रावण को शाप, भगवान शंकर द्वारा रावण के मान-भंग तथा उनसे चन्द्रहास नामक खड्ग की प्राप्ति का वर्णन किया (७. १६)। इन्होंने रावण से तिरस्कृत ब्रह्मर्षिकन्या वेदवती के रावण को शाप देकर अग्नि में प्रवेश करने और दूसरे जन्म में सीता के रूप में प्रादुर्भूत होने का वर्णन किया (७. १७)। इन्होंने रावण द्वारा मरुत्त की पराजय तथा इन्द्र आदि देवताओं द्वारा मयूर आदि पक्षियों को वरदान देने का वर्णन किया (७. १८)। इन्होंने रावण द्वारा अनरण्य के वध तथा उनके द्वारा रावण को शाप देने का वर्णन किया (७.१९)। इन्होंने नारद जी द्वारा रावण को समझाने, उनके कहने से रावण के युद्धार्थ यमलोक जाने, तथा नारद द्वारा इस युद्ध के सम्बन्ध में विचार करने का वर्णन किया (७. २०)। इन्होंने रावण द्वारा यमलोक पर आक्रमण तथा यमराज के सैनिकों के संहार का वर्णन किया (७. २१)। इन्होंने यमराज और रावण के युद्ध, यम द्वारा रावण के वध के लिये उठाये कालदण्ड को ब्रह्मा के आग्रह पर लौटा लेने तथा विजयी रावण के यमलोक से प्रस्थान करने का वर्णन किया (७.२२) इन्होंने रावण द्वारा निवातकवचों से मैत्री, कालकेयों के वध तथा वरुण-पुत्रों की पराजय का वर्णन किया। (७. २३)। 'आश्चर्यमिति रामश्च लक्ष्मणश्चाब्रवीत् तदा। अगस्त्यवचनं श्रुत्वा वानरा राक्षसास्तदा॥'. (७.३०, ५१)।', 'अगस्त्यं त्वब्रवीद् रामः सत्यमेतच्छ्रुतं च मे', (७. ३०, ५३)। "श्रीराम ने मुनि श्रेष्ठ अगस्त्य को प्रणाम करके पूछा : 'जब रावण पृथ्वी पर विजय करता हुआ घूम रहा था तब क्या यहाँ कोई भी ऐसा वीर नहीं था जो उसे पराजित करता ?' इसके उत्तर में अगस्त्य ने रावण द्वारा महिष्मतीपुरी में जाने और वहाँ के राजा अर्जुन को न पाकर मन्त्रियों-सहित विन्ध्यगिरि के समीप नर्मदा में स्नान करके भगवान शिव की आराधना करने का वर्णन किया। (७. ३१)।" राम के पूछने पर अगस्त्य ने हनुमान् की उत्पत्ति, शैशवावस्था में ही उनके सूर्य, राहु, और ऐरावत पर आक्रमण करने, इन्द्र के वज्र के प्रहार से मूर्च्छित होने, वायु के कोप से संसार के प्राणियों के कष्ट तथा वायु को प्रसन्न करने के लिये देवताओं सहित ब्रह्मा द्वारा उनके पास जाने आदि का वर्णन किया (७. ३५)। "अगस्त्य द्वारा विभिन्न कथाओं को सुनकर श्रीराम, लक्ष्मण, वानर तथा राक्षस आदि अत्यन्त विस्मित हुये। तत्पश्चात् अगस्त्य ने श्रीराम से विदा माँगी। श्रीराम ने भी अगस्त्य आदि ऋषियों से निरन्तर आते रहने का निवेदन करते हुये उन्हें विदा किया (७. ३६, ५२–५४. ६०)।" "लक्ष्मण के पूछने पर श्रीराम ने महर्षि वसिष्ठ के शरीर ग्रहण से सम्बद्ध कथा का वर्णन करते हुये कहा : 'महामना मित्र और

वरुण के तेज से युक्त कुम्भ से दो तेजस्वी ब्राह्मण प्रकट हुये जो ऋषियों में श्रेष्ठ थे। सर्वप्रथम उस कुम्भ से महर्षि भगवान् अगस्त्य उत्पन्न हुये और मित्र से यह कहकर कि वे उनके (मित्र के) पुत्र नहीं हैं, वहाँ से अन्यत्र चले गये।' (७. ५७, ४–५)।" "श्रीराम द्वारा शम्बूक का वध कर दिये जाने पर देवताओं ने उनकी प्रशंसा की। तदुपरान्त श्रीराम अगस्त्य मुनि के आश्रम पर गये (७. ७६, १६)।" देवताओं सहित श्रीराम को अपने आश्रम पर आया देखकर अगस्त्य ने उन सबका सत्कार किया (७. ७६, २१. २३. २५) और ब्राह्मण के पुत्र को जीवित कर देने के लिये राम को धन्यवाद दिया (७. ७६, २७)। श्रीराम के यह पूछने पर कि क्षत्रिय ब्राह्मण द्वारा दिये गये दान को कैसे ग्रहण कर सकता है, अगस्त्य ने सत्ययुग की एक कथा का वर्णन किया (७.७६, ३६–४५)। "श्रीराम ने अगस्त्य द्वारा दिये उस सूर्य के समान दीप्तिमान, दिव्य, विचित्र और उत्तम आभूषण को ग्रहण करते हुये अगस्त्य से यह जानना चाहा कि उन्होंने (अगस्त्य ने) उसे किस प्रकार प्राप्त किया। राम को उत्तर देते हुये अगस्त्यजी ने त्रेतायुग में एक स्वर्गीय पुरुष द्वारा शवभक्षण करने का प्रसंग सुनाया।" (७. ७७, १–२०)। राजा श्वेत के दुःखद वृत्तान्त (७. ७८, १–२५) को सुनकर अगस्त्य अत्यन्त द्रवित हुये और उनका दान ग्रहण करके उनके स्वर्ग का मार्ग प्रशस्त किया (७. ७८, २६-२९)। राम के आग्रह पर अगस्त्य ने राजा दण्ड की कथा का वर्णन किया (७. ७९)। 'एतदाख्याय रामाय महर्षिः कुम्भसम्भवः। अस्यामेवापरं वाक्यं कथायामुपचक्रमे ॥', (७. ८०, १)। सन्ध्या होने पर अगस्त्य ने श्रीराम से सन्ध्योपासना करने के लिये कहा (७. ८१, २१–२२)। अगस्त्य को 'धर्मनेत्र' कहा गया है (७. ८२, ८)। राम के निवेदन करने पर अगस्त्य ने उन्हें विदा होने की अनुमति दी और श्रीराम ने विदा होते हुये सत्यशील महर्षि अगस्त को प्रणाम किया (७. ८२, ५–१४)।

अगस्त्य-भ्राता का निवासस्थान सुतीक्ष्ण के आश्रम से चार योजन दक्षिण में स्थित था (३. ११, ३७)। राम ने इनके आश्रम का वर्णन किया (३. ११, ४७-५३)। अगस्त्याश्रम की ओर जाते हुए श्रीराम इत्यादि ने इनके आश्रम पर भी एक रात्रि व्यतीत की और दूसरे दिन प्रातःकाल इनकी अनुमति से अगस्त्याश्रम की ओर प्रस्थान किया (७. ११, ६९–७३)।

अग्नि—ब्रह्मा की इच्छा से इन्होंने नील को उत्पन्न किया (१. १७, १३)। जब बलि ने समस्त देवताओं को पराजित कर दिया तब वे विष्णु की सेवा में उपस्थित हुये (१.२९,६)। देवताओं के निवेदन करने पर इन्होंने महादेव के तेज को अपने भीतर रख लिया (१.३६,१८)। जब महादेव तपस्या कर रहे थे,

उस समय इन्द्र और अग्नि आदि सम्पूर्ण देवता अपने लिये सेनापति की इच्छा लेकर ब्रह्मा के समीप गये और उन्हें प्रणाम करके अपना मनोरथ कहा (१.३७,१–२)। ब्रह्मा ने कहा कि शंकर के तेज को उमा की वड़ी वहन आकाशगंगा के गर्भ में स्थापित करके अग्निदेव एक ऐसे पुत्र को जन्म देंगे जो देवताओं का समर्थ सेनापति होगा (१. ३७, ७)। ब्रह्मा के इस प्रकार कहने पर सम्पूर्ण देवताओं ने अग्निदेव को पुत्र उत्पन्न करने के कार्य पर नियुक्त और उनसे रुद्र के महान् तेज को गंगा में स्थापित करने का निवेदन किया (१. ३७, १०–११ : 'हुताशन')। देवताओं को अपनी सहमति देने के पश्चात् अग्नि (पावक) ने गंगा के निकट आकर उनसे गर्भ धारण करने के लिये कहा (१. ३७, १२)। "अग्नि की बात सुनकर गंगा ने दिव्य रूप धारण कर लिया। उस रूप की महिमा को देखकर अग्नि ने गङ्गा को सब ओर से उस रुद्र तेज द्वारा अभिषिक्त कर दिया जिससे गङ्गा के स्रोत उससे परिपूर्ण हो गये (१. ३७, १३–१४)।" तदुपरान्त गंगा ने तेज को धारण करने में अग्नि से अपनी असमर्थता प्रकट की, किन्तु अग्नि के परामर्श से उस गर्भ को हिमवान् पर्वत के पार्श्व भाग में स्थापित कर दिया (१. ३७, १५–१६ : 'सर्वदेव हुताशनः)। अग्नि सहित समस्त देवताओं ने मिल कर महातेजस्वी स्कन्द का देवसेनापति के पद पर अभिषेक किया (१. ३७, ३०)। अण्डकोष से रहित होकर इन्द्र अत्यन्त भयभीत हो गये और उसे पुनः प्राप्त कराने के लिये उन्होंने अग्नि आदि देवताओं से प्रार्थना की (१. ४९, १)। इन्द्र का वचन सुनकर मरुतों सहित अग्नि आदि समस्त देवता पितृदेवों के पास गये (१. ४९, ५)। जब विश्वामित्र वसिष्ठ पर ब्रह्मास्त्र से प्रहार करने के लिये उद्यत हुये तब अग्नि आदि अत्यन्त भयभीत हो गये (१. ५६, १४)। राम के वनवास-गमन के समय उनकी रक्षा के लिये कौसल्या ने अग्नि का आवाहन किया था (२. २५, २४)। जब माण्डकर्णि ने एक जलाशय में रहकर केवल वायु का आहार करते हुये दस सहस्र वर्षों तक तीव्र तपस्या की तो अग्नि आदि समस्त देवता अत्यन्त व्यथित हो उठे और उनकी तपस्या में विघ्न डालने के लिये पाँच अप्सराओं को भेजा (३. ११, १३–१५)। श्रीराम ने अगस्त्याश्रम में स्थित अग्नि के मन्दिर को देखा (३. १२, १७)। राम के दूत के रूप में हनुमान् के उपस्थित होने पर तर्क-वितर्क करती हुई सीता ने अन्य देवताओं सहित अग्नि को भी नमस्कार किया (५. ३२, १४)। हनुमान् की रक्षा करने के लिये सीता ने अग्नि का आवाहन किया (५. ५३, २५–२८)। अग्नि (कृष्णवर्त्मन्) ने क्रथन नामक वानर यूथपति को एक गन्धर्व-कन्या से उत्पन्न किया था (६. २७, २०)। सीता की अग्नि-परीक्षा के समय अग्निदेव सीता को गोद में

लेकर चिता से ऊपर उठे और राम को समर्पित करते हुये उनकी पवित्रता को प्रमाणित किया, जिसके पश्चात् राम ने सीता को सहर्ष स्वीकार कर लिया (६. १८, ११–१०)। 'अब्रवीत् तु तदा रामं साक्षी लोकस्य पावकः। एषा ते राम वैदेही पापमस्यां न विद्यते ॥', (६. ११८, ५)। लवणासुर का वध (७. ६९, ३६) कर देने पर वर देने के लिये अग्निदेव शत्रुघ्न के सम्मुख उपस्थित हुये (७. ७०, १–३), और वर देने के बाद ही अन्तर्धान हो गये (७. ७०, ६–७)। शम्बूक का वध कर देने पर अग्नि ने राम को धन्यवाद दिया (७. ७६, ५–६)। वृत्रासुर का वध कर देने के पश्चात् इन्द्र जब ब्रह्महत्या के भय से भाग गये तब अग्नि आदि देवता विष्णु की स्तुति करने लगे (७. ८५, १५–१७)।

अग्नि-केतु, एक राक्षस का नाम है जो श्रीराम के साथ युद्ध करने के लिये रावण के दरबार में अस्त्र-शस्त्रों सहित सन्नद्ध होकर उपस्थित था (६. ९, २)। इसने श्रीराम के साथ युद्ध किया (६. ४३, ११)। श्रीराम ने इस दुर्धर्ष राक्षस का वध किया (६. ४३, २६–२७)।

अग्नि-वर्ण, सुदर्शन का पुत्र और शीघ्रग का पिता था (१. ७०, ४०-४१)।

अङ्ग, एक देश का नाम है जिस पर रोमपाद का शासन था (१. ९, ८)। यह भयंकर अनावृष्टि से ग्रसित हुआ था (१. ९, ९)। महादेव के कोप से दग्ध कन्दर्प ने इसी स्थान पर अपने शरीर (अंगों) का त्याग किया था, जिसके कारण ही इसका 'अङ्ग' नाम पड़ा (१. २३, १०–१४)। कैकेयी का क्रोध शान्त करने के लिये राजा दशरथ ने अङ्गादि देशों की किसी भी वस्तु को प्रस्तुत करने का प्रस्ताव किया (२. १०, ३७–३८)। सुग्रीव ने सीता की खोज करने के लिये विनत को इस देश में भी जाने के लिये कहा (४. ४०, २२)।

१. अंगद, एक राजकुमार का नाम है जो वालिन् और तारा के पुत्र थे; जब यह वन में भ्रमण कर रहे थे तो गुप्तचरों ने इन्हें सुग्रीव और श्रीराम की मैत्री का समाचार दिया; इन्होंने तारा को यह समाचार सुनाया (४. १५, १५–१८)। 'न चात्मानमहं शोचे न तारां नापि बान्धवान्। यथा पुत्रं गुणज्येष्ठमङ्गदं कनकाङ्गदम् ॥,' (४. १८, ५०)। 'बालश्चाकृतबुद्धिश्च एकपुत्रश्च मे प्रियः। तारेयो राम भवता रक्षणीयो महाबलः ॥', (४. १८, ५२)। मृत्युशय्या पर पड़े वालिन् ने श्रीराम से अङ्गद की रक्षा करने का निवेदन किया (४.१८,५०–५३)। 'ललितश्चाङ्गदो वीरः सुकुमारः सुखोचितः। वास्यते कामवस्थां मे पितृव्ये क्रोधमूर्च्छिते ॥', (४. २०, १७)। 'किमङ्गदं साङ्गदवीरबाहो विहाय यातोऽसि चिरं प्रवासम्। न युक्तमेवं गुणसंनिकृष्ट

विहाय पुत्रं प्रियचारुवेगम् ॥', (४. २०, २४) । वालिन् ने सुग्रीव से अङ्गद की रक्षा करने के लिये कहा (४. २२,, ८–१५) । 'सुग्रीवस्य तुल्यपराक्रमः ।··· तेजस्वी तरुणोऽङ्गदः ॥', (४. २२, ११–१२)।' मृत्यु शय्या पर पड़े वालिन् ने इनसे सुग्रीव की आज्ञा का पालन करते रहने के लिये कहा (४. २२, २०–२३)। माता के कहने पर इन्होंने अपने मृत पिता का बार-बार नाम लेते हुये चरण-स्पर्श किया (४. २३, २२–२५) । 'सुतः सुलभ्यः सुजनः सुवश्यः कुतस्तु पुत्रः सदृशोऽङ्गदेन । न चापि विद्येत स वीर देशो यस्मिन् भवेत् सोदरसन्निकर्षः ॥ अद्याङ्गदो वीरवरो न जीवेज्जीवेत माता परिपालनार्थम् । विना तु पुत्रं परितापदीना सा नैव जीवेदिति निश्चितं मे ॥', (४. २४, २०–२१) । वालिन् की मृत्यु के बाद श्रीराम ने अङ्गद को सान्त्वना दी और अङ्गद ने वालिन् का दाह-संस्कार किया (४. २५, १. १३. १५. १६. २८. ३३. ४९.५२)। 'वृत्तज्ञो वृत्तसम्पन्नमुदारबल विक्रमम् । इममप्यङ्गदं वीर यौवराज्येऽभिषेचय॥', (४. २६, १२)।' 'ज्येष्ठस्य हि सुतो ज्येष्ठः सदृशो विक्रमेण च । अङ्गदोऽयमदीनात्मा यौवराज्यस्य भाजनम् ॥', (४. २६, १३) । राम की आज्ञा से सुग्रीव ने अङ्गद को युवराज के पद पर अभिषिक्त किया (४. २६, ३८) । लक्ष्मण को क्रोध में भरे अपने ओर आते देखकर यह घबरा गये (४. ३१, ३१) । लक्ष्मण के आदेश पर शीघ्रतापूर्वक सुग्रीव को उनके आगमन का समाचार देने के लिये गये (४. ३१, ३२–३५) । "लक्ष्मण की कठोर वाणी से अङ्गद के मन में अत्यन्त घबराहट हुई । उनके मुख पर अत्यन्त दीनता छा गई । अतः इन वेगशाली कुमार ने वहाँ से निकल कर सर्वप्रथम वानरराज सुग्रीव के तथा उसके बाद तारा और राम के चरणों में प्रणाम किया (४. ३१, ३६–३७) ।" लक्ष्मण ने राजमार्ग पर स्थित अङ्गद का रमणीय भवन देखा (४. ३३, ९) । अपने पिता के समान ही पराक्रमी युवराज अङ्गद एक सहस्र पद्म और सौ शंकु वानर सेना लेकर सुग्रीव के पास आये (४. ३९, २९–३०) । सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने अङ्गद आदि को दक्षिण दिशा की ओर भेजा (४. ४५, ६) । अङ्गद के साथ हनुमान् ने दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान किया (४.४८, १) । अङ्गदादि वानरों ने विन्ध्य पर्वत पर सीता की निष्फल खोज की (४. ४८, २–६) । एक ऐसे क्षेत्र में, जहाँ न वृक्ष थे और न जल, इन्होंने एक बलवान् असुर का वध किया (४. ४८, ७–२३) । 'अथाङ्गदस्तदा सर्वान् वानरमिदमब्रवीत् । परिश्रान्तो महाप्राज्ञः समाश्वास्य शनैर्वचः ॥', (४. ४९, १) । इन्होंने अपने साथ के निरुत्साहित और श्रान्त वानरों से सुग्रीव तथा राम के भय से एक बार पुनः दक्षिण दिशा में सीता को ढूंढ़ने के लिये कहा (४.४९, १–१०) अत्यन्त श्रान्त हो जाने तक इन लोगों ने विन्ध्य क्षेत्र के वनों तथा रजत

पर्वत पर एक बार पुनः सीता की निष्फल खोज की (४.४९, १५–२३)। विन्ध्य क्षेत्र में सीता को ढूंढ़ते हुये जल की खोज में इन्होंने ऋक्ष-बिल नामक गुफा में प्रवेश किया (४. ५०, १–८)। 'स तु सिंहवृषस्कन्धः पीनायतभुजः कपिः । युवराजो महाप्राज्ञ अङ्गदोवाक्यमब्रवीत् ॥', (४. ५३, ७)। ऋक्षबिल से बाहर आते समय जब इन्होंने देखा कि सीता को ढूंढ़ने की सुग्रीव द्वारा निर्धारित अवधि समाप्त हो गई तब सागर तट पर निराहार रहकर अपना प्राण त्याग देने का निश्चय किया क्योंकि असफल लौटने पर सुग्रीव इन्हें कदाचित ही क्षमा करते (४. ५३, ७–१९)। 'बुद्धया ह्यष्टाङ्गयायुक्तं चतुर्बलसमन्वितम् । चतुर्दशगुणं मेने हनूमान् वालिनः सुतम् ॥ आपूर्यमाणं शश्वच्च तेजोबलपराक्रमैः । शशिनं शुक्लपक्षादौ वर्धमानमिव श्रिया ॥ बृहस्पतिसमं बुद्धया विक्रमे सदृशं पितुः । शुश्रूषमाणं तारस्य शुक्रस्येव पुरंदरम् ॥', (४. ५४, २–४)। सुग्रीव के दोषों का उल्लेख करते हुये अपने साथियों सहित इन्होंने निराहार रहकर प्राण दे देने का निश्चय किया (४. ५५, १–२३)। सम्पाति को अपनी ओर आता देखकर आमरण अनशन कर रहे वानरों सहित अङ्गद ने अपने दुर्भाग्य को कोसते हुए जटायु की रामभक्ति का उल्लेख किया (४.५६,६–१६)। सम्पाति के पूछने पर इन्होंने अपना परिचय देते हुये जटायु की मृत्यु का समाचार तथा वानरों के आमरण उपवास का कारण बताया (४. ५७, ४–१९)। परम बुद्धिमान् युवराज अङ्गद ने सम्पाति से रावण के निवासस्थान का पता पूछा (४. ५८, ८–१०)। गर्जन करते हुये महासागर को देखते ही समस्त वानर-सेना को विषाद-ग्रस्त देखकर अङ्गद ने उन्हें प्रोत्साहित करने का प्रयास किया (४. ६४, ८–१०)। "दूसरे दिन अङ्गद ने वानरों के साथ पुनः परामर्श करने के पश्चात् इस प्रकार कहा : 'तुम लोगों में कौन ऐसा महातेजस्वी वीर है जो इस समुद्र को लाँघ कर शत्रुदमन सुग्रीव को सत्यप्रतिज्ञ बनायेगा ? कौन इस समुद्र को लाँघ कर इन समस्त यूथपति वानरों को महान् भय से मुक्त कर देगा ? जिसमें यह सामर्थ्य हो वह आगे आकर शीघ्र ही हम सबको परम पवित्र अभय-दान दे ।' (४. ६४, ११–१९)।" अङ्गद का वचन सुनकर जब सब चुप रहे तो उन्होंने उनसे पुनः बोलने के लिये कहा (४.६४,२०–२२)। अङ्गद की बात सुनकर सभी वानर अपनी-अपनी शक्ति का परिचय देने लगे (४. ६५, १)। स्वयं अङ्गद ने बताया कि वे उस महासागर की सौ योजन की विशाल दूरी को लाँघने में समर्थ हैं किन्तु लौट भी सकेंगे या नहीं यह निश्चित रूप से नहीं कह सकते (४. ६५, १८–१९)। 'सत्यविक्रमः परन्तपः', (४. ६५, २६)। जाम्बवान ने कहा कि पहले अङ्गद को स्वयं समुद्र का लङ्घन न कर अपने सेवकों में से ही किसी को इस कार्य के लिये

नियुक्त करना चाहिये (४. ६५, २०–२७)। जाम्बवान की बात सुनकर कहा : 'यदि मैं नहीं जाऊँगा, और दूसरा कोई भी जाने को तैयार न होगा तब हम लोगों को पुनः मरणान्त उपवास ही करना होगा, क्योंकि सीता का पता लगाये बिना हम घर नहीं लौट सकते।' (४. ६५, २८–३२)। हनुमान् के लङ्का से सकुशल लौट आने पर इन्होंने उनकी अत्यन्त प्रशंसा की (५. ५७, ४४–४८)। तत्पश्चात् समस्त वानरों सहित अङ्गद सीता के दर्शन का समाचार सुनने के लिये महेन्द्रपर्वत पर हनुमान् को चारों ओर से घेर कर बैठ गये (५. ५७, ४९–५३)। हनुमान् का वचन (५. ५९, १–३२) सुनने के पश्चात् अङ्गद ने राम और सुग्रीव को सूचित किये बिना ही समस्त राक्षसों को मार कर सीता को मुक्त करा लेने का प्रस्ताव किया (५. ६०, १–१३)। जाम्बवान के प्रस्ताव (५. ६०, १४–२०) को मानकर अङ्गद घर लौटने के लिये तैयार हो गये (५. ६१, १–२)। हर्ष से भरे समस्त वानरों ने जब मधुवन में मद्यपान की इच्छा प्रकट की तो अङ्गद ने उन्हें स्वीकृति प्रदान की (५. ६१, ११–१२)। 'ते निसृष्टाः कुमारेण धीमता बालि सूनुना। हरयः समपद्यन्त द्रुमान् मधुकराकुलान् ॥', (५. ६१, १३)। वानरों को इच्छानुसार मधुपान करने की अनुमति दे दी (५. ६२, २–४)। दधिमुख से सुग्रीव का समाचार (५. ६४, १–१२) सुनकर अङ्गद ने तत्काल ही सुग्रीव के पास लौटने का प्रस्ताव किया (५. ६४, १२–१७)। सभी वानरों ने इनके प्रस्ताव को स्वीकार किया (५. ६४, १८-२२)। अङ्गद आकाश-मार्ग से सुग्रीव के पास आये, तथा अन्य वानरों ने भी उनका अनुगमन किया (५. ६४, २३-२६)। वानरों सहित सुग्रीव के पास जाकर अङ्गद ने श्रीराम तथा सुग्रीव के चरणों में प्रणाम किया (५. ६४, ४०–४१)। लङ्का विजय के लिये दक्षिण-यात्रा करते समय अङ्गद लक्ष्मण को अपने कन्धों पर बैठा कर चले (६. ४, १९)। श्रीराम के पूछने पर (६. १७, ३१–३३) अङ्गद ने परामर्श दिया कि विभीषण को अङ्गीकार करने के पूर्व उसका भली प्रकार परीक्षण कर लेना चाहिये (६. १७, ३८–४२)। शुक को दूत नहीं वरन् एक गुप्तचर जानकर अङ्गद ने उसे बन्दी बना लेने का प्रस्ताव किया (६. २०, २९–३०)। राम की आज्ञा से अङ्गद विशाल वानरी सेना के हृदय (उरसि) के स्थान पर स्थित हुये (६. २४, १४)। 'गिरिश्रृङ्गप्रतीकाशः पद्मकिञ्जल्कसंनिभः', (६. २६, १५)। अङ्गद को इन्द्र का नाती कहा गया है ('नप्ताशक्रस्य दुर्धर्षो बलवानङ्गदो युवा', ६. ३०, २५)। श्रीराम ने कहा कि विशाल वाहिनी को संयुक्त कर वालिकुमार अङ्गद दक्षिण द्वार की रक्षा करनेवाले महापार्श्व और महोदर के युद्ध का सञ्चालन करें (६. ३७, २७)। राम की आज्ञा का पालन

करने के लिये अङ्गद एक ही मुहूर्त में परकोटे को लाँघ कर रावण के राज-भवन में जा पहुँचे और अपना परिचय देने के पश्चात् रामचन्द्रजी की कही हुई समस्त बातें ज्यों की त्यों सुना दीं (६. ४१, ७३–८१)। 'ग्राहयामास तारेयः स्वयमात्मानानमत्मवान्। बलं दर्शयितुं वीरो यातुधानगणे तदा ॥', (६. ४१, ८५)। रोष से भरे रावण के वचन (६. ४१, ८२–८३) को सुनकर अङ्गद ने अपने को राक्षसों से पकड़वा दिया; किन्तु जब राक्षसों ने इन्हें बन्दी बना लिया तब ये उन सब राक्षसों को लिये-दिये ही ऊपर उछले और रावण के भवन के शिखर को भङ्ग करते हुये आकाश मार्ग से अपने शिविर में लौट आये (६. ४१, ८४–९१)। वालि-पुत्र अङ्गद के साथ महातेजस्वी राक्षस इन्द्रजित् उसी प्रकार युद्ध करने लगा जिस प्रकार त्रिनेत्रधारी महादेव के साथ अन्धकासुर ने युद्ध किया था (६. ४३, ६)। अङ्गद ने अपनी गदा से इन्द्रजित् के रथ को चूर-चूर कर डाला (६, ४३, १८–१९)। इन्द्रजित् के रथ और सारथि को विनष्ट करके उसे रथ से नीचे उतार देने के इनके पराक्रम की देवों और ऋषियों ने अत्यन्त सराहना की (६. ४४, २८–३०)। श्रीराम की आज्ञा से (६. ४५, १–३) ये इन्द्रजित् का पता लगाने के लिये गये किन्तु इन्द्रजित् ने इन्हें रोक दिया (६.४५, ४–५)। राम और लक्ष्मण को मूर्च्छित देखकर अन्य वानरों आदि के साथ अङ्गद भी शोक करने लगे (६. ४६, ३)। इन्द्रजित् ने अङ्गद को आहत कर दिया। (६. ४६, २१)। इन्होंने सतर्कतापूर्वक वानरसेना की रक्षा की (६. ४७, २)। सुग्रीव के पूछने पर (६. ५०, १) अङ्गद ने बताया कि श्रीराम और लक्ष्मण की दशा को देखकर ही वानरसेना ने पलायन किया (६. ५०, २–३)। यह देखकर कि वज्रदंष्ट्र के नेतृत्व में राक्षस वानर सेना को त्रस्त कर रहे हैं, अङ्गद ने भी राक्षसों का वध करना आरम्भ किया (६. ५३, २७–३२)। वज्रदंष्ट्र के द्वारा वानर-सेना को पराजित होता देखकर अङ्गद ने वज्रदंष्ट्र के साथ घोर युद्ध किया जिसमें इन्होंने उसको रथविहीन करके विभिन्न आयुधों से उस समय तक युद्ध किया जब तक उसका वध नहीं कर दिया (६. ५४, १६–३७)। अङ्गद ने कुम्भहनु का वध किया (६. ५८, २३)। राम की आज्ञा से अङ्गद आदि पर्वतशिखिर लिये हुये लङ्का के द्वार पर डट गये (६. ६१, ३८)। कुम्भकर्ण को देखकर वानर सेना जब भयभीत हो गई (६. ६६, ३) तब अङ्गद ने एक उत्साहवर्धक भाषण करके वानरों में पुनः साहस का सञ्चार किया (६. ६६, ४–७)। वानर-सेना को पलायन करता देखकर अङ्गद ने एक बार पुनः उत्साहवर्धक वचन से वानरों को रोका (६. ६६, १८–३२)। कुम्भकर्ण के साथ युद्ध करते हुये अङ्गद ने उसे मूर्च्छित किया किन्तु अन्त में कुम्भकर्ण के प्रहार से स्वयं भी

मूर्च्छित हो गये (६. ६७, ४२–४९)। सुग्रीव की आज्ञा (६. ६९, ८१–८२) का पालन करते हुये नरान्तक नामक राक्षस के साथ युद्ध करके उसके अश्व सहित उसका वध कर दिया (६. ६९, ८३–३४)। नरान्तक का वध कर देने पर देवताओं ने इनकी सराहना की जिससे ये पुनः युद्ध के लिये हर्ष तथा उत्साह से भर गये (६. ६९, ९५–९६)। देवान्तक, त्रिशिरा और महोदर नामक राक्षसों ने एक साथ ही इन पर आक्रमण किया (६. ७०, १–४)। इन राक्षसों के विरुद्ध इन्होंने वीरतापूर्वक युद्ध किया, किन्तु अन्त में नील और हनूमान् भी इनकी सहायता के लिये आ गये (६. ७०, ५–२०)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ४५)। कम्पन के साथ युद्ध करते हुये इन्होंने उसका वध कर दिया (६. ७६, १–३)। शोणिताक्ष के साथ युद्ध करते हुये इन्होंने उसके धनुष आदि को तोड़ दिया और उसके बांद उसी का खड्ग छीन कर उसे गम्भीर रूप से आहत किया (६. ७६, ४–१०)। प्रजङ्घ, यूपाक्ष, और शोणिताक्ष आदि राक्षसों से अकेले ही युद्ध किया (६. ७६, १४-१५)। युद्ध में प्रजङ्घ का वध किया (६. ७६. १८–२७)। कुम्भ के साथ युद्ध किया जिसमें स्वयं बुरी तरह आहत हो गये (६. ७६,-४६–५५)। इन्द्रजित् के विरुद्ध युद्ध में इन्होंने लक्ष्मण की सहयता की (६ ८५, ३५)। जब वानर सेना पराजित हो रही थी तब इन्होंने महापार्श्व नामक राक्षस के साथ युद्ध करके उसका वध किया (६ ९८, १–२२)। रावण की मृत्यु हो जाने पर राम का अभिवादन किया (६. १०८, ३३)। अपने राज्याभिषेक के समय श्रीराम ने अङ्गद को दो रत्न-जटित अङ्गद (बाजूबन्द) भेंट किये (६. १२८, ७७)। श्रीराम ने हनुमान् और अङ्गद को अपने गोद में बैठाकर सुग्रीव से इनकी प्रशंसा की (७. ३९, १६–१९)। सुग्रीव ने श्रीराम को बताया कि वे किष्किन्धा में अङ्गद का राज्याभिषेक करके आये हैं (७. १०८, २३)।

२. अङ्गद, लक्ष्मण के पुत्र का नाम है। 'इमौ कुमारौ सौमित्रे तव धर्मविशारदौ। अङ्गदश्चन्द्रकेतुश्च राज्यार्थं दृढविक्रमौ ॥', (७ १०२, २)। इन्हें कारुपथ का राजा बनाया गया (७. १०२, ५–७. ११–१३)।

अङ्गदीया, कारुपथ नामक प्रदेश की राजधानी का नाम है जहाँ लक्ष्मण-पुत्र अङ्गद का शासन था। इसे श्रीराम ने अङ्गद के लिये बसाया था (७. १०२, ८–१३)।

अङ्ग-लेपा, पश्चिम दिशा में स्थित एक नगर का नाम है जहाँ सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने सुषेण इत्यादि को भेजा था (४. ४२, १४)।

अङ्गारक, दक्षिण-समुद्र में निवास करने वाली एक राक्षसी का नाम

है जो छाया पकड़ कर प्राणियों को खींच लेती थी (४. ४१, २६)।

अङ्गिरस, एक प्रजापति का नाम है जो पुलस्त्य के बाद हुये थे (३. १४, ८)। इनके वंशजों ने अपने आश्रम में विघ्न उत्पन्न करने पर हनुमान् को शाप दिया था (७. ३६, ३२–३४)। राजा निमि ने इन्हें अपने यज्ञ-सत्र में आमन्त्रित किया था (७. ५५, ९)।

अज, नाभाग के पुत्र और दशरथ के पिता का नाम है (१. ७०, ४३)।

१. अञ्जन, एक पर्वत का नाम है जहाँ निवास करने वाले वानरों को आमन्त्रित करने के लिये सुग्रीव ने हनुमान् को आदेश दिया; इस पर्वत पर रहने वाले वानर काजल और मेघ के समान काले थे (४. ३७, ५)। सुग्रीव की आज्ञा पा कर यहाँ से तीन करोड़ वानर आये (४. ३७, २०)।

२. अञ्जन, एक हाथी का नाम है (७. ३१, ३६)।

अञ्जना, कपियोनि में अवतीर्ण पुञ्जिकस्थला नामक अप्सरा का नाम है: 'अप्सराऽप्सरसां श्रेष्ठा विख्याता पुञ्जिकस्थला। अञ्जनेति परिख्याता पत्नी केसरिणो हरेः ॥ विख्याता त्रिषु लोकेषु रूपेणाप्रतिमा भुवि ।,' (४. ६६ ८–९)। "पुञ्जिकस्थला नाम से विख्यात समस्त अप्सराओं में अग्रगण्य थी। एक समय शापवश यह कपियोनि में अवतीर्ण हुई। उस समय यह वानरराज महामनस्वी कुञ्जर की पुत्री हुई और इच्छानुसार रूप धारण कर सकती थी। इस भूतल पर इसके रूप की समानता करने वाली अन्य कोई स्त्री नहीं थी। इसी का नाम अञ्जना पड़ा और यह वानरराज केसरी की पत्नी हुई। एक दिन जब यह मानवी स्त्री का शरीर धारण करके पर्वत शिखर पर विचरण कर रही थी तब वायु देवता ने इसके वस्त्र का हरण कर लिया और अव्यक्त रूप से इसका आलिङ्गन करते हुये इसके साथ मानसिक संकल्प से समागम किया जिसके फलस्वरूप इसने एक गुफा में हनुमान् को जन्म दिया (४. ६६, ८–२०)। ब्रह्मा के भवन की ओर जाते समय रावण ने इसके (पुञ्जिकस्थला के) साथ बलात्कार किया (६. १३, ११–१२)। इस बलात्कार करने के कारण इसने रावण को शाप दिया (६. ६०, ११–१२)।

अतिकाय, एक राक्षस का नाम है जिसकी काया अत्यन्त विशाल थी और जो रावण के साथ युद्धभूमि में आया था : 'यश्चैष विन्ध्यास्तमहेन्द्रकल्पो धन्वी रथस्थोऽतिरथोऽतिवीरः । विस्फारयंश्चापमतुल्यमानं नाम्नातिकायोऽतिविवृद्धकायः ॥', (६. ५९, १६)। यह रावण का पुत्र और कुम्भकर्ण का भतीजा था और इसीलिये कुम्भकर्ण की मृत्यु पर अत्यन्त शोकाकुल हो उठा (६. ६८, ७)। त्रिशिरा के शब्दों (६. ६९, १–७) को सुनकर युद्ध-भूमि

में जाने के लिये उद्यत हुआ (६. ६९, ९)। इसे 'शक्रतुल्यपराक्रमः, वीरः, अन्तरिक्षगतः, मायाविशारदः, त्रिदशदर्पघ्नः, समरदुर्मदः, सुबलसम्पन्नः विस्तीर्णकीर्त्तिः, कभी न पराजित होनेवाला, अस्त्रवित् , युद्धविशारदः, प्रवरविज्ञानः, लब्धवरः, शत्रुबलार्दनः, भास्करतुल्यदर्शनः, आदि विशेषणों से सम्बोधित किया गया है (६ ६९, १०–१४)। रावण की आज्ञा लेकर यह रावण-पुत्र युद्ध-भूमि में गया (६. ६९, १७–१९)। "राक्षसराज रावण का अत्यन्त तेजस्वी पुत्र, अतिकाय, समस्त धनुर्धारियों में श्रेष्ठ था। वह एक ऐसे उत्तम रथ पर आरूढ़ होकर युद्ध-भूमि की ओर चला जो विविध प्रकार के आयुधों से युक्त था। उस रथ पर वह श्रेष्ठ निशाचरों से घिर कर बैठा हुआ वज्रपाणि इन्द्र के समान शोभा पा रहा था (६. ६९, २५–२८)।" 'चुकोप च महातेजा ब्रह्मदत्तवरो युधि। अतिकायोऽद्रिसंकाशो देवदानवदर्पहा ॥', (६. ७१, ३)। जब इसके साथ के राक्षस युद्ध में मारे गये तब इसने कुपित होकर वानरों पर तीव्र आक्रमण किये जिससे वानर-सेना भाग खड़ी हुई (६. ७१, १–९)। यह एक ऐसे रथ पर बैठा था जिसमें एक सहस्र अश्व सन्नद्ध थे (६. ७१, १२)। इसका रथ विविध प्रकार के आयुधों से सुरक्षित था और यह स्वयं अपने हाथ में एक विशाल धनुष तथा अपने दोनों पार्श्वों में बड़े-बड़े खड्ग धारण किये हुये था (६. ७१, १२–२४ : इसे इन श्लोकों में 'रक्तकण्ठगुण, धीर और महापर्वतसंनिभः' आदि विशेषणों से सम्बोधित किया गया है)। 'तस्यासीद् वीर्यवान् पुत्रो रावणप्रतिमो बले। वृद्धसेवी श्रुतबलः सर्वास्त्रविदुषां वरः ॥ अश्वपृष्ठे नागपृष्ठे खड्गे धनुषि कर्षणे। भेदे सान्त्वे च दाने च नये मन्त्रे च संमतः ॥', (६. ७१, २८–२९)। यह धान्यमालिन् से उत्पन्न रावण का पुत्र था (६. ७१, ३०)। इसने अपनी तपस्या से ब्रह्मा को इतना अधिक प्रसन्न किया कि उन्होंने इसे देवताओं और असुरों से अवध्य होने का वरदान देते हुये दिव्य कवच, तथा सूर्य के समान तेजस्वी रथ भी दिया (६. ७१, ३१–३२)। इसने इन्द्र और वरुण, तथा सैकड़ों अन्य देवताओं और दानवों को पराजित किया था (६. ७१, ३३–३४)। "अपनी धनुष की टंकार करते हुये इसने वानर–सेना में प्रवेश कर के द्विविद, मैन्द, और कुमुद आदि वीरों को पराजित किया और तदनन्तर अहंकार युक्त वाणी में इस प्रकार बोला : 'मैं धनुष और बाण लेकर रथ पर बैठा हूँ। किसी साधारण प्राणी से युद्ध करने का मेरा विचार नहीं है। जिसमें शक्ति, साहस, और उत्साह हो वह शीघ्र यहाँ आकर मुझसे युद्ध करे।' (६. ७१, ३७–४५)।" "लक्ष्मण को अपने सम्मुख युद्ध के लिये उपस्थित देख कर इसने उनसे व्यंगपूर्वक इस प्रकार कहा : 'सुमित्राकुमार ! तुम अभी बालक हो; पराक्रम में कुशल नहीं हो; अतः लौट

जाओ।' फिर भी जब लक्ष्मण नहीं हटे तब इसने उन पर बाण-प्रहार करने की धमकी दी। (६. ७१, ४६–५६)।" इसने लक्ष्मण के साथ घोर युद्ध किया किन्तु अन्त में लक्ष्मण ने इसका वध कर दिया (६. ७१, ६६–११०. ११६)। यह देवों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये सुमाली के साथ युद्ध–भूमि में गया था (७. २७, ३१)।

१. अत्रि, एक ऋषि का नाम है : वनवास के समय जब लक्ष्मण तथा सीता सहित श्रीराम इनके आश्रम पर पधारे तब इन्होंने इन लोगों को ,अपने पुत्र की भाँति स्नेहपूर्वक अपनाया, अपने आश्रम पर इन लोगों के सत्कार की स्वयं व्यवस्था की, लक्ष्मण और सीता को भी सत्कारपूर्वक संतुष्ट किया, और अपनी पत्नी अनसूया से सीता की देख-रेख करने के लिये कहा (२. ११७, ५–७)। इन्हें 'धर्मज्ञः सर्वभूतहिते रतः' और 'ऋषिसत्तमः' कहा गया है (२. ११७, ७-८)। अपनी पत्नी अनसूया की अत्यधिक प्रशंसा करते हुये इन्होंने उनका राम से परिचय कराया और सीता से उनके पास जाने के लिये कहा (२. ११७, ९–१३)। 'अत्रिः कुलपतिर्यत्र सूर्यवैश्वानरोपमः। अस्मिन्देशे महाकायो विराधो निहतो मया ।।', (६. १२३, ४९)। अयोध्या लौटने पर श्रीराम का अभिवादन करने के लिये दक्षिण दिशा के अन्य ऋषियों के साथ ये भी उपस्थित हुये थे (७. १, ३)। एक यज्ञ–सत्र में राजा निमि ने अपने ऋत्विज का कार्य करने के लिये इन्हें आमन्त्रित किया था (७. ५५, ९)।

२. अत्रि, उत्तर दिशा में निवास करनेवाले एक ऋषि का नाम है जो वसिष्ठादि ऋषियों के साथ राम का अभिवादन करने के लिये अयोध्या पधारे थे (७. १, ५)।

अदिति, एक देवी का नाम है जो इन्द्र (वज्रपाणि) की माता थीं (१. १८, ११)। सिद्धाश्रम का पूर्ववृत्तान्त सुनाते हुये विश्वामित्र ने श्रीराम को बताया कि महर्षि कश्यप अपनी पत्नी अदिति के साथ सहस्र दिव्य वर्षों का व्रत समाप्त करके इस आश्रम पर पधारे थे (१. १९, १०–११)। भगवान् विष्णु अदिति के गर्भ से ही प्रकट होकर वामन रूप में विरोचन-कुमार बलि के पास गये थे (१. २९, १९)। देवों को इनका ही पुत्र कहा गया है (१. ४५, ३८)। असुरों के विरुद्ध युद्ध कर रहे इन्द्र की सफलता के लिये इन्होंने मङ्गलकामना की थी (२. २५, ३४)। ये प्रजापति दक्ष की पुत्री थीं, जिनका काश्यप के साथ विवाह हुआ (३. १४, ११)। अपने पति की अनुकम्पा से ये ३३ वैदिक देवताओं की माता हुईं (३. १४, १३–१४)।

९४/२६(३) ६५,७६२

इनकी भगिनी का नाम दिति था, और ये दोनों ही प्रजापति कश्यप की पत्नियाँ थीं (७. ११, १५)।

अनरण्य, बाण के पुत्र और पृथु के पिता का नाम है (१. ७०, २३)। रावण ने बताया : 'पूर्वकाल में इक्ष्वाकुवंशी राजा अनरण्य ने मुझे शाप देते हुये कहा था कि इक्ष्वाकुवंश में ही एक श्रेष्ठ पुरुष (राम) उत्पन्न होगा जो मुझे, पुत्र, मन्त्री, सेना, अश्व और सारथि सहित समराङ्गण में मार डालेगा', (६. ६०, ८–१०)। रावण की ललकार सुनकर इन्होंने उससे युद्ध किया किन्तु अन्त में रावण के हाथों इनकी मृत्यु हो गई और मृत्यु के समय ही इन्होंने रावण को उक्त शाप दिया (७. १९, ७. ९. १४. १९. २५–३२)।

अनल, विभीषण के अनुचर, एक राक्षस का नाम है जिसने पक्षी का रूप धारण करके अन्य राक्षसों के साथ लङ्का में जाकर रावण की रक्षा-व्यवस्था तथा सैन्यशक्ति का पता लगाया था (६. ३७, ७)। यह माली और वसुदा का पुत्र था (७. ५, ४२. ४४)।

१. अनला, दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी का नाम है (३. १४. ११)। इसने पवित्र फलवाले समस्त वृक्षों को जन्म दिया (३. १४, ३१)।

२. अनला, एक राक्षसी का नाम है जो माल्यवान् और सुन्दरी की पुत्री थी (७. ५, ३६–३७)। यह विश्वावसु की पत्नी और कुम्भीनस की माता हुई (७. ६१, १७)।

अनंग, अग्नि (हुताशन) के पुत्र, एक वानर-प्रमुख का नाम है जिसे सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने दक्षिण दिशा की ओर भेजा (४. ४१, ४)।

अनन्तदेव, जातरूपशील पर्वत पर निवास करनेवाले एक महात्मा का नाम है : 'जातरूपशिलो नाम महान्कनकपर्वतः ॥ तत्र चन्द्रप्रतीकाशं पन्नग धरणीधरम् । पद्मपत्रविशालाक्षं ततो द्रक्ष्यथ वानराः ॥ आसीनं पर्वतस्याग्रे सर्वदेवनमस्कृतम् । सहस्रशिरसं देवमनन्तं नीलवाससम् ॥', (४. ४०, ४८–५०) इस पर्वत पर इनकी ताड़ के चिह्न से युक्त सुवर्णमयी ध्वजा फहराती रहती थी जिसकी तीन शिखायें थीं (४. ४०, ५१)।

अनिल, एक राक्षस का नाम है जो माली और वसुदा का पुत्र तथा विभीषण का आमात्य था (७. ५, ४२–४४)।

अनसूया, ऋषि अत्रि की पत्नी का नाम है (२. ११७, ७)। वाल्मीकि ने पहले ही अनुमान कर लिया था कि सीता के साथ इनका वार्तालाप होगा और यह सीता को आभूषणादि का उपहार देंगी (१. ३, १८)। इन महाभागा, तापसी और धर्मचारिणी अपनी इन स्त्री से अत्रि ने सीता को अपने पास ले जाने के लिये कहा (२. ११७, ८)। "अत्रि ने श्रीराम से इनका परिचय देते हुये

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

बताया कि एक समय दस वर्षों तक वृष्टि नहीं हुई। उस समय जब समस्त जगत् निरन्तर दग्ध होने लगा तब अनसूया ने अपने उग्र तप से आश्रम में फल-मूल उत्पन्न किये और मन्दाकिनी की पवित्र धारा बहाई। इन्होंने १०,००० वर्षों तक घोर तपस्या करते हुये ऋषियों के विघ्नों का निवारण किया और देवताओं के कार्य के लिये एक रात्रि को ही दस रात्रियों के बराबर कर दिया। (२. ११७, ९–१२)।" 'तामिमां सर्वभूतानां नमस्कार्यां तपस्विनीम्। अभिगच्छतु वैदेही वृद्धामक्रोधनां सदा॥ अनसूयेति या लोके कर्मभिः ख्यातिमागता।', (२. ११७, १२)। 'शिथिलां वलितां वृद्धां जरापाण्डुरमूर्धजाम्। सततं वेपमानाङ्गी प्रवाते कदलीमिव॥ तां तु सीता महाभागामनसूयां पतिव्रताम्। अभ्यवादयदव्यग्रा स्वं नाम समुदाहरत्॥', (२. ११७, १६–१७)। इन्होंने सीता का सत्कार करते हुये उनके प्रत्येक परिस्थिति में पति के ही साथ रहने के धर्मानुकूल आचरण की सराहना की (२. ११७, २६–२७)। इनके वचनों को सुनकर सीता ने इनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की (२. ११८, १)। सीता की धर्म और कर्त्तव्यनिष्ठा से अत्यन्त प्रसन्न होकर इन्होंने उन्हें वर देने की इच्छा प्रकट की (२. ११८, १३–१५)। सीता की निर्लोभता से अत्यधिक प्रसन्न होकर इन्होंने उन्हें दिव्य माला, अङ्गराग और बहुमूल्य अनुलेप आदि प्रदान किये (२ ११८, १७–२०)। जब सीता ने इनकी अत्यधिक प्रशंसा आरम्भ की तब प्रसंग को बदलने के लिये इन्होंने (दृढव्रता) उनसे (सीता से) अपने विवाह का वृत्तान्त सुनाने के लिये कहा (२. ११८, २३–२५)। सीता-स्वयंवर के वृत्तान्त को सुनकर यह अत्यन्त प्रसन्न हुईं और सन्ध्या समय सीता को श्रीराम के पास जाने की अनुमति देते हुये उनसे उन्हीं वस्त्रों और अनुलेपनों आदि को धारण करने के लिये कहा जो इन्होंने उन्हें दिया था (२. ११९, १–११)। इनके पास से जाने के पूर्व सीता ने इन्हें नमस्कार किया (२. ११९, १२)।

अनुह्लाद, एक दानव का नाम है जिसने छलपूर्वक शची का अपहरण कर लिया था, और जिसका इस अपराध के कारण इन्द्र ने वध किया (४. ३९, ६–७)।

अन्ध्र, दक्षिण क्षेत्र में स्थित एक प्रदेश का नाम है जहाँ सीता को ढूँढ़ने के लिए सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १२)।

अन्धक, एक दैत्य का नाम है जिसका रुद्र ने श्वेतारण्य में वध किया था (३. ३०, २७; ६. ४३, ६)।

अपर-पर्वत, एक पर्वत का नाम है। केकय से लौटते समय भरत इसपर से होकर आये थे (२. ७१, ३)।

अप्सरस्—नन्दन कानन में क्रीड़ा करने वाली अप्सराओं को भी रावण ने स्वर्ग से भूमि पर गिरा दिया (१. १५, २३)। जब विष्णु ने भूतल पर अवतार लेने का वचन दे दिया तव देवों आदि के साथ अप्सराओं ने भी उनका स्तवन किया (१. १५, ३२)। ब्रह्मा ने देवताओं से कहा कि वे सब अप्सराओं आदि के गर्भ, से वानर-रूप में अपने समान पराक्रमी पुत्र उत्पन्न करें (१. १७, ५. २४)। राजा दशरथ के पुत्रों के जन्म के अवसर पर अप्सराओं ने नृत्य किया (१. १८, १७)। अन्य लोगों के साथ अप्सरायें भी राजा भगीरथ के रथ के पीछे गंगा के साथ-साथ चल रही थीं (१. ४३, ३२)। समुद्र-मन्थन के समय समुद्र से छः करोड़ अप्सरायें प्रकट हुईं, किन्तु देवों या दानवों में से किसी ने भी इन्हें अपनी पत्नी के रूप में ग्रहण नहीं किया जिससे ये सब सामान्या (साधारणाः) मानी गईं (१. ४५, ३२–३५)। मन्थन करने से ही 'अप' में उसके रस से ये सुन्दर स्त्रियाँ उत्पन्न हुई थीं, इसलिए इनका 'अप्सरस्' नाम पड़ा (१. ४५, ३३)। अहल्या के शापमुक्त होने पर अप्सराओं ने उत्सव मनाया (१. ४९, १९)। राम के विवाह के अवसर पर अप्सराओं ने नृत्य किया (१. ७३, ३८)। राम और परशुराम के संघर्ष का अनुपम दृश्य देखने के लिए अप्सरायें भी उपस्थित हुई थीं (१. ७६, १०)। भरद्वाज की आज्ञा से अप्सराओं ने भरत की सेना का सत्कार किया (२. ९१, १६. २६)। भरद्वाज के आवाहन पर नन्दनकानन से बीस सहस्र अप्सरायें आईं (२. ९१, ४५)। ऋषि माण्डकर्णि की तपस्या में विघ्न उत्पन्न करने के लिये देवताओं ने पाँच प्रमुख अप्सराओं को नियुक्त किया (३. ११, १५)। इन पाँच अप्सराओं ने महर्षि माण्डकर्णि को मोहित कर लिया और उनकी पत्नियों के रूप में पञ्चाप्सर सरोवर के भीतर बने भवन में निवास करने लगीं (३. ११, १६–१९)। रावण ने समुद्र-तटवर्ती प्रदेश की शोभा का अवलोकन करते हुये देखा कि दिव्य आभूषणों और पुष्पमालाओं को धारण करने वाली और क्रीड़ा-विहार की विधि को जानने वाली सहस्रों दिव्य-रूपिणी अप्सरायें वहाँ सव ओर विचरण कर रही हैं (३. ३५, १६)। 'स्वर्गेऽपि पद्मामलपद्मनेत्र समेत्य सम्प्रेक्ष्य च मामपश्यन्। न ह्येष उच्चावचताम्रचूडा विचित्रवेषाप्सरसोऽभजिष्यत् ॥', (४. २४, ३४)। सुदर्शन सरोवर पर जल-विहार के लिए अप्सरायें भी अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक आती रहती थीं (४. ४०, ४६)। अप्सराओं आदि की उपस्थिति से महेन्द्रपर्वत की शोभा में और वृद्धि हो जाती है (४. ४१, २१)। कैलास पर्वत पर कुबेर के भवन के समीप स्थित सरोवर में अप्सरायें जल-क्रीड़ा करती हैं (४. ४३, २२)। क्षीरोद सागर को अप्सराओं का नित्य-निवासस्थान कहा गया है (४. ४६,

१५)। इन्द्रजित् की मृत्यु पर अप्सराओं ने भी हर्षपूर्वक आकाश में नृत्य किया (६. ९०, ७५. ८५)। राम और रावण के अद्भुत युद्ध को देखने के लिये अप्सरायें भी वहाँ उपस्थित हुईं (६. १०७, ५१)। राम के राज्याभिषेक के समय अप्सराओं ने नृत्य किया (६. १२८, ७१)। पुलस्त्य मुनि सदैव तपस्या में लगे रहते थे, किन्तु क्रीड़ा करती हुई अप्सरायें उनके आश्रम में आकर उनकी तपस्या में विघ्न डालती थीं (७. २, ९)। किन्तु एक दिन मुनि द्वारा शाप की धमकी देने पर इन्होंने उनके आश्रम में आना बन्द कर दिया (७. २, १३–१४)। कैलास पर्वत पर मन्दाकिनी नदी के तट पर विचरण करना अप्सराओं को अत्यन्त प्रिय था (७. ११, ४३)। कुबेर के भवन में अप्सराओं के गायन की मधुर ध्वनि सदैव सुनाई पड़ती थी (७. २६, ९)। जब इन्द्र रावण के साथ युद्ध करने के लिये निकले तब अप्सराओं का समूह नृत्य करने लगा (७. २८, २६)। देवता, दानव और गन्धर्व आदि अपनी-अपनी स्त्रियों तथा अप्सराओं के साथ विन्ध्य-गिरि पर क्रीड़ा करते थे (७. ३१, १६)। जब लवणासुर के प्रहार से शत्रुघ्न मूर्च्छित होकर गिर पड़े तब अप्सराओं आदि में महान् हाहाकार मच गया (७. ६९, १३)। जब शत्रुघ्न ने लवणासुर का वध करने के लिये एक अमोघ बाण निकाला तब देवता, असुर, गन्धर्व, और अप्सराओं, इत्यादि के साथ समस्त जगत् अस्वस्थ होकर ब्रह्मा जी की शरण में गया (७. ६९, १६–२१)। लवणासुर का वध कर देने पर अप्सराओं ने शत्रुघ्न की प्रशंसा की (७. ६९, ४०)। लक्ष्मण पर पुष्पों की वर्षा की (७. १०६, १६)। जब श्रीराम परमधाम पधारने के लिये सरयू-तट पर आये तब वहाँ अत्यधिक अप्सरायें आदि एकत्र हो गईं (७. ११०, ७)। श्रीराम के विष्णु रूप में स्थित हो जाने पर अप्सरायें भी उनका गुणगान करने लगीं (७. ११०. १४)।

अभिकाल, एक ग्राम का नाम है जो केकय देश को जाते समय वसिष्ठ के दूतों के मार्ग में पड़ा था (२. ६८, १७)।

अमरावती, इन्द्र की पुरी का नाम है (३. ४८, १०)।

अमृत, उस पेय का नाम है जिसे देवताओं ने अजर और अमर होने के लिये प्राप्त करने का निश्चय किया (१. ४५, १६)। क्षीरोद-सागर के मन्थन से इसे प्राप्त किया गया (१. ४५, १७–१८. ३८)। अमृत के सागर से प्रकट होते ही देवताओं और दानवों में उसे प्राप्त करने के लिये संघर्ष हुआ (१. ४५, ४०)। इस युद्ध के फलस्वरूप देवताओं और दानवों का समस्त समूह क्षीण होने लगा, किन्तु विष्णु ने अपनी मोहिनी माया का आश्रय लेकर उस अमृत का अपहरण कर लिया (१. ४५, ४२)। सम्पाति ने बताया कि अमृतमन्थन की

घटना उन्होंने देखी थी (४. ५८, १३)। अमृत को सुरभि के दुग्ध से उत्पन्न बताया गया है (७. २३, २३)।

अम्बरीष, अयोध्या के राजा का नाम है। इन्द्र द्वारा इनके यज्ञाश्व का अपहरण कर लेने से इनका यज्ञ भंग हो गया था (१. ६१, ५–६)। तब इनके पुरोहित ने खोये अश्व के स्थान पर किसी पुरुष को ही लाने के लिये कहा (१. ६१, ७–८)। पुरोहित की बात सुनकर महाबुद्धिमान, पुरुष-श्रेष्ठ राजा अम्बरीष ने सहस्रों गायों के मूल्य पर भी एक पुरुष को प्राप्त करने के लिये यत्र-तत्र अन्वेषण किया (१. ६१, ९–१०)। अन्ततोगत्वा इन्होंने भृगुतुङ्ग पर अपनी पत्नी तथा तीन पुत्रों के साथ निवास कर रहे ऋचीक मुनि का दर्शन किया (१. ६१, ११–१५)। इन्होंने मुनि से उनके एक पुत्र को क्रय करने की इच्छा प्रकट की किन्तु मुनि तथा मुनि-पत्नी द्वारा क्रमशः अपने ज्येष्ठ और कनिष्ठ पुत्रों को बेचना अस्वीकृत कर देने पर मझले पुत्र, शुन:शेप को, उसकी इच्छा से ही, प्रचुर सुवर्ण मुद्रायें देकर क्रय कर लिया (१. ६१, १६–२३)। 'अम्बरीषस्तु राजर्षी रथमारोप्य सत्वरः। शुनःशेपं महातेजा जगामाशु महायशाः ॥', (१. ६१, २३)। शुनःशेप को लेकर अयोध्या लौटते समय इन्होंने दोपहर के समय पुष्कर तीर्थ में विश्राम किया (१. ६२, १)। 'शुनःशेपो गृहीत्वा ते द्वे गाथे सुसमाहितः। त्वरया राजसिंहं तमम्बरीषमुवाच ह ॥', (१. ६२, २१)। शुनःशेप के आग्रह पर शीघ्र ही यज्ञ-स्थल पर आकर इन्होंने इन्द्र की कृपा से यज्ञ सम्पन्न किया (१. ६२, २३–२७)। ये प्रशुश्रुक के पुत्र तथा नहुष के पिता थे (१. ७०, ४१. ४२)।

अयोध्या—वाल्मीकि मुनि को संक्षेप में रामचरित्र सुनाते हुये नारद ने बताया कि रावण-वध के पश्चात् राम देवताओं से वर पाकर और मृत वानरों को जीवित कराकर अपने साथियों सहित पुष्पक विमान द्वारा अयोध्या गये (१. १, ८६)। अयोध्यापुरी का विस्तृत वर्णन (१. ५, ६–२३)। दशरथ के शासन काल में अयोध्या, उसके नागरिकों, तथा वहाँ की उत्तम सुरक्षा-व्यवस्था का वर्णन (१. ६, ५–२८)। जब राजा दशरथ ने ऋश्यशृंग को लेकर अयोध्या में प्रवेश किया तब नगरवासियों ने इन लोगों का भव्य स्वागत किया (१. ११, २५–२७)। राम इत्यादि दशरथ-पुत्रों के जन्म के अवसर पर इस नगर में अपूर्व उत्सव मनाया गया (१. १८, १८–२०)। राजा जनक की आज्ञा पाकर उनके दूत अयोध्या के लिये प्रस्थित हुये (१. ६८, १)। जब दशरथ के राजकुमारों ने अपनी-अपनी वधुओं सहित अयोध्या में प्रवेश किया तब पुरवासियों ने उनका भव्य स्वागत किया (१. ७७, ६–८)। राम के अभिषेक के समय सम्पूर्ण अयोध्या नगरी को भली-भाँति सजाया गया था

(२. ५, १५–२१; ६, ११–१९)। श्री राम के वनगमन से समस्त नगर शोकाकुल हो उठा (२. ४१, १३–२१)। भरत ने देखा कि अयोव्यापुरी के प्रत्येक घर का बाहरी और भीतरी भाग सूना हो गया है; उसके बाजार इत्यादि भी बन्द हैं, इत्यादि (२. ४२, २३–२४)। वनवास के समय तमसा नदी के तट पर निवास करते हुये श्री राम ने अयोध्या नगरी की दशा का स्मरण किया (२. ४६, ४)। राम के वनगमन के पश्चात् वह नगरी शोभा-विहीन हो गई (२. ४७, १७–१८; ४८, ३४–३७)। कोसल देश की सीमा को पार करते समय राम ने अयोव्या की ओर मुख कर के उससे विदा ली (२. ५०, १–३)। लक्ष्मण ने निषादराज गुह से कहा कि जिसमें राम के अनुरागी मनुष्य निवास करते हैं, और जो सदैव सुखकर तथा प्रिय वस्तुओं को प्राप्त करानेवाली रही है, वह अयोध्यानगरी राजा दशरथ के निधन के दुःख से युक्त होकर नष्ट हो जायगी (२. ५१, १६)। इस नगर का वर्णन (२. ५१, २१–२३)। सुमन्त्र ने अयोघ्या की शोकाकुल स्थिति और दुरवस्था का वर्णन किया (२. ५९, १०–१६)। भरत ने अपने सारथि से अयोध्या के नीरस और निस्तब्ध स्थिति का वर्णन किया (२. ७१, १८–२९.३७–४३)। नगर की रक्षा का कोई प्रबन्ध न होतें हुए भी यह राम के पराक्रम के कारण सुरक्षित था (२. ८८, २३–२५)। राम ने भरत से अयोध्यापुरी की स्थिति के सम्बन्ध में पूछा (२. १००, ४०–४२)। भरत जी चित्रकूट से अयोध्या लौटे (२ ११३, २३)। भरत द्वारा अयोध्या की दुरवस्था का दर्शन करके दुःखी होना (२. ११४)। सीता-विरह से विलाप करते हुये श्री राम ने लक्ष्मण से कहा, 'तुम मुझे वन में छोड़कर सुन्दर अयोध्यापुरी को लौट जाओ', (३. ६२, १५)। सुग्रीव का राज्याभिषेक करने के पश्चात् माल्यवान पर्वत के पृष्ठभाग में निवास करते हुये श्री राम ने अयोध्या का स्मरण किया (४ २८. ५६)। रावण-वध के पश्चात् राम अयोव्या लौटे; उस समय वानरों तथा राक्षसों ने भी अयोध्या को प्रणाम करके अत्यन्त उल्लासपूर्वक उसकी शोभा का दर्शन किया (६ १२३, ५५–५७)। रामायण के उपसंहार में यह कहा गया है कि श्रीराम के परमधाम सिधारने के पश्चात् रमणीय अयोव्यापुरी अनेक वर्षों तक सूनी रहेगी, और फिर ऋषभ के समय पुनः बसेगी (७. १११–१०)

अयोमुख, दक्षिण दिशा में स्थित एक पर्वत का नाम है, जहाँ सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था : "अयोमुखश्च गन्तव्यः पर्वतो धातुमण्डितः। विचित्रशिखरः श्रीमांश्चित्रपुष्पितकाननः ॥ सुचन्दनवनोद्देशे मार्गितव्यो महागिरिः।', (४. ४१, १३–१४)।

अयोमुखी, एक राक्षसी का नाम है जो विकराल मुखवाली, छोटे-छोटे जन्तुओं को भय देनेवाली, अत्यन्त घृणास्पद और लम्बोदरी, इत्यादि, थी : 'ददर्शतुर्महारूपां राक्षसीं विकृताननाम् ।। भयदामल्पसत्त्वानां बीभत्सां रौद्रदर्शनाम् । लम्बोदरीं तीक्ष्णदंष्ट्रां करालीं परुषत्वचम् ।। भक्षयन्तीं मृगान् भीमान् विकटां मुक्तमूर्धजम् ।', (३. ६९, ११–१३) । श्रीराम और लक्ष्मण ने इसे मतङ्ग के आश्रम के निकट देखा (३. ६९, १३) । लक्ष्मण ने इसकी नाक और कान को काट लिया (३. ६९, १३–१८) ।

अरजा, उशना भार्गव की पुत्री का नाम है जो अप्रतिम रूपवती और उत्तम कन्या थी (७. ८०, ४–५) । इसने दण्ड के आग्रह को अस्वीकार कर दिया (७. ८०, ८–९), और दण्ड को अपने पिता से मिलने के लिये कहा (७. ८०, ८–१२) । दण्ड ने इसके साथ बलात्कार किया (७. ८०, १३–१७) । इसने अपने पिता के लौटने तक भयभीत होकर विलाप करते हुये आश्रम के निकट ही प्रतीक्षा की (७. ८०, १८) । अपने पिता की इच्छा के अनुसार इसने जीवन-पर्यन्त अपने अपराध की निवृत्ति के समय की प्रतीक्षा करना स्वीकार कर लिया (७. ८१, १३–१६) ।

अरिष्ट, लङ्का में स्थित एक पर्वत का नाम है (५. ५६, २६–३७) । लङ्का से लौटते समय हनुमान् समुद्र लाँघने के लिये इसके ऊपर चढ़ गये (५. ५६, ३८) । जब हनुमान् ने इस पर से छलाँग मारी तब उनके भार से यह पर्वत हिल उठा और विभिन्न प्रकार के प्राणियों सहित धरती में धँस गया (५. ५६, ४२–५०) । यह पर्वत विस्तार में दस योजन और ऊँचाई में तीस योजन था (५. ५६, ५०) ।

अरिष्टनेमि, राजा सगर की छोटी रानी सुमति के पिता का नाम है (१. ३८, ४) । यह विवस्वान् के बाद सोलहवें प्रजापति हुये थे (३. १४, ९) । बुध ने इला के सम्बन्ध में इनसे भी परामर्श किया था (७. ९०, ५०) । देखिये ४. ६६, ४ भी ।

अरुण, विनता के पुत्र और गरुड़ के भ्राता का नाम है (३. १४, ३२) । ये जटायु तथा सम्पाति के पिता थे (३. १४, ३३) ।

अरुन्धती, महर्षि वसिष्ठ की पतिव्रता स्त्री का नाम है जिसने नक्षत्रपद प्राप्त कर लिया था (५. २४, १० ; ३३, ८) । अगस्त्य ने सीता की प्रशंसा करते हुये उनकी अरुन्धती के साथ तुलना की (३. १३, ७) ।

अर्क, एक वानर यूथपति का नाम है जो राम की सेना के दक्षिण-गमन के समय उसके एक पार्श्व की रक्षा कर रहा था (६. ४, ३३) ।

अर्चिष्मान्, एक वानर यूथपति का नाम है जिसे सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने पश्चिम दिशा की ओर भेजा था (४. ४२, ३)।

अर्चिमाल्यस् , एक महाबली वानर यूथपति का नाम है, जिसे सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने पश्चिम की ओर भेजा था (४. ४२, ४)।

अर्जुन (कार्तवीर्य), एक राजा का नाम है जिसने परशुराम के पिता जमदग्नि का वध किया था (१. ७५, २३)। विष्णु ने इसका वध किया (७. ६, ३५)। "एक बार जब रावण महिष्मती नगर में पहुँचा तो वहाँ अर्जुन कार्तवीर्य शासन कर रहा था। जिस दिन रावण वहाँ पहुँचा उस दिन यह बलवान् हैहयराज अपनी स्त्रियों के साथ नर्मदा नदी में जलक्रीड़ा करने के लिये गया था (७. ३१, ७–१०)।" इसे अग्नि के समान तेजस्वी कहा गया है और इसके राज्यकाल में कुशास्तरण से युक्त अग्निकुण्ड में सदैव अग्नि-देवता निवास करते थे (७. ३१, ८)। "नर्मदा के तट पर जहाँ रावण महादेवजी को पुष्पहार अर्पित कर रहा था वहीं से थोड़ी ही दूर पर वीरों में श्रेष्ठ महिष्मती का यह राजा अपनी स्त्रियों के साथ नर्मदा के जल में उतरकर क्रीड़ा कर रहा था। इसकें एक सहस्र भुजायें थीं जिनकी शक्ति की परीक्षा लेने के लिये इसने नर्मदा के वेग को रोक दिया, जिसके परिणामस्वरूप नर्मदा का जल उलटी गति से बहते हुये उस स्थान पर पहुँचा जहाँ रावण शिव को पुष्पाहार समर्पित कर रहा था, और रावण के समस्त पुष्पहारों को अपने साथ बहा ले गया (७. ३२, १–७)।" रावण के मन्त्रियों के साथ अपने सेना के संघर्ष तथा सेना की पराजय का समाचार सुनकर अपनी स्त्रियों को धैर्य बँधाने के पश्चात् युद्धभूमि में गया और प्रहस्त को आहत कर दिया जिसके परिणामस्वरूप रावण के अन्य मन्त्रिगण युद्धभूमि से भाग खड़े हुये (७. ३२, ३७–४८)। तदुपरान्त इसने रावण के साथ युद्ध करके उसें बन्दी बनाया और अपने साथ राजधानी ले आया (७. ३२, ४९–७३)। इसने पुलस्त्य का स्वागत किया और उन्हें प्रसन्न करने के लिये उनसे आज्ञा देने का निवेदन किया (७. ३३, ५–१२)। पुलस्त्य के निवेदन पर बहुमूल्य उपहार आदि देकर रावण को मुक्त कर दिया और अग्नि को साक्षी करके उसके साथ मित्रता का सम्बन्ध स्थापित किया (७. ३३, १३–१८)।

अर्थसाधक, भरत के एक मन्त्री का नाम है जो श्रीराम के वनवास से अयोध्या लौटने के समय उनके स्वागतार्थ गया था (६. १२७, ११)।

अर्यमा—श्रीराम के वन जाने के समय कौसल्या ने वन में उनकी रक्षा करने के लिये अर्यमा का भी आवाहन किया था (२. २५, ८)।

अलक्षित, पश्चिम दिशा के एक वन का नाम है जहाँ सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने सुषेन इत्यादि को भेजा था (४. ४२, १४)।

अलम्बुषा, इक्ष्वाकु की पत्नी और विशाल की माता का नाम है (१. ४७, ११–१२)। भरत की सेना के सत्कार के लिए भरद्वाज ने इनकी सहायता भी माँगी थी (२. ९१, १७)। भरद्वाज की आज्ञा पर इन्होंने भी भरत के सम्मुख नृत्य किया (२ ९१, ४७)।

अलर्क, कैकेयी द्वारा उल्लिखित एक राजा का नाम है जिसने अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिये एक ब्राह्मण को अपने नेत्र दे दिये थे (२ १२, ४३)। 'तथा ह्यलर्कस्तेजस्वी ब्राह्मणे वेदपारगे। याचमाने स्वके नेत्रे उद्धृत्याविमना ददौ ॥', (२. १४, ५)।

१. अवन्ति, दक्षिण दिशा में स्थित एक नगर का नाम है जहाँ सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १०)।

२. अवन्ती, पश्चिम दिशा में स्थित एक नगर का नाम है जहाँ सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने सुषेन इत्यादि को भेजा था (४. ४२, १४)।

अविन्ध्य, रावण के एक प्रिय मन्त्री का नाम है : 'अविन्ध्यो नाम मेधावी विद्वान् राक्षसपुङ्गवः। धृतिमाञ्छीलवान् वृद्धो रावणस्य सुसम्मतः ॥', (५. ३७, १२)। सीता को मुक्त कर देने के इसके परामर्श को रावण ने अस्वीकृत कर दिया था (५. ३७, १३)।

अशनिप्रभ, एक राक्षस प्रमुख का नाम है जिसने द्विविद के साथ युद्ध किया था (६. ४३, १२)। द्विविद ने इसका वध कर दिया (६. ४३, ३२–३४)।

अशोक, एक दूत का नाम है जिन्हें वसिष्ठ ने दशरथ की मृत्यु के पश्चात् भरत को बुलाने के लिये भेजा था (२. ६८, ५)। यह केकय नगर में पहुँचे (२. ७०, १)। केकय-राज तथा राजकुमार ने इनका भली प्रकार स्वागत सत्कार किया, जिसके बाद इन्होंने भरत के पास जाकर उन्हें वसिष्ठ का समाचार तथा उपहार आदि दिया (२. ७०, २–५)। भरत के प्रश्नों का उत्तर देते हुये इन्होंने भरत से शीघ्रतापूर्वक अयोध्या चलने के लिये कहा (२ ७०, ११–१२)। वनवास से लौटने पर श्रीराम के स्वागत के लिये यह भी गये (६. १२७, ११) नागरिकों को राम के स्वागत के लिये तैयार रहने का आदेश देकर ये राम का स्वागत करने के लिये गये (६.१२८, २४–२६)।

अशोकवाटिका—सीता का अपहरण करके रावण ने उन्हें यहीं बन्दी बनाकर रक्खा था (३. ५६, ३२)। यह वाटिका समस्त कामनाओं को

फल-रूप में प्रदान करनेवाले कल्पवृक्षों तथा भाँति-भाँति के फल-पुष्पोंवाले अनेक अन्य वृक्षों से परिपूर्ण थी. और सदैव मदमत्त रहनेवाले पक्षी इसमें निवास करते थे (३. ५६, ३३)। लङ्का आकर सीता को कहीं न पाने पर चिन्तित हनुमान् की इस विशाल और बड़े-बड़े वृक्षों से परिपूर्ण वाटिका पर दृष्टि पड़ी और उन्होंने इसमें ही सीता को ढूंढ़ने का निश्चय किया (५. १३, ५५–६०)। 'अशोकवनिका पुण्या सर्वसंस्कारसंस्कृता', (५. १३, ६२)। 'स तु संहृष्टसर्वाङ्गः प्रकारस्थो महाकपिः। पुष्पिताग्रान् वसन्तादौ ददर्श विविधान् द्रुमान् ॥', (५. १४, २)। 'सालानशोकान् भव्यांश्च चम्पकांश्च सुपुष्पितान्। उद्दालकान् नागवृक्षांश्चूतान् कपिमुखानपि ॥ तथाऽम्रवणसम्पन्नांल्लताशतसमावृतान्। ज्यामुक्त इव नाराचः पुप्लुवे वृक्षवाटिकाम् ॥', (५. १४, ३–४)। 'स प्रविश्य विचित्रां तां विहगैरभिनादिताम्। राजतैः काञ्चनैश्चैव पादपैः सर्वतोवृताम् ॥ विहगैर्मृगसंघैश्च विचित्रां चित्रकाननाम्। उदितादित्यसंकाशां ददर्श हनुमान्कपि ॥ वृतां नागविधैर्वृक्षैः पुष्पोपगफलोपमैः। कोकिलैर्भृङ्गराजैश्च मत्तैर्नित्यनिषेविताम् ॥ प्रहृष्टमनुजे काले मृगपक्षिमदाकुलान्। मत्तबर्हिणसंघुष्टां नानाद्विजगणायुताम् ॥', (५. १४, ५–८)। यह वाटिका सरोवर ,झीलों और नदियों से परिपूर्ण थी (५. १४, २२–२६)। इसकी पृष्ठभूमि में एक विशाल मेघवर्ण पर्वत था जिस पर अनेकानेक वृक्ष उगे हुये थे; इस पर्वत पर अनेक गुफायें थीं और इस पर से एक नदी भी निकली थी जिसके तटवर्ती वृक्षों की डालियाँ उसके जल का स्पर्श कर रही थीं (५. २४, २७–३१)। निकट ही एक झील थी जिसके तट पर विश्वकर्मा द्वारा निर्मित अनेक सुन्दर भवन स्थित थे (५. १४, ३२–३४)। इसकी भूमि कल्पवृक्ष की लताओं तथा वृक्षों से सुशोभित, दिव्य-गन्ध तथा दिव्य-रस से परिपूर्ण, और सब ओर से सुअलंकृत थी (५. १५, २)। मृगों और पक्षियों से व्याप्त होकर इसकी भूमि नन्दनवन के समान शोभित, अट्टालिकाओं तथा राजभवनों से युक्त, तथा कोकिल-समूहों के कूजन से कोलाहलपूर्ण बावलियाँ इसकी शोभा में वृद्धि कर रही थीं (५. १५, ३)। सुवर्णमय उत्पलायें और कमलों से परिपूर्ण बावलियाँ इसकी शोभा में वृद्धि कर रही थीं (५. १५, ४)। सभी ऋतुओं में पुष्पित होनेवाले तथा फलों से लदे रमणीय वृक्ष इसकी भूमि को विभूषित कर रहे थे (५. १५, ५)। इसकी शोभा का और विस्तृत वर्णन (५. १५, ६–१५)। इसके मध्य में सहस्र स्तम्भोंवाला एक चैत्यप्रासाद था (५. १५, १६–१८)। रावण के अशोकवाटिका में आगमन के समय इसकी शोभा का वर्णन (५. १८,६–९)। 'प्रमादवनम्', (५. १८, २७)। 'इदमस्य नृशंसस्य नन्दनोपममुत्तमम्। वनं नेत्रमनःकान्तं नानाद्रुमलतायुतम् ॥',

(५. ४१, १०)। हनुमान् ने इसका विध्वंस किया (५. ४१, १४–२०)।

अश्व, एक ऋषि का नाम है जिनके आश्रम पर ही राक्षसों से त्रस्त जनस्थान के ऋषियों ने आश्रय लिया था (२.११६, २०)।

अश्वग्रीव, कश्यप और दनु के पुत्र का नाम है (३. १४, १६)।

अश्वपति, भरत के मामा का नाम है। इन्होंने भरत के केकयवास के समय उनके प्रति अपने पुत्र के समान ही स्नेह रक्खा था (२. १, २)। इन्होंने वसिष्ठ के दूतों का सत्कार किया (२. ७०, २)। इन्होंने भरत को अयोध्या के लिये विदा करते हुये उन्हें अनेक बहुमूल्य उपहार आदि दिये (२. ७०, २२–२४)। इन्होंने भरत को बिदा किया (२. ७०, २८)। भरत के अयोध्या पहुँचने पर उनकी माता कैकेयी ने इनके कुशल-समाचार को भी पूछा (२. ७२, ६)। इन्हें धर्मराज के समान कहा गया है (२. ७४, ९)।

अश्विन (द्वय)—ब्रह्मा के कहने पर अश्विनीकुमारों ने मैन्द और द्विविद नामक दो वानर यूथपतियों को उत्पन्न किया (१. १७, १४)। ये कश्यप और अदिति के पुत्र थे और इन्हें भी ३३ वैदिक देवों के अन्तर्गत माना गया है (३. १४, १४–१५)। जब रावण ने इन्द्रपुरी पर आक्रमण किया तब अन्य देवों के साथ ये भी उससे युद्ध करने के लिये निकले (७. २७, २२)। रावण के विरुद्ध युद्ध करते समय ये भी इन्द्र के साथ थे (७. २८, २७)।

अश्म, रसातल में स्थित एक नगर का नाम है जहाँ कालकेयगण निवास करते थे; इस पर रावण ने अधिकार कर लिया था (७. २३, १७–१९)।

अष्टावक्र ने अपने धर्मात्मा पिता कहोल को मुक्ति दिलाई थी (६ ११९, १७)।

असमञ्ज, राजा सगर और केशिनी के पुत्र का नाम है (१.३८, १६; १,७०, ३८)। "यह नगर के बालकों को पकड़ कर सरयू के जल में फेंक देते थे और जब वे बालक डूबने लगते थे तब उन्हें देख-देख कर हँसा करते थे। इनकी इस दुष्ट प्रकृति के कारण इनके पिता सगर ने इन्हें नगर से वाहर निकाल दिया (१. ३८, २१–२२)।" सिद्धार्थ ने इनकी इस दुष्ट प्रकृति तथा सगर द्वारा इनके निष्कासन का विस्तार से उल्लेख किया (२. ३६, १९–३०)।

असित, भरत के पुत्र का नाम है। हैहय, तालजङ्घ, और शशबिन्दु आदि लोग इनके शत्रु थे (१. ७०, २७–२८)। इन शत्रुओं से पराजित होकर ये अपनी दो पत्नियों को लेकर हिमालय में निवास करने लगे, जहाँ इनकी मृत्यु हो गई (१ ७०. २९–३०)। इनकी मृत्यु के समय इनकी

दोनों रानियाँ गर्भवती थीं, जिनमें से कालिन्दी नामक रानी ने च्यवन ऋषि की कृपा से सगर को जन्म दिया (१. ७०, ३०–३७)।

असुर—दण्डकारण्य के ऋषियों ने राम से वहाँ के असुरों का वध करने के लिये कहा (१. १, ४४)। रावण इनसे भी बलवान था जिसके कारण वह ऋषियों, यक्षों, गन्धर्वों सहित इन्हें भी अत्यन्त पीड़ित करता था (१. १५, ९)। "प्रजापति दक्ष की दो कन्याओं, जया और सुप्रभा ने एक सौ परम प्रकाशमान अस्त्र-शस्त्र, तथा जया ने पचास रूपरहित श्रेष्ठ पुत्रों को उत्पन्न किया। इन पुत्रों ने उक्त अस्त्र-शस्त्रों से असुरों का वध किया (१. २१, १३–१७)।" ये जनक के धनुष को झुकाने में असफल रहे (१. ३१, ९)। राजा सगर के पुत्रों के आयुधों से आहत होकर ये आर्तनाद करने लगे (१. ३९, २०)। सगर-पुत्रों से इस प्रकार त्रस्त होकर ये ब्रह्मा की शरण में गये (१. ३९, २३–२६)। 'ब्राह्मणानां सहस्राणि तैरेवं कामरूपिभिः। विनाशितानि संहृत्य नित्यशः पिशिताशनैः ॥', (३. ११, ६१)। 'विप्रघातिनः', (३. ११, ६४)। सीता को ढूंढ़ने के लिये पूर्व दिशा में वानरों को भेजते समय सुग्रीव ने बताया कि वहाँ इक्षुरस के समुद्र में अनेक विशालकाय असुर निवास करते हैं जो छाया पकड़कर ही प्राणियों को अपनी ओर खींच लेते हैं, और इसके लिये उन्हें ब्रह्मा से अनुमति मिल चुकी है (४. ४०, ३७)। अङ्गद ने विन्ध्य पर्वत के दक्षिण में जल और वृक्ष-विहीन क्षेत्र में एक असुर का वध किया (४. ४८, १७–२१)। सम्पाति ने बताया कि उन्होंने देवों और असुरों के संग्राम को देखा था (४. ५८, १३)। 'त्वमिहासुरसङ्घानां देवराज्ञा महात्मना। पातालनिलयानां हि परिघः संनिवेशितः ॥', (५. १, ९३)। माल्यवान ने रावण को श्रीराम से सन्धि करने के लिये समझाते हुये बताया कि ब्रह्मा ने सुर और असुर दो ही पक्षों की सृष्टि की है जिसमें सुरों का पक्ष धर्म और असुरों का पक्ष अधर्म कहा गया है (६. ३५, १२–१३)। जब हनुमान् ने रावण पर प्रहार किया तब ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. ५९, ६४)। हनुमान् के प्रहार से जब रावण मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा तब ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. ५९, ११७)। इन्होंने राम के विजय की कामना की (६. १०२, ४५)। जब वायु ने अपनी गति रोक दी तब ये भी ब्रह्मा की शरण में गये (७. ३५, ५३)। जब शत्रुघ्न ने लवणासुर के वध के लिये दिव्य वाण का सन्धान किया तब अत्यधिक घबराकर ये ब्रह्मा की शरण में गये (७. ६९, १६–२१)।

अमूर्त-रजस, कुश और वैदर्भी के पुत्र का नाम है (१. ३२, १३)। इन्हें धर्मनिष्ठ, सत्यवादी और बुद्धिमान कहा गया है, और इन्होंने अपने

पिता की आज्ञा से धर्मारण्य नामक नगर बसाया था (१. ३२, ३–७)।

अहल्या, गौतम ऋषि की पत्नी का नाम है जिसके साथ रहकर उन्होंने मिथिला के निकट अनेक वर्ष तक तप किया था (१. ४८, १६)। इन्द्र ने गौतम का वेश बनाकर अहल्या के सतीत्व का अपहरण किया (१. ४८, १७-१९)। रति के पश्चात् अहल्या ने गौतम के भय से इन्द्र को तत्काल ही आश्रम से चले जाने के लिये कहा (१. ४८, २०–२२)। "आश्रम लौट कर गौतम ने सब कुछ जान लिया और अहल्या को शाप देते हुये कहा : 'दुराचारिणी ! तू यहाँ कई सहस्र वर्षों तक केवल वायु पीकर या उपवास करके कष्ट उठाती हुई राख में पड़ी रहेगी। समस्त प्राणियों से अदृश्य रह कर इस आश्रम में निवास करेगी। जब श्री राम इस घोर वन में पदार्पण करेंगे उसी समय तू पवित्र होगी। श्री राम का आतिथ्य-सत्कार करने से तेरे पाप धुल जायेंगे और तू प्रसन्नतापूर्वक मेरे पास पहुँच कर अपना पूर्व-शरीर धारण कर लेगी।' (१. ४८, २९–३२)।" इसे 'दुर्वृत्ता,' और 'दुष्टचारिणी' आदि कहा गया है (१. ४८, ३२–३३) । 'तारयैनां महाभागामहल्यां देवरूपिणीम्', (१. ४९, ११)। जब श्री राम ने विश्वामित्र को आगे कर कर के गौतम के आश्रम-क्षेत्र में प्रवेश किया तब उन्होंने देखा कि महासौभाग्यशालिनी अहल्या अपनी तपस्या से देदीप्यमान हो रही है; इस लोक के मनुष्य तथा देवता और असुर भी वहाँ आकर उसे देख नहीं सकते; वह धूम से घिरी हुई प्रज्वलित अग्निशिखा सी प्रतीत हो रही है; ओले और बादलों से ढँकी हुई पूर्ण चन्द्रमा की प्रभा-सी दिखाई पड़ रही है; तथा जल के भीतर उद्भासित होनेवाली सूर्य की दुर्धर्ष प्रभा के समान दृष्टिगोचर हो रही है (१. ४९, १३–१५)। श्री राम का दर्शन प्राप्त हो जाने से अहल्या के पाप का अन्त हो गया और वह सब को दृष्टिगत होने लगी (१. ४९, १६)। अहल्या ने श्री राम और लक्ष्मण का आतिथ्य-सत्कार किया (१. ४९ १७–१८)। यह जब गौतम से पुनः जाकर मिल गई तब देवों ने इसको साधुवाद दिया (१. ४९, २०)। "ब्रह्मा ने बताया कि उन्होंने एक नारी की सृष्टि की और प्रजाओं के प्रत्येक अङ्ग में जो-जो अद्भुत विशिष्टता और सारभूत सौन्दर्य था उसे उस नारी के अंगों में प्रकट किया। उन्होंने यह भी बताया कि उसी नारी का नाम अल्हया था। उन्होंने धरोहर के रूप में उस कन्या को महर्षि गौतम को सौंप दिया। बहुत दिनों तक अपने साथ रखने के पश्चात् गौतम ने उस कन्या को ब्रह्मा को लौटा दिया। गौतम के इस महान इन्द्रिय-संयम तथा तपस्या-विषयक सिद्धि को देख कर ब्रह्मा ने उस कन्या, अहल्या, को पुनः गौतम को ही पत्नी के रूप में दे दिया। (७. ३०, २१–२७)।" ब्रह्मा ने अहल्या के सतीत्व-

भ्रष्ट होने तथा राम के द्वारा पुनः पापमुक्त होने के वृत्तान्त का उल्लेख किया (७. ३०, २८–४६)।

आ

आदित्य-गण—आदित्यों की संख्या बारह बताई गई है और इन्हें भी ३३ वैदिक देवों के अन्तर्गत रक्खा गया है : ये लोग कश्यप और अदित के पुत्र हैं (३. १४, १४)। इन्द्र के निवेदन पर ये लोग भी रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये सन्नद्ध हो गये (७. २७, ४–५)। तदनन्तर ये लोग भी अन्य देवों के साथ ही रावण के विरुद्ध युद्ध के लिये अमरावती पुरी के बाहर निकले (७. २७, २२)। ये लोग भी इन्द्र के साथ ही रावण के विरुद्ध युद्ध के लिये निकले (७. २८, २७)। सीता के शपथ-ग्रहण समारोह को देखने के लिये ये लोग भी श्री राम के दरबार में पधारे (७. ९७, ७)।

आभ्रवन्ती, दक्षिण क्षेत्र के एक नगर का नाम है जहाँ सीता को ढूंढ़ने के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १०)।

आभीर, उत्तर की एक जंगली जाति का नाम है जो समुद्र तट पर स्थित द्रुम-कुल्य देश में निवास करती थी (६. २२, ३२)। इनके रूप और कर्म को भयानक तथा इन्हें लुटेरे आदि कहा गया है (६. २२, ३३)।

आयु, पुरूरवा और उर्वशी के पुत्र तथा नहुष के पिता का नाम है : इन्हें महाबली कहा गया है (७. ५६, २७)।

इ

इक्षु (सागर), एक अत्यन्त भयंकर सागर का नाम है : 'ततःसमुद्रद्वीपांश्च सुभीमान्द्रष्टुमर्हथ। ऊर्मिमन्तं महारौद्रं क्रोशन्तमनिलोद्धतम् ।।', (४. ४०, ३४)। 'तं कालमेघप्रतिमं महोरगनिषेवितम् । अभिगम्य महानादं तीर्थे नैव महोदधिम् ।।', (४. ४०, ३६)। इस सागर में अनेक भयंकर द्वीप थे जिनमें ब्रह्मा की अनुमति से ऐसे असुर निवास करने थे जो प्राणियों की छाया को पकड़ कर उन्हें अपनी ओर खींच लेते थे : सुग्रीव ने 'विनत से इन्हीं द्वीपों में सीता को ढूंढ़ने के लिये कहा (४. ४०, ३४–३६)।

१. इक्षुमती, एक नदी का नाम है जिसके तट पर साङ्काश्य नामक नगर स्थित था (१. ७०, ३)।

२. इक्षुमती, एक नदी का नाम है जिसे वसिष्ठ के दूतों ने केकय देश जाते समय पार किया था : इक्ष्वाकुओं का मूल निवास-स्थान इसी के तट पर स्थित था (२. ६८, १७)।

इक्ष्वाकु, श्रीराम के वंश-प्रवर्तक राजा का नाम है (१. १. ८)। इक्ष्वाकु-वंशी महात्मा राजाओं की कुल परम्परा के वर्णन के लिये ही रामायण नाम से विख्यात काव्य की अवतारणा हुई (१. ५, ३)। महाराज दशरथ इस कुल के एक अतिरथी वीर थे (१. ६. २)। श्री भगीरथ ने ब्रह्मा से यह प्रार्थना की कि इक्ष्वाकु वंश की परम्परा विच्छिन्न न हो, और ब्रह्मा ने उनकी इस प्रार्थना को स्वीकार किया (१. ४२, २०–२२)। महाराज इक्ष्वाकु ने अलम्बुषा के गर्भ से विशाल नामक एक पुत्र उत्पन्न किया (१. ४७, ११–१२)। प्रथम प्रजापति मनु से ही इक्ष्वाकु नामक पुत्र हुये जो अयोध्या के प्रथम राजा बने (१. ७०, २१)। इक्ष्वाकु के पुत्र का नाम कुक्षि था (१ ७०, २२)। वनवास के समय स्यन्दिका नामक नदी को पार करने के पश्चात् श्री राम ने धन-धान्य से सम्पन्न उस भूमि का दर्शन किया जिसे पूर्वकाल में राजा मनु ने इक्ष्वाकु को दिया था (२. ४९, १३)। इक्ष्वाकुओं को पृथिवी का अधिपति कहा गया है (४. १८, ६)। इक्ष्वाकुनन्दन राजर्षि निमि ने अपने पिता, मनुपुत्र इक्ष्वाकु से पूछकर अपना यज्ञ कराने के लिये सर्वप्रथम ब्राह्मण-शिरोमणि वसिष्ठ का वरण किया (७. ५५, ८)। वसिष्ठ के जन्म ग्रहण करते ही राजा इक्ष्वाकु ने अपने कुल के हित के लिये उनका राज–पुरोहित के पद के लिये वरण किया (७. ५७, ८)। "अपने पिता मनु की मृत्यु के बाद इक्ष्वाकु ने एक सौ पुत्र उत्पन्न किये जिनमें से सबसे छोटे पुत्र का नाम दण्ड था। इसे मूर्ख और विद्याविहीन देखकर इक्ष्वाकु ने विन्ध्य और शैवल पर्वतों के बीच के क्षेत्र का शासक बना दिया (७. ७९ १२–१६)।"

इन्द्र—ये वर्षा के देवता हैं (१. ९, १८; १०, २९)। इन्होंने (सहस्राक्ष) स्वर्गलोक में काश्यप का सार्वजनिक स्वागत किया (१. ११, २८)। दशरथ ने अपने अश्वमेध के समय इन्हें विधिपूर्वक हविष्य अर्पित किया (१, १४, ६)। दशरथ के अश्वमेध के समय ऋष्यश्रृङ्ग आदि महर्षियों ने इनका आवाहन किया (१. १४, ८)। रावण पराक्रम में इनसे भी बढ़ जाना चाहता था (१. १५, ८)। महाराज दशरथ की रानियों के गर्भवती होने के समाचार को सुन कर इन्हें प्रसन्नता हुई (१. १६, ३२)। ब्रह्मा की इच्छा से इन्होंने वालिन् को उत्पन्न किया (१. १७, १०)। यह (वज्रपाणि) अदिति के पुत्र थे (१. १८, १२)। इन्होंने ही वृत्रासुर का वध किया था (१. २४, १८)। ऋषियों ने इन्हें ब्रह्म-हत्या के पाप से शुद्ध और मुक्त किया (१. २४, १९–२१)। मलद और करूष देशों ने इनके शरीर के मल और करुष को ग्रहण किया जिसके कारण इन्होंने इन देशों को समृद्धि का वरदान दिया (१. २४, २२–२३)। पूर्वकाल में विरोचन की पुत्री मन्थरा ने जब समस्त पृथिवी का

नाश कर डालने की इच्छा की तब इन्होंने उसका वध कर डाला (१. २५-२०) । जब श्रीराम ने ताटका का वध कर दिया तब इन्होंने राम को बधाई दी (१. २६, २७) । विरोचन कुमार राजा बलि ने इन्हें पराजित कर के इनके राज्य को अपने अधिकार में ले लिया (१. २९, ५) । विष्णु ने कश्यप से इन्द्र के अनुज के रूप में जन्म लेने के लिए कहा (१. २९, १७) । वामन ने इन्हें पुनः त्रिलोकी का शासक बनाया (१. २९, २१) । एक देव-सेनापति की खोज में अन्य देवताओं के साथ ये भी ब्रह्मा की शरण में गये (१. ३७, १-२) । अन्य देवताओं सहित इन्होंने नवजात शिशु (स्कन्द) को दूध पिलाने के लिए कृत्तिकाओं को नियुक्त किया (१. ३७, २३) । एक राक्षस का वेश बना कर इन्होंने राजा सगर के यज्ञाश्व का अपहरण कर लिया (१. ३९, ७-८) । विश्वामित्र ने विशाला के इतिहास को सर्वप्रथम इन्हीं से सुना था (१. ४५, १४) । इन्होंने दैत्यों का वध करने के पश्चात् त्रिलोकी का राज्य प्राप्त किया (१. ४५, ४५) । जब दिति ने कुशप्लव नामक तपोवन में तपस्या की तब सहस्रलोचन इन्द्र आदि उनकी सेवा करने लगे (१. ४६, ९-११) । "जब सहस्रवर्ष पूर्ण होने में केवल दस वर्ष शेष रह गये तब दिति ने अत्यन्त हर्ष में भर कर सहस्रलोचन इन्द्र से कहा : 'अब केवल दस वर्ष के भीतर ही तुम अपने होनेवाले भ्राता को देखोगे । मैंने तुम्हारे विनाश के लिए जिस पुत्र की याचना की थी वह जब तुम्हें विजित करने के लिए उत्सुक होगा तब मैं उसे शान्त कर के तुम्हारे प्रति उसे वैर-भाव से रहित और भ्रातृ-स्नेह से युक्त बना दूँगी ।' (१. ४६, १२-१४) ।" मध्याह्न के समय जब दिति एक अनुचित आसन में निद्रा मग्न हो गईं तब उन्हें अपवित्र हुई जानकर इन्द्र ने उनके उदर में प्रवेश करके उसमें स्थित गर्भ के अपने वज्र से सात टुकड़े कर दिये (१. ४६, १६-१८) । इस प्रकार आहत किये जाने पर गर्भ ने जब क्रन्दन आरम्भ किया (१. ४६, १९) तब इन्द्र ने उसे चुप रहने का आदेश देते हुए उसके टुकड़े कर ही डाले (१. ४६, २०) । उसी समय दिति की निद्रा भंग हो गई और उन्होंने इन्द्र से बाहर आने के लिए कहा; और इन्द्र ने भी माता के वचन की मर्यादा के लिए बाहर आकर उनसे क्षमा माँगी (१. ४६ २१-२३) । दिति के विनय करने पर इन्द्र इस बात के लिए सहमत हो गए कि गर्भ के सात टुकड़े सात मरुद्गण के रूप में जन्म लेकर अन्तरिक्ष के सात वात-स्कन्धों के अधिपति हों (१. ४७, १-९) । इन्होंने (शचीपति ने) गौतम-पत्नी अहल्या के साथ बलात्कार किया और इस अपराध के कारण गौतम के शाप से इन्हें (देवराज को) अण्डकोश-विहीन होना पड़ा (१. ४८, १७-२८) । इस प्रसंग में इन्हें 'सुरश्रेष्ठ', (१. ४८, २०). 'सुरपति' (१. ४८ २५),

'दुर्वृत्ति' (१. ४८, २६), "दुर्मति' (१. ४८, २७) आदि भी कहा गया है। इन्होंने अपने अण्डकोश की प्राप्ति के लिए देवों से प्रार्थना की (१. ४९, २–४)। देवों के अत्यन्त आग्रह पर पितृदेवों ने इन्हें भेड़े के अण्डकोश लगा दिए (१. ४९, ५–८)। इसी समय से गौतम के तपस्या जनित प्रभाव के कारण इन्द्र 'मेषवृषणः' बने (१. ४९, १०)। इन्होंने त्रिशंकु को स्वर्ग में पहुँचा देखकर उसे वहाँ से लौटाते हुए कहा 'तू गुरु के शाप से नष्ट हो चुका है, अतः अधोमुख होकर पृथिवी पर गिर जा', (१. ६०, १६–१८)। इस प्रसंग में इन्हें "पाकशासन" (१. ६०, १६), और 'महेन्द्र' (१. ६०, १८) कहा गया है। इन्होंने अम्बरीष के यज्ञ-पशु का अपहरण कर लिया (१. ६१, ६)। "सदस्य की अनुमति लेकर राजा अम्बरीष ने शुनःशेप को कुश के पवित्रपाश से बाँध कर उसे पशु के लक्षण से सम्पन्न कर दिया और यज्ञ-पशु को लाल वस्त्र पहिना कर यूप में बाँध दिया। बँधे हुए मुनिपुत्र शुनःशेप ने उत्तम वाणी द्वारा इन्द्र और उपेन्द्र इन दोनों देवताओं की यथावत् स्तुति की। उस रहस्यभूत स्तुति से संतुष्ट होकर सहस्र नेत्रधारी इन्द्र बड़े प्रसन्न हुए। उस समय उन्होंने शुनःशेप को दीर्घायु प्रदान की। अम्बरीष ने भी देवराज इन्द्र की कृपा से उस यज्ञ का बहु-गुणसम्पन्न उत्तम फल प्राप्त किया (१. ६२, २४–२७)।" इन्द्र ने रम्भा से विश्वामित्र को काम और मोह के वशीभूत कर देने के लिए कहा (१. ६४, १)। इन्द्र ने रम्भा को विश्वामित्र को तपस्या से विचलित कर देने की आज्ञा दी (१. ६४, ५–७)। इन्होंने ब्राह्मण के वेश में आकर विश्वामित्र से उनका तैयार अन्न ले लिया (१. ६५, ५–६)। 'शतक्रतु', (१. ६९, ११)। इनको दिए गए अपने वचन के अनुसार परशुराम ने अपने शस्त्र का परित्याग कर दिया था (१. ७५, ७)। असुरश्रेष्ठ शम्बर के विरुद्ध युद्ध में दशरथ ने इनकी सहायता की थी (२. ९, ११)। जब कैकेयी को वर देने के लिये दशरथ ने शपथपूर्वक प्रतिज्ञा की तब उसने इन्द्र आदि देवताओं का साक्षी बनने के लिये आवाहन किया (२. ११, १३–१५)। 'वज्रिन्', (२. २३, ३२)। श्रीराम की वनयात्रा में उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इन्द्र आदि समस्त लोकपालों का आवाहन किया था (२. २५, ९)। वृत्रासुर का नाश करने के निमित्त इनको मङ्गलमय आशीर्वाद प्राप्त हुआ था (२. २५, ३२)। अमृत की उत्पत्ति के समय दैत्यों का संहार करने वाले वज्रधारी इन्द्र के लिये माता अदिति ने मंगलमय आशीर्वाद दिया था (२. २५, ३४)। दशरथ द्वारा मारे गये अंधे मुनि-दम्पती के एकलौते पुत्र को ये स्वर्ग लोक ले गये (२. ६४. ४७)। "मध्याह्न का समय होने तक लगातार हल जोतने से थके हुये अपने दोनों पुत्रों को देखकर रोती हुई सुरभि के दो

अश्रुविन्दु नीचे से जाते हुये इन्द्र के शरीर पर आ गिरे। तब इन्द्र ने आकाश में स्थित सुरभि पर दृष्टि डाली और हाथ जोड़कर उसके रोने का कारण पूछने लगे (२. ७४, १५–२०)।" पुत्रशोक से रोती हुई कामधेनु को देखकर इन्होंने यह माना कि पुत्र से बढ़कर और कोई नहीं है। इन्होंने सुरभि के पवित्र गन्धवाले अश्रुपात को देखकर सुरभि को जगत् में सर्वश्रेष्ठ माना (२. ७४, २५–२६)। भरद्वाज मुनि ने भरत का आतिथ्य-सत्कार करने के लिये इनका आवाहन किया (२. ९१, १३)। इन्द्र की सभा में उपस्थित होने वाली अप्सराओं का भरद्वाज मुनि ने भरत के आतिथ्य सत्कार में सहायता प्रदान करने के लिये आवाहन किया (२. ९, १८)। "श्रीराम ने आकाश में एक श्रेष्ठ रथ पर बैठे हुये, अद्भुत वैभव से युक्त, और गन्धर्व, देवता तथा सिद्धों से सेवित देवराज इन्द्र को महर्षि शरभङ्ग के साथ वार्तालाप करते हुये देखा। उस समय इन्द्र की अङ्गकान्ति सूर्य और अग्नि के समान प्रकाशित थी; उनके दीप्तिमान आभूषण चमक रहे थे; उनके मस्तक पर श्वेत मेघों के समान उज्ज्वल, चन्द्रमण्डल के समान कान्तिमान तथा विचित्र पुष्प-मालाओं से सुशोभित छत्र था। उनके रथ में दिव्य अश्व विराजमान थे (३. ५, ५–१४)।" "श्री राम को निकट आते देखकर शचीपति इन्द्र ने शरभङ्ग मुनि से विदा ली और देवताओं से इस प्रकार कहा : 'श्रीराम जब रावण पर विजय प्राप्त करके अपना कर्त्तव्य पूर्ण कर लेगें तब मैं उनका दर्शन करूँगा।' इस प्रकार कह कर वज्रधारी, शत्रुदमन इन्द्र ने शरभङ्ग का सत्कार किया और उनकी अनुमति से रथ पर बैठकर स्वर्ग लोक चले गये। सहस्र नेत्रधारी इन्द्र के चले जाने पर श्रीरामचन्द्र अपनी पत्नी और भ्राता के साथ शरभङ्ग मुनि के पास गये (३. ५, २१–२५)।" इन्द्र ने सुतीक्ष्ण मुनि को राम के बनवास का समाचार पहले ही दे दिया था (३. ७, १०)। "एक सत्यवादी और पवित्र तपस्वी की तपस्या में विघ्न डालने के लिये शचीपति इन्द्र ने उस तपस्वी को धरोहर के रूप में अपना उत्तम खड्ग दे दिया। (३. ९, १७–१८)।" अगस्त्य–आश्रम में इन्द्र के भी स्थान का उल्लेख है जहाँ श्रीराम पधारे थे (३. १२, १८)। 'पाकशासन', (३. १९, १७)। नमुचि का वध किया (३. २८, ३)। वृत्र, नमुचि, और बल का वध किया (३. ३०, २८)। इन्होंने श्रीराम को एक अग्नि के समान तेजस्वी वाण दिया जो दूसरे ब्रह्मदण्ड के समान भयंकर था (३. ३०, २४–२५)। खर–दूषण आदि चौदह हज़ार राक्षसों का वध कर देने पर श्रीराम से अगस्त्य आदि महर्षि प्रसन्न हो कर बोले : 'हे रघुनन्दन ! इसीलिये महातेजस्वी पाकशासन पुरन्दर इन्द्र शरभङ्ग मुनि के पवित्र आश्रम पर आये थे और इसी

कार्य की सिद्धि के लिये महर्षियों ने विशेष उपाय करके आप को पंचवटी के इस प्रदेश में पहुँचाया था। मुनियों के शत्रु रूप इन पापाचारी राक्षसों के वध के लिये ही आपका यहाँ शुभागमन आवश्यक समझा गया था।' (३. ३०, ३४–३६) ।" इनके द्वारा शची के अपहरण का उल्लेख (३. ४०, २२)। इन्द्र आदि समस्त देवता रावण के भय से काँप उठते थे (३. ४८, ७)। 'वज्रधरः', (३. ४८, २४)। "ब्रह्माजी की आज्ञा से देवराज इन्द्र निद्रा को साथ लेकर लंकापुरी में आये। वहाँ आकर उन्होंने निद्रा को राक्षसों को मोहित करने की आज्ञा दी। इसके बाद सहस्र नेत्रधारी शचीपति देवराज इन्द्र अशोक-वाटिका में बैठी हुई सीता के पास गये और इस प्रकार बोले : 'हे देवि ! मैं आपके उद्धारकार्य की सिद्धि के लिए श्रीरघुनाथजी की सहायता करूँगा, अतः आप शोक न करें। वे मेरे प्रसाद से बड़ी भारी सेना के साथ समुद्र पार करेंगे। मैंने ही यहाँ इन राक्षसियों को अपनी माया से मोहित किया है तथा यह हविष्यान्न लेकर निद्रा के साथ मैं आपके पास आया हूँ। यदि मेरे हाथ से इस हविष्य को लेकर खा लेंगी तो आपको हजारों वर्षों तक भूख और प्यास नहीं सतायेगी।' इन्द्र के ऐसा कहने पर सीता ने इनके देवराज इन्द्र होने पर शङ्का प्रकट की जिसका इन्होंने देवोचित लक्षणों को दिखाकर निवारण कर दिया (३. ५६क, ८–१९)।" सीता द्वारा हविष्यान्न का भक्षण कर लेने पर ये प्रसन्न होकर अपने निवासस्थान, देवलोक, को चले गये (३. ५६क, २६)। "पितामह ब्रह्माजी के द्वारा दीर्घजीवी होने का वर प्राप्त करके कबन्ध ने देवराज पर आक्रमण किया। उस समय इन्द्र ने उस पर सौ धारों वाले वज्र का प्रहार किया जिससे उसकी जाघें और मस्तक उसके शरीर में घुस गये। तब कबन्ध ने कहा : 'देवराज आपने अपने वज्र की मार से मेरी जाँघे, मस्तक, और मुँह तोड़ डाले हैं। अब मैं कैसे आहार ग्रहण करूँगा और निराहार रहकर किस प्रकार सुदीर्घ काल तक जीवित रह सकूँगा ?' उसके ऐसा कहने पर इन्द्र ने उसकी भुजायें एक-एक योजन लम्बी कर दीं तथा तत्काल ही कबन्ध के पेट में तीखे दांतों वाला एक मुख बना दिया। इन्द्र ने कबन्ध को यह भी बताया कि जब लक्ष्मण सहित श्रीराम उसकी भुजायें काट देंगे तो उस समय वह स्वर्गलोक चला जायगा (३. ७१, ८–१६)।" इन्होंने नमुचि को युद्ध का अवसर दिया था (४. ११, २२। 'महेन्द्रमिव दुर्धर्षम्', (४. १७, १०)। वालिन् की युद्धकला से प्रसन्न होकर इन्द्र ने उसको सुवर्ण-माला प्रदान की थी (४. २३, २८)। त्वष्टा के पुत्र वृत्रासुर का वध करने से ये पाप के भागी हुये और इनके इस पाप को पृथिवी, जल, वृक्ष, और स्त्रियों ने स्वेच्छा से ग्रहण कर लिया था (४. २४, १३–१४)। वानरराज सुग्रीव के

प्रासाद में इन्द्र के दिये हुये दिव्य फल-फूलों से सम्पन्न सनोरम वृक्ष लगाये गये थे (४. ३३, १६)। शची का अपहरण करने के कारण इन्होंने पुलोम और अनुह्लाद का वध कर दिया (४. ३९, ६-७)। सहस्र नेत्रधारी इन्द्र प्रत्येक पर्व के दिन महेन्द्र पर्वत पर पदार्पण करते थे (४. ४१, २३)। मेघगिरि नामक पर्वत पर देवताओं ने हरित रंग के अश्व वाले पाकशासन इन्द्र को राजा के पद पर अभिषिक्त किया था (४. ४२, ३५)। मयासुर का हेमा नामक अप्सरा के साथ सम्पर्क हो जाने के कारण इन्द्र ने वज्र से मयासुर का वध कर दिया (४. ५१, १४-१५)। जब हनुमान् सूर्य को पकड़ने के लिये अन्तरिक्ष में पहुँच गये तथ इन्द्र ने उन पर वज्र का प्रहार किया जिससे उनकी हनु (ठोड़ी) का बायाँ भाग खण्डित हो गया (४. ६६, २३-२४)। वज्र के प्रहार से भी हनुमान् को पीड़ित हुआ न देखकर सहस्र नेत्रधारी इन्द्र ने उन्हें उनकी इच्छा के अधीन ही मृत्यु होने का वर दिया (४. ६६, २८-२९)। हनुमान् ने समुद्र-लङ्घन के पूर्व इन्द्र को प्रणाम किया (५. १, ८)। इन्होंने मैनाक पर्वत को समुद्र में पातालवासी असुरसमूहों के निकलने के मार्ग को रोकने के लिये परिघ-रूप से स्थापित किया था (५. १, ९२)। "शतक्रतु इन्द्र ने अपने वज्र से लाखों उड़नेवाले पर्वतों के पंख काट डाले। जब वे मैनाक के पंख काटने गये तो वायु ने सहसा उसे ससुद्र में गिरा दिया (५. १, १२४-१२६)।" हनुमान् को विश्राम का अवसर देने के फलस्वरूप मैनाक की इन्द्र ने प्रशंसा की (५. १, १३७-१४२)। इन्होंने हिरण्यकशिपु की कीर्ति का अपहरण कर लिया (५. २०, २८)। जब रामदूत श्री हनुमान् सीता के समीप गये तो उन्होंने इन्द्र को प्रणाम किया (५. ३२, १४)। जब हनुमान् ने अक्ष का वध कर दिया तो उस पर इन्द्रसहित देवताओं ने वहाँ एकत्र होकर विस्मय के साथ हनुमान् का दर्शन किया (५. ४७, ३७)। जनक से प्रसन्न होकर धीमान् शक्र ने उन्हें एक जल से प्रकट हुई मणि दी (५. ६५, ५)। इन्द्रजित् ने इन्द्र को बन्दी बनाकर लंकापुरी में बन्द कर दिया था, परन्तु ब्रह्मा के कहने से उन्हें मुक्त किया (६. ७, २२-२३)। वानरों के पितामह संनादन से किसी समय इन्द्र का भी युद्ध हुआ था, (६. २७, १९)। कुम्भकर्ण ने वैवस्वत यम और इन्द्र को भी पराजित किया था (६, ६१, ९)। 'जन्म लेते ही जब कुम्भकर्ण ने भूख से पीड़ित होकर सहस्रों प्रजाजनों का भक्षण कर लिया तब पीड़ित प्रजाजनों के अनुरोध पर देवराज इन्द्र ने क्रुद्ध होकर अपने वज्र से कुम्भकर्ण को आहत कर दिया। वज्र के प्रहार से आहत होकर क्षुब्ध कुम्भकर्ण ने इन्द्र के ऐरावत के मुख से एक दाँत उखाड़ कर उसी से देवेन्द्र के वक्ष पर प्रहार किया जिससे पीड़ित होकर इन्द्र प्रजाजनों के साथ ब्रह्मा के स्थान पर गये

(६. ६१, १३–१८)।" वज्रधारी शतक्रतु इन्द्र ने पौरुष द्वारा विश्वरूप मुनि की हत्या करने के पश्चात् प्रायश्चित्त किया था (६. ८३, २९)। इन्द्रजित् के साथ युद्ध करते हुए लक्ष्मण की ऋषि, पितर आदि सहित इन्द्र ने भी रक्षा की (६. ९०, ६३)। इन्द्रजित् का वध हो जाने पर सम्पूर्ण महर्षियों सहित इन्द्र को भी अत्यन्त प्रसन्नता हुई (६. ९०, ८४)। "रावण के साथ युद्ध के समय जब श्रीराम भूमि पर खड़े हुये तब आकाश में स्थित देवता, किन्नर और गन्धर्व यह कहने लगे कि यह युद्ध बराबरी का नहीं है। इन लोगों की बात सुनकर इन्द्र ने मातलि से कहा : 'तुम मेरा रथ ले जाकर श्रीराम से कहो कि इन्द्र ने यह अपना रथ भेजा है जिस पर बैठकर आप रावण के साथ युद्ध करें।' (६. १०२, ५–७)।" सीता की उपेक्षा करने पर अन्य देवताओं सहित इन्द्र ने भी लंका में उपस्थित होकर श्रीराम को समझाने का प्रयास किया (६. ११७, २–९)। इन्होंने श्रीराम को वरदान देने की इच्छा प्रगट की (६. १२०, १–२)। श्रीराम के अनुरोध से इन्द्र ने मृत वानरों को जीवित कर दिया (६. १२०, ११–१६)। कुबेर की तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी इन्द्र आदि देवताओं के साथ उनके आश्रम पर वरदान देने के लिये गये (७. ३, १३)। "मरुत्त के यज्ञ के समय रावण को उपस्थित देखकर भयभीत देवता तिर्यग्योनि में प्रवेश कर गये। उस समय इन्द्र मोर बन गये थे (७. १८, ४–५)।" रावण के प्रस्थान के पश्चात् इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवता पुनः अपने स्वरूप में प्रगट हो गये और उन-उन प्राणियों को वरदान देने लगे जिनका उन्होंने रूप ग्रहण किया था; इन्द्र ने उस समय मोरों को वरदान दिया (७. १८, २०–२३)। "सेना सहित जब रावण ने इन्द्रलोक पर आक्रमण किया तब इन्द्र ने विष्णु से सहायता की प्रार्थना की। उस समय विष्णु ने भविष्य में रावण-वध की प्रतिज्ञा करके इन्द्र को लौटाया (७. २७, १–१३)।" जब मेघनाद के भय से देवगण पलायन करने लगे तब इन्द्र ने उन्हें पुनः एकत्र करके अपने पुत्र जयन्त को उनका नेता बनाया (७. २८, ४–६)। अपने पुत्र के पराजित हो जाने पर इन्द्र ने रुद्रों, वसुओं, आदित्यों इत्यादि के साथ अपने रथ पर बैठकर मेघनाद से युद्ध किया (७. २८, २३–२८)। "रावण जब देवसेना का संहार करने के लिये उनके बीच से निकला तब उसकी इच्छा को जानकर इन्द्र ने देवताओं से उसे बन्दी बना लेने के लिये कहा। तदनन्तर अपनी विशाल सेना को रावण के हाथों नष्ट होते देख इन्द्र ने बिना किसी घबड़ाहट के रावण का सामना किया और उसे चारों ओर से घेरकर युद्ध से विमुख कर दिया। रावण को इस प्रकार इन्द्र के चंगुल में फंसा हुआ देखकर दानवों तथा राक्षसों ने आर्तनाद किया (७. २९,

४–१९)।" मेघनाद के बाण से मातलि के आहत हो जाने पर जब इन्द्र ने ऐरावत पर आरूढ़ होकर युद्ध आरम्भ किया तब मेघनाद ने उन्हें अपनी माया से व्याकुल करके बन्दी बना लिया (७. २९, २६–२९)। जब इन्द्रजित् ने इन्द्र को मुक्त कर दिया तब इन्द्र का देवोचित तेज नष्ट हो गया और वे दुःखी और चिन्तित होकर अपनी पराजय के कारण पर विचार करने लगे (७. ३०, १६–१७)। ब्रह्मा के परामर्श के अनुसार इन्द्र ने वैष्णवयज्ञ करके पुनः स्वर्गलोक प्राप्त किया और देवताओं पर शासन करने लगे (७. ३०, ४७–५०)। "हनुमान् ने सूर्य के रथ के ऊपरी भाग में जब राहु का स्पर्श किया तब वह क्रोध में भरकर इन्द्र के पास गया। राहु की बात सुनकर इन्द्र व्यग्र हो उठे और अपने ऐरावत पर बैठकर तथा राहु को आगे करके सूर्यदेव के स्थान पर गये (७. ३५, ३१–३८)।" इन्द्र ने राहु की सहायता करने का वचन दिना (७. ३५, ४३)। हनुमान् को ऐरावत की ओर आता हुआ देखकर इन्द्र ने उन पर वज्र से प्रहार किया (७. ३५, ४६)। ब्रह्मा के कहने पर इन्द्र ने हनुमान् को जीवित करके उन्हें कमल-पुष्पों का एक हार देते हुये कहा कि उस दिन से हनुमान् इन्द्र के वज्र से भी मारे नहीं जा सकेंगे (७. ३६, ७–१२)। स्त्री के रूप में परिणत ऋक्षराट् से इन्होंने वालिन् को उत्पन्न किया (७. ३७ क, ३१–३७)। निमि के साथ-साथ इन्होंने भी एक यज्ञ किया जिसमें वसिष्ठ को अपना पुरोहित बनाया (७. ५५, १०–११)। "जब पूर्वकाल में मान्धाता ने देवलोक पर विजय प्राप्त करने का उद्योग आरम्भ किया तब देवताओं सहित इन्द्र भयभीत हुये। उस समय मान्धाता के अभिप्राय को जानकर इन्द्र ने उसके पास जाकर कहा : 'पहले तुम समस्त पृथिवी को अपने अधिकार में कर लो, उसके बाद देवलोक पर राज्य करना।' इन्द्र की बात सुनकर मान्धाता के यह पूछने पर कि उसके आदेश की पृथिवी पर कहाँ अवहेलना हो रही है, इन्द्र ने मधुवन में मधुपुत्र लवणासुर का उल्लेख करते हुये कहा कि वह मान्धाता की अवज्ञा करता है (७. ६७, ५–१३)।" लवणासुर के वध पर प्रसन्न होकर इन्द्र ने शत्रुघ्न के सम्मुख प्रकट होकर उन्हें वरदान दिया और उसके पश्चात् अन्तर्धान हो गये (७. ६९, ३६; ७०, १–३. ६–७)। शम्बूक की मृत्यु पर इन्द्र ने श्रीराम को बधाई दी (७. ७६, ५–६)। जब वृत्रासुर ने घोर तपस्या आरम्भ की तब इन्होंने उसके विरुद्ध शिकायत करते हुये विष्णु से उसके विनाश का आग्रह किया (७. ८४, ९–१८)। "देवताओं के आग्रह पर विष्णु ने अपने तेज को तीन भाग में विभक्त करके एक को इन्द्र में, दूसरे को इन्द्र के वज्र में, और तीसरे को भूलोक में प्रवेश करा दिया। इस प्रकार संवर्द्धित होकर

इन्द्र ने वृत्रासुर के मस्तक पर अपने वज्र से प्रहार करके उसका वध कर दिया। वृत्रवध से प्रकट हुई ब्रह्महत्या द्वारा ग्रसित होकर इन्द्र अन्धकारमय पाताल प्रदेश में चले गये। इन्द्र के इस प्रकार अदृश्य हो जाने पर जब देवताओं ने विष्णु की स्तुति की तब उन्होंने इन्द्र के उद्धार का उपाय बताया (७. ८५, १०–१७. २०–२२)।" "इन्द्र के अदृश्य हो जाने से समस्त संसार व्याकुल हो उठा; धरती की आर्द्रता नष्ट हो गई और समस्त वन्य-प्रदेश, नदियाँ, तथा सरोवर सूख गये (७. ८६, २–५)।" विष्णु के आदेश के अनुसार अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करके इन्द्र पुनः अपने पद पर प्रतिष्ठित हुये जिससे सम्पूर्ण जगत् में शान्ति व्याप्त हो गई (७. ८६, ९–१९)। इन्होंने लक्ष्मण पर पुष्पवर्षा की (७. १०६, १६)। लक्ष्मण को ये सशरीर अपने साथ स्वर्गलोक ले गये (७. १०६. १७)। विष्णुरूप में स्थित हुये श्रीराम का देवताओं सहित इन्होंने भी पूजन किया (७. ११०, १३)।

इन्द्रजानु, एक वानर प्रधान का नाम है जो सुग्रीव के आवाहन पर ग्यारह करोड़ वानरों को लेकर उनके पास आया था (४. ३९, ३१--३२)। श्रीराम ने इसका आदर-सत्कार किया (७. ३९, २२)।

इन्द्रशत्रु, एक राक्षसपति का नाम है जो अस्त्र-शस्त्रों से युक्त होकर राम के वध के लिये रावण के दरबार में सन्नद्ध खड़ा था (६, ९, २)।

इन्द्रशिरा, एक देश का नाम है जो अपने ऐरावतवंशी गजराजों के लिये प्रसिद्ध था (२. ७०, २३)।

इल, पूर्वकाल के प्रजापति कर्दम के पुत्र, वाह्लिक देश के एक धर्मात्मा राजा का नाम है जो देवता, दैत्य, नाग, राक्षस, गन्धर्व और महामनस्वी यक्ष द्वारा पूजित थे (७.८७, ३–६)। अत्यन्त प्रभावशाली होने पर भी राजा इल धर्म और पराक्रम में दृढ़तापूर्वक स्थित रहते थे, तथा इनकी बुद्धि भी स्थिर थी (७. ८७, ७)। एक बार ये शिकार करते हुये उस स्थान पर पहुँचे जहाँ महासेन का जन्म हुआ था (७. ८७, ८–१०)। "उस स्थान पर पहुँच कर इल ने देखा कि उस वन का समस्त प्राणि-समुदाय स्त्रीरूप ही है, और उसी समय उन्होंने सेवकों सहित अपने को भी स्त्री-रूप में परिणत हुआ देखा। शिव की इच्छा से यह परिवर्तन हुआ जानकर इल भयभीत हो उठे और अपने सेवकों सहित वे शिव की शरण में गये (७. ८७, १४–१८)।" जब शिव ने इन्हें इनका पूर्व-रूप प्रदान करना अस्वीकार कर दिया, तब ये उमा की शरण में गये (७. ८७, १९–२३)। "जब उमा ने इनसे बताया कि वे केवल आधा वरदान ही दे सकती हैं, तब इन्होंने उनसे यह वर माँगा : "मैं एक मास तक स्त्री और एक मास तक पुरुष रहा करूँ।' उमा से यह वर प्राप्त करके ये

एक मास तक पुरुष और एक मास तक रूपवती स्त्री रहकर जीवन व्यतीत करने लगे (७. ८७, २४–२९) ।" "तदनन्तर उस प्रथम मास में इल त्रिभुवनसुन्दरी नारी होकर वन में विचरण करने लगी। इस प्रकार विचरण करती हुई इला ने एक सरोवर में तपस्या कर रहे बुध को देखा (७. ८८, ४–११) ।" "इला के सौन्दर्य पर मोहित होकर बुध जल से बाहर आये और इला तथा उसकी सखियों से उनका समाचार जानकर उन्हें किंपुरुषी नाम से प्रसिद्ध होकर उसी पर्वत पर निवास करने की आज्ञा प्रदान की (७. ८८, १३–२४) ।" "बुध द्वारा समागम के प्रस्ताव को स्वीकृत करके यह उनके साथ रहने लगी। किन्तु एक मास तक स्त्री रूप में बुध के साथ रहने के पश्चात् एक दिन प्रात:काल इसने अपना पूर्व रूप ग्रहण कर लिया और बुध से अपनी सेना तथा अनुचरों आदि के सम्बन्ध में प्रश्न किया (७. ८९, ५–११) ।" "बुध ने इससे उस स्थान पर कुछ समय तक रुकने का आग्रह किया परन्तु इसने पहले उसे अस्वीकार कर दिया। फिर भी, बहुत अधिक आग्रह पर एक बर्ष तक उनके पास रहना स्वीकार कर लिया। वर्ष के अन्त में उसने पुरूरवा नामक एक पुत्र को जन्म देकर उसे बुध को सौंप दिया। वर्ष पूरा होने में जितने मास शेष थे उतने समय जब-जब राजा पुरुष होते थे तब-तब बुध धर्मयुक्त कथाओं द्वारा उनका मनोरंजन करते थे (७. ८९, १२–२५) ।" "अन्ततः इन्होंने अश्वमेध के अनुष्ठान द्वारा शिव से पुनः पुरुषत्व प्राप्त कर लिया। तदनन्तर इन्होंने बाह्लिक देश को छोड़कर मध्यदेश में प्रतिष्ठानपुर नामक नगर बसाया और वहाँ के शासक बने (७. ९०, १८–२२) ।"

इल्वल, दण्डकारण्य के एक असुर का नाम है जो अपने भ्राता, वातापि, की सहायता से सहस्रों निर्दोष ब्राह्मणों का वध करता रहता था। अगस्त्य मुनि ने इसे भस्म कर दिया (३, ११, ५५–६६) ।

उ

उच्चैःश्रवा, उस उत्कृष्टतम अश्व का नाम है जो समुद्र-मन्यन के समय सागर से निकला था (१. ४५, ३९) । यह सूर्य का वाहक है (७. २३ख, ५)।

उज्जिहाना, एक नगर का नाम है जहाँ प्रियक नामक वृक्षों की प्रचुरता थी। अयोध्या आते समय भरत ने यहीं अपने अश्वों को बदला था (२. ७१, १२--१३) ।

उत्कल, दक्षिण के एक प्रदेश का नाम है जहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज करने के लिये अङ्गद को भेजा था (४, ४१, ९) ।

उदयाचल, पूर्व के पर्वतों का नाम है जहाँ के वानरों को आमन्त्रित

करने के लिये सुग्रीव ने हनुमान् से कहा था (४. ३७, ४)। 'हेममयः श्रीमानुदयपर्वतः', (४. ४०, ५२)। "इस पर्वत का गगनचुम्बी शिखर सौ योजन लम्बा था, जिस पर स्थित साल, ताल, तमाल, पुष्पों से परिपूर्ण कनेर आदि वृक्ष भी सुवर्णमय थे (४. ४०, ५३--५५)।" वालिन् के भय से भागते हुये सुग्रीव इस पर्वत पर भी आये थे (४. ४६, १५)।

उदावसु, जनक के पुत्र और नन्दिवर्द्धन के पिता का नाम है (१. ७१, ५)।

उनमत्त, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जो माल्यवान् तथा सुन्दरी का पुत्र था (७. ५, ३५–३७)।

उपेन्द्र (= विष्णु) : 'उपेन्द्रमिव दुःसहम्', (४. १७, १०)।

उमा, हिमवान् और मेना की द्वितीय पुत्री का नाम है : इसके रूप की भूतल पर कोई समता नहीं कर सकता था (१. ३५, १४–१६)। "यह उत्तम एवं कठोर व्रत का पालन करती हुई घोर तपस्या में लग गई। गिरिराज ने उग्र तपस्या में संलग्न हुई अपनी इस विश्ववन्दिता पुत्री उमा का, अनुपम प्रभावशाली रुद्र से, विवाह कर दिया (१. ३५, २०–२१)।" उमादेवी को महादेव के साथ क्रीड़ा-विहार करते सौ दिव्यवर्ष बीत गये किन्तु उमा देवी के गर्भ से कोई पुत्र नहीं हुआ (१. ३६, ६–७)। ब्रह्मा आदि देवताओं के, क्रीड़ा से निवृत्त हो उमा देवी के साथ तप करने की प्रार्थना पर (१. ३६, ८–११), शिव ने बताया कि वे दोनों अपने तेज से ही तेज को धारण कर लेंगे (१. ३६ १२–१३)। "महादेव के यह पूछने पर कि यदि उनका यह सर्वोत्तम तेज (वीर्य) क्षुब्ध होकर अपने स्थान से स्खलित हो गया तो उसे कौन धारण करेगा ? देवताओं ने शिव से कहा : 'भगवन् ! आज आपका जो तेज क्षुब्ध होकर गिरेगा, उसे यह पृथिवी देवी धारण करेंगी।' देवताओं का यह कथन सुनकर महाबली देवेश्वर शिव ने अपना तेज छोड़ा, जिससे पर्वत और वनों सहित यह समस्त पृथिवी व्याप्त हो गई (१. ३६, १४–१६)।" देवताओं ने इनका पूजन किया (१. ३६, १९)। इन्होंने देवताओं तथा पृथिवी को शाप दे दिया क्योंकि उन्होंने उमा को पुत्र-प्राप्त करने से रोक दिया था (१. ३६, २०–२४)। रावण ने इनके शाप का स्मरण किया (६. ६०, ११)। रोते हुये राक्षस–कुमार, सुकेश की दयनीय दशा पर दृष्टिपात करके इनके हृदय में करुणा का स्रोत उमड़ पड़ा (७. ४, २८), और इन्होंने यह वरदान दिया कि आज से राक्षसियाँ जल्दी ही गर्भ धारण करेंगी; फिर शीघ्र ही उसका प्रसव करेंगी और उनका पैदा किया हुआ बालक तत्काल बढ़कर माता के ही समान अवस्था का हो जायगा (७. ४, ३०–३१)। जब रावण ने कैलास पर्वत के

निचले भाग में अपनी भुजायें लगाई और उसे शीघ्र उठा लेने का प्रयत्न किया तब पर्वत के हिलने से उमा विचलित हो उठीं और भगवान् शंकर से लिपट गईं (७. १६, २६)। कार्तिकेय के जन्म-स्थान पर शिव अपने समस्त सेवकों के साथ रहकर उमा का मनोरञ्जन करते थे (७. ८७, ११)। "स्त्री रूप हुये राजा इल ने इनसे पुरुषत्व-प्राप्ति की प्रार्थना की (७. ८७, २०–२३), जिस पर इन्होंने कहा : 'राजन् ! तुम पुरुषत्व-प्राप्ति के लिये जो वर चाहते हो, उसके आधे भाग के दाता तो महादेव हैं और आधा वर मैं तुम्हें दे सकती हूँ। इसलिये तुम मेरा दिया हुआ आधा वर स्वीकार करके जितने–जितने काल तक स्त्री और पुरुष रहना चाहो, उसे मेरे सामने कहो।' (७. ८७, २४–२५)।" इन्होंने राजा इल की एक मास तक स्त्री और एक मास तक पुरुष रहने की इच्छा को स्वीकार कर लिया (७. ८७, २६–२७)। उमा ने इल से कहा : 'राजन् ! जब तुम पुरुष रूप में रहोगे, उस समय तुम्हें अपने स्त्री-जीवन का और स्त्री रूप में पुरुष-जीवन का स्मरण नहीं होगा।' (७. ८७, २७–२९)।

उर्मिला, जनक के अनुज कुशध्वज की पुत्री का नाम है। जनक ने लक्ष्मण के साथ इनके पाणिग्रहण की प्रतिज्ञा की (१. ७१, २१–२२)। यशस्विनी उर्मिला को पति-माताओं (सासों) ने सवारी से उतारा और घर में ले गईं (१. ७७, १०–१२)। इन्होंने देवमन्दिरों में देवताओं का पूजन तथा सास-ससुर आदि के चरणों में प्रणाम किया (१. ७७, १३)। ये पति के साथ एकान्त में रहकर आनन्द से समय व्यतीत करने लगीं (१. ७७, १४)।

उर्वशी—रावण ने कहा कि पुरूरवा को ठुकराकर उर्वशी को अत्यन्त पश्चाताप हुआ था (३. ४८, १८)। अप्सराओं में श्रेष्ठ उर्वशी सखियों के साथ जलक्रीडा के लिये समुद्र के पास गई (७. ५६, १३)। उस समय वरुण के मन में उर्वशी के लिये अत्यन्त उल्लास प्रगट हुआ और उसने उस सुन्दरी अप्सरा को समागम के लिये आमन्त्रित किया (७. ५६, १४–१५)। उर्वशी ने वरुण को बताया कि मित्र देवता ने पहले से ही उसका वरण कर लिया है (७. ५६, १६)। देव निर्मित कुम्भ में अपने वीर्य का परित्याग कर देने के वरुण के प्रस्ताव को उर्वशी ने सहर्ष स्वीकार किया तथा साथ ही मित्र द्वारा उसके शरीर पर हुये अधिकार पर खेद प्रकट किया (७. ५६, १९–२०)। "उर्वशी की स्वीकृति पर वरुण ने प्रज्वलित अग्नि के समान प्रकाशमान अपने तेज (वीर्य) को उस कुम्भ में डाल दिया। तदनन्तर उर्वशी मित्र देवता के पास गई। कुपित हुये मित्र के शाप के कारण वह बुध के पुत्र राजर्षि पुरूरवा की पत्नी हो गई (७. ५६, २१–२६)।" मनोहर दाँत और सुन्दर नेत्रवाली

उर्वशी मित्र के दिये हुये शाप का क्षय होने पर इन्द्रसभा में चली गई (७. ५६, २९)।

उल्का-मुख, एक वानर-प्रमुख का नाम है जो हुताशन का पुत्र था। सुग्रीव ने इसे सीता की खोज में दक्षिण-दिशा में जाने की अनुमति दी (४. ४१, ४)।

उशीरबीज, एक पर्वत का नाम है जहाँ प्रमाथि नामक वानर-यूथपति रहता था (६. २७, २७)। राजा मरुत्त ने इसी स्थान पर अपने यज्ञ का अनुष्ठान किया (७. १८, २)।

ऋ

ऋक्ष, एक गुफा का नाम है। बिन्ध्यक्षेत्र में सीता की खोज करते हुये वानर-प्रधानों, हनुमान् तथा अङ्गद आदि ने इसे देखा था (४. ५०, ७)। यह गुफा ऋक्षविल के नाम से विख्यात तथा एक दानव द्वारा रक्षित थी (४. ५०, ८)। इसके सुगन्धित तथा दुर्लङ्घ्य होने का उल्लेख (४. ५०, १०)। यह नाना प्रकार के जन्तुओं से भरी हुई तथा दैत्यराजों के निवास-स्थान, पाताल के समान, भयंकर प्रतीत होती थी (४. ५०, १२)। 'दुर्दशमिव घोरं च दुर्विगाह्यं च सर्वशः', (४. ५०, १३)। यह अन्धकार से परिपूर्ण थी; इसमें चन्द्रमा और सूर्य की किरणें भी नहीं पहुँच पाती थीं (४. ५०, १७–१८)। 'नानापादपसंकुलः', (४. ५०, २१)। इसमें मय के दिव्य-भवनों, सुन्दर उद्यानों और सरोवर इत्यादि का वर्णन किया गया है (४. ५०, २५–३७)।

ऋक्षराज (ऋक्षराट्), वालिन् और सुग्रीव के पिता का नाम है। ये सूर्य के समान तेजस्वी तथा समस्त वानरों के राजा थे। चिरकाल तक शासन करने के पश्चात् इनकी मृत्यु हो गई (७. ३६, ३६--३७)। "ब्रह्मा के अश्रु-विन्दु से इनकी उत्पत्ति हुई, जिसके पश्चात् ये कुछ समय तक कन्द-मूल और फल खाकर मेरु पर्वत पर निवास करते रहे। ज्यों ही ये अपनी छाया से युद्ध करने के लिये एक सरोवर के जल में कूदे त्यों ही एक सुन्दर स्त्री के रूप में परिणत हो गये (७. ३७क, ८--३०)। इन्द्र से वालिन् तथा सूर्य से सुग्रीव को उत्पन्न करने के पश्चात् ये पुनः पुरुष-रूप में परिणत हो गये। इन शिशुओं के साथ ब्रह्मा के सम्मुख उपस्थित हुये (७. ३७क, ३१--४५)। ब्रह्मा ने इन्हें किष्किन्धा में निवास करनेवाले वानरों का शासक नियुक्त किया (७. ३७क, ४५--५७)।

ऋक्षवान्, एक पर्वत का नाम है जिस पर सहस्रों वानर-यूथपति निवास करते थे (१. १७, ३१)। नर्मदा नदी के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है जहाँ ऋक्षराज धूम्र निवास करता था (६. २७, ९)।

१. ऋचीक, एक मुनि का नाम है जिनका विश्वामित्र की ज्येष्ठ बहिन के साथ पाणिग्रहण हुआ था (१. ३४, ७)। इनका भृगुतुङ्ग पर्वत पर अपनी पत्नी तथा तीन पुत्रों के साथ निवास (१. ६१, ११)। राजर्षि अम्बरीप ने इनके पुत्र को यज्ञ-पशु बनाने की प्रार्थना की; ऋचीक ने इस कार्य के लिये अपने ज्येष्ठ पुत्र को बेचना अस्वीकार कर दिया (१. ६१, १२–१६)।

२. ऋचीक—भृगुवंशी ऋचीक मुनि को विष्णु ने वैष्णव धनुप प्रदान किया, जिसे इन्होंने अपने पुत्र जमदग्नि को समर्पित कर दिया (१. ७५, २२–२३)।

१. ऋषभ, एक महान् श्वेतवर्ण-पर्वत का नाम है जो क्षीरसागर के मध्य में स्थित था। सुग्रीव ने विनत से सीता की खोज में यहाँ जाने के लिये कहा (४. ४०, ४२)। 'दिव्यगन्धैः कुसमितैराचितैश्च नगैर्वृतः', (४, ४०, ४२)।

२. ऋषभं, दक्षिण-समुद्र में स्थित एक पर्वतश्रेणी का नाम है, जो सम्पूर्ण रत्नों से भरा हुआ है तथा जहाँ गोशीर्षक, पद्मक, हरिश्याम आदि नामों वाला दिव्य चन्दन उत्पन्न होता है। रोहित नामवाले गन्धर्व इसकी रक्षा तथा यहाँ सूर्य के समान कान्तिमान् पुण्यकर्मा पाँच गन्धर्वराज निवास करते हैं (४. ४१, ४०–४३)।

३. ऋषभ, एक राजा का नाम है जिनके समय में अयोध्यापुरी श्रीराम के परमधाम पधारने के पश्चात् पुनः आबाद होगी (७. १११, १०)।

४. ऋषभ, एक वानर-प्रमुख का नाम है जिसने समुद्र-लाँघने के अङ्गद के प्रश्न का उत्तर देते हुये कहा कि वह चालीस योजन तक एक छलांग में चला जायगा (४. ६५, ५)। श्रीराम ने वानर शिरोमणि ऋषभ को वानर सेना के दाहिने भाग की रक्षा करते हुये चलने की आज्ञा दी (६. ४, १६)। युद्ध के लिये प्रस्थान करती हुई वानर-सेना के लिये मार्ग ठीक करनेवालों में एक यह भी थे (६. ४, ३०)। इनको वानर-कपियों से घिरे रहकर वानर-वाहिनी के दाहिने पार्श्व में खड़े रहने की आज्ञा दी गई (६. २४, १५ । इन्होंने अङ्गद के संरक्षण में दक्षिण-द्वार पर युद्ध किया (६. ४१, ३९--४०)। राम की आज्ञानुसार ये अन्य वानर-यूथपतियों के साथ इन्द्रजित् का अनुसन्धान करने के लिये गये किन्तु रोक दिये गये (६. ४५, १--५)। वानरसेना का सावधानी के साथ संरक्षण करते हैं (६.४७, ३-४)। इन्होंने पर्वत-शिखरों को उखाड़ कर रावण पर आक्रमण किया किन्तु रावण ने इनके प्रहारों को व्यर्थ कर दिया (६. ५९, ४२–४३)। "इन्होंने कुम्भकर्ण पर आक्रमण किया। कुम्भकर्ण ने इन्हें अपनी दोनों भुजाओं से दबा दिया जिससे इनके मुँह से खून निकलने लगा और ये पृथिवी पर गिर पड़े (६. ६७, २४–२७)।" मत्त के

साथ युद्ध करते हुये इन्होंने उसका वध कर दिया (६. ७०, ४९–६०)। इन्द्रजित् द्वारा घायल हुये (६. ७३, ४८)। राम के राज्याभिषेक के अवसर पर ये दक्षिण-समुद्र से शीघ्र ही एक सोने का घट भर लाये (६. १२८, ५४)।

ऋषभ-स्कन्ध, एक वानर-यूथपति का नाम है जो अन्य वानर-यूथपतियों के साथ राम की आज्ञा द्वारा इन्द्रजित् की खोज करने के लिये गया (६. ४५, १–३); किन्तु इसे रोक दिया गया (६. ४५, ४–५)।

ऋषि-पुत्र (बहु०), उन वानर-यूथपतियों के लिये प्रयुक्त हुआ है जिन्हें सीता की खोज करने के लिये सुग्रीव ने पश्चिम दिशा में भेजने का प्रस्ताव किया था (४. ४२, ५)।

ऋष्टिक, दक्षिण दिशा के एक देश का नाम है जहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १०)।

ऋष्यमूक, एक पर्वत का नाम है जहाँ श्रीराम के पधारने की वाल्मीकि ने पूर्वकल्पना कर ली थी (१. ३, २३)। चार अन्य वानरों के साथ सुग्रीव ने यहीं निर्वासित जीवन व्यतीत किया था (३. ७२, १२)। कबन्ध ने श्रीराम को शीघ्र ही इस पर्वत पर जाने का परामर्श दिया (३. ७२, २१)। "यह पम्पासरोवर के पूर्वभाग में स्थित था। यहाँ के वृक्ष पुष्पों से सुशोभित थे और इसकी पूर्वकाल में साक्षात् ब्रह्मा ने सृष्टि की थी। इस पर्वत के शिखर पर सोया हुआ पुरुष स्वप्न में जिस सम्पत्ति को देखता है उसे जागने पर प्राप्त कर लेता है। जो पापकर्मी तथा विषम-व्यवहारी पुरुष इस पर्वत पर चढ़ता है उसे इस पर सो जाने पर राक्षस उठाकर ऊपर से प्रहार करते हैं। इस पर्वत पर हाथी तथा रुरू-मृग निवास करते हैं। (३. ७३, ३१–३९)। यह पम्पा-सरोवर के तट पर स्थित है (३. ७५, २५–२६)। यह पम्पा के दक्षिण-भाग में स्थित है (४. १, ७३)। 'धातुभिः विभूषितः', (४. १, ७४)।" 'गिरिवरः', (४. १०, २८)। वालिन् यहाँ मतङ्ग के शाप के भय से नहीं जा सकते थे (४. ११, ६४)। 'शैलमुख्यः', (४. २४, ७)। सुग्रीव ने वालिन् के क्रोध से बचने के लिये इसी पर्वत पर शरण ली थी (४. ४६, २३)। राम का विमान इसके ऊपर से होकर गया (६. १२३, ३८–४०)।

ऋष्यश्रृङ्ग, विभाण्डक के पुत्र और कश्यप के पौत्र का नाम है (१.९,३)। इनके पिता ने वन में ही इनका लालन-पालन किया था (१. ९, ४)। सदा पिता के साथ ही वन में रहने के कारण विप्रवर ऋष्यश्रृङ्ग अन्य किसी से परिचित नहीं होंगे (१. ९, ४)। ये सदैव दोनों प्रकार के ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे (१. ९, ५)। "वन में रहते हुये इनका समय अग्नि तथा यशस्वी पिता

की सेवा में ही व्यतीत होगा (१. ९, ६)। ये वेदों के पारगामी विद्वान हैं (१. ९, १३)। "अङ्गराज इन्हें वेश्याओं की सहायता से अपने राज्य में बुलायेंगे और इनके आते ही इन्द्र अङ्ग देश में वर्षा आरम्भ कर देंगे। अङ्गराज अपनी पुत्री शान्ता को इन्हें समर्पित कर देंगे। ये दशरथ को पुत्र प्राप्त करानेवाले यज्ञ-कर्म का सम्पादन करेंगे (१. ९, १८–१९)। "ऋष्यश्रृङ्ग सदैव वन में ही रहकर तपस्या और स्वाध्याय में रत रहते थे। ये स्त्रियों को पहचानते तक नहीं और विषयों के सुख से भी सर्वथा अनभिज्ञ थे (१. १०,३)।" "वेश्याओं द्वारा मोहित होकर ये अङ्गदेश में आये, जिससे वहाँ की अनावृष्टि समाप्त हुई। अङ्गराज की पुत्री शान्ता से विवाह करने के पश्चात् ये अङ्गदेश में ही सुख-वैभव में रहने लगे (१. १०, ७–३३)।" सुमन्त ने सनत्कुमार की भविष्यवाणी को दुहराया (१. ११, १–१२)। 'द्विजश्रेष्ठम्:', (१. ११, १५)। 'दीप्यमानमिवानलम्', (१. ११, १६)। "राजा रोमपाद ने इनका दशरथ से परिचय कराते हुये इन्हें अयोध्या जाने की स्वीकृति प्रदान की। ये अपनी पत्नी, शान्ता, के साथ अयोध्या आये और वहाँ दशरथ के अतिथि के रूप में रहे (१. ११, १७–३१)।" महाराज दशरथ द्वारा निवेदन करने पर इन्होंने उनके लिये अश्वमेध यज्ञ करना स्वीकार कर लिया (१. १२, २–४)। इन्होंने दशरथ से यज्ञ-स्थल की ओर प्रस्थान करने के लिये कहा (१. १३, ३९)। वसिष्ठ आदि श्रेष्ठ द्विजों ने यज्ञमण्डप में ऋष्यश्रृङ्ग को आगे करके शास्त्रोक्त विधि के अनुसार यज्ञकर्म का आरम्भ किया (१. १३, ४०; १४, २)। ऋष्यश्रृङ्ग आदि महर्षियों ने इन्द्र आदि श्रेष्ठ देवताओं का आवाहन किया (१. १४, ८)। इन्होंने वसिष्ठ के साथ अन्य ऋत्विजों को दक्षिणा बाँटी (१. १४, ५२) । इन्होंने दशरथ को चार पुत्र प्राप्त होने का वरदान दिया (१. १४, ५९)। "ऋष्यश्रृङ्ग अत्यन्त मेधावी और वेदज्ञ थे। इन्होने राजा दशरथ से कहा : 'मैं आपको पुत्र-प्राप्ति कराने के हेतु अथर्ववेद के मन्त्रों से पुत्रेष्टि-यज्ञ करूँगा। वेदोक्त विधि के अनुसार अनुष्ठान करने पर यह यज्ञ अवश्य सफल होता है।' इस प्रकार कहकर इन तेजस्वी मुनि ने पुत्रेष्टि-यज्ञ आरम्भ किया। (१. १५, १–३)।" राजा दशरथ द्वारा अत्यन्त सम्मानित होकर ऋष्यश्रृङ्ग मुनि ने अपनी पत्नी सहित उनसे विदा ली (१. १८, ६)।

ए

एकजटा, सीता के रक्षक के रूप में नियुक्त एक राक्षसी का नाम है, जिसने रावण को अस्वीकृत कर देने पर सीता के प्रति क्रोध प्रकट किया था (५. २३, ५–९)।

एकसाल, उस ग्राम का नाम है जिसके निकट केकय से लौटते समय भरत ने स्थाणुमती नदी को पार किया था (२. ७१, १६)।

ऐ

ऐरावत, इरावती के पुत्र, महान गजराज का नाम है (३. १४, २४)। 'देवराजमपि क्रुद्धो मत्तैरावतगामिनम्', (३. २३, २४)। 'देवासुरविमर्देषु वज्राशनिकृतव्रणम् । ऐरावतविषाणाग्रैरुत्कृष्टकिणवक्षसम् ॥', (३. ३२, ७)। 'शिक्षितान्गजशिक्षायामैरावतसमान्युधि', (५. ६, ३२)। युद्धकाल में रावण की भुजाओं पर ऐरावत हाथी के दाँतों के अग्रभाग से जो प्रहार किये गये थे उनके आघात के चिह्न रावण की भुजा पर वर्तमान थे (५. १०, १६)। जब हनुमान् समुद्र को पार करने लगे तो ऐरावत हाथी वहाँ महान् द्वीप के समान प्रतीत होता था (५. ५७, ३)। 'ततः कैलासकूटाभं चतुर्दन्तं मदस्रवम् । शृङ्गारधारिणं प्रांशुं स्वर्णघण्टाट्टहासिनम् ॥ इन्द्रः करीन्द्रमारुह्य राहुं कृत्वा पुरःसरम् । प्रायाद्यत्राभवत् सूर्यः सहानेन हनूमता ॥', (७. ३५, ३७–३८)।

ऐलधान, एक स्थान का नाम है जहाँ केकय देश से लौटते समय भरत ने एक नदी को पार किया था (२. ७१, ३)।

ओ

ओङ्कार—बुध ने इला को पुरुषत्व प्राप्त कराने के लिये जब विभिन्न महर्षियों से परामर्श आरम्भ किया तो पुलस्त्य आदि के साथ महातेजस्वी ओङ्कार भी उनके आश्रम पर आये (७. ९०, ९)। श्रीराम के परमधाम जाते समय ओङ्कार भी भक्तिपूर्वक उनका अनुसरण कर रहे थे (७.-१०९, ८)।

ओषधि-पर्वत—"जाम्बवान् ने हनुमान् को बताया कि ऋषभ और कैलास पर्वतों के शिखरों के बीच ओषधियों का पर्वत स्थित है। इसी ओपधियों के पर्वत से जाम्बवान् ने हनुमान् से ऐसी ओषधियों को लाने के लिये कहा जिनसे वानरों को प्राणदान मिल सकता था (६. ७४, २९–३४)।" जब रावण ने लक्ष्मण को अपनी शक्ति से युद्ध में धराशायी कर दिया तो सुषेण ने हनुमान् से एक बार पुनः इसी पर्वत से ओषधियाँ लाने के लिये कहा (६. १०१, २९–३२)।

क

ककुत्स्थ, भगीरथ के पुत्र तथा रघु के पिता का नाम है (१. ७०, ३९)।

१. कण्डु, उस ऋषि का नाम है जो अपने पिता की आज्ञा से गायों का वध करता था (२. २१, ३१)।

२. कण्डु—"दक्षिण दिशा में सीता की खोज में गये हुये वानर एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ महाभाग, सत्यवादी, और तपस्या के धनी महर्षि कण्डु निवास करते थे। ये महर्षि अत्यन्त अमर्षशील थे। शौच-सन्तोष आदि नियमों का पालन करने के कारण इन्हें कोई तिरस्कृत या पराजित नहीं कर सकता था। उसी वन में इनके एक दस-वर्षीय पुत्र की किसी कारणवश मृत्यु हो गई जिससे कुपित होकर इन्होंने उस वन को शाप दिया जिससे वह आश्रयहीन, दुर्गम, तथा पशु-पक्षियों से रहित हो गया। (४. ४८,११–१४)।"

कण्व, पूर्वदिशा के एक महर्षि का नाम है जो राम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये पधारे थे (७. १, २)।

कद्रु, कश्यप तथा क्रोधवशा की पुत्री का नाम है (३. १४, २२)। यह नागों की माता हुई (३. १४, २८)। यह सुरसा की बहन थी (३. १४, ३१)। इसने एक सहस्र नागों को जन्म दिया जो पृथिवी को धारण करते हैं (३. १४, ३२)।

कनखल, उस स्थान का नाम है जहाँ एक निर्धन ब्राह्मण ने अपनी खोई गायों को पा लिया था (७. ५३, ११)।

कन्दर्प—जब एक दिन समाधि से उठकर देवेश्वर महादेव मरुद्गणों के साथ कहीं जा रहे थे तब कन्दर्प (काम) ने उनपर आक्रमण कर दिया (१. २३, १०–११)। "उस समय भगवान रुद्र (महादेव) ने क्रोध में आकर उसे भस्म कर दिया। इस प्रकार शिव द्वारा अंगहीन हो जाने के कारण काम उसी समय से 'अनङ्ग' के नाम से विख्यात हुआ (१. २३, १२–१४)।" मेनका नामक अप्सरा को देखकर विश्वामित्र कन्दर्प के वश में हो गये : 'कन्दर्पदर्प-वशगोमुनिस्तामिदमब्रवीत् । अप्सरः स्वागतं तेऽस्तु वस चेह ममाश्रमे ॥', (१. ६३, ६)। रम्भा से इन्द्र ने कहा कि वैशाख मास में, जब कि प्रत्येक वृक्ष नवपल्लवों से शोभित होते हैं, तब कोकिल और कन्दर्प के साथ वे भी उसके पास रहेंगे (१. ६४, ६)। मुनि के महाशाप से रम्भा जब पाषाण-प्रतिमा बन गई तब कन्दर्प और इन्द्र वहाँ से खिसक गये (१. ६४, १५)। शिव द्वारा इनके (मन्मथ के) भस्म कर दिये जाने का उल्लेख (३. ५६, १०)।

कपट, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् पधारे थे (५. ६, २४)।

कपिल, विष्णु के एक अवतार हैं जो निरन्तर इस पृथिवी को धारण करते हैं। ब्रह्मा ने इनकी कोपाग्नि से सगर-पुत्रों के भावी विनाश की सूचना दी (१. ४०, ३)। सगर-पुत्रों ने इनके यज्ञ में विघ्न डाला जिसपर क्रुद्ध होकर इन्होंने उन सब राजकुमारों को भस्म कर दिया (१. ४०, २४–३०)। गरुड़ ने इनके द्वारा सगर-पुत्रों के विनाश का उल्लेख किया (१. ४१, १८)। पश्चिमी समुद्र में रावण ने जब इन पर आक्रमण किया तो इन्होंने उसे सरलतापूर्वक पराभूत कर दिया और तदनन्तर पाताल में प्रवेश कर गये (७. २३ (ङ), ३--३२)।

कपीवती, एक नदी का नाम है जिसे केकय देश से लौटते समय भरत ने पार किया था (२. ७१, १५)।

कबन्ध, शरीर से विकृत तथा भयंकर दिखाई पड़नेवाले एक राक्षस का नाम है जिसे मतङ्ग ऋषि के आश्रम के निकट श्रीराम ने मार कर उसका दाह-संस्कार भी किया था। स्वर्ग जाते समय इसने राम से धर्मचारिणी शबरी के आश्रम पर जाने के लिये कहा (१. १, ५५–५६)। वाल्मीकि ने इस समस्त घटना का पूर्व-दर्शन कर लिया था (१. ३, २१)। "जटायु को जलाञ्जलि देने के पश्चात् सीता की खोज में श्रीराम और लक्ष्मण, मतङ्ग मुनि के आश्रम के निकट पहुँचे। भयंकर वन में जब दोनों भ्राता सीता की खोज कर रहे थे तो उन्हें एक भयंकर शब्द सुनाई पड़ा। हाथ में खड्ग लेकर अपने भ्राता सहित जब राम उस शब्द का पता लगाने के लिये प्रस्तुत होनेवाले ही थे कि उन्हें एक चौड़ी छातीवाला विशालकाय राक्षस दिखाई दिया। वह देखने में अत्यन्त विशाल था किन्तु उसके न मस्तक था और न ग्रीवा। कबन्ध ही उसका स्वरूप था और उसके पेट में ही मुँह बना हुआ था। उसके समस्त शरीर में पैने और तीखे रोयें थे; वह महान् पर्वत के समान ऊँचा था; उसकी आकृति भयंकर थी; वह नील मेघ के समान काला और मेघ के ही समान गम्भीर स्वर में गर्जन करता था। उसकी छाती में ललाट था और ललाट में एक ही बहुत बड़ा तथा अग्नि की ज्वाला के समान दहकता हुआ भयंकर नेत्र। उस नेत्र का रंग भूरा और उसके पलक अत्यन्त विशाल थे। उस राक्षस की दाढें अत्यन्त विशाल थीं तथा वह अपनी लपलपाती जिह्वा से अपने विशाल मुख को बार-बार चाट रहा था। अपनी एक-एक योजन लम्बी दोनों भयंकर भुजाओं को दूर तक फैलाकर उनसे अनेक प्रकार के भालू, पशु-पक्षी तथा मृगों को पकड़कर भक्षण के लिये खींच लेता था। जब राम और लक्ष्मण उसके निकट पहुंचे तब उसने उनका रास्ता रोक दिया। उस समय वह एक कोस लम्बा जान पड़ता था। उसकी आकृति केवल

कबन्ध (धड़) के ही रूप में थी इसलिये वह कबन्ध कहलाता था। वह विशाल, हिंसा-परायण, भयंकर, दो बड़ी-बड़ी भुजाओं से युक्त और देखने में अत्यन्त घोर प्रतीत होता था। उस राक्षस ने अपनी दोनों विशाल भुजाओं से रघुवंशी राजकुमारों को बलपूर्वक पीड़ा देते हुये एक साथ ही पकड़ लिया। उस समय राम और लक्ष्मण अत्यन्त विवशता का अनुभव करने लगे। उस क्रूर-हृदय महाबाहु कबन्ध ने राम और लक्ष्मण से कहा : 'तुम दोनों कौन हो ? इस वन में क्यों आये हो ? मैं भूख से पीड़ित हूँ, अतः तुम दोनों का जीवित रहना अब कठिन है।' (३. ६९, २६–४६)।" ''अपने बाहुपाश में आबद्ध राम और लक्ष्मण की ओर देखकर कबन्ध ने कहा : 'दैव ने मेरे भोजन के लिये ही तुम्हें यहाँ भेजा है।' उस समय लक्ष्मण ने श्रीराम से उस राक्षस की दोनों भुजाओं को तलवार से काट डालने के लिये कहा। लक्ष्मण की बातें सुनकर राक्षस अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और अपना भयंकर मुख फैलाकर उनका भक्षण करने के लिये उद्यत हो गया। इतने ही में राम और लक्ष्मण ने अत्यन्त हर्ष में भर कर तलवारों से ही उसकी दोनों भुजायें कन्धों से काट दीं। भुजायें कट जाने पर वह महाबाहु राक्षस मेघ के समान गर्जना करके पृथ्वी, आकाश तथा दिशाओं को गुँजाता हुआ धरती पर गिर पड़ा। अपनी भुजाओं को कटी हुई देख खून से लथपथ उस दानव ने दीनवाणी में पूछा : 'वीरो ! तुम दोनों कौन हो ?' लक्ष्मण ने उसको तब श्रीराम का और अपना परिचय देते हुये उस राक्षस से पूछा : 'तुम कौन हो ? कबन्ध के समान रूप धारण करके क्यों इस वन में पड़े हो ?' लक्ष्मण के ऐसा कहने पर कबन्ध को इन्द्र की बात का स्मरण हो आया और उसने दोनों राजकुमारों का स्वागत करते हुये अपना परिचय देना आरम्भ किया। (३. ७०, १–१९)।" "अपनी आत्मकथा कहते हुये कबन्ध ने बताया कि किस प्रकार कबन्ध का रूप धारण करके ऋषियों को डराने के कारण उसे ऋषि स्थूलशिरा के शाप से वह रूप प्राप्त हुआ। उसने यह भी बताया कि पूर्वकाल में ब्रह्मा को सन्तुष्ट करके उसने दीर्घजीवी होने का वरदान प्राप्त करने के बाद इन्द्र पर आक्रमण कर दिया। उस समय इन्द्र के वज्र के प्रहार से ही उसकी जाघें और मस्तक उसके शरीर में घुस गये। देवराज ने ही उसे यह वरदान दिया कि राम के हाथ मृत्यु प्राप्त कर लेने पर उसे मुक्ति मिल जायगी और राम ही उसका दाह-संस्कार करेंगे। कबन्ध की कथा सुनकर राम ने उससे रावण के पञ्जे से सीता को मुक्त कराने का उपाय पूछा। कबन्ध ने बताया कि जब तक उसका विधिवत् दाह-संस्कार नहीं हो जाता, वह श्रीराम की कोई सहायता नहीं कर सकता (३. ७१, १–३४)।" "राम और लक्ष्मण द्वारा विधिवत् दाह-संस्कार कर

दिये जाने पर, वह महावली कवन्ध दो निर्मल वस्त्र और दिव्य पुष्पों का हार धारण किये हुये वेगपूर्वक चिता से ऊपर उठा और एक तेजस्वी विमान पर जा बैठा। हंसों से सन्नद्ध उस विमान पर बैठे हुये कवन्ध ने अन्तरिक्ष में स्थित हो राम से कहा : 'लोक में ऐसी छः युक्तियाँ हैं जिनसे राजा सब कुछ प्राप्त कर सकते हैं। आप सुग्रीव को अपना मित्र बनाईए जो अपने भ्राता वालिन् के क्रोध के कारण निर्वासित होकर ऋष्यमूक पर्वत पर चार अन्य वानरों के साथ निवास कर रहे हैं। केवल सुग्रीव ही आपको राक्षसों के पंजे से सीता को मुक्त कराने में सहायता कर सकते हैं।' (३. ७२, १–२७)।"

"तदनन्तर कवन्ध ने पम्पा सरोवर के तट पर स्थित ऋष्यमूक पर्वत तथा उसकी उस गुफा तक जानेवाले गुफा-मार्ग का विस्तृत वर्णन किया जहाँ सुग्रीव निवास कर रहे थे। एक वार पुनः सुग्रीव के साथ मित्रता का परामर्श देने के पश्चात् उसने राम और लक्ष्मण से विदा ली (३. ७३, १–४६)।"

"लक्षण ने श्रीराम को सुग्रीव से मित्रता करने के कबन्ध के अन्तिम संदेश का स्मरण दिलाया (४. ४, १५–१६)।"

कम्पन, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसको रावण ने कुम्भ और निकुम्भ के साथ युद्धभूमि में जाने के लिये कहा था (६. ७५, ४६)। इसका अंगद ने वध किया (६. ७६, १–३)।

करवीराक्ष, खर के एक सेनापति का नाम है जो राम से युद्ध करने के लिये गया (३. २३, २३)। इस महावीर बलाध्यक्ष ने खर के आदेश पर अपनी सेना सहित राम पर आक्रमण किया (३. २६. २६–२८)।

कराल, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, २६)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी थी (५. ५४, १४)।

करूष, को इसलिये इस नाम से पुकारा जाता है क्योंकि वृत्र का वध कर देने के पश्चात् इसने इन्द्र के कारूष (भूख) को ग्रहण कर लिया था। पूर्व समय में यह एक सम्पन्न नगर था परन्तु ताटका तथा उसके पुत्र मारीच ने इसे नष्ट कर दिया। किसी को इससे होकर जाने का साहस नहीं होता था (१. २४, १७–३२)।

कर्दम, प्रजापतियों में से प्रथम का नाम है (३. १४, ७)। ये राजा इल के पिता थे (७. ८७, ३)। जब इल को पुरुषत्व प्राप्त कराने के लिये महर्षि बुध अपने मित्रों से परामर्श कर रहे थे तब ये भी बुध के आश्रम पर उपस्थित हुये (७. ९०, ८)। इन्होंने यह प्रस्ताव किया कि इल के लिये अश्वमेधयज्ञ करके भगवान् शंकर को प्रसन्न किया जाय (७. ९०, ११–१२)।

कला, विभीषण की ज्येष्ठ-पुत्री का नाम है जिसने अपनी माता की

आज्ञा से सीता को यह सूचना दी कि उसके पिता विभीषण के सीता को श्रीराम को लौटा देने के प्रस्ताव को रावण ने ठुकरा दिया है (७. ३७, ९–११)।

१. कलिङ्ग, विस्तृत सालवन के निकट स्थित एक नगर का नाम है जहाँ केकय से लौटते समय भरत पधारे थे (२. ७१, १६)।

२. कलिङ्ग—सुग्रीव ने इस देश में सीता को खोजने के लिये अंगद से कहा था (४. ४१, ११):

कल्माषपाद, रघु के तेजस्वी पुत्र का नाम है जो एक शाप के परिणाम स्वरूप राक्षस हो गये थे; ये शङ्खण के पिता थे (१. ७०, ३९–४०)।

कवच-गण, दैत्यों के एक वर्ग का नाम है जो मणिमयीपुरी में निवास करते थे। जब रावण ने इनके नगर पर आक्रमण किया तो ये लोग एक वर्ष तक उसके साथ युद्ध करते रहे और अन्त में ब्रह्मा की मध्यस्थता से उसके साथ संधि की (७. २३, ६–१४)।

कवष, पश्चिम दिशा के एक महर्षि का नाम है जो राम के अयोध्या लौटने पर उनका अभिनन्दन करने के लिये पधारे थे (७. १, ४)।

१. कश्यप (काश्यप भी **),** दशरथ के एक ऋत्विज का नाम है (१. ७, ५)। दशरथ के आमन्त्रित करने पर ये अश्वमेध-यज्ञ कराने के लिये अयोध्या आये (१. ८, ६)। मिथिला जाते समय इनका वाहन दशरथ के आगे-आगे चल रहा था (१. ६९, ४–५)। दशरथ की मृत्यु के पश्चात् दूसरे दिन प्रातःकाल इन्होंने सभा में उपस्थित होकर वसिष्ठ को तत्काल नये राजा की नियुक्ति कर देने का परामर्श दिया (२. ६७, ३–८)। राम के अभिषेक में इन्होंने वसिष्ठ की सहायता की (६. १२८, ६१)। राम के बुलाने पर अन्य ब्राह्मणों के साथ इन्होंने भी राजसभा में प्रवेश किया जहाँ राम ने अभिवादन के पश्चात् इन्हें उत्तम आसन पर बैठाया (७. ७४, ४–५)। अश्वमेध यज्ञ आरम्भ करने के पूर्व राम ने इनसे परामर्श लिया (७. ९१, २)। राम की सभा में सीता के शपथ-ग्रहण संस्कार के समय ये भी साक्षी थे (७. ९६, २)।

२. कश्यप का इन्द्र ने स्वर्गलोक में सार्वजनिक स्वागत किया (१. ११, २८)। इन्होंने एक सहस्र वर्ष तक तपस्या करके विष्णु को प्रसन्न किया (१. २९, १०–११)। इन्होंने देवों के कष्ट का निवारण करने के लिये अपनी पत्नी अदिति के गर्भ से विष्णु को पुत्र रूप में प्राप्त करने का वरदान माँगा (१. २९, १५–१७)। ये मरीचि के पुत्र थे (१. २९, १५)। इन्होंने दिति को यह वरदान दिया कि यदि वह एक सहस्र वर्ष तक पवित्र रहेगी तो

उसे ऐसा पुत्र प्राप्त होगा जो इन्द्र का वध कर सकेगा (१. ४६, ४–७)। मरीचि के पुत्र और विवस्वान के पिता (१. ७०, २०)। इन्होंने परशुराम से पृथिवी का दान प्राप्त किया था (१. ७५, ८. २५)। परशुराम ने बताया कि पूर्वकाल में जब उन्होंने कश्यप को पृथ्वी दान कर दी तब कश्यप ने उनसे अपने राज्य में न रहने के लिये कहा था (१. ७६, १३)। ये अन्तिम प्रजापति थे (३. १४, ९)। इन्होंने दक्ष की आठ कन्याओं से विवाह किया था (३. १४, ११–१२)। इन्होने अपनी पत्नियों को यह वरदान दिया कि वे इन्हीं के समान प्रसिद्ध पुत्र प्राप्त करेंगी (३. १४, १२–१३)। राम के अयोध्या लौटने पर उनका अभिनन्दन करने के लिये ये उत्तर दिशा से पधारे थे (७. १, ५)। ये देवों और दैत्यों के पूर्वज हैं (७. ११, १५)।

कहोल, एक धर्मात्मा ब्राह्मण का नाम है जिसे अष्टावक्र ने मुक्ति दिलाई थी (६. ११९, १६)।

काकुस्थ, विशाला नगरी के राजवंश में सोमदत्त के पुत्र का नाम है (१. ४७, १६)। इनके पुत्र का नाम सुमति था (१. ४७, १७)।

१. काञ्चन, एक पर्वत का नाम है, जहाँ वानर-यूथपति केसरी निवास करता था (६. २७, ३७)। इसका वर्णन (६. २७, ३४–३७)।

२. काञ्चन, शत्रुघ्न के पुरोहित का नाम है, जो आमन्त्रित होकर अपने प्रतिपालक की राजसभा में उपस्थित हुये थे (१०. १०८, ८)।

कात्यायन, दशरथ के एक ऋत्विज का नाम है (१. ७, ५)। अश्वमेध यज्ञ करने के लिये आमन्त्रित किये जाने पर ये भी अयोध्या पधारे थे (१. ८, ६)। मिथिला जाते समय इनका रथ दशरथ के आगे-आगे चल रहा था (१. ६९, ३–६)। दशरथ की मृत्यु के पश्चात् दूसरे दिन प्रातःकाल राजसभा में उपस्थित होकर इन्होंने भी तत्काल एक नये राजा की नियुक्ति के लिये वसिष्ठ को परामर्श दिया (२. ६७, ३–८)। श्रीराम के अभिषेक में इन्होंने वसिष्ठ की सहायता की (६. १२८, ६१)। राम के बुलाने पर ये उनकी राजसभा मे पधारे, जहाँ राम ने अभिवादन के पश्चात् इन्हें आसन पर बैठाया (७. ७४, ४–५)।

काम, कैलास के निकट स्थित एक पर्वत-माला का नाम है। यह वृक्षों से रहित तथा भूतों, देवताओं और राक्षसों के लिये अगम्य है। सुग्रीव ने शतवल से इस पर्वत की गुफाओं आदि में सीता की खोज करने के लिये कहा। (४. ४३ २८–२९)।

काम्पिल्य, एक नगर का नाम है जहाँ राजा ब्रह्मदत्त शासन करते थे (१. ३३, १९)।

काम्बोज, एक देश का नाम है जो अश्वों के लिये प्रसिद्ध था (१. ६, २२)। सुग्रीव ने शतबल से यहाँ भी सीता की खोज करने के लिये कहा (४. ४३, १२)।

काम्बोज-गण, विश्वामित्र के विरुद्ध युद्ध करने के लिये वसिष्ठ की गाय द्वारा उत्पन्न किये गये यवन सैनिकों के साथ इनका भी उल्लेख है (१. ५४, २१)। विश्वामित्र के प्रहार से ये लोग व्याकुल हो उठे (१. ५४, २३)। वसिष्ठ की गाय की हुंकार से इनकी उत्पत्ति हुई जो सूर्य के समान तेजस्वी थे (१. ५५, २)।

कारुपथ, एक रमणीय निरामय देश का नाम है (७. १०२, ५)।

कार्तवीर्य,—श्रीराम के मतानुसार लक्ष्मण, कार्तवीर्य से भी श्रेष्ठ थे क्योंकि वे (लक्ष्मण) एक समय में ५०० बाण चला सकते थे (६. ४९, २१)।

कार्तिकेय—"अग्नि से व्याप्त होने पर शिव का तेज श्वेत पर्वत के रूप में परिणत हो गया। साथ ही, वहाँ दिव्य सरकण्डों का वन भी प्रकट हुआ। उसी वन में अग्निजनित महातेजस्वी कार्तिकेय का प्रादुर्भाव हुआ। (१. ३६, १८–१९)।" गङ्गा द्वारा हिमवत् पर्वत पर स्थापित गर्भ से इनकी उत्पत्ति हुई (१. ३७, १८)। देवताओं ने इनके पोषण के लिये कृतिकाओं की नियुक्ति की (१. ३७, २४)। इसी कारण देवताओं ने इनका कार्तिकेय नाम रखते हुए इनकी महानता की भविष्यवाणी की (१. ३७, २६)। कृत्तिकाओं ने इन्हें स्नान कराया (१. ३७, २७)। गर्भस्राव काल में स्कन्दित होने के कारण अग्नितुल्य महाबाहु कार्तिकेय को देवताओं ने स्कन्द कहकर पुकारा (१. ३७, २८)। इन्होंने छः मुख प्रकट कर के छहों कृत्तिकाओं का एक साथ ही स्तनपान किया (१. ३७, २९)। एक दिन दूध पीकर इस सुकुमार शरीर वाले शक्तिशाली कुमार ने अपने पराक्रम से दैत्यों की सम्पूर्ण सेना पर विजय प्राप्त कर ली (१. ३७, ३०)। देवों ने मिल कर इन महातेजस्वी स्कन्द का देव-सेनापति के पद पर अभिषेक किया (१. ३७, ३१)। जो व्यक्ति इस पृथिवी पर कार्तिकेय में भक्तिभाव रखता है वह इस लोक में दीर्घायु प्राप्त करता है, और पुत्र-पौत्रों से सम्पन्न होकर मृत्यु के पश्चात् स्कन्द के लोक में जाता है (१. ३७, ३३)। श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया था (२. २५, ११)। अगस्त्य के आश्रम में श्रीराम इनके मन्दिर में भी पधारे थे (३. १२, २०)। सरकण्डों के वन में रोते हुए शिशु का उल्लेख (७. ३५, २२)। राजा इल इनके जन्मस्थान पर पधारे थे (७. ८७, १०)।

१. काल, उत्तर में सोमाश्रम की एक पर्वतमाला का नाम है जिसके शिखर अत्यन्त ऊँचे थे। सुग्रीव ने शतबल को इस पर्वत तथा इसकी शाखाओं

की गुफाओं आदि में सीता को खोजने के लिये कहा (४. ४३, १४–१५)। 'शैलेन्द्रं हेमगर्भं महागिरिम्', (४. ४३, १६)।

२. काल ने तपस्वी के वेश में आकर लक्ष्मण से कहा कि वह श्रीराम से मिलना चाहता है (७. १०३, १–२)। 'तपसा भास्करप्रभः', (७. १०३, ५)। 'ज्वलन्तमिव तेजोभिः प्रदहन्तमिवांशुभिः', (७. १०३, ७)। लक्ष्मण द्वारा राम के पास ले जाये जाने पर इसने राम का अभिवादन किया (७. १०३, ७–८)। राम के कहने पर आसन ग्रहण किया (७. १०३, ९)। राम के पूछने पर बताया कि यतः उसका कार्य गुप्त है अतः वह केवल एकान्त में ही उनसे बात करेगा। इसने राम से यह भी घोषित करने के लिये कहा कि जो कोई दोनों को बात करते देख अथवा सुन ले वह राम के हाथों मारा जाय। (७. १०३, ११–१३)। इसने राम से कहा : 'पूर्वावस्था में, अर्थात् हिरण्यगर्भ की उत्पत्ति के समय मैं माया द्वारा आपसे उत्पन्न हुआ था, इसलिये आपका पुत्र हूँ। मुझे सर्वसंहारकारी काल कहते हैं।' तदनन्तर इसने राम को ब्रह्मा का यह संदेश सुनाया कि उनकी (राम की) जीवन-अवधि समाप्त हो गई है, अतः उन्हें अब स्वर्गलोक चले आना चाहिये (७. १०४, १–१५)। 'सर्वसंहारः', (७. १०४, १६)।

कालक, कश्यप तथा कालका के पुत्र का नाम है (३. १४, १६)।

कालका, दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी का नाम है (३. १४, १०–११)। अपने पति की अनुकम्पा से इसने नरक और कालक नामक दो पुत्रों को जन्म दिया (३. १४, १६)।

कालकार्मुक, खर के एक सेनापति का नाम है जो राम से युद्ध करने गया था (३. २३, ३२)। इस महावीर बलाध्यक्ष ने खर के आदेश पर अपनी सेना-सहित राम पर आक्रमण किया (३. २६, २७–२८)।

कालकेय-गण, दैत्यों के एक वर्ग का नाम है जो अश्म नगरी में निवास करते थे। रावण ने इन्हें पराजित और पराभूत किया था (७. २३, १७–१९)।

कालनेमि को पराजित करके विष्णु ने वध किया था (७. ६, ३४)।

कालमही, पर्वत और वनों से सुशोभित एक नदी का नाम है जहाँ सुग्रीव ने सीता को खोजने के लिये विनत को भेजा था (४. ४०, २२)।

कालिकामुख, एक राक्षस–प्रमुख का नाम है जो सुमालिन् और केतुमती का पुत्र था (७. ५, ३८–३९)।

१. कालिन्दी, असित की पत्नियों में से एक का नाम है। अपने पराजित पति के साथ यह भी हिमालय में चली गई थीं। असित की मृत्यु के समय यह तथा इसकी सहपत्नियाँ गर्भवती थीं। इनका गर्भपात करा देने के लिये

अन्य सहपत्नियों ने इन्हें विष दे दिया किन्तु महर्षि च्यवन की कृपा से इन्होंने सगर को जन्म दिया (१. ७०, २९-३६)।

२. कालिन्दी, एक नदी का नाम है जहाँ सीता को खोजने के लिये सुग्रीव ने विनत को भेजा था (४, ४०, २१)।

कालिय, एक हास्यकार का नाम है जो राम का मनोविनोद करने के लिये उनके साथ रहता था (४. ४३, २)।

कावेरी, दक्षिण दिशा की एक नदी का नाम है जहाँ सीता की खोज करने के लिये सुग्रीव ने अङ्गद से कहा था : 'ततस्तामापगां दिव्यां प्रसन्नसलिलाशयाम् । तत्र द्रक्ष्यथ कावेरीं विहृतामप्सरोगणैः ॥', (४. ४१, १४–१५)।

काशी—दशरथ ने अपने अश्वमेध यज्ञ में काशिराज को भी आमन्त्रित किया था (१. १३, २३)। कैकेयी के क्रोध को शान्त करने के लिये दशरथ ने इस देश में उत्पन्न होनेवाली वस्तुयें भी प्रस्तुत करने के लिये कहा (२. १०, ३७–३८)। सुग्रीव ने इस देश में सीता को खोजने के लिये विनत को भेजा था (४. ४०, २२)। 'तत्भवानद्य काशेय पुरों वाराणसीं व्रज। रमणीयां त्वया गुप्तां सुप्राकारां सुतोरणाम् ॥...राघवेण कृतानुज्ञः काशेयो ह्यकुतोभयः। वाराणसीं ययौ तूर्णं राघवेण विसर्जितः ॥', (७. ३८, १७–१९)।

काश्यप, एक हास्यकार का नाम है जो राम के मनोरंजन के लिये उनके साथ रहता था (७. ४३, २)।

किन्नर—"ब्रह्मा ने किन्नरियों से वानर-पुत्र उत्पन्न करने की देवों को आज्ञा दी (१. १७, ६)। देवताओं आदि के साथ ये भी राजा भगीरथ के रथ के पीछे गङ्गा जी के साथ-साथ चल रहे थे (१. ४३, ३२)। कुछ किन्नर वसिष्ठ के आश्रम में निवास करते थे। (१. ५१, २४) । राम और परशुराम के द्वन्द्व युद्ध को देखने के लिये एकत्र हुये थे (१, ७६, १०)। चित्रकूट पर्वत पर इनके आवास का उल्लेख (२. ९३, ११)। राम ने सीता को भ्रमण करते हुये किन्नरों के जोड़ों को दिखाया (२. ९४, ११)। किन्नरों के खड्ग वृक्षों की डालियों में लटक रहे थे (२. ९४, १२)। रावण ने उन कुञ्जों को देखा जो किन्नरों से सेवित थे (३. ३५, १४)। दण्डकारण्य में राम के आश्रम में किन्नरगण भी आते रहते थे (३. ४३, १२)। ये जनस्थान में रहते थे (३. ६७, ६)। राम ने पम्पा क्षेत्र में भी कुछ किन्नरों को भ्रमण करते देखा (४. १, ६१)। ये क्रीड़ा के लिये सुदर्शन सरोवर पर भी जाते थे (४. ४०, ४४)। मैनाक पर्वत पर किन्नर आदि भी, जो इच्छानुसार रूप धारण कर लेते थे, निवास करते थे (५. १, ६–९७)। ये अरिष्ट पर्वत पर निवास करते थे (५. ५६, ३६)। जब हनुमान् के भार से

मैनाक पर्वत धँस गया तो उस पर रहनेवाले किन्नर आदि पर्वत को छोड़कर आकाश में स्थित हो गये (५. ५६, ४८)। राम और मकराक्ष के द्वन्द्व को देखने के लिये अन्तरिक्ष में एकत्र हुये (६. ७९, २५)। जब रथ पर बैठे हुये रावण से राम पैदल ही युद्ध करने के लिये उद्यत हुये तब किन्नरों ने भी कहा कि ऐसी दशा में दोनों का युद्ध बराबर नहीं है (६. १०२, ५)। जब श्रीराम रावण के साथ युद्ध करने लगे तब इन लोगों ने गायों और ब्राह्मणों की सुरक्षा के लिये प्रार्थना की (६. १०७, ४८–४९)। ये मन्दाकिनी के तट पर भी आते रहते थे (७. ११, ४३)। कैलास पर्वत पर मधुर कण्ठवाले कामार्त किन्नर अपनी कामिनियों के साथ रागयुक्त गीत गाया करते थे (७. २६, ७)। ये लोग अपनी-अपनी स्त्रियों के साथ विन्ध्य पर्वत पर क्रीड़ा कर रहे थे (७. ३१, १६)। बुध ने इला की सखियों को किंपुरुषी (किन्नरी) बना दिया (७. ८८, २१–२४)।

किरात, वसिष्ठ की गाय के रोमकूपों से प्रकट हुये थे। अन्य के साथ इन लोगों ने भी विश्वामित्र की समस्त सेना का संहार कर डाला (१. ५५, ३–४)।

किष्किन्धा, एक पर्वतीय गुफा का नाम है जहाँ सुग्रीव का वालिन् के साथ द्वन्द्व हुआ था (१. १, ६९)। एक नगर का नाम है जिसके मुखद्वार के पास मायाविन् ने वालिन् को ललकारा था (४. ९, ५)। वालिन् को मृत जानकर सुग्रीव यहाँ लौट आये (४. ९, १९)। 'किष्किन्धामतुलप्रभाम्', (४. ११, २१)। वालिन् का नगर (४. ११, २४)। महाबली दुन्दुभि किष्किन्धा पुरी के द्वार पर आकर भूमि को प्रकम्पित करता हुआ जोर-जोर से गर्जन करने लगा, मानो दुन्दुभि का गम्भीर नाद हो रहा हो (४. ११, २६)। राम इत्यादि को साथ लेकर सुग्रीव किष्किन्धा की ओर बढ़े (४. १२, १३–१४)। श्रीराम के वचन से आश्वस्त होकर सुग्रीव राम के साथ पुनः किष्किन्धापुरी में जा पहुँचे (४. १२, ४२)। 'किष्किन्धा...वालिविक्रमपालिताम्', (४. १३, १)। 'दुराधर्षां किष्किन्धां वालिपालिताम्', (४. १३, २९)। 'सुरेशात्मजवीर्यपालिता', (४. १३, ३०)। 'दृष्ट्वा रामं क्रियादक्षं सुग्रीवो वाक्यमब्रवीत् । हरिवागुरया व्याप्तां तप्तकाञ्चनतोरणाम् ॥ प्राप्ताः स्म ध्वजयन्त्राढ्यां किष्किन्धां वालिनः पुरीम् । प्रतिज्ञा या कृता वीर त्वया वालिवधे पुरा ॥', (४. १४, ४–६)। यह नगरी दुर्गों से सुरक्षित थी (४. १९, १५)। 'पुरी रम्यां किष्किन्धां वालिपालिताम्', (४. २६, १८)।' 'हृष्टपुष्टजनाकीर्णा पताकाध्वजशोभिता । बभूव नगरी रम्या किष्किन्धा गिरिगह्वरे ॥', (४. २६, ४१)। यह नगर प्रस्रवण गिरि के निकट स्थित था (४. २७, २६)।

'तामपश्याद् वलाकीर्णां हरिराजमहापुरीम् । दुर्गामिक्ष्वाकुशार्दूलः किष्किन्धां गिरिसंकटे ।।', (४. ३१, १६) । 'ततस्तैः कपिभिर्व्याप्तां द्रुमहस्तैर्महाबलैः । अपश्यल्लक्ष्मणः क्रुद्धः किष्किन्धां तां दुरासदाम् ।।', (४. ३१, २६) । इस नगर के चारों ओर प्राकार और खाईं बनी थी । (४. ३१, २७) । "लक्ष्मण ने द्वार के भीतर प्रवेश करके देखा कि किष्किन्धापुरी एक बहुत बड़ी रमणीय गुफा के रूप में बसी हुई थी । यह नाना प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण होने के कारण अत्यन्त शोभा-सम्पन्न थी । यहाँ के वन-उपवन पुष्पों से सुशोभित थे । हर्म्यों और प्रासादों से यह पुरी अत्यन्त सघन दिखाई पड़ती थी । यहाँ दिव्य माला और दिव्य वस्त्र धारण करनेवाले परम सुन्दर वानर, जो देवों और गन्धर्वों के पुत्र तथा इच्छानुसार रूप ग्रहण करनेवाले थे, निवास करते थे । चन्दन, अगर और कमलपुष्पों की सुगन्ध से समस्त पुरी व्याप्त थी । इसमें विन्ध्याचल तथा मेरु के समान ऊँचे-ऊँचे महल थे । इत्यादि । (४. ३३, ४–८) ।" यह पर्वत की गुफा में बसी थी, जिससे इसमें प्रवेश करना अत्यन्त कठिन था (६. २८, ३०) । लंका से लौटते समय राम का पुष्पक विमान इस नगर पर से होकर आया था (६. १२३, २४) । 'सान्त्वयित्वा ततपश्चाद्देवदूतमथादिशत् । गच्छ मद्वचनाद्दूत किष्किन्धां नाम वै शुभाम् ।। सा ह्यस्य गुणसम्पन्नामहती च पुरी शुभा । तत्र वानरयूथानि सुबहूनि वसन्ति च ।। वहुरत्नसमाकीर्णा वानरैः कामरूपिभिः पुण्या पुण्यवती दुर्गा चातुर्वर्ण्यपुरस्कृता ।। विश्वकर्मकृतादिव्या मन्नियोगच्च शोभना । तत्रर्क्षरजसं दृष्ट्वा सुपुत्रं वानरर्षभम् ।।', (७. ३७ क, ४६–४९) ।

कीर्तिरथ, प्रतीन्वक के पुत्र तथा देवमीढ के पिता, एक धर्मात्मा राजा का नाम है (१. ७१, ९–१०) ।

कीर्तिरात, महीध्रक के पुत्र तथा महारोमा के पिता का नाम है (१. ७१, ११) ।

१. कुक्षि, एक राजा का नाम है, जो इक्ष्वाकु के पुत्र तथा विकुक्षि के पिता थे (१. ७०, २२) ।

२. कुक्षि, पश्चिम दिशा के एक देश का नाम है, जो पुन्नाग, बकुल और उद्दालक आदि वृक्षों से परिपूर्ण था । सुग्रीव ने सुषेण आदि वानरों को सीता की खोज के लिये यहाँ भेजा था (४. ४२, ७) ।

१. कुञ्जर, "एक पर्वतमाला का नाम है जो वैद्युत पर्वत के समीप स्थित था । यह नेत्रों और मन को अत्यन्त प्रिय लगनेवाला था । कुञ्जर पर्वत पर विश्वकर्मा ने अगस्त्य के लिये एक दिव्यभवन का निर्माण किया । इसी पर्वत पर सर्पों की निवासभूता एक भोगवती नामक नगरी थी (४. ४१, ३४–३६) ।"

यहाँ पर सुग्रीव ने अङ्गद आदि वानरों को सीता की खोज के लिये भेजा (४. ४१, ३८)।

२. कुञ्जर, एक वानर-प्रमुख का नाम है जिसकी पुत्री अञ्जना हनुमान् की माता थी (४. ६६, १०)।

कुटिका, एक नदी का नाम है जिसको भरत ने केकय से लौटते समय पार किया था (२. ७१, १५)।

कुटिकोष्ठिका, एक नदी का नाम है जिसको भरत ने केकय देश से लौटते समय मार्ग में पार किया था (२. ७१, १०)।

कुमुद, एक वानर-प्रधान का नाम है। लक्ष्मण ने किष्किन्धा में इनके भवन को देखा (४. ३३, ११)। ये वानर-सेना के साथ रास्ता ठीक करते हुये आगे-आगे चल रहे थे (६. ४, ३०)। ये गोमती के तट पर स्थित नाना प्रकार के वृक्षों से युक्त संरोचन नामक पर्वत के चारों ओर पहले से ही विचरण और वहीं अपने वानर-राज्य का शासन करते थे (६. २६, २७–२८)। ये दस करोड़ वानरों के साथ लङ्का के पूर्व द्वार को घेर कर खड़े हो गये (६. ४२, २३)। श्रीराम और लक्ष्मण को मूर्च्छित देखकर इन्होंने शोक प्रगट किया (६. ४६, ३)। इन्होंने बड़ी सावधानी के साथ वानर-सेना का संरक्षण किया (६. ४७, २–४)। इन्होंने कुपित होकर राक्षस-सेना का भयङ्कर संहार किया (६. ५५, ३०–३१)। इन्होंने अतिकाय पर आक्रमण किया किन्तु उसकी वाणवर्षा से आहत होकर उसका सामना करने में असमर्थ हो गये (६. ७१, ३९–४३)। ये इन्द्रजित् द्वारा पराजित हुये (६. ७३, ५९)। श्रीराम ने इनका स्वागत और सम्मान किया (७. ३९, २०)।

कुम्भ, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके घर में हनुमान् ने आग लगायी थी (५. ५४, १५)। "इसका रूप मेघ के समान काला तथा इसका वक्षस्थल उभरा हुआ, चौड़ा और सुन्दर था। इसकी ध्वजा पर नागराज वासुकि का चिह्न बना था। यह अपनी धनुष को टंकारता और खींचता हुआ युद्ध के लिये रावण के साथ चला (६. ५९, २०)।" यह कुम्भकर्ण का पुत्र था जिसे रावण ने युद्ध के लिये भेजा (६. ७५, ४५–४६)। इस तेजस्वी और वीर्यवान् श्रेष्ठ धनुर्धर ने वारी-वारी से द्विविद, मैन्द और अङ्गद से युद्ध करते हुये इन सबको आहत किया (६. ७६, ३६–५६)। अपने वाण समूहों द्वारा जाम्ववान् इत्यादि को रोक दिया (६. ७६, ६०–६२)। यह अपने पिता के ही समान वीर था (६. ७६, ७३)। 'धनुषीन्द्रजितस्तुल्य प्रतापे रावणस्य च। त्वमद्य रक्षसां लोके श्रेष्ठोऽसि बलवीर्यतः ॥', (६. ७६, ७८)। इसने सुग्रीव के साथ द्वन्द्व युद्ध किया जिसमें इसका धनुष टूट गया;

इसे समुद्र में फेंक दिया गया; और अन्ततः इसका वध हो गया (६. ७६, ६३–९३)।

कुम्भकर्ण, एक राक्षस का नाम है जिसकी मृत्यु का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन किया था (१. ३, ३६)। यह—प्रवृद्धनिद्रः, महावलाः—शूर्पणखा का भ्राता था (३. १७, २३)। हनुमान् इसके भवन में गये थे (५. ६, १८)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगायी (५. ५४, १४)। यह—महाबलः सर्वशस्त्रभृतांमुख्यः—एक बार में छः महीनों तक सोता रहता था (६. १२, ११)। सीता के प्रति रावण की आसक्ति को सुनकर पहले तो इसने रावण को सीताहरण के लिये वहुत फटकारा, किन्तु बाद में समस्त शत्रुओं के वध का स्वयं ही उत्तरदायित्व ले लिया जिससे रावण निर्विघ्न रूप से सीता के साथ आनन्द कर सके (६. १२, ७–४०)। "विभीषण ने कहा : 'रावणान्तरो भ्राता मम ज्येष्ठश्च वीर्यवान्। कुम्भकर्णो महातेजाः शक्रप्रतिवलो युधि ।।,' (६. १९, १०)। रावण ने कहा : 'स चाप्रतिमगाम्भीर्यो देवदानवदर्पहा । ब्रह्मशापाभिभूतस्तु कुम्भकर्णो विवोध्यताम् ।। निद्रावशसमाविष्टः कुम्भकर्णो विवोध्यताम् ।। सुखं स्वपिति निश्चिन्तः कामोपहतचेतनः । नवसप्तदशाष्टौ च मासान्स्वपितिराक्षसः ।। मन्त्रं कृत्वा प्रसुप्तोऽयमितस्तु नवमेऽहनि । तं तु बोधयत क्षिप्रं कुम्भकर्णं महावलम् ।।', (६. ६०, १३. १५–१७)। 'ग्राम्यसुखेरतः', (६. ६०, १९)। 'कुम्भकर्णे विबोधिते', (६. ६०, २०)। 'कुम्भकर्णगुहां रम्यां पुष्पगन्धप्रवाहिनीम्', (६. ६०, २४)। 'कुम्भकर्णस्य निःश्वासादवधूता महावलाः', (६. ६०, २५)। 'ते तु तं विकृतं सुप्तं विकीर्णमिव पर्वतम् । कुम्भकर्णं महानिद्रं समेताः प्रत्यबोधयन् ।।', (६. ६०, २७)। 'भीमनासापुटं तं तु पातालविपुलाननम् । शयने न्यस्तसर्वाङ्गं मेदोरुधिरगन्धिनम् ।।', (६. ६०, २९)। "रावण द्वारा कुम्भकर्ण को जगाने के लिये भेजे गये राक्षसों ने देखा कि भुजाओं में वाजूबन्द और मस्तक पर तेजस्वी किरीट धारण किये हुये कुम्भकर्ण सूर्य के समान प्रकाशित हो रहा है। उन राक्षसों ने कुम्भकर्ण के सामने अनेक प्राणी, पशु, रक्त से भरे कुम्भ तथा मांस आदि रख दिये। तदनन्तर राक्षसों ने उसके अङ्गों पर चन्दन का लेप किया और फिर अनेक प्रकार की ध्वनि करने लगे। इस पर भी जब वह नहीं उठा तब राक्षसों ने उसके विभिन्न अंगों को खूब हिलाया और पर्वतशिखरों, मुसलों, गदाओं, मुग्दरों, इत्यादि से प्रहार किया। इस प्रकार विविध विधियों से अन्ततः जगाये जाने पर कुम्भकर्ण ने इस असमय में ही जगा दिये जाने का कारण पूछा। यूपाक्ष से समाचार जानकर यह इतना विचलित हो उठा कि आक्रामकों को नष्ट कर देने के लिये सीधे युद्धभूमि में जाने के लिये उद्यत हो गया। फिर

भी, यह जानकर कि रावण इससे मिलना चाहता है, इसने स्नानादि करके भोजन और मदिरा-पान किया। तदनन्तर मुख्य राजमार्ग से होकर रावण के महल की ओर चला। (६. ६०; इस अध्याय में 'कुम्भकर्ण' इन श्लोकों में आया है : ३१. ३४. ३७. ४१. ५६. ७२. ७९. ८४. ८७. ८९. ९१. ९४. ९५)।" 'महाकायं कुम्भकर्णम्', (६. ६१, १)। 'पर्वताकारदर्शनम्', (६. ६१, २)। 'प्रकृत्या ह्येष तेजस्वी कुम्भकर्णो महाबलः', (६. ६१, ६२)। "कुम्भकर्ण का परिचय पूछने पर विभीषण ने राम को बताया : कुम्भकर्ण, विश्रवा का प्रतापी पुत्र है और इसने युद्ध में वैवस्वत यम तथा देवराज इन्द्र को भी पराजित किया था। इस महाकाय राक्षस ने जन्म लेते ही बाल्यावस्था में भूख से पीड़ित हो कई सहस्र प्रजाजनों का भक्षण कर लिया था। इससे भयभीत प्रजाजन इन्द्र की शरण में गये। इन्द्र ने क्रोध में आकर इसे अपने वज्र से आहत कर दिया जिस पर क्षुब्ध होकर इसने इन्द्र के ऐरावत के मुँह से एक दाँत उखाड़ कर उसी से देवेन्द्र की छाती पर प्रहार किया। इसके प्रहार से व्याकुल इन्द्र प्रजाजनों के साथ ब्रह्मा की शरण में गये। इन्द्रादि की बात सुनकर ब्रह्मा ने कुम्भकर्ण को यह शाप दिया कि वह सदा मृतक की भाँति सोता रहेगा। ब्रह्मा के इस शाप से अभिभूत होकर कुम्भकर्ण रावण के सामने ही गिर पड़ा। इससे व्याकुल होकर रावण ने ब्रह्मा से कुम्भकर्ण के सोने और जागने का समय नियत करने की प्रार्थना की। तब ब्रह्मा ने कहा कि यह छः मास तक सोता रहेगा और केवल एक दिन के लिये ही जागेगा। (६. ६१; इस अध्याय में 'कुम्भकर्ण' इन श्लोकों में आया है : ९. ११. १२. १५–१८. २२. २३. ३०. ३२)।" "निद्रा के मद से व्याकुल हो, परम दुर्जय कुम्भकर्ण राजमार्ग से होकर रावण के भवन की ओर जा रहा था। रावण के भवन में पहुँचने पर इसने अपने भ्राता, रावण, के चरणों में प्रणाम किया और अपने बुलाये जाने का कारण पूछा। आदर-सत्कार के पश्चात् रावण ने इसे राम तथा उनकी सेना के साथ युद्ध करने के लिये प्रेरित किया (६. ६२; इस अध्याय में 'कुम्भकर्ण' इन श्लोकों में आया है : ५. ७. ८. ९. १२)।" "कुम्भकर्ण ने रावण की उसके कुकृत्यों के लिये भर्त्सना करते हुये बताया कि विभीषण की भविष्याणी अब सत्य सिद्ध होने वाली है। रावण के आग्रह करने पर इसने शत्रु-सेना को नष्ट कर देने का आश्वासन दिया। (६. ६३)।" महोदर ने कुम्भकर्ण के प्रति आक्षेप करते हुये रावण को बिना युद्ध के ही अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति का उपाय बताया (६. ६४; इस अध्याय में 'कुम्भकर्ण' इन श्लोकों में आया है : १–३. १९)। "महोदर के उक्त वचन कहने पर कुम्भकर्ण ने उसे डाँटते हुए रावण से कहा : 'मैं आज ही

उस दुरात्मा राम का वध करके तुम्हारे घोर भय को दूर कर दूँगा।...यह देखो, अब मैं शत्रु को विजित करने के लिये उद्यत होकर समर-भूमि में जा रहा हूँ।' रावण के आग्रह करने पर कुम्भकर्ण ने अपना तीक्ष्ण शूल हाथ में लेते हुये कहा : 'मैं अकेला ही युद्ध के लिये जाऊँगा।' रावण की सहायता से कुम्भकर्ण ने अपने आभूषणों तथा कवच आदि को धारण किया, और फिर भाई से बिदा लेकर युद्ध-भूमि की ओर चला। उस समय हाथी, घोड़े, और मेघों की गर्जना के समान घरघराहट उत्पन्न करनेवाले रथों पर सवार होकर अनेकानेक महामनस्वी रथी वीर भी रथियों में श्रेष्ठ कुम्भकर्ण के साथ चले। कुम्भकर्ण उस समय छः सौ धनुषों के बराबर विस्तृत और सौ धनुषों के बराबर ऊँचा हो गया। उसकी आँखें दो गाड़ी के पहियों के समान प्रतीत होती थीं और वह स्वयं एक विशाल पर्वत के समान भयंकर दिखायी पड़ता था। कुम्भकर्ण के रणभूमि की ओर अग्रसर होते ही चारों ओर घोर अपशकुन होने लगे, किन्तु उनकी कुछ भी परवाह न करके काल की शक्ति से प्रेरित वह युद्ध के लिये निकल पड़ा। कुम्भकर्ण पर्वत के समान ऊँचा था। उसने लंका की चहार-दीवारी को दोनों पैरों से लाँघकर वानरसेना को देखा। उस पर्वताकार श्रेष्ठ राक्षस को देखते ही समस्त वानर भयभीत होकर भागने लगे। उस समय कुम्भकर्ण भीषण गर्जना करने लगा जिसे सुनकर भयभीत वानर कटे हूये साल-वृक्षों के समान पृथिवी पर गिर पड़े। (६ ६५; इस अध्याय में 'कुम्भकर्ण' इन श्लोकों में आया है : १. ११. १६. २१. २२. २५. ३६. ४१. ४३. ४७. ४८. ५३. ५६. ५८)।" "लंका के परकोटे को लाँघकर कुम्भकर्ण नगर से बाहर निकला और उच्च स्वर में गम्भीर नाद करने लगा। भयभीत वानरों को अंगद ने पुनः प्रोत्साहित किया जिससे वे सब लौटकर कुम्भकर्ण पर शिलाओं, वृक्षों, आदि से प्रहार करने लगे; किन्तु कुम्भकर्ण उनसे लेशमात्र भी विचलित नहीं हुआ। कुम्भकर्ण ने भी वानर-सेना का संहार करना आरम्भ किया जिससे वे सब व्याकुल होकर इधर-उधर भाग खड़े हुये। (६. ६६; इस अध्याय में 'कुम्भकर्ण' इन श्लोकों में आया है : १. २८)। "अङ्गद के प्रोत्साहित करने पर वानर-सेना ने पुनः सन्नद्ध होकर कुम्भकर्ण पर आक्रमण किया। परन्तु अत्यन्त क्रोध से भरा हुआ विक्रमशाली, महाकाय, कुम्भकर्ण अपनी गदा से वानरों का संहार करने लगा। वह एक-एक बार में अनेक वानरों का भक्षण कर जाता था। हनुमान् ने इस पर जिन वृक्षों और शिलाओं से प्रहार किया उनके भी इसने अपने शूल से टुकड़े-टुकड़े कर दिये। एक पर्वत-शिखर से हनुमान् ने जब इस पर प्रहार किया तो इसने हनुमान् को भी आहत कर दिया। नील आदि ने इस पर जिन विशाल शिलाओं से प्रहार

किया उन्हें भी इसने छिन्न-भिन्न कर दिया। इसने आक्रमण करनेवाले पाँच वानर यूथपतियों को आहत या उनका संहार कर डाला। इन प्रमुख वानरों के धराशायी हो जाने पर अनेक अन्य वानर इसे दाँतों से काटने, और नखों, मुक्कों, और हाथों से मारने लगे। फिर भी, कुम्भकर्ण वानर-सेना का संहार करता रहा जिससे त्रस्त और व्याकुल होकर वानर श्रीराम की शरण में गये। कुम्भकर्ण ने तब अङ्गद से द्वन्द्व युद्ध करते हुये उन्हें मूर्च्छित कर दिया। अङ्गद के मूर्च्छित होते ही यह शूल लेकर सुग्रीव की ओर बढ़ा। युद्ध में इसके शूल को हनुमान् ने तोड़ दिया। फिर भी, इसने एक विशाल शैलशिखर के प्रहार से सुग्रीव को आहत करके बन्दी बना लिया और लंका लाया। जब यह लंका के राजमार्ग पर चल रहा था तो लावा और गन्धयुक्त जल की वर्षा द्वारा अभिषिक्त पथ की शीतलता से सुग्रीव को धीरे-धीरे होश आ गया। उस समय सुग्रीव ने अपने तीक्ष्ण नखों द्वारा इन्द्र-शत्रु कुम्भकर्ण के दोनों कान नोच लिये, दाँतों से उसकी नाक काट ली, और पाँव के नखों से उसकी पसलियाँ विदीर्ण कर दीं। इस प्रकार आहत हो जाने से कुम्भकर्ण का सारा शरीर रक्त-रंजित हो गया और वह क्रोध में आकर सुग्रीव को भूमि पर पटक कर उन्हें घिसने लगा। किन्तु उसी समय सुग्रीव गेंद के समान उछल कर श्रीराम के पास चले आये। ऐसी दशा में क्रुद्ध होकर कुम्भकर्ण ने, जो रक्त से नहाकर और भयानक दिखाई पड़ रहा था, अपनी गदा लेकर पुनः युद्ध-भूमि में जाने का निश्चय किया। तदनन्तर वह सहसा लंकापुरी से बाहर निकल कर प्रज्ज्वलित अग्नि के समान उस भयंकर वानर-सेना को अपना आहार बनाने लगा। उसने मोहवश वानरों और रीछों के साथ-साथ राक्षसों तथा पिशाचों का भी भक्षण आरम्भ किया। वह लक्ष्मण के द्वारा छोड़े गये बाणों की कोई परवाह न करता हुआ लक्ष्मण से अपने शौर्य और पराक्रम की प्रशस्ति करते हुये राम के साथ युद्ध करने की इच्छा प्रकट करने लगा। उसकी बात सुनकर लक्ष्मण ने उसे श्रीराम को दिखा दिया। राम को देखते ही वह लक्ष्मण को छोड़कर उनकी ओर दौड़ पड़ा। राम ने उस पर रौद्रास्त्र का प्रयोग किया जिससे आहत होकर उसके मुख से अङ्गार-मिश्रित अग्नि की लपटें निकलने लगीं। क्रोध में आकर वह वानरों और राक्षसों का भक्षण करने लगा। लक्ष्मण की आज्ञा से जो वानर उसके शरीर पर चढ़ गये थे उन्हें भी झकझोर कर गिरा दिया। तदनन्तर उसने राम के साथ भीषण द्वन्द्व-युद्ध किया जिसमें अन्ततः राम के हाथों उसकी मृत्यु हुई। (६. ६७; इस अध्याय में 'कुम्भकर्ण' इन श्लोकों में आया है : ४–६. १५. १६. १८. २१. २२. २६. २८. ३१. ३३. ३७. ३९. ४०. ४२. ४३. ४५–४७. ५२–५८. ६०. ६३. ६९.

७०. ७३. ७६. ७८. ८३. ८८. ९०. ९४. ९५. ९९. १०३. ११८. १२८. १३३. १३५. १३८. १४८. १४९. १५३. १५४. १६०. १६२. १७१. १७४. १७७. १७९)।" यह विश्रवा और कैकसी का द्वितीय पुत्र था (७.९, ३४)। "कुम्भकर्ण और उसके ज्येष्ठ भ्राता, दशग्रीव, दोनों ही लोकों में उद्वेग उत्पन्न करनेवाले थे। कुम्भकर्ण तो भोजन से कभी भी तृप्त नहीं होता था, इसलिये तीनों लोकों में घूम-घूम कर धर्मात्मा महर्षियों का भक्षण करता-फिरता था (७. ९, ३७–३८)।" इसने १०,००० वर्षों तक अपनी इन्द्रियों को संयम में रखते हुये भीषण तपस्या की (७. १०, ३–५)। ब्रह्मा द्वारा वरदान माँगने का आग्रह करने पर इसने कहा : 'मैं अनेकानेक वर्षों तक सोता रहूँ, यही मेरी इच्छा है।' (७. १०, ३६. ३७. ४४. ४५)। इसने ब्रह्मा सहित देवताओं के चले जाने पर पश्चात्ताप किया (७. १०, ४६–४८)। इसने वज्रज्वाला से विवाह किया (७. १२, २३–२४)। "तदनन्तर कुछ काल के पश्चात् ब्रह्मा के द्वारा भेजी हुई निद्रा कुम्भकर्ण के भीतर प्रकट हुई। उस समय इसने अपने भ्राता रावण से शयन के लिये एक पृथक् भवन बनवाने का निवेदन किया। रावण द्वारा भवन बनवा दिये जाने पर यह उसमें सहस्रों वर्षों तक सोता रहा (७. १३, १–७)।" इन्द्र के विरुद्ध जब रावण ने युद्ध किया तो कुम्भकर्ण ने रावण का साथ देते हुये रुद्रों के साथ युद्ध किया (७. २८, ३४–३६)।

कुम्भहनु, प्रहस्त के एक सचिव का नाम है जो प्रहस्त के साथ युद्ध-भूमि में आया (६. ५७, ३१)। इसने निर्दयतापूर्वक वानरों का संहार किया (६. ५८, १९)। अङ्गद ने इसका वध किया (६. ५८, २३)।

कुम्भीनसी, रावण की बहन का नाम है (६. ७, ८)। यह सुमालिन् और केतुमती की पुत्री थी (७. ५, ३८–४०)। मधु ने इसका अपहरण कर लिया था (७. २५, १९)। जब रावण ने इसके पति, मधु, पर आक्रमण किया तब इसने रावण से अपने पति को क्षमा कर देने का निवेदन किया और मधु तथा रावण में मित्रता भी करा दी (७. २५, ३९–४८)।

कुरु, उत्तर दिशा में स्थित एक देश का नाम है जहाँ सीता को खोजने के लिये सुग्रीव ने शतबल को भेजा था (४. ४३, ११)।

उत्तर कुरु--उत्तर कुरु वर्ष में कुबेर का चैत्ररथ नामक दिव्य वन है जिसमें दिव्य वस्त्र और आभूषण ही वृक्षों के पत्ते हैं और दिव्य नारियाँ ही फल (२. ९१, १९)। इस वर्ष की नदियाँ और वन भरद्वाज मुनि के आश्रम में पहुँच गये (२. ९१, ८१)। यहाँ के वृक्ष मधु की धारा बहानेवाले हैं तथा उनमें सभी ऋतुओं में सदा फल लगे रहते हैं (३. ७३, ६)। "इस

प्रदेश में हरे-हरे कमल के पत्तों से सुशोभित नदियाँ वहती हैं। यहाँ के जलाशय लाल और सुनहरे कमल-समूहों से मण्डित होकर प्रातःकालीन सूर्य के समान सुशोभित होते हैं। बहुमूल्य मणियों के समान पत्तों और सुवर्ण के समान कान्तिमान् केसरोंवाले नील-कमल सर्वत्र मिलते हैं। नदियों के तट गोल-गोल मोतियों, बहुमूल्य मणियों और सुवर्ण से सम्पन्न हैं। यहाँ के वृक्षों में सदा ही फलफूल लगे रहते हैं। यहाँ सूर्य के समान कान्तिमान् गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध, नाग और विद्याधर सदा क्रीड़ा-विहार करते हैं। यहाँ कोई भी अप्रसन्न नहीं रहता। यहाँ रहने से प्रतिदिन मनोरम गुणों की वृद्धि होती है (४. ४३, ३८–५२)।" सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये कुछ वानर-यूथपतियों को यहाँ भी भेजा था (४. ४३, ५८)।

कुरुजाङ्गल, वसिष्ठ द्वारा केकय भेजे गये दूत इस भूभाग से होकर गये थे (२. ६८, १३)।

कुल, एक हास्यकार का नाम है जो राम का मनोरंजन करने के लिये उनके साथ रहता था (७. ४३, २)।

१. कुलिङ्ग, एक नगर का नाम है जो शरदण्ड और इक्षुमती के बीच स्थित था (२. ६८, १६)।

२. कुलिङ्ग, पर्वतों के बीच तीव्र गति से बहनेवाली एक मनोरम नदी का नाम है जिसे केकय से लौटते समय भरत ने पार किया था (२. ७१, ६)।

कुवेर—इन्होंने ब्रह्मा की इच्छा के अनुसार गन्धमादन को उत्पन्न किया (१. १७, १२)। यह विश्रवा के पुत्र और रावण के भ्राता थे (१. २०, १८)। राम के वनवास के समय कौसल्या ने राम की रक्षा करने के लिये इनका भी आवाहन किया था (२. २५, २३)। भरद्वाज मुनि ने भरत की सेना का सत्कार करने के लिये उत्तरकुरु में स्थित इनके वन का आवाहन किया था (२. ९१, १९)। भरद्वाज के आवाहन के फलस्वरूप इन्होंने २०,००० दिव्य महिलाओं को भेजा था (२. ९१, ४४)। इन्होंने तुम्वुरु नामक गन्धर्व को, रम्भा के साथ उसकी अत्यधिक आसक्ति के कारण, शाप द्वारा विराध रूपी राक्षस वना दिया था। जब इनका क्रोध शान्त हुआ तो इन्होंने कहा कि राम के द्वारा मृत्यु प्राप्त कर लेने पर तुम्बुरु पुनः अपने रूप में आ जायगा (३. ४, १६–१९)। अगस्त्याश्रम में राम ने इनके मन्दिर का भी दर्शन किया था (३. १२, १८)। रावण ने इन्हें पराजित करके इनका पुष्पक विमान छीन लिया था (३. ३२, १४–१५)। ये रावण के भ्राता थे (३. ३५, ७; ४८, २)। रावण द्वारा पराजित होने पर ये कैलास पर्वत पर चले गये (३. ४८, ४–५)। कैलास पर विश्वकर्मा ने इनके सुन्दर भवन का

निर्माण किया (४. ४३, २१)। ये अपने भवन के निकट ही स्थित सरोवर के तट पर गुह्यकों के साथ विहार करते थे (४. ४३, २२–२३)। 'भूतेशो द्रविणाधिपतिर्यथा', (६. ४, २०)। 'धनदः', (६. ७, ४)। महादेव जी के साथ अपनी मित्रता के कारण ये—लोकपालः महावलः—अत्यन्त गर्व करते थे (६. ७, ५)। राम के सम्मुख उपस्थित होकर इन्होंने सीता के प्रति दुर्व्यवहार करने के कारण राम की भर्त्सना की (६. ११७, २–९)। "ये विश्रवा और भरद्वाज की देववर्णिनी पुत्री के पुत्र थे। इन्हें वीर्य-सम्पन्न, परम अद्भुत और समस्त व्राह्मणोचित गुणों से युक्त कहा गया है (७. ३, १–६)। महर्षि पुलस्त्य ने इन्हें वैश्रवण कहा (७. ३, ६–८)। वन में जाकर इन्होंने सहस्रों वर्षों तक तपस्या की (७. ३, ९–१२)। व्रह्मा द्वारा वर माँगने का आग्रह करने पर इन्होंने लोकपाल वनने का वर माँगा (७. ३, १३–१५)। 'धनेशः प्रयतात्मवान्', (७. ३, २२)। व्रह्मा द्वारा लोकपाल के पद पर प्रतिष्ठित हो जाने के पश्चात् इन्होंने अपने पिता से अपने रहने-योग्य सुन्दर स्थान वताने का निवेदन किया (७..३, २२–२३)। "अपने पिता के परामर्श पर इन्होंने लङ्का पर आधिपत्य स्थापित करके राक्षसों पर प्रसन्नतापूर्वक शासन आरम्भ किया। लङ्का से ये पुष्पक विमान पर वैठकर अपने माता-पिता के पास जाया करते थे (७. ३, २४–३५)।" 'धनदः वित्तपालः', (७. ११, २६)। 'सर्वशस्त्रभृतांवरः', (७. ११, २७)। 'वाक्यविदांवरः', (७. ११, ३०)। "प्रहस्त के लङ्का को लौटा देने का निवेदन करने पर इन्होंने कहा कि ये अपने भ्राता रावण को लङ्का लौटा देने के लिये सदैव प्रस्तुत हैं। तदनन्तर इन्होंने अपने पिता की आज्ञानुसार रावण को लङ्का दे दी और स्वयं कैलास पर्वत पर जाकर रहने लगे (७. ११, २५–५०)।" रावण के अत्याचारों का समाचार सुनकर इन्होंने उसे चेतावनी देने के लिये एक दूत भेजा (७. १३, ८–१२)। "जव ये हिमालय पर्वत पर तपस्या कर रहे थे तव उमा पर सहसा दृष्टि पड़ जाने के कारण इनकी वायीं आँख नष्ट हो गई। तदनन्तर अन्य स्थान पर जाकर इन्होंने ८०० वर्षों तक तपस्या की और महादेव के मित्र वन गये। उसी समय से इनका 'एकाक्षपिङ्गली' नाम पड़ गया (७. १३, २१–३१)।" यक्षों के पराजित हो जाने पर इन्होंने रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये अन्य महावली यक्षों को भेजा (७. १४, २०)। यक्षों के पराजित हो जाने पर इन्होंने मणिभद्र को युद्ध के लिये भेजा (७. १५, १–२)। "मणिभद्र के पराजित हो जाने पर गदा हाथ में लेकर इन्होंने स्वयं रावण को फटकारते हुये उसका सामना किया और उस समय तक युद्ध करते रहे जव तक रावण की माया से अभिभूत होकर बुरी तरह आहत नहीं हो गये। इन्हें उपचार के

लिये नन्दनवन में ले जाया गया (७. १५, १६–३४)।" ये राजा मरुत्त के यज्ञसत्र में उपस्थित तो हुये परन्तु रावण के भय से इन्होंने कृकलास का रूप धारण कर रक्खा था (७. १८, ४–५)। रावण के चले जाने पर इन्होंने अपने रूप में प्रकट होकर 'कृकलासों को वरदान दिया (७. १८, ३४)। ब्रह्मा के आग्रह पर इन्होंने हनुमान् को अपनी गदा से अवध्य होने का वरदान दिया (७. ३६, ८–१७)।

कुश—"पूर्वकाल में कुश नामक एक महातपस्वी राजा हो चुके थे जो ब्रह्मा के पुत्र थे। उनका प्रत्येक व्रत एवं संकल्प निर्विघ्न रूप से पूर्ण होता था। वे धर्म के ज्ञाता और सत्पुरुषों का आदर करनेवाले महान् पुरुष थे। उन्होंने उत्तम कुल में उत्पन्न अपनी पत्नी वैदर्भी से चार पुत्र उत्पन्न किये जिनके नाम क्रमशः कुशाम्ब, कुशनाभ, असूर्तरजस् और वसु थे। इन्होंने अपने पुत्रों से प्रजापालन करने के लिये कहा (१. ३२, १–४)।" कुशनाभ के पुत्रेष्टि यज्ञ में उपस्थित होकर इन्होंने उसे एक पुत्र प्राप्त होने की भविष्यवाणी की (१. ३४, २–३)। तदनन्तर ये आकाश में प्रविष्ट होकर सनातन ब्रह्मलोक चले गये (१. ३४, ४)। इन्हें प्रजापति का पुत्र कहा गया है (१. ५१, १८)।

१. कुशध्वज, जनक के कनिष्ठ भ्राता का नाम है जो महातेजस्वी, वीर्यवान् और अति धार्मिक थे (१. ७०, २)। "ये इक्षुमती के तट पर स्थित सांकाश्या नगरी में निवास करते थे। इन्हें जनक ने आमन्त्रित किया था (१. ७०, ३–६)।" मिथिला आने पर इन्होंने जनक तथा शतानन्द को प्रणाम करने के पश्चात् आसन ग्रहण किया (१. ७०, ७–१०)। "ये ह्रस्वरोमा के कनिष्ठ पुत्र थे। पिता के सन्यास ले लेने पर ये जनक के संरक्षण में रहने लगे (१. ७१, १४)।" 'भ्रातरं देवसंकाशं स्नेहात्पश्यन्कुशध्वजम्', (१. ७१, १५)। सांकाश्य के सुधन्वन् की पराजय और मृत्यु हो जाने पर जनक ने इन्हें वहाँ के राज्य-सिंहासन पर बैठाया (१. ७१, १६)।

२. कुशध्वज, वेदवती ने बताया कि अमित तेजस्वी, ब्रह्मर्षि, बृहस्पति-पुत्र कुशध्वज उसके पिता हैं। उसने यह भी बताया कि उसके वयस्क होनेपर कुशध्वज विष्णु को अपना दामाद बनाना चाहते थे, परन्तु उनके इस अभिप्राय को जानकर दैत्यराज शम्भु ने रात में सोते समय उनकी (कुशध्वज की) हत्या कर दी (७. १७, ८–१४)।

कुशनाभ, कुश और वैदर्भी के पुत्र का नाम है (१. ३२, २)। अपने पिता की इच्छा के अनुसार इन्होंने क्षत्रियों के कर्त्तव्य का पालन आरम्भ किया (१. ३२, ४)। इन धर्मात्मा महापुरुष ने महोदय नामक नगर की स्थापना

की (१. ३२, ५)। इन राजर्षि ने अपनी पत्नी घृताची से सौ पुत्रियाँ उत्पन्न कीं (१. ३२, १०)। अपनी पुत्रियों को विकृताङ्ग देखकर उसका कारण जानना चाहा (१. ३२, २३–२६)। 'कुशनाभस्य धीमतः', (१. ३३, १)। "अपनी कन्याओं की कथा को सुनकर इन्होंने धैर्य एवं क्षमाशीलता का उपदेश करते हुये कन्याओं को अन्तःपुर में जाने की आज्ञा दे दी। तदनन्तर मन्त्रणा के तत्त्व को जाननेवाले इन नरेश ने मन्त्रियों के साथ बैठकर कन्याओं के विवाह के विषय में विचार आरम्भ किया (१. ३३, ५–१०)।" इन्होंने अपनी कन्याओं का ब्रह्मदत्त के साथ विवाह करने का निश्चय करके ब्रह्मदत्त को बुलाकर उन्हें कन्यायें सौंप दीं (१. ३३, २०–२१)। "विवाह काल में कन्याओं के हाथ का ब्रह्मदत्त के हाथ से स्पर्श होते ही उन सबका विकुब्जत्व समाप्त हो गया जिस पर कुशनाभ अत्यन्त प्रसन्न हुये। इन्होंने ब्रह्मदत्त तथा पुरोहितों के साथ कन्याओं को विदा किया। उस समय गन्धर्वी सोमदा ने अपने पुत्र को तथा उसके योग्य विवाह सम्बन्ध को देखकर अपनी पुत्र-वधुओं का यथोचित अभिनन्दन करते हुये महाराज कुशनाभ की सराहना की (१. ३३, २४–२६)।" अपनी कन्याओं को विवाहित करने के पश्चात् पुत्र-विहीन होने के कारण कुशनाभ ने पुत्रेष्टि यज्ञ का अनुष्ठान किया (१. ३४, १)। इस अवसर पर इनके पिता ने उपस्थित होकर इन्हें गाधि नामक एक पुत्र प्राप्त होने की भविष्यवाणी की (१. ३४, २–३)। इसके कुछ दिन पश्चात् इन्हें गाधि नामक पुत्र प्राप्त हुआ (१. ३४, ५)। 'कुशस्य पुत्रो बलवान्कुशनाभः सुधार्मिकः', (१. ५१, १८)। इनकी सौ कन्याओं के कुब्जा हो जाने का इस प्रकार वर्णन मिलता है : "कुशनाभ ने घृताची अप्सरा के गर्भ से सौ उत्तम कन्याओं को जन्म दिया जो सुन्दर रूप-लावण्य से सुशोभित थीं। एक दिन वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर ये कन्यायें उद्यान-भूमि में विचरण कर रह थीं। उस समय उत्तम गुणों से सम्पन्न तथा रूप और यौवन से सुशोभित उन सब राज-कन्याओं को देखकर वायु ने उनसे कहा : "मैं तुम सब को अपनी प्रेयसी के रूप में प्राप्त करना चाहता हूँ, अतः तुम सब मुझे अङ्गीकार करके अक्षय यौवन और अमरत्व प्राप्त करो।' वायु के इस कथन को सुनकर कन्याओं ने उनकी अवहेलना की जिसके परिणामस्वरूप कुपित होकर वायु ने उन सबके भीतर प्रवेश करके उनके अङ्गों को विकृत कर दिया। इस प्रकार कुब्जत्व प्राप्त करके वे कन्यायें अत्यन्त व्याकुल हो उठीं। अपनी पुत्रियों की दयनीय दशा देखकर कुशनाभ ने उसका कारण पूछा (१. ३२)।" "कुशनाभ के पूछने पर कन्याओं ने अपने कुब्जत्व का कारण बताया और अन्ततः ब्रह्मदत्त के साथ विवाहित होने पर अपना रूप पुनः प्राप्त करके वे पतिगृह चली गईं, जहाँ

ब्रह्मदत्त की माता सोमदा ने उनका हार्दिक स्वागत किया (१. ३३)।"

कुशप्लव, उस स्थान का नाम है जहाँ दिति ने एक सहस्र वर्ष तक तपस्या की थी। उस समय इन्द्र विनय आदि गुणों से युक्त होकर दिति की सेवा कर रहे थे (१. ४६, ८–९)। यह स्थान वैशाली के निकट स्थित था (१. ४७, १०–११)।

कुशाम्ब, कुश और वैदर्भी के पुत्र का नाम है (१. ३२, २)। इन्होंने अपने पिता की आज्ञा के अनुसार क्षत्रियों का कर्त्तव्य पालन करना प्रारम्भ किया (१. ३२, ४)। इन महातेजस्वी राजा ने कौशाम्बी नगर की स्थापना की (१. ३२, ५)।

कुशावती, कुश की राजधानी, एक रम्य नगरी का नाम है जिसे राम ने विन्ध्य पर्वत के नीचे निर्मित कराया था (७. १०८, ४)।

कुशाश्व, विशाला के राजवंश में सहदेव के पुत्र का नाम है (१. ४७, १५)। इनके पुत्र का नाम सोमदत्त था (१. ४७, १६)।

कुशी—स्मरण करने पर यह वाल्मीकि के सम्मुख उपस्थित हुए (१. ४, ४)। 'कुशीलवौ तु धर्मज्ञौ राजपुत्रौ यशस्विनौ। भ्रातरौ स्वरसंपन्नौ ददर्शाश्रमवासिनौ ॥', (१. ४, ५)। 'स तु मेधाविनौ दृष्ट्वा वेदेषु परिनिष्ठितौ', (१. ४, ६)। 'तौ तु गान्धर्वतत्वज्ञौ स्थानमूर्च्छनकोविदौ। भ्रातरौ स्वरसंपन्नौ गंधर्वाविव रूपिणौ ॥', (१. ४, १०) 'रूपलक्षणसंपन्नौ मधुरस्वरभाषिणौ। बिम्बादिवोत्थितौ बिम्बौ रामदेहात्तथा परौ ॥', (१. ४, ११)। 'तौ राजपुत्रौ……… काव्यमनिन्दितौ', (१. ४, १२)। 'तत्वज्ञौ जगतुः सुसमाहितौ', (१. ४, १३), 'महात्मानौ महाभागौ सर्वलक्षण लक्षितौ', (१. ४, १४)। इन्होंने अपने गायन से ऋषियों और मुनियों को इतना अधिक मुग्ध कर दिया कि उससे प्रसन्न होकर उन्होंने इन्हें अनेक प्रकार के उपहार प्रदान किये (१ ४, १६–२७)। 'सर्वगीतिषु कोविदौ', (१. ४, २७)। श्रीराम ने इन्हें बुलाकार इनका यथोचित सम्मान किया (१. ४, २९--३०)। 'रूपसम्पन्नौ विनीतौ भ्रातरावुभौ', (१. ४, ३१)। 'देवत्वर्चसोः', (१. ४, ३२)। इन्होंने राम की सभा में रामायण का गायन किया (१. ४, ३३–३४)। 'इमौ मुनी पार्थिवलक्षणान्वितौ कुशीलवौ चैव महातपस्विनौ', (१. ४, ३५)। ये वाल्मीकि के आश्रम में सीता के गर्भ से उत्पन्न हुये (७. ६६, १–११)। श्रीराम के यज्ञ के अवसर पर वाल्मीकि ने कुश और लव को रामायण के गायन का आदेश दिया (७. ९३, १–१६)। वाल्मीकि के आदेश को स्वीकार करके इन्होंने उत्कण्ठित हो वहाँ सुखपूर्वक रात्रि व्यतीत की (७. ९३, १७–१९)। प्रातःकाल होने पर इन्होंने सम्पूर्ण रामायण का गायन किया (७. ९४, १)। कुश-लव

द्वारा रामायण का गायन सुन कर श्रीराम ने कर्मानुष्ठान से अवकाश मिलने पर सभासदों को एकत्रित करके इनको सभा में बुलावाकर बैठाया (७. ९४, १–९)। तब इन्होंने राम की सभा में रामायण का गायन किया (७. ९४, १०–१६)। राम द्वारा भेंट की गई सुवर्ण-मुद्राओं को लेना इन्होंने अस्वीकृत कर दिया (७. ९४, १९–२०)। श्रीराम इनसे इस काव्य की उपलब्धि के बारे में जानने के लिये उत्सुक हुये (७. ९४, २२–२३)। "इन्होंने राम को बताया : 'इस काव्य के रचयिता वाल्मीकि हैं जो इस यज्ञ-स्थल में पधारे हैं। इस महाकाव्य में २४,००० श्लोक और एक सौ उपाख्यान तथा आदि से लेकर पाँच सौ सर्ग तथा ६ काण्ड हैं। इसके अतिरिक्त वाल्मीकि ने उत्तरकाण्ड की भी रचना की है। इन्होंने ही आपके चरित्र को महाकाव्य का रूप दिया है जिसमें आपके जीवन तक की समस्त बातें आ गई हैं।' (७. ९४, २५–२८)।" इतना कहकर ये वहाँ से चले गये (७. ९४, २९)। इन्होंने राम के कक्ष में विश्राम किया (७. ९८, २७)। राम के आग्रह पर इन्होंने रामायण के उत्तरकाण्ड का गायन किया (७. ९९, १–२)। ये कोसल के राजा बनाये गये (७. १०७, १७–१९)

कृत्तिकायें—इन्द्र तथा मरुतों के कहने पर कृत्तिकाओं ने नवजात कार्तिकेय को अपना स्तनपान कराया (१. ३७, २३–२४)। छः कृत्तिकाओं के स्तनों का बालक कार्त्तिकेय ने छः मुखों से पान किया (१. ३७, २८)।

कृशाश्व—प्रायः सभी अस्त्र प्रजापति कृशाश्व के परम धर्मात्मा पुत्र हैं जिन्हें उन्होंने पूर्वकाल में विश्वामित्र को समर्पित कर दिया था। कृशाश्व के ये पुत्र दक्ष की पुत्रियों की सन्तान थे (१. २१, १३–१४)। देवताओं ने ऋषि विश्वामित्र से निवेदन किया कि वे प्रजापति कृशाश्व के अस्त्ररूपधारी पुत्रों को श्रीराम को समर्पित कर दें (१. २६, २९)। महर्षि विश्वामित्र ने प्रजापति कृशाश्व के अस्त्ररूपी पुत्रों को श्रीराम को दे दिया (१. २८, ४-१०)।

कृष्णगिरि, उस पर्वत का नाम है जहाँ रम्भ नामक वानर-यूथपति निवास करता था (७. २६, ३१)।

कृष्णवेणी, दक्षिण की एक नदी का नाम है जहाँ सीता की खोज करने के लिए सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, ९)।

केकय, एक देश का नाम है जहाँ के परम धार्मिक राजा, दशरथ के श्वसुर थे; इन्हें तथा इनके पुत्र को अश्वमेध यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए आमन्त्रित किया गया था (१. १३, २४)। ये भरत को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुये थे (१. ७७, २०)। समयाभाव के कारण राम के अभिषेक के समय दशरथ इन्हें बुलाने के लिए किसी को भेज नहीं सके (२. १, ४७)। इनका नाम अश्वपति था (२. ९, २२)। "ब्रह्मा की कृपा से इन्होंने पशु-पक्षियों की भाषा को समझने

का ज्ञान प्राप्त किया था। एक दिन जब ये एक जृम्भ पक्षी की बात सुनकर हँसने लगे तब इनकी पत्नी ने इनके हँसने का कारण पूछा। परन्तु कारण बता देने से इनकी मृत्यु हो जाती इसलिये ये चुप रहे। इनकी पत्नी के, जो केकयी की माता थी, दृढ़ आग्रह करने पर भी इन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया (२. ३५, १८–२६)।" दशरथ की मृत्यु के समय भरत और शत्रुघ्न केकय में थे (२. ६७, ७)। भरत और शत्रुघ्न को बुलाने के लिये दूतों को केकय भेजा गया (२. ६८, १०)। देखिये **अश्वपति** भी।

केतुमती, गन्धर्वी नर्मदा की द्वितीय पुत्री का नाम है जो सुमालिन् को विवाहित थी। यह अत्यन्त सुन्दर थी और इसका मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान मनोहर था। इसके गर्भ से प्रहस्त, अकम्पन आदि पुत्र उत्पन्न हुये (७. ५, ३७–४०)।

केरल, दक्षिण के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १२)।

१. केशिनी, विदर्भराज की पुत्री का नाम है जो सगर की ज्येष्ठ पत्नी थी; यह अत्यन्त धर्मात्मा और सत्यवादिनी थी (१. ३८, ३)। इसने अपने पति तथा अन्य सह-पत्नियों के साथ हिमालय पर सौ वर्षों तक तपस्या की थी (१. ३८, ५–६)। भृगु के वरदान-स्वरूप इसने असमञ्ज नामक पुत्र को जन्म दिया (१. ३८, १६)। सगर के प्रति इसकी निष्ठा का उल्लेख (५. २४, १२)।

२. केशिनी, एक नदी का नाम है जिसके तट पर लक्ष्मण और सुमन्त्र ने एक रात्रि व्यतीत की थी (७. ५१, २९)। यह अयोध्या से आधे दिन की यात्रा की दूरी पर स्थित थी (७. ५२, २)।

केसरिन्, हनुमान् के पिता का नाम है जिन्होंने सुग्रीव के निवेदन पर अनेक सहस्र वानर भेजे थे (४. ३९, १८)। अञ्जना नामक शापग्रस्त अप्सरा से इनका विवाह हुआ था (४. ६६, ८–९)। हनुमान् इनके क्षेत्रज पुत्र थे (४. ६६, २८)। मलयवन पर्वत से गोकर्ण पर्वत पर जाते समय देवर्षियों की आज्ञा से इन्होंने समुद्रतट पर शम्बसादन नामक असुर का वध किया था (५. ३५, ८१–८२)। अपने अनुचरों के साथ ये राम की सेना के दक्षिण भाग की रक्षा कर रहे थे (६. ४, ३४)। ये काञ्चन पर्वत पर निवास करते थे (६. २७, ३४–३८)। ये बृहस्पति से उत्पन्न गद्गद के क्षेत्रज पुत्र थे (६. ३०, २२)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ५९)। ये सुमेरु पर्वत पर निवास करते थे (७. ३५, १९)। इन्होंने अञ्जना को अपनी पत्नी बनाया (७. ३५, २०)। राम ने इनका अभिवादन और सत्कार किया (७. ३९, २०)।

कैकसी, सुमालिन् और केतुमती की शुचिस्मिता पुत्री का नाम है (७. ५, ३८–४१)। 'साक्षाद् श्रीरिव', (७. ९, ८)। अपने पिता की आज्ञा के अनुसार यह महर्षि विश्रवा के समीप जाकर संकोचपूर्वक खड़ी हो गई (७. ९, ६–१२)।' सुश्रोणीं पूर्णचन्द्रनिभाननाम्', (७. ९, १६)। "विश्रवा के पूछने पर इसने बताया कि यह अपनी पिता की आज्ञा से ही उनके (विश्रवा के) पास आई है और वे (विश्रवा) स्वयं अपने प्रभाव से इसके मनोभाव को समझ लें (७. ९, १८–२०)। 'मत्तमातंगगामिनी', (७. ९, २१)। विश्रवा की भविष्यवाणी को सुनकर इसने उनसे अपना निर्णय बदलने का निवेदन किया और कहा कि वह ऐसे क्रूर-कर्मा पुत्र नहीं चाहती (७. ९, २१–२५)। कालान्तर में इसने रावण, कुम्भकर्ण, शूर्पणखा, और विभीषण को जन्म दिया (७. ९, २८. ३६)। कुबेर के वैभव को देख कर इसने अपने पुत्र दशग्रीव (रावण) से कुबेर के समान बनने के लिए कहा (७. ९, ४०–४३)।

कैकेयी, दशरथ की पत्नियों में से एक का नाम है जिसने राम के अभिषेक का आयोजन होते देखकर दशरथ से अपने दो वरदान—राम को वनवास तथा भरत को राज्य—माँगे (१. १, २१–२२)। इसके कुटिल अभिप्राय का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १२)। अपने पुत्रेष्टि यज्ञ के अग्निकुण्ड से प्रगट प्राजापत्य पुरुष द्वारा प्रदत्त खीर का चतुर्थांश दशरथ ने कैंकेयी को भी दिया (१. १६, २७)। शीघ्र ही इसने गर्भ धारण किया (१. १६, ३१)। इसने भरत को जन्म दिया (१. १८, १२)। इसके भ्राता युधाजित् इसे देखने आये (१. ७३, ४)। इसने पुत्रवधुओं का स्वागत किया (१. ७७, १०–१२)। राम के अभिषेक के समय मन्थरा ने अपने हितों के प्रति चुप रहने के कारण इसकी भर्त्सना की (२. ७, १३–१५)। मन्थरा के अप्रसन्न होने का कारण पूछा (२. ७, १७)। राम के अभिषेक का समाचार सुनकर इसने मन्थरा को आभूषणादि का उपहार देकर बाद में और अधिक देने का वचन दिया (२. ७, ३१–३६)। मन्थरा के आक्षेपयुक्त वचन सुनकर भी इसने राम के गुणों की प्रशंसा करते हुये राम के युवराज बनने के अधिकार को स्वीकार किया और इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया कि मन्थरा इस बात से इतनी अधिक अप्रसन्न क्यों हैं (२. ८, १३–१९)। अन्ततोगत्वा मन्थरा की कुटिल युक्तियों ने इसके मन पर वांछित प्रभाव उत्पन्न कर दिया और क्रोध में आकर इसने मन्थरा से राम के निर्वासन और भरत को राज्य प्राप्त कराने का उपाय पूछा (२. ९, १–३)। 'विलासिनी', (२. ९, ७)। मन्थरा के वचन को सुनकर इसने शय्या से कुछ उठकर भरत को राज्य-प्राप्ति और राम को उससे वञ्चित करने का उपाय पूछा (२. ९, ८–९)। पूर्वकाल

में देवासुर संग्राम के समय इन्द्र की सहायता के लिये युद्ध करते समय इसने दशरथ की जीवन-रक्षा की थी जिससे प्रसन्न होकर दशरथ ने इससे दो वर माँगने के लिये कहा परन्तु इसने भविष्य में किसी समय उन वरों को माँगने की इच्छा व्यक्त की (२. ९, ११–१७)। यह अश्वपति की पुत्री थी (२. ९, २२)। यह दशरथ की प्रिय पत्नी थी जिसके लिये दशरथ अपने प्राण तक दे सकते थे (२. ९, २४–२५)। ऐसा बहुमूल्य परामर्श देने के लिये इस परम दर्शनीय ने मन्थरा की प्रशंसा की (२. ९, ३८–५२)। मन्थरा के परामर्श के अनुसार इसने अपने आभूषण आदि का परित्याग करके क्रोधागार में प्रवेश किया और भूमि पर लेट कर यह प्रण किया कि जब तक इसकी इच्छा पूर्ण नहीं हो जायगी यह अन्न नहीं ग्रहण करेगी (२. ९, ५५–५९)। इसने अपनी इच्छाओं की पूर्ति न हो जाने तक क्रुद्ध अवस्था में भूमि पर पड़े रहने का प्रण किया (२. ९, ६२–६६)। "पापिनी कुब्जा के कुटिल परामर्शों के कारण यह विषाक्त बाण से विद्ध हुई किन्नरी के समान धरती पर लोटने लगी। इसने मन्थरा से अपना समस्त मन्तव्य बता दिया (२. १०, २)।" अपनी मनोकामना को कार्यान्वित करने के उपायों पर विचार किया (२. १०, ३–४)। अपने कर्त्तव्य का भली भाँति निश्चय करके मुखमण्डल में स्थित भोंहों को टेढा किये हुये इसने अपने आभूषणों आदि को उतार कर फेंक दिया और धरती पर सो गई (२. १०, ६–७)। मलिन वस्त्र पहन कर और समस्त केशों को दृढतापूर्वक एक ही वेणी में बाँधकर क्रोधागार में पड़ी हुई कैकेयी बलहीन अथवा अचेत किन्नरी के समान प्रतीत हो रही थी (२. १०, ८–९)। यह राजा दशरथ के आने के समय पहले कभी भी अपने भवन से अनुपस्थित नहीं रही (२. १०, १८–१९)। दशरथ ने इसे क्रोधागार में भूमि पर पड़े देखा (२. १०, २२–२३)। "स वृद्धस्तरुणीं भार्यां प्राणेभ्योऽपि गरीयसीम्। अपापः पापसंकल्पां ददर्श धरणीतले ॥', (२. १०, २३)। 'लतामिव विनिष्कृत्तां पतितां देवतामिव। किन्नरीमिव निर्धूतां च्युतामप्सरसं यथा ॥', (२. १०, २४)। 'मायामिव परिभ्रष्टां हरिणीमिव संयताम्। करेणुमिव दिग्धेन विद्धां मृगयुना वने ॥', (२. १०, २५)। 'कमलपत्राक्षी', (२. १०, २७)। 'किमायासेन ते भीरु उत्तिष्ठोत्तिष्ठ शोभने। तत्वं मे ब्रूहि कैकेयि यतस्ते भयमागतम् ॥', (२. १०, ४१)। दशरथ ने इसे प्रसन्न करने का प्रयास किया (२. १०, २८–३९)। इसने दशरथ से कहा : 'न तो किसी ने मेरा अपकार किया है और न मैं किसी के द्वारा निन्दित अथवा अपमानित हुई हूँ। मेरा अपना एक अभिप्राय है जिसे यदि आप पूर्ण करना चाहते हों तो आप तदनुसार प्रतिज्ञा कीजिये।' (२. ११, २–३)। दशरथ ने जब प्रतिज्ञा की

तब इसने समस्त देवों को उसका साक्षी बनने के लिये कहा (२. ११, १३–१६)। तदनन्तर दशरथ को उन दो वरदानों का स्मरण दिलाया जिसे उन्होंने इसको देने का वचन दिया था और उन्हीं को पूर्ण करने के लिये दशरथ से राम को चौदह वर्ष का वनवास तथा भरत को राजगद्दी देने के लिये कहा (२. ११, १८–२९)। दशरथ ने कहा कि राम कैकेयी को अपनी माता के समान ही मानते हैं (२. १२, ८)। दशरथ ने यह भी बताया कि कैकेयी स्वयं भी राम को भरत के समान ही मानती है (२. १२, २१)। दशरथ के इस प्रकार समझाने तथा वर देने में किञ्चित् संकोच प्रकट करने पर इसने उन पर आक्षेप किया और अपने आग्रह पर अटल रही (२. १२, ३८–५०)। कैकेयी ने दशरथ से कहा : 'आप तो यह कहा करते थे कि मैं सत्यवादी और दृढ़प्रतिज्ञ हूँ, तब आप फिर मेरे इस वरदान को देने में क्यों संकोच कर रहे हैं' (२. १३, ४)। 'सुश्रोणी', (२. १३, २२)। 'असितापाङ्गा', (२. १३, २३)। 'गुरुश्रोणी', (२. १३, २४) । 'दुष्टभावा, भर्तनृशंसा', (२. १३, २५) । 'प्रतिकूलभाषिणी', (२. १३, २६)। "दशरथ पुत्रशोक से पीड़ित हो पृथिवी पर अचेत पड़े वेदना से छटपटा रहे थे, परन्तु उन्हें इस अवस्था में देखकर भी पापिनी कैकेयी इस प्रकार बोली : 'आपने मुझे वर देने की प्रतिज्ञा की थी परन्तु जब मैंने वरदान माँगा तब आप अचेत होकर भूमि पर गिर पड़े। आपको सत्पुरुषों की मर्यादा में स्थित रहना चाहिये।' इसके पश्चात् इसने शैब्य, अलर्क और समुद्र का दृष्टान्त देते हुये दशरथ से अपना प्रण पालने के लिये कहा। अन्यथा इसने आत्महत्या करने की भी धमकी दी (२. १४, २–१०)।" दशरथ की मृत्यु हो जाने पर यह उनका तर्पण नहीं कर सकी, क्योंकि दशरथ ने मृत्यु के पूर्व इसका निषेध कर दिया था (२. १४, १४–१७)। 'ततः पापसमाचारा कैकेयी पार्थिवं पुनः। उवाच परुषं वाक्यं वाक्यज्ञा रोषमूर्च्छिता ॥', (२. १४, २०)। इसने अपने आग्रह पर अटल रहते हुये राजा दशरथ से राम के बुलाने के लिये कहा (२. १४, २१–२२)। 'मन्त्रज्ञा कैकेयी प्रत्युवाच', (२. १४, ५९)। इसने सुमन्त्र से राम को शीघ्र बुलाने के लिये कहा (२. १४, ६०–६१)। महल में आकर राम ने पिता दशरथ को कैकेयी के साथ एक सुन्दर आसन पर बैठे देखा (२. १८, १)। राम ने कैकेयी का अभिवादन किया (२. १८, २)। राम द्वारा दशरथ के शोक का कारण पूछने पर इसने राम से कहा कि वह उसी दशा में दशरथ के शोक का कारण बतायेगी जब राम निःसंकोच अपने पिता की आज्ञा का पालन करने का प्रण करेंगे (२. १८, २०–२६)। 'तमार्जवसमायुक्तमनार्या सत्यवादिनम्। उवाच

रामं कैकेयी वचनं भृशदारुणम् ।।', (२. १८, ३१) । "जव राम ने पिता की आज्ञा-पालन करने का वचन दे दिया तव इसने उनसे कहा कि पिता के वचन का पालन करने के लिये उन्हें चौदह वर्ष के लिये दण्डकारण्य में चले जाना और अपने स्थान पर भरत को पृथिवी का शासक दनने देना चाहिये (२. १८, ३२–४०)।" "राम को तत्काल ही वन में भेज देने के अभिप्राय से इसने कहा कि भरत को तत्काल ही वुलाना और राम को भी बिना विलम्व के ही वनवास के लिये प्रस्थान करना चाहिये। इसने यह भी कहा कि लज्जित होने के कारण दशरथ स्वयं यह वात कहने में संकोच कर रहे हैं और जव तक राम वन को नहीं चले जाते वे (दशरथ) स्नान अथवा भोजन नहीं करेंगे (२. १९, १२–१६)।" 'तदप्रियमनार्याया वचनं दारुणोदयम्। श्रुत्वा गतव्यथो रामः कैकेयीं वाक्यमब्रवीत् ।।', (२. १९, १९) । 'न नूनं मयि कैकेयी किंचिदाशंससे गुणान्। यद्राजानमवोचस्त्वं ममेश्वरतरा सती ।।' (२. १९, २४)। श्रीराम पिता दशरथ तथा माता अनार्या कैकेयी के चरणों में प्रणाम करके अन्तःपुर से बाहर निकले (२. १९, २८–२९)। 'परिवारेण कैकेयाः सभा वाप्यथवाऽवरा', (२. २०, ४२) 'कैकेय्याः पुत्रमन्वीक्ष्य स जनो नाभिभाषते', (२. २०, ४३) । 'कैकेय्याः वदनं द्रष्टुं पुत्र शक्ष्यामि दुर्गता', (२. २०, ४४)। 'प्रोत्साहितोऽयं कैकेय्या सन्तुष्टो यदि नः पिता। अमित्रभूतो निःसङ्गं वध्यतां बध्यतामपि ।।', (२. २१, १२)। 'दातुमिच्छति कैकेय्यै राज्यं स्थितमिदं तव', (२. २१, १४)। राम ने कहा कि जब वे वन में चले जायेंगे तभी कैकेयी के मन को सुख होगा (२. २२, १३)। राम ने कहा कि कैकेयी का विपरीत मनोभाव दैव का ही विधान है (२. २२, १६)। राम ने लक्ष्मण को बताया कि कैकेयी उनके तथा अपने पुत्र भरत में कोई अन्तर नहीं रखती थी (२. २२, १७)। यदि यह एक दैवी विधान ही न होता तो श्रेष्ठ गुणों से युक्त राजकुमारी कैकेयी साधारण स्त्री की भाँति अपने पति के समीप राम को वन में भेजने का प्रस्ताव कैसे उपस्थित करती (२. २२,१९)। राम ने लक्ष्मण से कहा कि केकय-राज अश्वपति की पुत्री कैकेयी साम्राज्य को प्राप्त करके अपनी सौतों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करेगी (२. ३१,१३)। कैकेयी एकान्त में दशरथ को श्रीराम को तत्काल वन में भेजने के लिये बाध्य करती रही (२. ३४, ३०)। 'छन्नया चलितस्त्वस्मि स्त्रिया भस्माग्निकल्पया', (२. ३४, ३६)। 'अनया वृत्तसादिन्या कैकेय्याभिप्रचोदितः', (२. ३४, ३७)। दशरथ के मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ने पर भी इसका हृदय द्रवित नहीं हुआ (२. ३४, ६१)। 'पतिघ्नीं त्वामहं मन्ये कुलघ्नीमपि चान्ततः', (२. ३५, ६)। 'पापदर्शिनी', (३. ३५, २७)। सुमन्त्र

ने इसको बहुत फटकारा, परन्तु इसने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया (२. ३५, ४–३७)। इस भय से कि कहीं दशरथ श्रीराम को सुख-वैभव की समस्त सामग्री प्रदान न कर दें इसने कहा कि भरत ऐसे राज्य के राजा होना स्वीकार नहीं करेंगे जिसका कोश रिक्त हो (२. ३६, १–१२)। 'कैकेय्यां मुक्तलज्जायां वदन्त्यामतिदारुणम्। राजा दशरथो वाक्यमुवाचायतलोचनाम् ॥', (२. ३६, १३)। कोध में आकर इसने कहा कि सगर के ज्येष्ठ पुत्र असमञ्जस् की भाँति ही राम को भी खाली हाथ शीघ्र ही निर्वासित कर देना चाहिये (२. ३६, १५–१६)। उस समय दशरथ के वचन को सुनकर अन्य सभी लोग तो लज्जा से गड़ गये परन्तु कैकेयी का हृदय उससे प्रभावित नहीं हुआ (२. ३६, १७)। इसने अपने हाथों ही राम को चीरादि लाकर दिया (२. ३७, ६)। वसिष्ठ ने इसको 'कुलपांसिनी', 'शीलवर्जिता', और 'दुर्वृत्ता', इत्यादि कहकर बहुत फटकारा (२. ३७, २२–३६)। जब राम के चले जाने पर दशरथ मूर्च्छित हो गये तब इसने उनके बाये भाग में खड़े होकर उन्हें सहारा दिया (२. ४२, ४)। उस समय दशरथ ने अपने अङ्गों का स्पर्श करने का निषेध करते हुये इससे अपने समस्त सम्बन्धों का परित्याग कर दिया (२. ४२, ६–८)। दशरथ ने इसे शाप दिया (२. ४२, २१)। कौसल्या इससे भयभीत हुईं (२. ४३, २–५)। अयोध्या की स्त्रियों ने इसे निर्घृणा, अधर्मी और दुष्टचारिणी कहते हुये इसकी भर्त्सना की (२. ४८, २१–२५)। अयोध्यावासियों ने भी इसे नृशंस, पापिनी और तीक्ष्णा इत्यादि कहकर शाप दिया (२. ४९, ५)। इस पापिनी के शासन के अधीन वन जाने के तथ्य पर सुमन्त्र ने खेद प्रकट किया (२. ५२, १९)। राम ने सुमन्त्र से इसके पास अपना कुशल-समाचार भेजा (२. ५२, ३०)। राम ने सुमन्त्र को इसलिये वापस अयोध्या भेजा कि कैकेयी को राम के वन चले जाने का विश्वास हो जाय और वह धर्मपरायण महाराज दशरथ के प्रति मिथ्यावादी होने का सन्देह न करे (२. ५२, ६१–६२)। राम ने कैकेयी के कुटिल मनोरथों का स्मरण करते हुये उसे सौभाग्यमदमोहिता और क्षुद्रकर्मा कहा (२. ५३, ६–७. १४. १५. १८)। श्रीराम ने सुमन्त्र से अपनी माता कौसल्या के लिये यह संदेश भेजा कि वे अभिमान और मान को त्याग कर अन्य माताओं और विशेषकर कैकेयी के प्रति समान और सद्भावनापूर्ण व्यवहार करें (२. ५८, १९)। 'कैकेय्या विनियुक्तेन पापाभिजनभावया', (२. ५९, १८)। मृत्यु के समय दशरथ ने इसे शाप दिया (२. ६४, ७६)। दशरथ की मृत्यु हो जाने पर यह भी शोक-सन्तप्त होकर विलाप करने लगी (२. ६५, २५)। दशरथ की मृत्यु हो जाने

पर कौसल्या ने नृशंस, दुष्टचारिणी, त्यक्तलज्जा, आदि कहकर इसकी भर्त्सना की (२. ६६, ३–६)। अन्य सहपत्नियों तथा पुरवासियों ने इसकी भर्त्सना की (२. ६६, १९–२२.२९)। भरत ने इसे 'आत्मकामा सदा चण्डी क्रोधना प्राज्ञमानिनी', कहते हुये दूतों से इसका कुशल समाचार पूछा (२. ७०, १०)। भरत को घर आया देख कैकेयी हर्ष से भर गई और अपने आसन को छोड़कर खड़ी हो गई (२. ७२, २)। अपने यशस्वी पुत्र, भरत, को छाती से लगाकर कैकेयी ने उनके नाना-नानी का कुशल-समाचार तथा यात्रा का वृत्तान्त पूछा (२. ७२, ४–६)। 'कैकेयी...राज्यलोभेन मोहिता', (२. ७२, १४)। भरत द्वारा अपने पिता दशरथ के सम्वन्ध में पूछने पर इसने उनकी मृत्यु का समाचार सुनाया (२. ७२, ११–१५)। अपने शोक-सन्तप्त पुत्र, भरत को, सान्त्वना दी (२. ७२, २४–२५)। "भरत के पूछने पर इसने राजा दशरथ के अन्तिम शब्दों को दुहराते हुये कहा कि राम इत्यादि को उनके किसी अपराध के कारण नहीं वरन् उसी के (कैकेयी के) कहने पर वनवास दिया गया है। इतना कहकर इसने भरत से सिंहासन पर बैठने तथा पिता दशरथ का अन्तिम संस्कार करने के लिये कहा (२. ७२, ३४–५४)।" दशरथ की मृत्यु तथा राम और लक्ष्मण के वनवास के लिये इसे दोषी बनाते हुये भरत ने इसे 'पुत्रगर्द्धिनी', 'साधुचारित्रविभ्रष्टा', आदि कहकर फटकारा (२. ७३, २–२७)। भरत ने इसकी भर्त्सना करते हुये 'राज्यकामुका दुर्वृत्ता पतिघातिनी', 'कुलदूषिणी', और 'पितुः कुलप्रध्वंसिनी', आदि कहकर इसे शाप दिया (२. ७४, २–१२)। भरत ने इससे अग्नि में प्रवेश करने, वन में चली जाने, अथवा आत्महत्या करने के लिये कहा (२. ७४, ३३)। 'क्रूरकार्यायाः कैकेय्या', (२. ७५, ५)। जब शत्रुघ्न ने इसके प्रति क्रोध प्रकट किया तो यह भयभीत होकर अपने पुत्र भरत की शरण में चली गई (२. ७८, १९–२०)। इसने धीरे-धीरे मन्थरा को सान्त्वना दी (२. ७८, २५)। राम को वन से लौटाने के लिये यह भी भरत के साथ गई (२. ८३, ६)। जब गुह की बात सुनकर भरत मूर्च्छित हो गये तो यह उनकी सेवा के लिये उनके पास गई (२. ८७, ६)। भरत ने इसे तथा अन्य माताओं को वह कुश-समूह दिखाया जिस पर राम सोये थे (२. ८८, २)। गुह की नाव पर भरत आदि के साथ यह भी बैठी (२. ८९, १३)। अपनी असफल कामना के कारण सब लोगों से निन्दित कैकेयी ने लज्जित होकर भरद्वाज मुनि के चरणों का स्पर्श किया और दीनचित्त हो भरत के पास आकर खड़ी हो गई (२. ९२, १७–१८)। भरत ने क्रोधना, कृतप्रज्ञा, दृप्ता, सुभगमानिनी, ऐश्वर्यकामा, अनार्या, आर्यरूपिणी, आदि कहते हुये इसका भरद्वाज से परिचय

कराया (२.९२, २५–२७)। श्रीराम ने भरत से इसका कुशल-समाचार पूछा (२. १००, १०)। इसके प्रति कटुवचन कहने पर श्रीराम ने भरत को मना किया (२. १०१, १७–२२)। भरत के साथ आये सब लोगों ने इसकी निन्दा की (२. १०३, ४६)। राम ने भरत को इसके प्रति आदर का भाव रखने के लिये कहा (२. ११२, १९. २७–२८)। 'दीर्घदर्शिनी', (३. २, १९)। लक्ष्मण ने इसकी निन्दा की जिस पर राम ने उन्हें फटकारा (३. १६, ३५–३८)। राम को वनवास दिलाने के कैकेयी के कुचक्र का सीता ने राम से वर्णन किया (३. ४७, ६–२२)। राम के अनुरोध पर दशरथ ने इसे क्षमा कर दिया (६. ११९, २४–२६)। इसने शत्रुघ्न के अभिषेक में सक्रिय सहयोग दिया (७. ६३, १६–१७)। इसकी मृत्यु (७. ९९, १६)।

कैटभ, एक दैत्य का नाम है जिसका एक अदृश्य बाण से विष्णु ने वध किया था (७. ६३, २३; ६९, २७)। कैटभ और मधु के अस्थि-समूहों से पर्वतों-सहित यह पृथिवी तत्काल प्रकट हुई (७. १०४, ६)।

कैलास, एक पर्वत का नाम है जिस पर मानसरोवर स्थित है (१. २४, ८)। धातुओं से अलंकृत कैलास पर्वत पर जाकर देवताओं ने अग्निदेव को पुत्र उत्पन्न करने के कार्य में नियुक्त किया (१. ३७, १०)। कुवेर का निवासस्थान यहीं था, जिस पर रावण ने आक्रमण किया (३. ३२, १४)। सुग्रीव ने हनुमान से यहाँ निवास करनेवाले वानरों को भी बुलाने के लिये कहा (४. ३७, २)। यहाँ से १,००० करोड़ वानर आये (४. ३७, २२)। उत्तर में एक निर्जन और दुर्गम प्रदेश के उस पार इसकी स्थिति बताते हुये सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये शतबल को यहाँ भेजा (४. ४३, २०)। रावण के यहाँ आने का वर्णन (७. २५, ५२)।

कोशल, एक जनपद का नाम है जो सरयू नदी के तट पर बसा और प्रचुर घन-धान्य से सम्पन्न, सुखी, और समृद्धिशाली था (१. ५, ५)। यहाँ के राजा भानुमान थे (१. १३, २६)। कैकेयी के क्रोध को शान्त करने के लिये दशरथ ने यहाँ उत्पन्न पदार्थों को भी प्रस्तुत करने का आश्वासन दिया (२. १०, ३७--३९)। निर्वासित राम ने इसकी सीमाओं को पार किया (२. ४९, ८)। यहाँ के ग्राम अत्यन्त समृद्ध थे (२. ५०, ८--१०)। सीता की खोज करने के लिये सुग्रीव ने विनत को यहाँ भेजा (४. ४०, २२)। श्रीराम ने इसे दो भागों में विभक्त कर दिया जिसमें से कुश तो कोशल के शासक हुये और लव उत्तर कोशल के (७. १०७, १७)।

कोशकार, अर्थात् रेशम उत्पन्न करनेवाले स्थान का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने विनत को भेजा था (४. ४०, २३)।

कौशाम्बी, एक नगर का नाम है जिसकी कुश ने स्थापना की थी (१. ३२, ५)।

१. कौशिक, पूर्व दिशा के एक ऋषि का नाम है जो राम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये पधारे थे (७. १, २):

२. कौशिक, दक्षिण के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज करने के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, ११)।

कौशिकी—विश्वामित्र की ज्येष्ठ बहन सत्यवती ने अपने पति ऋचीक की मृत्यु के पश्चात् इस नदी के रूप में जन्म लिया (१. ३४, ७–८)। यह पुण्यसलिला दिव्य नदी जगत् के हित के लिये हिमालय का आश्रय लेकर प्रवाहित हुई (१. ३४, ९)। सरिताओं में श्रेष्ठ कौशिकी अपने कुल की कीर्ति को प्रकाशित करने वाली है (१. ३४, २१)। सरिताओं में श्रेष्ठ इसी कौशिकी नदी के तट पर विश्वामित्र ने एक सहस्र वर्ष तक तपस्या की थी (१. ६३, १५)। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को यहाँ भेजा था (४. ४०, २०)।

कौशेय, पश्चिम दिशा के एक महर्षि का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनका अभिनन्दन करने के लिये पधारे थे (७. १, ४)।

कौसल्या, श्रीराम की माता का नाम है (१. १, १७)। दशरथ ने इनके साथ अश्वमेध यज्ञ की दीक्षा ली (१. १३, ४१)। इन्होंने यज्ञ के अश्व का विधिवत् संस्कार करके तीन तलवारों से उसका स्पर्श किया (१. १४, ३३)। तदनन्तर इन्होंने उस अश्व के निकट ही एक रात निवास किया (१. १४. ३४)। ऋत्विजों ने इनके हाथ का अश्व से स्पर्श कराया (१. १४, ३५)। दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ के अग्निकुण्ड से प्रकट प्राजापत्य पुरुष ने जो खीर प्रदान की थी उसका आधा भाग दशरथ ने इन्हें दिया (१. १६, २७)। शीघ्र ही इन्होंने गर्भ धारण किया (१. १६, ३१)। बारह मास तक गर्भ धारण करने के पश्चात् इन्होंने श्रीराम को जन्म दिया (१. १८, ८–१०)। जिस प्रकार वज्रपाणि इन्द्र से देवमाता अदिति सुशोभित हुई थीं उसी प्रकार अपने पुत्र, राम से, यह भी सुशोभित होने लगीं (१. १८, १२)। इन्होंने अपनी पुत्रवधू, सीता का विधिवत् स्वागत किया (१. १७, १०–१२)। अपने पुत्र के तेज से यह भी उसी प्रकार प्रकाशित हो रही थीं जिस प्रकार वज्रपाणि इन्द्र से अदिति हुई थीं (२. १, ८)। राम के अभिषेक का समाचार लाने वालों को इन्होंने सुवर्ण और गायों इत्यादि का दान किया (२. ३, ४७–४८)। जब लक्ष्मण और सुमित्रा इन्हें राम के अभिषेक का समाचार देने आये तो ये रेशमी वस्त्र पहने हुए मौन हो देव-मन्दिर में बैठी देवता की

आराधना कर रही थीं (२. ४, ३०–३३)। श्रीराम द्वारा अभिषेक का समाचार सुनकर इन्होंने उन्हें (राम को) आशीर्वाद दिया (२. ४, ३८-४१)। कैकेयी ने दशरथ पर आक्षेप किया कि वे धर्म को तिलाञ्जलि देकर राम को राजगद्दी सौंपने के पश्चात् कौसल्या के साथ आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहते हैं (२. १२, ४५)। राम को वनवास देने का इन्हें कारण समझाने में दशरथ ने असमर्थता का अनुभव किया (२. १२, ६७)। दशरथ ने कहा कि प्रियवचन बोलने वाली कौसल्या जब-जब दासी, सखी, पत्नी, बहन और माता की भाँति उनका प्रिय करने की इच्छा से उनकी सेवा में उपस्थित होती थीं, तब-तब उनका उन्होंने (दशरथ ने) कैकेयी के कारण तिरस्कार ही किया (२. १२, ६८–६९)। कैकेयी के भय से इन्होंने दशरथ के प्रति कभी प्रेम प्रकट नहीं किया (२. १२, ७०)। पुत्र और पति से वियुक्त होने पर इनकी मृत्यु अवश्यम्भावी है (२. १२, ८९)। जब अपने वनवास का समाचार देने के लिये राम इनके समीप उपस्थित हुये तो उस समय ये—पुत्र हिर्षैषिणी, हृष्टा नित्यं व्रतपरायणा, व्रतयोगेन कर्शिता, वरर्वाणिनी—राम के ही कल्याण के लिये देवों से प्रार्थना कर रही थीं (२. २०, १४–१९)। अपने पुत्र को प्रेमपूर्वक आशीर्वाद देते हुये इन्होंने उन्हें आसन पर बैठा कर भोजन के लिये आमन्त्रित किया (२. २०, २०–२५)। राम से वनवास का समाचार सुनकर मूर्च्छित हो भूमि पर गिर पड़ीं (२. २०, ३४)। राम ने इनकी सेवा की (२. २०, ३४)। "लक्ष्मण को सुनाते हुये इन्होंने राम से कहा : 'पति के प्रभुत्व काल में एक ज्येष्ठ पत्नी को जो कल्याण या सुख प्राप्त होना चाहिये वह पहले मुझे कभी नहीं मिला। बड़ी रानी होते हुये भी अब मुझे सौतों के अप्रिय वचन सुनने पड़ेंगे—इससे बढ़कर महान् दुःख और क्या होगा। तुम्हारे चले जाने पर तो मेरी मृत्यु निश्चित है। मुझे इस बात पर ही आश्चर्य है कि इस समाचार को सुनते ही मेरे प्राण क्यों नहीं निकल गये।' अन्त में कौसल्या ने स्वयं भी राम के साथ ही वन जाने के लिये कहा (२. २०, ३६–५५)।" "लक्ष्मण द्वारा राम को वनवास दिये जाने पर रोष प्रकट कर चुकने के पश्चात् इन्होंने राम से कहा कि वे जो उचित समझें करें। इन्होंने यह कहते हुये कि एक माता को भी अपने पुत्र से सेवा प्राप्त करने का उतना ही अधिकार होता है जितना पिता को, श्रीराम को बताया की उनका वियोग इनकी मृत्यु होगी और यदि वे इनकी सम्मति के बिना वन चले गये तो ये अन्न-जल का परित्याग कर प्राण दे देंगी (२. २१, २०–२८)।" जब राम रुकने के लिये तैयार नहीं हुई तो ये मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ीं (२. २१, ५१)। तदनन्तर राम को

सम्बोधित करते हुये इन्होंने मातृत्व के अधिकार की ओर उनका ध्यान दिलाया और कहा कि उनका वियोग इनके लिये मृत्यु होगा (२. २१, ५२–५३)। वन जाने के राम के दृढ़ निश्चय को देखकर ये भी उनके साथ जाने के लिये प्रस्तुत हुईं (२. २४, १–९)। राम के समझाने पर ये—शुभदर्शना—अयोध्या में ही रहने के लिये सहमत हो गईं (२. २४, १४)। यह बताते हुये कि सौतों के बीच जीवन दूभर हो जायगा, इन्होंने एक बार पुनः वन में चलने का आग्रह किया (२. २४, १८–२०)। अन्ततोगत्वा इन्होंने राम को वन जाने की स्वीकृति प्रदान करते हुये उनके 'स्वस्त्ययन' संस्कार की व्यवस्था की (२. २४, ३२–३९)। स्वस्त्यन संस्कार करते हुये इन्होंने राम को श्रेष्ठ आशीर्वाद दिया और उनकी रक्षा के लिये विभिन्न देवताओं का आवाहन किया (२. २५, १–४४)। 'कौसल्या वृद्धा संतापकर्शिता', (२. २६, ३१)। इन्हें अपने आश्रितों का पालन करने के लिये एक सहस्र गाँव मिले थे (२. ३१, २२)। 'मनस्विनी', (२. ३१, २३)। अपने वनवास के समय राम ने अपने माता के पास आये ब्राह्मण ब्रह्मचारियों के एक विस्तृत समुदाय को स्वर्ण-मुद्रायें देने के लिये कहा (२. ३२, २१–२२)। राजा दशरथ के बुलाने पर अन्य सपत्नियों के साथ ये भी राम को विदा करने के लिये दशरथ के भवन में गईं (२. ३४, १३)। 'इयं धार्मिक कौसल्या मम माता यशस्विनी। वृद्धा चाक्षुद्रशीला च न च त्वां देव गर्हते ॥', (२. ३८, १४)। सीता का प्रेमपूर्वक आलिङ्गन करते हुये इन्होंने उन्हें पातिव्रत धर्म पालन करते रहने का उपदेश दिया (२. ३९, १९–२५)। सीता का वचन सुनकर इनके नेत्रों से सहसा दुःख और हर्ष के अश्रु बहने लगे (२. ३९, ३२)। सीता, राम, और लक्ष्मण ने इनको प्रणाम किया (२. ४०, २–३)। अयोध्यावासियों ने कहा कि इनका हृदय निश्चय ही लोहे का बना है क्योंकि तभी तो अपने पुत्र को वन जाते देख वह फट नहीं गया (२. ४०, २३)। जब राम का रथ उन लोगों को लेकर वन के लिये चला तो एक पागल स्त्री की भाँति यह भी पैदल ही विलाप करती हुई रथ के पीछे दौड़ पड़ीं (२. ४०, ३९–४५)। जब दशरथ मूर्च्छित हुये तो इन्होंने उनके दाहिने भाग को सहारा दिया (२. ४२, ४–१०)। राम के वन चले जाने पर दुःखित दशरथ ने द्वारपालों से अपने को कौसल्या के भवन में ले चलने के लिये कहा (२. ४२, २७–२९)। विलाप कर रहे राजा दशरथ के समीप आकर ये भी व्यथित हो विलाप करने लगीं (२. ४२, ३५)। अपने एकमात्र पुत्र के वन चले जाने पर ये दशरथ के सम्मुख घोर विलाप करने लगीं (२. ४३, १–२१)। सुमित्रा के सान्त्वना भरे शब्दों से इन्हें कुछ शान्ति मिली (२. ४४, १–३१)। राम ने इनका स्मरण किया

(२. ४६, ६)। लक्ष्मण ने भी इनका स्मरण किया (२. ५१, १४–१५. १८)। राम ने सुमन्त्र से इनके पास अपना सन्देश भेजा (२. ५२, ३१)। राम ने, यह सोचकर कि कैकेयी उनकी माता कौसल्या को कष्ट पहुँचा रही होंगी, दुःख भरे उद्गार प्रकट किये (२. ५३, १५–२४)। दशरथ की रानियों ने इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया कि राम से वियुक्त हो कर भी ये कैसे जीवित हैं (२. ५७, २२)। सुमन्त्र द्वारा राम का सन्देश सुनकर दशरथ जब मूर्च्छित हो गये तब इन्होंने दशरथ को सहारा देते हुये उनसे कहा कि वे भयरहित होकर राम का समाचार पूछें (२. ५७, २८–३१)। इतना कह कर कौसल्या स्वयं मूर्च्छित हो गईं (२. ५७, ३२)। सुमन्त्र ने इनके लिये दिये गये राम के सन्देश को सुनाया (२. ५८, १७–१९)। दशरथ के विलाप करते हुये मूर्च्छित हो जाने पर इन को अत्यधिक भय हो गया (२. ५९, ३४)। बार-बार, काँपते हुये कौसल्या भूमि पर गिर पड़ीं और सुमन्त्र से अपने को राम के पास ले चलने के लिये कहा (२. ६०, १–३)। सुमन्त्र ने इन्हें सान्त्वना दी परन्तु उसका कोई फल नहीं हुआ (२. ६०, ५–२३)। "सुख-समृद्धि में पले अपने दो पुत्रों और पुत्र-वधू सीता को वनवास दे देने के लिये इन्होंने दशरथ की भर्त्सना और सीता के लिये चिन्ता प्रकट की। इन्होंने यह भी कहा कि एक बार भरत द्वारा सिंहासन का उपभोग कर लिये जाने पर राम उसे कदापि ग्रहण नहीं करेंगे। अन्त में इन्होंने पति और पुत्र दोनों से वियुक्त हो जाने पर घोर विलाप किया (२. ६१, १–२६)।" "किन्तु तत्काल यह अनुभव करके कि इन्होंने दशरथ का अपमान कर दिया है, ये—'धर्मपरा नित्यम्', 'वत्सला परेषु अपि अनृशंसा',—शीघ्र दशरथ के पास गईं और उनके चरणों का स्पर्श कर कहा कि अत्यधिक दुःख-विह्वल हो जाने के कारण ही इनके मुख से ऐसे कटु शब्द निकल गये (२. ६२, ११--१८)।" 'सभार्ये हि गते रामे कौसल्यां कोसलेश्वरः। विवक्षुरसितापाङ्गीं स्मृत्वा दुष्कृतमात्मनः ॥', (२. ६३, ३)। दशरथ की मृत्यु के समय ये उनके पास ही थीं (२. ६४, ७६)। दशरथ की मृत्यु हो जाने पर पुत्रशोक से आक्रान्त कौसल्या मृतकों की भाँति श्रीहीन होकर पड़ी थीं और प्रातःकाल समय से नहीं उठ सकीं (२. ६५, १६–१७)। ये करुण क्रन्दन की तीव्र ध्वनि सुन कर उठीं किन्तु फिर 'हा नाथ!' कह कर पुनः पृथिवी पर गिर पड़ीं (२. ६५, २१–२३)। छाती पीट-पीट कर घोर विलाप करने लगीं. (२. ६५, २९)। मृत राजा दशरथ के मस्तक को अपनी गोद में रख कर इन्होंने कैकेयी के प्रति आक्षेपयुक्त वचन कहे और फिर स्वयं सती हो जाने का निश्चय प्रकट किया (२. ६६, २–१२)। मन्त्रियों ने इन्हें परिचारिकाओं द्वारा दशरथ के शव से दूर हटवा

दिया (२. ६६, १३)। भरत ने दूतों से 'आर्या धर्मनिरता धर्मज्ञा धर्मवादिनी', कौसल्या का समाचार पूछा (२. ७०, ८)। भरत ने कैकेयी से कहा : 'कौसल्या और सुमित्रा भी मेरी माता कहलाने वाली तुझ कैकेयी को पाकर पुत्रशोक से पीड़ित हो गई, अतः अब उनका जीवित रहना अत्यन्त कठिन है।' (२. ७३, ८)। भरत ने कहा कि ये कैकेयी को अपनी बहन के समान ही समझती थीं (२. ७३, १०) । 'कौसल्यां धर्मसंयुक्ताम्', (२. ७४, १२)। 'एक पुत्रा च .साध्वी', (२. ७४, २९)। भरत ने कैकेयी को यह बताने का प्रयास किया कि उसने एकमात्र पुत्र को वन में भेज कर कौसल्या को कितना कष्ट पहुँचाया है (२. ७४, १२–२९)। भरत की वाणी सुन कर इन्होंने उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की (२. ७५, ५–६)। यह काँपते पैरों से भरत की ओर बढ़ीं (२. ७५, ७)। भरत और शत्रुघ्न इनके गले से लग गये (२. ७५, ९)। अत्यन्त शोकविह्वल होकर इन्होंने भरत को निष्कण्टक राज्य करने के लिये कहा (२. ७५, १०–१६)। "भरत द्वारा शपथपूर्वक अपने को निर्दोष सिद्ध करने पर इन्होंने भरत से कहा : 'तुम्हारे शपथ खाने से मेरा दुःख और बढ़ रहा है। यह सौभाग्य की बात है कि शुभ लक्षणों से सम्पन्न तुम्हारा चित्त धर्म से विचलित नहीं हुआ। तुम सत्य प्रतिज्ञ हो, अतः तुम्हें सत्पुरुषों का लोक प्राप्त होगा।' इतना कहकर इन्होंने भरत को गोद में ले लिया और अत्यन्त दुःखी होकर पुनः फूट-फूट कर रोने लगीं (२. ७५, ६०–६३)।" इन्होंने दशरथ के चिता की परिक्रमा की (२. ७६, २०)। 'सानुक्रोशां वदान्यां च धर्मज्ञां च यशस्विनीम्। कौसल्यां शरणं यामः सा हि नोऽस्ति ध्रुवा गतिः ॥', (२. ७८, १५)। राम को लौटाने के लिये भरत के साथ यह भी वन गईं (२. ८३, ६)। जब गुह की बातें सुन कर भरत मूर्च्छित हो गये तो। इन्होंने भी उनको सहारा दिया (२. ८७, ६)। इन्होंने भरत को अपनी गोद में चिपका लिया (२. ८७, ७) । 'तपस्विनी', (२, ८७, ८)। "इन्होंने भरत से पूछा : 'तुम्हारे शरीर को कोई रोग तो कष्ट नहीं पहुँचा रहा है। मैं तुम्हीं को देख कर जीवित हूँ। तुमने राम, लक्ष्मण और सीता के सम्बन्ध में कोई अप्रिय बात तो नहीं सुनी है।' (२. ८७, ९–११)।" भरत ने इन्हें सान्त्वना दी (२. ८७, १२)। भरत ने इन्हें भी वह कुश-समूह दिखाया जिस पर श्रीराम सोये थे (२. ८८, २)। गुह की नाव पर भरत आदि के साथ यह भी बैठीं (२. ९९, १३)। भरद्वाज के आश्रम से चलने के पूर्व इन्होंने सुमित्रा के हाथ का सहारा लेकर ऋषि को प्रणाम किया (२. ९२, १५–१६)। भरद्वाज से भरत ने इनका परिचय कराया ((२. ९२, २०–२२)। राम को देखने की आकांक्षा से यह प्रसन्नचित्त हो रथ पर बैठीं (२. ९२,३६)। राम ने भरत से इनका कुशल समाचार पूछा (२. १००, १०)। वसिष्ठ के साथ श्री

राम को देखने गईं (२. १०४, १)। "मन्दाकिनी के तट पर राम और लक्ष्मण के स्नान करने का घाट देख कर इनकी आखों से आंसू की धारा बह चली। इन्होंने सुमित्रा से कहा कि लक्ष्मण इसी घाट से राम के लिये जल ले जाया करते होंगे। फिर भी, इन्होंने कहा कि लक्ष्मण इन क्लेशों के योग्य नहीं हैं (२. १०४, २–७)।" "आगे चल कर इन्होंने राम द्वारा अपने पिता को दिये इंगुदी फलों के पिण्ड को देखा जो दक्षिणाग्र कुश पर रक्खा था। उस समय इन्होंने सुमित्रा आदि से कहा : 'दशरथ अनेक प्रकार के उत्तम भोज्य पदार्थों का भोग कर चुके हैं, अतः उनके लिये इंगुदी-फल का पिण्ड कैसे उपयुक्त हो सकता है। यह देख कर मुझे इस जनश्रुति का स्मरण हो रहा है कि मनुष्य जो अन्न खाता है, उसके देवता भी उसी अन्न को ग्रहण करते हैं।' (२ १०४, ८–१५)।" राम को देख कर इनके नेत्रों से अश्रुओं की धारा बह निकली (२. १०४, १६–१७)। श्रीराम ने कौसल्या तथा अन्य माताओं को देखते ही उनके चरणों का स्पर्श किया, और कौसल्या आदि स्नेहवश अपने हाथ से राम की पीठ से धूल पोंछने लगीं (२. १०४, १८–१९)। लक्ष्मण के प्रति भी इन्होंने वैसा ही व्यहार किया (२. १०४, २०–२१)। सीता को अपने गले से लगाते हुये उनकी दशा पर अत्यन्त शोक प्रकट किया (२. १०४, २३–२६)। अत्यधिक शोकविह्वल होने के कारण ये राम के सम्मुख कुछ बोल नहीं सकीं; श्रीराम भी इन्हें तथा अन्य माताओं को प्रणाम करके रोते हुये अपनी कुटिया में चले गये (२. ११२, ३१)। सीताहरण के कारण विलाप करते हुये श्रीराम ने इनका स्मरण किया (४. १, ११२)। श्रीराम के अयोध्या लौटने पर ये रथ में बैठ कर उनके स्वागत के लिये आईं (६. १२७, १५)। इन्होंने वानर-स्त्रियों को वस्त्राभूषणों से सुसज्जित किया (६. १२८, १८)। शत्रुघ्न के राज्याभिषेक के समय उसमें सक्रिय सहयोग दिया (७. ६३, १६–१७)। इनकी मृत्यु (७. ९९, १५)।

कौस्तुभ—एक मणि का नाम है जो सागर-मन्थन के समय सागर से प्रकट हुई थी (१. ४५, ३९)।

क्रतु, मरीचि के बाद हुये एक प्रजापति का नाम है (३. १४, ८)। इल को पुरुषत्व प्राप्त कराने के सम्बन्ध में जब बुध अपने मित्रों से परामर्श कर रहे थे तो ये भी उनके आश्रम में उपस्थित हुये (७. ९०, ९)।

क्रथन, इन्द्र के समान पराक्रमी और देवासुर संग्राम के समय देवताओं की सहायता के लिये अग्नि देव द्वारा एक गन्धर्व-कन्या के गर्भ से उत्पन्न एक वानर यूथपति का नाम है। यह कुवेर के साथ ही विहार करता हुआ उसी पर्वत पर रहता था जिस पर कुवेर का निवास था। यह अत्यन्त तेजस्वी और

बलवान था और आत्मप्रशंसा नहीं करता था (६. २७, २०–२३)।

क्रोधन, रावण को युद्ध के लिये ललकारते रहनेवाले एक वानर यूथपति का नाम है जिसके पास ६० लाख वानर सैनिक थे (६. २६, ४२–४३)।

क्रोधवशा, दक्ष की पुत्री का नाम है जो कश्यप को विवाहित थी (३. १४, १०–१२)। इसने कश्यप के पुत्र-सम्बन्धी वरदान को हृदय से ग्रहण नहीं किया (३. १४, १३)। इसने दस कन्याओं को जन्म दिया जिनके नाम इस प्रकार हैं : मृगी, मृगमन्दा, हरि, भद्रमदा, मातङ्गी, शार्दूली, श्वेता, सुरभि, सर्वलक्षणसम्पन्ना सुरसा, और कद्रुका (३. १४, २१–२२)।

१. क्रौञ्च, एक वन का नाम है जो जनस्थान के दक्षिण तीन कोस की दूरी पर स्थित था (३. ६९, ४–५)। ‘यह वन अनेक मेघों के समूह की भाँति श्याम तथा विविध रंगों के सुन्दर पुष्पों से सुशोभित होने के कारण चारों ओर से हर्षोत्फुल्ल प्रतीत होता था। इसके भीतर अनेक पशु-पक्षी निवास करते थे (३. ६९, ६)।” सीता को खोजते हुये श्रीराम और लक्ष्मण इस वन में भी आये (३. ६९, ७–८)। शापग्रस्त यदु इसी वन में आकर रहने लगे (७. ५९, २०)।

२. क्रौञ्च, एक पर्वत का नाम है जो कैलास के उस पार स्थित था। इसकी दुर्गम गुफाओं में देवस्वरूप महर्षिगण निवास करते थे। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये शतबल तथा अन्य वानरों को यहाँ भेजा (४. ४३, २५–२७)। कार्तिकेय ने अपनी शक्ति के प्रहार से इसमें एक छिद्र बना दिया था जिसमें से होकर पक्षी इस दुर्लङ्घ्य पर्वत को पार करते थे (६. १२, ३३)।

क्रौञ्ची, ताम्रा और कश्यप की पुत्री का नाम है जिसने उल्लुओं को जन्म दिया (३. १४, १८)।

क्षीरोद, क्षीर-सागर का नाम है जिसका अमृत प्राप्त करने के लिये देवों और असुरों ने मन्थन किया था (१. ४५, १७)। असंख्य वानर यहाँ से आये (४. ३७, २५)। बादलों की आभावाला यह समुद्र अपनी उठती हुई तरंगों से ऐसा प्रतीत होता था मानों मोतियों का हार पहन रक्खा है—सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को यहाँ भेजा था (४. ४०, ४३–४४)। वालिन् के क्रोध से बचने के लिये भागते हुये सुग्रीव इसके समीप भी आये थे (४. ४६, १५)। सुरभि नामक गाय के दूध की धारा से ही इस सागर का निर्माण हुआ है (७. २३, २१)।

ख

खर, जनस्थान के एक राक्षस का नाम है जिसका श्रीराम ने वध किया था (१. १, ४७)। वाल्मीकि ने इसकी मृत्यु का पूर्व-दर्शन कर लिया था (१. ३, २०)। रण में प्रख्यात यह वीर राक्षस शूर्पणखा का भ्राता था

(३. १७, २२)। शूर्पणखा ने जनस्थान में श्रीराम आदि के आगमन का समाचार देते हुये इसे अपने कुरूप बना दिये जाने का कारण वताया (३. १८, २५–२६)। शूर्पणखा की बात सुन कर यह क्रोधोन्मत्त हो उठा और यह पूछते हुये कि किसने उसे इस प्रकार कुरूप वना दिया है, उस व्यक्ति से प्रतिशोध लेने का वचन दिया (३. १९, १–१२)। इसने १४ राक्षसों को उन तीन व्यक्तियों का मृतक शरीर लाने के लिए भेजा जिनके शरीर के रक्त का शूर्पणखा पान करना चाहती थी (३. १९, २१–२६) । शूर्पणखा को अधिक विलाप करते देखकर इसने कारण पूछते हुये उसे सात्वना देने का प्रयास किया (३. २१, १–५)। शूर्पणखा ने इसे युद्ध के लिये उत्तेजित किया (३. २१, ६–२१)। शूर्पणखा के तिरस्कार करने पर इसने राम और लक्ष्मण का वध करके उनका गरम-गरम रक्त शूर्पणखा को देने का वचन दिया (३. २२, १–५)। इसके मुख से निकली हुई बात को सुनकर शूर्पणखा को अत्यन्त प्रसन्नता हुई और उसने राक्षसों में श्रेष्ठ अपने इस भ्राता की भूरि-भूरि प्रशंसा की (३. २२, ६)। शूर्पणखा की प्रशंसा से उत्साहित होकर इसने अपने सेनापति दूषण से अपनी १४,००० राक्षसों की शक्तिशाली सेना तथा अपने रथ को तैयार करने के लिये कहा (३. २२, ७–११)। जब इसका रथ तैयार हो गया तब उस पर आरूढ़ होकर इसने अपनी सेना को आगे वढ़ने की आज्ञा दी (३. २२, १५–१६)। कुछ समय तक इसका रथ सेना के पीछे-पीछे चलता रहा (३. २२, २१)। तदनन्तर इसने अपने सारथि को रथ आगे बढ़ाने की आज्ञा दी (३. २२, २२–२४)। मार्ग में भयंकर अपशकुनों को देख कर पहले तो यह कुछ विचलित हुआ, किन्तु बाद में उनकी परवाह न करते हुये इसने अपनी सेना कें उत्साहवर्द्धन के निमित्त अपने शौर्य की चर्चा की (३. २३, १६–२५)। राम के समीप पहुँच कर इसने राम को युद्ध के लिये सन्नद्ध देखा (३. २५, १)। अपनी विशाल सेना से घिरे हुये इसने स्वयं राम पर आक्रमण किया (३. २५, २–६)। जब दूषण तथा उसके सैनिकों का वध हो गया तो इसने क्रोध में आकर अपने सेनापतियों को विविध प्रकार के आयुधों से राम पर आक्रमण करने के लिये कहा (३. २६, २३–२५)। ऐसा कहकर अपने सेनापतियों सहित यह श्रीराम की ओर बढ़ा (२. २६, २६–२८)। राम की भीषण संहार-लीला के कारण १४,००० राक्षसों में से केवल यह और त्रिशिरा ही बचे रहे (३. २६, ३५–३७)। अकेले ही श्रीराम से युद्ध करने के लिये वढ़ा (३. २६, ३८)। जब त्रिशिरा ने स्वयं राम से युद्ध करने की इच्छा प्रकट की तो इसने उसे आज्ञा दे दी (३. २७, ६)। त्रिशिरा की मृत्यु के बाद इसने अपने सैनिकों को एकत्र करके स्वयं आक्रमण

का नेतृत्व किया (३. २७, २०)। राम के पराक्रम को देखकर इसका हृदय भयभीत हो उठा (२. २८, १–३)। इसने विविध अस्त्रों से राम पर आक्रमण करते हुये अनेक प्रकार से अपने युद्ध कौशल का परिचय दिया (३. २८, ४–५)। श्रीराम और इसके द्वारा छोड़े गये बाणों से आकाश आच्छादित हो गया (३. २८, ८–९)। इसने नालीक, नाराच, और विकर्णि आदि बाणों द्वारा राम पर आघात किया (३. २८, १०)। उस समय यह पाशधारी यमराज के समान भयंकर प्रतीत हो रहा था (३. २८, ११)। राम को श्रान्त देखकर इसने उनका धनुष काट दिया और उसके बाद एक बाण से उनके हृदय को बींध कर हर्षोल्लास से उछलने लगा (३. २८, १२–१७)। इसने राम के कवच को काट दिया (३. २८, १८)। राम ने इसका ध्वज काट कर गिरा दिया (३. २८, २२)। इसने श्रीराम की छाती में चार बाण मारे (३. २८, २४)। राम ने छः बाणों से इसे आहत किया (३. २८, २६–२७)। राम ने इसके सारथि, रथ के घोड़ों, और रथ को भी काट गिराया (३. २८, २८–३१)। उस समय अपनी गदा लेकर यह धरती पर ही खड़ा होकर युद्ध के लिये उद्यत हुआ (३. २८, ३२)। राम द्वारा कठोर वाणी में सम्बोधित किये जाने पर (३.२९, २–१४) इसने उसकी उपेक्षा करते हुये क्रोधपूर्वक उन्हें युद्ध के लिये ललकारा (३. २९, १५–२४)। ऐसा कह कर इसने श्रीराम पर अपनी गदा फेंकी (३.२९, २५)। जब राम ने इसके कुकृत्यों की चर्चा करते हुए इसे फटकारा तो इसने उनके शब्दों की उपेक्षा करते हुये उन पर एक विशाल साल-वृक्ष से प्रहार किया (३. ३०, १३–१८)। राम की भीषण बाण-वर्षा से इसके शरीर से रक्त की धारा बहन लगी (३. ३०, २०–२१)। यह राम की ओर झपटा (१. ३०, २२)। श्रीराम ने इन्द्र द्वारा प्रदत्त एक बाण से इसके हृदय को बींध कर इसका वध कर दिया (३. ३०, २४–२८)। रावण ने इसे १४,००० राक्षसों की सहायता से दण्डकारण्य पर शासन करने के लिये नियुक्त किया था (७. २४, ३६–४२)।

ग

गङ्गा, उत्तर भारत की प्रख्यात नदी का नाम है। शृङ्गवेरपुर नामक नगर इसके तटपर स्थित था (१. १, २९)। तमसा नदी इससे बहुत दूर नहीं थी (१. २, ३)। श्रीराम द्वारा इस नदी को पार करने की घटना का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १५)। गङ्गा और सरयू नदी के संगम पर अनेक ऋषियों के आश्रम थे : 'तौ प्रयान्तौ महावीर्यौ दिव्यां त्रिपथगां नदीम् । ददृशाते ततस्तत्र सरय्वाः संगमे शुभे ॥', (१. २३, ५–६)। पूर्वकाल में इसी स्थान पर भगवान् स्थाणु (शिव) तपस्या करते थे (१. २३,

१०)। शिव ने यहीं कन्दर्प को भस्म कर के राख बना दिया था (१. २३, १०–१४)। राम और लक्ष्मण को लेकर विश्वामित्र ने नौका द्वारा इस नदी को पार किया था (१. २४, ४)। राम और लक्ष्मण ने इसे प्रणाम किया (१. २४, १०)। यह विश्वामित्र के सिद्धाश्रम के उत्तर में स्थित थी (१. ३१, १५)। विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण ने मुनिसेवित, सरिताओं में श्रेष्ठ, हंसों और सारसों से सेवित, पुण्यसलिला जाह्नवी (गङ्गा) का दर्शन किया (१. ३५, ६–७)। "महर्षि विश्वामित्र ने इसी नदी के तट पर निवास करके विधिवत् स्नान तथा पितरों का तर्पण किया। तदनन्तर अग्निहोत्र करके उन्होंने हविष्य का भोजन किया और उसके बाद गङ्गा के तट पर महर्षियों के साथ बैठ गये (१. ३५, ८–१०)।" राम के पूछने पर विश्वामित्र ने गङ्गा की उत्पत्ति की कथा का वर्णन किया (१. ३५, १०–१२)। गङ्गा हिमवान् और मेना की ज्येष्ठ पुत्री थीं, जिनके रूप की भूतल पर कोई तुलना नहीं थी (१. ३५, १३–१६)। कुछ काल के पश्चात् देवकार्य की सिद्धि के लिये देवताओं ने गङ्गा को, जो आगे चलकर त्रिपथगा नदी के रूप में स्वर्ग से अवतीर्ण हुईं, गिरिराज हिमवान् से माँगा (१. ३५, १७)। त्रिभुवन का हित करने की इच्छा से हिमवान् ने स्वच्छन्द पथ पर विचरनेवाली अपनी लोकपावनी पुत्री गङ्गा को देवताओं को दे दिया (१. ३५, १८)। गङ्गा को प्राप्त करके देवता प्रसन्न हो चले गये (१. ३५, १९)। 'एते ते शैलराजस्य सुते लोकनमस्कृते। गङ्गा च सरितां श्रेष्ठा उमा देवी च राघव ॥', (१. ३५, २२)। 'सुरलोकं समारूढा विपापा जलवाहिनी', (१. ३५, २३)। 'कथं गङ्गा त्रिपथगा विश्रुता सरिदुत्तमा', (१. ३६, ४)। ब्रह्मा ने बताया कि देवों के सेनापति का जन्म गङ्गा के गर्भ से होगा (१. ३७, ७–८)। "अग्नि के अनुरोध पर इन्होंने शिव के तेज को धारण करना स्वीकार कर लिया। तदनन्तर जब इन्होंने दिव्य रूप धारण कर लिया तो अग्नि ने इनको सब ओर से उस रुद्र-तेज से अभिषिक्त कर दिया जिससे इनके समस्त स्रोत परिपूर्ण हो गये (१. ३७, १२–१४)।" उस समय इन्होंने अग्नि से कहा : 'आपके द्वारा स्थापित किये गये इस तेज को धारण करने में मैं असमर्थ हूँ', (१. ३७, १५)। तदनन्तर अग्नि के आदेश पर इन्होंने अपने गर्भ को हिमवान् पर्वत के पार्श्वभाग में स्थापित कर दिया (१. ३७, १७–१८)। गरुड़ ने अंशुमान् से उनके चाचाओं का गङ्गा के जल से तर्पण करने के लिये कहा जिससे उन लोगों को स्वर्ग प्राप्त हो (१. ४१, १९–२०)। गङ्गा को भूतल पर लाने का उपाय सोचने में सगर असमर्थ रहे (१. ४१, २५)। इन्हें भूतल पर लाने के उद्देश्य से भगीरथ ने घोर तपस्या की (१. ४२, १२)। भगीरथ ने ब्रह्मा से

यह वरदान माँगा कि सगर-पुत्रों की भस्म गङ्गा के जल से सिंचित हो (१. ४२, १८–१९)। भगीरथ की बात सुनकर ब्रह्माजी ने उनसे कहा कि गङ्गा के गिरने का वेग यह पृथिवी नहीं सहन कर सकेगी; अतः उन्हें शिव को गङ्गा को धारण करने के लिये तैयार करने का परामर्श दिया (१. ४२, २३–२४)। राजा भगीरथ से ऐसा कहकर ब्रह्मा ने गङ्गा से भी भगीरथ पर अनुग्रह करने के लिये कहा (१. ४२, २५)। ज्योंही शिव ने गङ्गा को अपने मस्तक पर धारण करने की स्वीकृति दे दी, त्यों ही सर्वलोक नमस्कृता हैमवती गङ्गा विशाल रूप धारण करके अत्यन्त दुःसह वेग के साथ आकाश से शिव के मस्तक पर गिर पड़ीं (१. ४३, ३–५)। उस समय गङ्गा ने यह विचार किया था कि वे अपने दुर्धर्ष वेग से शंकर को लेकर पाताल में प्रवेश कर जायेंगी (१. ४३, ६)। परन्तु इनके अभिप्राय को जानकर शिव ने इन्हें अपने जटा-जाल में ही वर्षों तक उलझा रक्खा (१. ४३, ७–९)। भगीरथ की प्रार्थना पर शिव ने गङ्गा को विन्दु-सरोवर में छोड़ दिया (१. ४३, १०–११)। वहाँ छूटते ही गङ्गा की सात धारायें हो गईं, जिनमें से ह्लादिनी, पावनी और नलिनी पूर्व दिशा की ओर, तथा सुचक्षु, सीता और सिन्धु पश्चिम दिशा की ओर चली गईं, जब कि सातवीं धारा भगीरथ के पीछे-पीछे चलने लगी (१. ४३, १०–१४)। शिव के मस्तक से गङ्गा की वह जलराशि महान कल-कल नाद के साथ तीव्र गति से प्रवाहित हुई (१. ४३, १६)। मत्स्य, कच्छप, और शिशुमार झुण्ड के झुण्ड उसमें गिरने लगे (१. ४३, १७)। उस समय ऋषि, गन्धर्व, यक्ष, सिद्ध और देवता विमानों, घोड़ों और हाथियों पर बैठकर आकाश से पृथिवी पर आई हुई गङ्गा को देखने लगे (१. ४३, १८–२०)। गङ्गा की वह धारा कहीं तीव्र, कहीं टेढी, और कहीं चौड़ी होकर, कहीं नीचे की ओर और कहीं ऊपर की ओर, तथा कहीं समतल भूमि से होकर बह रही थी (१. ४३, २३–२६)। उस समय भूतलवासी ऋषि और गन्धर्व भगवान शिव के मस्तक से गिरे उस जल को पवित्र समझ कर उसमें आचमन करने लगे (१. ४३, २७)। जो शापभ्रष्ट होकर आकाश से पृथिवी पर आ गये थे वे गङ्गा के जल में स्नान कर के निष्पाप हो पुनः अपने-अपने लोकों को चले गये (१. ४३, २८–२९)। उस प्रकाशमान जल के सम्पर्क से आनन्दित हुये सम्पूर्ण जगत् को सदा के लिये प्रसन्नता हुई और सभी लोग गङ्गा में स्नान करके पापहीन हो गये (१. ४३, ३०)। "उस समय भगीरथ का रथ आगे-आगे चल रहा था, उसके पीछे गङ्गा थीं, और देवता, ऋषि, दैत्य, दानव, राक्षस, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, नाग, सर्प, तथा अप्सरायें गंगा के साथ चल रहे थे। सब प्रकार के

जल-जन्तु भी गङ्गा की जलराशि के साथ सानन्द चल रहे थे (१. ४३, ३१–३३)।" गङ्गा अपने जल-प्रवाह से जह्नु के यज्ञ-मण्डप को वहा ले गईं जिस पर कुपित होकर उन्होंने गङ्गा के समस्त जल को पी लिया (१. ४३,३४–३५)। जब देवताओं, गन्धर्वों, और ऋषियों ने गङ्गा को उनकी (जह्नु की) पुत्री वना उन्हें प्रसन्न किया तब उन्होंने अपने कान के छिद्रों द्वारा गङ्गा को पुनः प्रकट कर दिया—इसीलिये गङ्गा का नाम जाह्नवी भी पड़ा (१. ४३, ३५–३८)। वहाँ से पुनः भगीरथ के रथ का अनुसरण करती हुई गङ्गा ने सगर-पुत्रों द्वारा खोदे गये रसातल के मार्ग में प्रवेश करके सगर-पुत्रों की भस्म-राशि को आप्लावित कर दिया जिससे वे सभी राजकुमार निष्पाप हो कर स्वर्ग पहुँच गये (१. ४३, ३९–४३)। सगर-पुत्रों की भस्म-राशि जब गङ्गा के जल से आप्लावित हो गई तब वहाँ भगीरथ के सम्मुख ब्रह्मा उपस्थित हुये (१. ४४, २)। "ब्रह्मा ने गङ्गा को भगीरथ की ज्येष्ठ पुत्री कहते हुए उनका नाम भागीरथी रक्खा। ब्रह्मा ने कहा कि त्रिपथगा, दिव्या, और भागीरथी, इन तीनों नामों से गङ्गा की प्रसिद्धि होगी (१. ४४, ५–६)।" 'गङ्गां प्रर्थयता', (१. ४४, ९)। 'गङ्गावतरणम्'. (१. ४४, १३)। 'गङ्गा', (१. ४४, २०)। 'गङ्गावतरण शुभम्', (१. ४४, २२)। श्रीराम, लक्ष्मण और विश्वामित्र ने गङ्गा पार की (१. ४५, ९)। गङ्गा का वर्णन (२. ५०, १२–२६)। 'तराम जाह्नवीं सौम्य शीघ्रगां सागरंगमाम्', (२. ५२. ३)। सीता और लक्ष्मण ने इन्हें प्रणाम किया (२. ५२, ७९)। सीता ने गङ्गा से प्रार्थना की (२. ५२, ८३)। 'ततस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता। यक्ष्ये प्रमुदिता गङ्गे सर्वकामसमृद्धिनी ॥', (२. ५२, ८५)। 'अनघा', (२. ५२, ९१)। निर्वासित राम, सीता, और लक्ष्मण ने ऋङ्गवेरपुर के निकट गङ्गा को पार किया (२. ५२, ९२)। 'महानदीम्', (२. ५२, १०१)। राम इत्यादि उस प्रदेश की ओर बढ़े जहाँ गङ्गा और गमुना का संगम था (२. ५४, २)। गङ्गा और यमुना की धाराओं के मिलने से उत्पन्न शब्द को सुनकर श्रीराम ने यह जान लिया कि वे लोग अव दोनों नदियों के संगम पर पहुँच गये हैं (२. ५४, ६)। संगम पर ही महर्षि भरद्वाज का आश्रम स्थित था (२. ५४, ८)। 'अवकाशो विवक्तोऽयं महानद्योः समागमे। पुण्यश्च रमणीयश्च वसत्विह भवान् सुखम् ॥', (२. ५४. २२)। केकय देश को भेजे गये वसिष्ठ के दूतों ने हस्तिनापुर के निकट गङ्गा को पार किया (२. ६८, १३)। केकय से लौटते समय भरत गङ्गा और सरस्वती के सङ्गम से होकर आये थे (२. ७१, ५)। भरत ने प्राग्वट के निकट गङ्गा को पार किया (२. ७१, १०)। भरत द्वारा बनवाया गया राजमार्ग गङ्गा के तट से होकर गया था

(२. ८०, २१)। चित्रकूट जाते समय भरत ने गङ्गा के तट पर एक दिन विश्राम किया (२. ८३, २६)। भरत ने गुह की सहायता से गङ्गा को पार किया (२. ८९, २१)। चित्रकूट से लौटते समय भरत ने गङ्गा को पुनः पार किया (२. ११३, २१–२२)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने विनत को गङ्गा के क्षेत्र में भेजा (४. ४०, २०)। जब श्रीराम के सम्मुख मूर्त्तिमान सागर उपस्थित हुआ तो उसके साथ गङ्गा आदि नदियाँ भी थीं (६. २२, २२)। राम का पुष्पक विमान गङ्गा के ऊपर से होकर गया (६. १२३, ५१)। 'दशैव च सहस्राणि योजनानां तथैव च। गङ्गा यत्र सरिच्छ्रेष्ठा नागा वै कुमुदादयः ॥', (७. २३घ, ८)। 'गङ्गातोयेषु क्रीडन्ति पुण्यं वर्षन्ति सर्वशः', (७. २३घ, ९)। 'अष्टमं वायुमार्गं तु यत्र गङ्गा प्रतिष्ठिता आकाशगङ्गा विख्याता आदित्यपथसंस्थिता ॥', (७, २३घ, १४)। सीता को वन में छोड़ने के लिये ले जाते समय लक्ष्मण ने सीता के साथ गङ्गा को पार किया (७. ४६, ३३)।

गज—इन्होंने सुग्रीव के अभिषेक में भाग लिया था (४. २६, ३५)। किष्किन्धा जाते समय लक्ष्मण ने मार्ग में इनके अत्यन्त सुन्दर भवन को देखा (४. ३३, ९)। इन बलवान वीर ने सुग्रीव के पास तीन करोड़ वानर भेजे थे (४. ३९, २६)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव इन्हें दक्षिण दिशा में भेजना चाहते थे (४. ४१, ३)। पानी की खोज में हनुमान् आदि के साथ इन्होंने ऋक्षबिल नामक गुफा में प्रवेश किया (४. ५०, ५–८)। जब अङ्गद ने वानरों से समुद्र लाँघने की उनकी शक्तियों के सम्बन्ध में पूछा तो इन्होंने अपनी शक्ति दस योजन बताया (४. ६५, २–३)। राम की वानरी सेना के एक भाग की रक्षा का भार इन पर भी था (६. ४, ३४)। इन्होंने अङ्गद के नेतृत्व में दक्षिणी फाटक पर युद्ध किया (६. ४१, ३९–४०)। अपनी सेना की रक्षा करते हुये ये इधर से उधर दौड़ रहे थे (६. ४२; ३१)। इन महाबली ने तपन से द्वन्द्व युद्ध किया (६. ४३, ९)। ये वानर-सेना की अत्यन्त सतर्कतापूर्वक रक्षा कर रहे थे (६. ४७, २–४)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ४४)। राम की सहायता के लिये ही देवताओं ने इनकी सृष्टि की थी (७. ३६, ५०)।

गन्धमादन, कुवेर-पुत्र एक तेजस्वी वानर का नाम है (१. १७, १२)। इसने सुग्रीव के राज्याभिषेक-समारोह में भाग लिया था (४. २६, ३४)। सुग्रीव के आमन्त्रण पर यह करोड़ों वानरों को साथ लेकर आया (४.३९, २९)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव इसे दक्षिण दिशा में भेजना चाहते थे (४. ४१, ४)। सीता की खोज के लिये एक बार पुनः दक्षिणी क्षेत्रों में जाने

के अङ्गद के प्रस्ताव का इसने समर्थन किया (४. ४९, ११–१४)। इसने एक बार पुनः विन्ध्य क्षेत्रों के वनों तथा रजत पर्वत पर सीता की उस समय तक खोज की जब तक भूख-प्यास से त्रस्त होकर श्रान्त नहीं हो गया (४. ४९, १५–२०)। जल की खोज में अन्य वानरों सहित इसने भी ऋक्ष-बिल नामक गुफा में प्रवेश किया (४. ५०, १--८)। सागर-लङ्घन की शक्ति के सम्बन्ध में अङ्गद द्वारा पूछने पर इसने अपनी पचास योजन तक कूदने की शक्ति बताई (४. ६५, ६)। इसे वानर-सेना के वाम भाग की रक्षा का भार सौंपा गया: 'गन्धहस्तीव दुर्धर्षस्तरस्वी गन्धमादनः। यातु वानरवाहिन्याः सव्यं पार्श्वमधिष्ठितः ॥', (६. ४, १८; देखिये ६. २४, १६ भी)। सेना की रक्षा करते हुये यह इधर से उधर दौड़ रहा था (६. ४२, ३१)। इसने कुम्भकर्ण पर आक्रमण किया किन्तु स्वयं आहत हो गया (६. ६७, २४–२८)। इन्द्रजित् ने इसे आहत किया (६. ७३, ४३)। इसने अन्य तीन वानरों के साथ इन्द्रजित के रथ के अश्वों को मार कर रथ को भी ध्वस्त कर दिया (६. ८९, ४८–५१)। राम ने इसका आदर-सत्कार किया (७. ३९, २०)।

गन्धर्व, (बहु०)—ये दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में उपस्थित हुये थे (१. १५, ४)। इन लोगों ने रावण के अत्याचारों के विरुद्ध ब्रह्मा से शिकायत की (१. १५, ६–११)। ब्रह्मा ने रावण को यह वरदान दे रक्खा था कि वह किसी गन्धर्व के द्वारा नहीं मारा जा सकता (१. १५, १३)। रावण ने इन पर भीषण अत्याचार किया (१. १५, २२)। जब ये लोग नन्दनवन में क्रीड़ा कर रहे थे तब रावण ने इन लोगों को स्वर्ग से भूमि पर गिरा दिया (१, १५, २३)। ये लोग विष्णु की शरण में गये (१. १५, २५)। इन लोगों ने विष्णु की स्तुति की (१. १५, ३२)। ब्रह्मा ने देवताओं से कहा कि वे गन्धर्व-कन्याओं से वानर-सन्तान उत्पन्न करें (१. १७, ५)। राम इत्यादि के जन्मोत्सव के समय इन लोगों ने भी प्रसन्न होकर गायन किया (१. १८, १७)। ये लोग जनक के धनुष की प्रत्यञ्चा चढ़ाने में असमर्थ रहे (१. ३१, ९)। सगर-पुत्रों के भूमि खोदने से भयभीत होकर देवताओं सहित इन लोगों ने भी ब्रह्मा के पास जाकर उनसे सगर-पुत्रों के विरुद्ध शिकायत की (१. ३९, २३–२६)। गङ्गावतरण के समय ये लोग भी उपस्थित थे (१. ४३, १७)। इन लोगों ने गङ्गा के पवित्र जल का स्पर्श किया (१, ४३, २५)। गङ्गा की धारा के साथ-साथ ये लोग भी चले (१. ४३, ३२)। अहल्या के शाप-मुक्त होने पर ये लोग भी प्रसन्न हुये (१. ४९, १९)। वसिष्ठ का आश्रम इन लोगों के निवास से सुशोभित हो रहा था (१. ५१, २४)। जब विश्वामित्र ने वसिष्ठ पर प्रहार करने के लिये ब्रह्मास्त्र का सन्धान किया

तो ये लोग अत्यन्त भयभीत हो उठे (१. ५६, १५)। इन लोगों ने ब्रह्मा के पास जाकर उनसे विश्वामित्र का मनोरथ पूर्ण करने की प्रार्थना की (१. ६५, ९–१८)। राम के विवाहोत्सव के समय इन लोगों ने गायन किया (१. ७३, ३५)। राम और परशुराम के द्वन्द्व-युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी एकत्र हुये (१. ७६, १०)। जब दशरथ ने कैकेयी को वर देने की प्रतिज्ञा की तो उसने गन्धर्वों से भी साक्षी रहने के लिये कहा (२. ११, १४–१६)। भरत की सेना के सत्कार में भरद्वाज ने इन लोगों की सहायता का भी आवाहन किया था (२. ९१, १६)। भरद्वाज के आश्रम में इन लोगों ने गायन किया (२. ९१, २६)। दूसरे दिन प्रातःकाल महर्षि भरद्वाज से आज्ञा लेकर ये लोग अपने लोक चले गये (२. ९१, ८२)। ये लोग अगस्त्य के आश्रम को सुशोभित करते थे (३. ११, ९०)। खर के विरुद्ध युद्ध के समय इन लोगों ने श्रीराम की सफलता के लिये प्रार्थना की (३. २३, २७–२९)। खर और राम के अद्भुत युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (३. २४, १९–२३)। खर की सेना के प्रथम आक्रमण से आहत श्रीराम को देखकर इन लोगों को अत्यन्त दुःख हुआ (३. २५, १५–१६)। ये लोग रावण को युद्ध में पराजित नहीं कर सके थे (३. ३२, ६)। रावण को यह वरदान था कि उसकी गन्धर्वों के हाथ से मृत्यु नहीं हो सकेगी (३. ३२, १८–१९)। रावण उन कुञ्जों के निकट आया जिनमें गन्धर्व-गण विहार करते थे (३. ३५, १४. २०)। यें लोग जनस्थान को सुशोभित करते थे (३. ६७, ६)। पश्चिमी समुद्र के बीच में स्थित पारियात्र पर्वत पर चौबीस करोड़ गन्धर्व—तपस्विनः, अग्निसंकाशाः, घोराः, पापकर्मणः, पावकर्चिप्रतीकाशाः—निवास करते थे (४. ४२, १९–२०)। 'दुरासदा हि ते वीरा सत्त्ववन्तो महाबलाः ॥ फलमूलानि ते तत्र रक्षन्ते भीमविक्रमाः ।', (४. ४२, २१–२२)। सोमाश्रम इन लोगों से सेवित था (४. ४३, १४)। ये उत्तर-कुरु क्षेत्र में निवास करते थे (४. ४३, ४९)। जब हनुमान् समुद्र लाँघने के लिये महेन्द्र गिरि पर स्थित हुये तो मधुपान के संसर्ग से उद्धत चित्तवाले गन्थर्वो ने उस पर्वत को छोड़ दिया (४. ६७, ४५)। महेन्द्र-गिरि इनसे सेवित था (५. १, ६)। जब हनुमान् समुद्र को लाँघ रहे थे तो उस समय इन लोगों ने उन पर पुष्प-वर्षा की (५. १, ८४)। हनुमान् के बल-पराक्रम की परीक्षा लेने के लिये इन लोगों ने सुरसा से हनुमान् का मार्ग अवरुद्ध करने के लिये कहा (५. १, १४४–१४७)। ये लोग अन्तरिक्ष में विचरण करते थे (५. १, १७८)। हनुमान् के द्वारा लङ्का को भस्म हुई देखकर इन लोगों ने आश्चर्य किया (५. ५४, ५०)। लङ्का में हनुमान् की सफलता पर ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (५. ५४, ५२)।

यें लोग अरिष्ट पर्वत पर निवास करते थे (५. ५६, ३५)। जब हनुमान् के भार से यह पर्वत धँसने लगा तो ये लोग उसपर से हट गये (५. ५६, ४७)। इनकी आकाशरूपी समुद्र के कमल के साथ तुलना की गई है (५. ५७, १)। जब सागर पर पत्थरों का पुल बन गया तो ये लोग भी उसे देखने के लिये आये (६. २२, ७५) । जब राम ने कुम्भकर्ण का वध कर दिया तो ये लोग अत्यन्त हर्षित हुये (६. ६७, १७३) । मकराक्ष और राम के अद्भुत युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (६. ७९, २५) । जब इन्द्रजित् लक्ष्मण के साथ युद्ध करने लगा तो इन लोगों ने जगत् के कल्याण के लिये प्रार्थना की (६. ८९, ३८) । ये लोग इन्द्रजित् के विरुद्ध युद्ध कर रहे लक्ष्मण की रक्षा कर रहे थे (६. ९०, ६४) । इन्द्रजित् का वध हो जाने पर ये लोग अत्यन्त हर्षित हुये (६. ९०, ७६) । उस समय ये लोग हर्षित होकर नृत्य करने लगे (६. ९०, ८६) । इन्द्रजित् की मृत्यु हो जाने पर इन लोगों ने शान्ति की साँस ली (६. ९०, ८९) । इन लोगों ने श्रीराम के पराक्रम की सराहना की (६. ९३, ३६) । जब रथासीन रावण से युद्ध करने के लिये श्रीराम पैदल खड़े हुये तो इन लोगों ने उसे बराबरी का युद्ध नहीं माना (६. १०२, ५) । जब रावण ने श्रीराम को सहस्रों बाणों से पीड़ित कर दिया तब ये लोग अत्यन्त दुःखी हो उठे (६. १०२, ३१) । राम और रावण के अन्तिम युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (६. १०२, ४५; १०६, १८) । जब श्रीराम रावण के साथ युद्ध कर रहे थे तो इन लोगों ने गायों और ब्राह्मणों की सुरक्षा के लिये प्रार्थना की (६. १०७, ४८–४९) । इन लोगों ने राम और रावण के अन्तिम युद्ध को देखा (६. १०७, ५१) । रावण-वध का दृश्य देखने के पश्चात् उसी की शुभ चर्चा करते हुये ये लोग अपने विमानों से अपने स्थानों को लौट गये (६. ११२, १–४) । इन लोगों ने सीता के अग्नि में प्रवेश के दृश्य को देखा (६. ११६, ३१. ३३) । श्रीराम के राज्याभिषेक के समय इन लोगों ने गायन किया (६. १२८, ७२) । जब विष्णु ने माल्यवान आदि राक्षसों का वध करने के लिये प्रस्थान किया तो इन लोगों ने विष्णु की स्तुति की (७. ६, ६७) । मन्दाकिनी का तट इनसे सेवित था (७. ११, ४३) । यक्षों और राक्षसों के युद्ध के समय ये भी उपस्थित थे (७. १५, ६) । यम और रावण के संघर्ष को देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (७. २२, १७) । जब इन्द्र रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये निकले तो ये लोग अनेक प्रकार के वाद्ययंत्र बजाने लगे (७. २८, २६) । अपनी स्त्रियों के साथ ये लोग विन्ध्य-पर्वत पर आये (७. ३१, १६) । जब वायु ने बहना बन्द कर दिया तो ये लोग ब्रह्मा की शरण में गये (७. ३५, ५३) । वायु को

प्रसन्न करने के लिये ये लोग भी ब्रह्मा के साथ गये (७. ३५, ६४)। अपने आहत पुत्र को गोद में लिये हुये वायु को देखकर इन लोगों को उन पर अत्यन्त दया आई (७. ३५, ६५)। इन लोगों ने नारद द्वारा वर्णित कथा को सुना (७. ३७घ, ६)। लवणासुर के प्रहार से शत्रुघ्न के गिरने पर इन लोगों में महान् हाहाकार मच गया (७. ६९, १७)। जब लवणासुर के वध के लिये शत्रुघ्न ने एक दिव्य वाण निकाला तो देवता, असुर, गन्धर्व, और मुनि आदि सहित समस्त जगत् अस्वस्थ होकर ब्रह्मा के पास गया (७. ६९, १६–२१)। देवता, दैत्य, गन्धर्व आदि सभी अत्यन्त भयभीत होकर सदा राजा इल का स्तुति-पूजन किया करते थे (७. ८७, ५–६)। सिन्धु नदी के दोनों तटों पर बसे गन्धर्वों की नगरीं पर तीन करोड़ गन्धर्व शासन करते थे (७. १००, १०–१२)। "अपने देश की रक्षा के लिये इन लोगों ने भरत और युधाजित के विरुद्ध युद्ध किया। इस युद्ध में भरत आदि ने समस्त गन्धर्वों का संहार करके इनके देश पर अपना अधिकार कर लिया (७. १०१, २–९)।" राम को स्वर्गाभिमुख जानकर अनेक गन्धर्व-बालक उनका (राम का) दर्शन करने के लिये आये (७. १०८, १९)। जब श्रीराम परमधाम जाने के लिये सरयू-तट पर आये तो ये लोग भी वहाँ उपस्थित हुये (७. ११०, ७)। विष्णु के लौटने पर इन लोगों ने हर्ष प्रकट किया (७. ११०, १४)।

गन्धर्वी, क्रोधवशा-पुत्री सुरभि की द्वितीय पुत्री का नाम है (३. १४, २७)। यह अश्वों की माता हुई (३. १४, २८)।

गय, एक शक्तिशाली राजा का नाम है जिसने रावण की अधीनता स्वीकार कर ली थी (७. १९, ५)।

गया, एक देश का नाम है जिसके राजा गय थे। गय ने इस देश में यज्ञ करते हुये पितरों के प्रति यह कहावत कही थी : 'बेटा पुत् नामक नरक से पिता का उद्धार करता है, इसीलिये उसे पुत्र कहते हैं। वही पुत्र है जो पितरों की सब ओर से रक्षा करता है। बहुत से गुणवान और बहुश्रुत पुत्रों की इच्छा करनी चाहिये। सम्भव है प्राप्त हुये इन्हीं पुत्रों में से कोई एक भी गया की यात्रा करे।' (२. १०७, ११–१३)।

गरुड—दशरथ का यज्ञकुण्ड एक त्रिभुज के आकार का बना था जो सुवर्णमय पंखोंवाले गरुड़ के समान प्रतीत हो रहा था (१. १४, २९)। वैनतेय (गरुड) पर आरूढ़ होकर विष्णु महाराज दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में पधारे (१. १५, १७)। सगर की दूसरी पत्नी का नाम सुमति था जो अरिष्टनेमि कश्यप की पुत्री और गरुड की बहन थी (१. ३८, ४)। पाताल प्रदेश में अंशुमान ने वायु के समान वेगशाली पक्षिराज गरुड को देखा जो सगर-पुत्रों के

मामा थे (१. ४१, १६)। इन्होंने अंशुमान को गङ्गा के जल से ही अपने पूर्वजों का तर्पण करने का परामर्श दिया (१. ४१, १७–२१)। कौसल्या ने राम से कहा : 'पूर्वकाल में विनता ने अमृत लाने की इच्छावाले अपने पुत्र गरुड के लिये जो मंगल-कृत्य किया था वही मंगल तुम्हें प्राप्त हो।' (२. २५, ३३)। अगस्त्याश्रम में राम ने इनके स्थान को भी देखा (३. १२, २०)। ये विनता के पुत्र थे (३. १४, ३२)। "सिन्धुराज के सागर-तट पर एक विशाल बरगद का वृक्ष था जिस पर एक समय महाबली गरुड एक विशालकाय हाथी और कछुये को लेकर उनका भक्षण करने के लिये आ बैठे। उस समय पक्षियों में श्रेष्ठ महाबली गरुड ने वृक्ष की उस शाखा को अपने भार से तोड़ डाला। उस शाखा के नीचे अनेक वैखानस, माष, वालखिल्य, आदि महर्षि एक साथ ही निवास करते थे। उन पर दया करके धर्मात्मा गरुड ने उस टूटी हुई सौ योजन लम्बी शाखा को, तथा हाथी और कछुये को भी, वेगपूर्वक एक ही पंजे में पकड़ लिया और आकाश में ही उन दोनों जन्तुओं के मांस का भक्षण करके उस शाखा से निषाद-देश का संहार कर डाला। उस समय उक्त महामुनियों को मृत्यु के संकट से बचा लेने के कारण गरुड को अनुपम हर्ष हुआ। (३. ३५, २७–३३)।" इस महान हर्ष से गरुड का पराक्रम दूना हो गया और उन्होंने अमृत ले आने के लिये इन्द्रलोक में जाकर इन्द्रभवन का विध्वंस करके अमृत का हरण कर लिया। (३. ३५, ३४–३५)। इनका भवन लोहित सागर के शालमली वृक्ष के नीचे स्थित और विश्वकर्मा ने स्वयं उसका निर्माण किया था (४. ४०, ३७–३८)। सम्पाति ने अपने को गरुड का वंशज बताया (४. ५८, २६)। जाम्बवान् ने हनुमान् को समुद्रलङ्घन के लिये उत्साहित करते हुये उन्हें महाबली, तीव्रगामी, विख्यात और पक्षियों में श्रेष्ठ गरुड के समान बताया (४. ६६, ४)। जाम्बवान् ने बताया कि उन्होंने गरुड को अनेक बार समुद्र से बड़े-बड़े सर्पों को पकड़ते देखा था (४. ६६, ५)। सीता ने बताया कि केवल तीन ही प्राणी—हनुमान, गरुड और वायु—समुद्र को लाँघ सकते हैं (५. ५६, ९)। इन्द्रजित् द्वारा प्रयुक्त नागपाश में आवद्ध राम और लक्ष्मण को मुक्त कराने के वाद इन्होंने उन लोगों के शरीर को भी स्वस्थ कर दिया (६. ५०, ३६–४०)। राम ने इनकी प्रशंसा करते हुये इन्हें 'रूपसम्पन्नो दिव्यस्रगनुलेपनः। वसानो विरजे वस्त्रे दिव्याभरणभूषितः', कहा और इनसे इनका परिचय पूछा (६. ५०, ४१–४४)। "श्रीराम को उत्तर देते हुये इन्होंने अपने को उनका मित्र बताया और उस कठिन स्थिति का वर्णन किया जो राम के सम्मुख उपस्थित हो गई थी। तदनन्तर इन्होंने बताया कि किस प्रकार राम और लक्ष्मण पाशमुक्त हुये। इसके बाद इन्होंने राम से कहा :

'समस्त राक्षस स्वभाव से ही कुटिल होते हैं, परन्तु शुद्ध स्वभाववाले आप जैसे शूरवीरों का सरलता ही बल है। अतः इसी दृष्टान्त को सामने रखकर आपको रणक्षेत्र में राक्षसों का विश्वास नहीं करना चाहिये।' ऐसा कहकर इन्होंने श्रीराम से विदा ली और वहाँ से चले गये (६. ५०, ४५–६०)।" जब राम ने कुम्भकर्ण का वध कर दिया तो ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. ६७, १७५)। इन्द्रजित् से युद्ध कर रहे लक्ष्मण की ये रक्षा कर रहे थे (६. ९०, ६३)। राम और रावण के अन्तिम युद्ध को देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये (६. १०२, ४३)। जब विष्णु ने माल्यवान् से युद्ध किया तो इन्होंने विष्णु को अपनी पीठ पर वहन किया (७. ६, ६६)। मालिन् ने जब गदा के प्रहार से इनके मस्तक को आहत कर दिया तो ये भी युद्ध करने लगे (७. ७, ३८–३९)। जब पराजित होकर राक्षसगण भागने लगे तो इन्होंने उनका पीछा करते हुये अनेक का वध किया (७. ७, ४६–४८)। जब माल्यवान् ने विष्णु को आहत करने के पश्चात् इन पर आक्रमण किया तो अपने पंखों को तीव्र गति से हिलाते हुये ये विष्णु को दूर उड़ा ले गये (७. ८, १७–१८)। ये छठवें अन्तरिक्ष में निवास करते हैं (७. २३घ, १०–११)। हनुमान् को इनसे भी तीव्रगामी कहा गया है (७. ३५, २६)। सीता के शपथ-ग्रहण को देखने के लिये ये भी राम की सभा में उपस्थित हुये (७. ९७, ९)। श्रीराम के वैष्णव तेज में प्रवेश करने पर यह भी भगवान् का गुणगान करने लगे (७. ११०, १४)।

गर्ग, एक ऋषि का नाम है जो सीता के शपथ-ग्रहण को देखने के लिये राम की सभा में उपस्थित हुये थे (७. ९६, ४)।

गवय, एक वानर यूथपति का नाम है जिन्होंने सुग्रीव के राज्याभिषेक में भाग लिया था (४. २६, ३४)। किष्किन्धा जाते समय लक्ष्मण ने मार्ग में इनके सुन्दर भवन को भी देखा (४. ३३, ९)। इस 'काञ्चन शैलाभ महावीर' वानर यूथपति ने सुग्रीव को पाँच करोड़ वानर दिये (४. ३९, २३)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव इन्हें दक्षिण दिशा में भेजना चाहते थे (४. ४१, ३)। विन्ध्य क्षेत्रों के वनों में सीता को खोजते हुये हनुमान् आदि के साथ जल की खोज में इन्होंने भी ऋक्ष-त्रिल नामक गुफा में प्रवेश किया (४. ५०, १-८)। इन्हें राम की सेना का एक नायक नियुक्त किया गया (६. ४, १६)। 'यस्तु गैरिकवर्णाभं वपुः पुष्यति वानरः। अवमत्य सदा सर्वान्वानरान्बल-दर्पितान् ॥ गवयो नाम तेजस्वी त्वां क्रोधादभिवर्तते। एनं शतसहस्राणिसप्ततिः पर्युपासते ॥', (६. २६, ४६–४७)। अङ्गद के नेतृत्व में इन्होंने दक्षिणी फाटक पर युद्ध किया (६. ४१, ३९–४०)। अपनी सेना की रक्षा करते हूये इधर से उधर दौड़ रहे थे (६. ४२, ३१)। इन्होंने रावण पर भारी शिलाओं से

आक्रमण किया किन्तु स्वयं आहत हुये (६. ५९, ४२–४३)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ५८)। राम के राज्याभिषेक के समय ये पश्चिमी समुद्र से जल लाये।(६. १२८, ५६)। देवों ने राम की सहायता के लिये इनकी सृष्टि की थी (७. ३६, ५०)।

गवाक्ष, एक वानर यूथपति का नाम है जिन्होंने सुग्रीव के राज्याभिषेक में भाग लिया था (४. २६, ३४)। किष्किन्धा जाते समय मार्ग में लक्ष्मण ने इनके भी सुसज्जित भवन को देखा (४. ३३, ९)। लङ्गूर जातिवाले भयंकर पराक्रमी गवाक्ष दस अरब वानरों की सेना सहित •सुग्रीव के पास आये थे (४. ३९, १९)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव इन्हें दक्षिण दिशा में भेजना चाहते थे (४. ४१, ३)। विन्ध्य क्षेत्र के वनों में सीता को ढूँढ़ते हुए हनुमान् आदि वानरों के साथ जल की खोज में इन्होंने भी ऋक्ष-बिल में प्रवेश किया (४. ५०, १–८)। सागरलङ्घन की क्षमता के सम्बन्ध में अङ्गद के पूछने पर इन्होंने अपनी शक्ति बीस योजन बताई (४. ६५, ३)। राम की आक्रमणकारी सेना का इन्हें भी एक नायक बनाया गया (६. ४, १६)। ये काले मुखवाले महाबली लंगूर जाति के वानरों के नायक थे (६. २७, ३२–३३)। अङ्गद के साथ इन्होंने दक्षिणी फाटकपर युद्ध किया (६. ४१, ३९–४०)। लंगूर जाति के विशालकाय, महापराक्रमी वानर 'गवाक्ष, जो देखने में अत्यन्त भयङ्कर थे, एक करोड़ वानरों के साथ श्रीराम के बगल में खड़े हो गये (६. ४२, २८)। अपनी सेना की रक्षा करते हुये ये इधर-से-उधर दौड़ रहे थे (६. ४२, ३१)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत कर दिया (६, ४६, २१)। ये सतर्कतापूर्वक वानर-सेना की रक्षा कर रहे थे (६. ४७, २–४)। इन्होंने भारी शिलाओं से रावण पर आक्रमण किया, परन्तु स्वयं आहत हुये (६. ५९, ४२--४३)। राम के आदेश पर ये फाटकों की सतर्कतापूर्वक रक्षा कर रहे थे (६. ६१, ३८)। इन्होंने कुम्भकर्ण पर आक्रमण किया, परन्तु स्वयं आहत हुये (६. ६७, २४–२८)। इन्द्रजित ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ५८)। महापार्श्व ने इन्हें आहत किया (६. ९८, ११)। देवों ने राम की सहायता के लिये इनकी सृष्टि की थी (७. ३६, ५०)। श्रीराम ने इनका आदर-सत्कार किया (७. ३९, २१)।

गाधि—इनका पुत्रेष्टियज्ञ करने से जन्म हुआ था (१. ३४, ५)। ये परम धार्मिक और विश्वामित्र के पिता थे (१. ३४, ६)। इनकी पुत्री का नाम सत्यवती था (१, ३४, ७)। ये कुशनाभ के पुत्र थे (१. ५१, १९)। इन्होंने रावण की अधीनता स्वीकार कर ली थी (७. १९, ५)।

गान्धार, गन्धर्वों के देश का नाम है जिसे अपने पुत्रों के लिये भरत ने विजित किया था (७. १०१, १०–११)।

गायत्री—राम ने अगस्त्य के आश्रम में इनके स्थान को भी देखा (३. १२, १९) । श्रीराम के परमधाम जाने के समय ये भी उनके साथ थीं (७. १०८, ८) ।

गार्ग्य, पूर्व दिशा के एक महर्षि का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये उपस्थित हुये थे (७. १, २) । "ये अङ्गिरस-पुत्र और केकय-राज युधाजित के पुरोहित थे । केकयराज ने अपने इन अमित तेजस्वी ब्रह्मर्षि पुरोहित को अनेक बहुमूल्य उपहारों के साथ श्रीराम के पास भेजा, और राम ने इनका आदरपूर्वक सत्कार किया (७. १००, १–५) ।" "राम के पूछने पर इन्होंने केकयराज युधाजित् का यह संदेश दिया कि उन्हें (राम को) गन्धर्व-देश को अपने अधीन कर लेना चाहिये (७. १००, ६–१३) । ये भरत की सेना के आगे-आगे चले (७. १००, २०) ।

गालव, पूर्व दिशा के एक महर्षि का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये उपस्थित हुये थे (७. १, २) । मध्यस्थ बनकर इन्होंने रावण और मान्धाता के बीच शान्ति स्थापित की (७. २३ग, ५५–५६) ।

१. गिरिव्रज, कुश के पुत्र, वसु द्वारा स्थापित एक नगर का नाम है, जिसे इसके संस्थापक के नाम पर वसुमती भी कहते थे । यह नगर पाँच पर्वतों से घिरा था । इसके बीच से सोन नदी बहती थी जिसे सुमागधी भी कहते हैं (१. ३२, ६–८) ।

२. गिरिव्रज—केकय देश को भेजे गये वसिष्ठ के दूत इस नगर से भी होकर गये थे (२. ६८, २१–२२) ।

गुह, निषादों के राजा का नाम है जिनसे वनवास के समय श्रीराम शृङ्गवेरपुर में मिले थे । ये श्रीराम के साथ सम्भवतः भारद्वाज-आश्रम तक गये (१. १, २९–३०) । वाल्मीकि ने श्रीराम से इनके मिलन का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १४) । "ये शृङ्गवेरपुर के राजा और श्रीराम के प्रिय सखा थे । इनका जन्म निषाद-कुल में हुआ था । ये शारीरिक शक्ति तथा सैनिक शक्ति की दृष्टि से भी बलवान् थे (२. ५०, ३२) ।" ये अपने बन्धु-बान्धवों तथा वृद्ध मन्त्रियों आदि को लेकर पैदल ही श्रीराम के स्वागत के लिये आये (२. ५०, ३३) । इन्होंने श्रीराम को गले से लगाते हुये उन्हें अनेक प्रकार के भोजनादि दिये (२. ५०, ३५–३९) । श्रीराम ने इनका आलिङ्गन करते हुये इनकी प्रशंसा की (२. ५०, ४०–४६) । इन्होंने अपने सेवकों को श्रीराम के घोड़ों को भोजन और पानी आदि देने का आदेश दिया (२. ५०, ४७) । ये सारी रात लक्ष्मण और सुमन्त्र से बात करते हुये जाग

कर श्रीराम की रक्षा करते रहे (२. ५०, ५०)। इन्होंने श्रीराम की अपने सेवकों सहित रक्षा करने का आश्वासन देते हुये लक्ष्मण से सोने के लिये कहा (२. ५१, २–७)। जब लक्ष्मण ने अपने तथा अपने भ्राता की करुण कथा सुनाई तो इनके नेत्रों से अश्रु छलक पड़े (२. ५१, २७)। जब लक्ष्मण ने इनसे श्रीराम की गङ्गा पार करने की इच्छा के सम्बन्ध में कहा तो इन्होंने अपने सेवकों को नाव तैयार करने की आज्ञा दी (२. ५२, ४–६)। जब नाव आ गई तो इन्होंने विना विलम्ब के ही श्रीराम से उस पर आरूढ़ होने के लिये कहा (२. ५२, ७–९)। राम के कहने पर न्यग्रोध-वृक्ष का दूध लाये (२. ५२, ६९)। जब श्रीराम आदि नौका पर बैठ गये तो इन्होंने अपने सेवकों को नौका खेने का आदेश दिया (२. ५२, ७७)। राम के गङ्गा पार कर लेने पर ये बहुत देरतक सुमन्त्र से वार्त्तालाप करते रहे (२. ५७, १)। इन्होंने सुमन्त्र को विदा किया (२. ५७, ३)। ये शृङ्गवेरपुर पर शासन करते थे (२. ८३, १९–२०)। "भरत की विशाल सेना को देखकर इन्हें राम के प्रति भरत के उद्देश्य पर सन्देह हुआ। अतः इन्होंने अपने सैनिकों को गङ्गा के तट की रक्षा करने का आदेश दिया और कहा कि यदि भरत का उद्देश्य पवित्र हो तो उन्हें सुरक्षित पार उतार दिया जाय (२. ८४, १–९)। ये उपहारों के साथ भरत के पास आये (२. ८४, १०)। भरत के सम्मुख उपस्थित किये जाने पर इन्होंने उनकी सेना का सत्कार करने का आग्रह किया (२. ८४, १५–१८)। इन्होंने राम के प्रति भरत के उद्देश्य के सम्बन्ध में प्रश्न किया (२.८५, ६–७)। इन्होंने भरत के हृदय की पवित्रता की प्रशंसा की (२. ८५, ११–१३)। जब भरत शोकग्रस्त हो गये तो इन्होंने उन्हें सान्त्वना दी (२. ८५, २२)। "श्रीराम के प्रति लक्ष्मण की निष्ठा और सद्भाव की भरत से प्रशंसा करते हुये गुह ने बताया कि उनके कहने पर भी लक्ष्मण सोने को उद्यत नहीं हुये क्योंकि श्रीराम कुशों की शय्या पर लेटे हुये थे। तदनन्तर गुह ने बताया कि किस प्रकार उनके नेत्रों के सामने ही श्रीराम, लक्ष्मण और सीता वन को चले गये (२. ८६, १–२५)।" गुह की बात सुनकर जब भरत को मूर्च्छा आ गई तो गुह को अत्यन्त शोक हुआ (२. ८७, ४)। भरत के पूछने पर गुह ने उस कुश-समूह को दिखाया जिस पर राम सोये थे, और तदनन्तर लक्ष्यण की सेवाओं का वर्णन किया (२. ८७, १४–२४)। दूसरे दिन प्रातःकाल इन्होंने भरत से मिलकर उनका कुशल-समाचार पूछते हुये यह जानना चाहा कि वे रात को सुखपूर्वक सोये या नहीं (२. ८९, ४–५)। भरत के कहने पर इन्होंने भरत तथा उनकी सेना को पार उतारने के लिये अपने बन्धु-बान्धवों से नौका की व्यवस्था करने के लिये कहा

(२. ८९, ८–९) । यह स्वयं एक स्वस्तिक नामक नौका लाये (२. ८९, १२) । भरत ने इनसे वन में जाकर श्रीराम के निवास-स्थान का पता लगाने के लिये कहा (२. ९८, ४) । ये भी भरत के साथ पैदल ही श्रीराम से मिलने गये (२. ९८, १८) श्रीराम और लक्ष्मण ने इनका आलिङ्गन किया (२. ९९ , ४१) । श्रीराम ने अयोध्या लौटते समय हनुमान् के द्वारा निषादराज गुह को भी सन्देश भेजा क्योंकि ये राम के आत्मा के समान प्रिय सखा थे (६. १२५, ४–५) । श्रीराम के आदेशानुसार हनुमान् ने इन्हें श्रीराम के सकुशल लौटने का समाचार दिया (६. १२५, २२–२४) ।

गुह्यक (बहु०), एक प्रकार के अर्धदेवताओं का नाम है जो कुबेर की सेवा में रहते थे । कैलासपर्वत पर स्थित सरोवर के तटपर कुवेर इन लोगों के साथ विहार करते थे (४. ४३, २३) । जब राम ने कुम्भकर्ण का वध कर दिया तो ये भी अत्यन्त हर्षित हुये (६. ६७, १७५) । लक्ष्मण और अतिकाय का द्वन्द्व युद्ध देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (६. ७२, ६६) । वायु देवता को प्रसन्न करने के लिये ये लोग भी ब्रह्मा के साथ गये(७. ३५, ६४) ।

गोकर्ण, उस स्थान का नाम है जहाँ भगीरथ ने तपस्या की थी (१. ४२, १३) । केसरी, माल्यवान् पर्वत से गोकर्ण पर गये (५. ३५, ८०) । रावण तथा उसके भ्राता ने यहीं तपस्या की थी (७. ९, ४६) ।

गोदावरी, एक नदी का नाम है जिसके तट पर पञ्चवटी नामक स्थान स्थित था (३. १३, १९) । 'इयमादित्यसंकाशैः पद्मैः सुरभिगन्धिभिः । अदूरे दृश्यते रम्या पद्मिनी पद्मशोभिता ।।……इयं गोदावरी रम्या पुष्पितैस्तरुभिर्वृता ।। हंसकारण्डवाकीर्णा चक्रवाकोपशोभिता ।।……मृगयूथानिपीडिताः ।।', (३. १५, ११–१३) ।' श्रीराम इत्यादि ने इसी के तट पर पञ्चवटी में निवास किया था (३. १५, ९–१४) । श्रीराम आदि प्रतिदिन इसमें स्नान करते थे (३. १६, २) । रावण को देखकर तीव्र गति से बहनेवाली यह नदी धीरे-धीरे बहने लगी (३. ४६, ७) । 'हंससारससंघुष्टां वन्दे गोदावरीं नदीम्', (३. ४९, ३१) । 'गोदावरीयं सरितां वरिष्ठा प्रिया प्रियाया मम नित्यकालम्', (३. ६३, १३) । 'नदीं गोदावरीं रम्याम्', (३. ६४, २) । सीता-हरण के बाद श्रीराम ने गोदावरी के तट पर आकर इससे सीता के सम्बन्ध में पूछा किन्तु रावण के भय से यह चुप रही (३. ६४, ६–११) । सुग्रीव ने सीता की खोज करने के लिये अङ्गद को इसके क्षेत्र में भेजा (४. ४१, ९) । अयोध्या लौटते समय श्रीराम का पुष्पक विमान इस पर से होकर भी उड़ा (६. १२३, ४६) ।

गोप, एक गन्धर्वप्रमुख का नाम है जिन्होंने भरद्वाज के आश्रम पर भरत का संगीत आदि से मनोरंजन किया था (२. ९१, ४५) ।

गोप्रतार, सरयू के एक घाट का नाम है । श्रीराम के परमधाम जाने के

समय जो लोग उनके साथ आये थे उनमें से जिस-जिस ने यहाँ डुबकी लगाई उसने स्वर्गलोक प्राप्त कर लिया (७. ११०, २३–२४)।

गोमती, शीतल जलवाली एक नदी का नाम है जिसके कछार में अनेक गायें विचरती रहती थी। श्रीराम ने इसे पार किया (२. ४९, १०)। केकय से लौटते समय भरत ने विनत नामक स्थान के पास इसे पार किया था (२. ७१, १६)। पूर्वकाल में वानर यूथपति संरोचन यहीं निवास करता था (६. २६, २७)। हनुमान् ने इसे पार किया (६. १२५, २६)। सीता को वन में छोड़ने के लिये ले जाते समय लक्ष्मण और सीता ने एक रात्रि इसके तट पर व्यतीत की (७. ४६, १९)।

गोमुख, मातलि के पुत्र का नाम है जो जयन्त का सारथि था। इन्द्रजित् ने इस पर सुवर्ण-भूषित बाणों की वर्षा की थी (७. २८, १०)।

गोलभ, एक गन्धर्व का नाम है जिसने वालिन् के साथ पन्द्रह वर्षों तक चौबीसों घंटे चलनेवाला युद्ध किया किन्तु सोलहवाँ वर्ष आरम्भ होते ही वालिन् के हाथों मारा गया (४. २२, २७–२८)।

१. गौतम, दशरथ के एक ऋत्विज का नाम है (१. ७, ५)। 'राजकर्तारः………गौतमश्च', (२. ६७, २–३)। दशरथ की मृत्यु के पश्चात् दूसरे दिन प्रातःकाल उपस्थित होकर इन्होंने वसिष्ठ को दूसरा राजा नियुक्त करने का परामर्श दिया (२, ६७, ६–८)। श्रीराम के राज्याभिषेक के कृत्यों में इन्होंने वसिष्ठ की सहायता की (६. १२८, ६१)। श्रीराम के आमन्त्रण पर ये उनकी सभा में उपस्थित हुये जहाँ श्रीराम ने इनका सत्कार किया (७. ७४, ४–५)। राम-दरवार में सीता के शपथ-ग्रहण के अवसरपर ये भी उपस्थित थे (७. ९६, ५)।

२. गौतम, एक ऋषि का नाम है जो मिथिला के उपवन में अपनी पत्नी, अहल्या, के साथ तपस्या करते थे (१. ४८, १५–१६)। एक दिन शचीपति इन्द्र ने इनकी पत्नी अहल्या के साथ समागम किया (१. ४८, १७–२२)। "समागम के पश्चात् कुटी से बाहर निकलते ही इन्द्र का इनसे सामना हो गया। उस समय देवताओं और दानवों के लिये दुर्धर्ष, तपोवल, सम्पन्न, इन महामुनि ने, जिनका शरीर तीर्थ के जल से सिक्त और प्रज्ज्वलित अग्नि के समान उद्दीप्त था, छद्मवेषी इन्द्र पर क्रोध करके उन्हें शाप दे दिया (१. ४८, २३–२८)।" "इन्होंने अपनी पत्नी अहल्या को भी यह शाप दिया कि वह उसी स्थान पर कई सहस्र वर्षों तक केवल हवा पीकर या उपवास करती हुई कष्टपूर्वक राख में पड़ी रहेगी। इन्होंने यह भी कहा कि जब दशरथकुमार राम उस घोर वन में पदार्पण करेंगे तो उस समय वह पवित्र होकर पुनः इनके पास पहुँच जायगी

(१. ४८, २९–३३)।" इस प्रकार अपनी पत्नी को शाप देकर ये महातेजस्वी ऋषि हिमालय पर तपस्या के लिये चले गये (१. ४८, ३४)। इनके शाप के प्रभाव से इन्द्र "मेषवृषण" हो गये (१. ४९, २–१०)। अहल्या के शापमुक्त हो जाने पर उसे ग्रहण कर इन्होंने श्रीराम का सत्कार किया (१. ४९, २१–२३)। श्रीराम के अयोध्या लौटने पर ये भी उत्तर दिशा से उनके अभिनन्दन के लिये उपस्थित हुये (७. १, ५)। "आरम्भ में ब्रह्मा ने एक विशिष्ट नारी की सृष्टि करके उसका नाम अहल्या रक्खा। तदनन्तर उन्होंने उस नारी को गौतम ऋषि को धरोहर के रूप में दिया। बहुत दिनों तक अपने पास रखने के पश्चात् गौतम ने उस कन्या को ब्रह्मा को लौटा दिया परन्तु गौतम के इन्द्रिय-संयम से प्रसन्न हो ब्रह्मा ने उसे पुनः गौतम को ही पत्नी-रूप में समर्पित कर दिया। उसी अहल्या के साथ इन्द्र के समागम करने पर गौतम ने इन्द्र तथा अहल्या को शाप दिया, तथा शापमोचन का समय भी बता दिया। (७. ३०, १९–४३)।" इनका आश्रम निमि की राजधानी, वैजयन्तपुर, के निकट स्थित था (७. ५५, ५–६)। वसिष्ठ के चले जाने पर इन्होंने राजा निमि के यज्ञ को पूरा किया (७. ५५, ११–१४)।

ग्रामणी, एक गन्धर्व प्रमुख का नाम है जो ऋषभ पर्वत के चन्दन के वन में निवास करते थे। ये सूर्य, चन्द्रमा, तथा अग्नि के समान तेजस्वी और पुण्यकर्मा थे (४. ४१, ४३–४४)। इन्होंने सुकेश नामक राक्षस को धार्मिक जानकर अपनी कन्या देववती का उसके साथ विवाह कर दिया (७. ५, १–३)।

घ

घन, एक राक्षस प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, २३)।

घृताची, एक अप्सरा का नाम है जिसने कुशनाभ की पत्नी के रूप में एक सौ कन्याओं को जन्म दिया था (१. ३२, १०)। भरत-सेना के सत्कार के लिये भरद्वाज ने इसकी सहायता का आवाहन किया था (२. ९१, १७)। इसमें आसक्त होने के कारण महामुनि विश्वामित्र ने दस वर्ष के समय को एक दिन ही माना (४. ३५, ७)।

घोर, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने आग लगा दी थी (५. ५४, १३)।

च

चक्र, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन पर हनुमान् गये थे (५. ६, २४)।

चक्रवान्, एक पर्वत का नाम है जो पश्चिमी समुद्र के चतुर्थ भाग में स्थित था। यहाँ विश्वकर्मा ने सहस्रार चक्र का निर्माण किया था। यहीं विष्णु ने पञ्चजन और हयग्रीव नामक दानवों का वध किया और वे यहीं से पाञ्चजन्य शङ्ख तथा सहस्रार चक्र लाये थे। सुग्रीव ने सुषेण तथा अन्य वानरों को सीता की खोज के लिये यहाँ भेजा (४. ४२, २५–२७)।

चण्ड, एक वानर यूथपति का नाम है जो राम की वानरी सेना में सम्मिलित हुआ था (६. २९–३०)।

चण्डाल—राजा त्रिशङ्कु एक चण्डाल बन गये। उनके शरीर का रंग और वस्त्र नीले हो गये। प्रत्येक अंगों में रुक्षता आ गई। सर के बाल छोटे हो गये। समस्त शरीर में चिता की भस्म लिपट गई, और विभिन्न अंगों में लोहे के गहने पड़ गये (१. ५८, ११)।

चण्डोदरी, सीता की रक्षा करनेवाली एक क्रूरदर्शना राक्षसी का नाम है जिसने सीता से कहा कि यदि वे रावण का वरण नहीं कर लेंगी तो वह उन्हें खा जायगी (५. २४, ३९–४०)।

चन्दन (-वन)—यहाँ निवास करनेवाले वानरों ने राम की सेना में संरोचन के नेतृत्व में भाग लिया (६. २६, २३)।

चन्द्र का क्षीर समुद्र से प्रादुर्भाव हुआ था। इसे 'शीतरश्मिः निशाकरः' कहा गया है (७. २३, २२)। यह आकाशगङ्गा से ८०,००० योजन ऊपर स्थित है (७. २३घ, १६)। 'शतं शतसहस्राणि रश्मयश्चन्द्रमण्डलात्। प्रकाशयन्ति लोकांस्तु सर्वसत्त्वसुखावहाः ॥' (७. २३घ, १७)। जब रावण इसके निकट आया तो इसने अपनी शीताग्नि से उसका दहन कर दिया (७. २३घ, १८)। 'स्वभाव एष राजेन्द्र शीतांशोर्दहनात्मकः', (७. २३घ, २१)। 'लोकस्य हितकामो वै द्विजराजो महाद्युतिः', (७. २३घ, २४)। इसने राजसूय यज्ञ के द्वारा इस उच्च स्थान को प्राप्त किया था (७.८३, ७)।

चन्द्रकान्त, एक नगर का नाम है जो मल्ल-भूमि में स्थित था : 'सुरुचिरं चन्द्रकान्तं निरामयम्', (७. १०२, ६)। 'चन्द्रकेतोश्च मल्लस्य मल्लभूम्यां निवेशिता। चन्द्रकान्तेति विख्याता दिव्या स्वर्गपुरी यथा ॥', (७. १०२, ९)।

चन्द्रकेतु, लक्ष्मण के धर्मविशारद और दृढ़विक्रम पुत्र का नाम है (७. १०२, २)। ये मल्लभूमि के राजा हुये (७. १०२, ९)।

चन्द्र-चित्रा, पश्चिम के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने सुषेण इत्यादि को भेजा था (४. ४२, ६)।

चारण (बहु०)—ब्रह्मा के आदेशानुसार चारणों ने राम की सहायता के

लिये वानर-सन्तान उत्पन्न की (१. १७, ९)। 'चारणाश्च सुतान्वीरान्ससृजुर्वनचारिणः', (१. १७, २२)। दैत्यों का वध करने के पश्चात् त्रिलोकी का राज्य पाकर इन्द्र ऋषियों और चारणों सहित समस्त लोकों का शासन करने लगे (१. ४५, ४५)। ये लोग हिमालय पर्वत पर निवास करते थे (१. ४८, ३४)। इन्द्र ने इन लोगों से भी अपने अण्डकोष-रहित हो जाने की बात कहते हुये इनसे अपने को पुनः अण्डकोष-युक्त करने का निवेदन किया (१. ४९, १–४)। ये वसिष्ठ के आश्रम में निवास करते थे (१. ५१, २३)। इन लोगों ने भी विष्णु और शिव के क्रोध को शान्त करने का प्रयास किया (१. ७५, १८–१९)। राम और परशुराम के द्वन्द्व-युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (१. ७६, १०)। जब श्रीराम खर के साथ युद्ध करने लगे तो इन लोगों ने श्रीराम की विजय के लिये प्रार्थना की (३. २३, २६–२८)। श्रीराम और खर का युद्ध देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (३. २४, १९)। खर का वध हो जाने पर इन लोगों ने हर्ष प्रकट करते हुये राम की स्तुति की (३. ३०, २९–३३)। रावण ने उन कुञ्जों को देखा जो चारणों से सेवित थे (३. ३५, १५)। सीता का अपहरण होते समय इन लोगों ने कहा कि रावण का अन्त समय निकट आ गया है (३. ५४, १०)। ये लोग शोण के तट पर निवास करते थे (४. ४०, ३१)। ये लोग सुदर्शन सरोवर पर क्रीड़ा-विहार करते थे (४. ४०, ४३–४४)। महेन्द्र पर्वत इनसे सेवित था (४. ४१, २३)। पुष्पितक पर्वत इनसे सेवित था (४. ४१, २८)। ये अन्तरिक्ष में निवास करते हैं (५. १, १)। इन लोगों ने हनुमान् को एक क्षण के लिये सिंहिका के मुख में अदृश्य होते देखा (५. १, १९६)। हनुमान् द्वारा लंका को भस्म कर देने पर इन लोगों को आश्चर्य हुआ, किन्तु इससे भी अधिक आश्चर्य सीता के सर्वथा सुरक्षित बच जाने पर हुआ (५. ५५, २९–३२)। जब श्रीराम तथा उनकी सेना ने सागर को पार कर लिया तो इन लोगों ने श्रीराम का अभिनन्दन किया (६. २२, ८९)। जब इन्द्रजित् ने लक्ष्मण से युद्ध करना आरम्भ किया तो इन लोगों ने जगत् के कल्याण के लिये प्रार्थना की (६. ८९, ३८)। जब रावण ने श्रीराम को पीड़ित किया तो ये लोग विषाद में डूब गये (६. १०२, ३१)। रावण का वध होने पर इन लोगों ने अत्यधिक हर्ष प्रकट किया (६. १०८, ३०)। ये तृतीय अन्तरिक्ष के देवता हैं (७. २३घ, ५)। रावण को पराजित कर देने पर इन लोगों ने अर्जुन को बधाई दी (७. ३२, ६५)।

चित्रकूट, एक पर्वतीय स्थान का नाम है जहाँ, भरद्वाज के परामर्श के अनुसार श्रीराम ने अपने भ्राता लक्ष्मण तथा सीता के साथ अपना आवास

बनाया था (१. १, ३१)। श्रीराम के चित्रकूट-निवास की अवधि में ही अयोध्या में राजा दशरथ की पुत्रशोक में मृत्यु हो गई (१. १. ३२–३३)। भरत, श्रीराम को लौटाने के लिये अयोध्यावासियों सहित यहीं आये थे (१. १, ३३–३७) । भरत के लौट जाने पर नागरिकों के आने-जाने से बचने के लिये श्रीराम आदि दण्डकारण्य चले गये (१. १, ४०)। श्रीराम के चित्रकूट आगमन की घटना का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १५)। यह प्रयाग से दस कोस की दूरी पर स्थित है : 'दशक्रोश इतस्तात गिरिर्यस्मिन्निवत्स्यसि । महर्षि सेवितः पुण्यः सर्वतः शुभदर्शनः ॥ गोलाङ्गूलानुचरितो वानरर्क्षनिषेवितः। चित्रकूट इति ख्यातो गन्धमादनसन्निभः॥', (२. ५४, २८--२९)। जबतक मनुष्य चित्रकूट के शिखरों का दर्शन करता रहता है, वह पाप में कभी मन नहीं लगाता (२. ५४, ३०)। यहाँ से बहुत से ऋषि, जिनके सर के बाल वृद्धावस्था के कारण श्वेत हो गये थे, तपस्या द्वारा सैकड़ों वर्षों तक क्रीड़ा करके स्वर्गलोक चले गये (२. ५४, ३१)। 'मधुमूलफलोपेतं चित्रकूटः', (२. ५४, ३८)। 'नानानगगणोपेतः किन्नरोरगसेवितः', (२. ५४, ३९) । 'मयूरनादाभिरतो गजराजनिषेवितः', (२. ५४, ४०) । 'पुण्यश्च रमणीयश्च बहुमूलफलायुतः', (२. ५४. ४१) । इस स्थान पर झुण्ड के झुण्ड हाथी और हिरन विचरते रहते थे (२. ५४, ४१–४२) । "मन्दाकिनी नदी, अनेकानेक जलस्रोत, पर्वतशिखर, गुफा, कन्दरा और झरने आदि भी यहाँ थे । हर्ष में भरे ठिट्टिभ और कोकिलों के कलरवों से यह पर्वत मानों यात्रियों का मनोरञ्जन करता रहता था। मदमत्त मृगों और मतवाले हाथियों ने इसकी रमणीयता में और वृद्धि कर दी थी (२. ५४, ४२–४३) ।" इस स्थान की रमणीयता का वर्णन (२. ५६, ६--११. १३–१५) । श्रीराम आदि इस स्थान पर आये (२. ५६, १२) । यहाँ के मनोरञ्जक दृश्यों ने राम आदि के मन से अयोध्या के वियोग का दुःख समाप्त कर दिया (२. ५६, ३५) । यह भरद्वाज-आश्रम से ढाई योजन दूर था (२. ९२, १०) । भरत ने इसका वर्णन किया (२. ९३, ७–१९) । भरत अपने दल सहित यहाँ पहुँचे (२. ९९, १४) । यहाँ से विदा होने के पूर्व भरत ने इसकी परिक्रमा की (२. ११३, ३) । यहाँ निवास करनेवाले ऋषियों को राक्षसगण अत्यन्त त्रस्त कर रहे थे (३. ६, १७) । 'शैलस्य चित्रकूटस्य पादे पूर्वोत्तरे पुरा। तापसाश्रमवासिन्याः प्राज्यमूलफलोदके। तस्मिन्सिद्धाश्रिते देशे मन्दाकिन्या ह्यदूरतः ॥ तस्योपवनखण्डेषु नानापुष्पसुगन्धिषु ।', (५. ३८, १२–१४) । अयोध्या लौटते समय श्रीराम का पुष्पक विमान इस क्षेत्र के ऊपर से होकर उड़ा था (६. १२३, ५१) ।

१. चित्ररथ, श्रीराम के एक सूत और सचिव का नाम है। वन जाते समय राम ने लक्ष्मण को इन्हें भी वहुमूल्य रत्न और वस्त्रादि देने के लिये कहा था (२. ३२, १७)।

२. चित्ररथ, एक वन का नाम है जिसे केकय से लौटते समय भरत ने पार किया था (२. ७१, ४)।

३. चित्ररथ, उत्तर कुरु प्रदेश में स्थित कुबेर के उपवन का नाम है (२. ९१, १९)। जो पुष्पमालायें केवल यहीं देखी जा सकती थीं, भरद्वाज के तेजबल से प्रयाग में दिखाई पड़ने लगीं (२. ९१, ४७)। रावण ने इसका विध्वंस किया (३. ३२, १५–१६)। यहाँ वर्ष-पर्यन्त वसन्त ऋतु ही वर्तमान रहती थी (३. ७३, ७)।

चूलिन्, एक महाद्युति, ऊर्ध्वरेता और शुभाचारी तपस्वी का नाम है जो ब्राह्म तप कर रहे थे (१. ३३, ११)। उन्हीं दिनों उर्मिला-पुत्री एक गन्धर्वी, सोमदा, इनकी सेवा करती थी (१. ३३, १२)। सोमदा की सेवा से प्रसन्न होकर इन्होंने उससे पूछा : 'मैं तुम्हारा कौन-सा प्रियकार्य करूँ।' (१. ३३, १३--१४)। ये वाणी के मर्मज्ञ एक मुनि थे (१. ३३, १५)। सोमदा की इच्छा पूर्ण करने के लिये इन्होंने उसे ब्रह्मदत्त नामक एक मानस-पुत्र प्रदान किया (१. ३३, १८)।

चोला, दक्षिण के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा (४. ४१, १२)।

च्यवन, एक महर्षि का नाम है जो भृगुवंशी और हिमालय पर तपस्या करते थे (१. ७०, ३१–३२)। इन्होंने पुत्र की अभिलाषा रखनेवाली कालिन्दी से पुत्र-जन्म के विषय में इस प्रकार कहा : 'तुम्हारे उदर में एक महान पराक्रमी पुत्र है जो शीघ्र ही 'गर' (विष) के साथ उत्पन्न होगा।' (१. ७०, ३३–३५)। ये अनेक अन्य ऋषियों के साथ श्रीराम के पास आये थे (७. ६०, ४)। "शत्रुघ्न के पूछने पर इन्होंने बताया कि किस प्रकार लवणासुर ने इक्ष्वाकुवंशी मान्धाता का विनाश किया था। तदनन्तर इन्होंने शत्रुघ्न को यह परामर्श दिया कि वे उस समय लवणासुर का वध करें जब वह शस्त्र को छोड़कर बाहर निकले (७. ६७, १–२६)।" ये एक भार्गव थे जिनसे बुध ने इल को पुरुषत्व प्राप्त कराने के सम्बन्ध में परामर्श किया था (७. ९०, ५)। राम की सभा में सीता के शपथ-ग्रहण को देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये थे (७. ९६, ४)।

छ

छायाग्राह, एक राक्षसी का नाम है जिसके पास हनुमान् के जाने की घटना का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था : 'छायाग्राहस्य दर्शनम्', (१. ३, २८ । चौखम्भा संस्करण में यह पंक्ति नहीं है । देखिये गीता प्रेस संस्करण) ।

ज

जटापुर, पश्चिम के एक सुरम्य नगर का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने सुषेण इत्यादि को भेजा था (४. ४२, १३) ।

जटायु, पञ्चवटी के वन में निवास करनेवाले एक गृध्र का नाम है जिसका रावण ने वध कर दिया था (१. १, ५३) । इनका श्रीरामने शव-दाह संस्कार किया था (१. १, ५४) । वाल्मीकि ने इनकी मृत्यु का पूर्वदर्शन किया था (१. ३, २१) । पञ्चवटी जाते समय राम इन महाकाय और भीम पराक्रम गृध्र से मिले (३. १४, १) । राम द्वारा परिचय पूछने पर इन्होंने अपने को श्रीराम के पिता का मित्र बताया (३. १४, २–३) यह सुनकर श्रीराम ने इनका आदर करते हुये इनका नाम और वंश-परिचय पूछा (३. १४, ४) । इन्होंने अपना विस्तृत परिचय देते हुये श्रीराम को सृष्टि का भी इतिहास बताया (३. १४, ५–३२) । ये अरुण तथा श्येनी के पुत्र तथा सम्पाति के भ्राता थे (३. १४, ३२–३३) । श्रीराम और लक्ष्मण की अनुपस्थिति में इन्होंने सीता की रक्षा करने का भार लिया (३. १४, ३४) । श्रीराम ने इनका घनिष्ठ आलिङ्गन किया (३. १४, ३५) । श्रीराम और लक्ष्मण ने सीता को इनके संरक्षण में सौंपते हुये. इनके साथ ही पञ्चवटी में प्रवेश किया (३. १४, ३६) । जब रावण सीता का अपहरण करके उन्हें ले जा रहा था तो सीता ने एक वृक्ष पर बैठे जटायु को देखा और उनसे श्रीराम तथा लक्ष्मण को अपने अपहरण का समाचार देने का निवेदन किया (३. ४९, ३६–४०) । सीता का विलाप सुनकर ये निद्रा से जाग उठे और सीता को रावण द्वारा अपहृत होते देखा (३. ५०, १) । पक्षियों में श्रेष्ठ जटायु का शरीर पर्वत-शिखर के समान ऊँचा और उनकी चोंच बड़ी ही तीखी थी (३. ५०, २) । "इन्होंने रावण को ऐसा निन्दित कर्म करने से रोका, और अपना परिचय देते हुए कहा कि 'मैं प्राचीन धर्म में स्थित, सत्यप्रतिज्ञ और महाबलवान् गृध्रराज जटायु हूँ ।······अपने पूर्वजों से प्राप्त इस पक्षियों के राज्य का विधिवत् पालन करते हुये मेरे जन्म से लेकर अब तक साठ हजार वर्ष व्यतीत हो चुके हैं । फिर भी, तुम सीता को लेकर कुशलपूर्वक नहीं जा सकोगे ।' ऐसा कहकर इन्होंने रावण को द्वन्द्व युद्ध के लिये ललकारा (३. ५०, ३–२८) ।" "इन्होंने रावण से आकाश

में ही घोर युद्ध किया। इन्होंने रावण के शरीर को निर्दयतापूर्वक खरोचते हुये उसके त्रिवेणु-सम्पन्न रथ को तोड़कर सारथि तथा घोड़ों को भी मार गिराया। इस प्रकार, इन्होंने रावण के धनुष, रथ, घोड़े, सारथि आदि सबको नष्ट कर दिया जिससे रावण धरती पर गिर पड़ा। उस समय समस्त प्राणी इनकी वीरता की प्रशंसा करने लगे। इन्होंने रावण की दसो वायीं भुजाओं को उखाड़ लिया। तदनन्तर क्रोध में आकर रावण ने तलवार से इनके दोनों पंख, पैर, तथा पार्श्व-भाग काट दिये जिससे रक्त रंजित हो धरती पर गिर पड़े (३. ५१, १–४४)।" "इनके शरीर की कान्ति नील-मेघ के समान काली और छाती का रंग श्वेत था। ये अत्यन्त पराक्रमी थे (३. ५१, ४५)।" इनके इस प्रकार आहत होकर मृतप्राय हो जाने पर सीता अत्यन्त विलाप करने लगीं (३. ५१, ४६)। "सीता को खोजते हुये जब धनुष-बाण हाथ में लेकर श्रीराम वन में आगे बढ़े तो उन्हें पर्वतशिखर के समान विशाल शरीरवाले पक्षिराज जटायु दिखाई पड़े। श्रीराम इन्हें एक राक्षस समझ कर जब क्रोध में इनके समीप आये तो इन्होंने उनसे रावण द्वारा सीता के अपहरण, अपने और रावण के द्वन्द्व-युद्ध, तथा अपनी दशा का वर्णन किया (३. ६७, १०–२१)।" श्रीराम ने इन्हें गले से लगा लिया (३. ६७, २२–२३)। "राम के पूछने पर इन्होंने बताया कि रावण आकाश-मार्ग से सीता को दक्षिण की ओर ले गया है। साथ ही इन्होंने यह भविष्यवाणी की कि अपनी शक्ति से रावण का विनाश करके श्रीराम सीता को अवश्य प्राप्त कर लेंगे। इतना कह कर रक्त और मांस का वमन करते हुये इनकी मृत्यु हो गई (३. ६८, १–१७)।" श्रीराम और लक्ष्मण ने इनकी मृत्यु पर अत्यन्त शोक प्रकट करते हुये इनके शव का अन्तिम संस्कार किया (३. ६८, १८–३८)। अङ्गद ने सम्पाति के सम्मुख श्रीराम के प्रति इनकी अत्यधिक हार्दिक निष्ठा की प्रशंसा की (४. ५६, ९–१४)। सम्पाति ने बताया कि जटायु उनका छोटा भ्राता तथा गुण और पराक्रम के कारण अत्यन्त प्रशंसा के योग्य था (४. ५६, २१)। अङ्गद ने रावण के हाथों इनकी मृत्यु का वर्णन किया (४. ५७, १०–१२)। अपने भ्राता सम्पाति के साथ मिलकर इन्होंने इन्द्र को पराभूत किया किन्तु अन्ततः सूर्य से स्वयं पराजित हो गये (४. ५८, २–६)। 'गृध्रौ द्वौ दृष्टपूर्वौ मे मातरिश्वसमौ जवे। गृध्राणां चैव राजानौ भ्रातरौ कामरूपिणौ॥ ज्येष्ठो हि त्वं तु संपाते जटायुरनुजस्तव। मानुषं रूपमास्थाय गृह्णीतां चरणौ मम॥', (४. ६०, १९–२०)। ये मूर्च्छित होकर जनस्थान में गिरे थे (४. ६१, १६)। सीता ने इनका अत्यन्त अनुग्रहपूर्वक स्मरण किया (५. २६, २०–२१)।

जटी, एक नाग का नाम है जिसे रावण ने पराजित करके अपने अधीन कर लिया था (६. ७, ९)।

१. जनक, मिथि के पुत्र और जनक-राजवंश के आदि 'जनक' का नाम है। इनके पुत्र का नाम उदावसु था (१. ७१, ४)।

२. जनक, मिथिला के राजा का नाम है : 'मिथिलाधिपतिं शूरं जनकं सत्यवादिनम् । निष्ठितं सर्वशास्त्रेषु तथा वेदेषु निष्ठितम् ॥', (१. १३, २१)। अश्वमेध के समय वसिष्ठ ने सुमन्त्र से इन्हें बुलाने के लिये कहा और बताया कि दशरथ के साथ इनका पुराना सम्बन्ध है (१. १३, २२)। इन परम धर्मिष्ठ राजा ने एक यज्ञ किया जिसमें विश्वामित्र, राम, और लक्ष्मण सम्मिलित हुये थे (१. ३१, ६)। इनके पास एक अद्भुत धनुषरत्न था (१. ३१, ७)। 'महात्मा', (१. ३१, ११)। ये मिथिला के शासक थे (१. ४८, १०)। विश्वामित्र इत्यादि के आगमन पर इन्होंने विश्वामित्र का विधिवत् स्वागत और पूजन किया (१. ५०, ७–९)। तदनन्तर विश्वामित्र आदि को उत्तम आसन पर बैठाते हुये इन्होंने उनसे बारह दिनों तक रुक कर यज्ञ-भाग ग्रहण करने के लिये आनेवाले देवताओं का दर्शन करने के लिये कहा (१. ५०, १२–१६)। इन्होंने राम और लक्ष्मण के सम्बन्ध में पूछा (१. ५०, १७–२१)। राम और लक्ष्मण के कौशल का वर्णन करने के बाद विश्वामित्र ने इनसे बताया कि दोनों राजकुमार इनके महान धनुष को देखने आये हैं (१. ५०, २२–२५)। विश्वामित्र की स्तुति करने के पश्चात् इन्होंने उनसे यज्ञ का कार्य देखने के लिये विदा ली (१. ६५, २८–३८)। दूसरे दिन प्रातः काल इन्होंने विश्वामित्र तथा राम और लक्ष्मण का स्वागत किया (१. ६६, १–३)। 'महात्मा', (१. ६६, ४)। शिवामित्र द्वारा राजकुमारों को धनुष दिखाने का निवेदन करने पर इन्होंने उस धनुष का इतिहास बताया और वचन दिया कि यदि राम धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा देंगे तो ये सीता का उनसे विवाह कर देंगे (१. ६६, ४–२६)। विश्वामित्र के कहने पर इन्होंने अपने मन्त्रियों को आज्ञा दी कि वे चन्दन और मालाओं से सुशोभित उस दिव्य धनुष को वहाँ लायें (१. ६७, १–२)। "जब धनुष लाया गया तब इन्होंने उस धनुष की महिमा का वर्णन करते हुये बताया कि देवता और असुर भी उस पर प्रत्यञ्चा चढ़ाने में असमर्थ रहे हैं, मनुष्य की तो बात ही क्या। ऐसा कहने के बाद इन्होंने विश्वामित्र से कहा कि वे राजकुमारों को धनुष दिखा दें (१. ६७, ३–११)। धनुष टूटने के भीषण शब्द से ये तनिक भी विचलित नहीं हुये (१. ६७, १९)। राम की सफलता पर उन्हें बधाई देते हुये इन्होंने विश्वामित्र से दशरथ को अयोध्या से मिथिला बुलाने के लिये दूत भेजने की आज्ञा माँगी (१. ६७, २०–२६)। विश्वामित्र की अनुमति पाकर इन्होंने अपने दूतों को अयोध्या भेजा (१. ६७, २७)। यह जान कर कि दशरथ विदेह आ गये हैं,

इन्होंने उनके विधिवत् स्वागत की व्यवस्था की (१. ६९, ७)। दशरथ का हार्दिक स्वागत करने के बाद इन्होंने उनसे दूसरे दिन ही राजकुमारों का विवाह सम्पन्न कराने का आग्रह किया (१. ६९, ८–१३)। इन्होंने धर्मानुसार यज्ञ कार्य सम्पन्न किया तथा अपनी कन्याओं के लिये मङ्गलाचार सम्पादन करके सुखपूर्वक वह रात्रि व्यतीत की (१. ६९, १८)। दूसरे दिन प्रातःकाल इन्होंने अपने भ्राता कुशध्वज को सांकाश्य से बुलवाया (१. ७०, १–४)। कुशध्वज के आने पर उनके साथ सिंहासन पर बैठ कर इन्होंने महाराज दशरथ तथा उनके राजकुमारों को बुलवाया (१. ७०, ९–१२)। वसिष्ठ ने इन्हें इक्ष्वाकुवंश का इतिहास बताया (१. ७०, १४–४५)। “इन्होंने अपने वंश का परिचय बताते हुये निमि को अपना आदि पूर्वज कहा। इन्होंने यह भी बताया कि किस प्रकार सांकाश्य को विजित करके इन्होंने उसे अपने भ्राता को दिया (१. ७१, १–१९)। इन्होंने राम से सीता का तथा अपनी दूसरी कन्या ऊर्मिला का लक्ष्मण के साथ विवाह करने का वचन दिया (१. ७१, २०–२१)। इन्होंने दशरथ से विवाह के पूर्व के कृत्यों को सम्पन्न करने का निवेदन करते हुये कहा कि विवाह तीसरे दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में होगा (१. ७१, २३–२४)। वसिष्ठ और विश्वामित्र के कहने पर इन्होंने कुशध्वज की दो कन्याओं को भरत और शत्रुघ्न से विवाहित करना स्वीकार कर लिया (१. ७२, ११–१२)। इन्होंने दोनों ऋषियों का आदर किया (१. ७२, १५)। ‘असंख्येयगुणः’, (१. ७२, १८)। जब वसिष्ठ ने इनसे वर-पक्ष के लोगों को भीतर आ कर विवाह कार्य सम्पन्न कराने के लिये अनुमति माँगी तब सहर्ष अनुमति प्रदान करते हुये इन्होंने बताया कि कन्यायें भी यज्ञ वेदी के पास तैयार बैठी हैं (१. ७३, १०–१५)। इन्होंने वसिष्ठ से विवाह सम्पन्न कराने का अनुरोध किया (१. ७३, १८–१९)। “जब वसिष्ठ ने अग्नि की स्थापना करके उसमें हवन किया, तब इन्होंने आभूषणों से विभूषित सीता को लाकर अग्नि के समक्ष श्रीराम के सामने बैठा दिया और राम से सीता का पाणिग्रहण करने के लिये कहा। ऐसा कहने के पश्चात् इन्होंने राम के हाथ में मंत्रों से पवित्र जल छोड़ दिया। (१. ७३, २३–२७)।” तदनन्तर इन्होंने लक्ष्मण से ऊर्मिला का पाणिग्रहण करने के लिये कहा (१. ७३, २८)। इसके बाद इन्होंने भरत से माण्डवी का और शत्रुघ्न से श्रुतकीर्ति का पाणिग्रहण कराया (१. ७३, २९–३०)। अयोध्या के लिये विदा करते समय इन्होंने कन्याओं को उपयुक्त उपहार आदि दिये (१. ७४, ३–७)। राम का अभिषेक करने के समय राजा दशरथ ने शीघ्रता में इन्हें निमन्त्रित नहीं किया (२. १, ४७)। इनके एक यज्ञ के समय वरुण ने इन्हें जो अस्त्र दिये थे उन्हें इन्होंने राम को

उनके विवाह के अवसर पर प्रदान कर दिये (२. ३१, २९–३१)। दशरथ की मृत्यु हो जाने पर कौसल्या ने इनका भी स्मरण किया (२. ६६, ११)। सीता ने अपने को जनक की पुत्री कहकर रावण को अपना परिचय दिया (३. ४७, ३)। राम ने यह सोचा कि सीता के बिना अयोध्या लौटने पर जनक को जब यह समाचार मिलेगा तो वे पुत्री के शोक से सन्तप्त हो कर मूर्च्छित हो जायेंगे (३. ६२, १२–१३)। सीता के हरण के दुःख से विलाप करते हुये राम ने इनका भी स्मरण किया (४. १, १०८) । इन्द्र ने इन्हें जो मणि दी थी उसे इन्होंने सीता को उनके विवाह के अवसर पर दे दिया था (५. ६६, ४–५)। राम ने उचित आदर के साथ इन्हें विदा किया (७, ३८, २–७)।

जनमेजय—मुनिकुमार का अनजान में वध कर देने के कारण राजा दशरथ से मुनिकुमार के अन्धे माता-पिता ने कहा कि उनके पुत्र को) वही गति मिले जो जनमेजय, इत्यादि को प्राप्त हुई थी (२. ६४, ४२)।

जनस्थान—शूर्पणखा इसी स्थान पर रहती थी (१. १, ४६)। इसके साथ यहाँ १४,००० राक्षस निवास करते थे जिन सबका राम ने वध कर डाला (१. १, ४७–४८)। राक्षसों के भय से तपस्वी ऋषि-मुनि इस स्थान को छोड़कर अन्यत्र चले गये (२. ११६, ११–२५)। यहाँ खर तथा अन्य राक्षस निवास करते थे (३. १८, २५)। अकम्पन ने रावण को यहाँ के राक्षसों के वध का समाचार दिया (३. ३१, १–२)। मारीच ने भी रावण को यही समाचार दिया (३. ३१, ४०)। मारीच का वध करने के पश्चात् श्रीराम शीघ्रतापूर्वक जनस्थान की ओर बढ़े (३. ४४, २६)। रावण द्वारा अपहृत होने के समय सीता ने जनस्थान से अपने अपहरण का समाचार श्रीराम को देने के लिये कहा (३. ४९, ३०)। "यह स्थान अनेक प्रकार के वृक्षों, लताओं और राक्षसों से भरा था। इसमें पर्वत के ऊपर अनेक कन्दरायें थीं जो मृगों से भरी रहती थीं। यहाँ के पर्वतों पर किन्नरों के आवास स्थान तथा गन्धर्वों के भवन भी थे (३. ६७, ४–६)। अयोध्या लौटते समय श्रीराम का पुष्पक विमान इस पर से भी होकर उड़ा था (६. १२३, ४२–४५)। इस स्थान पर तपस्वियों के आकर बस जाने के कारण इसका जनस्थान नाम पड़ा, अन्यथा यह दण्डकारण्य के नाम से विख्यात था (७. ८१, १९–२०)।

जमदग्नि—"ये ऋचीक के पुत्र और परशुराम के पिता थे। इन्होंने अपने पिता से दिव्य वैष्णव धनुष प्राप्त किया था। जब ये अस्त्र-शस्त्रों का परित्याग करके ध्यानावस्थित बैठे थे तब राजा कार्तवीर्य अर्जुन ने इनका वध

कर दिया (१. ७५, २२–२३)। राम के अयोध्या लौटने पर ये उनके अभिनन्दन के लिये उत्तर दिशा से पधारे थे (७. १, ६)।

जम्बुमाली, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, २१)। रावण के कहने पर इसने हनुमान् के साथ द्वन्द्व-युद्ध किया, जिसमें यह मारा गया (५. ४४, १–१८)। यह प्रहस्त का पुत्र था : 'संदिष्टो राक्षसेन्द्रेण प्रहस्तस्य सुतो वली । जम्बुमाली महादंष्ट्रो निर्जगाम धनुर्धरः ॥ रक्त-माल्याम्बरधरः स्रग्वी रुचिरकुण्डलः। महान्विवृत्तनयनश्चण्डः समरदुर्जयः ॥', (५. ४४, १--२) । 'जम्बुमाली महातेजा', (५. ४४, ६) । 'जम्बुमाली महावलः', (५. ४४, १३)। 'जम्बुमाली महारथः', (५. ४४, १८)। हनुमान् ने इसके घर में आग लगा दी थी (५. ५४, ११)। इसने हनुमान् के साथ द्वन्द्व-युद्ध किया था (६. ४३, ७)। इसने हनुमान् के वक्ष पर प्रहार करके उन्हें आहत किया (६. ४३, २१)।

जम्बूद्वीप—यह पर्वतों से युक्त था जिसकी भूमि को सगरपुत्रों ने खोद डाला था (१. ३९, २२)। यह सौमनस पर्वत के उत्तर में स्थित था (४. ४०, ५९)।

जम्बूप्रस्थ—एक स्थान का नाम है जहाँ केकय से लौटते समय भरत रुके थे (२. ७१, ११)।

जम्भ, एक वानर यूथपति का नाम है जो वानर-सेना को शीघ्र आगे बढ़ने की प्रेरणा देता हुआ चल रहा था (६. ४, ३७)।

१. जयन्त, दशरथ के आठ मन्त्रियों में से एक का नाम है (१. ७, ३)। श्रीराम के अयोध्या लौटने पर ये उनके स्वागत के लिये गये (६. १२७, १०)।

२. जयन्त, एक दूत का नाम है जिसे दशरथ की मृत्यु के पश्चात् वसिष्ठ ने भरत को अयोध्या बुलाने के लिये भेजा था (२. ६८, ५)। ये राजगृह पहुँचे (२. ७०, १)। केकय-राज ने इनका स्वागत किया जिसके पश्चात् इन्होंने भरत को वसिष्ठ का समाचार तथा उपहार आदि दिया (२. ७०, २–५)। भरत की बातों का उत्तर देने के बाद इन्होंने उनसे शीघ्र अयोध्या चलने के लिये कहा (२. ७०, ११–१२)।

३. जयन्त, इन्द्र तथा शची के पुत्र का नाम है जिसने देवसेना के सेनापति के रूप में मेघनाद से द्वन्द्व युद्ध किया था । अन्ततोगत्वा इनके नाना, पुलोमा, इन्हें लेकर समुद्र में घुस गये (७. २८, ६–२१)।

जया, दक्ष की एक पुत्री का नाम है जिसने एक सौ प्रकाशमान् अस्त्र-शस्त्रों को जन्म दिया (१. २१, १५)। वर प्राप्त करके इसने असुरों के

विनाश के लिये पचास अदृश्य और रूपरहित श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त किये (१. २१, १६)।

जलोद, एक सागर का नाम है जो अत्यन्त भयावह और क्षीरसागर के बाद स्थित था। ब्रह्मा ने महर्षि और्व के क्रोध से प्रकट हुये बडवामुख तेज को इसी सागर में स्थित कर दिया था। यहाँ उस तेज से भस्म हो जाने के कारण समुद्र के प्राणियों का आर्तनाद निरन्तर सुनाई पड़ता था। इस सागर का जल स्वादिष्ट था। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को यहाँ भेजा (४. ४०, १६. ४५–४८)।

जव, विराध नामक राक्षस के पिता का नाम है (३. ३, ५)।

जह्नु, एक ऋषि का नाम है जिनके यज्ञ-स्थान को गङ्गा अपने प्रवाह में बहा ले गईं। इस पर क्रुद्ध होकर इन्होंने गङ्गा के समस्त जल का पान कर लिया। देवों इत्यादि की प्रार्थना पर इन्होंने गङ्गा को अपने कान के मार्ग से बाहर निकाल दिया। देवताओं ने गङ्गा को इनकी पुत्री बनाया (१. ४३, ३५–३८)।

जातरूपशिल, जलोद सागर के उत्तर में स्थित एक पर्वत का नाम है जो १३ योजन लम्बा और सुवर्णमयी शिलाओं से सुशोभित था। इस पर्वत के शिखर पर पृथिवी को धारण करनेवाले, चन्द्रमा के समान गौरवर्ण अनन्त नामक सर्प निवास करते थे। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को यहाँ भेजा (४. ४०, ४८–५०)।

जाबालि, दशरथ के एक ऋत्विज का नाम है (१. ७, ५)। अश्वमेध यज्ञ कराने के लिये दशरथ का निमन्त्रण पा कर ये अयोध्या आये थे (१. ८, ६)। मिथिला जाते समय इनका रथ दशरथ के आगे-आगे चल रहा था (१. ६९, ४–५)। दशरथ की मृत्यु के दूसरे दिन प्रातःकाल इन्होंने वसिष्ठ से शीघ्र ही दूसरा राजा नियुक्त करने के लिये कहा (२. ६७, ५)। 'जावालिर्ब्राह्मणोत्तमः', (२. १०८, १)। "भरत के मत का समर्थन करते हुये इन्होंने भी श्रीराम से अयोध्या लौटने के लिये कहा। इन्होंने मुख्यतः नास्तिकों के मत का अवलम्बन करके राम को समझाना चाहा कि मृत पिता के प्रति अब उनका (राम का) कोई कर्तव्य शेष नहीं है, अतः उन्हें किसी काल्पनिक आदर्श का आश्रय लेकर राज्यत्याग नहीं करना चाहिये। (२. १०८, २–१८)। श्रीराम ने इनके नास्तिक मत का खण्डन और आस्तिक मत का समर्थन किया (२. १०९, १ और बाद)। यह देखकर कि श्रीराम ने इनके तर्कों के प्रति प्रतिकूल दृष्टिकोण अपनाया है, इन्होंने कहा कि ये वास्तव में नास्तिक नहीं हैं, वरन् केवल राम को अयोध्या लौटाने के लिये ही इन्होंने

ऐसे दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया था (२. १०९, ३७--३९)। ये दृढ़व्रती भरत के साथ अयोध्या लौट आये (२. ११३, २)। श्रीराम के राज्याभिषेक के कृत्यों को सम्पन्न करने में इन्होंने वसिष्ठ की सहायता की (६. १२८, ६१)। श्रीराम के आमन्त्रण पर ये राम की सभा में पधारे जहाँ इनका राम ने आदरपूर्वक स्वागत किया (७. ७४, ४–५)। अश्वमेध यज्ञ के पूर्व श्रीराम ने इनसे भी परामर्श किया (७. ९१, २)। रामदरबार में सीता के शपथ-ग्रहण को देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये (७. ९६, २)।

जाम्बवान्, एक रीछ का नाम है जिनकी ब्रह्मा ने अपनी जँभाई से सृष्टि की थी (१. १७, ७)। इन्होंने सुग्रीव के अभिषेक में भाग लिया था (४. २६, ३४)। किष्किन्धा जाते समय लक्ष्मण ने इनके सुन्दर भवन को भी देखा था (४. ३३, ११)। इन महातेजस्वी ऋक्षराज ने सुग्रीव को दस करोड़ सैनिक दिये थे (४. ३९, २६–२७)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव इन्हें दक्षिण की ओर भेजना चाहते थे (४. ४१, २)। विन्ध्यक्षेत्र के वनों में सीता को खोजते हुये श्रान्त होकर जल के लिये इन्होंने भी अन्य वानरों के साथ ऋक्ष-बिल नामक गुफा में प्रवेश किया (४. ५०, १--८)। सम्पाति की बात सुनकर ये अत्यन्त प्रसन्न हुये और उनसे पूछा: 'सीता कहाँ है? किसने उन्हें देखा है? कौन उन्हें हर कर ले गया है? कौन ऐसा धृष्ट है जो राम और लक्ष्मण के पराक्रम को नहीं समझता?' (४. ५९, १--४)। वानर यूथपतियों की अपेक्षा सर्वाधिक वृद्ध होते हुये भी अङ्गद के पूछने पर इन्होंने बताया कि अपनी वृद्धावस्था में भी ९० योजन तक सरलतापूर्वक कूद सकते हैं, यद्यपि युवावस्था में इससे कहीं अधिक शक्ति थी (४. ६५, १०. १७)। जब अङ्गद स्वयं समुद्र लाँघने के लिये प्रस्तुत हुये (४, ६५, १७–१९) तब इन्होंने उनसे कहा कि वे पहले अपने सेवकों को ही यह कार्य करने दें (४. ६५, १९--२६)। 'महाप्राज्ञंजाम्बवान्', (४. ६५, २७)। जब अङ्गद ने स्वयं जाने के लिये पुनः जोर दिया तो इन्होंने बताया कि केवल हनुमान् ही इस कार्य को कर सकते हैं (४. ६५, ३२--३४)। "हनुमान् के आरम्भिक जीवन और पराक्रम का इतिहास बताते हुये इन्होंने हनुमान् को सागर-लङ्घन के कार्य के लिये सन्नद्ध होने के लिये प्रोत्साहित किया और उनसे बताया कि वृद्धवस्था के कारण स्वयं इस कार्य को करने में असमर्थ हैं (४. ६६, १–३७)। हनुमान् को सागर-लङ्घन के लिये सन्नद्ध देखकर इन्होंने उन्हें अपनी शुभकामनायें देते हुये कहा कि उनके लौटने तक ये एक पैर पर ही खड़े रहेंगे (४. ६७, ३०–३५)। लंका से लौटते हुये हनुमान् के भीषण गर्जन को सुनकर इन्होंने वानरों से बताया कि हनुमान् अपने कार्य में सफल होकर लौट रहे हैं (५. ५७, २२--२३)।

इन्होंने हनुमान् से लंका जाने के समय से लौटने तक का सम्पूर्ण वृत्तान्त बताने के लिये कहा (५. ५८, २--६)। "अङ्गद के पूछने पर इन अर्थवित् ने कहा कि श्रीराम और सुग्रीव की आज्ञा का अक्षरशः पालन सबका कर्तव्य है। तदनन्तर इन्होंने कहा कि विना विलम्ब के ही सबको लौट कर राम तथा सुग्रीव को समाचार देना चाहिये (५. ६०, १५--२१)।" राम ने इन्हें अपनी सेना के एक पार्श्व का रक्षक बनाया (६. ४, २१)। श्रीराम की आज्ञानुसार इन्होंने सेना की रक्षा का भार संभाला (६. ४, ३५)। 'जाम्बवांस्त्वथ संप्रेक्ष्य शास्त्रबुद्धचा विचक्षणः', (६. १७, ४५)। श्रीराम के पूछने पर इन्होंने बताया कि विभीषण पर सन्देह करने के लिये पर्याप्त आधार हैं (६. १७, ४५--४६)। इन्हें वानर-सेना के एक पार्श्व का रक्षक बनाया गया (६. २४, १८)। ये अपने भ्राता, धूम्र से छोटे होते हुये भी उससे कहीं अधिक बलवान् थे (६. २७, १०--११)। इन्होंने देवासुरसंग्राम में इन्द्र की सहायता की थी (६. २७, १२)। ये गद्गद के पुत्र थे (६. ३०, २१)। सुग्रीव और विभीषण के साथ-साथ इनसे भी नगर के वीच के मोर्चे पर आक्रमण करने के लिये कहा गया (६. ३७, ३२)। ये वीरतापूर्वक बीच के मोर्चों की रक्षा करते रहे (६. ४१, ४४--४५)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत कर दिया (६. ४६, २०)। इन्होंने सतर्कतापूर्वक वानर-सेना की रक्षा की (६. ४७, २--४)। सुग्रीव के कहने पर इन्होंने अस्त-व्यस्त वानर-सेना को पुनः संगठित किया (६. ५०, ११)। इन्होंने महानाद का वध किया (६. ५८, २२)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ४५)। ये एक तो स्वाभाविक वृद्धावस्था से युक्त थे, और दूसरे इनके शरीर में सैकड़ों वाण धँसे हुये थे, अतः ये बुझती हुई अग्नि के समान प्रतीत हो रहे थे (६. ७४, १३--१४)। "विभीषण के पूछने पर इन्होंने बताया कि ये केवल विभीषण की बोली से ही उन्हें पहचान रहे हैं क्योंकि इनकी नेत्र-ज्योति नष्ट हो गई है। इन्होंने विभीषण से यह भी पूछा कि हनुमान् अभी जीवित हैं या नहीं (६. ७४, १६--१८)।" विभीषण के पूछने पर इन्होंने बताया कि इन्हें हनुमान् की विशेष चिन्ता है क्योंकि हनुमान् के जीवित रहने पर सब कुछ ठीक हो जायगा (६, ७४, २१--२३)। जब हनुमान् इनके पास आये तो इन्होंने उनसे ओषधि-पर्वत पर जाकर चार ओषधियाँ लाने के लिये कहा जो समस्त वानरों को पुनरुज्जीवित कर देंगी (६. ७४, २६--३४)। राम की आज्ञा से ये शीघ्र अङ्गद की सहायता के लिये दौड़ पड़े (६. ७६, ६२)। श्रीराम की आज्ञा का पालन करने के लिये ये अपनी रीछों की सेना लेकर हनुमान् की सहायता करने युद्धभूमि में गये (६. ८३, ४), किन्तु मार्ग में हनुमान् द्वारा मना कर दिये जाने पर ये लौट

आये (६. ८३, ५--६)। विभीषण के आवाहन पर इन्होंने अपनी रीछों की सेना लेकर इन्द्रजित् के सैनिकों से युद्ध किया (६. ८९, २१--२४)। जब लक्ष्मण की मूर्च्छा दूर हो गई तो इनके हर्ष की सीमा न रही (६. ९१, २७)। इन्होंने महापार्श्व के रथ को ध्वस्त करके उसके घोड़ों को भी कुचल डाला (६. ९८, ८--९)। महापार्श्व ने इन्हें वाणों से आहत कर दिया (६. ९८, ११--१२)। श्रीराम के राज्याभिषेक के समय ये ५०० नदियों का जल लाये (६. १२८, ५२--५३)। राम ने इन्हें सत्कार-पूर्वक बहुमूल्य उपहार आदि दिये, जिसके पश्चात् ये अपने घर लौट आये (६. १२८, ८६--८७)। राम ने इनका स्वागत-सत्कार किया (७. ३९, २१)। श्रीराम ने इन्हें तबतक जीवित रहने का आशीर्वाद दिया जब तक प्रलय और कलियुग नहीं आ जाता (७. १०८, ३४)।

ज्योतिर्मुख, सूर्य के पुत्र, एक वानर यूथपति का नाम है जो राम की सेना में सम्मिलित हुआ था (६. ३०, ३३)। इसने एक विशाल शिला लेकर रावण पर आक्रमण किया किन्तु स्वयं आहत हो गया (६. ५९, ४२–४३)। इन्द्रजित् ने इसे आहत किया (६. ७३, ५९)।

त

तक्ष, भरत के वीर पुत्र का नाम है (७. १००, १६)। श्रीराम ने इनका अभिषेक किया (७. १००, १९)। ये भरत की सेना के साथ गये (७. १००, २०)।

तक्षक, एक नाग का नाम है। इसे पराजित करके रावण ने बलपूर्वक इसकी पत्नी पर भी अधिकार कर लिया था (३. ३२, १४; ६. ७, ९)।

तक्षशिला, गान्धार देश के एक नगर का नाम है जिसकी भरत ने स्थापना की थी। इसका विस्तृत वर्णन (७. १०१, १०–१५)।

तपन, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसने गज के साथ द्वन्द्वयुद्ध किया था (६. ४३, ९)।

तमसा, गङ्गा के निकट ही एक अन्य नदी का नाम है जिसमें महर्षि वाल्मीकि स्नान किया करते थे (१. २, ३–४)। इसका जल सत्पुरुषों के हृदय के समान निर्मल तथा घाट कीचड़ से रहित था (१. २, ५)। वनवास के प्रथम दिन सन्ध्या समय श्रीराम आदि इसके तट पर पहुँचे (२. ४५, ३२)। दूसरे दिन प्रातःकाल राम ने इस तीव्र गति से बहनेवाली भँवरों से भरी नदी को पार किया (२. ४६, २८)।

ताटका, इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली एक यक्षिणी का नाम है जो

सुन्द की पत्नी, मारीच नामक राक्षस की माता, और एक सहस्र हाथियों के बल से युक्त थी (१. २४, २५–२७)। यह मलद और करूष नामक जनपदों का विनाश करती रहती थी (१. २४, २८)। "यह यक्षिणी डेढ़ योजन तक के मार्ग को घेर कर रहती थी। विश्वामित्र ने श्रीराम से इस दुष्टचारिणी का वध करने के लिये कहा (१. २४, २९–३०)।" "श्रीराम के पूछने पर विश्वामित्र ने बताया कि यह ताटका नामक यक्षिणी सुकेतु नामक एक यक्ष-प्रमुख की पुत्री थी और सुकेतु की तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने ही ताटका को एक सहस्र हाथियों का बल दे दिया था। जब ताटका रूप-यौवन से सुशोभित होने लगी तब सुकेतु ने इसका सुन्द के साथ विवाह कर दिया। कुछ काल के पश्चात् इसने मारीच नामक पुत्र उत्पन्न किया जो अगस्त्य के शाप से राक्षस हो गया। जब अगस्त्य ने शाप देकर सुन्द को मार डाला तब इसने अपने पुत्र मारीच को साथ लेकर अगस्त्य पर आक्रमण किया। उसी समय अगस्त्य ने इसे तथा इसके पुत्र मारीच को शाप देकर क्रमशः राक्षसी और राक्षस बना दिया। (१. २५, ५–१२)।" 'पुरुषादी महायक्षी विकृता विकृतानना। इदं रूपं विहायाशु दारुणं रूपमस्तु ते ॥', (१. २५, १३)। इस शाप से ताटका का अमर्ष और भी बढ़ गया तथा वह क्रोध से मूर्च्छित हो गई (१. २५, १४)। 'यक्षीं परमदारुणाम्', (१. २५, १५)। शापसंसृष्टाम्', (१. २५, १६)। 'अधर्म्यां जहि काकुत्स्थ धर्मो ह्यस्यां न विद्यते', (१. २५, १९)। श्रीराम के धनुष की टंकार सुनकर यह क्रोध में उस दिशा की ओर दौड़ी जिधर से टंकार की ध्वनि आ रही थी (१. २६, ७–८)। "इसके शरीर की ऊँचाई बहुत अधिक थी। इसकी मुखाकृति विकृत थी। श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा : 'इस यक्षिणी का शरीर दारुण और भयंकर है, जिसके दर्शन मात्र से ही भीरु-पुरुषों का हृदय विदीर्ण हो सकता है। मायाबल से सम्पन्न होने के कारण यह अत्यन्त दुर्जय भी है।' (१. २६, ९–११)।" "अपने सम्बन्ध में राम और लक्ष्मण के वार्तालाप को सुनकर यह तीव्र गर्जन के साथ हाथ उठाकर दोनों राजकुमारों की ओर झपटी। इसने भयंकर धूल उड़ाकर राम और लक्ष्मण को थोड़े समय के लिये मोह में डाल दिया। तत्पश्चात् माया का आश्रय लेकर यह राम और लक्ष्मण पर पत्थरों की वर्षा करने लगी। राम ने अपनी बाण-वर्षा से इसकी शिलावृष्टि को रोकते हुये इसके दोनों हाथ काट डाले; जब कि लक्ष्मण ने इसके नाक और कान काट दिये। उस समय इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली यह अनेक प्रकार के रूपों से राम को मोहित करती हुई अदृश्य हो गई। इस प्रकार अदृश्य रूप से यह पत्थरों की वर्षा करने लगी। इसी समय विश्वामित्र ने श्रीराम से इसे मार

डालने के लिये कहा। राम ने इसे शब्दवेधी बाणों से सब ओर से अवरुद्ध कर दिया। इस पर जब यह क्रोध से श्रीराम की ओर झपटी तब उन्होंने इसके छाती में एक बाण मार कर इसे धराशायी कर दिया। इसे मृत देखकर इन्द्र तथा देवता श्रीराम को साधुवाद देने लगे (१. २६, १३–२७)।"

ताम्रपर्णी, सुदूर दक्षिण की एक महानदी का नाम है जिसमें अनेक ग्राह निवास करते थे (४. ४१, १७)। इसके द्वीप और जल विचित्र चन्दन वनों से आच्छादित थे और यह सुन्दर साड़ी से विभूषित युवती की भाँति अपने प्रियतम, सागर, से मिलती थी (४. ४१, १६–१८)।

ताम्रा, दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी का नाम है जिसने पुत्र सम्बन्धी अपने पति के वरदान को मन से ग्रहण नहीं किया था (३. १४, ११–१३)। इसने क्रौञ्ची, भासी, श्येनी, धृतराष्ट्री तथा शुकी नामक पाँच कन्याओं को उत्पन्न किया (३. १४, १७)।

तार, एक वानर यूथपति का नाम है जो बृहस्पति के पुत्र थे (१. १७, ११)। सुग्रीव के साथ ये भी किष्किन्धा आये (४. १३, ४)। लक्ष्मण की बात सुनकर ये शीघ्र ही एक सुन्दर शिविका लाये जिसमें रखकर वालिन् के शव को श्मशान भूमि तक ले जाया गया (४. २५, २०–२६)। किष्किन्धा जाते समय लक्ष्मण ने मार्ग में इनके सुन्दर भवन को भी देखा (४. ३३, ११)। ये पाँच करोड़ वानरों को लेकर सुग्रीव के पास आये (४. ३९, ३१)। सीता की खोज के लिये ये दक्षिण दिशा की ओर गये (४. ४५, ६)। ये अङ्गद और हनुमान् के साथ दक्षिण दिशा की ओर आये (४. ४८, १)। इन्होंने जल और वृक्ष-विहीन विन्ध्य क्षेत्रों में सीता की निष्फल खोज की (४. ४८, २–२३)। विन्ध्य क्षेत्र में सीता की खोज के पश्चात् जल के लिये इन्होंने भी ऋक्ष-बिल में प्रवेश किया (४. ५०, १–८)। ऋक्षबिल से बाहर निकलने पर इन्होंने अङ्गद के इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुये कि असफल होकर कभी घर नहीं लौटेंगे, इन्होंने मय की गुफा में शरण लेने के लिये कहा (४. ५३, २५–२६)। 'ताराधिपतिवर्चसि', (४. ५४, १)। "रावण के पूछने पर इन्होंने उसे बताया कि उसके साथ युद्ध करने में समर्थ वालिन् उस समय बाहर हैं किन्तु चारों समुद्रों से सन्ध्योपासन करके वे अब लौटते ही होंगे। फिर भी, इन्होंने रावण से कहा कि यदि उसे जल्दी हो तो वह दक्षिण समुद्र-तट पर जाकर वालिन् से मिल सकता है (७. ३४, ४–१०)।" देवताओं ने राम की सहायता के लिये इनकी सृष्टि की थी (७. ३६, ४९)।

तारा, वालिन् की पत्नी का नाम है (१. १, ६९)। वाल्मीकि ने इसके विलाप का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, २४)। दुन्दुभि से युद्ध के

समय वालिन् ने अन्य स्त्रियों सहित इसे भी दूर हटा दिया (४. ११, ३७)। जब वालिन् सुग्रीव के साथ द्वन्द्व युद्ध के लिये निकला तो इसने उसे समझाते हुये कहा कि श्रीराम और लक्ष्मण की मित्रता प्राप्त कर लेने के कारण अब सुग्रीव से युद्ध करने में कुशल नहीं है, अतः सुग्रीव को युवराज बनाकर उसकी मित्रता प्राप्त कर लेनी चाहिये (४. १५, ६–३०)। उस समय इसके हितकारी और शुभ परामर्श को वालिन् ने स्वीकार नहीं किया (४. १५, ३१)। इसका मुख चन्द्रमा के समान था (४. १६, १)। जब वालिन् ने यह शपथ ली कि वह सुग्रीव का वध नहीं करेगा, तब यह रोते-रोते वालिन् का आलिङ्गन और स्वस्त्ययन करके अन्य स्त्रियों के साथ अन्तःपुर में चली गई (४. १६, १०–१२)। 'तारया वाक्यमुक्तोऽहं सत्यं सर्वज्ञया हितम्', (४. १७, ३९)। 'तारां तपस्विनीम्', (४. १८, ५७)। वालिन् के वध का समाचार सुनकर अत्यन्त उद्विग्न हो उठी और कन्दरा के बाहर निकली (४. १९, ३–४)। श्रीराम के भय से भागने वाले वानरों को रोकने का प्रयास किया (४. १९, ६–९)। 'जीवपुत्री', (४. १९, ११)। 'रुचिरानना', (४. १९, १५)। 'चारुहासिनी', (४. १९, १७)। जब वानरों ने इसे निराशाजनक उत्तर दिया तो यह करुण विलाप करती हुई अपने मृत्यु को प्राप्त हो रहे पति के समीप गई (४. १९, १७–२१)। श्रीराम, लक्ष्मण और सुग्रीव को पार करके यह रणभूमि में आहत पड़े अपने पति के समीप पहुँची और उनकी दशा देखकर पृथिवी पर गिर पड़ी (४. १९, २५–२७)। इसने अन्य सहपत्नियों के साथ अपने पति के लिये घोर विलाप और उन्हीं के समीप बैठ कर आमरण अनशन करने का निश्चय किया (४. २०)। हनुमान् के बहुत सान्त्वना देने पर भी इसने पति के पास से हटना अस्वीकार कर दिया (४. २१, १२–१६)। सुषेण की पुत्री तारा सूक्ष्म विषयों के निर्णय करने तथा नाना प्रकार के उत्पातों के चिह्नों को समझने में सर्वथा निपुण थी (४. २२, १३)। वालिन् की मृत्यु पर यह व्याकुल होकर उसके शव पर गिर पड़ी (४. २२, ३१)। अपने पति, वालिन् का मुख सूंघकर यह विलाप करते हुये अपने वैधव्य, और एकमात्र पुत्र की निःसहायावस्था पर शोक प्रकट करने लगी (४. २३, १–१७)। जब नील ने घातक बाण को वालिन् के शरीर से निकाला तब इसने उनके घाव को अश्रुओं से नहलाते हुये अङ्गद से अपने पिता से विदा लेने के लिये कहा, और स्वयं करुण विलाप करने लगी (४. २३, १७–३०)। श्रीराम ने इसे अपने पति के शव से लिपट कर रणभूमि में ही विलाप करते देखा, जहाँ वालिन् के मन्त्रिगण चारों ओर से इसे शव से पृथक करने का प्रयास कर रहे थे (४. २४,

२५–२६)। "जब तारा को उसके पति के शव के समीप से हटाया जाने लगा तब बार-बार विलाप करती हुई उसने श्रीराम को देखा। उस समय घोर संकट में पड़ी हुई शोकपीड़ित आर्या तारा ने अत्यन्त विह्वल हो श्रीराम के समीप जाकर उनसे अपना भी वध कर देने का निवेदन किया। उसने राम से कहा कि उसके वध से राम को कोई नवीन पातक नहीं लगेगा, क्योंकि वह अपने पति की आत्मा का ही अंग है (४. २४, २७–४०)।" श्रीराम के सान्त्वना देने पर सुन्दर वेश और रूपवाली, वीरपत्नी तारा, जिसके मुँह से विलाप की ध्वनि निकल रही थी, चुप हो गई (४, २४, ४४)। करुण क्रन्दन करती हुई यह भी वालिन् के शव के साथ-साथ श्मशान भूमि तक गई (४. २५, ३५–३६)। जब शव को नदी तट पर रक्खा गया तो उसे अपने गोद में लेकर यह पुनः उस समय तक विलाप करती रही, जबतक अन्य वानरों ने इसे वहाँ से हटा नहीं दिया (४. २५, ३९–४६)। इसने वालिन् के लिये जलाञ्जलि दी (४. २५, ५०)। वालिन् की मृत्यु के बाद सुग्रीव ने इसे अपनी पत्नी बना लिया (४. २९, ४)। अङ्गद ने इसे प्रणाम किया (४. ३१, ३७)। सुग्रीव के कहने पर प्रियदर्शनी, सुभ्रुः, अनिन्दिता, प्रस्खलन्ती, मदविह्वलाक्षी, प्रलम्बकाञ्चीगुणहेमसूत्रा, सुलक्षणा, नमितांगयष्टि तारा, लक्ष्मण के पास गई (४. ३३, ३१–३८)। इसने मद्यपान कर रक्खा था, और नशे की दशा में लक्ष्मण से उनके क्रोध का कारण पूछा (४. ३३, ४०–४१)। "सुग्रीव के विरुद्ध लक्ष्मण के आक्षेपों का उत्तर देते हुये इस कार्यतत्त्वज्ञा ने बहाना बनाकर कहा कि सभी दिशाओं से वानरों को एकत्र करने के लिये उचित उपाय किये जा चुके हैं। तदनन्तर इसने लक्ष्मण से अन्तःपुर में चल कर ही राजा सुग्रीव से मिलने के लिये कहा (४. ३३, ५०–६१)।" इसने लक्ष्मण के क्रोध को शान्त करने का प्रयास किया (४. ३५, १–२३)। सुग्रीव ने बताया कि पहले भी एक बार वालिन् को मृत समझ कर उन्होंने तारा को अपनी पत्नी बना लिया था (४. ४६, ८)। सीता ने अन्य वानर-स्त्रियों के साथ इसे भी अयोध्या ले चलने के लिये कहा (६. १२३, २६)। सुग्रीव की इच्छानुसार सर्वाङ्गशोभना तारा अन्य वानर-स्त्रियों को एकत्र करके अयोध्या जाने के लिये विमान पर बैठी (६. १२३, ३१–३७)।

तारेय, एक वानर यूथपति का नाम है जिसकी देवताओं ने श्रीराम की सहायता के लिये सृष्टि की थी (७. ३६, ४९)।

तार्क्ष्यों ने ऐसी वानर सन्तान उत्पन्न की जो श्रीराम की सहायता कर सकें (१. १७, २१)।

तालजङ्घ राजवंश के राजा ने असित को पराजित किया था (१. ७०, २७–२९)।

तिमिध्वज, राजा शम्बर के लिये प्रयुक्त हुआ है (२. ९, १२)।

तुम्बुरु, एक गन्धर्व-प्रमुख का नाम है जिसकी सेवाओं का भरद्वाज ने भरत-सेना के सत्कार के लिये आवाहन किया था (२. ९१, १८)। इसने भरत के सम्मुख गायन किया (२. ९१, ४५)। रम्भा के प्रति अत्यधिक आसक्ति के कारण कुबेर के शाप से यह विराध नामक राक्षस बन गया था (३. ४, १६–१९)।

तृणबिन्दु, एक राजर्षि का नाम है जो मेरु पर्वत के निकट निवास करते थे (७. २, ७. १४)। "इनकी पुत्री पुलस्त्य के शाप से अनभिज्ञ होने के कारण उनके आश्रम में जाकर अपनी अन्य सखियों को ढूँढ़ने लगी। वहाँ महर्षि पुलस्त्य का दर्शन करते ही इसके शरीर में कुछ परिवर्तन हुये जिससे घबरा कर अपने पिता के पास आई। पुत्री में गर्भवती होने के चिह्न देखकर तृणबिन्दु ने उससे कारण पूछा। पुत्री की बात सुनकर तृणबिन्दु ने ध्यान लगाकर समस्त स्थिति जान ली। तदनन्तर ये अपनी पुत्री को महर्षि पुलस्त्य के पास ले गये और उनसे कन्या को पत्नी-रूप में ग्रहण करने के लिये कहा। पुलस्त्य के साथ विवाह हो जाने पर इनकी पुत्री ने अपनी निःस्वार्थ सेवा और भक्ति द्वारा पति को अत्यधिक प्रसन्न करके उनकी कृपा से विश्रवा नामक पुत्र को जन्म दिया। (७. २, ७–३३)।

तोरण, एक ग्राम का नाम है। केकय से अयोध्या आते समय भरत इसके दक्षिण से होते हुये आये थे (२. ७१, ११)।

त्रिकूट, लंका के एक पर्वत का नाम है जिसपर बैठकर हनुमान् ने लङ्का का दृश्यावलोकन किया था (५. २, १)। इसके उच्चतम शिखर पर ही लङ्का स्थित थी (६. ३९, १८–२०)। सब ओर फैले युद्धजन्य भीषण शब्द से इस पर्वत की कन्दरायें प्रतिध्वनित हो रही थीं (६. ४४, २६)।

त्रिजट, गार्ग्यवंशी एक ब्राह्मण का नाम है जिनके शरीर का रंग उपवास आदि के कारण पीला पड़ गया था, और जो फल-मूल की खोज में सदा फाल, कुदाल तथा हल लिये घूमा करते थे (२. ३२, २९)। यह स्वयं तो वृद्ध थे, किन्तु इनकी पत्नी अभी तरुणी थीं और इनके छोटे-छोटे बच्चे भी थे (२. ३२, ३०)। अपनी पत्नी के आग्रह पर इन्होंने, जो भृगु और अङ्गिरस के समान तेजस्वी थे, श्रीराम के पास जाकर अपनी विपन्नता का वर्णन किया (२. ३२, ३२–३४)। जब श्रीराम ने इनसे कहा कि ये जहाँ तक अपने डण्डे को फेंक सकेंगे वहाँ तक की गायें इनको मिल जायेंगी, तब इन्होंने अपनी समस्त शक्ति लगाकर डण्डे को फेंका, जो सरयू के उस पार जाकर सहस्रों गायों से भरे गोष्ठ में गिरा (२. ३२, ३६–३८)। इन्होंने समस्त

गायों को प्राप्त किया (२. ३२, ३९)। गायों के उस महान् समूह को पाकर ये अपनी पत्नी सहित अत्यन्त प्रसन्न हुये और श्रीराम को यश, बल, प्रीति तथा सुख बढ़ानेवाले आशीर्वाद देने लगे (२. ३२, ४३)।

त्रिजटा, एक राक्षसी का नाम है जिसके स्वप्न का वाल्मीकि ने पूर्व-दर्शन किया था (१. ३, ३१)। यह देखकर कि राक्षसियाँ सीता को डरा-धमका रही हैं, इसने उन सबसे बताया कि इसने एक भयंकर स्वप्न देखा है (५. २७, ४–६)। "राक्षसियों के पूछने पर इसने अपने स्वप्न का वर्णन करते हुये बताया कि स्वप्न के अनुसार श्रीराम समस्त राक्षसों पर विजय प्राप्त करके बन्धु-बान्धवों सहित रावण का विनाश कर देंगे। ऐसा कहकर इसने राक्षसियों से कहा कि वे सीता के साथ कठोर व्यवहार न करें (५. २७, ८–६१)।" रावण ने इसे बुलाया (६. ४७, ६)। रावण के आदेश पर इसने सीता को पुष्पक विमान पर बैठाया और उनके साथ ही गई (६. ४७, १३–१७)। न तो इसने पहले कभी मिथ्या-भाषण किया था और न भविष्य में कभी करेगी (६. ४८, ३०)। विभिन्न प्रकार के तर्कों द्वारा इसने सीता को यह आश्वासन दिया कि श्रीराम और लक्ष्मण मारे नहीं गये हैं (६. ४८, २२–३४)। सीता के साथ यह भी अशोकवाटिका में लौटी (६. ४८, ३६–३७)।

त्रिपुर, उन तीन नगरों का नाम है जिसको शिव ने देवताओं द्वारा प्रदत्त धनुष-बाण से विनष्ट किया (१. ७५, १२)। इसका उल्लेख (३. ६४, ७२; ५. ५४, ३१; ६. ७१, ७५)।

त्रिशङ्कु, एक राजा का नाम है जो सशरीर ही स्वर्ग जाने के लिये यज्ञ करना चाहते थे (१. ५७, १०–११)। इस प्रकार का यज्ञ कराने के लिये इन्होंने वसिष्ठ से प्रार्थना की किन्तु उनके अस्वीकार कर देने पर उन्हीं के सौ पुत्रों की शरण में गये (१. ५७, १२–२२)। वसिष्ठ-पुत्रों ने भी इनका यज्ञ कराना अस्वीकार कर दिया। साथ ही, इन्हें दूसरे पुरोहित से यज्ञ कराने को उद्यत देखकर वसिष्ठ-पुत्रों ने इन्हें चाण्डाल बन जाने का शाप दे दिया (१. ५८, ८–९)। "दूसरे दिन प्रातःकाल ये चाण्डाल हो गये। इनके शरीर का रंग नीला हो गया। कपड़े भी मैले हो गये। शरीर में रुक्षता आ गई। समस्त शरीर में चिता-भस्म लिपट गई और अंग लोहे के गहनों से युक्त हो गये (१. ५८, १०–११)।" अपने राजा को चाण्डाल के रूप में देखकर पुरवासियों और मंत्रियों ने इन्हें त्याग दिया (१. ५८, १२)। इस स्थिति में ये अयोध्या-नरेश अकेले ही महर्षि विश्वामित्र की शरण में गये, जिन्हें इन पर दया आ गई (१. ५८, १३–१६)। "अपनी पिछली कथा बताते हुये

इन्होंने विश्वामित्र से यह सिद्ध करने के लिये यज्ञ कराने का अनुरोध किया कि पुरुषार्थ दैवी गति पर विजय प्राप्त कर सकता है (१. ५८, १७–२५)। विश्वामित्र ने इन सुधार्मिक नृपपुंगव का यज्ञ कराना स्वीकार कर लिया (१. ५९, २–५)। विश्वामित्र ने अपने तप के प्रभाव से इन्हें सशरीर स्वर्ग भेज दिया (१. ६०, १४–१५)। इन्द्र तथा अन्य देवताओं ने इन्हें स्वर्ग से निष्काषित कर दिया जिसके फलस्वरूप ये सर नीचे की ओर किये हुये स्वर्ग से गिरने लगे (१. ६०, १६–१८)। विश्वामित्र ने उस समय इन्हें बीच में ही रोक दिया और क्रोध में आकर इनके लिये एक नवीन नक्षत्रमण्डल की सृष्टि कर दी (१. ६०, १८–२२)। तदनन्तर विश्वामित्र जब नवीन देवताओं की सृष्टि करने के लिये उद्यत हुये तब देवता उनके पास आये। देवगण और विश्वामित्र इस बात पर सहमत हो गये कि विश्वामित्र द्वारा रचित नक्षत्रों के बीच में नीचे की ओर सर किये हुये त्रिशङ्कु भी एक नक्षत्र के समान प्रकाशमान रहें और उनकी स्थिति देवताओं के समान रहे (१. ६०, २३–३३)।" ये पृथु के पुत्र थे, और इनके पुत्र धुन्धुमार थे (१. ७०, २३–२४)।

१. त्रिशिरा, जनस्थान के एक राक्षस का नाम है जिसका श्रीराम ने वध किया था (१. १, ४७)। वाल्मीकि ने इसकी मृत्यु का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, २०)। दूषण की सेना के एक राक्षस-वीर का नाम है जो दूषण के पीछे-पीछे चल रहा था (३. २३, ३४)। खर के १४,००० सैनिकों में से केवल यह और खर ही जीवित बच रहे (३. २६, ३६–३७)। 'खरं तु रामाभिमुखं प्रयान्तं वाहिनीपतिः। राक्षसस्त्रिशिरा नाम सन्निपत्येद-मब्रवीत् ॥', (३. २७, १)। इसने पहले स्वयं राम से युद्ध करने के लिये खर से अनुमति माँगी (३. २७, १–५)। अनुमति प्राप्त करके यह तीक्ष्ण बाणों का प्रहार और तुमुल गर्जन करता हुआ श्रीराम की ओर रथ में बैठ कर बढ़ा (३. २७, ७–८) । श्रीराम के साथ इसका युद्ध सिंह और गजराज के समान अत्यन्त भयंकर प्रतीत होता था (३. २७, ९–१०)। इसने श्रीराम के साथ घोर युद्ध करते हुये उनके ललाट पर प्रहार किया (३. २७, ११–१२)। श्रीराम ने १४ बाण छोड़कर इसके हृदय, इसके अश्वों और सारथि को बींध दिया (३. २७, १३--१६)। तीन बाणों के प्रहार से इसके तीनों मस्तक काट दिये गये जिससे यह धराशायी हो गया (३. २७, १७–१८)

२. त्रिशिरा, चन्द्रमा के समान श्वेत कान्तिवाले एक यशस्वी राक्षस का नाम है जो हाथ में तीक्ष्ण त्रिशूल धारण किये हुये बैल पर बैठ कर रावण के साथ युद्ध भूमि में आया था (६. ५९, १९)। यह कुम्भकर्ण का भतीजा था, जिसने अपने चाचा की मृत्यु पर शोक प्रकट किया (६. ६८, ७)। रावण को

सान्त्वना देते हुये यह स्वयं युद्ध-भूमि में जाने के लिये प्रस्तुत हुआ (६. ६९, १–७)। सब प्रकार की ओषधियों तथा गन्धों का स्पर्श करके युद्ध की अभिलाषा रखनेवाला त्रिशिरा, युद्ध के लिये पुरी से बाहर निकला (६. ६९, १८–१९)। यह रथ पर आरूढ़ हो धनुष-बाण हाथ में लेकर युद्धभूमि में गया (६. ६९, २२–२४)। उत्तम रथ पर आरूढ़ होकर तीन किरीटों से युक्त त्रिशिरा तीन सुवर्णमय शिखरों से युक्त हिमालय के समान सुशोभित हो रहा था (६. ६९, २४)। नरान्तक की मृत्यु होते ही यह अपने रथ पर बैठकर अङ्गद की ओर झपटा (६. ७०, १–४)। अङ्गद के साथ युद्ध करते हुये इसने अपने ऊपर फेंके गये वृक्षों और शिलाओं को काटते हुये बाणों से अङ्गद के ललाट पर प्रहार किया (६. ७०, ६–१९)। इसने नील से युद्ध किया (६. ७०, २१)। इसने हनुमान् के साथ भीषण युद्ध किया जिसमें इसके घोड़ों का तो वध हो ही गया, अन्ततः यह भी मारा गया (६. ७०, ३३–४८)।

त्वष्टा, आदित्यों में से एक नाम है, जो साहसपूर्वक राक्षसों के विरुद्ध युद्ध के लिये गये थे (७. २७, ३६)।

दक्ष, एक प्रजापति का नाम है जिनकी जया और सुप्रभा पुत्रियाँ थीं (१. २१, १५)। इनके यज्ञ के विध्वंस का उल्लेख (१. ६६, ९)। एक प्रजापति, जो पुलह के बाद हुये थे (३. १४, ९)। इनके साठ पुत्रियाँ थीं (३. १४, १०)।

१. दण्ड, एक राक्षस का नाम है जो सुमालिन् और केतुमती का पुत्र था (७. ५, ३८–४०)।

२. दण्ड—"इक्ष्वाकु के सबसे छोटे पुत्र का नाम है जो मूढ़ और विद्याहीन थे। 'इनके शरीर पर अवश्य दण्डपात होगा', ऐसा सोचकर पिता ने इनका नाम दण्ड रक्खा और इन्हें विन्ध्य तथा शैवल पर्वत के बीच का राज्य दे दिया। इन्होंने मधुमन्त नामक सुन्दर नगर बसाया और उशना को अपना पुरोहित नियुक्त किया। इस प्रकार ये अपने राज्य का व्यवस्थित रूप से पालन करने लगे। (७. ७९, १४–२०)।" इन्होंने मन और इन्द्रियों को वश में रखकर वर्षों तक अकंटक राज्य किया (७. ८०, २)। 'सुदुर्मेधा', (७. ८०, ५)। "एक बार चैत्र मास में ये अपने पुरोहित शुक्राचार्य के आश्रम पर आये। यहाँ शुक्राचार्य की कन्या, अरजा को देख कर ये काम पीड़ित हो गये। उस कन्या से उसका परिचय पूछने के पश्चात् इन्होंने उससे विवाह का प्रस्ताव किया (७. ८०, १–६)।" कन्या के अस्वीकार करने पर भी (७. ८०, ७–१२) इन्होंने उसके साथ बलात्कार किया और तदनन्तर अपने

घर लौट आये (७. ८०, १३–१७)। शुक्राचार्य ने इनके इस कुकृत्य का समाचार सुन कर इन्हें शाप दिया (७. ८१, १–१५)। इस शाप के फलस्वरूप इनका राज्य, सेवकों, सेना, और सवारियों सहित सात दिन में भस्म हो गया (७. ८१, १७–१८)।

दण्डक, एक वन का नाम है। अयोध्या के नागरिकों के विघ्न के कारण श्रीराम इसी वन में चले आये (१. १, ४०)। इसी वन में राम ने विराध का वध तथा अगस्त्य आदि ऋषियों का दर्शन किया था (१. १, ४१)। ऋषियों के निवेदन पर राम ने इस वन के राक्षसों का वध करना स्वीकार कर लिया (१. १, ४५)। इसी वन में शूर्पणखा की नाक और कान काटने के पश्चात् राम ने खर और दूषण सहित १४,००० राक्षसों का वध किया (१. १, ४६–४८)। इसी वन से रावण ने सीता का अपहरण किया था (१. १, ५३)। वाल्मीकि ने राम के इस वन में जाने का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १७)। यह दक्षिण में स्थित था (२. ९, १२)। कैकेयी ने यह वर माँगा कि श्रीराम को तपस्वी का वेश वना कर इसी वन में चले जाना चाहिये (२. ११, २७; १८, ३३)। राम ने चौदह वर्ष के लिये इस वन में वास करना स्वीकार किया (२. १९, ११)। श्रीराम ने कौसल्या को अपने दण्डकारण्य में वनवास करने के लिये निष्कासित होने का समाचार दिया (२. २०, ३०)। श्रीराम के दण्डकारण्य में निर्वासित कर दिये जाने का कैकेयी ने उल्लेख किया (२. ७२, ४२)। राम आदि ने दण्डकारण्य में प्रवेश किया (३. १, १)। इसके मनोरम दृश्य का वर्णन (३. ८, १२--१५)। किसी समय ऋषियों का भक्षण करता हुआ मारीच यहीं विचारण करता था (३. ३८, २)। विश्वामित्र का आश्रम यहीं स्थित था (३. ३८, १२–१३)। यहीं श्रीराम के वाण के प्रहार से मारीच सौ योजन दूर समुद्र में आकर गिर पड़ा (३. ३८, १९)। रावण और मारीच यहाँ श्रीराम के आश्रम के निकट आये (३. ४२, ११--१२)। लक्ष्मण ने सीता की खोज में इसका कोना-कोना ढूँढ़ा किन्तु कोई फल नहीं हुआ (३. ६१, २३)। सुग्रीव ने अङ्गद को सीता की खोज के लिये यहाँ भेजा (४. ४१, १२)। यह विन्ध्य और शैवल पर्वतों के वीच स्थित था, और राजा दण्ड के नाम पर इसका नाम दण्डकारण्य पड़ा (७. ८१, १८--१९)। इसे जनस्थान भी कहते हैं (७. ८१, १९)।

दण्डिन् , सूर्य के एक द्वारपाल का नाम है जो रावण द्वारा प्रहस्त से भेजे गये समाचार को सूर्य के पास ले गया और उनका उत्तर लाया (७. २३ख, ८–१४)।

दधिवक्त्र, एक वानर यूथपति का नाम है। किष्किन्धा जाते समय लक्ष्मण ने इनके सुसज्जित भवन को भी देखा (४. ३३, ११)। यह सुग्रीव के मामा और मधुवन के रक्षक थे (५. ६१, ९, यहाँ 'दधिमुख' है)। जब वानर मधुवन के फलमूल आदि का भक्षण करने लगे तो इन्होंने क्रुद्ध होकर वानरों को रोका परन्तु वानरों ने इन्हें ही मारा-पीटा और इधर-उधर घसीटा (५. ६१, २०-२४)। वानरों द्वारा मधुवन के विध्वंस का समाचार सुनकर इन्होंने उन पर एक वृक्ष से आक्रमण किया किन्तु अङ्गद ने इन्हें पृथिवी पर पटक दिया जिससे इनके अंग टूट गये (५. ६२, १८–२८)। अपने मन्त्रियों से परामर्श करके ये सुग्रीव को मधुवन के विध्वंस का समाचार देने गये (५. ६२, २९–४०)। सुग्रीव द्वारा अभयदान मिलने पर इन्होंने उनसे उन बानरों के विरुद्ध शिकायत की जिन्होंने मधुवन को तहस-नहस कर दिया था (५. ६३, ४–१२)। सुग्रीव से विदा लेकर ये मधुवन लौट आये और अङ्गद से क्षमायाचना करने के वाद उन्हें सुग्रीव का समाचार दिया (५. ६४, १–१२)। ये चन्द्रमा के पुत्र थे (६. ३०, २३)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ५९)। राम ने इनका आदर सत्कार किया (७. ३९, २२)।

दनु, दक्ष की एक पुत्री का नाम है जो कश्यप को विवाहित थी (३. १४, १०–११)। अपने पति की कृपा से यह अश्वग्रीव की माता बनी (३. १४, ११–१६)। कबन्ध भी इसका एक पुत्र था (३. ७१, ७)।

दन्तवक्त्र, राम के एक हास्यकार का नाम है जो उनका मनोरंजन किया करता था (७. ४३, २)।

दमयन्ती, भीम की पुत्री और नैषध की धर्मपरापण पत्नी का नाम है (५. २४, १२)।

दरद, उत्तर के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने शतबल को भेजा (४. ४३, १२)।

दरीमुख, एक वानर यूथपति कर नाम है। जो सुग्रीव के अनुरोध पर दस अरब वानरों की सेना के साथ उनके पास आया (४. ३९. २४. ३६–३७)। दक्षिण दिशा की ओर चलते समय ये वानर-सेना को जल्दी चलने के लिये उत्साहित करते चल रहे थे (६. ४, ३७)। श्रीराम ने इनका आदर-सत्कार किया (७. ३९, २२)।

दर्दुर, एक पर्वत का नाम है। भरद्वाज के आश्रम में इस पर्वत का स्पर्श करके वहने वाली हवा धीरे-धीरे चलने लगी (२. ९१, २४)।

दशरथ, अयोध्या के राजा का नाम है। राम इनके ज्येष्ठ पुत्र थे जिनका ये युवराज-पद पर अभिषेक करना चाहते थे (१. १, २०–२१)। सत्यवचन के कारण धर्म-बन्धन में वँध कर इन्होंने अपने प्रिय-पुत्र राम को वनवास दे दिया था (१. १, २३)। अयोध्यावासियों के साथ कुछ दूर तक आकर इन्होंने राम को विदा किया (१. १, २८)। राम के शोक में इनकी मृत्यु हो गई (१. १, ३२–३३)। वाल्मीकि ने इनके कृत्यों का पूर्वदर्शन किया (१. ३, ३)। वाल्मीकि ने राम के वनवास पर इनके शोक तथा अन्ततः मृत्यु का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १३)। इन्होंने अयोध्यापुरी को पहले की अपेक्षा विशेष रूप से बसाया था (१. ५, ९. २२)। "अयोध्यापुरी में रहकर राजा दशरथ प्रजावर्ग का पालन करते थे। वे वेदों के विद्वान् , सभी उपयोगी वस्तुओं के संग्रहकर्त्ता, दूरदर्शी और महान् तेजस्वी थे। नगर और जनपद की जनता उनसे बहुत अधिक प्रेम करती थी। वे इक्ष्वाकुकुल के अतिरथी वीर, यज्ञ करने वाले धर्मपरायण, जितेन्द्रिय, और महर्षियों के समान दिव्य गुण सम्पन्न राजर्षि थे। उनकी तीनों लोकों में ख्याति थी। वे बलवान् , शत्रुहीन, मित्रों से युक्त और इन्द्र-विजयी थे। धन आदि वस्तुओं के संचय की दृष्टि से वे इन्द्र और कुवेर के समान थे जिस प्रकार प्रजापति मनु संपूर्ण जगत् की रक्षा करते थे उसी प्रकार महाराज दशरथ भी करते थे। धर्म, अर्थ, और काम का सम्पादन करने वाले कर्मों का अनुष्ठान करते हुये ये सत्यप्रतिज्ञ नरेश अयोध्यापुरी का वैसे ही पालन करने थे जैसे इन्द्र अमरावती का (१. ६, १–५, २७–२८)।" "निष्पाप राजा दशरथ गुप्तचरों द्वारा अपने और शत्रु-राज्य के वृत्तान्तों पर दृष्टि रखते हुये धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करते थे। इनकी तीनों लोकों में प्रसिद्धि थी और ये उदार तथा सत्यप्रतिज्ञ थे। इन्हें कभी अपने से बड़ा और अपने समान भी कोई शत्रु नहीं मिला। जैसे देवराज इन्द्र स्वर्ग में रहकर तीनों लोकों का पालन करते थे उसी प्रकार राजा दशरथ अयोध्या में रहकर सम्पूर्ण जगत् का पालन करते थे। जैसे सूर्य अपनी तेजोमयी किरणों के साथ उदित होकर प्रकाशित होते हैं उसी प्रकार दशरथ तेजस्वी मंत्रियों से घिरे रहकर शोभा पाते थे (१. ७, २०–२४)।" सम्पूर्ण धर्मों के ज्ञाता दशरथ वंश को चलाने वाले पुत्र के अभाव में चिन्तित रहते थे; अतः उन्होंने पुत्र-प्राप्ति के लिये अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करने का विचार किया (१. ८, १–२)। अपने मंत्रियों से परामर्श करके उन्होंने ऋत्विजों और गुरुजनों को बुलाने के लिये सुमन्त्र को भेजा (१. ८, ३–४)। वेद-विद्या के पारंगत मुनियों तथा कुल-पुरोहित वसिष्ठ आदि का पूजन करने के पश्चात्

दशरथ ने पुत्र-प्राप्ति के लिये अश्वमेध यज्ञ करने की अपनी इच्छा को उनसे व्यक्त किया (१, ८, ७–९)। पुरोहितों के अश्वासनों से प्रसन्न होकर दशरथ ने अपने मंत्रियों को यज्ञ के लिये उचित व्यवस्था करने की आज्ञा दी (१. ८, १३–१९)। पुरोहितों और मंत्रियों को विदा करके दशरथ ने अन्तःपुर में जाकर अपनी महारानियों से यज्ञ के लिये दीक्षित होने के लिये कहा (१. ८, २३–२४)। सुमन्त्र ने दशरथ को बताया कि सनत् कुमार की भविष्यवाणी के अनुसार ऋष्यशृङ्ग उनके लिये पुत्रों को सुलभ करने वाले यज्ञकर्म का सम्पादन करेंगे (१. ९, १८)। दशरथ ने सुमन्त्र से पूछा कि ऋष्यशृङ्ग को किस प्रकार रोमपाद के यहाँ बुलाया गया था (१. ९, १९)। 'इक्ष्वाकूणां कुले जातो भविष्यति सुधार्मिकः। नाम्ना दशरथो राजा श्रीमान्सत्यप्रतिश्रवः ॥', (१. ११, २)। दशरथ ने अङ्गराज से मित्रता की (१. ११, ३)। राजा रोमपाद के पास जाकर दशरथ ने उनसे उनके जामाता ऋष्यशृङ्ग को अपने लिये पुत्रेष्टि यज्ञ कराने की आज्ञा माँगी (१. ११, ४–१०)। सुमन्त्र के परामर्श के अनुसार वसिष्ठ से अनुमति लेकर दशरथ सपरिवार अङ्गराज के यहाँ गये (१. ११, १२--१५)। इन्होंने ऋष्यशृङ्ग को रोमपाद के पास बैठे देखा (१. ११, १५--१६)। रोमपाद ने इनका हार्दिक स्वागत करके ऋष्यशृङ्ग से परिचय कराया (१. ११, १६--१७)। सात-आठ दिनों तक रोमपाद के साथ रहने के पश्चात् दशरथ ने शान्ता और ऋष्यशृङ्ग को आवश्यक कार्यवश अयोध्या चलने का प्रस्ताव किया (१. ११, १७--२०)। रोमपाद की अनुमति लेकर दशरथ ने अपनी रानियों सहित वहाँ से प्रस्थान किया (१. ११, २२--२३)। दशरथ ने अयोध्यावासियों के पास दूत भेजकर उन लोगों से ऋष्यशृङ्ग का सार्वजनिक स्वागत करने के लिये कहा (१. ११, २४--२५)। दशरथ अयोध्या पहुँचे (१. ११, २६--२८)। दशरथ ने अन्तःपुर में ऋष्यशृङ्ग को ले जाकर उनका पूजन किया (१. ११, २८)। कुछ समय के पश्चात् वसन्त ऋतु के आरम्भ होने पर दशरथ ने यज्ञ करने का विचार करके ऋष्यशृङ्ग से यज्ञ कराने का प्रस्ताव किया (१. १२, १--२)। दशरथ ने सुमन्त्र को सुयज्ञ, वामदेव, जाबालि इत्यादि को लाने के लिये भेजा (१. १२, ५--६)। मुनियों का स्वागत करने के पश्चात् दशरथ ने उनसे पुत्र-प्राप्ति के हेतु अश्वमेध यज्ञ करने का अपना विचार व्यक्त किया (१. १२, ७--१०)। पुरोहितों द्वारा चार पुत्र प्राप्त करने के लिये आश्वस्त होकर दशरथ ने अपने मंत्रियों को यज्ञसत्र आरम्भ करने की व्यवस्था करने का आदेश दिया (१. १२, १०--१८ । मंत्रियों और पुरोहितों को विदा करके दशरथ ने

अन्तःपुर में प्रवेश किया (१. १२, २०--२१)। वर्तमान वसन्त ऋतु के व्यतीत होनेपर जब पुनः वसन्त आया तब राजा दशरथ यज्ञ की दीक्षा लेने के लिये वसिष्ठ के पास गये (१. १३, १--४)। 'नरव्याघ्र', (१. १३, ३५)। 'राजसत्तमः', (१. १३, ३६)। समस्त व्यवस्था हो जाने पर वसिष्ठ तथा ऋष्यशृङ्ग के आदेश से दशरथ यज्ञ के लिये राजभवन से निकले (१. १३, ३५--३९)। यज्ञ-मण्डप में पहुँच कर पत्नियों सहित दशरथ ने यज्ञ की दीक्षा ली (१. १३, ४१)। राजा दशरथ ने अपने पाप को दूर करने के लिये विधिपूर्वक 'वपा' के धूंये को सूंघा (१. १४, ३७)। यज्ञ समाप्त करके अपने कुल की वृद्धि करनेवाले पुरुष शिरोमणि दशरथ ने ऋत्विजों को समस्त पृथिवी दान कर दी (१. १४, ४५)। ऋत्विजों की इच्छा से दशरथ ने उन्हें भूमि की अपेक्षा धन और गायों के रूप में दक्षिणा दी (१. १४, ४६--५२)। उपस्थित ब्राह्मणों को प्रचुर धन का दान दिया (१. १४, ५३--५५)। ब्राह्मणों ने राजा को धन्यवाद दिया (१. १४, ५५--५७)। अन्त में दशरथ ने ऋष्यशृङ्ग से अपनी कुल परम्परा की वृद्धि करनेवाले यज्ञ का सम्पादन करने के लिये कहा (१. १४, ५८)। ऋष्यशृङ्ग के आश्वासन को सुनकर दशरथ अत्यन्त हर्षित हुये (१. १४, ५९--६०)। 'राज्ञो दशरथस्य त्वमयोध्याधिपतेर्विभो। धर्मज्ञस्य वदान्यस्य महर्षि समतेजसः ॥', (१. १५, १९)। विष्णु ने अपने को चार स्वरूपों में प्रकट करके दशरथ को पिता बनाने का निश्चय किया (१. १५, ३०; १६, ८)। अग्निकुण्ड से प्रगट हुये प्राजापत्य पुरुष का दशरथ ने स्वागत किया (१. १६, १७)। प्राजापत्य पुरुष से दशरथ ने देवान्न से परिपूर्ण सुवर्णपात्र को ग्रहण किया (१. १६, २१--२३)। दशरथ ने प्राजापत्य पुरुष द्वारा प्रदत्त खीर का अर्धांश कौसल्या और शेष आधे में से दो भाग करके सुमित्रा और कैकेयी को दिया (१. १६, २६--२९)। अपनी पत्नियों के गर्भवती होने का समाचार सुनकर दशरथ अत्यन्त प्रसन्न हुये (१. १६, ३२)। यज्ञ समाप्त होनेपर दशरथ अपनी पत्नियों, मन्त्रियों और सेवकों सहित अयोध्यापुरी में लौट आये (१. १८, १--२)। इन्होंने ब्राह्मणों को आगे करके पुरी में प्रवेश किया (१. १८, ५)। ऋष्यशृङ्ग आदि को विदा करने के पश्चात् दशरथ पुत्र-प्राप्ति की इच्छा करते हुये सुखपूर्वक रहने लगे (१. १८, ७)। दशरथ को चार पुत्र पैदा हुये (१. १८, १५)। पुत्रोत्पत्ति से हर्षित दशरथ ने सूत, मागध, वन्दीजनों तथा ब्राह्मणों को प्रचुर दान दिया (१. १८, १९)। पुत्रजन्म के बारहवें दिन इन्होंने अपने बालकों के नामकरण तथा अन्य संस्कार किये (१. १८, २०--२५)। इतने गुणसम्पन्न पुत्र प्राप्त करके दशरथ अत्यन्त प्रसन्न हुये (१. १८, ३३--३४)। इन्होंने अपने पुत्रों का

विवाह करने का निश्चय किया (१. १८, ३८)। जब दशरथ पुत्रों का विवाह करने का विचार कर रहे थे तो उसी समय महर्षि विश्वामित्र पधारे जिनका इन्होंने विधिवत् स्वागत किया (१. १८, ३९--४४)। परस्पर कुशल समाचार पूछने के पश्चात् दशरथ और विश्वामित्र आदि ने यथायोग्य आसन ग्रहण किया (१, १८, ५५--४९)। राजा दशरथ ने विश्वामित्र से उनके पधारने का प्रयोजन पूछा (१. १८, ५०--५९)। विश्वामित्र के प्रस्ताव को सुनकर राजा दशरथ शोक-विह्वल हो उठे (१. १९, २--२२)। दशरथ ने विनम्रतापूर्वक विश्वामित्र को अपने पुत्रों को देना अस्वीकार करते हुए स्वयं महर्षि की सेवा करने का प्रस्ताव किया। (१. २०, १--१०)। दशरथ ने बताया कि इस समय उनकी आयु ६०,००० वर्ष की हो गई है (१. २०, ११)। इस प्रकार अपनी वृद्धावस्था आदि का तर्क उपस्थित करके दशरथ ने अपने पुत्रों को विश्वामित्र के साथ जाने की अनुमति देना अस्वीकृत कर दिया (१. २०, ११--१५. १८--२८)। 'इक्ष्वाकूणां कुले जातः साक्षाद्धर्म इवापरः। धृतिमान्सुव्रतः श्रीमान्न धर्मं हातुमर्हसि ॥', (१. २१, ६)। 'त्रिषु लोकेषु विख्यातो धर्मात्मा इति राघवः', (१. २१, ७)। अन्त में दशरथ ने विश्वामित्र की प्रसन्नता के लिये श्रीराम को उनके साथ भेजना स्वीकार कर लिया (१. २१, २२)। राजा दशरथ ने स्वस्तिवाचनपूर्वक प्रसन्न चित्त से राम और लक्ष्मण को विश्वामित्र को सौंप दिया (१. २२, १--३)। जनक के दूत से धनुष तोड़ने में श्रीराम की सफलता तथा सीता के साथ उनके विवाह के प्रस्ताव का समाचार सुनकर दशरथ अत्यन्त प्रसन्न हुये और इस विवाह प्रस्ताव के सम्बन्ध में वसिष्ठ, वामदेव इत्यादि से परामर्श किया (१. ६८, १४–१७)। वसिष्ठा आदि की स्वीकृति प्राप्त करके इन्होंने दूसरे ही दिन मिथिला के लिये प्रस्थान का निश्चय किया (१. ६८, १८)। दूसरे दिन प्रातःकाल इन्होंने सुमन्त्र को बुलाकर यात्रा की व्यवस्था से सम्बन्धित निर्देश दिये (१. ६९, १–५)। अपनी सेना तथा पुरोहितों सहित ये पाँचवें दिन विदेह नगरी में पहुँचे (१. ६९, ६–७)। विदेह में जनक ने इनका हार्दिक स्वागत किया (१. ६९, ७)। दूसरे ही दिन विवाह सम्पन्न करने के जनक के प्रस्ताव पर अपनी सम्मति दी (१. ६९, ८–१४)। अपने पुत्रों के साथ इन्होंने हर्षपूर्वक वह रात्रि व्यतीत की (१. ६९, १७)। 'अमितप्रभः दुर्धर्षः', (१. ७०, ११)। जनक के बुलाने पर अपने पुत्रों तथा पुरोहितों सहित ये उस स्थान पर गये जहाँ जनक इनकी प्रतीक्षा कर रहे थे (१. ७०, १४)। इन्होंने कहा कि वसिष्ठ इनके वंश का वर्णन करेंगे (१. ७०, १७)। वसिष्ठ ने दशरथ के वंश का इस प्रकार वर्णन किया (१. ७०, १९–४५):

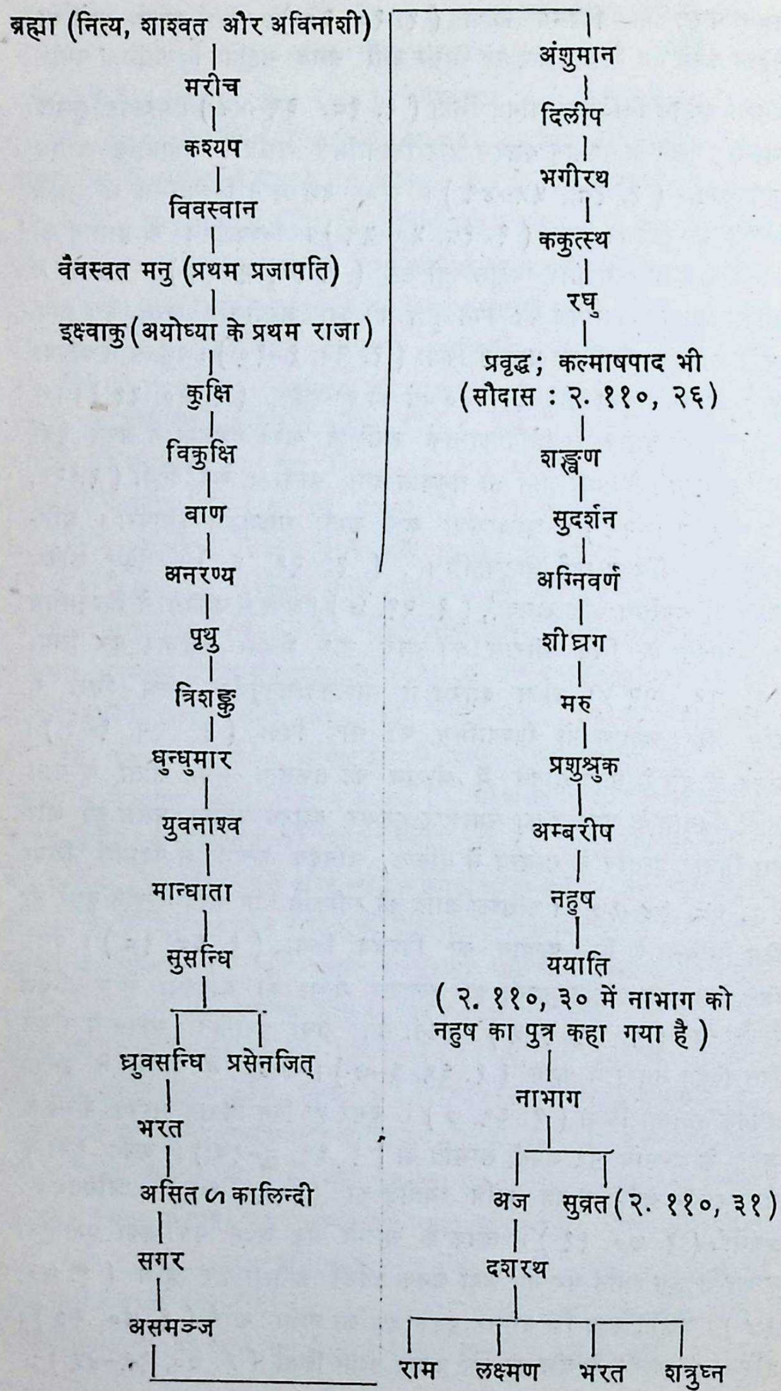
ब्रह्मा (नित्य, शाश्वत और अविनाशी)
मरीच
कश्यप
विवस्वान
वैवस्वत मनु (प्रथम प्रजापति)
इक्ष्वाकु (अयोध्या के प्रथम राजा)
कुक्षि
विकुक्षि
वाण
अनरण्य
पृथु
त्रिशङ्कु
धुन्धुमार
युवनाश्व
मान्धाता
सुसन्धि
ध्रुवसन्धि
प्रसेनजित्
भरत
असित ∽ कालिन्दी
सगर
असमञ्ज
अंशुमान
दिलीप
भगीरथ
ककुत्स्थ
रघु
प्रवृद्ध; कल्माषपाद भी
(सौदास : २. ११०, २६)
शङ्खण
सुदर्शन
अग्निवर्ण
शीघ्रग
मरु
प्रशुश्रुक
अम्बरीप
नहुष
ययाति
(२. ११०, ३० में नाभाग को नहुष का पुत्र कहा गया है)
नाभाग
अज
सुव्रत (२. ११०, ३१)
दशरथ
राम
लक्ष्मण
भरत
शत्रुघ्न

कुशध्वज की दोनों कन्याओं का भरत और शत्रुघ्न से विवाह कराने की स्वीकृति देने के पश्चात् इन्होंने उनसे श्राद्धकर्म करनेकी अनुमति माँगी (१. ७२, १९)। इन्होंने विधिवत् श्राद्ध करने के पश्चात् दूसरे दिन अपने पुत्रों के लिये ब्राह्मणों को गायों का दान दिया (१. ७२, २१–२५)। इन्होंने अपने साले, केकय-राजकुमार युधाजित् , का स्वागत किया (१. ७३, २–६)। दूसरे दिन प्रातःकाल ये ऋषियों को आगे करके जनक की यज्ञशाला में गये (१. ७३, ७)। पुत्रों का विवाह कर्म देखने के पश्चात् पुत्रों के पीछे गये (१. ७३, ३७)। दूसरे दिन प्रातःकाल जनक से विदा लेकर पुत्रों और ऋषियों के साथ अयोध्या के लिये प्रस्थान किया (१. ७४, ६–९)। मार्ग में पक्षियों के चहचहाने तथा मृगों के विशेष रूप से जाने के अर्थ के सम्बन्ध में वसिष्ठ से पूछा (१. ७, ९–१२)। परशुराम के आने से जो प्रकृति में भयंकर उत्पात हुये उनके बीच भी स्थिर-चित्त रहे (१. ७४, १४–१६)। इन्होंने मधुर शब्दों में श्रीपरशुराम को राम से युद्ध करने से विरत करने का प्रयास किया (१. ७५, ५–९)। परशुराम के चले जाने पर अपने पुत्र को छाती से लगा कर अपना मन शान्त किया और सेना को अयोध्या की ओर कूच करने का आदेश दिया (१. ७७, ४–६)। पुरवासियों ने इनका स्वागत किया, जिसके पश्चात् ये राजकुमारों सहित अन्तःपुर में गये और वहाँ स्वजनों ने इनका स्वागत किया (१. ७७, ७–१०)। इन्होंने भरत को अपने मामा के साथ केकय जाने की अनुमति दी (१. ७७, १६--१७)। भरत के चले जाने पर राम और लक्ष्मण इनकी सेवा-पूजा में संलग्न रहने लगे (१. ७७, २१)। ये केकय गये अपने दोनों पुत्रों, भरत और शत्रुघ्न, को सदा स्मरण किया करते थे (२. १, ४)। यद्यपि ये अपने चारों पुत्रों पर समान रूप से स्नेह रखते थे, तथापि राम के विशिष्ट गुणों के कारण उनके प्रति अधिक आकृष्ट रहते थे (२. १, ५–६)। राम को सर्वगुण सम्पन्न देखकर इन्होंने उनका युवराज-पद पर अभिषेक करने का निश्चय किया (२. १, ३४–४१)। अपने मन्त्रियों से परामर्श करके इन्होंने अन्य देशों के राजाओं को भी बुलाया (२. १, ४३–४५)। जल्दी के कारण ये जनक तथा केकयराज को आमन्त्रित नहीं कर सके (२. १, ४७)। राजा से सम्मानित होकर विनीतभाव से उन्हीं के निकट बैठे हुये समस्त नरेशों तथा पुरवासियों से घिरे दशरथ उस समय देवताओं के बीच विराजमान इन्द्र के समान सुशोभित हो रहे थे (२. १, ५०)। इन्होंने राम को युवराजपद पर नियुक्त करके स्वयं राजकार्य से विश्राम लेने की अपनी इच्छा प्रकट करते हुये उसके लिये उपस्थित लोगों से स्वीकृति माँगी (२. २,

१–१६)। सभासदों ने इनके प्रस्ताव का सहर्ष अनुमोदन करते हुये इनसे श्रीराम को युवराज पद पर नियुक्त करने के लिये कहा (२. २, १७–२२)। इन्होंने सभासदों से पूछा कि वे श्रीराम को क्यों युवराज बनाना चाहते हैं (२. २, २३–२५)। जब सभासदों ने श्रीराम के गुणों की चर्चा की तो इन्होंने उनके प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया (२. ३, १–२)। तदनन्तर इन्होंने वसिष्ठ और वामदेव से उसी चैत्र मास में राम के अभिषेक की तैयारी करने के लिये कहा (२. ३, ३–४)। सभासदों ने इनकी इस आज्ञा का स्वागत किया (२. ३, ५)। इन्होंने वसिष्ठ से कहा कि वे सेवकों को तैयारी करनेका आदेश दें (२. ३, ५–६७)। वसिष्ठ से यह सुनकर कि अभिषेक की समस्त तैयारी पूरी हो गई है, इन्होंने सुमन्त्र से राम को बुलवाया (२. ३, २१--२३)। उस समय राजभवन में उपस्थित पूर्व, उत्तर, पश्चिम, और दक्षिण के भूपाल, म्लेच्छ, आर्य, तथा वनों में रहनेवाले अन्यान्य मनुष्य राजा दशरथ की प्रशंसा कर रहे थे (२. ३, २४--२७)। जब राम ने इनके चरणों में प्रणाम किया तो इन्होंने स्नेहपूर्वक श्रेष्ठ आसन पर बैठाया (२. ३, ३२--३४)। राम को युवराज बनाने की अपनी इच्छा की विधिवत् घोषणा की (२. ३, ३८–४६)। 'निश्चयज्ञः', (२. ४, १)। अपने मन्त्रियों से परामर्श करके दूसरे ही दिन अभिषेक करने का निश्चय किया (२. ४, १--२)। पुनः सुमन्त्र को राम को बुलाने के लिये भेजा (२. ४, ३)। "राम के आने पर उन्हें दूसरे ही दिन अभिषिक्त करने की अपनी इच्छा बताते हुये कहा कि इस शुभ कार्य में विलम्ब हानिकर होगा क्योंकि इनका स्वास्थ्य दिनों-दिन गिरता जा रहा है। तदनन्तर इन्होंने श्रीराम को व्रत करते हुये कुशासन पर सीता के साथ रात्रि व्यतीत करने का आदेश देकर कहा कि जब तक भरत नगर से बाहर, अपने मामा के पास हैं तब तक ही उनका अभिषेक हो जाना उचित है। इसके बाद इन्होंने राम को जाने की आज्ञा दी (२. ४, ११--२८)।" इन्होंने वसिष्ठ से कहा कि वे राम और उनकी पत्नी सीता को राज्य की प्राप्ति के लिये उपवास व्रत का पालन करायें (२. ५, १–२)। वसिष्ठ के लौटने पर उनका विधिवत् स्वागत करके इन्होंने उनसे पूछा : 'क्या आपने मेरा अभिप्राय सिद्ध किया ?' (२. ५. २३)। वसिष्ठ की अनुमति से इन्होंने जनसमुदाय को विदा करके अन्तःपुर में प्रवेश किया (२. ५, २५–२६)। राम को युवराज बनाने के इनके निर्णय की अन्यजनों ने अत्यन्त सराहना की (२. ६, २०–२४)। पूर्वकाल में देवासुर संग्राम के समय कैकेयी ने इनकी प्राणरक्षा की थी जिसके फलस्वरूप इन्होंने उस समय कैकेयी को दो वर देने का वचन दिया था (२. ९, ११–१८)। राम के अभिषेक का शुभ समाचार देने

के लिये इन्होंने कैकेयी के भवन में प्रवेश किया (२. १०, ९–११)। अन्तःपुर में प्रवेश करके जब रानी कैकेयी को उत्तम शय्या पर उपस्थित नहीं देखा तो कामबल से संयुक्त इन्होंने प्रतिहारी से कैकेयी का पता पूछा (२. १०, १६--१९)। इन्होंने कैकेयी को क्रोधागार में भूमि पर पड़े देखा (२. १०, २१--२३)। 'कामी', (२. १०, २७)। "इन्होंने अत्यन्त मधुर वचनों में कैकेयो से पूछा : 'क्या किसी ने तुम्हारा तिरस्कार अथवा अपमान किया है ? यदि तुम्हारा शरीर अस्वस्थ है तो मैं बड़े से बड़े चिकित्सक को बुला सकता हूँ ।' इस प्रकार कैकेयी को प्रसन्न करने का प्रयास करते हुये इन्होंने अपने साम्राज्य के दूरस्थ प्रदेशों तक की बहुमूल्य सामग्रियों को प्रस्तुत करने का वचन दिया। इनके बहुत कहने पर कैकेयी को कुछ सान्त्वना मिली और उसने उठकर अपना मनोरथ कहने का विचार किया (२, १०, २६--४३)।" 'तं मन्मथशरैर्विद्धं कामवेगवशानुगम् । उवाच पृथिवीपालं दारुणं वचः ॥'; (२. ११, १)। कैकेयी के कहने पर इन्होंने राम की शपथ लेकर यह वचन दिया कि ने उसके मनोरथ को पूर्ण करेंगे (२. ११, ४--१०)। 'सत्यसंधो महातेजा धर्मज्ञः सत्यवाक्शुचिः ।', (२. ११, १६)। जैसे मृग बहेलिये की वाणी मात्र से अपने ही विनाश के लिये उसके जाल में फँस जाता है उसी प्रकार कैकेयी के वशीभूत हुये राजा दशरथ उस समय पूर्वकाल के वरदान वाक्य का स्मरण करने मात्र से अपने ही विनाश के लिये प्रतिज्ञा-बन्धन में बँध गये (२. ११, २२)। श्रीराम के वनवास तथा भरत के राज्याभिषेक के लिये कैकेयी के आग्रह को सुनकर, ये, 'अहो ! धिक्कार है' कहकर मूर्च्छित हो गये (२. १२, १–६)। "मूर्च्छा दूर होने पर इन्होंने कैकेयी को पहले तो फटकारा और तदनन्तर उसे वर वापस लेने के लिये समझाते हुये कहा कि राम से वियुक्त होने पर इनकी मृत्यु हो जायगी, तथा अपने गुणों और चरित्र के कारण राम भी इस प्रकार के कटु व्यवहार के योग्य नहीं हैं (२. १२, ६--३६)।" इनके अत्यधिक विलाप तथा समझाने के विपरीत भी जब कैकेयी वचन पर दृढ़ रही तो इनकी समस्त इन्द्रियाँ व्याकुल हो उठीं और ये कैकेयी के मुख को एकटक देखते रहे और अन्ततः 'हा राम' कहकर लम्बी साँस खींचते हुये मूर्च्छित हो कटे वृक्ष की भाँति भूमि पर गिर गड़े (२. १२, ५१–५४)। इनकी चेतना लुप्त-सी हो गई और ये उन्माद-ग्रस्त से प्रतीत होने लगे (२. १२, ५५)। विविध प्रकार से विलाप करते हुये इन्होंने कैकेयी को फटकारा, उससे अनुरोध किया, विभिन्न प्रकार के वचन दिये, राम के गुणों की प्रशंसा की, और अन्त में मूर्च्छित होकर उसके चरणों का स्पर्श करने की चेष्टा में बीच में ही मूर्च्छित होकर गिर पड़े (२. १२, ५६–११३)। कैकेयी के

आक्षेप-युक्त वचन सुनकर ये कुछ समय तक अत्यन्त व्याकुल अवस्था में रहे, किन्तु तत्पश्चात् क्रोध युक्त वचनों से उसे फटकारते हुये श्रीराम का स्मरण करके विविध प्रकार से विलाप करने लगे (२. १३, ४–१५)। गरम उच्छ्वास लेते हुये ये आकाश की ओर देखकर रात्रि से शीघ्र समाप्त होने की प्रार्थना करने लगे जिससे निर्दय और क्रूर कैकेयी से पृथक् हो सकें (२. १३, १७–१९)। तदनन्तर इन्होंने करबद्ध होकर कैकेयी से वर वापस लेने के लिये प्रार्थना की (२. १३, २०–२४)। किन्तु कैकेयी को अपने आग्रह पर दृढ़ देखकर ये पुनः मूर्च्छित हो गये (२. १३, २५–२६)। प्रातः-काल जब इन्हें जगाने के लिये मनोहर वाद्यों के साथ मंगल-गान होने लगा तब इन्होंने तत्काल उन सबको बन्द करने की आज्ञा दी (२. १३, २७)। जब कैकेयी ने सत्य पर दृढ़ रहने की प्रेरणा देकर अपने वरों की पूर्ति के लिये दुराग्रह किया तब इन्होंने त्रस्त होकर उससे अपना समस्त सम्बन्ध विच्छेद करके कहा:—'तू और तेरा पुत्र मुझे जलाञ्जलि न दे' (२. १४, १४–१८)। तीखे कोड़े की मार से पीड़ित हुये उत्तम अश्व की भाँति कैकेयी द्वारा प्रेरित होने पर व्यथित होकर इन्होंने अपने धर्मपरायण, परमप्रिय ज्येष्ठ पुत्र राम को देखने की इच्छा प्रगट की (२. १४, २३–२४)। "दूसरे दिन प्रातःकाल वसिष्ठ के आग्रह पर जब सुमन्त्र इन्हें अभिषेक समारोह को देखने के लिये बुलाने आये तब इन्होंने उनसे कहा : 'तुम्हारे वचन मेरे मर्मस्थानों को और अधिक आघात पहुँचा रहे हैं।' शोक के कारण ये कुछ और नहीं बोल सके (२. १४, ५४–५७)। जब सुमन्त्र को कैकेयी की आज्ञा मानने में इन्होंने संकोच करते देखा तो स्वयं ही उनसे राम को बुलाने के लिये कहा (२. १४, ६२–६४)। इन्होंने राम को शीघ्र बुलाने के लिये सुमन्त्र को आज्ञा दी (२. १५, २५, २६)। महल में आकर श्रीराम ने पिता को कैकेयी के साथ सुन्दर आसन पर विराजमान देखा, किन्तु उस समय उनका मुख सूख गया था और वे अत्यन्त विषादग्रस्त दिखाई पड़ रहे थे (२. १८, १)। जब राम ने इनके चरणों में प्रणाम किया तो यह केवल 'राम' शब्द का उच्चारण करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कह सके (२. १८, २–३)। इनका भयंकर रूप देखकर राम अत्यन्त भयभीत हो उठे (२. १८, ४)। "राम ने देखा कि दशरथ की इन्द्रियों में प्रसन्नता नहीं थी, वे शोक और संताप से दुर्बल हो रहे थे; उनका चित्त अत्यन्त व्यथित था; ऐसे प्रतीत हो रहे थे मानों तरंगों से उपलक्षित अक्षोभ्य समुद्र क्षुब्ध हो उठा हो, सूर्य को राहु ने ग्रस लिया हो, अथवा किसी महर्षि ने झूठ बोल दिया हो (२. १८, ५–६)।" 'महानुभावः', (२. १८, ४१)। श्रीराम ने इनसे पूछा : 'परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ

कि आज दुर्जय और शत्रुओं का दमन करनेवाले महाराज मुझसे पहले की भाँति प्रसन्नतापूर्वक क्यों नहीं बोल रहे हैं ?' (२. १९. ३)। कैकेयी की बात सुनकर शोक में डूबे हुये राजा दशरथ लम्बी सांस खींच कर बोले, 'धिक्कार है !', और इतना कहकर मूर्छित होकर सुवर्णभूषित शय्या पर गिर पड़े (२. १९, १७)। राम ने इन्हें उठाकर बैठाया (२. १९, १८)। जब राम ने कैकेयी को बताया कि वे पिता की आज्ञा का बिना किसी संकोच के ही पालन करेंगे, तो ये शोक के आवेग में कुछ बोल न सके और फूट-फूट कर रोने लगे (२. १९, २७)। राम ने इनके चरणों में प्रणाम किया (२. १९, २८)। राम के निर्वासन का समाचार जानकर अन्तःपुर की शोकग्रस्त रानियों ने विलाप करना आरम्भ किया, और उनके इस घोर आर्तनाद को सुनकर ये पुत्रशोक से सन्तप्त हो बिछौने पर ही पड़ गये (२. २०, ७)। 'सत्यप्रतिज्ञः', (२. २०, २४)। 'सत्यः सत्याभिसंधश्च नित्यं सत्यपराक्रमः। परलोकभयाद्भीतो निर्भयोऽस्तु पिता मम ॥', (२. २२, ९)। 'धर्मज्ञतां श्रेष्ठः', (२. २४, ३०)। राम को निर्वासित करने के कारण नगरवासियों ने उनकी भर्त्सना की (२. ३३, १०–११)। "राम के आगमन की सूचना देने के लिये सुमन्त्र ने भीतर आकर देखा कि पृथिवीपति महाराज दशरथ राहुग्रस्त सूर्य, राख से ढँकी आग, तथा जलशून्य सरोवर के समान श्रीहीन हो गये हैं। उनकी समस्त इन्द्रियाँ संताप से कलुषित हो रही थीं और उनका चित्त व्याकुल था (२. ३४, २--३)। 'स सत्यवाक्यो धर्मात्मा गाम्भीर्यात्सागरोपमः। आकाश इव निष्पङ्को नरेन्द्रः प्रत्युवाच तम् ॥', (२. ३४, ९)। इन्होंने सुमन्त्र से कहा : 'यहाँ जो कोई भी मेरी स्त्रियाँ हैं उन सब को बुलाओ क्योंकि मैं उन सब के साथ ही श्रीराम को देखना चाहता हूँ' (२. ३४, १०)। जब समस्त रानियाँ आ गयीं तब इन्होंने राम को बुलाया (२. ३४, १४)। दूर से ही हाथ जोड़कर अपने पुत्र को आते देख ये सहसा अपने आसन से उठकर बड़े वेग से उनकी ओर दौड़े किन्तु पहले से ही दुःख से व्याकुल होने के कारण पृथिवी पर गिर कर मूर्छित हो गये (२. ३४, १६--१७)। राम, लक्ष्मण और सीता इत्यादि ने इन्हें उठा कर शय्या पर लिटा दिया (२. ३४, १८--२०)। "जब राम ने विदा माँगी तो इन्होंने उनसे कहा : 'मैं कैकयी को दिये हुये वर के कारण मोह में पड़ गया हूँ। तुम मुझे बन्दी बनाकर स्वयं ही अब अयोध्या के राजा बन जाओ।' (२. ३४, २५–२६)। "श्रीराम को वन जाने की अनुमति देते हुये इन्होंने उनसे एक रात और ठहर जाने का आग्रह किया जिससे उन्हें एक दिन और निकट रख कर देख सकें। अपनी निर्दोषिता का आश्वासन देते हुये इन्होंने राम से कहा :

'मुझे तुम्हारा वन में जाना अच्छा नहीं लग रहा है। कुलोचित सदाचार का विनाश करनेवाली कैकेयी ने मुझे वरदान के लिये प्रेरित करके मेरे साथ छल किया है।' इस प्रकार कहते हुये इन्होंने राम के चरित्र और स्वभाव की प्रशंसा की (२. ३४, ३०–३८)।" इन्होंने राम को छाती से लगाया और उसके बाद मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़े (२. ३४, ६०)। 'यन्महेन्द्रमिवाजय्यं दुष्प्रकम्प्यमिवाचलम्। महोदधिमिवाक्षोभ्यं सन्तापयसि कर्मभिः ॥', (२. ३५, ७)। 'मावमंस्था दशरथं भर्तारं वरदं पतिम्', (२. ३५, ८)। 'मा त्वं प्रोत्साहिता पापैर्देवराजसमप्रभम्', (२. ३५, ३०)। 'श्रीमान्दशरथो राजा देवि राजीवलोचनः', (२. ३५, ३१)। 'रामे हि यौवराज्यस्थे राजा दशरथो वनम्। प्रवेक्ष्यति महेष्वासः पूर्ववृत्तमनुस्मरन् ॥', (२. ३५, ३५)। इन्होंने सुमन्त्र को आज्ञा दी कि वे श्रीराम के साथ सेना, खजाना तथा मनोरञ्जन की समस्त सामग्रियाँ आदि भी भेजें (२. ३६, १–९)। कैकेयी के इस प्रस्ताव पर आपत्ति करने पर इन्होंने उसे फटकारा (२. ३६, १३–१४)। कैकेयी के यह कहने पर कि राम को भी असमञ्ज की भाँति खाली हाथ ही वन जाना चाहिये, ये उसे धिक्कारने लगे (२. ३६, १६–१७)। "इन्होंने कैकेयी से कहा : 'तू दुःखद मार्ग का आश्रय लेकर कुचेष्टा कर रही है। अब मैं भी यह राज्य, धन और सुख छोड़कर श्रीराम के पीछे चला जाऊँगा। ये सब लोग भी उन्हीं के साथ जायेंगे। तू अकेली राजा भरत के साथ चिरकाल तक सुखपूर्वक निष्कण्टक राज्य का उपभोग करती रही।' (२. ३६, ३२–३३)।" वसिष्ठ के वचनों का अनुमोदन करते हुये इन्होंने सीता को वल्कल धारण करके राम के साथ जाने के कैकेयी के आग्रह पर कैकेयी को फटकारा (२. ३८, २, ११)। "राम आदि को मुनिवेष में देखकर ये शोक से अचेत हो गये। चेतना आने पर घोर विलाप करते हुये इन्होंने कहा कि पूर्वजन्म के किसी पाप के कारण ही इन पर यह विपत्ति आ पड़ी है। इस प्रकार कहते-कहते इनके नेत्रों में आँसू भर आये और एक ही वार 'हे राम' कहकर मूर्च्छित हो गये (२. ३९, १–८)।" तदनन्तर चेतना आने पर इन्होंने सुमन्त्र से कहा कि वे एक सुसज्जित रथ पर बैठाकर राम आदि को नगर की सीमा तक छोड़ने के लिये ले जायँ (२. ३९, ९–११)। इन्होंने कोषाध्यक्ष को बुलाकर सीता को इतने बहुमूल्य वस्त्र और आभूषण देने के लिये कहा जो चौदह वर्षों तक के लिये पर्याप्त हों (२. ३९, १४–१५)। वन जाने के पूर्व राम, लक्ष्मण और सीता ने हाथ जोड़कर दीनभाव से इनके चरणों में प्रणाम करके इनकी प्रदक्षिणा की (२. ४०, १--२)। राम को विदा देने के लिये पुरवासियों और स्त्रियों के साथ नंगे पाँव ही महल से बाहर कुछ दूर तक आये (२. ४०, २८)।

राम के लिये पुरवासियों को शोकाकुल देखकर ये मूर्च्छित हो गये (२. ४०, ३६)। "मन्त्रियों ने इनसे कहा : 'राजन्। जिसके लिये यह इच्छा की जाय कि वह पुनः शीघ्र लौट आये, उसके पीछे दूर तक नहीं जाना चाहिये।' उस समय इन सर्वगुणसम्पन्न राजा के शरीर पसीने से भीग रहा था और ये विषाद की मूर्त्ति से प्रतीत हो रहे थे। अपने मन्त्रियों की उपर्युक्त बात सुनकर ये वहीं खड़े हो गये और रानियों सहित अत्यन्त दीनभाव से पुत्र की ओर देखने लगे (२. ४०, ५०--५१)।" अन्तःपुर की स्त्रियों के घोर आर्तनाद को सुनकर ये अत्यन्त दुःखी हो गये (२. ४१, ८)। "वन की ओर जाते हुये राम के रथ की धूल जब तक दिखाई देती रही, इन्होंने उधर से अपनी दृष्टि नहीं हटाई। जब राम के रथ की धूल भी सर्वथा दृष्टि से ओझल हो गई, ये अत्यन्त आर्त्त होकर पृथिवी पर गिर पड़े (२. ४२, १--३)।" "उस समय सहारा देने के लिये कौसल्या तथा कैकेयी इनके समीप आईं। उस समय कैकेयी को देखते ही नय, विनय, और धर्म से सम्पन्न ये व्यथित हो उठे। इन्होंने कैकेयी से दूर रहने के लिये कहा क्योंकि इन्होंने उसके परित्याग का निश्चय कर लिया था। तब कौसल्या ने इन्हें सहारा देकर उठाया। विविध प्रकार से राम का स्मरण तथा शोक में विलाप करते हुये ये कौसल्या के साथ महल में आये। यहाँ इन्होंने सेवकों से अपने को कौसल्या के भवन में ले चलने के लिये कहा। शय्या पर भी ये अत्यन्त व्यथित होकर विलाप करते रहे (२. ४२, ४-३४)।" वन में श्रीराम ने इनका स्मरण किया (२. ४६, ५-६)। नगर-वासी स्त्रियों ने कहा कि राम के वनवासी हो जाने पर दशरथ जीवित नहीं रहेंगे, और दशरथ की मृत्यु के पश्चात् अयोध्या के राज्य का भी लोप हो जायगा (२. ४८, २६)। ग्रामवासियों ने इन पर आक्षेप किया (२. ४९, ३--७)। वन में लक्ष्मण ने इनका स्मरण किया (२. ५१, ११--१२. १७--२५)। 'शोकोपहतचेताश्च वृद्धश्च जगतीपतिः। कामभारावसन्नश्च तस्मादेतद्ब्रवीमि ते ॥', (२. ५२, २३)। राम ने सुमन्त्र से इनके पास एक सन्देश भेजा (२. ५२, २७--३०. ३२)। श्रीराम ने लक्ष्मण से अयोध्या लौट जाने के लिये कहते हुये इनके अत्यन्त शोकसंतप्त और दुःखी होने का उल्लेख किया (२. ५३, ६--१४)। सुमन्त्र से राम के अन्तिम संदेश को सुनकर ये पुनः मूर्च्छित हो गये (२. ५७, २४--२६)। उस समय कौसल्या तथा सुमित्रा ने इन्हें सहारा देकर उठाया (२. ५७, २८)। चेतना आने पर इन्होंने राम का वृत्तान्त सुनने के लिये सुमन्त्र को बुलाया (२. ५८, १)। जिस प्रकार जंगल से तुरन्त पकड़ कर लाया हुआ हाथी अपने यूथपति गजराज का चिन्तन करके लम्बी साँस खींचता हुआ अत्यन्त सन्तप्त होता है, उसी प्रकार वृद्ध राजा

दशरथ भी श्रीराम के लिये अत्यन्त सन्तप्त हो लम्बी साँस खींचते हुये उन्हीं का ध्यान कर अस्वस्थ हो गये (२. ५८, ३)। सुमन्त्र से श्रीराम आदि का वृत्तान्त सुनकर इन्होंने अपने हार्दिक उद्गार प्रकट करते हुये विलाप किया और तदनन्तर शोक से मूर्च्छित हो गये (२. ५९, १७–३२) 'सानुक्रोशो-वदान्यश्च प्रियवादी च राघवः', (२. ६१, २)। "विलाप करती हुई कौसल्या के वचन को सुनकर 'हा राम' कहते हुये ये मूर्च्छित हो गये। उस समय इन्हें अपने एक पुराने दुष्कर्म का स्मरण हो आया जिसके कारण इन्हें यह दुःख प्राप्त हुआ था (२. ६१, २७)।" कौसल्या के कठोर वचन को सुनकर इन्होंने यह अनुभव किया कि ये दो शोक से दग्ध हो रहें—एक श्रीराम के वियोग से और दूसरे अपने पुराने दुष्कर्म से (२. ६२, १–५)। शोक से अत्यन्त व्याकुल हो इन्होंने कौसल्या को हाथ जोड़कर मनाने का प्रयास किया (२. ६२, ६–९)। कौसल्या के सान्त्वना देने पर, रात्रि का समय हो जाने के कारण इन्हें हर्ष और शोक की अवस्था में निद्रा आ गई (२. ६२, १९–२०)। "ये दो घड़ी के बाद ही पुनः जाग गये। पत्नी सहित राम के वन चले जाने के दुःख से मर्माहत, इन्होंने अपने पुरातन पाप का स्मरण करके उसे कौसल्या से बताने का निश्चय किया। उस दिन राम के वन में चले जाने के बाद छठवीं रात्रि व्यतीत हो रही थी। पुत्रशोक से व्याकुल हो इन्होंने अपने पुराने पाप की कथा का कौसल्या से वर्णन करना आरम्भ किया (२. ६३, १–५)।" अपने इस पाप का वर्णन करते हुये इन्होंने कौसल्या को बताया कि किस प्रकार एक अँधेरी रात में सरयू नदी के जल से अपने घड़े को भरते हुये एक नवयुवक मुनि का इन्होंने भूल से वध कर दिया था (२. ६६, ६–५३)।" इन्होंने बताया : 'उस मरणासन्न मुनिकुमार ने मुझे अपने अन्धे माता-पिता के पास जाने के लिये कहा। मैं उसकी आज्ञानुसार उस वृद्ध और अन्धे मुनि दम्पति के पास जाकर अपने अपराध को स्वीकार किया। उस समय अपनी वृद्धावस्था के एक मात्र पुत्र के मारे जाने से उस वृद्ध मुनि-दम्पति ने मुझे शाप दे दिया और स्वयं अग्नि में प्रवेश करके प्राण त्याग दिया।" (२. ६४, २–६०)। "इस कथा का वर्णन करने के बाद ये श्रीराम के लिये घोर विलाप करने लगे। धीरे-धीरे इनके नेत्रों की ज्योति समाप्त होने लगी और हाथ-पैर शिथिल हो गये। उस समय कौसल्या और सुमित्रा के निकट विलाप करते हुये तथा अर्ध-रात्रि व्यतीत होते-होते इनकी मृत्यु हो गई (२. ६४, ६२–७८)।" कौसल्या इनकी मृत्यु पर विलाप करने लगीं (२. ६६, १–१२)। भरतादि राजकुमारों की अनुपस्थिति के कारण इनके शव को तेल में सुरक्षित रक्खा गया (२. ६६, १४–१५. २७)।

अन्तःपुर की अन्य स्त्रियों ने इनके लिये विलाप किया (२. ६६, १६–२३)। अयोध्या के नागरिकों ने भी इनके लिये विलाप किया (२. ६६, २४–२५)। भरत ने स्वप्न में इनको देखा (२. ६९, ७–२१)। वसिष्ठ के दूतों से भरत ने इनका कुशल-समाचार पूछा (२. ७०, ७)। इनकी कैकेयी के महल में वहुधा उपस्थिति का उल्लेख करते हुये भरत ने अपनी माता कैकेयी से इनके सम्वन्ध में पूछा (२, ७२, १२–१३)। कैकेयी ने भरत को इनकी मृत्यु का समाचार दिया (२. ७२, १५)। भरत इनकी मृत्यु पर विलाप करने लगे (२. ७२, १६–२१, २६–३५)। भरत के पूछने पर कैकेयी ने उन्हें इनके अन्तिम वचन सुनाये (२. ७२, ३५–३७)। भरत से कैकेयी ने उन परिस्थितियों का वर्णन किया जिनमें राम को वन जाना पड़ा और इनकी मृत्यु हुई (२. ७२, ४७–५४)। इनकी मृत्यु का कारण वनने के लिये भरत ने कैकेयी को धिक्कारा (२. ७३, १–७)। 'धर्मात्मा', (२. ७३, १५)। 'भृशधार्मिकः', (२. ७४, ३)। इनका अन्त्येष्टि-संस्कार सम्पन्न हुआ (२. ७६, २–२३)। 'गतो दशरथः स्वर्गं यो नो गुरुतरो गुरुः', (२. ७९, २)। 'कच्चिद्दशरथो राजा कुशली .सत्यसंगरः। राजसूयाश्वमेधानामाहर्ता धर्मनिश्चयः ॥', (२. १००, ८)। 'धीमान्स्वर्गं गतो राजा यायजूकः सतां मतः', (२. १०२, ५)। भरत ने राम को इनके स्वर्गवास का समाचार दिया (२. १०२, ५–६)। राम ने इनकी मृत्यु पर विलाप किया (२. १०३, ८–१३)। श्रीराम ने भरत को बताया कि दशरथ ने इसी आश्वासन के साथ कैकेयी से विवाह किया था कि उसके पुत्र को राज्य मिलेगा (२. १०७, ३)। कैकेयी का ऋण चुका देने के कारण ही इन्हें स्वर्ग प्राप्त हुआ (२. ११२, ६)। मारीच ने बताया कि महर्षि विश्वामित्र उसका वध और अपना यज्ञ पूरा करने के लिये राजा दशरथ से श्रीराम को माँग कर अपने साथ लाये (३. ३८, ४–११)। सीता ने रावण से राम को वनवास देने में इनके योगदान की चर्चा की (३. ४७, ५–१६)। 'राजा दशरथो नाम धर्मसेतुरिवाचलः। सत्यसंघः परिज्ञातो यस्य पुत्रः स राघवः ॥', (३. ५६, २)। 'राजा दशरथो नाम द्युतिमान्धर्मवत्सलः। चातुर्वर्ण्यं स्वधर्मेण नित्यमेवाभिपालयत् ॥ न द्वेष्टा विद्यते तस्य स तु द्वेष्टि न कंचन। स तु सर्वेषु भूतेषु पितामह इवापरः ॥ अग्निष्टोमादिभिर्यज्ञैरिष्टवानाप्तदक्षिणैः ॥', (४. ४, ६–७)। 'इक्ष्वाकूणां कुले जातो रामो दशरथात्मजः। धर्मे निगादितश्चैव पितुर्निर्देशकारकः ॥ राजसूयाश्वमेधैश्च वह्निर्येनभितर्पितः। दक्षिणाश्च तथोत्सृष्टा गावः शतसहस्रशः ॥ तपसा सत्यवाक्येन वसुधा तेन पालिता। स्त्रीहेतोस्तस्य पुत्रोऽयं रामोऽरण्यं समागतः ॥', (४. ५, ३–५)। 'विक्रान्तस्यार्यशीलस्य संयुगेष्वनिवर्तिनः। स्नुषा दशरथस्यैषा ज्येष्ठा राज्ञो

यशस्विनी ॥'. (५. १६, १७)। 'राजा दशरथो नाम रथकुञ्जरवाजिमान् । पुण्यशीलो महाकीर्तिरिक्ष्वाकूणां महायशाः ॥ राजर्षीणां गुणश्रेष्ठस्तपसा चर्षिभिः समः । चक्रवर्तिकुले जातः पुरंदरसमो बले ॥ अहिंसारतिरक्षुद्रो घृणी सत्यपराक्रमः । मुख्यस्येक्ष्वाकूवंशस्य लक्ष्मीवाँल्लक्ष्मिवर्धनः ॥ पार्थिव व्यञ्जनैयुक्तः पृथुश्रीः पार्थिवर्षभः । पृथिव्यां चतुरन्तायां विश्रुतः सुखदः सुखी ॥', (५. ३१, २–५)। 'राजा दशरथो नाम रथकुञ्जरवाजिमान्। पितेव बन्धुर्लोकस्य सुरेश्वरसमद्युतिः ॥', (५. ५१, ४)। सीता की अग्नि-परीक्षा समाप्त होने पर ये एक दिव्य विमान में बैठ कर राम और लक्ष्मण के सम्मुख प्रकट हुये और शिव ने राम तथा लक्ष्मण को इन्हें नमस्कार करने के लिये कहा (६. ११९, ७–८)। लक्ष्मण सहित श्रीराम ने देखा कि ये निर्मल वस्त्र धारण किये हुये अपनी दिव्य शोभा से देदीप्यमान थे (६. ११९, १०)। विमान पर बैठे हुये महाराज दशरथ अपने प्राणों से भी प्रिय पुत्र, श्रीराम, को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. ११९, ११)। राम की अत्यधिक प्रशंसा करते हुये इन्होंने उनसे अयोध्या लौट कर राज्यसिंहासन पर बैठने के लिये कहा (६. ११९, १०–२३)। राम के कहने पर इन्होंने कैकेयी को क्षमा किया (६. ११९, २४–२५)। लक्ष्मण का आलिङ्गन करके इन्होंने उनसे श्रीराम के प्रति निष्ठवान बने रहने के लिये कहा (६. ११९, २६–३१)। इन्होंने सीता को भी राम के प्रति निष्ठावान बनी रहने का उपदेश दिया (६. ११९, ३२–३६)। तदनन्तर सीता-सहित अपने दोनों पुत्रों से विदा लेकर ये स्वर्ग चले गये (६. ११९, ३७–३८)। जब दुर्वासा ने इनसे राम के कष्टों और दुर्भाग्य की चर्चा की तो इन्होंने सुमन्त्र को ये बातें राम से न कहने के लिये कहा (७. ५०, १०–१५)। "एक दिन ये वसिष्ठ के आश्रम पर गये जहाँ दुर्वासा भी विद्यमान थे। इन्होंने ऋषियों के चरणों में प्रणाम, और ऋषियों ने भी इनका स्वागत, किया (७. ५१, ३–५)। इन्होंने अपने वंश का भविष्य बताने के लिये महर्षि दुर्वासा से निवेदन किया (७. ५१, ७–९)। दुर्वासा की भविष्यवाणी सुनने के पश्चात् ये अयोध्या लौट आये (७. ५१, २६)।

दशार्ण, दक्षिण के कुछ नगरों का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १०)।

दाक्षिणात्य—राजा दशरथ ने दक्षिण के समस्त राजाओं को अपने अश्वमेध यज्ञ में आमन्त्रित किया था (१. १३, २८)। कैकेयी के क्रोध को शान्त करने के लिए दशरथ ने दक्षिणापथ के विविध पदार्थों को प्रस्तुत करने का आश्वासन दिया (२. १०, ३८)।

दानव (बहु०)—गंगावतरण के समय ये भी गंगा की धारा के साथ-

साथ चल रहे थे (१. ४३, ३२)। सागर-मन्थन से प्रकट अप्सराओं को इन्होंने स्वीकार नहीं किया (१. ४५, ३४–३५)। वसिष्ठ का आश्रम इनसे सेवित था (१. ५१, २४)। रावण को यह वरदान था कि दानवों के हाथ से उसकी मृत्यु नहीं होगी (३. ३२, १८)। 'देवदानवसङ्घैश्च चरितं त्वमृताशिभिः', (३. ३५, १७)। शिशिर पर्वत इनसे सेवित था (४. ४०, ३०)। जब हनुमान् सागर पार कर रहे थे तो इन लोगों ने भी उन पर पुष्पवर्षा की (५. १, ८४)। हनुमान् ने दानवों आदि से भरे हुये सागर को पार कर लिया (५. १, २१४)। एक वर्ष तक युद्ध करने के पश्चात् रावण ने इन्हें पराजित कर दिया (६. ७, १०–११)। कुम्भकर्ण ने इन्हें पराजित किया (६. ६१, १०)। जब कुम्भकर्ण के प्रहार से इन्द्र व्याकुल हो गये तब देवताओं सहित ये लोग भी ब्रह्मा की शरण में गये (६. ६१, १८–१९)। श्रीराम और मकराक्ष का युद्ध देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (६. ७९, २५)। इन्द्रजित् के वध पर इन लोगों ने भी हर्षित होकर शान्ति की साँस ली (६. ९०, ८८–८९)। जब रावण ने श्रीराम को पीड़ित किया तो ये अत्यन्त उद्विग्न हो उठे (६. १०२, ३१)। श्रीराम और रावण का युद्ध देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (६. १०२, ४५)। जब राम ने रावण से युद्ध करना आरम्भ किया तो ये व्यथित हो उठे (६. १०७, ४६)। सारी रात ये श्रीराम और रावण का युद्ध देखते रहे (६. १०७, ६५)। रावण-वध का दृश्य देखकर ये लोग भी उसी की शुभ चर्चा करते हुये अपने-अपने विमानों से यथास्थान लौट आये (६. ११२, १)। अग्निपरीक्षा देने के लिये सीता द्वारा अग्नि में प्रवेश के दृश्य को इन लोगों ने भी देखा (६. ११६, ३३)। अपनी-अपनी स्त्रियों के साथ ये लोग भी विन्ध्यगिरि के शिखरों पर क्रीड़ा के लिये आते थे (७. ३१, १६)। शैशवावस्था में ही जब हनुमान् बाल-सूर्य को पकड़ने की इंच्छा से आकाश में उड़ते हुए जा रहे थे तो इन लोगों को हनुमान् की शक्ति पर विस्मय हुआ (७. ३५, २५)। सीता के रसातल में प्रवेश करने पर ये लोग भी आश्चर्यचकित हो उठे (७. ९७, २५–२६)। श्रीराम के विष्णु-रूप में पुनः स्थित हो जाने पर ये भी अत्यन्त हर्षित हुये (७. ११०, १४)।

दिति, दैत्यों की माता का नाम है (१. ४५, १५)। सागर-मन्थन के समय सागर से प्रगट हुई वारुणी को इनके पुत्रों ने स्वीकार नहीं किया (१. ४५, ३७)। इनके पुत्रों (दैत्यों) ने अदिति के पुत्रों (देवों) से अमृत की प्राप्ति के लिये युद्ध किया (१. ४५, ४०)। इस युद्ध में इनके पुत्रों की विनाश हुआ (१. ४५, ४४)। अपने पुत्रों के इस विनाश से दुःखी होकर

इन्होंने अपने पति, कश्यप, के पास जाकर एक ऐसा पुत्र उत्पन्न करने की इच्छा प्रगट की जो इन्द्र का वध कर सके (१. ४६, १–३)। कश्यप ने इस शर्त पर इन्हें ऐसा पुत्र प्रदान करने के लिये कहा कि ये एक सहस्र वर्ष तक शौचाचार का पालन करते हुये पवित्रतापूर्वक रहें (१. ४६, ४–६)। इन्होंने कुशप्लव में जाकर घोर तपस्या की (१. ४६, ८)। इस तपस्या की अवधि में इन्द्र इनकी सेवा-टहल करते हुये इन्हें फल-मूल तथा अन्यान्य अभिलषित वस्तुयें लाकर देते थे (१. ४६, ९–११)। जब तपस्या में केवल कुल दस वर्ष शेष रह गये तव इन्होंने इन्द्र से कहा : 'मैंने तुम्हारे विनाश के लिए जिस पुत्र की याचना की थी वह जब तुम्हें विजित करने के लिये उत्सुक होगा तो उस समय मैं उसे शान्त कर दूँगी, जिससे तुम उसके साथ रहकर उसी के द्वारा की हुई त्रिभुवन-विजय का सुख निश्चिन्त होकर भोग सको।' (१. ४६, १२--१५)। "एक दिन मध्याह्न के समय जब अपने आसन पर बैठी-बैठी निद्रा का अनुभव करते हुए इनका सर झुककर पैरों पर टिक गया तो इन्हें अपवित्र जानकर इन्द्र ने इनके उदर में प्रविष्ट हो गर्भस्थ बालक के अपने वज्र से सात टुकड़े कर दिये। उस समय गर्भस्थ बालक के रोने को सुनकर इनकी निद्रा टूट गई और इन्होंने इन्द्र से कहा : 'शिशु को मत मारो, मत मारो।' माता के वचन का गौरव मानकर इन्द्र सहसा उदर से निकल आये और इनसे अपने अपराध के लिये क्षमा माँगा (१. ४६, १७--२३)।" इन्होंने इन्द्र से निवेदन किया कि गर्भस्थ शिशु के सात टुकड़े सात व्यक्ति होकर सात मरुद्गणों के स्थानों का पालन करनेवाले हो जायँ (१. ४७, १–७)। इन्द्र ने इनकी प्रार्थना स्वीकार की (१, ४७, ८–९)। ये दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी थीं (३. १४, १५; ७. ११, १६)।

दिलीप, अंशुमान के महान् पुत्र का नाम है (१. ४२, २; ७०, ३८)। संन्यास लेने के पूर्व इनके पिता ने इन्हें राजा बना दिया (१. ४२, ३)। अपने पितामहों के वध का वृत्तान्त सुनकर ये अत्यन्त चिन्तित रहते थे और अपनी बुद्धि से अत्यधिक सोच-विचार करने पर भी किसी निश्चय पर नहीं पहुँच पाते थे (१. ४२, ५)। तथापि ये सदैव इसी चिन्ता में निमग्न रहते थे कि किस प्रकार गंगा को पृथिवी पर लाकर अपने पितामहों का उद्धार करें (१. ४२, ६)। इनके भगीरथ नाम का एक पुत्र हुआ जो अत्यन्त धर्मात्मा था (१. ४२, ७)। इन्होंने अनेक यज्ञों का अनुष्ठान तथा तीस हजार वर्षों तक राज्य किया (११. ४२, ८)। अपने पितरों के उद्धार के विषय में किसी निश्चय पर पहुंचे बिना ही ये रोग से पीड़ित हो मृत्यु को प्राप्त हुये (१. ४२, ९)। अपने कर्मों के प्रभाव से इन्हें इन्द्रलोक प्राप्त हुआ (१. ४२, १०)।

अन्धे मुनि-दम्पति ने, जिनके एकमात्र पुत्र का दशरथ ने भूल से वध कर दिया था, उस मृत पुत्र के लिये दिलीप आदि को प्राप्त लोक की कामना की (२. ६४, ४२)।

दिशागजाः—चार दिग्गजों का उल्लेख किया गया है जो इस भूतल को धारण किये हुये हैं : विरूपाक्ष पूर्व दिशा के, महापद्म दक्षिण के, सौमनस् पश्चिम के, और भद्र उत्तर दिशा के रक्षक कहे गये हैं (१. ४०, १२–२३)। जब ये थकान आदि के कारण अपने मस्तक को हिलाते हैं तो भूकम्प होने लगता है (१. ४०, १५)। "अंशुमान ने अपने चाचाओं द्वारा पृथिवी में बनाये हुये मार्ग से भीतर प्रवेश करने पर एक दिग्गज को देखा जिसकी देवता, दानव, राक्षस, पिशाच, पक्षी और नाग सभी पूजा कर रहे थे। उनकी परिक्रमा करके कुशल-मंगल पूछने के पश्चात् अंशुमान ने अपने चाचाओं का समाचार तथा अश्व चुराने वाले का पता पूछा (१. ४१, ७–८)।" इन सभी दिग्गजों ने एक-एक करके अंशुमान की सफलता की शुभकामना प्रगट की (१. ४१, ९–११)। ये श्वेता की सन्तान थे (३. १४, २६)।

दीर्घायु, दशरथ के एक ऋत्विज का नाम है (१. ७, ५)।

१. दुन्दुभि, एक आसुर का नाम है जिसका वालिन् ने वध किया था। सुग्रीव ने श्रीराम को इसके महान पर्वताकार मृत शरीर को दिखाया जिसे राम ने अपने पैर के अँगूठे से दस योजन दूर फेंक दिया (१. १, ६४–६५)। यह मायाविन् का पिता था (४. ९, ४)। "इसका स्वरूप भैंसे के समान और ऊंचाई में यह कैलास पर्वत के समान प्रतीत होता था। इसके शरीर में एक सहस्र हाथियों का बल था। अपने बल के दर्प में इसने समुद्र के अधिपति तथा हिमालय को अपने साथ युद्ध के लिये ललकारा। हिमालय के परामर्श पर अन्ततः यह एक भैंसे के रूप में वालिन् के पास जाकर उसे युद्ध के लिये ललकारने लगा। वालिन् ने इसका वध करके इसके शव को दोनों हाथों से उठाकर एक योजन दूर फेंक दिया। वेगपूर्वक फेंके गये इस असुर के मुख से निकली हुइ बहुत सी रक्त की बूदें वायु के साथ उड़कर मतङ्ग मुनि के आश्रम में गिर पड़ीं (४. ११, ७–४८)।" सुग्रीव ने वालिन् के साथ इसके युद्ध का उल्लेख किया (४. ४६, ३–८)।

२. दुन्दुभि, मय और हेमा के पुत्र, एक असुर का नाम है जो मायावी तथा मन्दोदरी का भ्राता था (७. १२, १३)।

दुर्जय, खर के सेनापति का नाम है जो श्रीराम से युद्ध करने के लिये गया था (३. २३, ३२)। खर की आज्ञा से अन्य सेनापतियों के साथ इसने श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, २६–२८)।

१. दुर्धर, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है। हनुमान् ने इसको रावण के सिंहासन के पार्श्वभाग में स्थित देखा (५. ४९, ११)।

२. दुर्धर, वसु के पुत्र, एक वानर-प्रमुख का नाम है जिनको शार्दूल ने रावण को दिखाया था (६. ३०, ३३)।

दुर्धर्ष, रावण के एक महाबली सेनापति का नाम है जिसने रावण की आज्ञानुसार हनुमान् पर आक्रमण किया (५. ४६, २–१७)। रावण के दरबार में कवचों से सुसज्जित होकर यह राम आदि का वध करने के लिये खड़ा था (६. ९, २)। यह रावण की आज्ञा से रथारूढ हुआ (६. ९५, ३९)।

१. दुर्मुख, एक वानर-प्रमुख का नाम है जो सुग्रीव की आज्ञा से दो करोड वानर सैनिकों के साथ उपस्थित हुये थे (४. ३९, ३४)। इन्होंने समुन्नत नामक राक्षस को कुचल डाला (६. ५८, २१)।

२. दुर्मुख, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसने हनुमान् के अपराध का बदला लेने के लिये समस्त वानरों के वध की प्रतिज्ञा की थी (६. ८, ६–८)। यह राम आदि का वध करने के लिये हाथ में शस्त्र लेकर रावण के सभा-भवन में उपस्थित था (६. ९, ३)। यह माल्यवान् और सुन्दरी का पुत्र था (७. ५, ३५–३६)। देवों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये अन्य पराक्रमी राक्षसों सहित दुर्मख, सुमाली के साथ युद्धभूमि में स्थित था (७. २७, ३०)।

दुर्मुखी, सीता का संरक्षण करनेवाली एक राक्षसी का नाम है जो सीता को रावण की भार्या बन जाने के लिये समझा रही थी (५. २३, १८–२२)।

दुर्वासा, एक ऋषि का नाम है जिन्होंने दशरथ की प्रार्थना पर राम के दुःखमय जीवन की भविष्यवाणी की थी (७. ५०, १०–१४)। अत्रि के पुत्र, महामुनि दुर्वासा ने, वसिष्ठ के पवित्र आश्रम पर वर्षाऋतु के चार महीने व्यतीत किये (७. ५१, २)। राजा दशरथ ने इनका विनयपूर्वक अभिवादन किया, अतः इन्होंने भी आसन देकर पाद्य एवं फल-मूल समर्पित करके राजा का सत्कार किया (७. ५१, ५)। राजा दशरथ ने अपने वंश तथा राम की आयु आदि के विषय में दुर्वासा से प्रश्न किया (७. ५१, ७–९), जिसके फलस्वरूप दुर्वासा ने पूर्वजन्म की कथा का वर्णन करते हुये राम के जीवन के समस्त क्रिया-कलापों तथा आयु आदि की भविष्यवाणी की (७. ५१, १०–२४)।" बुध ने इल के कल्याण के लिये इनसे परामर्श किया (७. ९०, ५)। राम की सभा में सीता के शपथ-ग्रहण के समय यह भी उपस्थित थे (७. ९६, २)। जब श्रीराम काल के साथ एकान्त में वार्तालाप कर रहे थे तब इन्होंने भी राम से मिलने की इच्छा प्रगट की (७. १७५, १–२)। "लक्ष्मण के प्रश्न से क्रुद्ध होकर इन्होंने श्रीराम को अपने आगमन की सूचना देने के

लिये कहा और यह भी बताया कि यदि वे (लक्ष्मण) इनके आगमन की सूचना नहीं देंगे तो ये राज्य, नगर, लक्ष्मण, भरत और श्रीराम को शाप दे देंगे (७. १०५, ३–७)।" "श्रीराम ने, अपने तेज से प्रज्वालित-से होते हुये महात्मा दुर्वासा को प्रणाम करके उनके आगमन का कारण पूछा। दुर्वासा ने बताया : 'निष्पाप रघुनन्दन ! मैंने एक हजार वर्षों तक उपवास किया है। आज मेरे उस व्रत की समाप्ति का दिन है, इसलिये इस समय आप के यहाँ जो भी भोजन तैयार हो, उसे मैं ग्रहण करना चाहता हूँ।' (७. १०५, १०–१३)।" ये अन्न ग्रहण करके श्रीराम को साधुवाद देते हुए अपने आश्रम पर चले गये (७. १०५, १५)।

दुष्यन्त, एक शक्तिशाली राजा का नाम है जिसने अपने राजत्वकाल में रावण के समक्ष अपनी पराजय स्वीकार कर लिया था (७. १९, ५)।

दूषण, जनस्थान के एक राक्षस का नाम है जिसका श्रीराम ने वध कर दिया था (१. १, ४७)। यह शूर्पणखा का भ्राता था जिसका पराक्रम विख्यात था (३. १७, २२)। यह खर की सेना का सेनापति था (३. २२, ७)। खर ने इसको युद्ध के लिये सेना सन्नद्ध करने तथा रथ को अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित करने की आज्ञा दी (३. २२; ८–११)। इन्होंने खर के रथ के सुसज्जित हो जाने की सूचना दी (३. २२, १२)। इसने सेना को युद्ध के लिये आगे बढ़ने की आज्ञा दी (३. २२, १६)। श्रीराम के बाणों से आहत होकर राक्षस-गण खर की शरण में दौड़ गये, परन्तु वीच में दूषण ने धनुष लेकर उन सबको आश्वासन दिया जिससे वे सबके सव लौट आये और श्रीराम पर टूट पड़े (३. २५, २९–३१)। महाबाहु दूषण ने अपनी सेना को पराजित होते देखकर पाँच हजार वीर राक्षसों को आगे बढ़ने की आज्ञा दी (३. २६, १)। शत्रुदूषण सेनापति दूषण ने वज्र के समान वाणों से श्रीराम को रोका (३. २६, ६–७)। श्रीराम ने इसके धनुष को काट कर इसके अश्वों तथा सारथि का भी वध कर दिया (३. २६, ७–९)। रथविहीन हो जाने पर यह हाथ में एक लोहे की गदा (परिघ) लेकर श्रीराम की ओर झपटा (३. २६, ९–१२)। श्रीराम ने इसकी दोनों भुजायें काट डालीं (३. २६, १३)। अपनी भुजाओं के साथ यह भी पृथिवी पर गिर पड़ा (३. २६, १५) रावण ने इसे खर का सेनापति वनाया (७. २४, ३८)। देवों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये सुमालिन् के साथ यह भी गया (७. २७, ३०)।

दृढनेत्र, विश्वामित्र के एक सत्य-धर्मपरायण पुत्र का नाम है जिसका जन्म उस समय हुआ था जब अपनी रानी के साथ दक्षिण दिशा में आकर विश्वामित्र अत्यन्त उत्कृष्ट एवं घोर तपस्या कर रहे थे (१ ५७, ३–४)।

विश्वामित्र ने इन्हें त्रिशङ्कु के यज्ञ की व्यवस्था करने के लिये कहा (१. ५९, ६)। इन्होंने अपना जीवन देकर शुनःशेप की रक्षा करने से सम्बद्ध विश्वामित्र की आज्ञा को अस्वीकार किया जिस पर विश्वामित्र ने इन्हें शाप दिया (१. ६२, ८–१८)।

देव-गण—राजा दशरथ के अश्वमेध-यज्ञ में ऋष्यश्रृङ्ग आदि महर्षियों ने देवों का आवाहन किया (१. १४, ८)। इन आहूत देवताओं को योग्य हविष्य समर्पित किये गये (१. १४, ९)। दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में देवगण भी उपस्थित हुये (१, १५, ४)। उस यज्ञ-सभा में क्रमशः एकत्र होकर देवताओं ने ब्रह्मा से रावण के अत्याचार के सम्बन्ध में बताया (१. १५, ५–११)। ब्रह्मा ने बताया कि उन्होंने रावण को देवताओं आदि से अवध्य रहने का वर दे रक्खा है (१. १५, १३)। देवताओं ने विष्णु से दशरथ के पुत्र के रूप में जन्म लेकर रावण का वध करने का निवेदन किया (१. १५, १९–२६)। जब विष्णु ने इनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया तब इन लोगों ने विष्णु की स्तुति की (१. १५, २९–३३)। विष्णु के पूछने पर इन लोगों ने रावण के पूर्व-इतिहास का वर्णन करते हुये, उनसे मनुष्य-रूप में जन्म लेकर उसका वध करने का निवेदन किया (१. १६, ३–७)। ब्रह्मा ने इन लोगों से अप्सराओं और किन्नरियों से वानरों के रूप में अपने समान ही पराक्रमी पुत्र उत्पन्न करने के लिये कहा (१. १७, २–६)। ब्रह्मा के आदेशानुसार इन लोगों ने वानर सन्तान उत्पन्न की (१. १७, ८)। दशरथ का अश्वमेध यज्ञ समाप्त होने पर ये लोग अपने-अपने स्थानों को चले गये (१. १८, १)। राम इत्यादि के जन्म पर इन लोगों ने प्रसन्न होकर दुन्दुभियाँ बजाते हुये पुष्पवर्षा की (१. १८, १६)। जब श्रीराम ने ताटका का वध कर दिया तो इन लोगों ने प्रसन्न होकर विश्वामित्र का अभिनन्दन करते हुये उनसे कृशाश्व द्वारा प्राप्त अस्त्र-शस्त्रों को श्रीराम को प्रदान करने का अनुरोध किया (१. २६, २६–३१)। वलि ने इन्द्र और मरुद्गणों सहित समस्त देवताओं को पराजित कर दिया (१. २९, ४)। इन लोगों ने अपने को मुक्त कराने के लिये विष्णु से वामन-रूप ग्रहण करने का निवेदन किया (१. २९, ६–९)। जनक के धनुष की प्रत्यञ्चा चढ़ाने में ये असफल रहे (१. ३१, ९)। तीनों लोकों के कल्याण के लिये इन लोगों ने हिमवान् से उनकी पुत्री गङ्गा को माँगा (१. ३५, १७)। तदनन्तर ये लोग गङ्गा को अपने साथ लाये (१. ३५, १९)। जब उमा के साथ क्रीड़ा-विहार करते हुये महादेव को सौ वर्ष व्यतीत हो गये और उमा के गर्भ से कोई पुत्र नहीं हुआ, तब समस्त देवताओं ने महादेव के पास जाकर निवेदन किया : 'तीनों लोकों के हित की कामना से अपने तेज को तेजःस्वरूप

अपने आप में ही धारण कीजिये ।' (१. ३६, ८–११)। महादेव के यह पूछने पर कि उनके स्खलित तेज को धारण करने में कौन समर्थ होगा, इन लोगों ने पृथ्वी का नाम बताया (१. ३६, १५–१६)। इन लोगों ने अग्नि से अनुरोध किया कि वे शिव के महान तेज को अपने भीतर रख लें (१. ३६, १८)। कार्तिकेय का प्रादुर्भाव होते ही इन लोगों ने शिव और उमा की स्तुति की (१. ३६, १९–२०)। उमा ने इन्हें शाप दिया कि ये लोग अपनी पत्नियों से सन्तान नहीं उत्पन्न कर सकेंगे (१. ३६, २१–२३)। इन्द्र और अग्नि को आगे करके ये लोगों सेनापति की इच्छा से ब्रह्मा के पास गये (१. ३७, १–४)। ब्रह्मा का आश्वासन पाकर ये लोग अपने-अपने स्थानों को चले गये (१. ३७, ९)। इन लोगों ने कैलास पर्वत पर जाकर अग्नि को पुत्र उत्पन्न करने के कार्य में नियुक्त करते हुये उनसे रुद्र-तेज को गङ्गा में स्थापित करने के लिए कहा (१. ३७, १०–११)। नवजात शिशु का 'कार्तिकेय' नाम रखते हुये इन लोगों ने उसके महान होने की भविष्यवाणी की (१. ३७, २६)। कार्तिकेय के गर्भस्रावकाल में ही स्कन्दित हुये होने के कारण इन लोगों ने उनको स्कन्द कह कर पुकारा (१. ३७, २८)। इन लोगों ने स्कन्द को देव-सेनापति बनाया (१. ३७, ३१)। जब सगर-पुत्र जम्बूद्वीप की भूमि खोदते हुये सब ओर घूम रहे थे, तो उससे घबरा कर ये लोग ब्रह्मा की शरण में गये (१. ३९, २२–२६)। ब्रह्मा से सगर-पुत्रों के विनाश का आश्वासन पाकर ३३ देवता प्रसन्न होकर अपने-अपने स्थानों को चले गये (१. ४०, ५)। भगीरथ को वर देने के लिये ये लोग भी ब्रह्मा के साथ आये (१. ४२, १६)। भगीरथ को वर दे कर ये लोग अपने-अपने स्थानों को चले गये (१. ४२, २६)। इन लोगों ने गङ्गावतरण के दृश्य को देखा (१. ४३, २०)। ये लोग भी गङ्गा के साथ-साथ भगीरथ के रथ के पीछे-पीछे चले (१. ४३, ३२)। जब जह्नु ने गङ्गा के समस्त जल का पान कर लिया तो इन लोगों ने उनसे गङ्गा को मुक्त करने का निवेदन किया (१. ४३, ३७)। ये—'महाभागा वीर्यवन्तः सुधार्मिकाः'—अदिति के पुत्र थे (१. ४५, १५)। अजर-अमर और निरोग होने के लिये इन लोगों ने क्षीरोद-सागर के मन्थन द्वारा अमृत प्राप्त करने का निश्चय किया (१. ४५, १६–१७)। एक सहस्र वर्ष तक मन्थन करने पर महाभयंकर हलाहल नामक विष ऊपर उठा और उसने इन सहित सम्पूर्ण जगत् को दग्ध करना आरम्भ किया (१. ४५, १९–२०)। उस समय ये लोग महादेव शंकर की शरण में गये (१. ४५, २१)। असुरों के साथ जब ये लोग मन्थन करते ही रहे तो मथनी बना मन्दराचल पर्वत पाताल में घुस गया (१. ४५, २७)। उस समय इन लोगों ने उस पर्वत को

ऊपर उठाने के लिये विष्णु से निवेदन किया, जिस पर विष्णु ने कच्छप का रूप धारण करके उस पर्वत को अपनी पीठ पर उठाया (१. ४५, २८–३०)। सागर-मन्थन से प्रकट हुई अप्सराओं को इन लोगों ने भी स्वीकार नहीं किया (१. ४५, ३५)। वरुण की पुत्री, वारुणी (सुरा) को ग्रहण करने के कारण ही ये लोग 'सुर' कहलाये (१. ४५, ३८)। इन लोगों ने अमृत के लिये दिति के पुत्र, दैत्यों से युद्ध किया (१. ४५, ४०)। इन लोगों ने दिति-पुत्रों का विनाश किया (१. ४५, ४४)। अण्डकोष से रहित इन्द्र ने अण्डकोष की प्राप्ति कराने के लिये इन लोगों से प्रार्थना की (१. ४९, १–४)। इन लोगों ने पितरों के पास जा कर उनसे कहा : 'आप भेड़े के दोनों अण्डकोष इन्द्र को प्रदान करें', (१. ४९, ५–६)। अहल्या के शापमुक्त होने पर इन लोगों ने उसको साधुवाद दिया (१–४९, २१)। वसिष्ठ का आश्रम इनसे सेवित था (१. ५१, २४)। जब विश्वामित्र वसिष्ठ पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करने के लिये उद्यत हुये तो ये लोग अत्यन्त भयभीत हो उठे (१. ५६, १४–१५)। त्रिशङ्कु के लिये जब विश्वामित्र ने यज्ञ किया तो उसमें विश्वामित्र द्वारा आहूत होने पर इन लोगों ने यज्ञ-भाग ग्रहण करना स्वीकार नहीं किया (१. ६०, १०–११)। इन लोगों ने त्रिशङ्कु को स्वर्ग से गिरा दिया (१. ६०, १६–१७)। विश्वामित्र के पास जाकर इन लोगों ने त्रिशङ्कु के सम्बन्ध में उनके अनुरोध को स्वीकार कर लिया (१. ६०, २३–३४)। इन लोगों ने विश्वामित्र को 'महर्षि' पद देने का अनुरोध किया (१. ६३, १६–१७)। विश्वामित्र की घोर तपस्या से ये लोग भयभीत हो उठे (१. ६३, २६)। जब इन लोगों ने देखा कि विश्वामित्र के मस्तक से उठने वाला धूँआ सम्पूर्ण जगत् को आच्छादित कर लेगा, तो इन लोगों ने ब्रह्मा की शरण में जाकर उनसे देवताओं का राज्य दे कर भी विश्वामित्र की इच्छा पूर्ण करने का निवेदन किया (१. ६५, ९–१८)। "पूर्वकाल में दक्षयज्ञ के विध्वंस के पश्चात् शङ्कर ने देवताओं से कहा : 'मैं यज्ञ में भाग प्राप्त करना चाहता था, किन्तु तुम लोगों ने नहीं दिया, अतः अब मैं अपने इस धनुष से तुम सब का मस्तक काट डालूँगा।' इस पर इन लोगों ने शङ्कर की स्तुति करके उनसे उनका धनुष प्राप्त किया और तदनन्तर उस धनुष को देवरात के पास रख दिया (१. ६६, ९–१२)।" इन लोगों ने जनक की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्हें एक चतुरङ्गिणी सेना दी जिसके प्रहार से मिथिला में पड़े हुये बलहीन और पापाचारी राजा भाग गये (१. ६६, २३–२४)। इन लोगों को यह जानने की उत्सुकता हुई कि विष्णु और शिव में से कौन अधिक शक्तिशाली है (१. ७५, १४–१५)। विष्णु के पराक्रम से शिव के धनुष को शिथिल हुआ देख

कर इन लोगों ने विष्णु को श्रेष्ठ माना (१. ७५, १९)। श्रीराम और परशुराम का द्वन्द्व-युद्ध देखने के लिये ये लोग भी एकत्र हुये (१. ७६, ९)। दशरथ की शपथ का साक्षी रहने के लिये कैकेयी ने इनका भी आवाहन किया (२. ११, १३–१६)। राम के वनवास के समय उनकी रक्षा के लिये कौसल्या ने इन लोगों का भी आवाहन किया (२. २५, १६)। भरत-सेना के सत्कार के लिये भरद्वाज ने इन लोगों की सहायता का आवाहन किया (२. ९१, १६)। इन लोगों ने भरद्वाज के आश्रम में गायन किया (२. ९१, २६)। माण्डकर्णि की घोर तपस्या से व्यथित होकर इन लोगों ने उनकी तपस्या भंग करने के लिये पाँच अप्सराओं को भेजा (३. ११, १३–१५)। इन लोगों ने अगस्त्य से ब्राह्मणघाती असुर, वातापि, का भक्षण करने का निवेदन किया (३. ११, ६२)। अगस्त्य का आश्रम इन लोगों से भी सेवित था (३. ११, ९०)। खर के विरुद्ध युद्ध में इन लोगों ने श्रीराम की सफलता की कामना की (३. २३, २६–२८)। ये लोग खर और राम के उस अद्भुत युद्ध को देखने के लिये अपने-अपने विमानों पर एकत्र हुये जिसमें श्रीराम चौदह सहस्र राक्षसों के विरुद्ध युद्ध के लिये अकेले तत्पर थे (३. २४, १९-२४)। खर को रथ-विहीन कर देने पर इन लोगों ने श्रीराम की प्रशंसा की (३. २८, ३३)। खर के धराशायी होने पर इन लोगों ने हर्ष प्रकट करते हुये श्रीराम की स्तुति की (३. ३०, २९–३३)। ये लोग युद्ध में रावण को पराजित नहीं कर सके (३. ३२, ६)। ब्रह्मा ने रावण को देवताओं से अवध्य होने का वरदान दिया था (३. ३२, १८–१९)। 'आत्मवद्भिर्विगृह्य त्वं देवगन्धर्वदानवैः', (३. ३३, ७)। समुद्र तटवर्ती प्रान्त की शोभा का अवलोकन करते हुये रावण ने वहाँ अमृतभोगी देवताओं को भी विचरण करते देखा (३. ३५, १७)। ये लोग शिशिर नामक पर्वत पर निवास करते थे (४. ४०, २९–३०)। क्रीड़ा-विहार के लिये ये लोग सुदर्शन सरोवर के तट पर आते थे (४. ४०, ४४)। ये लोग सायंकाल के समय मेरु पर्वत पर आकर सूर्य का पूजन करते थे (४. ४२, ३९–४०)। सोमाश्रम इनसे सेवित था (४. ४३, १४)। जब इन्द्र के वज्र-प्रहार से हनुमान् के आहत होने पर वायु ने अपनी गति को रोक दिया तब इन लोगों ने वायु के क्रोध को शान्त किया (४. ६६, २५)। जब हनुमान् सागर का लङ्घन कर रहे थे तब इन लोगों ने उन पर पुष्पवर्षा की (५. १, ८४)। ये लोग हनुमान् की प्रशंसा के गीत गाने लगे (५. १, ८६)। "पूर्वकाल में जब पर्वतों के भी पंख होते थे तो उनके वेगपूर्वक उड़ने और आने-जाने पर देवताओं आदि को उनके गिरने की आशंका से अत्यन्त भय होने लगा (५. १, १२३–१२४)।" जब हनुमान् ने विश्राम करने के मैनाक

पर्वत के आग्रह को अस्वीकृत कर दिया तो इन लोगों ने हनुमान् की प्रशंसा की (५. १, १३७)। ये मैनाक पर्वत से, उसके हनुमान् को आमन्त्रित करने के कार्य पर अत्यन्त प्रसन्न हुये (५. १, १३८)। हनुमान् के शक्ति की परीक्षा लेने के लिये इन लोगों ने सुरसा से उनके मार्ग में बाधा उत्पन्न करने के लिये कहा (५. १, १४५–१४८)। जब हनुमान् ने अक्ष का वध कर दिया तो इन लोगों को हर्ष-मिश्रित आश्चर्य हुआ (५. ४७, ३७)। लङ्का में हनुमान् की सफलता पर प्रसन्न होकर इन लोगों ने उनकी प्रशंसा की (५. ५४, ५०--५२)। जब सागर पर सेतु का निर्माण हो गया तो ये लोग भी उसे देखने के लिये आये (६. २२, ७५)। जब श्रीराम ने सेना सहित सागर को पार कर लिया तो इन लोगों ने उनका जल से अभिषेक किया (६. २२, ८९)। जब अङ्गद ने इन्द्रजित् पर प्रहार किया तब इन लोगों ने उनकी प्रशंसा की (६. ४४, ३०)। अकम्पन का वध कर देने पर इन लोगों ने हनुमान् को साधुवाद दिया (६. ५६, ३९)। जब हनुमान् ने रावण को थप्पड़ से मारा तव ये लोग हर्ष-घ्वनि करने लगे (६. ५९, ६३)। जब हनुमान् के प्रहार से रावण रथ के पिछले भाग में निश्चेष्ट होकर बैठ गया तव ये लोग हर्षनाद करने लगे (३. ५९, ११८)। कुम्भकर्ण ने इन लोगों को पराजित किया था (६. ६१, १०)। जव कुम्भकर्ण के प्रहार से इन्द्र व्याकुल हो गये तब अत्यधिक विषादग्रस्त हो इन लोगों ने ब्रह्मा की शरण में जाकर उनसे सहायता की याचना की (६. ६१, १८–१९)। जव श्रीराम ने कुम्भकर्ण का वध कर दिया तो ये लोग हर्षनाद करने लगे (६. ६७, १७४) । अतिकाय और लक्ष्मण के युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (६. ७१, ६५–६६)। श्रीराम और मकराक्ष का युद्ध देखने के लिये ये लोग एकत्र हुये (६. ७९, २५)। जव मकराक्ष ने अपने शूल से श्रीराम पर प्रहार किया तो ये लोग घवरा उठे (६. ७९, ३२)। जव श्रीराम ने मकराक्ष का वध कर दिया तो ये लोग अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. ७९, ४१)। इन्द्रजित् के विरुद्ध युद्ध में ये लोग लक्ष्मण की रक्षा कर रहे थे। (६. ९०, ६४) । जब इन्द्रजित् का वध हो गया तो ये लोग दुन्दुभियाँ बजाने लगे (६. ९०, ८६)। उस समय इन लोगों ने हर्षित होकर शान्ति की साँस ली (५. ९०, ८९–९०)। इन लोगों ने श्रीराम की शक्ति और पराक्रम की प्रशंसा की (६. ९३, ३६. ३९)। राक्षसों से त्रस्त होकर इन लोगों ने रक्षा के लिये ब्रह्मा की स्तुति की (६. ९४, ३१–३२)। तदनन्तर ये लोग महादेव की शरण में गये (६. ९४, ३४)। जब सुग्रीव ने महोदर का वध कर दिया तो ये लोग हर्षपूर्वक उनकी ओर देखने लगे (६. ९७, ३८)। जव रथारूढ़ रावण के साथ श्रीराम

पैदल ही युद्ध के लिये उद्यत हुये तो इन लोगों ने कहा कि ऐसा युद्ध बराबरी का नहीं है (६. १०२, ५) । जब रावण ने श्रीराम को पीड़ित किया तो ये लोग अत्यन्त चिन्तित हो उठे (६. १०२, ३१) । राम और रावण के युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी एकत्र हुये (६. १०२, ४५; १०६, १८) । रावण के विरुद्ध युद्ध में इन लोगों ने श्रीराम को प्रोत्साहित किया (६. १०२, ४८) । श्रीराम और रावण के युद्ध के समय ये लोग गो-ब्राह्मण की रक्षा के लिये प्रार्थना करने लगे (६. १०७, ४८–४९) । ये लोग सारी रात श्रीराम और रावण का युद्ध देखते रहे (६. १०७, ६५) । रावण की मृत्यु पर ये लोग अत्यन्त हर्षित हुये (६. १०८, ३०) । रावण-वध के सम्बन्ध में वार्तालाप करते हुये ये लोग अपने-अपने स्थानों को लौट आये (६. ११२, १–४) । इन लोगों ने भी अग्नि-परीक्षा के लिये सीता को अग्नि में प्रवेश करते देखा (६. ११६, ३१–३३) । श्रीराम को यह परामर्श देकर कि वे वानरों को विदा कर अयोध्या के लिये प्रस्थान करें, ये लोग अपने-अपने स्थानों को चले गये (६. १२०, १८–२३) । श्रीराम के राज्याभिषेक के समय इन लोगों ने उनका समुचित अभिनन्दन किया (६. १२८, ३०) । उस समय ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. १२८, ७२) । कुबेर को वर देने के लिये ब्रह्मा के साथ ये लोग भी गये (७. ३, १३) । माल्यवान् के भ्राता से त्रस्त होकर ये लोग महादेव की शरण में गये (७. ६, १–८) । महादेव के कहने पर इन लोगों ने विष्णु के पास जाकर उनसे अपने शत्रुओं का संहार करने का निवेदन किया (७. ६, १२–१८) । जब विष्णु माल्यवान् के विरुद्ध युद्ध करने के लिये निकले तो इन लोगों ने विष्णु की स्तुति की (७. ६, ६८) । जब ब्रह्मा कुम्भकर्ण को वर देने के लिये जाने लगे तब इन लोगों ने उनसे इसका विरोध किया (७. १०, ३७-४१) । मन्दाकिनी का तट इनसे सेवित था (७. ११, ४४) । यक्षों और राक्षसों के युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी उपस्थित हुये (७. १५, ६) । यम और रावण के युद्ध को देखने के लिये ये लोग उपस्थित हुये (७. २२, १७) । रावण के नेतृत्व में राक्षसों और दानवों के विरुद्ध इन लोगों ने युद्ध किया (७. २७, २६) । जब इन्द्रजित् ने इन्द्र को बन्दी बना लिया तब ये लोग ब्रह्मा को आगे करके लंका आये (७. ३०, १) । अपनी-अपनी पत्नियों के साथ ये लोग भी विन्ध्य-क्षेत्र में रमण करते थे (७. ३१, १६) । रावण की पराजय पर इन लोगों ने अर्जुन का अभिनन्दन किया (७. ३२, ६५) । बाल्यकाल में जब हनुमान् सूर्य को निगलने के लिये बढ़े जा रहे थे तब इन लोगों ने हनुमान् के पराक्रम पर आश्चर्य किया (७. ३५, २५) । जब वायु ने अपनी गति रोक दी तब ये ब्रह्मा की शरण

में गये (७. ३५, ५३–५६)। वायु को प्रसन्न करने के लिये ये लोग भी ब्रह्मा के साथ गये (७. ३५, ६४)। वायु देवता को अपने आहत पुत्र को गोद में लिये हुये देखकर इन लोगों को वायु पर बहुत दया आई (७. ३५, ६५)। निमि के यज्ञ के पूरा होने जाने पर इन लोगों ने उन्हें वर देने की इच्छा प्रगट की (७. ५७, १३)। निमि को उनका मनोवांछित वर देने के पश्चात् इन लोगों ने निमि से कहा कि वे वायु-रूप होकर समस्त प्राणियों के नेत्रों में निवास करेंगे (७. ५७, १४–१६)। लवणासुर के प्रहार से मूर्च्छित शत्रुघ्न को देखकर इन लोगों में हा-हाकार मच गया (७. ६९, १३)। जब शत्रुघ्न ने लवणासुर का वध करने के लिये एक ऐसा दिव्य, अमोघ, और उत्तम बाण हाथ में लिया जिसके तेज से समस्त दिशायें व्याप्त होने लगीं, तब सम्पूर्ण जगत् सहित ये लोग भी अस्वस्थ होकर ब्रह्मा की शरण में गये (७. ६९, १६–२१)। जब ब्रह्मा ने इनके भय का समाधान कर दिया तब ये लोग पुनः शत्रुघ्न और लवणासुर के युद्ध को देखने के लिये उपस्थित हुये (७. ६९, २९–३०)। जब शत्रुघ्न ने लवण का विनाश कर दिया तब इन लोगों ने शत्रुघ्न की भूरि-भूरि प्रशंसा की (७. ६९, ४०)। ये लोग शत्रुघ्न को वर देने के लिये उनके पास गये (७. ७०, १–३)। शत्रुघ्न को वर देकर ये लोग अन्तर्धान हो गये (७. ७०, ६–७)। शम्बूक का वध कर देने पर राम का अभिनन्दन करते हुये इन लोगों ने उन्हें वर देने की इच्छा प्रगट की (७. ७६, ५–८)। "राम की प्रार्थना पर इन लोगों ने उनसे बताया कि ब्राह्मण-कुमार जीवित हो गया है। तदनन्तर इन लोगों ने श्रीराम से अगस्त्य-आश्रम चलने के लिये कहा (७. ७६, १३–१८)।" अगस्त्य द्वारा सत्कृत होकर ये लोग स्वर्ग चले गये (७. ७६, २१–२२)। वृत्रवध का उपाय बताने पर विष्णु की स्तुति करते हुवे ये लोग इन्द्र-सहित उस स्थान पर गये जहाँ वृत्रासुर तपस्या कर रहा था (७. ८५, ८–१०)। वृत्र को देखकर ये लोग अत्यन्त भयभीत हो उठे (७. ८५, १२)। वृत्रवध करने के पश्चात् जब चिन्तित हुये इन्द्र ब्रह्म-हत्या के भय से अदृश्य हो गये तब इन लोगों ने विष्णु के पास जाकर इन्द्र के उद्धार का उपाय पूछा (७. ८५, १७–१९)। ये उस स्थान पर गये जहाँ इन्द्र छिपे हुये थे और उनसे अश्वमेध यज्ञ करके अपने पाप का प्रायश्चित्त करने के लिये कहा (७. ८६, ६–८)। ब्रह्म-हत्या के पूछने पर इन लोगों ने उससे कहा कि वह अपने को चार भागों में विभक्त कर ले (७. ८६, ११)। इन लोगों ने ब्रह्महत्या के प्रस्ताव को स्वीकार करते हुये इन्द्र के शुद्ध हो जाने पर उनकी वन्दना की (७. ८६, १७--१८)। ये लोग अत्यन्त भयभीत होकर राजा इल की स्तुति-पूजा किया करते थे (७. ८७, ५–६)। सीता के शपथ--ग्रहण को देखने के

लिये ये लोग भी श्रीराम की सभा में उपस्थित हुये (७, ९७, ९)। जब सीता पृथिवी के गर्भ में अन्तर्धान हो गईं तब इन लोगों ने उनकी प्रशंसा की (७. ९७, २१--२२)। इन लोगों ने लक्ष्मण पर पुष्पवर्षा की (७. १०६, १६)। भगवान् विष्णु के चतुर्थ अंश, लक्ष्मण, को स्वर्ग में आया देखकर ये लोग हर्ष से भर गये (७. १०६, १८)। जब श्रीराम साकेत-धाम जाने के लिये उद्यत हुये तब अनेक देवपुत्र उनके दर्शन के के लिये उनकी सभा में उपस्थित हुये (७, १०८, १९)। राम के स्वागत के लिये ये लोग भी ब्रह्मा के साथ आये (७. ११०, ३)। इन लोगों ने राम पर पुष्प-वर्षा की (७. ११०, ६)। इन लोगों ने विष्णु का पूजन किया (७. ११०, १४)।

देवमीढ़, कीर्तिरथ के पुत्र और विबुध के पिता का नाम है (१. ७१, १०)।

देवयानी, ययाति की पत्नी का नाम है जिसके रूप की इस भूतल पर कहीं तुलना नहीं थी (७. ५८, ७)। यह शुक्राचार्य की पुत्री थी। सुन्दरी होने पर भी ययाति को यह अधिक प्रिय नहीं थी। इसने यदु को जन्म दिया (७. ५८, ९–१०)। अत्यन्त आर्त होकर रोते हुये अपने पुत्र को देखकर इसने अपने पिता, शुक्राचार्य, का स्मरण किया (७. ५८, १५)। शुक्राचार्य ने देवयानी से बार-बार उसके दुःख का कारण पूछा (७. ५८, १६–१८)। इसने अपने पिता को ययाति द्वारा किये गये अपने अनादर और अवहेलना का कारण बताया (७. ५८, १८–२१)।

देवरात, निमि के ज्येष्ठ पुत्र तथा राजा जनक के पूर्वज का नाम है जिनके पास देवताओं ने एक धनुष-रत्न धरोहर के रूप में रख दिया था (१. ६६, ८. १२; ७५, २०)।

देववती, ग्रामणी नामक गन्धर्व की पुत्री का नाम है जो द्वितीय लक्ष्मी के समान दिव्य रूप और यौवन से सुशोभित एवं तीनों लोकों में विख्यात थी। इसके पिता ने सुकेश के साथ इसका पाणिग्रहण कर दिया जिससे यह अत्यन्त प्रसन्न हुई। समय आने पर इसने तीन राक्षस-पुत्र उत्पन्न किये जिनके नाम क्रमशः माल्यवान्, सुमाली और माली थे (७. ५, २–६)।

देव-वर्णिनी, भरद्वाज की पुत्री का नाम है जिसका विश्रवा ऋषि के साथ पाणिग्रहण हुआ था। इसने अपने गर्भ से कुबेर को जन्म दिया (७. ३, ३–४)।

देव-सख, उत्तर दिशा की एक पर्वतमाला का नाम है जो पक्षियों का निवासस्थान था। यह भाँति-भाँति के विहङ्गमों से व्याप्त तथा विभिन्न प्रकार के वृक्षों से विभूषित था। सुग्रीव ने शतबल से इसके वनसमूहों, निर्झरों,

और गुफाओं में सीता की खोज करने के लिये कहा (४. ४३, १७–१८)।

देवान्तक, रावण के पुत्र का नाम है जिसने अपने चाचा, कुम्भकर्ण, के निधन पर शोक प्रगट किया था (६. ६८, ७)। त्रिशिरा के कथन (६. ६९, १–७) को सुनकर यह युद्ध करने के लिये उत्साहित हो गया (६. ६९, ९)। 'शक्रतुल्यपराक्रमः, वीरः, अन्तरिक्षगतः, मायाविशारदः, त्रिदशदर्पघ्नः, समरदुर्मदः, सुवलसम्पन्नः, विस्तीर्णकीर्तिः, निर्जितः, अस्त्रवित् , युद्धविशारदः, प्रवरविज्ञानः, लब्धवरः, शत्रुबलार्दनः, भास्कर-तुल्यदर्शनः', (३.६९, १०--१४)। यह अपने पिता, रावण, को प्रणाम और उसकी परिक्रमा करके अन्य छः महाबली निशाचरों के साथ युद्ध के लिये प्रस्थित हुआ (६. ६९, १७--१९)। यह स्वर्णभूषित परिघ लेकर समुद्रमन्थन के समय दोनों हाथों से मन्दराचल उठाये हुये भगवान् विष्णु के स्वरूप का अनुकरण-सा कर रहा था (६.६९, ३१)। अपने भ्राता, नरान्तक, की मृत्यु से सन्तप्त हुये इसने हाथ में भयानक परिघ लेकर अङ्गद पर आक्रमण किया (६. ७०, १--३)। "युद्ध करते हुये इस पर अङ्गद ने एक वृक्ष उखाड़ कर प्रहार किया। इसके हाथी के एक दाँत को उखाड़ कर उसी के द्वारा अङ्गद ने इस पर आकमण किया जिसके प्रहार से यह हिलते हुये वृक्ष की भाँति काँपने लगा। तदनन्तर इसने अङ्गद पर परिघ का प्रहार किया (६. ७०, ६--१९)। इसने हनुमान् के साथ युद्ध किया जिसमें हनुमान् ने इसका वध कर दिया (६. ७०, २२--२५)। इसने सुमाली के साथ देवों के विरुद्ध युद्ध किया (७. २७, ३१)।

दैत्य-गण, भी राजा भगीरथ के रथ के पीछे-पीछे गंगाजी के साथ-साथ चल रहे थे (१. ४३, ३२)। ये दिति के महान् बलशाली पुत्र थे जिन्होंने अमृतप्राप्ति के लिये क्षीर-समुद्र का मन्थन किया (१. ४५, १५--१८)। वासुकि के हलाहल विष ने इसको दग्ध करना आरम्भ किया (१. ४५, २०)। इन लोंगों ने सागर-मन्थन से प्रगट अप्सराओं अथवा वारुणी सुरा को ग्रंहण नहीं किया जिसके कारण इनका नाम 'असुर' पड़ा (१. ४५, ३५–३८)। राक्षसों को साथ लेकर इन लोगों ने अमृत के लिये देवों से युद्ध किया (१. ४५, ४०–४१)। देवों ने इनका विनाश किया (१. ४५, ४४)। राम के वनवास के समय कौसल्या ने उनकी रक्षा के लिये इनका भी आवाहन किया था (२. २५, १६)। सागर-मन्थन के समय इन्द्र द्वारा इनके विनाश किये जाने का उल्लेख (२. २५, ३४)। ये लोग दिति और कश्यप के पुत्र तथा एक समय पृथिवी के अधिपति थे (३. १४, १४–१५)। अतिकाय और लक्ष्मण के युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी एकत्र हुये (६. ७१, ६६)। ये राम और रावण के अन्तिम युद्ध को देखने के लिये एकत्र हुये (६. १०२, ४५)।

देवताओं द्वारा युद्ध में त्रस्त होकर ये लोग भृगु की पत्नी की शरण में जाकर निश्चिन्त रूप से रहने लगे (७. ५१, ११)। ये लोग भी राजा इल के भय से उनका आदर-सत्कार किया करते थे (७. ८७, ५–६)। राम के विष्णु तेज में प्रवेश कर लेने पर इन लोगों ने भी हर्ष प्रगट किया (७. ११०, १४)।

द्राविडस्, एक प्रदेश का नाम है। कोपभवन में स्थित कैकेयी को प्रसन्न करने के लिये दशरथ ने द्रविण देश में उत्पन्न होनेवाले भाँति-भाँति के द्रव्य, धन-धान्य आदि को कैकेयी को प्रदान करने के लिये कहा (२. १०, ३८–४०)।

द्रुम-कुल्य, उत्तर के एक देश का नाम है जो समुद्र के तट पर स्थित था। इसमें आभीर तथा अन्य जंगली जातियाँ निवास करती थीं। यद्यपि राम ने इसे अपने तेजस्वी बाण से मरुभूमि बना दिया था तथापि राम के ही वरदान से यह पुनः फलमूल और रसों से सम्पन्न हो गया (६. २२, ३१–४१)।

द्रोण, क्षीरोद सागर में स्थित एक पर्वत का नाम है जिस पर दिव्य औषधियाँ उत्पन्न होती थीं (६. ५०, ३१)।

द्विजिह्व, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, २५)।

द्विविद, अश्विनों के एक वानर-पुत्र का नाम है (१. १७, १४)। इन्होंने सुग्रीव के अभिषेक में भाग लिया था (४. २६, ३४)। किष्किन्धा जाते समय मार्ग में लक्ष्मण ने इनके सुसज्जित भवन को देखा था (४. ३३, ९)। ये अत्यन्त महाबली और अश्विनों के पुत्र तथा मैन्द के भ्राता थे; इन्होंने सुग्रीव को कई करोड़ वानर सैनिक दिये थे (४. ३९, २५)। सुग्रीव इन्हें सीता की खोज के लिये दक्षिण दिशा में भेजना चाहते थे (४. ४१, ४)। विन्ध्य-क्षेत्र में सीता की खोज करने के बाद जल प्राप्त करने के लिये इन्होंने भी ऋक्ष-बिल में प्रवेश किया (४. ५०, १–८)। अङ्गद के पूछने पर इन्होंने बताया कि ये सत्तर योजन तक कूद सकते हैं (४. ६५, ८)। ब्रह्मा के वरदान से इन्होंने अमरत्व प्राप्त किया और देवताओं को पराजित करके अमृत का पान कर लिया था (५. ६०, १–४)। ये समुद्रतट पर स्थित वानर सेना की रक्षा कर रहे थे (६. ५, २)। युद्ध में इनकी बराबरी करनेवाला कोई नहीं था; इन्होंने ब्रह्माजी की आज्ञा से अमृत का पान किया (६. २८, ६–७)। नील के संरक्षण में रहकर इन्होंने लंका के पूर्वद्वार पर युद्ध किया (६. ४१, ३८–३९)। इन्होंने अशनिप्रभ के साथ युद्ध किया (६. ४३, १२)। युद्ध में इन्होंने अशनिप्रभ का वध कर दिया (६. ४३, ३२–३४)। ये राम की आज्ञा से (६. ४५, १–३) इन्द्रजित् का अनुसन्धान करने के लिये गये परन्तु असफल रहे (६. ४५, ४–५)। ये

पुनः उस स्थान पर लौट आये जहाँ राम और लक्ष्मण अचेत पड़े थे (६. ४६, ३)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ४६, १९)। इन्होंने नरान्तक को पर्वत-शिखर से मार डाला (६. ५८, २०)। इन्होंने कुम्भकर्ण पर एक पर्वत-शिखर फेंका जो यद्यपि कुम्भकर्ण को नहीं लगा, तथापि अनेक राक्षस योद्धा और पशु उससे दब कर मर गये (६. ६७, ९–१२)। इन्होंने अतिकाय पर आक्रमण किया परन्तु उससे पराजित हो गये (६. ७१, ३९–४२)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ४५)। अङ्गद को राक्षसों से घिरा हुआ देखकर ये उनकी सहायता के लिये दौड़ पड़े (६. ७६, १६)। शोणिताक्ष और यूपाक्ष से युद्ध करते हुये इन्होंने शोणिताक्ष का वध किया (७. ७६, २९–३३)। इन्होंने कुम्भ के साथ युद्ध किया परन्तु उसके प्रहार से अत्यन्त आहत हो गये (६. ७६, ४१–४२)। राम का यथोचित सत्कार प्राप्त करने के पश्चात् ये किष्किन्धा लौट आये (६. १२८, ८८)। राम की सहायता के लिये देवों ने इनकी सृष्टि की थी (७. ३६, ४९)। राम ने इनका आदर-सत्कार किया (७. ३९, २१)। राम ने इनसे प्रलय अथवा कलियुग के आने तक जीवित रहने के लिये कहा (७. १०८, ३४)।

दंष्ट्र, एक राक्षस प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, २४)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी थी (५. ५४, १२)।

ध

धन्वन्तरि—एक हाथ में दण्ड और दूसरे में कमण्डलु लेकर ये क्षीरसागर से उसके मन्थन के समय प्रगट हुये थे : 'अथ वर्षसहस्रेण आयुर्वेदमयः पुमान् । उदतिष्ठत्सुधर्मात्मा सदण्डः सकमण्डलुः ॥', (१. ४५, ३२)।

धर्म—अगस्त्य के आश्रम में श्रीराम ने इनके स्थान को भी देखा (३. १२, २०)।

धर्मपाल, दशरथ के एक मन्त्री का नाम है (१. ७, ३ गीता प्रेस संस्करण)।

धर्मभृत, एक मुनि का नाम है (३. ११, ८)। राम के पूछने पर इन्होंने दण्डकारण्य के पंचाप्सर सरोवर के इतिहास का वर्णन किया (३. ११, ८–१९)।

धर्मवर्धन, एक ग्राम का नाम है जहाँ केकय से लौटते समय भरत कुटिकोष्ठिका नदी को पार करने के बाद पहुँचे थे (२. ७१, १०)।

धर्मारण्य, एक नगर का नाम है जिसकी राजा कुश के पुत्र अमूर्तरजस् ने स्थापना की थी (१. ३२, ६)।

धान्यमालिनी—जब सीता ने रावण के प्रस्तावों को सर्वथा अस्वीकार कर दिया तब इसने रावण की लिप्सा शान्त करने के लिये स्वयं अपने को समर्पित किया परन्तु रावण ने इसके प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया (५. २२, ३९–४३)। यह अतिकाय की माता थी (६. ७१, ३०)।

धुन्धुमार, राजा त्रिशङ्कु के महायशस्वी पुत्र और युवनाश्व के पिता का नाम है (१. ७०, २४)। वृद्ध और नेत्र-विहीन मुनि दम्पती ने, जिनके पुत्र का भूल से दशरथ ने वध कर दिया था, अपने पुत्र के लिये धुन्धुमार आदि द्वारा प्राप्त लोक की कामना की (२. ६४, ४२)।

धूम्र, रीछों के अधिपति का नाम है जो सुग्रीव के आमन्त्रण पर वीस अरब रीछों की सेना लेकर उपस्थित हुये थे (४. ३९, २०)। 'एषां मध्ये स्थितो राजन् भीमाक्षो भीमदर्शनः । पर्जन्य इव जीभूतैः समन्तात्परिवारितः ।। ऋक्षवन्तं गिरिश्रेष्ठमध्यास्ते नर्मदां पिवन् । सर्वर्क्षाणामधिपतिर्धूमो नामैष यूथपः ।।', (६. २७, ८–९)। ये अपने भयंकर रीछों की सेना के साथ राम के वगल में खड़े हुए (६. ४२, २९)। राम ने इनका आदर-सत्कार किया। (७. ३९, २१)।

धूम्रगिरि, मेरु पर्वत के निकट स्थित एक पर्वत का नाम है जहाँ के वानरों को आमन्त्रित करने के लिये सुग्रीव ने हनुमान् से कहा (४. ३७, ६)।

धूम्राक्ष, एक राक्षस प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, २३)। राम आदि का वध करने के लिये यह अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर रावण की सभा में सन्नद्ध खड़ा था (६. ९, ३)। रावण ने इससे एक नई सेना लेकर युद्धभूमि में जाने के लिये कहा (६. ५१, २०)। "रावण की आज्ञा पाकर यह सेनापति से एक बहुत बड़ी सेना लेकर उस पश्चिम द्वार से युद्ध के लिये निकला जहाँ हनुमान् खड़े थे। उस समय अनेक अपशकुनों के विपरीत भी यह आगे बढ़ता हुआ शत्रुसेना के समक्ष आकर खड़ा हो गया (६. ५१, २१–३७)।" यह भयंकर पराक्रमी राक्षस था (६. ५२, १)। युद्धभूमि में अपने सैनिकों का उत्साहवर्धन करने के लिये इसने निर्दयतापूर्वक वानरसेना का वध आरम्भ किया (६. ५२, १८)। अपने धनुष और बाण से इसने वानरसेना को पलायन करने के लिये विवश कर दिया (६. ५२, २५)। जब हनुमान् ने इसके रथ के टुकड़े-टुकड़े कर दिये तब इसने रथ से उतरकर हनुमान् पर एक भीषण गदा फेंकी परन्तु अन्ततः हनुमान् ने एक पर्वत शिखर से इसका वध कर दिया (६. ५२, २८–३८)। यह सुमाली और केतुमती का पुत्र था (७. ५, ३८–४०)। कुबेर के विरुद्ध युद्ध में रावण के साथ यह भी गया था (७. १४, २)। एक द्वन्द्व में मणिभद्र ने इसे बुरी

तरह आहत कर दिया था (७. १५, १०–१२)। इसने नर्मदा में स्नान करके रावण के लिये पुष्प एकत्र किये (७. ३१, ३४–३६)।

धूम्राश्व—विशाला के राजवंश में ये सुचन्द्र के पुत्र और सृञ्जय के पिता थे (१. ४७, १४)।

धृतराष्ट्री, ताम्रा और कश्यप की पुत्री का नाम है (३. १४, १७–१८)। यह हंसों और कलहंसों की माता हुई (३. १४, १९)।

धृति, भरत के एक मंत्री का नाम है जिसे चित्रकूट में राम से मिलने जाने के समय भरत ने अपने साथ लिया था (२. ९३,२५ गीता प्रेस संस्करण)।

धृष्टकेतु, सुधृति के धार्मिक पुत्र और हर्यश्व के पिता का नाम है (१. ७१, ८)।

धृष्टि, दशरथ के एक मंत्री का नाम है (१. ७, ३)। श्रीराम के लौटने पर उनके स्वागत के लिये ये भी नगर से बाहर निकले (६. १२७, १०)।

धौम्य, पश्चिम के एक महर्षि का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिवादन के लिये उपस्थित हुए थे (७. १, ४)।

ध्रुवसंधि, सुसंधि के पुत्रों में से एक का नाम है जो भरत के पिता थे (१. ७०, २६)।

ध्वजग्रीव, एक राक्षस प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, २५)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १३)।

न

नता, शुकी की पुत्री और विनता की माता का नाम है (३. १४, २०)।

१. नन्दन, राजा दशरथ की मृत्यु के बाद भरत को लाने के लिये केकय भेजे गये वसिष्ठ के एक दूत का नाम है (२. ६८, ५)। ये राजगृह में पहुँचे (२. ७०, १)। केकयराज और उनके पुत्र द्वारा सत्कृत होने के पश्चात् इन्होंने भरत के समीप जाकर उन्हें वसिष्ठ द्वारा भेजे गये समाचार और उपहार आदि दिये (२. ७०, २–५)। भरत के प्रश्नों का उत्तर देते हुये इन्होंने उनसे तत्काल अयोध्या चलने के लिये कहा (२. ७०, ११–१२)।

२. नन्दन, दिव्य कानन का नाम है जहाँ से, भरतसेना का सत्कार करने के लिये, भरद्वाज के आवाहन पर २०,००० अप्सरायें आई थीं (२. ९१, ४४)। रावण ने इसका विध्वंस किया था (३. ३२, १५; ७. १३, ९)। इसमें ऐसे वृक्ष थे जो वर्ष-पर्यन्त फल और मधुर रस प्रदान करते रहते थे (३. ७३, ६–७)। रावण के साथ युद्ध में आहत हो जाने पर कुबेर इसी स्थान पर लाया गया था (७. १५, ३५)।

नन्दिन्, इनको देखकर रावण ने इनके वानर के समान मुख पर उपहास किया था जिस पर क्रुद्ध होकर इन्होंने उसे वानरों के हाथ ही मारे जाने का शाप दे दिया था (५. ५०, २–३)। रावण ने इनके शाप का स्मरण किया (६. ६०, ११)। 'इति वाक्यान्तरे तस्य करालः कृष्णपिङ्गलः। वामनो विकटो मुण्डी नन्दी ह्रस्वभुजो वली।। ततः पार्श्वमुपागम्य भवस्यानुचरोऽब्रवीत्। नन्दीश्वरो वचश्चेदं राक्षसेन्द्रमशङ्कितः ।।', (७. १६, ८–९)। इन्होंने रावण के पास आकर उससे लौट जाने के लिये कहा, क्योंकि उस पर्वत पर भगवान् शंकर क्रीड़ा करते थे और इसीलिये सुपर्ण, नाग, यक्ष, देवता, गन्धर्व और राक्षस सभी प्राणियों का आना-जाना बन्द कर दिया गया था (७. १६, ९–११)। रावण ने इनके वानर के समान मुँह को देखकर उपहास किया (७. १६, ११–१४), जिससे इन्होंने रावण को शाप दे दिया (७. १६, १५–२१)। 'भगवान् नन्दी शङ्करस्यापरा तनुः', (७. १६, १५)।

नन्दि-ग्राम, एक नगर का नाम है जहाँ भरत ने राम के आगमन की प्रतीक्षा करते हुये राज्य किया (१. १, ३९)। वनवास से लौट कर श्रीराम नन्दिग्राम गये और वहाँ उन्होंने अपनी जटायें कटवाईं (१. १, ८८–८९)। वाल्मीकि ने भरत के निवास-स्थान, नन्दिग्राम, का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १७)। भरत अपने मन्त्रियों और पुरोहितों के साथ नन्दिग्राम गये। यह अयोध्या के पूर्वदिशा में स्थित था (२. ११५, १०)। हनुमान् यहाँ भरत को श्रीराम के वनवास से लौट कर नन्दिग्राम आने की सूचना देने आये (६. १२५, २७)।

नन्दिवर्धन, उदावसु के पुत्र और सुकेतु के धर्मात्मा पिता का नाम है (१. ७१, ५)।

१. नमुचि, एक दैत्य का नाम है जिसने इन्द्र पर आक्रमण किया था (३. २८, ३)। 'स वृत्र इव वज्रेण फेनेन नमुचिर्यथा। वलो वेन्द्राशनिहतो निपपातः हतः खरः ।।', (३. ३०, २८)। इन्द्र के साथ इसके द्वन्द्व-युद्ध का उल्लेख (४. ११, २२; ६. ५६, १७)। यह देवों का शत्रु था अतः विष्णु ने इसका वध किया (७. ६, ३४)।

२. नमुचि, दक्षिण के एक महर्षि का नाम है जो राम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये उपस्थित हुये थे (७. १, ३)।

१. नरक, कश्यप और कालका के पुत्र का नाम है (३. १४, १६)।

२. नरक, एक दुष्टात्मा दानव का नाम है जो वराह पर्वत पर स्थित प्राग्ज्योतिष नगर में निवास करता था (४. ४२, २९)।

नरव्याघ्र, किरातों के एक वर्ग का नाम है : 'अक्षया बलवन्तश्च तथैव

पुरुषादकाः । किरातास्तीक्ष्णचूडाश्च हेमाभाः प्रियदर्शनाः ।। आममीनाशनाश्चापि किराताद्वीपवासिनः । अन्तर्जलचरा घोरा नरव्याघ्रा इति श्रुताः ।।', (४. ४०, २६–२७)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने विनत को इनके क्षेत्र में भेजा था (४. ४०, २७)।

१. नरान्तक, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने आग लगा दी थी (५. ५४, १५)। यह प्रहस्त का एक सेनापति था, जो प्रहस्त के साथ ही युद्ध-भूमि -में आया (६. ५७, ३१)। इसने निर्दयतापूर्वक वानरसेना का वध किया (६. ५८, १९)। एक पर्वत-शिखर से द्विविद ने इसे मार डाला (६. ५८, २०)।

२. नरान्तक, रावण के पुत्र, एक राक्षस का नाम है जो हाथ में धनुष-बाण लिये हुये रथ पर बैठकर रावण के साथ युद्ध-भूमि में आया (६. ५९, २२)। इसने कुम्भकर्ण के वध पर शोक किया (६. ६८, ७)। त्रिशिरा की बात सुनकर यह युद्ध-भूमि में जाने के लिये प्रस्तुत हुआ (६. ६९, ९)। 'रावणस्य सुता वीराः शक्रतुल्य पराक्रमाः ।। अन्तरिक्षगताः सर्वे सर्वे मायाविशारादाः । सर्वे त्रिदशदर्पघ्नाः सर्वे समरदुर्मदाः ।। सर्वे सुबलसंपन्नाः सर्वे विस्तीर्णकीर्तयः । सर्वे समरमासाद्य न श्रूयन्तेस्म निर्जिताः । देवैरपि सगन्धर्वैः सकिन्नरमहोरगैः ।। सर्वेऽस्त्रविदुषो वीराः सर्वे युद्धविशारदाः । सर्वे प्रवरविज्ञानाः सर्वे लब्धवरास्तथा ।। स तैस्तथा भास्करतुल्यदर्शनैः सुतैर्वृतः शत्रुवलश्रियार्दनैः ।। रराज राजा मघवान्यथामरैर्वृतो महादानवदर्पनाशनैः ।।', (६. ६९, १०–१४)। रावण से आज्ञा लेकर रावण का यह पुत्र युद्ध-भूमि की ओर चला (६. ६९, १९)। यह उच्चैःश्रवा नामक शीघ्रगामी अश्व पर सवार होकर हाथ में प्रास और शक्ति लिये हुये युद्ध-भूमि में आया (६. ६९, २८–२९)। इसने वानर-सेना का घोर संहार किया (६. ६९, ६९–८३)। इसने अङ्गद के साथ द्वन्द्व-युद्ध किया जिसमें अङ्गद ने इसका वध कर दिया (६. ६९, ८८–९९)।

१. नर्मदा, एक रमणीय नदी का नाम है। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये अङ्गद को इसके क्षेत्र में भेजा (४. ४१, ८)। इसका वर्णन (७. ३१, १८–२४)।

२. नर्मदा, एक गन्धर्वी का नाम है जिसने अपनी तीन पुत्रियों का क्रमशः माल्यवान् , सुमाली और माली से विवाह किया (७. ५, ३१–३२)।

नल ने सागर पर सेतु का निर्माण किया (१. १, ८०)। वाल्मीकि ने इनके द्वारा सेतु-निर्माण की घटना का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, ३४)। ये महाकपि, विश्वकर्मा के पुत्र थे (१. १७, १२)। ये वानर-यूथपति थे

(१. १७, ३२)। सुग्रीव के साथ ये भी किष्किन्धा गये (४. १३, ४)। किष्किन्धा जाते समय लक्ष्मण ने इनके सुसज्जित भवन को भी देखा (४. ३३, १०)। सुग्रीव के आमन्त्रण पर ये एक अरब, एक सहस्र, एक सौ द्रुमवासी वानरों सहित उनके पास आये (४. ३९, ३६)। ये विश्वकर्मा के प्रिय पुत्र थे (६. २२, ४४)। सेतु-निर्माण के लिये समुद्र ने इनका नाम बताया क्योंकि इन्हें अपने पिता का अनुग्रह प्राप्त था (६. २२, ४५)। तदनन्तर इन्होंने श्रीराम से सेतु-निर्माण करने की अपनी इच्छा को प्रकट किया (६. २२, ४६–५२)। अन्य वानरों की सहायता से इन्होंने सागर पर सेतु का निर्माण किया (६. २२, ६२)। ये लङ्का के परकोटे पर चढ़ गये (६. ४२, २२)। इन्होंने प्रतपन के साथ द्वन्द्व-युद्ध किया (६. ४३, १३)। इन्होंने प्रतपन की दोनों आँखें निकाल लीं (६. ४३, २४)। ये सतर्कतापूर्वक वानर-सेना की रक्षा कर रहे थे (६.४७, २–४)। इन्होंने राक्षस-सेना का भयंकर संहार किया (६. ५५, ३०–३१)। इन्होंने एक विशाल पर्वत-शिखर लेकर रावण पर आक्रमण किया किन्तु रावण ने इन्हें आहत कर दिया (६. ५९, ४२–४३)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ४३)। राम की सहायता के लिये देवों ने इनकी सृष्टि की थी (७. ३६, ४९)। राम ने इनका सत्कार किया (७. ३९, २०)।

नल-कूबर, कुवेर के प्रिय पुत्र का नाम है, जो रम्भा पर आसक्त था (७. २६, ३२)। "धर्मतो यो भवेद्विप्रः क्षत्रियो वीर्यतो भवेत्। क्रोधाद्यश्च भवेदग्निः क्षान्त्या च वसुधासमः ॥', (७. २६, ३३)। जब रम्भा को रावण ने रोका तो उसने बताया कि वस्त्राभूषण धारण किये हुये वह नलकूबर से ही मिलने जा रही है (७. २६, ३४–३७)। जब रम्भा से इसने यह सुना कि रावण ने मार्ग में उसे रोककर उसके साथ बलात्कार किया, तब इसने रावण को यह शाप दिया कि यदि वह भविष्य में फिर कभी किसी स्त्री की इच्छा के विरुद्ध उसके साथ बलात्कार करेगा तो उसका (रावण का) मस्तक टुकड़े-टुकड़े हो जायगा (७. २६, ४३–५६)।

नलिनी, उन सात नदियों में से एक का नाम है जो विन्दु-सरोवर से निकल कर पूर्व दिशा की ओर वहीं (१. ४३, १२)।

१. नहुष, अम्बरीष के पुत्र और ययाति के पिता का नाम है (१. ७०, ४२)। वृद्ध और नेत्रहीन मुनि-दम्पती ने, जिनके पुत्र का दशरथ ने भूल से वध कर दिया था, अपने पुत्र के लिये उसी लोक की कामना की जो नहुष आदि को प्राप्त हुआ था (२. ६४, ४२)।

२. नहुष, आयु के पुत्र का नाम है जिन्होंने वृत्र-वध के वाद इन्द्र की अनुपस्थिति में स्वर्ग पर शासन किया था (७. ५६, २७--२८) ।

नाग (वहु०)—ब्रह्मा ने देवों को आज्ञा दी कि वे नाग-कन्याओं के गर्भ से वानर-सन्तान उत्पन्न करें (१. १७, ५) । इन लोगों ने भी वन में विचरण करनेवाले वानरों और रीछों के रूप में वीर-पुत्रों को जन्म दिया (१. १७, ९) । सगर-पुत्रों के वज्रतुल्य शूलों आदि के प्रहार से आहत होकर ये घोर आर्तनाद करने लगे (१. ३९, २०) । इन लोगों ने भी ब्रह्मा की शरण में जाकर सगर-पुत्रों के अत्याचार के विरुद्ध शिकायत की (१. ३९, २३--२६) । अगस्त्य का आश्रम इनसे भी सेवित था (३. ११, ९२) । ये सुरसा के पुत्र थे (३. १४, २८) । ब्रह्मा ने रावण को इनसे भी अवध्य होने का वर दिया ३. ३२, १८–१९) । रावण ने उन लता-कुञ्जों को देखा जो इनसे सेवित थे (३. ३५, १४) । ये उत्तर कुरु में निवास करते थे (४. ४३, ५०) । महेन्द्र पर्वत इनसे सेवित था (५. १, ६) । जब हनुमान् सागर का लङ्घन कर रहे थे तों इन लोगों ने उनकी प्रशंसा में गीत गाया (५. १, ८७) । वायुपथ इनसे व्याप्त था (५. १, १७८) । समुद्र इनसे सेवित था (५. १, २१४) । इनकी कन्यायें सुन्दर नितम्बों और चन्द्रमा के समान मुखवाली होती थीं, जिन्हें हनुमान् ने लङ्का में देखा (५. १२, २१--२२) । जब हनुमान् ने अक्ष का वध कर दिया तो ये भी विस्मयपूर्वक हनुमान् को देखने लगे (५. ४७, ३७) । हनुमान् और इन्द्रजित् के युद्ध को देखने के लिये इनका समूह भी एकत्र हुआ (५. ४८, २४) । लङ्का में हनुमान् की सफलताओं पर ये लोग अत्यन्त प्रसन्न हुये (५. ५४, ५२) । अरिष्ट पर्वत इनसे सेवित था (५. ५६, ३५) । जब अरिष्ट पर्वत हनुमान् के भार से दब गया तो ये लोग उस पर से हट गये (५. ५६, ४७) । इन्हें आकाशरूपी समुद्र में खिले हुये कमल और उत्पल के समान कहा गया है (५. ५७, १) । जब श्रीराम ने कुम्भकर्ण का वध कर दिया तो ये अत्यन्त हर्षित हुये (६. ६७, १७५) । श्रीराम और मकराक्ष का युद्ध देखने के लिये ये लोग भी एकत्र हुये (६. ७९, २५) । इन्द्रजित् के विरुद्ध युद्ध कर रहे लक्ष्मण की ये लोग रक्षा कर रहे थे (६. ९०, ६४) । श्रीराम और रावण के अन्तिम युद्ध को देखने के लिये ये लोग भी एकत्र हुये (६. १०२, ४५) । जब श्रीराम रावण के साथ युद्ध कर रहे थे तो इन लोगों ने चिन्ता प्रगट की (६. १०७, ४६) । उस समय ये लोग भी गाय और ब्राह्मण की सुरक्षा के लिये स्तुति करने लगे (६. १०७, ४८--४९) । ये लोग सारी रात राम और रावण का युद्ध देखते रहे (६.१०७, ६५) । जब पुलस्त्य मुनि एक समय राजर्षि तृणविन्दु के आश्रम में रह

रहे थे तो नाग-कन्यायें वहाँ आकर उनकी तपस्या में विघ्न डालती थीं (७. २, ९–११)। किन्तु जब मुनि पुलस्त्य ने रुष्ट होकर विघ्न करनेवाली कन्याओं को शाप दिया तब नाग-कन्याओं ने वहाँ आना बन्द कर दिया (७. २, १२–१३)। जब माल्यवान् इत्यादि से युद्ध करने के लिये विष्णु चले तो इन लोगों ने भी उनकी प्रशंसा की (७–६, ६७)। मन्दाकिनी का तट इनसे सेवित था (७. ११, ४४)। रावण ने इन्हें पराजित किया था (७. २३, ५)। वायु देवता को प्रसन्न करने के लिये ये लोग भी ब्रह्मा के साथ गये (७. ३५, ६४)। लवणासुर का वध हो जाने पर ये लोग प्रसन्न हुये (७. ६९, ४०)। राजा इल के भय से ये लोग उनकी सेवा किया करते थे (७. ८७, ५–६)। सीता के शपथ ग्रहण को देखने के लिये ये लोग भी श्रीराम की सभा में उपस्थित हुये (७. ९७, ९)। सीता के रसातल में प्रवेश कर जाने पर ये लोग भी विविध प्रकार की बातें करने लगे (७. ९७, २४–२६)। श्रीराम के विष्णु तेज में प्रविष्ट हो जाने पर ये लोग प्रसन्न हुये (७. ११०, १४)।

नागदत्ता, एक अप्सरा का नाम है जिसका भरत-सेना के सत्कार के लिये महर्षि भरद्वाज ने आवाहन किया था (२. ९१, १७)।

नागराज—श्रीराम ने अगस्त्याश्रम में इनके स्थान को भी देखा था (३. १२, २०)।

नाभाग, ययाति के पुत्र तथा अज के पिता का नाम है (१. ७०, ४२–४३)।

नारद, एक महर्षि का नाम है : 'तपः स्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम्। नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुंगवम् ॥', (१. १, १)। वाल्मीकि के पूछने पर इन्होंने राम-चरित्र का संक्षिप्त वर्णन किया (१. १, ६–१००)। वाल्मीकि द्वारा सत्कृत हो कर इन्होंने विदा ली (१. २, १–२)। श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा के लिये कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया था (२. २५, ११)। भरत के भरद्वाज-आश्रम में विश्राम के समय इन्होंने भरत के सम्मुख गायन किया (२. ९१, ४५)। रावण के पूछने पर इन्होंने उसे यम के साथ युद्ध करने के लिये प्रेरित किया (७. २०, ३–१७)। रावण के पूछने पर इन्होंने उसे यम के स्थान का पता बताया (७. २०, २०–२१)। 'नारदस्तु महातेजा मुहूर्तं ध्यानमास्थितः। चिन्तयामास विप्रेन्द्रो विधूम इव पावकः ॥', (७. २०, २७)। रावण और यम के युद्ध को देखने के कौतुहल के कारण ये भी यम-लोक गये (७. २०, २७–३३)। यम के पास जा कर इन्होंने उनसे रावण के रन पर शीघ्र ही आक्रमण करने की बात कही (७. २१, १–७)। अगस्त्य के अनुरोध पर इन्होंने वालिन् और सुग्रीव के जन्म-वृत्तान्त का वर्णन

किया (७. ३७ क, ४–६)। मेरु पर्वत पर देव-सभा में इन्होंने रावण द्वारा सीता के अपहरण के कारणों का वर्णन किया (७. ३७ घ, ५–७)। रावण के पूछने पर इन्होंने उससे बताया कि वह श्वेत द्वीप में निवास करने वाले चंद्र-संकाश मानवों को अपना योग्य प्रतिद्वन्द्वी पा सकता है (७. ३७ ङ, ७–१०)। रावण के पूछने पर इन्होंने बताया कि वे लोग नारायण की कृपा से वहाँ के निवासी बन गये हैं (७. ३७ ङ, १३–१७)। कौतूहलवश ये भी रावण के पीछे-पीछे श्वेतद्वीप गये (७. ३७ ङ, १९–२०)। श्वेतद्वीप की युवतियों द्वारा रावण के अपमानित होने को देख इन्हें विस्मय हुआ (७. ३७ ङ, ४२–४३)। इनकी उपेक्षा करने पर इन्होंने राजा नृग को शाप दे दिया (७ ५३, १६–२२)। राम के आमन्त्रण पर ये राम के भवन में गये जहाँ इनका उचित स्वागत हुआ (७. ७४, ४–५)। "एक ब्राह्मण के राम के राजद्वार पर सत्याग्रह करने के सम्बन्ध में राम के वचन को सुनकर इन्होंने बताया कि इस ब्राह्मण के पुत्र की इसलिये मृत्यु हो गई है, क्योंकि राम के राज्य में कहीं पर कोई शूद्र तपस्या कर रहा है जिसका उसे त्रेता युग में अधिकार नहीं है (७. ७४, ७–३२)।" इन्होंने राम के दरबार में उपस्थित होकर सीता के शपथ-ग्रहण को देखा (७. ९६, ५)।

निकुम्भ, रावण के एक मंत्री का नाम है जिसे हनुमान् ने रावण के सिंहासन के बगल में खड़ा देखा (५. ४९, ११)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १५)। यह कुम्भकर्ण का वीर्यवान् पुत्र था (६. ८, १९)। इसने अनुमति मिलने पर बिना किसी सहायता के ही श्रीराम आदि का वध कर देने का वचन दिया (६. ८, २०)। राम आदि का वध करने के लिये यह अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर रावण की सभा में सन्नद्ध खड़ा था (६. ९, १–६)। इसने नील के साथ द्वन्द्व-युद्ध किया (६. ४३, ९)। इसने अपने प्रतिद्वन्द्वी को आहत किया (६. ४३, ३०–३२)। यह अपने हाथ में एक ज्वलन्त परिघ लेकर रावण के साथ युद्ध-भूमि में आया (६. ५९, २१)। यह कुम्भकर्ण का पुत्र था जिसे रावण ने युद्ध के लिये भेजा (६. ७५, ४५–४७)। सुग्रीव के द्वारा अपने भ्राता कुम्भ को मारा गया देखकर इसने वानरराज की ओर इस प्रकार देखा मानो इन्हें दग्ध कर देगा (६. ७७, १–२)। 'निकुम्भो भीमविक्रमः', (६. ७७, ४)। "इसके वक्षस्थल में स्वर्ण-पदक था; भुजाओं में बाजूबन्द शोभा दे रहे थे, कानों में विचित्र कुण्डल, और गले में विचित्र माला जगमगा रही थी। इन आभूषणों तथा अपनी परिघ से निकुम्भ वैसे ही सुशोभित हो रहा था जैसे विद्युत् और गर्जना से युक्त मेघ इन्द्रधनुप से सुशोभित होता है। (६. ७७, ५–६)।" 'सतारागणनक्षत्रं

सचन्द्रसमहाग्रहम् । निकुम्भपरिघाघूर्णं भ्रमतीव नभस्थलम् ।। दुरासदश्च संजज्ञे परिघाभरणप्रभः । क्रोधेन्धनो निकुम्भाग्निर्युगान्ताग्निरिवोत्थितः ।।', (६. ७७, ९–१०)। इसने हनुमान् के साथ घोर युद्ध किया परन्तु अन्त में हनुमान् ने इसका वध कर दिया (६. ७७, ११–२५)।

निकुम्भिला, लङ्का के एक पवित्र स्थान का नाम है जहाँ जाकर इन्द्रजित् ने अग्नि में आहुति दी (६. ८२, २५–२६)। यह वटवृक्षों के मध्य में स्थित था जहाँ इन्द्रजित् हवन सम्बन्धी कार्य पूर्ण करने के लिये गया (६. ८५, ११. १४–१५)। रावण ने यहाँ आकर मेघनाद को यज्ञ करते हुये देखा (७. २५, २–३)।

निद्रा—जब ब्रह्मा के आदेशानुसार इन्द्र सीता को हविष्यान्न खिलाने के लिये लंका आये तो वे अपने साथ निद्रा को भी लाये (३. ५६क, ८)। इन्द्र के कहने पर इन्होंने राक्षसों को निद्रा से मोहित कर दिया (३. ५६क, ९–१०)। ये इन्द्र के साथ ही लौट आईं (३. ५६क, २६)।

निमि, जनक के पूर्वज और देवरात के पिता का नाम है (१. ६६, ८)। 'राजाभूत्त्रिषु लोकेषु विश्रुतःस्वेन कर्मणा । निमिः परमधर्मात्मा सर्व-सत्त्ववतां वरः ।।', (१. ७१, ३) । मिथि इनके पुत्र थे (१. ७१, ४)। "ये इक्ष्वाकु के बारहवें पुत्र थे जिन्होंने गौतम के आश्रम के निकट देवपुरी के समान वैजयन्तपुर नामक एक नगर बसाया । इन्होंने एक यज्ञ करने का विचार करके उसे सम्पन्न करने के लिये वसिष्ठ का वरण किया, किन्तु वसिष्ठ के अस-मर्थता प्रकट करने पर महर्षि गौतम से अपना यज्ञ कराना आरम्भ कर दिया । इस पर क्रुद्ध होकर वसिष्ठ ने शाप देकर इन्हें शरीर-रहित (विदेह) बना दिया । प्रतिकार-स्वरूप इन्होंने भी वसिष्ठ को वैसा ही शाप दिया । इस प्रकार ये और वसिष्ठ दोनों ही परस्पर शाप से विदेह हो गये (७. ५५, ४–२१)।" इन्हें देह से पृथक् हुआ देखकर ऋषियों ने इनके शरीर को सुरक्षित रखकर स्वयं यज्ञ पूरा कर दिया (७. ५७, १०–११)। देवों के वर देने के आग्रह पर इन्होंने यह वर माँगा कि ये मनुष्यों के नेत्र में निवास करें (७. ५७, १४)। "महर्षियों ने पुत्र की उत्पत्ति के लिये इनके शरीर का मन्थन किया जिससे मिथि उत्पन्न हुये । इस अद्भुत जन्म के कारण ही मिथि जनक कहलाये (७. ५७, १७–२०)।"

निवातकवच, दैत्यों के एक वर्ग का नाम है जो एक मणिमयी पुरी में निवास करते थे । इन लोगों ने एक वर्ष तक लगातार रावण के साथ युद्ध किया, किन्तु अन्त में ब्रह्मा की मध्यस्थता पर उससे सन्धि कर ली (७. २३, ५–१४)।

निशाकर, एक महर्षि का नाम है जो विन्ध्य पर्वत के शिखर पर रहते थे (४. ६०, ८)। सम्पाति ने बताया कि पूर्वकाल में जब सूर्य की किरणों से दग्ध होकर वे विन्ध्य पर्वत के शिखर पर गिरे तो उन्होंने 'ज्वलित तेज' और उग्र तप करनेवाले इन ऋषि का दर्शन किया (४. ६०, १३--१४)। "सम्पाति ने देखा कि ये स्नान करके विभिन्न पशुओं से घिरे हुये आश्रम की ओर आ रहे हैं। उस समय सम्पाति को बुरी तरह दग्ध देखकर इन्होंने उनका समाचार पूछा (६. ६०, १५--२१)।" सम्पाति द्वारा अपने दाह की कथा का वर्णन करने पर (६. ६१, १--१७), इन्होंने सम्पाति को सान्त्वना देते हुये बताया कि श्रीराम के दूतों को रावण के स्थान का पता बता कर उन्हें पंख और नेत्र-ज्योति आदि पुनः प्राप्त हो जायगी (६. ६२, १--१४)। 'महर्षिस्त्वब्रवीदेवं दृष्टतत्वार्थदर्शनः', (६. ६२, १५)। 'निशाकरस्य राजर्षेः प्रसादादमितौजसः', (६. ६३, १०)।

निशुम्भक, एक असुर का नाम है जिसका विष्णु ने वध किया था (७. ६, ३५)।

निषाद—एक निषाद ने क्रौञ्च पक्षियों के एक जोड़े के नरपक्षी का वध कर दिया (१. २, १०)। वाल्मीकि ने उसे शाप दिया (१. २, १५)। ये दूसरों की हिंसा करके जीवन व्यतीत करते थे (१. ५९, २०--२१)।

नील, अग्नि के पुत्र थे : 'पावकस्य सुतः श्रीमान्नीलोऽग्निसदृशप्रभः। तेजसा यशसा वीर्यादत्यरिच्यत वीर्यवान्॥', (१. १७, १३)। 'नलं नीलं हनूमन्तमन्यांश्च हरियूथपान्', (१. १७, ३२)। ये सुग्रीव के साथ किष्किन्धा आये (४. १३, ४)। तारा के विलाप के समय इन्होंने वालिन् के हृदय में विंधे वाण को निकाला (४. २३, १७)। 'संदिदेशातिमतिमान्नीलं नित्यकृतोद्यमम्', (४. २९, २९)। किष्किन्धा जाते समय मार्ग में लक्ष्मण ने इनके भवन को भी देखा (४. ३३, ११)। 'नीलाञ्जनचयाकारो नीलो नामाथ यूथपः। अदृश्यत महाकायः कोटिभिर्दशभिर्वृतः॥', (४. ३९, २२)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव इन्हें दक्षिण दिशा की ओर भेजना चाहते थे (४. ४१, २)। श्रीराम ने इनसे कहा कि ये समस्त वानर सेना को ऐसे मार्ग से लेकर चलें जिसमें फल-मूल की अधिकता, शीतल छाया, और ठण्डा जल उपलब्ध हो (६. ४, १०–११)। ये आज्ञानुसार सेना का मार्ग ठीक करते हुये चले (६. ४, ३१)। ये सेनापति के रूप में अपनी सेना की सब ओर से रक्षा एवं नियन्त्रण कर रहे थे (६. ४, ३६)। ये समुद्र-तट पर स्थित वानर सेना की रक्षा और नियन्त्रण कर रहे थे (६. ५, १)। इन्हें सेना के हृदय-स्थान में स्थित किया गया (६. २४, १४)। श्रीराम ने इन्हें पूर्व द्वार पर जाकर

प्रहस्त का सामना करने का आदेश दिया (६. ३७, २६) । इन्होंने निकुम्भ के साथ द्वन्द्वयुद्ध किया (६. ४३, ९)। निकुम्भ के साथ युद्ध करते हुये उसके सारथि का वध कर दिया (५. ४३, ३०--३२) । राम की आज्ञा से ये इन्द्रजित् का पता लगाने के लिये गये किन्तु इन्द्रजित् ने अत्यन्त वेगशाली बाणों की वर्षा करके इनका मार्ग रोक दिया (६. ४५, २–५)। ये भी उस स्थान पर लौट आये जहाँ श्रीराम और लक्ष्मण मूर्च्छित पड़े थे (६. ४६, ३)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ४६, १९)। ये सतर्कतापूर्वक वानर-सेना की रक्षा कर रहे थे (६. ४७, २–३)। प्रहस्त को वानर-सेना का निर्दयतापूर्वक संहार करते देख ये उसकी ओर बढ़े (६. ५८, ३४–३५)। उस समय प्रहस्त ने इन पर बाणों की वर्षा की (६. ५८, ३६)। जब प्रहस्त ने इन्हें अनेक बाणों से बींध दिया तो इन्होंने एक विशाल वृक्ष से उस पर आक्रमण किया (६. ५८, ३८)। इन्होंने प्रहस्त के रथ और धनुष के टुकड़े-टुकड़े कर दिये (६. ५८, ४३–४४)। प्रहस्त के साथ युद्ध करते हुये इन्होंने उसका वध कर दिया (६. ५८, ४५–५५)। तदनन्तर ये श्रीराम और लक्ष्मण से मिले और हर्ष का अनुभव करने लगे (६. ५८, ६०)। इन्होंने रावण के साथ युद्ध किया किन्तु अन्त में रावण ने एक शक्तिशाली बाण मार कर इन्हें मूर्च्छित कर दिया (६. ५९, ७०–९०)। इन्होंने श्रीराम के आदेशों को वानर सेना तक पहुँचाया (६. ६१, ३४–३७)। इन्होंने कुम्भकर्ण पर एक विशाल पर्वत-शिखर फेंका (६. ६७, २२)। कुम्भकर्ण ने इनको अपने घुटनों से रगड़ दिया (६. ६७, २९)। अङ्गद को शत्रुओं से घिरा देख कर ये उनकी सहायता के लिये दौड़ पड़े (६. ७०, २०)। इन्होंने त्रिशिरा से युद्ध किया (६. ७०, २०–२२)। इन्होंने महोदर से युद्ध करते हुये उसका वध किया (६. ७०, २७–३२)। इन्होंने अतिकाय पर आक्रमण किया किन्तु उससे पराजित हो गये (६. ७१, ३९–४२)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ४५)। श्रीराम का यथोचित सत्कार प्राप्त करने के बाद ये अपने घर लौटे (६. १२८, ८७–८८)। देवों ने इनकी श्रीराम की सहायता के लिये सृष्टि की थी (७. ३६, ४९)। राम ने इनका स्वागत-सत्कार किया (७. ३९, २०)।

नृग—"एक राजा का नाम है जो ब्राह्मण-भक्त, सत्यवादी और आचार विचार से पवित्र थे । एक समय जब ये गायों का दान कर रहे थे तो उञ्छवृत्ति से जीवन-निर्वाह करनेवाले अग्निहोत्री ब्राह्मण की गाय भी अपने बछड़े सहित अन्य गायों के साथ ही आ गई । इन्होंने उस गाय को भी किसी ब्राह्मण को दान में दे दिया । जिस ब्राह्मण की वह गाय थी उसने उसे ढूँढ़ते हुये कनखल

में एक ब्राह्मण के पास देखा और गाय को उसके परिचित नाम से पुकार कर अपने साथ ले चला। जो ब्राह्मण उन दिनों उसका पालन कर रहा था, यह बताते हुये कि उसने गाय को राजा नृग से दान में प्राप्त किया था, अपनी गाय माँगा। जब विवाद होने लगा तो दोनों ब्राह्मण राजा नृग के पास आये, किन्तु राजभवन के द्वार पर अनेक दिनों तक रुके रहने पर भी उनको राजा का न्याय प्राप्त नहीं हो सका जिस पर क्रुद्ध हो कर दोनों ने राजा को यह शाप दिया कि वे समस्त प्राणियों से छिपकर रहनेवाले कृकलास हो कर सहस्त्रों वर्षों तक एक गड्ढे में पड़े रहें। (७. ५३, ७–२४)।" इन्होंने अपने पुत्र, वसु को, राज्य सौंपकर शाप भोगने के लिये गड्ढे में प्रवेश किया (७. ५४, ५–१९)।

नृषङ्गु, एक महर्षि का नाम है जो राम के वनवास से लौटने पर उनका अभिनन्दन करने के लिये अयोध्या पधारे थे (७. १, ४)।

प

पञ्चजन, एक दानव का नाम है जिसका विष्णु ने चक्रवान् पर्वत पर वध किया था (४. ४२, २६)।

पञ्चवटी—राम के पूछने पर (३. १३, ११) महर्षि अगस्त्य ने उन्हें फलमूल तथा जल की सुविधा से युक्त पञ्चवटी में आश्रम बनाकर सुखपूर्वक रहने का आदेश दिया (३. १३, १३–२२)। राम आदि ने पञ्चवटी की ओर प्रस्थान किया (३ १३, २३–२५)। राम, लक्ष्मण, और सीता, जटायु के साथ पञ्चवटी के लिये प्रस्थित हुये (३. १४, ३६)। श्रीराम ने नाना प्रकार के सर्पों, हिंसक जन्तुओं और मृगों से भरी हुई पञ्चवटी में प्रवेश किया (३. १५, १)। 'अयं पञ्चवटीदेशः सौम्य पुष्पित काननः', (३. १५, २)।

पञ्चाप्सर, एक-एक योजन लम्बाई-चौड़ाई वाले एक सरोवर का नाम है (३. ११, ५)। माण्डकर्णि महर्षि ने दण्डकारण्य में अपने तप के द्वारा इसका निर्माण किया था, जहाँ वे पाँच अप्सराओं के साथ जलाशय में बने भवन में निवास करते थे (३. ११, ११–१८)।

१. पद्म, निधियों में से एक का नाम है जो रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये कुवेर के साथ गये थे (७. १५, १७)। रावण के प्रहार से आहत हुये कुवेर को ये नन्दन वन में ले गये (७. १५, ३५)।

२. पद्म, एक दिग्गज का नाम है (७. ३१, ३५)।

पद्माचल, एक पर्वत का नाम है, जहाँ निवास करने वाले वानरों को बुलाने के लिये सुग्रीव ने हनुमान् को भेजा था (४. ३७, ४)।

१. पनस, एक महापराक्रमी यूथपति का नाम है जो तीन करोड़ वानरों के साथ सुग्रीव की आज्ञा से उपस्थित हुये थे (४. ३९, २१)। ये प्रस्थान करती हुयी वानर-सेना के दक्षिण भाग की रक्षा कर रहे थे (६. ४, ३४)। युद्ध में दुःसह वीर पनस पारियात्र नामक पर्वत पर निवास करते थे (६. २६, ४०)। इन्होंने लंका के परकोटे पर चढ़कर सेना का पड़ाव डाल दिया (६. ४२, २२)। कुमुद की सहायता के लिये ये लंका के पूर्वद्वार को घेरकर खड़े हो गये (६. ४२, २४)। इन्होंने सेना की व्यूहरचना करके सावधानी से उसकी रक्षा की (६. ४७, २–४)। राम ने इनका स्वागत-सत्कार किया (७. ३९, २१)।

२. पनस, विभीषण के एक मंत्री का नाम है जिसने एक पक्षी का रूप धारण करके राक्षस-सेना की शक्ति का गुप्त रूप से पता लगाया था (६. ३७, ७–१९)।

पम्पा, एक सरोवर का नाम है जिसके तट पर ही श्रीराम का हनुमान् से परिचय हुआ (१. १, ५८)। श्रीराम के इसके समीप आने की घटना का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन किया था (१. ३, २१)। यहाँ निवास करनेवाले ऋषिगण राक्षसों से अत्यन्त त्रस्त थे (३. ६, १७)। सीता का अपहरण करके लौटते समय रावण इसको लाँघकर लंकापुरी की ओर चला (३. ५४, ५)। 'ततः पुष्करिणीं वीरौ पम्पां नाम गमिष्यथः ।। अशर्करामविभ्रंशां समतीर्थामशैवलाम् । राम संजातवालूकां कमलोत्पल शोभिताम् ।।', (३. ७३. १०–११)। "इसके तट कीचड़ से रहित और इसकी भूमि सब ओर से बराबर थी। यह कमल और उत्पलों से सुशोभित था। इसमें विचरनेवाले हंस, कारण्ड, क्रौञ्च और कुरर सदैव मधुर स्वर में कूजते रहते थे। इसका जल तथा क्षेत्र विविध प्रकार के मत्स्यों और कन्द-मूलों आदि से परिपूर्ण था। (३. ७३, १२–१५)।" 'पद्मगन्धि शिवं वारि सुखशीतमनामयम् ।। उद्धृत्य स तदा क्लिष्टं रूप्यस्फटिकसंनिभम् ।', (३. ७३, १६–१७)। मोटे और पीले रंग के वानर इसके जल का पान करने के लिये आते थे (३. ७३, १८)। 'शिवोदकं च पम्पायां दृष्ट्वा शोकं विहास्यसि', (३. ७३, २०)। इसके पूर्व में ऋष्यमूक पर्वत स्थित था (३. ७३, ३०)। 'तौ कबन्धेन तं मार्गं पम्पाया दर्शितं वने। आतस्थतुर्दिशं गृह्य प्रतीचीं नृवरात्मजौ ।।', (३. ७४, १)। 'तदागच्छ गमिष्यावः पम्पां तां प्रियदर्शनाम्', (३. ७५, ७)। "सीता के शोक से व्याकुल हुये श्रीराम ने इस रमणीय और कमलों से व्याप्त पुष्करिणी, पम्पा, के क्षेत्र में प्रवेश किया। इसके तट पर तिलक, अशोक, नागकेसर, वकुल, तथा लिसोड़े के वृक्ष थे। यह भाँति-भाँति के रमणीय उपवनों से घिरा था। इसका जल

कमल-पुष्पों से आच्छादित और स्फटिकमणि के समान स्वच्छ था। इसमें मत्स्य और कश्यप भरे हुये थे। किन्नर, नाग, गन्धर्व, यक्ष और राक्षस इसका सेवन करते थे। भाँति-भाँति के वृक्ष और लताओं से व्याप्त होकर यह सरोवर शीतल जल की सुन्दर निधि प्रतीत होता था। इसमें अरविन्द. उत्पल, पद्म और सौगन्धिक आदि पुष्प खिले थे। यह आम के वनों से घिरा हुआ था जिनमें मयूरों की वाणी सदैव गूँजती रहती थी। तिलक, विजौरा, वट, लोध्र, खिले हुये करवीर, नागकेसर, मालती, कुन्द, गुल्म, भण्डीर, वञ्जुल, अशोक, छितवन, कतक, माधवी, तथा नाना प्रकार के पुष्पों और वृक्षों से सुशोभित पम्पासरोवर वस्त्राभूषणों से सुसज्जित युवती के समान प्रतीत हो रहा था (३. ७५, १६–२४)।" 'स तां पुष्करिणीं गत्वा पद्मोत्पलझषाकुलाम्', (४. १, १)। 'सौमित्रे शोभते पम्पा वैदूर्यविमलोदका', (४. १, ३)। श्रीराम ने पम्पा-क्षेत्र की वसन्त-शोभा का लक्ष्मण से वर्णन करते हुये सीता के लिये विलाप किया (४. १, ४–११४)। श्रीराम इसे लांघकर आगे बढ़े (४. १, १२७)। अयोध्या लौटते समय श्रीराम का विमान इसके क्षेत्र के ऊपर से भी उड़ता हुआ आया (६. १२३, ४१)।

परशुराम—श्रीराम के साथ इनके संघर्ष की घटना का वाल्मीकि ने पूर्व-दर्शन किया (१. ३, १२)। "मिथिला से अयोध्या लौटते समय मार्ग में अनेक अपशकुनों के पश्चात् दशरथ ने देखा कि क्षत्रिय-राजाओं का मान-मर्दन करनेवाले भृगुकुलनन्दन, जमदग्निकुमार (परशुराम) सामने आ रहे हैं। वे उस समय अत्यन्त भयानक दिखाई पड़ रहे थे। उनके मस्तक पर बड़ी-बड़ी जटायें थीं। वे कैलास के समान दुर्जय और कालाग्नि के समान दुःसह प्रतीत और तेजोमण्डल द्वारा जाज्वल्यमान हो रहे थे। साधारण लोगों को उनकी ओर देखना भी कठिन था। वे कन्धे पर फरसा रक्खे और हाथ में विद्युद्गणों के समान दीप्तिमान् धनुष और भयंकर बाण लिये हुये त्रिपुर-विनाशक शिव के समान प्रतीत हो रहे थे। (१. ७४, १७–१९)।" 'तं दृष्ट्वा भीमसंकाशं ज्वलन्तमिव पावकम्। वसिष्ठप्रमुखा विप्रा जपहोमपरायणाः॥', (१. ७४, २०)। वसिष्ठादि ऋषियों का अभिवादन स्वीकार करने के पश्चात् इन्होंने राम को सम्बोधित करते हुये कहा : 'तुमने शिव के धनुष को तोड़ दिया है। उसी समाचार को जानकर मैं एक अन्य उत्तम धनुष लेकर तुम्हारे पास आया हूँ, जिस पर तुम वाण चढ़ाओ।' (१. ७४, २३--२४; ७५, १--३)। राजा दशरथ ने इनको प्रसन्न करने के लिये इनकी स्तुति की। (१. ७५, ५--९)। दशरथ के निवेदन का अनादर करते हुये इन्होंने विश्वकर्मा द्वारा निर्मित शैवी और वैष्णवी धनुषों का इतिहास बताया। तदनन्तर इन्होंने श्रीराम

से वैष्णवी धनुष पर बाण चढ़ाने के लिये कहा (१. ७५, १०–२८)।" "जब राम ने वैष्णवी धनुष पर बाण चढ़ाते हुये इनकी शर्तें पूरी कर दीं तो ये घबरा उठे। राम द्वारा वैष्णव धनुष हाथ में लेते ही इनका तेज निकल कर राम में समा गया। इस प्रकार तेजहीन होकर जड़वत् बने परशुराम ने राम से कहा : 'आप मेरी गमन शक्ति को नष्ट न करें। मैं मन के समान वेग से अभी महेन्द्र पर्वत पर चला जाऊँगा।···आपने जो वैष्णव धनुष की प्रत्यञ्चा चढ़ा दी है उससे मुझे विदित हो गया है कि आप मधु नामक दैत्य का वध करने वाले अविनाशी देवेश्वर विष्णु हैं।' (१. ७६, ११–२०)।" इस प्रकार तपस्या द्वारा उपार्जित किये हुये पुण्य-लोकों को राम के द्वारा चलाये हुये उस बाण से नष्ट हुआ देख ये महेन्द्र पर्वत पर चले गये (१. ७६, २२–२४)। अपने पिता की आज्ञा पर इन्होंने कुठार से अपनी माता का वध कर दिया था (२. २१, ३३)।

परुष, खर के एक सेनापति का नाम है जो श्रीराम से युद्ध करने गया (३. २३, ३२)। इस महावीर बलाध्यक्ष ने खर के आदेश पर अपनी सम्पूर्ण सेना सहित श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, २६–२८)।

पर्जन्य, ने ब्रह्मा के आदेश पर श्रीराम की सहायता के लिये शरभ को अपने वानर-पुत्र के रूप में उत्पन्न किया (१. १७, १५)।

पर्वत, एक देवर्षि का नाम हैं। "रावण के पूछने पर इन्होंने तपस्वी, युद्ध-भूमि में मृत योद्धा, और सुवर्ण दान करनेवाले पुरुष की अन्तिम गति का वर्णन करते हुये उसे बताया कि शीघ्र ही राजा मान्धाता उसकी (रावण की) युद्ध की अभिलाषा को शान्त कर देंगे (७. २३ग, १–२४)। ये राजा नृग को ब्राह्मणों के दिये हुये शाप की बात बताकर वायु के समान तीव्र गति से ब्रह्मलोक चले गये (७. ५४, ७)। इन्होंने राम की सभा में सीता के शपथ ग्रहण को देखा (७. ९६, ५)।

पह्लव, एक जाति के वीरों का नाम है जिन्हें वसिष्ठ के कहने पर उनकी सुरभि नामक गाय ने अपनी हुंकार से विश्वामित्र को पराजित करने के लिये उत्पन्न किया था। इन लोगों ने विश्वामित्र के देखते-देखते ही उनकी समस्त सेना का विनाश कर दिया। अन्ततः विश्वामित्र ने इन्हें विनष्ट कर दिया (१. ५४, १७–२०)।

पाञ्चाल, एक देश का नाम है। केकय जाते समय वसिष्ठ के दूत इस देश से भी होकर गये थे (२. ६८, १३)।

१. पाण्ड्य, दक्षिण के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १२)।

२. पाण्ड्य, सुदूर दक्षिण में समुद्र-तट पर स्थित एक नगर का नाम है : 'ततो हेममयं दिव्यं मुक्तामणिविभूषितम् । युक्तं कवाटं पाण्डयानां गता द्रक्ष्यथ वानराः ॥', (४. ४१, २०)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को यहाँ भेजा था (४. ४१, १९–२०)।

पारियात्र, एक पर्वत का नाम है जो पश्चिमी समुद्र के बीच में स्थित था : "इसका शिखर सौ योजन विस्तृत और सुवर्णमय था। इस पर सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने सुषेण आदि को आदेश दिया। इस पर्वत के शिखर पर अग्नितुल्य तेजस्वी और वेगशाली चौबीस करोड़ गन्धर्व निवास करते थे। सुग्रीव ने इन गन्धर्वों के निकट जाने अथवा उस पर्वत-शिखर से कोई फल-मूल तोड़ने इत्यादि का वानरों को निषेध कर दिया था (४. ४२, १८–२२)।" पनस नामक वानर यूथपति इसी पर्वत पर निवास करते थे (६. २६, ४०)।

पावनी, विन्दु सरोवर से निकलनेवाली सात नदियों में से एक का नाम है जो पूर्वदिशा को ओर बहती है (१, ४३, १२)।

पिङ्गल, सूर्य के द्वारपाल का नाम है (७. २३ख, १०)।

पितृ-गण—देवों के अनुरोध पर इन लोगों ने इन्द्र को एक भेड़े का अण्डकोष लगाया (१. ४९, ९)। उसी समय से समस्त पितृगण अण्डकोष-रहित भेड़ों को ही उपयोग में लाते और दाताओं को उनके दानजनित फलों का भागी बनाते हैं (१. ४९, १०)। इन्द्रजित् के विरुद्ध युद्ध करते समय ये लोग भी लक्ष्मण की रक्षा कर रहे थे (६. ९०, ६४)। सीता की उपेक्षा करने पर राम के सम्मुख उपस्थित होकर इन लोगों ने उन्हें समझाने का प्रयास किया (६. ११७, २–१०)। क्षीरसागर से ही स्वाहा तथा स्वधाभोजी पितरों की स्वधा प्रगट हुई (७. २३, २३)।

पितृलोक को दक्षिण में ऋषभ पर्वत के निकट स्थित बताया गया है। इस भूमि को यमराज की राजधानी और कष्टप्रद अन्धकार से आच्छादित कहा गया है। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये दक्षिण जानेवाले वानर यूथपतियों को यहाँ जाने के लिये मना किया क्योंकि इसमें जङ्गम प्राणियों की गति नहीं मानी गई है (४. ४१, ४५–४६)।

१. पिशाच, (बहु०)—श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा के लिये कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, १७)। ब्रह्मा ने रावण को इनके द्वारा भी अवध्य रहने का वरदान दिया (३. ३२, १८–१९)। ये लोग रातभर राम और रावण के युद्ध को देखते रहे (६. १०७, ६५)।

२. पिशाच, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जो एक घोड़े पर सवार होकर

रावण के साथ युद्धभूमि में आया : 'योऽसौ हयं काञ्चनचित्रभाण्डमारुह्य संध्याभ्रगिरिप्रकाशः । प्रासं समुद्यम्य मरीचिनद्धं पिशाच एषोऽशनितुल्यवेगः ॥', (६. ५९, १८) ।

पुण्डरीका, एक अप्सरा का नाम है जिसने भरद्वाज के आवाहन पर भरत के सम्मुख नृत्य किया था (२. ९१, ४६) ।

पुञ्जिकस्थला—देखिये **अञ्जना** ।

१. पुण्ड्र, पूर्व के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने विनत को भेजा था (४. ४०, २२) ।

२. पुण्ड्र, दक्षिण के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १२) ।

पुरूरवस्, एक राजा का नाम है जिन्हें उर्वशी ने ठुकरा कर पश्चाताप किया था (३. ४८, १८) । इन्होंने विनम्रतापूर्वक रावण के सामने अपनी पराजय स्वीकार कर ली थी (७. १९, ५) । "मित्र के शाप के कारण उर्वशी भूतल पर आकर इनकी पत्नी बन गई । ये काशिराज, बुध, के पुत्र थे (७. ५६, २२–२६) ।" इन्होंने उर्वशी के गर्भ से आयु नामक पुत्र उत्पन्न किया (७. ५६, २७) । इनके जन्म का उल्लेख (७. ८९, २३–२४) । इल के स्वर्गवास के बाद उनके इन्हीं पुत्र ने प्रतिष्ठानपुर का राज्य प्राप्त किया (७. ९०, २३) ।

पुलस्त्य, चौथे प्रजापति का नाम है जो क्रतु के बाद हुये थे (३. १४, ८) । विश्रवा इनके मानस पुत्र थे (५. २३, ६–७) । ये प्रजापति के पुत्र और कृतयुग में हुये थे : 'पुरा कृतयुगे राम प्रजापतिसुतः प्रभुः । पुलस्त्यो नाम ब्रह्मर्षिः साक्षादिव पितामहः ॥', (७. २, ४) । ब्रह्मा के पुत्र होने तथा अपने उज्ज्वल गुणों के कारण ही ये देवों आदि के अत्यन्त प्रिय थे (७. २, ६) । "एक समय ये राजर्षि तृणविन्दु के आश्रम में गये और वहीं रहने लगे । वहाँ कुछ कन्यायें इनकी तपस्या में विघ्न उत्पन्न किया करती थीं जिससे रुष्ट होकर इन्होंने उन कन्याओं को शाप देते हुये कहा : 'कल से जो कन्या यहाँ मेरे दृष्टिपथ में आयेगी वह निश्चय ही गर्भ धारण कर लेगी ।' राजर्षि तृणविन्दु की कन्या ने इस शाप को नहीं सुना और इनके सम्मुख चली गई जिससे उसने गर्भ धारण कर लिया । तृणविन्दु अपनी कन्या की दशा को देखकर अपनी तपस्या के प्रभाव से इनके शाप को जान गये । उन्होंने स्वयं जाकर इनसे अपनी कन्या को ग्रहण कर लेने के लिये कहा । उस कन्या के शील और सदाचार से प्रसन्न होकर इन्होंने उसे अपने समान ही गुणसम्पन्न पुत्र प्राप्त करने का वर दिया । कालान्तर में इनकी इस पत्नी ने विश्रवा

नामक पुत्र उत्पन्न किया (७. २, ७–३४) ।" जब विश्रवा को भी एक पुत्र उत्पन्न हुआ तब इन्होंने प्रसन्न होकर उस पुत्र का वैश्रवण नाम रखते हुये उसे आगे चलकर धनाध्यक्ष होने का आशीर्वाद दिया (७. ३, ६–८)। इन्होंने मध्यस्थ बनकर रावण और मान्धाता के बीच शान्ति स्थापित की (७. २३ग, ५६–५७)। "स्वर्ग में देवताओं के मुख से इन्होंने सुना कि रावण को पकड़ना वायु को पकड़ने के समान है। महान् धैर्यशाली होने के विपरीत भी ये सन्तान-प्रेम के कारण वायु के वेग और मन की गति के समान, वायु-पथ का आश्रय लेकर, महिष्मती नगरी में आये। आकाश से उतरते समय ये सूर्य के समान प्रतीत हो रहे थे और इनकी ओर देखना अत्यन्त कठिन था। हैहयराज को जब इनके आगमन का समाचार मिला तब उसने इनका स्वागत-सत्कार करने के पश्चात् इनके पधारने का प्रयोजन पूछा। इन्होंने हैहयराज अर्जुन से कहा कि वे इनके पौत्र, दशानन रावण, को मुक्त कर दें। अर्जुन ने इनकी आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए रावण को मुक्त करके उससे मैत्री-सम्बन्ध स्थापित किया। दशग्रीव रावण को छुड़ाकर ब्रह्मापुत्र पुलस्त्य पुनः ब्रह्मलोक चले गये (७. ३३, १–२१)।" जब इल को पुरुषत्व प्राप्त कराने के सम्बन्ध में महर्षि वुध अन्य मित्रों से परामर्श कर रहे थे तो ये भी उनके आश्रम में पधारे (७. ९०, ९)। राम की सभा में इन्होंने भी सीता के शपथ-ग्रहण को देखा (७. ९६, ३)।

पुरुषादकाः, नरभक्षी राक्षसों के लिये प्रयुक्त हुआ है : 'कर्णप्रावरणाश्चैव तथा चाप्योष्ठकर्णकाः । घोरालोहमुखाश्चैव जवनाश्चैकपादकाः ।। अक्षया बलवन्तश्च तथैव पुरुषादकाः ।', (४. ४०, २५–२६)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने विनत को इनके निवास-क्षेत्र में भेजा था।

पुलह, एक प्रजापति का नाम है जो प्रचेता के वाद हुये थे (३. १४, ८)।

पुलिन्द, उत्तर के एक देश का नाम है जहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये शतवल को भेजा था (४. ४३, ११)।

पुलोमा, एक दानव का नाम है जो शची का पिता था। अनुह्लाद ने इसकी पुत्री, शची, का छलपूर्वक अपहरण कर लिया था और इन्द्र ने इसका वध किया था (४, ३९, ६–७)। इन्द्रजित् से युद्ध करने के समय जब जयन्त उससे पराजित होने लगा तो यह जयन्त को लेकर वहाँ से दूर चला गया (७. २८, १९–२०)।

पुष्कर, एक तीर्थ का नाम है जहाँ विश्वामित्र तपस्या करने गये (१. ६१, ४)। राजा अम्बरीष ने यहाँ विश्राम किया था (१. ६२, १)। यहीं शुनःशेफ ने विश्वामित्र का दर्शन करके उनसे अपनी रक्षा की याचना की (१. ६२, ४–७)। विश्वामित्र ने यहाँ और एक सहस्र वर्ष तक तपस्या की

(१. ६२, २८)। अप्सरा मेनका पुष्कर में आकर स्नान का उपक्रम करने लगी (१. ६३, ४)।

पुष्कल, भरत के वीर पुत्र का नाम है (७. १००, १६)। राम ने इनका अभिषेक किया (७. १००, १९)। भरत की सेना के साथ ये भी गये (७. १००, २०)।

पुष्कलावत, गान्धार के एक नगर का नाम है जिसकी भरत ने स्थापना की। इसका वर्णन (७. १०१, १०–१५)।

पुष्पक, एक विमान का नाम है जिसपर श्रीराम ने लंका से अयोध्या की यात्रा की (१. १, ८६)। इस पर बैठकर श्रीराम इत्यादि नन्दीग्राम आये (१. १, ८८)। वाल्मीकि ने इसका पूर्वदर्शन किया (१. ३, २९)। राम द्वारा इसके अवलोकन की घटना का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया (१. ३, ३६)। पहले यह कुवेर की सम्पत्ति था जिसे रावण ने छीन लिया (३. ३२, १५)। यह आकाश में उड़ता था (३. ४८, ६)। 'पुष्पकं नाम सुश्रोणि भ्रातुर्वैश्रवणस्य मे। विमानं सूर्यसंकाशं तरसा निर्जितं रणे। विशालं रमणीयं च तद्विमानं मनोजवम्।', (३. ५५, २९–३०)। "लंका में हनुमान् ने पुष्पक विमान को देखा जो मेघ के समान ऊँचा, सुवर्ण के समान सुन्दर, अपनी कान्ति से प्रज्वलित, अनेकानेक रत्नों से व्याप्त और विभिन्न प्रकार के पुष्पों से आच्छादित था। यह अत्यन्त सुन्दर और नाना प्रकार के रत्नों से निर्मित होने के कारण अत्यन्त सुन्दर प्रतीत होता था। इसमें श्वेत भवन, सुन्दर पुष्पों से सुशोभित पुष्कर, केशरयुक्त कमल, विचित्र वन और अद्भुत सरोवरों का भी निर्माण किया गया था। इस पर विविध रत्नों से ऐसे विहङ्गम बने हुये थे जो साक्षात् कामदेव के सहायक प्रतीत होते थे। इसमें तेजस्विनी लक्ष्मी की प्रतिमा भी थी जिसका हाथियों के द्वारा अभिषेक हो रहा था। इसे देखकर हनुमान् अत्यन्त विस्मित हुये (५. ७, ५–१५)।" "इसके गवाक्ष तपे हुये सुवर्ण से निर्मित थे और रचना-सौन्दर्य की दृष्टि से यह विश्वकर्मा की चरम कृति थी। जब यह आकाश में उठकर वायुमार्ग में स्थित होता था तब सौरमार्ग के चिह्न-सा सुशोभित होता था। इसमें जो विशेषतायें थीं वह देवताओं के विमानों में भी नहीं थीं। मन में जहाँ भी जाने का संकल्प उठता था वहीं यह विमान पहुँच जाता था। स्वामी के मन का अनुसरण करते हुये यह विमान अत्यन्त शीघ्रगामी, दूसरों के लिये दुर्लभ, वायु के समान वेगशील और पुण्यकारी महात्माओं का आश्रय था। इसमें आश्चर्यजनक विचित्रवस्तुओं का संग्रह किया गया था। अनेक शिखरवाला यह विमान छोटे-छोटे शिखरों से युक्त किसी

पर्वत के समान सुशोभित होता था। कुण्डलों से सुशोभित मुखमण्डल, निमेष-रहित विशाल लोचन, अपरिमित भोजन करने, और रात में ही दिन के समान चलनेवाले सहस्रों भूतगण इसका भार वहन करते थे (५. ८, १–८)।" विश्वकर्मा ने इसे ब्रह्मा के लिये निर्मित किया था और ब्रह्मा ने विशेष अनुकम्पा करके कुबेर को दे दिया जिनसे अन्ततः रावण ने हस्तगत कर लिया (५. ९, ११-१२)। "इसमें ईहामृगों की मूर्तियों से युक्त सोने-चाँदी के सुन्दर स्तम्भ, सुमेरु और मन्दराचल के समान ऊँचे अनेकानेक गुप्त गृह, और मंगल-भवन थे। इसका प्रकाश अग्नि और सूर्य के समान था। इसमें सोने की सीढ़ियाँ, अत्यन्त मनोहर वेदियाँ, स्फटिक के वातायन आदि बने थे। इसका फर्श मूँगे-मणियों से निर्मित था। सुवर्ण के समान लाल रंग के सुगन्धयुक्त चन्दन से संयुक्त होने के कारण यह बालसूर्य के समान प्रतीत होता था। हनुमान् ने इसमें प्रवेश करके इसकी शोभा का अवलोकन किया (५. ९, १३–२०)।" इसका विस्तृत वर्णन (६. १२१, २३–२९)। 'खगतेन विमानेन हंसयुक्तेन भास्वता। प्रहृष्टश्च प्रतीतश्च बभौ रामः कुबेरवत्॥', (६. १२२, २६)। श्रीराम की आज्ञा पाकर यह हंसयुक्त उत्तम विमान् महान् शब्द करता हुआ आकाश में उड़ने लगा (६. १२३, १)। श्रीराम ने इसे कुबेर को लौटा दिया (६. १२७, ५७–५९)। कुबेर को पराजित करके रावण ने इसे हस्तगत कर लिया था : इसका विस्तृत वर्णन (७. १५, ३६–४०)। श्वेतद्वीप में पहुँचने पर यह अस्थिर हो गया जिससे रावण ने इसे लौटा दिया (७. ३७ङ, २४–२७)। कुबेर की आज्ञा से यह राम की सेवा के लिये उपस्थित हुआ (७. ४१, ३–१०)। इसका पूजन करने के पश्चात् राम ने इसे लौटा दिया (७. ४१, ११–१४)। राम की आज्ञा शिरोधार्य करके यह लौट गया (७. ४१, १५)। राम के स्मरण करने पर यह तत्काल उनके सम्मुख उपस्थित हुआ (७. ७५, ५–७)।

पुष्पितक, "एक पर्वत का नाम है जो लंका से आगे सौ योजन विस्तृत दक्षिण-समुद्र के मध्य में स्थित था। यह परमशोभा से सम्पन्न तथा सिद्धों और चारणों से सेवित, चन्द्रमा और सूर्य के समान प्रकाशमान् तथा समुद्र की गहराई तक घुसा हुआ था। इसके विस्तृत शिखर आकाश में रेखा खींचते हुये से प्रवीत होते थे। इस पर्वत के एक सुवर्णमय शिखर का प्रतिदिन सूर्यदेव सेवन करते थे तथा एक रजतमय शिखर का चन्द्रमा। कृतघ्न, नृशंस और नास्तिक पुरुष इस पर्वत-शिखर को नहीं देख पाते थे। सुग्रीव ने अङ्गद को इस पर्वत को मस्तक झुकाकर प्रणाम करके सावधानीपूर्वक सीता को इस पर खोजने के लियें भेजा (४. ४१, २८–३१)।"

पुष्पोत्कटा, सुमालिन् और केतुमती की पुत्री का नाम है (७. ५, ४१)।

पूरु, ययाति और शर्मिष्ठा के प्रिय पुत्र का नाम है (७. ५८, १०–११)। अपने पिता की इच्छा पर इन्होंने सहर्ष ही उनकी वृद्धावस्था को ग्रहण कर लिया था (७. ५९, ६–७)। इनके पिता ने दीर्घकाल के पश्चात् इनसे अपनी वृद्धावस्था वापस लेते हुये इनका राज्याभिषेक किया (७. ५९, १०–१२. १७)। ये काशी के राजा हुये (७. ५९, १९)।

पूषन्, एक देवता का नाम है जिनका वनवास के समय श्रीराम की रक्षा करने के लिये कौसल्या ने आवाहन किया था (२. २५, ८)। ये आदित्यों में से एक थे, और राक्षसों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये गये (७. २७, ३६)।

पृथिवी—जब महादेव ने पूछा कि उनके स्खलित तेज को कौन धारण करेगा, तो देवों ने इनका नाम बताया (१. ३६, १४)। महादेव के तेज से पर्वत और वनों सहित सम्पूर्ण पृथिवी व्याप्त हो गई (१. ३६, १७)। उमा ने पृथिवी को बहुतों की भार्या तथा निःसन्तान होने का शाप दिया (१. ३६, २३–२४)। सगर के ६०,००० पुत्रों ने सम्पूर्ण पृथिवी पर यज्ञ-अश्व को ढूँढ़ने का आदेश दिया (१. ३९, १३)। राजा सगर के पुत्रों के विभिन्न आयुधों से अत्यन्त त्रस्त होकर ये आर्तनाद करने लगीं (१. ३९, १९)। यह विष्णु की महिषी हैं (१. ४०, २)। राजा दशरथ के शपथ-पूर्वक वर देने की प्रतिज्ञा करने पर कैकेयी ने साक्षी रहने के लिये इनका भी आवाहन किया (२. ११, १४)। राम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, १३)। राम ने कहा कि यशस्विनी पृथिवी ने उनका प्रिय करने के लिये ही जानकी के केश से गिरे पुष्पों को सुरक्षित रक्खा है (३. ६४, २७)। 'या चेयं जगतो माता सर्वलोकनमस्कृता। अस्याश्च चलनं भूमेर्दृश्यते कोसलेश्वर ॥', (३. ६६, ९)। शपथ-ग्रहण करते हुये सीता ने इनसे अपने भीतर स्थान देने की स्तुति की (७. ९७, १५–१७)। उस समय ये एक ऐसे सुन्दर सिंहासन पर अरूढ़ होकर राम की सभा में प्रकट हुईं जिसे नागों ने धारण कर रक्खा था, और सीता को लेकर रसातल में प्रवेश कर गईं (७. ९७, १८–२१)। जब श्रीराम परमधाम जाने लगे तो ये भी उनके साथ-साथ चलीं (७. १०९, ६)।

पृथु, अनरण्य के पुत्र और त्रिशङ्कु के पिता का नाम है (१. ७०, २३)।

पृथुग्रीव, खर के सेनापति का नाम है जो राम के साथ युद्ध करने गया (३. २३, ३२)। महाबलशाली बलाध्यक्ष पृथुग्रीव ने खर की आज्ञा से अपनी सम्पूर्ण सेना सहित राम पर आक्रमण किया (३. २६, २७–२८)।

प्रघस, रावण के एक सेनापति का नाम है जिसने रावण के आदेश पर हनुमान् के साथ द्वन्द्व युद्ध किया (५. ४६, २. ३१–३५)। इसमे सुग्रीव के साथ द्वन्द्व युद्ध किया (६. ४३, १०)। सुग्रीव ने इसका वध किया (६. ४३, २५)। यह सुमालिन् और केतुमती का पुत्र था (७. ५, ३८–४१)।

प्रघसा, एक राक्षसी का नाम है, जिसने रावण को अस्वीकृत कर देने पर सीता को भक्षण कर लेने की धमकी दी (५. २४, ४२)।

प्रचेता, एक प्रजापति का नाम है जो अङ्गिरा के बाद हुये थे (३. १४, ८)।

१. प्रजङ्घ, एक वानर यूथपति का नाम है जो वानर सेना के दक्षिण की ओर जाते समय उसे प्रोत्साहित करता हुआ चल रहा था (६. ४, ३७)। इसने हनुमान् के साथ मिल कर पश्चिमी फाटक पर युद्ध किया (६. ४१, ४०–४१)। राम ने इसका स्वागत-सत्कार किया (७. ३९, २२)।

२. प्रजङ्घ, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसने सम्पाति से द्वन्द्व युद्ध किया था (६. ४३, ७)। इसने अपने प्रतिद्वन्द्वी को तीन बाणों से बींध दिया (६. ४३, २०)। रावण ने इसे कुम्भ और निकुम्भ के साथ युद्ध-भूमि में जाने का आदेश दिया (६. ७५, ४६)। शोणिताक्ष को अङ्गद द्वारा पराभूत होते देखकर यह उसकी सहायता के लिये दौड़ पड़ा (६. ७६, १२)। यूपाक्ष और शोणिताक्ष के साथ इसने भी अङ्गद के साथ युद्ध किया (६. ७६, १४–१५)। अङ्गद ने इसका वध कर दिया (६. ७६, १९–२७)। यह यूपाक्ष का चाचा था (६. ७६, २८)।

प्रतर्दन—देखिये **काशी**।

१. प्रतिष्ठान, एक नगर का नाम है जहाँ आकर शापभ्रष्ट उर्वशी अपने पति, पुरूरवा, से मिली (७. ५६, २६)। यह काशिराज की राजधानी थी (७. ५९, १९)।

२. प्रतिष्ठान, मध्यदेश के एक नगर का नाम है जिसकी राजा इल ने स्थापना की थी (७. ९०, २२)।

प्रतपन, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है, जिसने नल के साथ द्वन्द्व युद्ध किया था : 'वीरः प्रतपनो घोरो राक्षसो रणदुर्धरः। समरे तीक्ष्णवेगेन नलेन समयुध्यत ॥', (६. ४३, १३)। नल ने इसकी आँखे निकाल लीं (६. ४३, २३–२४)।

प्रभाव, सुग्रीव के एक विश्वासपात्र मन्त्री का नाम है। इन्होंने सुग्रीव से अपने कर्त्तव्य पर अटल रहने तथा सत्यप्रतिज्ञ बने रहकर लक्ष्मण के क्रोध को

शान्त करने की प्रार्थना की। ये उदार दृष्टिवाले, तथा सुग्रीव को अर्थ और धर्म के विषय में ऊँच-नीच समझाने के लिये नियुक्त थे (४. ३१, ४२–४१)।

प्रजोज्य, एक वानर-प्रमुख का नाम है जिसकी देवताओं ने राम की सहायता के लिये सृष्टि की थी (७. ३६, ५०)।

प्रमति, विभीषण के एक मंत्री का नाम है जिसने एक पक्षी का रूप धारण करके गुप्त रूप से राक्षस-सेना की शक्ति का पता लगाया था (६. ३७, ७–१९)।

१. प्रमाथी दूषण के एक मंत्री का नाम है जो राम के विरुद्ध युद्ध करने गया था (३. २३, ३४)। यह दूषण की सेना के आगे-आगे चलनेवाला महाबली वीर था (३. २६, १७--१८)। इसने दूषण के मारे जाने पर हाथ में फरसा लेकर राम पर आक्रमण किया (३. २६, १८--१९)। श्रीराम ने इसको असंख्य वाण-समूहों से मथ डाला (३. २६, २०)।

२. प्रमाथी, एक वानर यूथपति का नाम है जो राम की वानरी सेना में सम्मिलित हुये थे। यह गंगा-तट पर विद्यमान उशीरवीज नामक पर्वत तथा गिरिश्रेष्ठ मन्दराचल पर निवास करते हुये हाथियों और वानरों के प्राचीन वैर का स्मरण करके गज-यूथपतियों को भयभीत करते थे। इनके अधिकार में दस करोड़ वानर रहते थे (६. २७, २५-२१)। इन्होंने इन्द्रजित् के चारों घोड़ों का वध करके उसके रथ को भी तोड़ डाला (६. ८९, ४८–५१)।

प्रमुचि, एक दक्षिण दिशा के महर्षि का नाम है जो राम के वनवास से लौटने पर उनका स्वागत करने के लिये अयोध्या पधारे थे (७. १, ३)।

प्रमोदन, एक मुनि का नाम है जिन्हें बुध ने इल के पुरुषत्व-प्राप्ति के विषय में परामर्श करने के लिये आमन्त्रित किया था (७. ९०, ५)।

प्रयाग—श्रीराम ने अपने प्रयाग के निकट पहुँचने का अनुमान लगाया (२. ५४, ५)। श्रीराम और लक्ष्मण सूर्यास्त होते-होते गंगा-यमुना के संगम के समीप भरद्वाज के आश्रम पर पहुँच गये (२. ५४, ८)। सेना-सहित भरत गंगा नदी को पार करके प्रयाग वन पहुंचे और सेना को वहीं विश्राम करने की आज्ञा देकर स्वयं भरद्वाज मुनि के आश्रम पर गये (२. ८९, २१–२२)।

प्रशुश्रुक, मनु के पुत्र और अम्बरीष के पिता का नाम है (१. ७०, ४१)।

प्रसभ, एक वानर-यूथपति का नाम है जो कुमुद की सहायता के लिये पूर्वी द्वार पर सन्नद्ध हुआ (६, ४२, २४)।

प्रस्थल, उत्तर के एक देश का नाम है जहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये शतबल को भेजा (४. ४३, ११)।

प्रस्रवण, एक पर्वत का नाम है जिससे अनेक नदियाँ निकली थीं (३. ३०, २१)। सीता के अपहरण के पश्चात् श्रीराम ने इस पर्वत से भी

सीता का पता पूछा, परन्तु इसके चुप रहने पर इसे शाप दे दिया (३. ६४, २८--३४)। सुग्रीव के राज्याभिषेक के पश्चात् श्रीराम और लक्ष्मण प्रस्रवण गिरि पर चले गये (४. २७, १)। 'शार्दूलमृगसंघुष्टं सिंहैर्भीमरवैर्वृतम् । नानागुल्मलतागूढं बहुपादपसंकुलम् ॥ ऋक्षवानरगोपुच्छैर्मार्जारैश्च निषेवितम् । मेघराशिनिभं शैलं नित्यं शुचिकरं शिवम् ॥" (४. २७, २--३)। इस पर्वत के प्राकृतिक सौन्दर्य का विस्तृत वर्णन (४. २७. ३--२५)। श्रीराम और लक्ष्मण ने चार महीने की वर्षाऋतु की अवधि में इसी पर्वत पर निवास करने का निश्चय किया, क्योंकि यह किष्किन्धा के भी निकट था (४. २७, २५--२६)। 'बहुदृश्यदरीकुञ्जे तस्मिन्प्रस्रवणे गिरौ', (४. २७, २९)। इसे माल्यवान् पर्वत भी कहते हैं (४. २८, १)। राम और लक्ष्मण ने सीता का समाचार लाने के लिये भेजे गये दूतों की प्रतीक्षा में इस पर्वत पर एक मास तक और निवास किया (४. ४५, ३)। पूर्वादि तीन दिशाओं में गये हुये वानर निराश होकर इसी पर्वत पर लौट आये (४. ४७, ६)।

प्रहस्त, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, १७)। हनुमान् ने इस मन्त्र-तत्त्वज्ञ राक्षस को रावण के सिंहासन के निकट देखा (५. ४९, ११)। रावण की आज्ञा से इसने हनुमान् से उनके लंका आने आदि का प्रयोजन पूछा (५-५०, ७--१२)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, ८)। इस शूर सेनापति ने रावण को आश्वासन दिया कि यह अकेले ही वानरों का सम्पूर्ण पृथिवी से उन्मूलन कर सकता है (६. ८, १--५)। यह अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर राम आदि के वध के लिये रावण की सभा में सन्नद्ध खड़ा था (६. ९, ३)। इसने रावण का चरण-स्पर्श किया जिसके पश्चात् रावण ने इसे यथायोग्य आसन प्रदान किया (६. ११, २९)। रावण की इच्छा के अनुसार इसने लंका की रक्षा-व्यवस्था सुदृढ़ करने के पश्चात् रावण को इसका समाचार दिया (६. १२, ३--५)। राज्य का हित चाहनेवाले प्रहस्त की बात को सुनकर रावण ने अपने सुहृदों में विश्वास उत्पन्न किया (६. १२, ६)। श्रीराम से सन्धि करने के विभीषण के प्रस्ताव पर मत व्यक्त करते हुये इसने कहा कि श्रीराम से भय का कोई कारण नहीं है (६. १४, ७--८)। इसने कैलास पर्वत पर मणिभद्र को पराजित किया था (६. १९, ११)। इसे लंका के पूर्वी द्वार का रक्षक नियुक्त किया गया (६. ३६, १७)। 'प्रहस्तं युद्धकोविदम्', (६. ५७, ४)। 'प्रहस्तो वाहिनीपतिः', (६. ५७, १२)। "रावण के पूछने पर इसने कहा : 'हम लोग पहले ही इस निश्चय पर पहुँच चुके थे कि यदि आप सीता को नहीं लौटायेंगे तो निश्चित रूप से युद्ध छिड़ जायगा। आपने सदैव ही मेरा

हित साधन किया है अतः मैं उसका ऋण चुकाने के लिये युद्ध की ज्वाला में अपने जीवन की आहुति देने के लिय प्रस्तुत हूँ।' इतना कहकर इसने विभिन्न सेनाध्यक्षों से अपने लिये सेना माँगी (६. ५७, १२--१८)।" जव इसकी सेना तैयार हो गई तव यह अपने चार सेनापतियों के साथ एक सुन्दर रथ पर बैठकर सेना को आगे किये हुये पश्चिमी द्वार की ओर आगे बढ़ा (६. ५७, २४–३३)। 'प्रहस्तं तं हि निर्यान्तं प्रख्यातगुणपौरुषम् । युधि नानाप्रहरणा कपिसेनाभ्यवर्तत ॥', (६. ५७, ४२)। युद्ध आरम्भ होने पर यह विजय की अभिलाषा से उसी प्रकार वानर सेना में प्रवेश करने की चेष्टा करने लगा जिस प्रकार शलभ अग्नि में प्रवेश करता है (४. ५७, ४२–४६)। 'स एप सुमहाकायो वलेन महता वृतः। आगच्छति महावेगः किंरूपबलपौरुषः ॥ आचक्ष्व मे महाबाहो वीर्यवन्तं निशाचरम् । रावस्य वचः श्रुत्वा प्रत्युवाच विभीषणः ॥ एष सेनापतिस्तस्य प्रहस्तो नाम राक्षसः। लङ्कायां राक्षसेन्द्रस्य त्रिभागवलसंवृतः ॥ वीर्यवानस्त्रविच्छूरः सुप्रख्यातपराक्रमः ॥ ततः प्रहस्तं निर्यान्तं भीमं भीमपराक्रमम् । गर्जन्तं सुमहाकायं राक्षसैरभिसंवृतम् ॥ ददर्श महती सेना वानराणां वलीयसाम् । अभिसंजातघोषाणां प्रहस्तमभिगर्जताम् ॥', (६. ५८, २–६)। रथ पर बैठे हुये प्रहस्त ने वानरों का घोर संहार आरम्भ किया (५. ५८, २४)। नील को अपनी ओर आते देखकर इसने उन पर वाणों की वर्षा आरम्भ कर दी (५. ५८, ३४–३६)। जब नील ने इस पर एक वृक्ष से प्रहार किया तो इसने उन पर और अधिक बाणों की वर्षा आरम्भ की (६. ५८, ३९–४०)। जब नील ने इसके अश्वों का वध करके इसके धनुष तथा रथ को ध्वस्त कर दिया तब इसने हाथ में एक गदा लेकर नील के साथ द्वन्द्व युद्ध आरम्भ किया परन्तु अन्त में नील ने एक पर्वत-शिखर से इसका वध कर दिया (६. ५८, ४१–५५)। यह सुमालिन् और केतुमती का पुत्र था (७. ५, ३८–४०)। सुमालिन् के साथ यह भी रावण का आभिनन्दन करने के लिये गया (७. ११, २–३)। कुछ समय के पश्चात् इसने रावण से कुवेर को पराजित करके पुनः लंका पर अधिकार कर लेने का परामर्श दिया (७. ११, १३–१९)। रावण की आज्ञा के अनुसार इसने लंका में जाकर कुवेर से राक्षसों की सम्पत्ति रावण को लौटा देने के लिये कहा (७. ११, २३–३१)। जब कुवेर लंका छोड़कर कैलास पर्वत पर चले गये तब इसने रावण को इसकी सूचना दी (७. ११, ४६–४८)। कुवेर के विरुद्ध युद्ध में यह भी रावण के साथ गया (७. १४, १–२)। इसने एक सहस्र यक्षों का वध किया (७. १५, ७)। यह राजा अनरण्य से पराजित होकर युद्ध-भूमि से भाग गया (७. १९, १९)। "रावण

के आदेश पर इसने निर्दिष्ट भवन में प्रवेश करके उसके सातवें कक्ष में एक ज्वालामयी मूर्ति देखी जिसने इसे देखकर तीव्र अट्टहास किया । लौटकर इसने रावण को इसकी सूचना दी (७. २३क, ५–८) ।" इसने रावण के संदेश को सूर्य के द्वारपालों तक पहुँचाया (७. २३ख, ७–११) । मान्धाता ने जव इस पर आक्रमण किया तव इसने भी उनपर प्रत्याक्रमण कर दिया (७. २३ग, ३४–३५) । चन्द्रलोक में पहुँच कर जव यह चन्द्रमा की शीतल किरणों से दग्ध होने लगा तव इसने लौटने की इच्छा प्रगट की (७. २३घ, १८–१९) । देवों के विरुद्ध युद्ध में यह भी सुमालिन् के साथ युद्ध भूमि में गया (७. २७, २८) । इसने नर्मदा में स्नान करने के पश्चात् रावण के लिये पुष्प एकत्र किये (७. ३१, ३४–३७) । इसने निदयतापूर्वक शत्रुओं का संहार किया (७. ३२, ३६) । इसने अर्जुन के साथ एक द्वन्द्व युद्ध किया जिसमें यह अर्जुन के गदा-प्रहार से आहत होकर पृथिवी पर गिर पड़ा (७. ३२, ४२–४८) ।

प्रहास, वरुण के एक मंत्री का नाम है जिसने रावण के अनेक वार पूछने पर कहा कि उस समय वरुण व्रह्मलोक में संगीत सुनने के लिये गये हुये हैं (७. २३, ५१–५२) ।

प्रह्लाद, हिरण्यकशिपु के पुत्र, एक दैत्य-प्रमुख का नाम है जिसके अपने पिता के साथ संघर्ष का उल्लेख है (७. २३क, ६८–६९) ।

प्रहेति, रावण के पूर्व लंका में निवास करनेवाले एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जो अत्यन्त धर्मात्मा होने के कारण तपोवन में जाकर तपस्या करने लगा (७. ४, १४–१५) ।

प्राग्वट, गंगा के तट पर स्थित एक नगर का नाम है जिसके निकट भरत ने गंगा को पार किया था (७. ७१, ९–१०) ।

प्राग्ज्योतिष, सुवर्ण से बने हुये एक नगर का नाम है जो बीच समुद्र में वराह पर्वत पर स्थित था । सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये सुषेण को यहाँ भेजा था (४. ४२, २८–२९) ।

प्राजापत्य-पुरुष, महाराज दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ के समय अग्निकुण्ड से प्रगट हुये दिव्य पुरुष का नाम है : इनके प्रगट होने का वर्णन (१. १६, ११–१४) । यह अपने हाथ में खीर से भरा हुआ एक सुवर्ण पात्र लिये हुये थे (१. १६, १५) । अपना परिचय देते हुये इन्होंने उस दिव्य खीर को दशरथ को प्रदान करते हुये उनसे अपनी रानियों को खिलाने के लिये कहा (१. १६, १६. १८–२०) । तदनन्तर ये अन्तर्धान हो गये (१. १६, २४) ।

प्रौष्ठपद, निधियों में से एक का नाम है जो रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये कुवेर के साथ गये थे (७. १५, १७) ।

प्लक्ष, सुग्रीव के एक विश्वासपात्र मंत्री का नाम है जिसने लक्ष्मण का क्रोध शान्त करने के लिये सुग्रीव को अपना वचन पूर्ण करने की प्रेरणा दी (४. ३१, ४२–५१)।

ब

बभ्रु, एक गन्धर्व-प्रमुख का नाम है जो ऋषभ-पर्वत के चन्दन-वन में निवास करता था (४. ४१, ४३–४४)।

बल, एक दैत्य का नाम है जिसका इन्द्र ने अपने वज्र से वध किया था (३. ३०, २८)।

बलि, विरोचन के पुत्र का नाम है, जो इन्द्र-सहित समस्त देवताओं को पराजित करके त्रिलोकी का शासक वन गया (१. २९, ४–५)। "इस असुर-राज ने एक यज्ञ का अनुष्ठान किया। जब यह यज्ञ कर रहा था, उसी समय अग्नि आदि देवताओं ने विष्णु को बताया : 'विरोचन-कुमार वलि एक उत्तम यज्ञ का अनुष्ठान कर रहा है। इस समय जो भी याचक उसके पास उपस्थित होता है उसे वह मनोवाञ्छित वस्तुयें प्रदान करके सन्तुष्ट कर देता है। अतः आप अपनी योगमाया का आश्रय ले देवताओं के हित के लिये वामन रूप धारण कर उस यज्ञ में जाइये और हमारा उत्तम कल्याण-साधन कीजिये।' (१. २९, ६-९)।" "फलस्वरूप विष्णु ने कश्यप और अदिति के यहाँ जन्म लिया और वामन रूप में वलि के पास जाकर तीन पग भूमि की याचना की। इस प्रकार तीन पग से तीनों लोकों पर अधिकार कर विष्णु ने बलि का निग्रह करके इन्द्र को त्रिलोकी का शासक वना दिया (१. २९, १९–२१)।" विष्णु द्वारा इनके वाँधे जाने का उल्लेख (३. ६१, २४)। 'एष वै परमोदारः शूरः सत्यपराक्रमः। वीरो वहुगुणोपेतः पाशहस्त इवान्तकः॥ बालार्क इव तेजस्वी समरेष्वनिवर्तकः। अमर्षी दुर्जयो जेता वलवान्गुणसागरः॥ प्रियंवदः संविभागी गुरुविप्रप्रियः सदा। कालाकाङ्क्षी महासत्त्वः सत्यवाक्सौम्यदर्शनः॥ दक्षः सर्वगुणोपेतः शूरः स्वाध्यायतत्परः। एष गच्छति वात्येष ज्वलते तपते सदा॥ देवैश्च भूतसङ्घैश्च पन्नगैश्च पयत्त्रिभिः। भयं यो नाभिजानाति तेन त्वं योद्धुमिच्छसि॥ वलिना यदि ते योद्धुं रोचते राक्षसेश्वर। प्रविश त्वं महासत्व संग्रामं कुरुमा चिरम्॥', (७. २३क, २२--२७)। इसने रावण का अट्टहास के साथ स्वागत करते हुये उसे अपने गोद में बैठाकर उसके आने का कारण पूछा। (७. २३क, २८--३१)। "रावण के उत्तर देने पर इसने उससे वताया : 'मेरे द्वारपाल के रूप में विष्ण स्थित हैं जिन्होंने पूर्वकाल में अनेक बार पृथिवी को दानवों से रहित किया था।' इस प्रकार विष्णु की प्रशंसा करते हुये इसने रावण से अग्नि के समान दीप्तिमान् एक चक्र उठा कर लाने

के लिये कहा (७. २३क, ३४--५७) ।" "रावण को लज्जा का अनुभव करते हुये देखकर इसने उससे कहा : 'यह चक्र मेरे पितामह हिरण्यकशिपु का कुण्डल था, और अनेक अन्य दानवों के अतिरिक्त उन्हीं हिरण्यकशिपु का भी विष्णु ने वध कर दिया था । वही विष्णु मेरे द्वारपाल हैं (७. २३क, ५८–७२) ।" रावण के पूछने पर इसने वताया कि विष्णु ही त्रैलोक्य के विधाता, सर्वज्ञानी, सुरश्रेष्ठ और सर्वशक्तिमान् हैं (७. २३क, ७८–८६) ।

बर्बर—वसिष्ठ के कहने पर उनकी शवला गाय ने अपने थन से शस्त्रधारी वर्बरों को उत्पन्न किया (१. ५५, २) ।

वाण, विकुक्षि के पुत्र और अनरण्य के पिता का नाम है (१. ७०,२३) ।

वाह्ली, एक देश का नाम है जिस पर राजा इल का शासन था (७. ८७, ३) ।

वाह्लीक, एक देश का नाम है जो सुन्दर अश्वों के लिये प्रसिद्ध था (१. ६, २२) । "केकय जाते समय वसिष्ठ के दूत इस देश से भी होते हुये गये थे । इस देश में वेदविद् ब्राह्मण निवास करते थे (१. ६८, १८) ।" सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने सुषेण से इस देश में भी जाने के लिये कहा (४. ४२, ६) ।

विन्दु, एक सरोवर का नाम है । अपनी जटा में स्थित गङ्गा को शिव ने इसी सरोवर में छोड़ा था । इससे सात नदियाँ निकली हैं (१. ४३, १०–११) ।

वहुदंष्ट्र, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है, जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, १९) ।

वहुपुत्र, एक प्रजापति का नाम है जो संश्रय के वाद हुये थे (३. १४, ७) ।

बुध, सोम के पुत्र का नाम है जिन्हें इला ने एक सरोवर में स्नान करते देखा : ये उदित होते हुये चन्द्रमा के समान सुन्दर थे (७. ८८, ९–१०) । "इला को देखकर ये उस पर अत्यधिक आसक्त हो गये । सरोवर से वाहर निकल कर इन्होंने उसका परिचय पूछा और आश्रम में आकर उसकी सखियों को किंपुरुषी होकर फल-मूल खाते हुये आश्रम के निकट ही निवास करने की आज्ञा दी (७. ८८, १२–२४) ।" जब इला के साथ की किंपुरुषियाँ पर्वत के किनारे चली गईं तो इन्होंने इला से अपना प्रेम व्यक्त किया (७. ८९, ३–४) । इन्होंने एक मास का समय इला के साथ व्यतीत किया (७. ८९, ७–८) । एक मास के वाद जब इल पुनः पुरुष हो गये और अपनी सेना आदि के सम्बन्ध में पूछने लगे तब इन्होंने कहा : 'राजन् ! आपके समस्त सेवक एक भीषण अश्म-वर्षा में मारे गये, और आपने किसी प्रकार वच कर मेरे आश्रम में

शरण ली ।' (७. ८९, १२ -१४) । इन्होंने मधुर अनुरोध करते हुय इला से एक वर्ष तक अपने आश्रम में ही रहने के लिये कहा (७, ८९, १९--२०) । 'बुधस्याक्लिष्टकर्मणः,' (७. ८९, २१) । 'बुधः परमबुद्धिमान महायशाः', (७. ९०, ४) । 'वाक्यज्ञस्तत्त्वदर्शनः', (७. ९०, ६) । पुरूरवा का जन्म होने के पश्चात् इन्होंने इल को पुरुषत्व प्राप्त कराने के उपाय के सम्बन्ध में अपन मित्र, अन्य महर्षियों, से परामर्श किया (७. ९०, ४--७) ।

बृहद्रथ, देवरात के पुत्र और महावीर के पिता का नाम है (१. ७१, ६--७) ।

बृहस्पति ने ब्रह्मा के आदेशानुसार तार नामक वानर-यूथपति को उत्पन्न किया (१. १७, ११) । श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, ११) । श्रीराम के दूत के रूप में हनुमान् के उपस्थित होने पर सीता ने इन्हें नमस्कार किया (५. ३२, १५) । इन्होंने असुरों के साथ युद्ध में मारे गये देवों की चिकित्सा की (६. ५०, २८) ।

ब्रह्मदत्त, महर्षि चूलिन् तथा गन्धर्वी सोमदा के पुत्र का नाम है (१ ३३, १८) । ये काम्पिल्य नामक नगर में निवास करते थे (१. ३३, १९) । इन्होंने कुशनाभ की एक सौ पुत्रियों के साथ विवाह किया (१. ३३, २१--२२) । कुशनाभ ने इन्हें इनकी पत्नियों सहित विदा किया (१. ३३, २५) ।

ब्रह्ममाल, एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज करने के लिये सुग्रीव ने विनत से कहा था (४. ४०, २२) ।

ब्रह्म-राक्षस, (बहु०)—ये लोग यज्ञों मे विघ्न डालते थे (१. ८, १७) ।

ब्रह्मशत्रु, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने आग लगा दी थी (५. ५४, १५) ।

ब्रह्महत्या—जब इन्द्र ने वृत्र का वध कर दिया तो ब्रह्महत्या तत्काल ही उनके पीछे लग गई (७. ८५, १६) । जब इन्द्र ने अश्वमेध-यज्ञ के अनुष्ठान द्वारा अपने को शुद्ध किया तो इसने देवों से अपने निवास का स्थान पूछा (७. ८६, १०) । "देवों के आदेश पर इसने अपने को चार भागों में विभक्त करके कहा : 'मैं अपने एक अंश से वर्षा के चार मास जल से परिपूर्ण नदियों में निवास करूँगी । दूसरे भाग से में सदा और सब समय भूमि पर निवास करूँगी । अपने तृतीय अंश से मैं युवावस्था से सुशोभित गर्वीली स्त्रियों में प्रतिमास तीन रात तक निवास करके उनके दर्प को नष्ट करती हुई रहूँगी । चौथे भाग से मैं उन लोगों पर आक्रमण करूँगी जो झूठ बोलकर किसी को कलंकित न करनेवाले ब्राह्मणों का वध करते हैं (७. ८६, १२–१६) ।"

ब्रह्मा—जब हनुमान् को राक्षसों ने बन्दी बना लिया तो उन्होंने ब्रह्मा की कृपा से अपने को मुक्त कर लिया (१. १, ७६)। 'आजगाम ततो ब्रह्मा लोककर्त्ता स्वयंप्रभुः। चतुर्मुखो महातेजा द्रष्टुं तं मुनिपुंगवम् ॥', (१. २, २३)। इन्होंने एक परम उत्तम आसन पर विराजमान् होकर वाल्मीकि मुनि को भी आसन ग्रहण करने की आज्ञा दी (१. २, २६)। इनकी आज्ञा से वाल्मीकि ने आसन ग्रहण किया (१. २, २७)। जब इन्हें देखकर वाल्मीकि क्रौञ्च-पक्षी की घटना के सम्बन्ध में चिन्ता करने लगे तो इन्होंने उनकी मनःस्थिति को समझ कर उन्हें रामायण की रचना का आदेश दिया (१. २, ३०–३८)। इन्होंने पूर्वकाल में जिस अश्वमेध-यज्ञ का अनुष्ठान किया था उसमें ऋत्विजों को प्रचुर दक्षिणा दी गई थी (१. १४, ४४)। दशरथ के पुत्रेष्टि-यज्ञ में उपस्थित देवों, गन्धर्वों, आदि ने इनकी स्तुति की (१. १५, ४--११)। इन्होंने देवताओं आदि को आश्वासन दिया कि शीघ्र ही एक मानव के हाथ से रावण मारा जायगा (१. १५, १२--१४)। 'येन तुष्टोऽभवद्ब्रह्मा लोककृल्लोकपूर्वजः', (१. १६, ४)। पितामह ब्रह्मा के वरदान से रावण को गर्व हो गया था (१. १६, ६--७)। जब विष्णु ने दशरथ के पुत्र के रूप में जन्म लेना स्वीकार कर लिया तो इन्होंने गन्धर्वियों, अप्सराओं, यक्षिणियों, विद्याधरियों इत्यादि के गर्भ से वानर-पुत्र उत्पन्न करने की देवों को आज्ञा दी (१. १७, १--६)। इन्होंने बताया कि इन्होंने ऋक्षराज जाम्बवान की पहले ही सृष्टि कर दी है (१. १७, ७)। इन्होंने अपने मानसिक संकल्प से कैलास पर्वत पर 'मानस' सरोवर को प्रकट किया (१. २४, ८)। जब महादेव अपनी पत्नी उमा के साथ क्रीड़ा-विहार कर रहे थे तो अन्य देवताओं सहित ये उनके पास गये (१. ३६, ७--८)। देवों ने एक देव सेनापति के लिये इनसे निवेदन किया (१. ३७, १–४)। यद्यपि इन्होंने देवताओं को बताया कि देवी उमा का शाप निष्फल नहीं हो सकता, तथापि देवों को आश्वासन देते हुये उनको बताया कि उमा की बड़ी बहन आकाशगङ्गा से अग्निदेव एक ऐसे पुत्र को जन्म देंगे जो शत्रुओं का दमन करने में समर्थ सेनापति हो सकेगा (१. ३७, ५--८)। यज्ञ के घोड़े की खोज करते हुये जब सगर-पुत्र विविध आयुधों से पृथिवी को खोदने लगे तो देवता इत्यादि हाहाकार करते हुये इनकी शरण में आये (१. ३९, २३--२६)। "देवताओं की बात सुनकर इन्होंने कहा : 'यह समस्त पृथिवी जिन भगवान् वासुदेव की वस्तु है वे ही कपिल मुनि का रूप धारण करके निरन्तर इस पृथिवी को धारण करते हैं। उन्हीं की कोपाग्नि से समस्त सगर-पुत्र जल कर भस्म हो जायेंगे।' (१. ४०. २–४)।" भगीरथ की घोर तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उन्हें

वर दिया (१. ४२, १५–१७)। "भगीरथ को वर देने के पश्चात् इन्होंने उनसे महादेव को प्रसन्न करने के लिये कहा क्योंकि गङ्गा के गिरने के वेग को केवल महादेव ही सहन कर सकते थे। तदनन्तर इन्होंने गङ्गा से भी भगीरथ पर अनुग्रह करने के लिये कहा (१. ४२, २२--२५)।" "जब भगीरथ के प्रयास से गङ्गा के जल से सगर-पुत्रों की भस्म-राशि आप्लावित हो गई तो इन्होंने भगीरथके सम्मुख उस रसातल में ही उपस्थित होकर उनके प्रयासों की प्रशंसा की। इन्होंने भगीरथ को बताया कि उस समय से गङ्गा इस लोक में भागीरथी के नाम से विख्यात होंगी। इन्होंने यह भी बताते हुये कि भगीरथ ने गङ्गा को लाने में सफलता प्राप्त करके वह कार्य किया जिसमें भगीरथ के अन्य पूर्वज असफल हो चुके थे, भगीरथ को अक्षय यश और कीर्ति का वरदान दिया। तदनन्तर इन्होंने भगीरथ से कहा कि वे गङ्गा में स्नान करके अपने पितामहों का तर्पण करें। (१. ४४, ३–१५)।' भगीरथ से इस प्रकार कह कर सर्वलोक पितामह, महायशस्वी देवेश्वर ब्रह्मा अपने लोक लौट गये (१. ४४, १६)। एक सहस्र वर्ष पूरा होने पर इन्होंने तपस्या के धनी विश्वामित्र को दर्शन देकर उन्हें सच्चा राजर्षि कहा (१. ५७, ४–७)। इन्होंने एक सहस्र वर्ष तक तपस्या कर चुके विश्वामित्र से कहा कि वे (विश्वमित्र) अपने कर्मों के प्रभाव से 'ऋषि' हो गये (१. ६३, १–३)। देवताओं के कहने पर इन्होंने विश्वामित्र को 'महर्षि' की उपाधि से विभूषित किया (१. ६३, १७–१९)। विश्वामित्र के पूछने पर इन्होंने बताया कि वे (विश्वामित्र) अभी जितेन्द्रिय नहीं हुये हैं (१. ६३, २२)। इन्होंने विश्वामित्र को ब्रह्मर्षि कहते हुए उन्हें दीर्घायु प्रदान की (१. ६५, १८–१९)। 'अव्यक्त प्रभवो ब्रह्मा शाश्वतो नित्य अव्ययः,' (१. ७०, १९)। मरीचि इनके पुत्र थे (१. ७०, १९)। देवों के कौतूहल का निवारण करने के लिये इन्होंने शिव और विष्णु के बीच वैमनस्य उत्पन्न किया (१. ७५, १४–१६)। श्रीराम और परशुराम के द्वन्द्व युद्ध को देखने के लिए ये भी उपस्थित हुये (१. ७६. ९)। श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा के लिए कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, ८)। 'सर्वलोकप्रभुर्ब्रह्मा भूतकर्ता तथर्षयः,' (२. २५, २५)। इन्होंने अपने पुत्रों, सनकादिकों को वन में जाने की आज्ञा प्रदान की थी (२. ३४, २४)। जब श्रीराम ने तिमिध्वज के पुत्र का वध कर दिया तो इन्होंने राम को अनेक दिव्यास्त्र प्रदान किये (२. ४४, ११)। भरत-सेना के सत्कार के लिए भरद्वाज ने इनकी सेवा करनेवाली देवाङ्गनाओं का आवाहन किया (२. ९१, १८)। इनकी भेजी हुई २०,००० दिव्याङ्गनायें भरद्वाज के आश्रम पर उपस्थित हुईं (२. ९१, ४२)। विराध की तपस्या से प्रसन्न होकर

इन्होंने उसे किसी भी प्रकार के शस्त्र से अवध्य रहने का वरदान दिया (३. ३, ६)। जब महर्षि शरभङ्ग अग्नि में प्रवेश करके ब्रह्मलोक आये तो इन्होंने उनका अभिनन्दन किया (३. ५, ४२–४३)। भरद्वाजाश्रम में श्रीराम ने इनके स्थान को भी देखा (३. १२, १७)। दस सहस्र वर्षों तक तपस्या करने के वाद रावण ने इन्हें अपने मस्तकों की बलि दे दी (३. ३२, १७–१८)। जब रावण ने सीता का केश पकड़ कर खींचा तब ये बोल उठे : 'अब कार्य सिद्ध हो गया !' (३. ५२, १०)। सीता की जीवन-रक्षा की दृष्टि से इन्होंने इन्द्र से सीता को दिव्य हविष्यान्न खिलाने के लिए कहा (३. ५६क, १–७)। कबन्ध की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उसे दीर्घायु होने का वर दिया (३. ७१, ८–९)। पूर्वकाल में इन्होंने ही ऋष्यमूक पर्वत की सृष्टि की थी (३. ७३, ३०)। 'गीतोऽयं ब्रम्हणा श्लोकः सर्वलोकनमस्कृतः,' (४. ३४, ११) इन्होंने इक्षु-सागर के असुरों को बहुत दिनों तक बुभुक्षित रहने का शाप दिया था (४. ४०, ३५)। ये ब्रह्मर्षियों से घिरे हुए उत्तर में सोमगिरि पर निवास करते हैं (४. ४३, ५७)। मयासुर की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उसे शिल्पशास्त्र में अन्यतम होने का वर दिया (४. ५१, १२)। मय की मृत्यु के पश्चात् इन्होंने उसके भवन और उपवन इत्यादि को हेमा को दे दिया (४ ५१ १५)। इन्होंने हनुमान् को किसी भी शस्त्र से अवध्य होने का वरदान दिया (४. ६६, २६)। सागरलङ्घन के पूर्व हनुमान् ने इन्हें नमस्कार किया (५. १, ८)। इन्होंने सुरसा को वर दिया था (५. १, १५९)। इन्होंने सिंहिका का विनाश करने के लिये हनुमान् की सृष्टि की (५. १, १९९)। लंका की निशाचरी देवी को इन्होंने यह वर दिया था कि जिस दिन एक वानर उसे परास्त कर देगा उसी दिन उसे यह समझ लेना होगा कि राक्षसों के विनाश का समय आ गया (५. ३, ४७–४८)। इनका वचन कभी निष्फल नहीं होता (५. ३, ४९)। विश्वकर्मा ने इनके लिए पुष्पक विमान बनाया था किन्तु इन्होंने उसे कृपापूर्वक कुवेर को दे दिया (५. ९, ११–१२)। राम के दूत के रूप में हनुमान् के उपस्थित होने पर सीता ने इन्हें नमस्कार किया (५. ३२, १५)। अश्विनों का मान रखने के लिए इन्होंने द्विविद और मैन्द को अमरत्व का वर दिया था (५. ६०, २–३)। पुञ्जिकस्थला के साथ बलात्कार करने के कारण इन्होंने रावण को शाप दिया (६. १३, १३--१४)। इन्होंने रावण को स्पष्ट रूप से बता दिया कि उसे मनुष्यों से भय प्राप्त होगा (६. ६०, ६–७)। इन्द्र सहित देवों की वात सुनकर जगत के कल्याण के लिए इन्होंने कहा कि कुम्भकर्ण सदैव सोता ही रहेगा, किन्तु रावण की प्रार्थना पर यह निर्णय दिया कि प्रति छः मास के वाद वह (कुम्भकर्ण) एक दिन के लिए

जाग जाया करेगा (६. ६१, १८–२९)। इन्द्रजित् की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उसे शीघ्रगामी अश्व तथा ब्रह्मशिरस् अस्त्र प्रदान किया (६. ८५, १३)। "इन्होंने इन्द्रजित् को वर देते हुए उससे कहा : 'निकुम्भिला नामक वट-वृक्ष के पास पहुँचने तथा हवन-सम्बन्धी कार्य पूर्ण करने के पूर्व ही जो शत्रु तुम्हें मारने के लिये आक्रमण करेगा उसी के हाथ तुम्हारा वध होगा।' (६. ८५, १५–१६)।" देवों की स्तुति से प्रसन्न होकर इन्होंने कहा कि उस दिन से समस्त राक्षस तथा दानव भय से युक्त होकर ही तीनों लोकों में विचरण करेंगे (६. ९४, ३२–३३) 'कर्ता सर्वस्य लोकस्य ब्रह्मा ब्रह्मविदां वरः,' (६. ११७, ३)। सीता की उपेक्षा करने पर श्रीराम के सम्मुख उपस्थित होकर इन्होंने भी उन्हें (राम को) समझाने का प्रयास किया (६. ११७, ३–१०)। राम के पूछने पर इन्होंने उन्हें विष्णु के तथा सीता को लक्ष्मी के साथ समीकृत करते हुए इस बात का स्मरण दिलाया कि उन्होंने रावण-वध के लिए ही मानव रूप ग्रहण किया है (६. ११७, १३–३४)। कुवेर की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उनसे वर माँगने के लिए कहा (७. ३, १३–१४)। कुवेर की प्रार्थना स्वीकार करते हुए इन्होंने उन्हें चौथा लोकपाल बनाया और पुष्पक विमान भी प्रदान किया (७. ३, १६–२३)। जल से प्रकट हुए कमल से उत्पन्न ब्रह्मा ने पूर्वकाल में समुद्र-जल की सृष्टि करके उसकी रक्षा के लिए अनेक प्रकार के जल-जन्तुओं को उत्पन्न किया (७. ४, ९)। सृजित प्राणियों ने जब इनसे अपने कार्य के सम्वन्ध में पूछा तो इन्होंने उन्हें यत्नपूर्वक जल की रक्षा करने के लिये कहा (७. ४, १०–११)। "उन सृजित प्राणियों में से कुछ ने कहा कि वे इस जल की रक्षा करेंगे, और अन्य ने कहा कि वे इसका पूजन (यक्षण) करेंगे। उनकी बात सुनकर इन्होंने कहा कि जिन लोगों ने रक्षा करने की बात कही है वे 'राक्षस', तथा जिन लोगों ने यक्षण की बात कही है वह 'यक्ष' के नाम से विख्यात होंगे (७. ४, १२–१३)।" माल्यवान् आदि से प्रसन्न होकर इन्होंने उन्हें चिरजीवी और शत्रुओं पर विजयी होने का वर दिया (७. ५, १२–१६)। रावण को अपना दसवाँ मस्तक भेंट करने से रोकते हुये इन्होंने उसे वर देने की इच्छा प्रकट की (७. १०, १२–१४)। रावण को अमरत्व का वर देना अस्वीकार किया (७. १०, १७)। रावण को वरदान देते हुये इन्होंने उसके मस्तकों को भी यथास्थान उत्पन्न कर दिया; साथ ही इन्होंने उसे इच्छानुसार रूप धारण करने का भी वर दिया (७. १०, १८–२५)। इन्होंने विभीषण को वर देने की इच्छा प्रकट की (७. १०, २७–२८)। विभीषण को चिरजीवी होने का वर देकर इन्होंने कुम्भकर्ण को भी वर देने की इच्छा प्रकट की

(७. १०, ३३–३५)। जब देवों ने इनसे कुम्भकर्ण को वर न देने की विनती की तो इन्होंने सरस्वती से कुम्भकर्ण की वाणी को प्रभावित करने के लिये कहा (७. १०, ४१–४३)। तदनन्तर इन्होंने कुम्भकर्ण से वर माँगने के लिये कहा (७. १०, ४३–४४)। इन्होंने कुम्भकर्ण को वर दिया (७. १०, ४५)। यम और रावण के युद्ध को देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये (७. २२, १७)। जब यम अपने कालदण्ड से रावण पर प्रहार करने को उद्यत हुये तो इन्होंने सृष्टि के कल्याण की दृष्टि से उन्हें ऐसा करने से रोका (७. २२, ३६–४५)। जब निवातकवचों और रावण का युद्ध सतत् एक वर्ष तक चलता रहा तो इन्होंने दोनों के बीच संधि कराई (७. २३, १०–१३)। रावण को चन्द्र पर प्रहार करने से रोकते हुये इन्होंने उसे मृत्यु पर विजय प्राप्त करने का एक मन्त्र बताया (७. २३घ, २२–५०)। देवों सहित इन्होंने रावण के पास जाकर उससे इन्द्र को छोड़ देने का निवेदन किया (७. ३०, १–७)। इन्द्रजित् को अमरत्व का वर देना अस्वीकार कर दिया (७. ३०, ९–१०)। "जब ब्रह्मा के अनुरोध पर इन्द्रजित् ने इन्द्र को मुक्त कर दिया तो उस समय उनका तेज नष्ट हो गया। ब्रह्मा ने इन्द्र को बताया कि अहल्या के साथ बलात्कार ही उनके उस पराभव का कारण है। तदनन्तर इन्होंने इन्द्र को वैष्णव यज्ञ करके स्वर्ग लौटने का परामर्श दिया (७. ३०, १८–४८)।" देवों के निवेदन पर इन्होंने वायु के कोप का कारण बताया और उसके बाद वायु को प्रसन्न करने के लिये गये (७. ३५, ५७–६५)। वेदवेत्ता ब्रह्मा ने अपने लम्बे फैले हुये, और आभरण-भूषित हाथ से वायु-देवता को उठा कर खड़ा किया तथा उनके उस शिशु पर भी हाथ फेरा (७. ३६, ३)। वायु देवता को प्रसन्न करने के लिये इन्होंने वहाँ एकत्र देवों से वायु-पुत्र को वर देने के लिये कहा (७. ३६, ७–९)। इन्होंने वायु के बालक को अस्त्र-शस्त्रों से अवध्य तथा चिरजीवी होने का वर दिया (७. ३६, १९–२०)। वायु-पुत्र हनुमान् को अनेक प्रकार का वर दे कर ये अपने लोक चले गये (७. ३६, २१–२४)। इनका भवन मेरु-पर्वत के केन्द्रीय शिखर पर स्थित था (७. ३७क, ७–८)। योग-साधना करते समय जब इन्होंने अपने नेत्रों से अंगों पर गिरे अश्रुबिन्दु को मला तो उससे एक वानर की उत्पत्ति हुई (७. ३७क, ९–१०)। इन्होंने उस वानर को निकट के ही पर्वतों पर फल-मूल खाकर निवास करने के लिये कहा (७. ३७क, ११–१३)। ऋक्षराट् तथा उनके पुत्रों का अभिनन्दन करने के बाद इन्होंने उन्हें किष्किन्धा में रहकर वानरों पर शासन करने के लिये कहा (७. ३७क, ४४–५२)। जब निमि के शाप से देहहीन हुये वसिष्ठ ने इनसे देह के लिये पुनः प्रार्थना की तो इन्होंने इसके

लिये उनसे मित्र और वरुण के छोड़े हुये तेज में प्रविष्ट होने के लिये कहा (७. ५६, ९–१०)। जब लवणासुर का वध करने के लिये शत्रुघ्न ने अमोघ बाण का संधान किया तो इन्होंने भयभीत देवताओं आदि को उस दिव्य बाण का इतिहास बताते हुये उनके भय का निवारण किया (७. ६९, २२–२९)। "श्वेत के पूछने पर इन्होंने उनसे कहा : 'तुम मर्त्यलोक में स्थित अपने ही शरीर का सुस्वादु मांस प्रतिदिन खाया करो।...जब दुर्धर्ष महर्षि अगस्त्य तुम्हारे वन में पधारेंगे तब तुम इस कष्ट से मुक्त हो जाओगे।' (७. ७८, १३–१८)।" सीता के शपथ-ग्रहण को देखने के लिये ये भी श्रीराम की सभा में उपस्थित हुये (७. ९७, ७)। सीता के रसातल में प्रवेश कर जाने पर इन्होंने राम को सान्त्वना देते हुये भावी जीवन के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने के लिये उन्हें रामायण के उत्तरकाण्ड के श्रवण का परामर्श दिया (७. ९८, ११–२३)। जब शरीर-त्याग के लिये श्रीराम सरयू के निकट आये तो इन्होंने करोड़ों दिव्य विमानों सहित उनका स्वागत किया (७. ११०, ३–४)। इन्होंने राम और उनके भ्राताओं का स्वागत करते हुये उन्हें विष्णु-तेज में सम्मिलित होने के लिये आमन्त्रित किया (७. ११०, ८–११)। विष्णु के अनुरोध पर इन्होंने उनके अनुचरों को 'संतानक' नामक लोक में जाने का आशीर्वाद दिया (७. ११०, १८–२०)। इस प्रकार, वहाँ आये सब प्राणियों को संतानक लोक में स्थान देकर ब्रह्मा देवों-सहित अपने लोक में चले गये (७. ११०, २८)।

ब्राह्मण—"शत्रुघ्न को मथुरा भेजकर भगवान् राम जब भरत और लक्ष्मण के साथ राज्य का पालन कर रहे थे तो कुछ दिनों के पश्चात् एक वृद्ध ब्राह्मण, जो उसी जनपद का निवासी था, अपने मृत बालक का शव लेकर राजद्वार पर आया और राजा को दोषी बताकर विलाप करने लगा। उसने कहा कि उसने कभी भी झूठ नहीं बोला, कभी किसी की हिंसा नहीं की, और न कभी किसी प्राणी को कष्ट पहुँचाया, अतः उसके पुत्र की मृत्यु राजा के ही किसी दुष्कर्म के कारण हुई है (७. ७३, २–१९)।"

भ

भग—वनवास के समय श्रीराम की रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका आवाहन किया था (२. २५, ८)। श्रीराम ने अगस्त्य के आश्रम पर इनके स्थान को भी देखा था (३. १२, १८)।

भगीरथ, राजा दिलीप के सुधार्मिक पुत्र का नाम है (१. ४२, ७; ७०, ३८)। इनके पिता ने इन्हें राजा बनाया (१. ४२, १०)। ये एक धर्मपरायण राजर्षि थे (१. ४२, ११)। गंगा को भूतल पर लाने तथा पुत्र-प्राप्ति के लिये इन्होंने गोकर्ण नामक तीर्थ पर दीर्घकाल तक तपस्या की

(१. ४२, ११–१३)। "ये दोनों भुजायें ऊपर उठाकर पञ्चाग्नि का सेवन करते और इन्द्रियों को वश में रखते हुये एक-एक मास पर आहार ग्रहण करते थे। इस प्रकार तपस्या करते हुये इनके एक सहस्र वर्ष व्यतीत हो गये (१. ४२, १३–१५)।" इनकी तपस्या से इन पर ब्रह्मा अत्यन्त प्रसन्न हुये और इनके सम्मुख उपस्थित होकर इनसे वर माँगने के लिये कहा (१. ४२, १६)। इन्होंने ब्रह्मा से यह वर माँगा कि सगर-पुत्रों की भस्मराशि को इन्हीं के हाथ से गंगा का जल प्राप्त हो और इन्हें एक सन्तान भी मिले जिससे इनकी कुल-परम्परा नष्ट न हो (१. ४२, १८–२१)। ब्रह्मा ने इन्हें मनोवांछित वर देते हुये, गंगा के वेग को सहन करने में एकमात्र समर्थ शंकर को प्रसन्न करने का परामर्श दिया (१. ४२, २२–२५)। तदनन्तर ब्रह्मा ने गंगा से इनपर अनुग्रह करने के लिये कहा (१. ४२, २६)। ब्रह्मा के चले आने पर इन्होंने पृथिवी पर केवल अँगूठे के अग्रभाग को टिका कर खड़े हुये एक वर्ष तक भगवान् शंकर की उपासना की (१. ४३, १)। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर शंकर ने गंगा को अपने मस्तक पर धारण करने का आश्वासन दिया (१. ४३, ३)। गंगा को शिव के जटाजूट में ही उलझा हुआ देखकर इन्होंने पुनः घोर तपस्या की जिससे प्रसन्न होकर शिव ने अन्ततः गंगा को बिन्दु-सरोवर में छोड़ दिया (१. ४३, ७–११)। उस समय गंगा की सात धाराओं में से एक धारा भगीरथ के दिव्य रथ के पीछे-पीछे चलने लगी (१. ४३, १४–१५)। जिस समय गंगा इनके रथ का अनुसरण कर रही थीं तब ऋषि, राक्षस, गन्धर्व, किन्नर, देवता, दैत्य, दानव और अप्सरा इत्यादि भी गंगा के साथ-साथ चल रहे थे (१. ४३, ३१–३३)। जब जह्नु ने गंगा को अपने कान के छिद्रों द्वारा प्रकट किया तो वे पुनः इनके रथ का अनुसरण करती हुई चलने लगीं (१. ४३, ३९)। ये गंगा को उस रसातल प्रदेश में ले गये जहाँ सगर-पुत्रों की भस्मराशि पड़ी हुई थी (१. ४३, ४०–४१)। "इस प्रकार गंगा को साथ लेकर इन्होंने समुद्र तक जाकर रसातल में प्रवेश किया जहाँ इनके पूर्वजों की भस्मराशि पड़ी हुई थी। जब वह भस्मराशि गंगा के जल से आप्लावित हो गई तब ब्रह्मा ने वहाँ उपस्थित होकर इनकी उस कार्य में सफलता प्राप्त कर लेने के लिये प्रशंसा की जिसमें इनके पूर्वज असफल हो चुके थे (१. ४४, ३–१५)।" 'तारिता नरशार्दूल दिवं याताश्च देववत्', (१. ४४, ३)। पितामहानां सर्वेषां त्वमत्र मनुजाधिप । कुरुष्व सलिलं राजन्प्रतिज्ञामपवर्जय ॥', (१. ४४, ७)। 'पुनर्न शकिता नेतुं गंगा प्रार्थयतानघ', (१. ४४, ११)। 'सा त्वया समतिक्रान्ता प्रतिज्ञा पुरुषर्षभ', (१. ४४, १२)। 'भगीरथस्तु राजर्षिः कृत्वा सलिलमुत्तमम्। यथाक्रमं यथान्यायं साग-

राणां महायशाः ॥', (१. ४४, १७) ! ब्रह्मा के देवलोक लौट जाने पर (१. ४४, १६) इन्होंने गंगा के पवित्र जल से क्रमशः सभी सगर-पुत्रों का विधिवत् तर्पण किया (१. ४४, १७) । इस प्रकार सफल मनोरथ होकर ये अपने राज्य को लौट गये और राज्य का शासन करने लगे (१. ४४, १८) । इनके पुत्र का नाम ककुत्स्थ था (१. ७०, ३९) ।

१. भद्र, उत्तर दिशा में स्थित हिम के समान श्वेत एक दिग्गज का नाम है जो अपने शरीर से इस पृथिवी को धारण किये था। सगर के साठ हजार पुत्रों ने इसकी प्रदक्षिणा की (१. ४०, २२–२३) ।

२. भद्र, एक हास्यकार का नाम है जो राम का मनोरंजन करने के लिये उनके साथ रहता था (७. ४३, २) । राम के पूछने पर इसने बताया कि पुरवासी मुख्यतः रावण के विनाश और राम की विजय की ही विशेष रूप से चर्चा करते हैं (७. ४३, ७–८) । राम के बहुत आग्रह करने पर इसने बताया कि नगर के लोग रावण द्वारा अपहृत होने के बाद भी सीता को पुनः ग्रहण कर लेने को बहुत अच्छा नहीं मान रहे हैं (७. ४३, १२–२०) ।

भद्रमदा, क्रोधवशा और कश्यप की एक पुत्री का नाम है (३. १४, २१) । यह इरावती की माता थी (३. १४, २४) ।

भय, यम की बहन का नाम है जिसका हेती से विवाह हुआ था। इसने विद्युतकेश नामक पुत्र उत्पन्न किया (७. ४, १६–१७) ।

भरुण्ड, एक वन का नाम है। केकय से लौटते समय भरत इससे होकर आये थे (२. ७१, ५) ।

१. भरत, ध्रुवसन्धि के पुत्र और असित के पिता का नाम है (१. ७०, २६) ।

२. भरत, उत्तर के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने शतबल को भेजा था (२. ४३, ११) ।

३. भरत, कैकेयी के गर्भ से उत्पन्न दशरथ के पुत्र का नाम है। कैकेयी ने इनके राज्याभिषेक तथा राम के वनवास का आग्रह किया (१. १, २२) । दशरथ की मृत्यु के पश्चात् वसिष्ठ आदि ब्राह्मणों ने इन्हें राजा बनाना चाहा परन्तु ये श्रीराम के अधिकार का अपहरण नहीं करना चाहते थे अतः वन में जाकर इन्होंने राम को लौटाने का प्रयास किया (१. १, ३३–३६) । जब राम ने पुनः अयोध्या लौटना अस्वीकार कर दिया तो ये उनकी चरण-पादुका लेकर लौट आये और नन्दिग्राम में निवास करने लगे (१. १, ३६–३९) । हनुमान् इनके पास श्रीराम का समाचार लाये (१. १, ८७) । राम के वनवास के समय इनके वन में जाकर राम से मिलने की घटना का वाल्मीकि

ने पूर्वदर्शन किया (१. ३, १६)। इनके द्वारा राम की पादुकाओं के अभिषेक तथा नन्दिग्राम में निवास का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन किया (१. ३, १७)। ये कैकेयी के गर्भ से उत्पन्न हुये : 'भरतो नाम कैकेय्यां जज्ञे सत्यपराक्रमः। साक्षाद्विष्णोश्चतुर्भागः सर्वैः समुदितो गुणैः ॥', (१. १८, १२)। इनका जन्म पुष्य नक्षत्र तथा मीन लग्न में हुआ और ये सदैव प्रसन्न रहते थे (१. १८, १४)। दशरथ ने इनका नामकरण किया (१. १८, २१)। शत्रुघ्न को भरत प्राणों से भी अधिक प्रिय थे (१. १८, ३३)। विश्वामित्र की सम्मति (१. ७२, १–८) के अनुसार जनक ने कुशध्वज की कन्या का भरत के साथ पाणिग्रहण कराने की अनुमति दी (१. ७२, ९–१२)। ये रूप और यौवन से सम्पन्न, लोकपालों के समान तेजस्वी तथा देवताओं के तुल्य पराक्रमी थे (१. ७२, ७)। इनके सगे मामा, केकय राजकुमार वीर युधाजित् , इन्हें देखने अयोध्या आये (१. ७३, १–५)। इनका माण्डवी के साथ विवाह हुआ (१. ७३, २९)। विवाह के पश्चात् अयोध्या लौटकर इन्होंने जनता का स्वागत ग्रहण किया (१. ७७, ६–९)। विवाहित जीवन का आनन्द प्राप्त करते हुये ये अपने पिता दशरथ की सेवा करने लगे (१. ७७, १४–१५)। दशरथ ने भरत को अपने मामा युधाजित् के साथ केकय जाने की आज्ञा दी (१. ७७, १६–१८)। दशरथ, श्रीराम, तथा अपनी माताओं से पूछकर, ये शत्रुघ्न के साथ वहाँ से चल दिये (१. ७७, १९–२०)। इनके मामा इनको पुत्र से भी अधिक स्नेह तथा लाड़-प्यार से रखते और इनकी समस्त इच्छाओं की पूर्त्ति करते थे, किन्तु इन्हें अपने वृद्ध पिता दशरथ की सदैव स्मृति बनी रहती थी (२. १, २–३)। राजा दशरथ भी महेन्द्र के समान पराक्रमी अपने पुत्र भरत का सदैव स्मरण किया करते थे (२. १, ४)। 'कामं खलु सतां वृत्ते भ्राता ते भरतः स्थितः। ज्येष्ठानुवर्ती धर्मात्मा सानुक्रोशो जितेन्द्रियः ॥', (२. ४, २६)। दशरथ श्रीराम का राज्याभिषेक भरत की अनुपस्थिति में ही कर देना चाहते थे (२. ४, २५–२७)। दशरथ के द्वितीय पुत्र होने के कारण ये श्रीराम के बाद ही राज्य के अधिकारी हो सकते थे (२. ८, ७)। 'ननु ते राघवस्तुल्यो भरतेन महात्मना', (२, १२, २१)। 'न कथंचिदृते रामाद्भरतो राज्यमावसेत्। रामादपि हि तं मन्ये धर्मतो बलवत्तरम् ॥', (२. १२, ६२)। 'भरतश्चापि धर्मात्मा सर्वभूतप्रियंवदः ॥ भवतीमनुवर्तेत स हि धर्मरतः सदा ॥', (२. २४, २२)। 'पितृवंशचरित्रज्ञः', (२. ३७, ३१)। 'स हि कल्याणचारित्रः कैकेय्यानन्दवर्धनः', (२. ४५, ७)। 'ज्ञानवृद्धो वयोबालो मृदुवीर्यगुणान्वितः। अनुरूपः स वो भर्ता भविष्यति भयावह ॥', (२. ४५, ८)। 'स हि राजगुणैर्युक्तो युवराजः समीक्षितः', (२. ४५, ९)। 'भरतं खलु धर्मात्मा', (२. ४६, ७)।

राम के वनवास पर विलाप करती हुई अयोध्या की स्त्रियों द्वारा इनका वर्णन (२. ४८, २८) । राम ने सुमन्त्र को लौटाते हुये भरत के लिये संदेश भेजा (२. ५२, ३४–३६) । श्रीराम ने इनके सुखी जीवन का वर्णन किया (२. ५३, ११–१२) । दशरथ की उपस्थिति में सुमन्त्र ने भरत के प्रति श्रीराम का संदेश सुनाया (२. ५८, २१–२४) । 'वक्तव्यश्च महाबाहुरिक्ष्वाकुकुलनन्दनः । पितरं यौवराज्यस्थो राज्यस्थमनुपालय ॥,' (२. ५८, २२) । दशरथ की मृत्यु के समय ये केकय देश में थे (२. ६७, ७) । इनको केकय से अयोध्या लाने के लिये दूत भेजे गये (२. ६८, ३) । जिस रात दूतों ने केकय नगर में प्रवेश किया उसी रात इन्होंने एक अप्रिय स्वप्न देखा (२. ६९, १) । अप्रिय स्वप्न को देखकर ये मन ही मन अत्यन्त संतप्त हुये (२. ६९, २) । सुहृदों द्वारा इनकी अप्रसन्नता का कारण पूछ जाने पर इन्होंने अपने दुःस्वप्न का वर्णन किया (२. ६९, ६–२२) । दूत केकय देश में भरत से जा मिले, और भरत ने उनका स्वागत किया (२. ७०, २) । "भरत ने दूतों द्वारा लाई गई उपहार की वस्तुयें अपने मामा और नाना के लिये अर्पित कर दीं । तत्पश्चात् इच्छानुसार वस्तुयें देकर दूतों का सत्कार करने के अनन्तर उनसे दशरथ, श्रीराम, लक्ष्मण, कौसल्या. सुमित्रा और कैकेयी का कुशल-समाचार पूछा (२. ७०, ६–१०) ।" इन्होंने दूतों के समक्ष केकयराज से अयोध्या चलने की आज्ञा माँगने के प्रस्ताव को रक्खा (२. ७०, १३) । इन्होंने केकयराज से अयोध्या जाने की अनुमति माँगी (२. ७०, १४–१५) । जाने की शीघ्रता के कारण इन्होंने अपने नाना, केकयराज, के प्रदान किये हुये धन का अभिनन्दन नहीं किया (२. ७०, २४) । दूतों के आगमन तथा दुःस्वप्न देखने के कारण भरत अत्यधिक चिन्तित हो रहे थे (२. ७०, २५) । "अपने आवासस्थान का परित्याग करके भरत राजमार्ग पर गये । तदनन्तर नाना, नानी, मामा युधाजित् और मामी से बिदा लेकर शत्रुघ्न सहित रथ पर सवार हो अयोध्या के लिये प्रस्थित हुये । सेवकों ने भी इनका अनुसरण किया (२. ७०, २६–३०) ।" राजगृह से अयोध्या तक की इनकी यात्रा का वर्णन किया गया है (२. ७१, १–१८) । अयोध्या नगरी को उदास देखकर ये अत्यन्त मर्माहत हुये (२. ७१, १९–३१) । इन्होंने वैजयन्त-द्वार से पुरी में प्रवेश किया जहाँ द्वारपालों ने इनका स्वागत किया (२. ७१, ३२–३३) । नगर को उदास देखकर ये अत्यन्त उद्विग्न हो उठे (२. ७१, ३४–४३) । इन्होंने राजभवन में प्रवेश किया (२. ७१, ४४) । 'राजप्रासाद के उदास और दुःखी स्वरूप को देखकर ये अत्यन्त शोकग्रस्त हो उठे (२. ७१, ४५–४६) । पिता को उनके भवन में न देखकर ये अपनी माता के कक्ष में गये (२. ७१, १) । इन्होंने अपनी माता के शुभ चरणों में प्रणाम किया (२. ७२,

३)। इनकी माता ने इन्हें छाती से लगा लिया और इनका कुशल समाचार पूछा (२. ७२, ४-६)। 'भरत···राजीवलोचनः', (२. ७२, ७)। "कैकेयी के पूछने पर इन्होंने बताया कि नाना के घर से अयोध्या पहुँचने में इन्हें सात रात्रियाँ मार्ग में व्यतीत करनी पड़ीं। इन्होंने यह भी बताया कि मार्ग में दूतों के जल्दी चलने के आग्रह के कारण इन्होंने अपने दल को पीछे ही छोड़ दिया। तदनन्तर इन्होंने पिता के सम्बन्ध में पूछा (२. ७२, ८-१३)।" 'तच्छ्रुत्वा भरतो वाक्यं धर्माभिजनवाञ्छुचिः', (२. ७२, १६)। 'महाबाहुः', (२. ७२, १७)। 'देवसंकाशः', (२. ७२, २२)। ये दशरथ की मृत्यु का समाचार सुनकर विलाप करते हुये भूमि पर गिर पड़े (२. ७२, १६-२२)। मतवाले हाथी के समान पुष्ट तथा चन्द्रमा या सूर्य के समान तेजस्वी अपने इस पुत्र को भूमि पर पड़ा देखकर कैकेयी ने उठाया (२. ७२, २३)। "इन्होंने पूछा कि दशरथ की मृत्यु कैसे हुई ? श्रीराम कहाँ हैं ? और दशरथ के अन्तिम शव्द क्या थे ? (२. ७२, २६-३५)।" इन्होंने राम आदि के सम्वन्ध में पुनः पूछा (२, ७२, ३९-४०)। इन्होंने कैकेयी के वचन को सुनकर पुनः राम आदि के सम्बन्ध में पूछा (२. ७२, ४३-४५)। "दशरथ की मृत्यु और श्रीराम के वनवास के लिये कैकेयी को दोषी बताते हुये इन्होंने उसे फटकारा। तदनन्तर इन्होंने वन में जाकर श्रीराम को लौटाने तथा सिहासन पर बैठाने का निश्चय किया (२. ७३, २-२७)।" इस प्रकार कह कर ये पुनः ज़ोर-ज़ोर से कैकेयी की फटकारने लगे (२. ७३, २८)। "इन्होंने अत्यन्त कटु शब्दों में कैकेयी को धिक्कारते हुये बताया कि उसने अपनी कुटिलता के कारण किस प्रकार माता कौसल्या को दुखी किया। तदनन्तर इन्होंने श्रीराम को राजसिंहासन पर बैठाकर स्वयं वन चले जाने का निश्चय किया जिससे कैकेयी के पाप का प्रायश्चित्त हो सके (२. ७४, २-३४)।" इस प्रकार कहते हुये ये क्रोध से मूर्च्छित हो गये (२. ७४, ३५-३६)। "जब इन्हें पुनः होश आया तो अपनी माता की ओर देखते हुये उसकी निन्दा की और मन्त्रियों से कहा : 'मुझे राज्य नहीं चाहिये। महात्मा श्रीराम के वनवास और सीता तथा लक्ष्मण के निर्वासन का भी मुझे ज्ञान नहीं है कि वह कब और कैसे हुआ।' (२. ७५, १-३)।" इस प्रकार कह कर ये शत्रुघ्न के साथ कौसल्या के भवन में गये, जहाँ उन्हें अचेत देख कर उनकी गोद में लिपट कर फूट-फूट कर रोने लगे (२. ७५, ७-९)। कौसल्या का शोकपूर्ण वचन सुनकर इन्होंने विविध प्रकार से शपथ खाते हुये अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करने का प्रयास किया (२. ७५, १७-५८)। इस प्रकार अपने को शपथपूर्वक निर्दोष सिद्ध करते हुये ये कौसल्या के चरणों में अचेत होकर गिर

पड़े, और सारी रात उसी प्रकार शोक करते रहे (२. ७५, ६३–६४)। वसिष्ठ के कहने पर इन्होंने दशरथ के दाह-संस्कार की व्यवस्था करने की आज्ञा दी (२. ७६, ३)। दशरथ के शव को देखकर ये अत्यधिक विलाप करने लगे (२. ७६, ५–९)। वसिष्ठ के कहने पर ये कुछ शान्त हुये (२. ७६, १२)। दशरथ की रानियों सहित इन्होंने दशरथ को जलाञ्जलि दी (२. ७६, २३)। दशाह व्यतीत हो जाने पर इन्होंने ग्यारहवें दिन आत्मशुद्धि के लिये स्नान और श्राद्ध तथा बारहवें दिन अन्य श्राद्ध सम्पन्न करके ब्राह्मणों को प्रचुर दान दिया (२. ७७, १–२)। तेरहवें दिन जब ये पिता के चितास्थान पर आये तो फूट-फूट कर रोने लगे और भूमि पर गिर पड़े (२. ७७, ४–९)। इनके मन्त्रियों ने इन्हें उठाया (२. ७७, ९–१०)। वसिष्ठ ने इन्हें सान्त्वना दी (२. ७७, २०–२३)। मन्त्रियों के आदेश पर इन्होंने अन्य क्रियायें सम्पन्न कीं (२. ७७, २५–२६)। शत्रुघ्न का कठोर वचन सुनकर भयभीत कैकेयी इनकी शरण में आई (२. ७८, २०)। इन्होंने मन्थरा को और अधिक यातना देने से शत्रुघ्न को रोका (२. ७८, २१–२३)। "दशरथ की मृत्यु के चौदहवें दिन जब राजकर्मचारियों ने इनसे राज्यसिंहासन ग्रहण करने का निवेदन किया तब इन्होंने विनम्रतापूर्वक इस प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुये कहा कि राज्य के वास्तविक अधिकारी श्रीराम ही हैं। इन्होंने वन में जाकर श्रीराम को राजा बनाने तथा उन्हें लौटा कर अयोध्या लाने का निर्णय करते हुये सेवकों और शिल्पियों से एतदर्थ मार्ग ठीक करने के लिये कहा (२. ७९, ६–१३)।" "उस दिन रात्रि के थोड़ा शेष रहने पर सूत और मागधों ने भरत को जगाने के लिये स्तवन आरम्भ किया। इन ध्वनियों को सुनकर भरत जाग गये और 'मैं राजा नहीं हूँ, अतः इनको बन्द करो', कह कर पुनः विलाप करने लगे (२. ८१, १–७)।" वसिष्ठ के कहने पर सभाभवन में ब्राह्मण, क्षत्रिय, सेनापति, अन्य राजकुमार आदि एकत्र हुये, और इन लोगों ने वहाँ उपस्थित होते हुये भरत का दशरथ की ही भाँति अभिनन्दन किया (२. ८१, १३–१५)। उस समय वह सभा दशरथ-पुत्र भरत से सुशोभित होकर वैसे ही शोभित होने लगी जैसे पूर्व समय में राजा दशरथ की उपस्थिति पर शोभित होती थी (२. ८१, १६)। 'तामार्यगणसंपूर्णां भरतः प्रग्राहां सभाम्। ददर्श बुद्धिसम्पन्नः पूर्णचन्द्रां निशामिव ॥', (२. ८२, १)। "वसिष्ठ द्वारा राज्यसिंहासन-ग्रहण के आग्रह पर इन्होंने उनसे कहा कि राज्य-सिंहासन पर श्रीराम का ही वैध अधिकार है। तदनन्तर अपनी माता के कुकर्म का प्रायश्चित्त करने के लिये इन्होंने वन में जाकर श्रीराम को लौटाने की इच्छा व्यक्त की (२. ८२, ९–१६)।" "इन्होंने

यह भी कहा कि श्रीराम को लौटाने में असफल होने पर ये स्वयं वन में रहेंगे। इस कार्य के लिये इन्होंने तत्काल प्रस्थान करने का निश्चय किया (२. ८२, १८–२०)।" इस प्रकार निश्चय करके इन्होंने सुमन्त्र को सेना आदि तैयार करने के लिये कहा (२. ८२, २१–२२)। इन्होंने अपना रथ लाने के लिये सुमन्त्र से कहा (२. ८२, २७)। इनकी आज्ञा से सुमन्त्र रथ लाये (२, ८२, २८)। तब सुदृढ़, सत्य-पराक्रमी, सत्यपरायण, और प्रतापी भरत ने वन में गये हुये अपने यशस्वी भ्राता श्रीराम को लौटा लाने के लिये यात्रा के उद्देश्य से सुमन्त्र को सेना तैयार कर दूसरे दिन ही कूच करने का आदेश दिया (२. ८२, २९–३०)। दूसरे दिन प्रातःकाल ये रथ पर आरूढ़ होकर दल-बल सहित वन के लिये प्रस्थित हुये (२. ८३, १–५)। गङ्गाजल से अपने पिता का तर्पण करने के उद्देश्य से इन्होंने शृङ्गवेरपुर में अपनी यात्रा भंग की (२. ८३, १९–२६)। सुमन्त्र के कहने पर इन्होंने गुह को बुलवाया (२. ८४, १४)। गुह के इनके स्वागत सत्कार करने के आग्रह को सुनकर इन्होंने उसे धन्यवाद दिया और उससे भरद्वाज के आश्रम का पता पूछा (२. ८५, १–४)। 'तमेवमभिभाषन्तमाकाश इव निर्मलः । भरतः श्लक्ष्णया वाचा गुहं वचनमब्रवीत् ॥', (२. ८५, ८)। गुह के पूछने पर इन्होंने बताया कि ये श्रीराम को अपने पिता के समान मानते हैं, और उन्हें लौटाने के लिये ही उनके पास वन में जा रहे हैं (२. ८५, ९–१०)। इन्होंने गुह की अत्यधिक प्रशंसा की (२. ८५, १२–१३)। रात्रि के समय इन्होंने शत्रुघ्न के साथ ही शयन किया (२. ८५, १४–१५)। शोक के कारण इन्हें रात भर नींद नहीं आई (२. ८५. १६–२१)। 'गुहेन सार्धं भरतः समागतो महानुभावः सजनः समाहितः । सुदुर्मनास्तं भरतं तदा पुनः शनैः समाश्वासयदग्रजं प्रति ॥', (२. ८५, २२)। 'भरतायाप्रमेयाय', (२. ८६, १)। गुह का श्रीराम के जटाधारण आदि से सम्बन्ध रखनेवाला वचन सुनकर ये चिन्तामग्न हो गये और श्रीराम के सम्बन्ध में ही चिन्तन करने लगे (२. ८७, १)। 'सुकुमारो महासत्त्वः सिंहस्कन्धो महाभुजः । पुण्डरीकविशालाक्षस्तरुणः प्रियदर्शनः ॥', (२. ८७, २)। गुह की बात सुनकर पहले तो इन्होंने धैर्य धारण करने का प्रयास किया किन्तु फिर मूर्च्छित होकर गिर पड़े (२. ८७, ३)। चेतना लौटने पर इन्होंने कौसल्या को सान्त्वना दी और गुह से श्रीराम की शय्या तथा भोजनादि के सम्बन्ध में पूछा (२. ८७, १२–१३)। गुह से राम का समाचार सुन कर इन्होंने इङ्गुदी-वृक्ष के नीचे उस कुश समूह को देखा जिस पर श्रीराम ने रात्रि के समय शयन किया था, और उसे अपनी माताओं को भी दिखाया (२. ८८, १–२)। "श्रीराम-सीता के वन के कष्टों की कल्पना करके इन्होंने

घोर विलाप करते हुये लक्ष्मण की भक्ति की सराहना की जो उस परिस्थिति में भी राम के साथ थे। इन्होंने कहा कि उस समय, जब सब लोग अयोध्या से दूर हैं, अयोध्यापुरी श्रीराम के बाहूबल से ही रक्षित है। तदनन्तर इन्होंने प्रतिज्ञा करते हुये कहा : 'आज से मैं भी पृथिवी पर ही शयन, फल-मूल का भोजन, और वल्कल तथा जटा धारण करूँगा। वनवास के जितने दिन शेष हैं उतने दिन अब श्रीराम के स्थान पर मैं वन में रहूँगा और श्रीराम अयोध्या का पालन करेंगे। मैं श्रीराम के चरणों पर मस्तक रखकर उन्हें मनाने की चेष्टा करूँगा। यदि इस प्रकार आग्रह करने पर भी श्रीराम लौटने के लिये प्रस्तुत न हुये तो मैं भी दीर्घकाल तक वन में ही निवास करूँगा।' (२. ८८, ३–३०)।" शृङ्गवेरपुर में गङ्गा के तट पर एक रात्रि व्यतीत करके इन्होंने गङ्गा पार कराने के लिये शत्रुघ्न से गुह को बुलाने के लिये कहा (२. ८९, १–२)। गुह के कुशल समाचार पूछने पर इन्होंने बताया कि रात को इन्हें भली प्रकार निद्रा आई, और इसके बाद गङ्गा-पार उतारने की व्यवस्था करने के लिये गुह से निवेदन किया (२, ८९, ६–७) । इन्होंने स्वस्तिक नामवाली गुह की नौका द्वारा गङ्गा को पार किया (२. ८९, १२) समस्त सेना के साथ गङ्गा को पार करके ये प्रयाग-वन में पहुँचे जहाँ अपनी सेना को विश्राम करने का आदेश देकर ऋत्विजों तथा राजसभा के सदस्यों के साथ महर्षि भरद्वाज के आश्रम पर गये (२. ८९, २०–२२)। भरद्वाज-आश्रम के निकट पहुँच कर इन्होंने केवल दो वस्त्र धारण किया और पुरोहितों को आगे कर के पैदल ही मुनि के आश्रम पर गये (२. ९०, १–२)। आश्रम के दृष्टिगत होने पर इन्होंने मन्त्रियों को भी पीछे छोड़ दिया और केवल पुरोहितों के साथ ही आगे गये (२. ९०, ३)। इन्होंने भरद्वाज को प्रणाम किया (२ ९०, ५)। विधिवत् स्वागत करते हुये भरद्वाज ने इनका कुशल-समाचार पूछा (२. ९०, ६–७)। इन्होंने भी भरद्वाज का कुशल-समाचार पूछा (२. ९०, ८)। "जब भरद्वाज ने राम के प्रति इनके उद्देश्यों पर शंका प्रकट करते हुये इनसे वन में आने का कारण पूछा तो दुःख के कारण इनके नेत्रों से अश्रु छलक पड़े। इन्होंने बताया कि राम आदि को वनवास देने का निर्णय इनकी अनुपस्थिति में ही किया गया जिसके लिये ये तनिक भी दोषी नहीं और अब ये श्रीराम को वन से लौटाने के लिये ही जा रहे हैं (२, ९०, १४–१८)।" भरद्वाज का निमन्त्रण स्वीकार करते हुये इन्होंने उन्हीं के आश्रम पर रात्रि व्यतीत करने का निश्चय किया (२. ९०, २३–२४)। जब भरद्वाज मुनि ने इन्हें आतिथ्य ग्रहण करने का निमन्त्रण दिया तो इन्होंने विनम्रतापूर्वक उनसे कहा : 'वन में जैसा आतिथ्य-सत्कार

सम्भव है वह तो आप पाद्य, अर्घ्य और फल-मूल आदि देकर कर ही चुके हैं ।' (२. ९१, २) । भरद्वाज के पूछने पर इन्होंने बताया कि आश्रम में विघ्न न न उपस्थित हो इसलिये इन्होंने अपनी सेना को पीछे ही छोड़ दिया है (२. ९१, ६–९) । महर्षि भरद्वाज के आग्रह पर इन्होंने अपनी सेना को भी वहीं बुलवा लिया (२. ९१, १०) । भरद्वाज के आग्रह पर इन्होंने विश्वकर्मा द्वारा निर्मित महल में प्रवेश किया और वहाँ की व्यवस्था देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुये (२. ९१, ३५–३६) । "उस भवन में इन्होंने दिव्य राज-सिंहासन, चँवर, और छत्र भी देखे तथा श्रीराम की भावना करके मन्त्रियों सहित उन समस्त राजकीय वस्तुओं की प्रदक्षिणा की। सिंहासन पर श्रीराम के विराजमान होने की भावना से उसका पूजन करने के बाद ये अपने हाथ में चँवर लेकर मन्त्री के आसन पर बैठे (२. ९१, ३७–३८)।" गन्धर्वों और अप्सराओं ने नर्तन तथा गायन से इनका मनोरंजन किया (२. ९१, ४०–५०) । दूसरे दिन प्रातःकाल प्रस्थान की आज्ञा लेने के लिये ये भरद्वाज मुनि के पास गये (२. ९२, १) । भरद्वाज के पूछने पर इन्होंने बताया कि आतिथ्य-सत्कार की सुन्दर व्यवस्था से ये तथा इनकी सेना अत्यन्त सन्तुष्ट हुई, और तदनन्तर इन्होंने मुनि से चित्रकूट में श्रीराम के निवास का पता बताने के लिये कहा (२. ९२, ४–८) । भरद्वाज के कहने पर इन्होंने उनसे अलग-अलग अपनी माताओं का परिचय कराया (२. ९२, १९–२६) । कैकेयी का परिचय कराने समय ये क्रोध से भर कर फुफकारते हुए सर्प की भाँति लम्बी सांस खींचने लगे (२. ९२, २७) । महर्षि भरद्वाज से आज्ञा लेकर इन्होंने अपनी सेना आदि को यात्रा के लिये सन्नद्ध होने का आदेश दिया (२. ९२, ३१) । ये स्वयं एक शिबिका में बैठकर चले (२. ९२, ३६) । इस प्रकार अपनी विशाल सेना के साथ, जो समुद्र जैसी प्रतीत हो रही थी, भरत ने यात्रा आरम्भ की (२. ९३, ३–४) । चित्रकूट के निकट पहुँचने पर इन्होंने उस स्थान के प्राकृतिक सौन्दर्य का वसिष्ठ तथा शत्रुघ्न से वर्णन किया (२. ९३, ६–१९)। तदनन्तर इन्होंने श्रीराम और लक्ष्मण का पता लगाने के लिये अपने आदमियों को आदेश दिया (२. ९३; २०) । जब सैनिकों ने एक स्थान पर धूँआ उठता हुआ देखकर इन्हें सूचित किया तो अपने समस्त सैनिकों को वहीं रुकने का आदेश देकर सुमन्त्र और धृति के साथ स्वयं उन स्थान पर जाने की इच्छा प्रकट की (२. ९३, २२–२५)। जहाँ से धूँआ उठ रहा था उस स्थान पर इन्होंने अपनी दृष्टि स्थिर की (२. ९३, २६)। इनको और इनकी सेना को देखकर लक्ष्मण ने रोषपूर्ण उद्गार प्रकट किये (१. ९६, १७–३०) । 'सुसंरब्धं तु सौमित्रि लक्ष्मणं क्रोधमूर्च्छितम्', (२. ९७, १) । 'महाबले महोत्साहे भरते

स्वयमागते', (२. ९७, २)। 'मन्येऽहमागतोऽयोध्यां भरतो भ्रातृवत्सलः। मम प्राणात्प्रियतरः कुलधर्ममनुस्मरन् ॥', (२. ९७, ९)। इन्होंने सेना से उस स्थान की शान्ति को भङ्ग न करते हुये विश्राम करने की आज्ञा दी (२. ९७, २९)। "अपनी सेना को एक स्थान पर ठहरने का आदेश देने के पश्चात् इन्होंने शत्रुघ्न तथा गुह और उसके अनुचरों से श्रीराम के आश्रम का पता लगाने के लिये कहा। ऋत्विजों और मन्त्रियों सहित इन्होंने भी आश्रम का पता लगाने का निश्चय करते हुये कहा कि जब तक श्रीराम आदि का पता नहीं चल जाता इनके मन को शान्ति नहीं मिल सकती (२. ९८, १–१३)।" इस प्रकार व्यवस्था करके इन्होंने पैदल ही वन में प्रवेश किया और एक साल-वृक्ष पर चढ़कर श्रीराम की कुटिया को देखा (२. ९८, १४–१६)। श्रीराम का पता चल जाने पर ये अत्यन्त हर्षित हो साथियों सहित उनके स्थान की ओर चले (२. ९८, १७–१८)। "अपनी सेना को ठहरा कर ये श्रीराम के दर्शन के लिये शत्रुघ्न के साथ चले। उस समय ये शत्रुघ्न से मार्ग का वर्णन करते जाते थे (२. ९९, १)। इन्होंने—गुरुवत्सलः—महर्षि वसिष्ठ से कहा कि वे इनकी माताओं को लेकर आयें (२. ९९, २)। श्रीराम की कुटिया को देखकर इन्होंने समझ लिया कि ये अब मन्दाकिनी के तट पर विशाल हाथियों तथा ऋषि-मुनियों से सेवित उस स्थान पर पहुँच गये हैं जिसका मुनि भरद्वाज ने निर्देश किया था (२. ९९, ४–१३)। "मन्दाकिनी के तट पर स्थित चित्रकूट में पहुँचकर यह इस बात को सोचकर विलाप करने लगे कि श्रीराम को इन्हीं के कारण वनवास मिला। इस प्रकार सोचकर इन्होंने श्रीराम, सीता तथा लक्ष्मण के चरणों में गिरकर उन लोगों को मनाने का निश्चय किया (२. ९९, १४–१७)।" इस प्रकार विलाप करते हुये कुटिया के सम्मुख खड़े होकर इन्होंने देखा कि वेदी पर श्रीराम वीरासन में, सीता तथा लक्ष्मण के साथ, विराजमान हैं (२. ९९, १८–२८)। "श्रीराम को देखते ही इनका धैर्य समाप्त हो गया और ये शोक के आवेग को रोक नहीं सके। इन्होंने अश्रु बहाते हुये गद्गद वाणी में कहा : 'जो सर्वथा सुख-वैभव के ही योग्य हैं वे श्रीराम मेरे कारण ऐसे दुःख में पड़ गये हैं। मेरे इस लोकनन्दित जीवन को धिक्कार है।' (२. ९९, २९–३६)।" इतना कहते हुये ये 'आर्य !' कह कर भूमि पर गिर पड़े और शोक के कारण इसके अतिरिक्त कोई शब्द इनके मुख से निकल नहीं सका (२. ९९, ३७–३९)। श्रीराम ने इन्हें छाती से लगाते हुये अपनी गोद में बैठा लिया (२. ९९, ४०; १००, १–३)। श्रीराम ने कुशल-प्रश्न के बहाने इन्हें राजनीति का उपदेश दिया (२, १००, ४–७६)। वल्कल धारण करने, जटा-जूटा रखने, तथा वन में आने का जब श्रीराम और लक्ष्मण

ने इनसे कारण पूछा तो इन्होंने श्रीराम से अयोध्या लौट कर राजसिंहासन ग्रहण करने का निवेदन किया (२. १०१, ४–१३)। इन्होंने पुनः श्रीराम से अयोध्या लौटने का आग्रह करते हुये पिता की मृत्यु का समाचार दिया और उनसे पिता का अन्तिम संस्कार आदि करने का निवेदन किया (२. १०२, १–९)। पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर जब श्रीराम मूर्च्छित हो गये तो इन्होंने उन्हें सहारा दिया (२. १०३, ५)। इन्होंने श्रीराम से पिता को जलाञ्जलि आदि देने के लिये कहा (२. १०३, १७)। पिता को जलाञ्जलि देने के लिये ये भी श्री राम के साथ मन्दाकिनी के तट पर गये (२. १०३, २४–२५)। जब श्रीराम और वसिष्ठ ने अपना-अपना आसन ग्रहण कर लिया तो अपने अनुचरों सहित ये हाथ जोड़कर बैठे (२. १०४, २९–३०)। समस्त रात्रि शोकपूर्वक व्यतीत करने के पश्चात् इन्होंने श्रीराम से अयोध्या लौटकर सिंहासन ग्रहण करने के लिये कहा (२. १०५, १–१२)। "जब श्रीराम ने अयोध्या न लौटने का अपना दृढ़निश्चय व्यक्त किया तब इन्होंने उनसे करबद्ध होकर चरणों में शीश नवाते हुये एक बार पुनः राज्य-सिंहासन ग्रहण करके क्षत्रियों के कर्तव्य का पालन करने के लिये कहा। साथ ही इन्होंने इस प्रकार निवेदन किया : 'आप पिता की योग्य संतान बने रहें और उनके अनुचित कर्म का समर्थन न करें। कैकेयी, मैं, पिताजी, सुहृदगण, बन्धु-बान्धव, पुरवासी, तथा राष्ट्र की प्रजा, इन सब की रक्षा के लिये आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करें। आज आप मेरी माता के कलङ्क को धो डालें तथा पिता को भी निन्दा से वचायें। यदि आप नहीं लौटेंगे तो मैं भी आपके साथ वन चलूँगा।' (२. १०६, २–३२)।" श्रीराम ने इन्हें समझाकर अयोध्या लौटने का आदेश दिया (९. १०७, १–१९)। "श्रीराम को अपने निश्चय पर दृढ़ देखकर इन्होंने बिना अन्न जल ग्रहण किये उसी प्रकार सत्याग्रह करने का विचार प्रकट किया जिस प्रकार साहूकार के द्वारा निर्धन किया हुआ ब्राह्मण उसके घर के द्वार पर मुंह ढँक कर विना अन्न-जल के पड़ा रहता है। इस प्रकार निश्चय करके इन्होंने सुमन्त्र से श्रीराम की कुटिया के द्वार पर कुश विछाने के लिये कहा (२. १११, १२–१४)।" सुमन्त्र को संकोच करते देखकर इन्होंने स्वयं ही कुश विछाया (२. १११, १५)। जब श्रीराम ने इनसे अयोध्या लौट जाने का आग्रह किया तो इन्होंने नगर और जनपद के लोगों से कहा कि वे लोग भी श्रीराम को समझायें (२. १११, १९)। पिता के वचन की रक्षा के लिये इन्होंने श्रीराम के स्थान पर स्वयं वन में रहने की इच्छा प्रकट की (२. १११, २४–२६)। उस समय अन्तरिक्ष में अदृश्य भाव से खड़े हुये मुनियों तथा प्रत्यक्ष रूप से बैठे महर्षियों की वात सुनकर इन्होंने श्रीराम से करवद्ध प्रार्थना

की कि वे सिंहासन को स्वीकार करके वनवास की अवधि के लिये अपना कोई प्रतिनिधि नियुक्त कर दें (२. ११२, ९–१३)। यह कह कर ये श्रीराम के चरणों पर गिर कर उनसे अपनी बात मानने के लिये प्रबल आग्रह करने लगे (२. ११२, १४)। "इन्होंने श्रीराम से कहा : 'ये दो सुवर्णभूषित पादुकायें आपके चरणों में अर्पित हैं, आप इनपर अपने चरण रख दें। ये ही सम्पूर्ण जगत् के योग-क्षेम का निर्वाह करेंगी।' (२. ११२, २१)।" "श्रीराम की चरण-पादुका को ग्रहण करते हुये इन्होंने श्रीराम से कहा : 'मैं भी चौदह वर्ष तक जटा और चीर धारण करके फल-मूल का आहार करता हुआ आपके आगमन की प्रतीक्षा में नगर से बाहर ही निवास करूँगा। यदि चौदहवाँ वर्ष पूर्ण होने पर नूतन वर्ष के प्रथम दिन ही मुझे आपका दर्शन न मिला तो मैं अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगा।' (२. ११२, २३–२५)।" इन्होंने श्रीराम की चरण-पादुकाओं को राजकीय हाथी के मस्तक पर स्थापित किया और श्रीराम से विदा ली (२. ११२, २९)। श्रीराम की दोनों चरण-पादुकाओं को अपने मस्तक पर रखकर ये शत्रुघ्न के साथ रथ पर बैठे (२. ११३, १)। चित्रकूट पर्वत की परिक्रमा करके ये महर्षि भरद्वाज के आश्रम में पहुँचे (२. ११३, ३–५)। इन्होंने आदरपूर्वक महर्षि का अभिवादन किया (२. ११३, ६)। महर्षि के पूछने पर इन्होंने बताया कि श्रीराम ने अयोध्या न लोटने का दृढ़ निश्चय कर लिया था और वसिष्ठ जी के कहने पर अपनी अनुपस्थिति में अपनी चरण-पादुकाओं को अपना प्रतिनिधि मानना स्वीकार किया (२. ११३, ८–१४)। 'भरतस्य महात्मनः,' (२. ११३, १५)। इनके उच्च विचारों की महर्षि भरद्वाज ने अत्यन्त प्रशंसा की (२. ११३, १६–१७)। इन्होंने महर्षि भरद्वाज से विदा ली (२. ११३, १८–१९)। यमुना तथा गङ्गा को पार करने के पश्चात् शृङ्गवेरपुर होते हुए ये अयोध्या आये जो निरुत्साह, अन्धकारपूर्ण और उदास दिखाई पड़ रही थी (२. ११३, २०–२४)। इन्होंने अयोध्या को उदास देखा (२. ११४, १९–२६)। इन्होंने अश्रुपूरित नेत्रों के साथ दशरथ से रहित महल में प्रवेश किया (२. ११४, २७–२९)। अपनी माताओं को पहुँचा कर इन्होंने श्रीराम के लौटने तक नन्दिग्राम में निवास करने का निश्चय व्यक्त किया (२. ११५, १–३)। जब मन्त्रियों ने इसकी स्वीकृति दे दी तो इन्होंने सारथि से अपना रथ तैयार करने के लिए कहा (२. १५५, ७)। माताओं से विदा लेकर इन्होंने शत्रुघ्न और मन्त्रियों-सहित नन्दिग्राम के लिए प्रस्थान किया। (२. ११५, ८–९)। भ्रातृवत्सल भरत अपने मस्तक पर श्रीराम की चरण-पादुका लिए हुए रथ पर बैठ कर शीघ्रता से नन्दिग्राम की ओर चले

(२. ११५, १२)। नन्द्रिग्राम पहुँच कर इन्होंने गुरुजनों से कहा : 'मेरे भ्राता ने यह उत्तम राज्य मुझे धरोहर के रूप में दिया है, और उनकी ये चरण-पादुकायें ही सबके योग-क्षेम का निर्वाह करने वाली हैं।' (२. ११५, १३–१४)। तदनन्तर मस्तक झुकाकर इन चरण-पादुकाओं के प्रति धरोहरस्वरूप राज्य को समर्पित करते हुए इन्होंने समस्त प्रकृतिमण्डल से भी यही बात कही (२. ११५, १५–२०)। वल्कल, जटा, तथा मुनि का वेश धारण करके भरत अपने मन्त्रियों सहित नन्दिग्राम में पादुकाओं को श्रीराम का प्रतिनिधि मानते हुये निवास करने लगे (२. ११५, २१–२४)। इनके तपस्या के इस व्रत की लक्ष्मण ने सराहना की : 'अस्मिस्तु पुरुषव्याघ्र काले दुःखसमन्वितः। तपश्चरति-धर्मात्मा त्वद्भक्त्या भरतः पुरे ॥,' (३. १६, २७)। 'अत्यन्तसुखसंवृद्धः सुकुमारो हिमार्दितः,' (३. १६, ३०)। 'पद्मपत्रेक्षणः श्यामः श्रीमान्निरुदरो महान्। धर्मज्ञः सत्यवादी च ह्रीनिषेधो जितेन्द्रियः ॥ प्रियाभिभाषी मधुरो दीर्घबाहुर-रिंदमः। संत्यज्य विविधान्भोगानार्यं सर्वात्मना श्रितः ॥,' (३. १६: ३१–३२)। इन्होंने इस उक्ति को मिथ्या प्रमाणित कर दिया कि 'मनुष्य प्रायः पिता के नहीं वरन् माता के गुणों का ही अनुवर्तन करते हैं।' (३, १६, ३४)। राम उस दिन की उद्विग्नतापूर्वक प्रतीक्षा करने लगे जब उनका इनसे पुनर्मिलन होगा (३, १६, ३९–४०)। 'तां पालयति धर्मात्मा भरतः सत्यवागृजुः। धर्मकामार्थतत्त्वज्ञो निग्रहानुग्रहे रतः ॥ नयश्च विनयश्चोभौ यस्मिन्सत्यं च सुस्थितम्। विक्रमश्च यथा दृष्टः स राजा देशकालवित् ॥,' (४. १८, ७–८) 'यस्मिन्नृपतिशार्दूले भरते धर्मवत्सले,' (४. १८, १०)। श्रीराम ने इनका स्मरण किया (४. २८, ५५)। "अयोध्या से एक कोस की दूरी पर हनुमान् ने आश्रमवासी भरत को देखा जो चीर-वस्त्र और काला मृग-चर्म धारण किये हुए दुःखी एवं दुर्बल दिखाई पड़ रहे थे। उनके मस्तक पर बढ़ी हुई जटा और शरीर पर मैल थी। भ्राता के वनवास के दुःख ने उन्हें बहुत कृश कर दिया था। फल-मूल ही उनका आहार था। वे इन्द्रियों का दमन करके तपस्या में लिप्त तथा धर्माचरण करते थे। उनके सर पर जटा का भार बहुत ऊँचा हो गया था, और उनका शरीर भी वल्कल तथा मृग-चर्म से ढँका था। वे बड़े संयम से रहते थे। उनका अन्तःकरण अत्यन्त निर्मल था, और वे एक ब्रह्मर्षि के समान तेजस्वी प्रतीत हो रहे थे। वे श्रीराम की चरण-पादुकाओं को आगे रखकर पृथिवी का शासन करते थे। (६. १२५, २९–३४)।" "जब हनुमान् ने इन्हें श्रीराम के सकुशल लौट आने का समाचार दिया तो पहले तो ये हर्ष से मूर्छित हो गये किन्तु चेतना लौटने पर हनुमान् का आलिङ्गन करके उन्हें अश्रुओं से सिंचित कर दिया। तदनन्तर इन्होंने हनुमान् को बहुमूल्य

उपहार दिये (६. १२५, ४०–४६)।" अनेक वर्षों के पश्चात् श्रीराम का नाम सुनकर इन्हें अपार हर्ष हुआ, और इन्होंने हनुमान् से पूछा कि श्रीराम और वानरों की मैत्री किस प्रकार हुई (६. १२६, १–३)। हनुमान् से समस्त वृत्तान्त सुन कर इन्होंने कहा कि इनकी मनोकामना पूर्ण हो गई (६. १२६, ५६)। 'श्रुत्वा तु परमानन्दं भरतः सत्यविक्रमः,' (६. १२७, १)। "इन्होंने शत्रुघ्न से कहा : 'शुद्धाचारी पुरुष कुल-देवताओं तथा नगर के समस्त देवस्थानों का सुगन्धित पुष्पों द्वारा ससमारोह पूजन करें। नगर को भलीभाँति सजाया जाय, तथा समस्त पुरवासी श्रीराम के स्वागत के लिए नगर से बाहर चलें।' इनकी बात को सुन कर शत्रुघ्न ने तदनुरूप व्यवस्था करने की आज्ञा दी (६. १२७, १–५)।" ये श्रीराम की चरण-पादुकाओं को अपने मस्तक पर धारण करके माताओं, अयोध्यावासियों, मंत्रियों इत्यादि के साथ श्रीराम के स्वागत के लिए नन्दिग्राम आये (६. १२७, १४–१९)। कुछ दूर चलने के पश्चात् इन्होंने हनुमान् से पूछा कि उन्होंने सत्य समाचार दिया था या नहीं, क्योंकि उस समय तक श्रीराम का कोई चिन्ह नहीं लक्षित हुआ (६. १२७, २०–२१)। जब श्रीराम का विमान इनकी ओर वढ़ा तो ये उसपर दृष्टि लगा कर करवद्ध खड़े हो गये और दूर से ही अर्घ्य-पाद्य आदि से श्रीराम का विधिवत् पूजन किया (६. १२७, ३०–३२)। "जव श्रीराम का विमान भूमि पर उतरा तो इहोंने एक बार पुनः श्रीराम का अभिवादन करने के बाद उनका आलिङ्गन किया। इसके बाद लक्ष्मण तथा सीता का अभिवादन करके इन्होंने वानरयूथपतियों का आलिङ्गन तथा सुग्रीव और विभीषण का स्वागत किया (६. १२७, ३५–४४)।" इन्होंने श्रीराम की चरण-पादुकायें उनके चरणों में पहना दीं और बोले : 'मेरे पास धरोहर के रूप में रक्खा हुआ समस्त राज्य आज मैंने आपके श्रीचरणों में लौटा दिया जिससे मेरा जन्म सफल हो गया' (६. १२७, ५०–५३)। इन्होंने करवद्ध होकर श्रीराम से प्रार्थना की कि वे अब राज्य-सिहासन ग्रहण करें (६. १२८, १–११)। तदनन्तर इन्होंने स्नान आदि करके नवीन वस्त्र धारण किया (६. १२८, १४–१५)। ये श्रीराम के रथ के सारथि वने (६. १२८, २८)। राम की आज्ञा से इन्होंने सुग्रीव को श्रीराम के अशोकवाटिका से घिरे हुये भवन में प्रवेश कराया तथा श्रीराम के अभिषेक के निमित्त जल लाने के लिये उनसे वानरों को भेजने के लिये कहा (६. १२८, ४६–४८)। लक्ष्मण के अस्वीकार करने पर इन्हें युवराज-पद पर अभिषिक्त किया गया (६. १२८, ९३)। राम के राज्याभिषेक के दूसरे दिन अन्य भ्राताओं के साथ ये भी उनकी सभा में उपस्थित हुये (७. ३७, १७)। वन में सीता के अपहरण का समाचार

सुनकर इन्होंने अनेक भूपालों को राक्षसों पर आक्रमण करने के लिये एकत्र किया था (७. ३८, २४)। राजाओं ने जो रत्नादि के उपहार दिये थे उन्हें लेकर लक्ष्मण और शत्रुघ्न सहित ये अयोध्या आये (७. ३९, ११–१२)। इन्होंने श्रीराम के विलक्षण प्रभाव के अन्तर्गत अयोध्या की समृद्धि के लिये श्रीराम की प्रशंसा की (७. ४१, १७–२२)। राम के बुलाने पर ये तत्काल उनसे मिलने के लिये पैदल ही उनके भवन की ओर चल पड़े (७. ४४, ७–८)। "राम के पास पहुँच कर इन्होंने उन्हें अत्यन्त उद्विग्न देखा। उनके चरणों में प्रणाम करने के पश्चात् इन्होंने आसन ग्रहण किया (७. ४४, १४–१८)।" राम के शब्दों को सुनकर इनको यह उत्सुकता हुई कि श्रीराम क्या कहना चाहते हैं (७. ४४, २१)। श्रीराम के पूछने पर ये स्वयं लवणासुर का वध करने के लिये प्रस्तुत हुये (७. ६२, ९)। राम के आदेश पर इन्होंने शत्रुघ्न के अभिषेक की आवश्यक व्यवस्था की (७. ६३, १२)। ये शत्रुघ्न को पहुँचाने के लिये गये (७. ७२, २१)। श्रीराम के उपस्थित होने पर ये उनके दर्शन के लिये गये (७. ८३, १–२)। श्रीराम द्वारा राजसूय यज्ञ का प्रस्ताव करने पर इन्होंने विनम्रतापूर्वक विरोध करते हुये कहा कि इस प्रकार के यज्ञ से भूमण्डल के समस्त राजवंशों का विनाश हो जायगा (७. ८३, ९–१५)। श्रीराम द्वारा इल की कथा कहने पर इन्होंने उत्सुक होकर पूछा कि बाद में इल का क्या हुआ (७. ८८, १–३)। किंपुरुष जाति की उत्पत्ति का प्रसंग सुनकर लक्ष्मण सहित इन्होंने अत्यन्त आश्चर्य प्रगट किया (७. ८९, १)। पुरूरवा के जन्म का वृत्तान्त सुनने के पश्चात् इन्होंने पुनः श्रीराम से इल के सम्बन्ध में पूछा (७. ९०, १–२)। राम के आदेश के अनुसार ये उस स्थान पर गये जहाँ यज्ञ की व्यवस्था हो रही थी (७. ९१, २७)। यज्ञ के समय ये शत्रुघ्न के साथ आमन्त्रित राजाओं के स्वागत सत्कार के लिये नियुक्त किये गये थे (७. ९२, ५)। राम के आदेश पर इन्होंने अपने पुत्रों सहित एक विशाल सेना लेकर गन्धर्वों के देश के लिये प्रस्थान किया (७. १००, २०–२४)। ये पन्द्रह दिन के पश्चात् केकय पहुँचे (७. १००, २५)। युधाजित् के साथ मिलकर इन्होंने गन्धर्वों के देश पर आक्रमण किया (७. १०१, १–३)। सप्ताहान्त तक इन्होंने तीन करोड़ गन्धर्वों का विनाश कर दिया (७. १०१, ५–८)। "गन्धर्व देश को विजित करके इन्होंने उसकी दो राजधानियों, तक्षशिला और पुष्कलावत, की स्थापना की जहाँ से इनके पुत्रगण गान्धार देश पर शासन करने लगे। तदनन्तर पाँच वर्ष के पश्चात् इन्होंने अयोध्या लौटकर श्रीराम को सम्पूर्ण वृत्तान्त से अवगत किया (७. १०१, १०–१८)। श्रीराम के कहने पर इन्होंने

राजकुमार अङ्गद को कारुपथ का और राजकुमार चन्द्रकेतु को चन्द्रकान्त का शासक बनाने का प्रस्ताव किया (७. १०२, ५–६)। 'ततो रामः परां प्रीतिं लक्ष्मणो भरतस्तथा। ययुर्युद्धे दुराधर्षा अभिषेकं च चक्रिरे ।।', (७. १०२, १०)। एक वर्ष तक चन्द्रकेतु के साथ रहने के पश्चात् ये अयोध्या लौटे (७. १०२, १२–१४)। इस प्रकार, ये दस सहस्र वर्ष तक आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करते रहे (७. १०२, १५–१७)। जब इन्होंने यह समाचार सुना कि श्रीराम इन्हें राज्य सौंप कर वन चले जाना चाहते हैं तो ये जैसे संज्ञाहीन हो गये (७. १०७, १–५)। राज्य को अस्वीकार करते हुये इन्होंने लव और कुश का राज्याभिषेक करने का प्रस्ताव रक्खा, और शीघ्रगामी दूतों के द्वारा श्रीराम सहित अपनी महायात्रा का समाचार शत्रुघ्न के पास भेजा (७. १०७, ५–८)। श्रीराम के परमधाम जाने के समय ये भी उनके साथ गये (७. १०९, ११)।

१. **भरद्वाज,** एक ऋषि का नाम है जिनके परामर्श पर ही श्रीराम ने चित्रकूट में अपना आश्रम बनाया (१. १, ३१)। लङ्का से लौटते समय श्रीराम ने इन्हीं के आश्रम में रुक कर हनुमान् के द्वारा भरत के पास अपने आगमन का समाचार भेजा (१. १, ८७)। इनके साथ श्रीराम के मिलन की घटना का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन किया (१. ३, १५–३७)। इनकी पर्णशाला में प्रवेश करके श्रीराम ने, तपस्या के प्रभाव से तीनों कालों की समस्त बातों को देखने की दिव्य दृष्टि प्राप्त कर लेनेवाले एकाग्रचित्त तथा तीक्ष्ण व्रतधारी महात्मा भरद्वाज का, दर्शन किया जो अग्निहोत्र करके शिष्यों से घिरे हुये आसन पर विराजमान थे (२. ५४, ११–१२)। श्रीराम आदि का हार्दिक स्वागत करने के पश्चात् इन्होंने उन लोगों को विविध उपहार दिये (२. ५४, १७–१९)। इन्होंने श्रीराम से बताया कि ये उन लोगों के वनवास का कारण जानते हैं, और इसके बाद इन्होंने उन लोगों को अपने आश्रम में रुकने के लिये आमन्त्रित किया (२. ५४, २१–२२)। श्रीराम के आपत्ति करने पर इन्होंने उन्हें चित्रकूट नामक स्थान पर आवास बनाने का परामर्श दिया (२. ५४, २८–३२)। 'प्रभातायां तु शर्वर्यां भरद्वाजमुपागमत् । उवाच नरशार्दूलो मुनिं ज्वलिततेजसम् ।। शर्वरीं भगवन्नद्य सत्यशील तवाश्रमे । उषिताः स्मेह वसतिमनुजानातु नो भवान् ।।', (२. ५४, ३६–३७)। दूसरे दिन प्रातःकाल श्रीराम के पूछने पर इन्होंने चित्रकूट का वर्णन करते हुये पुनः उसी का उल्लेख किया (२. ५४, ३८–४३)। जब श्रीराम आदि चित्रकूट के लिये प्रस्थान करने लगे तो इन्होंने उन लोगों का 'स्वस्त्ययन' किया (२. ५५, १–२)। चित्रकूट के मार्ग का विस्तृत वर्णन करने के पश्चात् ये लौट

आये (२. ५५, ३–१०)। भरत ने गुह से इनके आश्रम का मार्ग पूछा (२. ८५, ४)। 'भरद्वाजमृषिप्रवर्यम्', (२. ८९, २१)। 'स ब्राह्मणस्याश्रममभ्युपेत्य महात्मनो देवपुरोहितस्य। ददर्श रम्योटजवृक्षदेशं महद्वनं विप्रवरस्य रम्यम् ॥', (२. ८९, २२)। महर्षि वसिष्ठ को देखकर महातपस्वी भरद्वाज अपने आसन से उठ खड़े हुये और अपने शिष्यों से शीघ्रतापूर्वक अर्घ्य लाने के लिये कहा (२. ९०, ४)। जब भरत ने इनके चरणों में प्रणाम किया तो उन्होंने इन्हें पहचान लिया (२. ९०, ५)। इन्होंने वसिष्ठ और भरत को अर्घ्य, पाद्य तथा फल आदि निवेदन करने के पश्चात् उन दोनों के कुल का कुशल समाचार पूछा (२. ९०, ६)। यह दशरथ की मृत्यु का समाचार जान गये थे अतः उनके सम्बन्ध में कुछ नहीं पूछा (२. ९०, ७)। 'भरद्वाजो महायशाः', (२. ९०, ९)। इन्होंने राम के प्रति भरत के उद्देश्यों पर शंका प्रगट करते हुये उनसे एतद्विषयक प्रश्न किये (२. ९०, ९–१३)। भरत के उत्तर से अत्यन्त प्रसन्न होकर इन्होंने श्रीराम का पता बताते हुये भरत को अपने आश्रम में ही वह रात्रि व्यतीत करने के लिये आमन्त्रित किया (२. ९०, १९–२३)। इन्होंने भरत का सत्कार करने की इच्छा प्रगट की (२. ९१, १)। जब भरत ने इनके इस प्रस्ताव पर कुछ संकोच का अनुभव किया तब इन्होंने उनकी सेना का सत्कार करने का प्रस्ताव करते हुये पूछा कि उन्होंने सेना को पीछे क्यों छोड़ दिया है (२. ९१, ३–५)। इन्होंने भरत से सेना को आश्रम में ही बुलाने के लिये कहा (२. ९१, १०)। इन्होंने अपनी अग्निशाला में प्रवेश करके जल का आचमन करने के पश्चात् भरत के आतिथ्य-सत्कार के लिये विश्वकर्मा तथा अन्य देवताओं, गन्धर्वों आदि का आवाहन किया (२. ९१, ११–२२)। इन्होंने भरत से विश्वकर्मा द्वारा निर्मित भवन में प्रवेश करने का अनुरोध किया (२. ९१, ३५)। जो फूल देवताओं के उद्यानों और चैत्ररथ वन में उत्पन्न हुआ करते थे वे महर्षि भरद्वाज के प्रताप से प्रयाग में दृष्टिगत होने लगे (२. ९१, ४७)। दूसरे दिन प्रातःकाल इन्होंने गन्धर्वों तथा समस्त सुन्दरी अप्सराओं आदि को विदा किया (२. ९१, ८२)। प्रातःकाल, जब भरत करबद्ध होकर इनके सम्मुख उपस्थित हुये तो इन्होंने उनसे पूछा कि उन्हें रात्रि में ठीक से निद्रा आई अथवा नहीं (२. ९२, २–३)। 'ऋषिमुत्तमतेजसम्', (२. ९२, ४)। 'भरद्वाजो महातपाः', (२. ९२, ९)। भरत के पूछने पर इन्होंने चित्रकूट के मार्ग का वर्णन किया (२. ९२, १०–१४)। जब भरत की माताओं ने इन्हें प्रणाम किया तब इन्होंने भरत से उनका परिचय कराने के लिये कहा (२. ९२, १४–१९)। 'भरद्वाजो महर्षिस्तं ब्रुवन्तं भरतं तदा। प्रत्युवाच महाबुद्धिरिदं वचनमर्थवत् ॥', (२. ९२, २८)।

इन्होंने भरत को यह परामर्श देते हुये कि उन्हें कैकेयी पर आक्षेप नहीं करना चाहिये, यह बताया कि श्रीराम का वनवास वास्तव में देवों, दानवों और ऋषियों के कल्याण के लिये ही हुआ है (२. ९२, २९–३०)। चित्रकूट से लौटते समय भरत पुनः इनके आश्रम पर आये (२, ११३, ५)। भरत के प्रणाम करने पर इन्होंने उनसे पूछा कि वे श्रीराम से मिले अथवा नहीं (२. ११३, ६–७)। इन्होंने भरत के श्रेष्ठ और उच्च विचारों के लिये उनकी प्रशंसा की (२. ११३, १६–१७)। "श्रीराम के पूछने पर इन्होंने बताया कि अयोध्या में सब कुशल है। इन्होंने यह भी बताया कि श्रीराम का वनवास आरम्भ होने के समय से अब तक की समस्त घटनायें भी इन्हें ज्ञात हैं। तदनन्तर इन्होंने श्रीराम से वह रात्रि अपने आश्रम में ही व्यतीत करने का अनुरोध किया (६. १२४, ४–१७)। इन्होंने राम को उनके द्वारा माँगा हुआ वरदान दिया (६. १२४, २०)। श्रीराम के अयोध्या लौटने पर ये उत्तर दिशा से उनके अभिवादन के लिये उपस्थित हुये (७. १, ६)। इन्होंने अपनी पुत्री, देववर्णिनी, का विश्रवा के साथ विवाह किया (७. ३, ३)। सीता के शपथ-ग्रहण के समय ये भी श्रीराम की सभा में उपस्थित थे (७. ९६, ४)।

२. भरद्वाज, वाल्मीकि मुनि के एक शिष्य का नाम है जो तमसा नदी के तट पर अपने गुरु के साथ उपस्थित थे (१. २, ४)।

भार्गव—इनका अपनी पत्नी रेणुका से मिलने का उल्लेख (१. ५१, ११)। ये श्रीराम के दर्शन के लिये सुमन्त्र को अपने आगमन की सूचना देते हैं (७. ६०. ४)। श्रीराम ने उत्तर में भार्गव आदि ऋषियों से उनके कार्य को सिद्ध करने के लिये पूछा (७. ६१, १)। इन्होंने लवणासुर के बल तथा अत्याचार का वर्णन करके उससे प्राप्त होने वाले भय को दूर करने के लिये श्रीराम से प्रार्थना की (७. ६१, २–२५)। शत्रुघ्न ने यमुना-तट पर भार्गव आदि मुनियों के साथ कथा-वार्ता द्वारा कालक्षेप करते हुये निवास किया (७. ६६, १६)। सीता के शपथ-ग्रहण के समय ये श्रीराम के दरबार में उपस्थित थे (७. ९६. ३)।

भासकर्ण, रावण के एक सेनापति का नाम है। इसने रावण की आज्ञानुसार (५. ४६, १–१४) प्रघस को साथ लेकर हनुमान् पर आक्रमण किया परन्तु हनुमान् ने इसका वध कर दिया (५. ४६, ३१–३५)। यह केतुमती और सुमालिन् का पुत्र था (७. ५, ३८–४०)।

भासी, ताम्रा और कश्यप की एक पुत्री का नाम है (३. १४, १७)। इसने भास नामक पक्षियों को जन्म दिया (३. १४, १८)।

भीम, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन का हनुमान् ने दर्शन किया था (५. ६, २३)।

१. भृगु, हिमालय पर्वत के एक शिखर का नाम है (१. ३८, ५)।

२. भृगु, एक महर्षि का नाम है जिन्होंने राजा सगर और उनकी पत्नी के सौ वर्ष तपस्या करने से प्रसन्न होकर वर दिया (१. ३८, ६)। इन्होंने सगर को वरदान देते हुए बताया कि उनकी एक पत्नी एक पुत्र को, और द्वितीय पत्नी ६०,००० पुत्रों को जन्म देगी (१. ३८, ७–८)। 'भृगुः सत्यवतां वरः', (१. ३८, ६)। 'भाषमाणं नरव्याघ्रं राजपुत्र्यौ प्रसाद्य तम्', (१. ३८, ९)। 'भृगुः परमधार्मिकः', (१. ३८, ११)। सगर की पत्नियों के यह पूछने पर कि किसको एक पुत्र और किसको ६०,००० पुत्र उत्पन्न होंगे, इन्होंने बताया कि यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है (१. ३८, ९–१२)। आश्रम में उपद्रव-पूर्ण कार्य करने के कारण इनके वंशजों ने हनुमान् को शाप दे दिया (७. ३६, ३२–३४)। विष्णु द्वारा इनकी पत्नी का वध कर देने पर इन्होंने विष्णु को शाप दे दिया (७. ५१, ११–१६)। शाप की विफलता के भय से पीड़ित होकर भृगु ने तपस्या द्वारा भगवान् विष्णु की आराधना की (७, ५१, १६–१७)। राजर्षि निमि ने अपना यज्ञ कराने के लिये इन्हें आमन्त्रित किया (७. ५५, ९)। यज्ञ समाप्त होने पर सन्तुष्ट होकर इन्होंने निमि के जीव-चैतस्य को पुनः उनके शरीर में ला देने के लिये कहा (७. ५७, १२)।

भृगु-पत्नी—देवासुर-संग्राम में देवताओं से पीड़ित हुये दैत्यों को भृगु-पत्नी ने अभय प्रदान किया जिससे कुपित होकर विष्णु ने चक्र से उनका (भृगु-पत्नी का) सर काट लिया (७. ५१, ११–१३)।

भृगुतुङ्ग, एक पर्वत का नाम है जहाँ पत्नी और पुत्रों के साथ बैठे हुये ऋचीक मुनि का अम्बरीष ने दर्शन किया (१. ६१, ११)।

भोगवती, पाताल की एक नगरी का नाम है जो नागराज वासुकि की राजधानी थी। रावण ने इस पर आक्रमण करके इसे अपने अधिकार में कर लिया था (३. ३२, १३)। "कुन्जर पर्वत पर स्थित यह पुरी दुर्जय थी। इसकी सड़कें बहुत बड़ी और विस्तृत थीं। यह सब ओर से सुरक्षित थी और तीखी दाढ़ों वाले महाविषैले सर्प इसकी रक्षा करते थे (४, ४१, ३६–३८)।" यहाँ सर्पराज वासुकि निवास करते थे। सुग्रीव ने अङ्गद को विशेष रूप से इस नगरी में प्रवेश करके सीता को खोजने के लिये भेजा (४. ४१, ३८)।" यह नागों से सुरक्षित थी (५. ३, ५)। रावण द्वारा इस नगरी में प्रवेश करके युद्ध में नागों को पराजित कर देने का उल्लेख (६. ७, ४; ७. २३, ५)।

म

मकराक्ष, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने आग लगा दी थी (५. ५४, १४)। यह खर का पुत्र था (६. ७८, २)। वानरों सहित राम और लक्ष्मण का वध करने की रावण की आज्ञा (६. ७८, २–३) को इसने स्वीकार कर लिया (६. ७८, ४)। इसने रावण की आज्ञा पर सेनाध्यक्ष से रथ और सेना लेकर इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले निशाचरों के साथ युद्धभूमि की ओर प्रस्थान किया। इस समय इसके मार्ग में बहुत से अपशकुन हुये (६, ७८, ५–२१)। "वानरों और राक्षसों का युद्ध हुआ। इसने वानरों को बाणसमूहों से घायल कर दिया जिससे वे युद्धभूमि से इधर-उधर भागने लगे (६. ७९, १–७)।" इसने राम के पास जाकर उन्हें द्वन्द्व युद्ध के लिये ललकारा (६. ७९, ९–१६)। "इसका राम के साथ युद्ध हुआ। राम ने इसके धनुष, रथ और शूल के टुकड़े-टुकड़े करके अन्त में अपने आग्नेयास्त्र से इसका वध कर दिया (६. ७९, २१–४१)।"

मगध, एक देश का नाम है जहाँ के शूरवीर, सर्वशास्त्र-विशारद, परम उदार और पुरुषों में श्रेष्ठ राजा, प्राप्तिज्ञ, को दशरथ ने अपने अश्वमेध यज्ञ में आमन्त्रित किया था (१. १३. २६)। शोण नदी का इस देश में बहने के कारण 'मागधी' का नाम पड़ा (१. ३२, ८–९)। दशरथ का यहाँ आधिपत्य था, अतः उन्होंने कैकेयी को शान्त करने के लिये इस देश में उत्पन्न होने वाली वस्तुयें भी प्रस्तुत करने के लिये कहा (२. १०, ३९–४०)। सुग्रीव ने विनत को यहाँ सीता की खोज के लिये भेजा था (४. ४०, २२ ।।

मङ्गल, एक हास्यकार का नाम है जो श्रीराम का मनोरंजन करने के लिये उनके साथ रहता था (७. ४३. २)।

मणि-भद्र, कुवेर के सेनापति का नाम है जिसे रावण के सेनापति प्रहस्त ने कैलास पर्वत पर घटित हुये युद्ध में पराजित किया था (६. १९, ११)। कुवेर की आज्ञा पर (७. १५, १–२) इन्होंने ४,००० यक्षों को साथ लेकर राक्षसों पर आक्रमण किया (७. १५, ३–६)। "इन्होंने धूम्राक्ष पर गदा का प्रहार करके उसे पराजित कर दिया, जिस पर कुपित हुये रावण ने इनके मुकुट पर प्रहार किया। रावण के इस प्रहार से इनका मुकुट खिसक कर पार्श्व में आ गया जिससे ये 'पार्श्वमौलि' के नाम से प्रसिद्ध हुये (७. १५, १०–१५)।"

मतङ्ग, एक ऋषि का नाम है जिनका आश्रम क्रौञ्चारण्य से ३ कोस दूर पूर्व में स्थित था (३. ६९, ८)। इनके नाम पर प्रसिद्ध मतङ्ग वन पम्पा सरोवर के तटवर्ती ऋष्यमूक पर्वत पर स्थित था जिसमें इस ऋषि की इच्छा

के अनुसार गजराजों से कोई भी भय नहीं था (३. ७३. २८–३०)। यह वन मेघों की घटा के समान श्याम और नाना प्रकार के पशु-पक्षियों से युक्त था (३,.७४, २१)। इस वन में इनके शिष्यगण निवास करते थे और यहीं शबरी भी रहती थी (३. ७४, २२–२७)। दुन्दुभि के मृत शरीर से निकले हुये रक्त-विन्दु जब हवा से उड़कर इनके आश्रम में आ गिरे तब इन्होंने उन वानरों को इस वन में प्रवेश करने पर मृत्यु हो जाने का शाप दे दिया जिनके कारण वे रक्त-विन्दु इनके आश्रम में आ गिरे थे (४. ११, ४८–५८)। जब वालिन् क्षमा-याचना के लिये इनके आश्रम में आया तो इन्होंने उससे मिलना अस्वीकार कर दिया (४. ११, ६२–६३)। वालिन् को दिये गये इनके शाप को हनुमान् ने दुहराया और सुग्रीव ने भी उसका स्मरण किया (४. ४६, २२)।

मत्त, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् पधारे थे (५. ६, २५)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १३)। रावण ने इसको अपने पुत्रों की रक्षा करने के लिये युद्धभूमि में भेजा (६. ६९, १६)। इसने ऋषभ के साथ युद्ध किया जिसमें ऋषभ ने इसका वध कर दिया (६. ७०, ४९–६५)। यह माल्यवान् और सुन्दरी का पुत्र था (७.५, ३५–३७)।

मत्स्य, एक समृद्धिशाली देश का नाम है । दशरथ ने कैकेयी को शान्त करने के लिये इस देश में उत्पन्न होनेवाली बहुमूल्य वस्तुयें भी प्रदान करने के लिये कहा (२. १०, ३९–४०)। सुग्रीव ने अङ्गद को यहाँ सीता की खोज के लिये भेजा (४. ४१, ११)।

१. मदयन्ती, मित्रसह की रानी का नाम है जिसने मांसयुक्त भोजन को वसिष्ठ के सामने रक्खा (७. ६५, २६)। इसने राजा सौदास को वसिष्ठ को शाप देने से रोक दिया (७. ६५. २९–३०)। इसने वसिष्ठ को प्रणाम करके बताया कि उनका रूप धारण करके किसी ने इसे ऐसा भोजन देने के लिये प्रेरित किया था (७. ६५, ३३)।

२. मदयन्ती, सौदास की भक्तिमती पत्नी का नाम है (५. २४, १२)।

मद्रक, उत्तर दिशा के एक देश का नाम है जहाँ सुग्रीव ने शतबल को सीता की खोज के लिये भेजा था (४. ४३, ११)।

१. मधु, एक दैत्य का नाम है जिसका विष्णु ने दिव्य वाण से वध किया था (७. ६३, २२; ६९, २७)। इसके अस्थि-समूहों से भरी हुई पर्वतों सहित पृथिवी प्रगट हुई (७. १०४, ६)।

२. मधु, एक शक्तिशाली राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसने रावण की मौसेरी बहन, कुम्भीनसी, का अपहरण किया था (७. २५, २२–२७)। कुम्भीनसी

की मध्यस्थता से रावण ने इससे सन्धि कर ली (७. २५, ३८–५१)। "लोला का ज्येष्ठ पुत्र मधु अत्यन्त ब्राह्मणभक्त तथा शरणागतवत्सल था। इसकी बुद्धि सुस्थिर, और अत्यन्त उदार स्वभाववाले देवताओं के साथ इसकी अतुलनीय मित्रता थी। बल-विक्रम से सम्पन्न यह एकाग्रचित्त होकर धर्मानुष्ठान में लगा रहता था। इसने भगवान् शिव की आराधना की जिससे उन्होंने अद्भुत वर दिया (७. ६१, ३--६)।" इसकी तपस्या से प्रसन्न होकर शिव ने एक शक्तिशाली शूल देते हुये बताया कि जब तक यह ब्राह्मणों और देवताओं से विरोध नहीं करेगा तब तक ही वह शूल इसके पास रहेगा अन्यथा अदृश्य हो जायगा (७.६१, ७-९)। इसने शिव से प्रार्थना की कि वह परम उत्तम शूल इसके वंशजों के पास भी सदैव रहे (७. ६१, १०--११)। "इसकी प्रार्थना को स्वीकार करते हुये शिव ने बताया कि वह शूल इसके पुत्र लवण के पास रहेगा। इसने एक दीप्तिमान् भवन बनवाया तथा विश्वावसु और अनला की पुत्री कुम्भीनसी से विवाह किया। अपने पुत्र लवण की उद्दण्डता पर क्रोध से जलते हुये मधु ने वह शूल लवण को दे दिया (७. ६१, १४–२०)।"

मधुमत्त, एक हास्यकार का नाम है जो श्रीराम का मनोरञ्जन करता था (७. ४३, २)।

मधुमन्त, राजा दण्ड की राजधानी का नाम है (७. ७९, १७–१८)।

मधुरा, एक नगरी का नाम है जिसे मधुपुत्र लवणासुर के मारे जाने के पश्चात् शूरसेन-जनपद में शत्रुघ्न ने बसाया था। इसे बसने में १२ वर्ष लगे। यह यमुना के पट पर अर्धचन्द्राकार बसी और अनेकानेक सुन्दर गृहों, चौराहों, बाजारों तथा गलियों से सुशोभित थी। इसमें चारों वर्णों के लोग निवास करते थे तथा विभिन्न प्रकार के वाणिज्य-व्यवसाय इस पुरी की शोभा बढ़ाते थे। यह शीघ्र ही समृद्धिशालिनी हो गई (७. ७०, ५–१४)।

मधुवन—सुग्रीव के इस वन की उनके मामा, दधिमुख नामक वानर, रक्षा करते थे। सीता की खोज के लिये यहाँ गये हुये वानरों ने इस वन को देखकर दधिमुख से इसके मधु का पान करने की अनुमति माँगी (५. ६१, ७–१२)।

मधु-स्पन्द, विश्वामित्र के 'सत्यधर्मपरायण' पुत्र का नाम है जिनका जन्म उस समय हुआ था जब विश्वामित्र तपस्या कर रहे थे (१. ५७, ३–४)। त्रिशङ्कु के लिये यज्ञ की व्यवस्था करने की विश्वामित्र ने इन्हें आज्ञा दी (१. ५९, ६)। इन्होंने बलि के लिये शुनःशेफ का स्थान लेना अस्वीकार कर दिया जिसपर विश्वामित्र ने इन्हें वसिष्ठ के पुत्रों की भाँति कुत्ते का मांस खानेवाली मुष्टिक आदि जातियों में जन्म लेकर एक सहस्र वर्ष तक पृथिवी पर रहने का शाप दे दिया (१. ६२, ८–१७)।

१. मनु, एक प्रजापति का नाम है जो विवस्वान् के पुत्र और इक्ष्वाकु के पिता थे (१. ७०, २०–२१)। श्रीराम ने उस भूमि को देखा जो इन्होंने इक्ष्वाकु को दी थी (२. ४९, १२)। इन्होंने अयोध्या की स्थापना की (२. ७१, १७)। वालिन् के प्रति अपने व्यवहार का औचित्य सिद्ध करने के लिये श्रीराम ने इनकी संहिता का उल्लेख किया (४. १८, ३२)। 'पुरा कृतयुगे राम मनुर्दण्डधरः प्रभुः', (७. ७९, ५)। अपने पुत्र को राज्यसिंहासन देने के पश्चात् इन्होंने उन्हें प्रजाजनों को दण्ड देने में विशेष सतर्क रहने का आदेश देते हुये स्वयं स्वर्गलोक के लिये प्रस्थान किया (७. ७९, ५–११)।

२. मनु, दक्ष की एक पुत्री का नाम है जो कश्यप को विवाहित थी (३. १४, १०–११)। इसने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, तथा शूद्र जातिवाले मनुष्यों को जन्म दिया (३. १४, २९)।

मन्त्रपाल, भरत के एक मंत्री का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनके स्वागत के लिये नगर ने बाहर आये (६. १२७, ११)।

१. मन्थरा, विरोचन की पुत्री का नाम है। जब इसने पृथिवी का नाश करने की इच्छा की तब इन्द्र ने इसका वध कर दिया (१. २५, २०)।

२. मन्थरा, एक दासी का नाम है जिसे कैकेयी ने अपने पिता से प्राप्त किया था। इसने राज-प्रासाद के ऊपर चढ़कर श्रीराम के अभिषेक के लिये नगर में हो रहे उत्सवों तथा आयोजनों को देखा (२. ७, १–६)। श्रीराम की धाय से जब इसको यह ज्ञात हुआ कि दूसरे दिन ही श्रीराम का युवराज के पद पर अभिषेक होनेवाला है तब यह क्रोध में भर कर छत से नीचे उतरी और सीधे कैकेयी के कक्ष में गई (२. ७, १२–१३)। "इसने कैकेयी से कहा : 'तू क्या सो रही है ? तुझ पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा है, फिर भी तुझे अपनी इस दुरवस्था का बोध नहीं है। तेरे प्रियतम तेरे सामने ऐसा आकार बनाते हैं मानो समस्त सौभाग्य तुझे ही अर्पित कर देते हों, परन्तु तेरे पीछे वे तेरा अनिष्ट ही करते हैं। जैसे ग्रीष्मऋतु में नदी का प्रवाह सूख जाता है उसी प्रकार तेरा सौभाग्य भी समाप्त होनेवाला है।' (२. ७, १४--१५)।" कैकेयी के पूछने पर इसने राम को युवराजपद पर अभिषिक्त करने के दशरथ के विचार को पक्षपातपूर्ण बताते हुये कैकेयी को अपने पुत्र के अधिकारों के प्रति जागरूक होने के लिये उकसाने का प्रयास किया (२. ७, १९--३०)। क्रोध में आकर इसने कैकेयी द्वारा प्रदत्त आभूषणों आदि को फेंक दिया (२. ८, १)। "इसने कैकेयी से कहा : 'तुम अपनी सौत के पुत्र की समृद्धि को देखकर भी चुप हो। ऐसी स्थिति सौतेली माँ के लिये साक्षात् मृत्यु के समान है। इस राज्य पर भरत और राम दोनों का समान अधिकार है। राम

तुम्हारे पुत्र के प्रति जो क्रूरतापूर्ण व्यवहार करेंगे उसे सोचकर मैं भय से काँप उठती हूँ। कौसल्या भूमण्डल का निष्कण्टक राज्य-पद पाकर प्रसन्न होंगी और तुम्हें दासी के रूप में उनके निकट उपस्थित रहना होगा। भरत को भी श्रीराम की सेवा करनी होगी और इस प्रकार उनके प्रभुत्व के नाश होने से तुम्हारी वधुयें शोकमग्न हो जायेंगी।' (२. ८, २–१२)।" कैकेयी के यह बताने पर कि राम ही सिंहासन के वास्तविक अधिकारी हैं और राम की राज्य-प्राप्ति के सौ वर्ष के पश्चात् भरत को निश्चित रूप से राज्य मिलेगा ही, इसने कहा कि राजा हो जाने पर राम अपने मार्ग से भरत के कण्टक को समाप्त कर देना चाहेंगे, अतः कैकेयी को चाहिये कि वह श्रीराम के निर्वासन की योजना बनाये (२. ८, १३–३९)। कैकेयी के पूछने पर इसने उससे अपने परामर्शों पर ध्यान देने के लिये कहा (२. ९, ५–७)। "इसने कैकेयी को देवासुर-संग्राम में इन्द्र के मित्र के रूप में शम्बर से युद्ध करते समय दशरथ की प्राण रक्षा करने के कारण उनके द्वारा दो वर देने के वचन का स्मरण कराया। इसने कैकेयी से कहा कि वह दशरथ से उसी वचन को पूरा करने का आग्रह करते हुये उनसे एक वर के अन्तर्गत श्रीराम को चौदह वर्ष का वनवास और दूसरे के अन्तर्गत भरत को राज्य माँगे। इस अभीष्टसिद्धि के लिये उसने कैकेयी को यह परामर्श दिया कि वह मैले वस्त्र-धारण करके क्रोधागार में चली जाय क्योंकि दशरथ अपना प्राण देकर भी उसे प्रसन्न करना चाहेंगे। इसने अन्य किसी प्रकार का प्रलोभन स्वीकार न करने के लिये भी कहा (२. ९, ११–३६)।" कैकेयी ने जब इसके परामर्श को स्वीकार कर लिया तब इसने उससे शीघ्रता करने के लिये कहा (२. ९, ५४)। "इसने कैकेयी से कहा कि यदि राम राज्य प्राप्त कर लेंगे तो यह भरत और उसके लिये अत्यन्त सन्ताप का विषय होगा। अतः इसने भरत को राज्य दिलाने के लिये हर प्रकार का प्रयत्न करने के लिये कैकेयी को परामर्श दिया (२. ९. ६०–६१)।" इसकी बातों को स्वीकार करके कैकेयी ने इससे अपना सारा मन्तव्य बता दिया (२. १०, २)। कैकेयी की योजना को सुनकर यह ऐसी प्रसन्न हुई मानो समस्त कार्य सिद्ध हो गया (२. १०, ४–५)। यह समस्त आभूषणों से विभूषित हो राजभवन से पूर्वद्वार पर खड़ी हो गई (२. ७८, ५–७)। द्वारपालों ने इसे पकड़ लिया और घसीटते हुये शत्रुघ्न के पास लाकर कहा कि वे इसके साथ यथोचित व्यवहार करें (२. ७८, ८–९)। शत्रुघ्न ने इसको बलपूर्वक पकड़ लिया जिससे भयभीत होकर यह आर्तनाद करने लगी (२. ७८, १२)। शत्रुघ्न ने इसे भूमि पर पटक कर घसीटा जिससे यह ज़ोर-ज़ोर से चीत्कार करने लगी (२. ७८, १६)। जब शत्रुघ्न इसे घसीट रहे थे तो उस समय इसके विविध आभूषण

टूट-टूटकर बिखरने लगे (२. ७८, १७)। भरत के कहने पर शत्रुघ्न ने इसे छोड़ा (२. ७८, २४)। यह कैकेयी के पैरों पर गिर कर घोर विलाप करने लगी (२. ७८, २५)। कैकेयी ने इसे सान्त्वना दी (२. ७८, २६)। चित्रकूट में श्रीराम के पास आकर समस्त पुरवासियों के नेत्र आँसुओं से भीग गये और वे मन्थरा सहित कैकेयी की निन्दा करने लगे (२. १०३, ४६)।

१. मन्दाकिनी, एक नदी का नाम है जो चित्रकूट पर्वत के उत्तर में स्थित थी (२. ९२. ११)। श्रीराम ने इसकी तटवर्ती शोभा का सीता से वर्णन किया (२. ९५, ३–११)। भरत इसके तट पर पहुँचे (२. ९९, १४)। 'नदीं मन्दाकिनीं रायां सदा पुष्पितकाननाम् ॥ शीघ्रस्रोतसमासाद्य तीर्थं शिवमकर्दमम् ।', (२. १०३, २४–२५)। श्रीराम और लक्ष्मण ने इसके जल में प्रवेश करके अपने पिता को जल और तदनन्तर इसके तट पर आकर इङ्गुदी का पिण्ड दिया (२. १०३, २५–२९)। राम से विदा लेकर भरत चित्रकूट की परिक्रमा करते हुये रमणीक मन्दाकिनी नदी को पार करके पूर्व दिशा की ओर प्रस्थित हुये (२. ११३, ३)। इसकी धारा की विपरीत दिशा में कुछ और ऊपर महर्षि सुतीक्ष्ण का आश्रम था (३. ५, ३६)। इसके तट पर निवास करनेवाले ऋषियों को राक्षस गण अत्यन्त त्रस्त किया करते थे (३. ६, १७)।

२. मन्दाकिनी, एक सुरम्य और उत्तम नदी का नाम है जो कैलास पर्वत पर स्थित थी। इसका जल सुवर्ण-कमलों तथा अन्य सुगन्धित पुष्पों से व्याप्त, तथा तट गन्धर्वों और देवों इत्यादि से सेवित था (७. ११, ४१–४४)।

मन्दार, एक पर्वत का नाम है जिसे सागर-मन्थन के समय मथनी बनाया गया था (१. ४५, १८)। मन्थन के समय यह पर्वत पाताल में प्रवेश कर गया (१. ४५, २७)। कच्छप के रूप में विष्णु ने इसे धारण किया (१. ४५, २९–३०)। सुग्रीव ने हनुमान् से इस पर्वत पर निवास करनेवाले वानरों को भी आमन्त्रित करने के लिये कहा (४. ३७, २)। सुग्रीव ने विनत से इस पर्वत के शिखर पर स्थित ग्रामों में सीता की खोज करने के लिये कहा (४. ४०, २४)। प्रमाथी नामक वानर-यूथपति इस पर्वत पर निवास करता था (६. २७, २७. ३०)।

मन्देह, एक राक्षस वर्ग का नाम है जो लोहित सागर में निवास करते थे। प्रतिदिन सूर्योदय के समय ये राक्षस ऊर्ध्वमुख होकर सूर्य से जूझने लगते थे; परन्तु सूर्य-मण्डल के ताप से सन्तप्त तथा ब्रह्मतेज से निहत हो समुद्र के जल में गिर पड़ते थे। तदनन्तर वहाँ से पुनः जीवित होकर शैल-शिखरों पर लटक जाते थे। इनका बारम्बार यही क्रम चला करता था (४. ४०, ३९–४०)।

मन्दोदरी, रावण की रूप-सम्पन्ना महिषी का नाम है जिसे हनुमान् ने सोते देखा (५. १०, ५०)। 'मुक्तामणिसमायुक्तैर्भूषणैः सुभूषिताम्। विभूषयन्तीमिव च स्वश्रिया भवनोत्तमम् ॥', (५. १०, ५१)। गौरीं कनकवर्णाभामिष्टामन्तः पुरेश्वरीम्। कपिर्मन्दोदरीं तत्र शयानां चारुरूपिणीम् ॥', (५. १०, ५२)। 'रूपयौवनसंपदा', (५. १०, ५३)। यह मय की पुत्री थी (६. ७, ७)। इसने युद्ध भूमि में अपने पति की मृत्यु पर विलाप किया (६. १११, १–९०)। इसके पिता ने रावण के साथ इसका विवाह किया (७. १२, १६–२३)। इसने मेघनाद को जन्म दिया (७. १२, २८)।

मय—रावण ने सीता का हरण करने के पश्चात् लंका लाकर उन्हें अपने अन्तःपुर में इस प्रकार रख दिया मानो मयासुर ने मूर्त्तिमती आसुरी माया को वहाँ स्थापित कर दिया हो (३. ५४, १३)। इसने मैनाक पर्वत पर अपना भवन बनाया (४. ४३, ३०)। 'मयो नाम महातेजा मायावी वानरर्षभ। तेनेदं निर्मितं सर्वं मायया काञ्चनं वरम् ॥,' (४. ५१, १०)। 'पुरा दानवमुख्यानां विश्वकर्मा वभूवह। येनेदं काञ्चनं दिव्यं निर्मितं भवनोत्तमम्॥,' (४. ५१, ११)। "इसने एक सहस्र वर्ष तक वन में घोर तपस्या करके ब्रह्मा से वरदान के रूप में शुक्राचार्य का समस्त शिल्प-वैभव प्राप्त कर लिया था। सम्पूर्ण कामनाओं के स्वामी, इस वलवान् असुर ने, ऋक्षबिल के क्षेत्र में स्थित समस्त वस्तुओं का निर्माण करके उस महान वन में कुछ कालतक सुखपूर्वक निवास किया था। आगे चलकर इस दानव का हेमा नामक अप्सरा के साथ सम्पर्क हो गया जिसके कारण देवेश्वर इन्द्र ने अपने वज्र के द्वारा इसका वध कर दिया (४. ५१, १०–१४)।" इसने रावण से भयभीत होकर उसे मित्र बना लेने की इच्छा करते हुए अपनी पुत्री को उसे समर्पित कर दिया (६. ७, ७)। "एक दिन रावण जब वन में भ्रमण कर रहा था तो उसने मयासुर तथा उसकी पुत्री मन्दोदरी को देखा (७. १२, ३–४)।" "रावण के पूछने पर इसने वताया कि बहुत दिन तक हेमा पर आसक्त होकर उसके पास रहने के पश्चात् एक दिन वह स्वर्गलोक चली गई और चौदह वर्ष व्यतीत होने पर भी लौटी नहीं। इसने यह भी वताया कि उसकी पुत्री मन्दोदरी उसी हेमा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी जिसके लिए वह अब उपयुक्त वर की चिन्ता कर रहा है। तदनन्तर इसने रावण से उसका परिचय पूछा (७. १२, ५–१४)। रावण का परिचय प्राप्त करने के पश्चात् इसने मन्दोदरी का उसके साथ विवाह कर दिया (७. १२, १६–१९)।

मरीचि, ब्रह्मा के पुत्र और कश्यप के पिता का नाम है (१. ७०, १९)। यह एक प्रजापति थे जो स्थाणु के बाद हुए थे (३. १४, ८)।

१. मरु, शीघ्रग के पुत्र और प्रशुश्रुक के पिता का नाम है (१. ७०,४१)।

२. मरु, हर्यश्व के पुत्र और प्रतीन्धक के पिता का नाम है (१. ७१, ९)।

मरुत्त, एक राजा का नाम है जिसे उशीर देश में देवताओं के साथ यज्ञ करते हुये रावण ने देखा (७. १८, २)। मरुत्त के पास पहुँच कर रावण ने इनसे युद्ध करने अथवा अधीनता स्वीकार कर लेने के लिये कहा (७. १८, ६–७) जिसे सुनकर मरुत्त ने रावण से उसका परिचय पूछा (७. १८, ८)। रावण की चुनौती को स्वीकार करके जब ये रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये तैयार हुये तब संवर्त्त ने यज्ञ की दीक्षा ले चुकने के कारण इन्हें युद्ध से विरत कर दिया (७. १८, ११–१७)। “ये संवर्त्त के शिष्य थे। इन्होंने इला को पुरुषत्व-प्राप्ति के निमित्त बुध के आश्रम के निकट अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया (७. ९०, १४–१५)।

मरुद्गण—जब महादेव मरुद्गणों के साथ सरयू-गंगासंगम पर जा रहे थे तब काम ने उन पर आक्रमण किया (१. २३, ११)। बलि ने इन्हें विजित कर लिया था (१. २९, ४)। कुमार कार्त्तिकेय को दूध पिलाने के लिए इन्होंने छहों कृत्तिकाओं को नियुक्त किया (१. ३७, २४)। राजा भगीरथ के ब्रह्माजी से वर प्राप्त करने के पश्चात् ये भी भगीरथ के साथ स्वर्गलोक को चले गये (१. ४२, २६)। अदिति ने इन्द्र से यह वर माँगा कि उसके गर्भस्थ शिशु के सात खण्ड सात व्यक्ति होकर सातों मरुद्गणों के स्थानों का पालन करनेवाले हो जाँय, और इन्द्र ने इसे स्वीकार किया (१. ४७, ३–८)। इन्होंने कव्यवाहन आदि पितृदेवताओं के पास जाकर इन्द्र को अण्डकोश से युक्त करने की प्रार्थना की (१. ४९, ५)। राम के वनगमन के समय उनकी रक्षा करने के लिए कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया था (२. २५, ८)। ये सांयकाल मेरु पर्वत पर आकर सूर्यदेव का उपस्थापन करते थे (४. ४२, ३९)। इन्होंने श्रीराम के राज्याभिषेक के समय आकाश में स्थित होकर स्तवन की मधुर ध्वनि का श्रवण किया (६. १२८, ३०)। इन्द्र की आज्ञानुसार (७. २७, ४) ये रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिए सन्नद्ध हो गये (७. २७, ५)। ये युद्ध के लिए तैयार होकर अमरावती पुरी से बाहर निकले (७. २७, २२)। ये रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये इन्द्र के साथ हो लिये (७. २८, २७)। इन्होंने राक्षस-सेना का संहार किया (७. २८, ३७. ४१)। सीता के शपथ-ग्रहण के समय ये भी राम की सभा में उपस्थित हुए (७. ९७, ८)। इन्होंने विष्णुरूप में स्थित हुये श्रीराम की पूजा की (७. ११०, १३)।

मलद—“जब पूर्वकाल में वृत्रासुर का वध करने के पश्चात् इन्द्र मल से लिप्त हो गये तब देवताओं ने गंगा-जल से भरे हुये कलशों द्वारा स्नान कराकर

यहीं उनका मल (और कारुष-क्षुधा) छुड़ाया जिससे यह जनपद मलद नाम से प्रसिद्ध हुआ (१. २४, १८–२३)।" "यह जनपद दीर्घकाल तक समृद्धिशाली, और धन-धान्य से सम्पन्न रहा। कुछ समय के अनन्तर इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली यक्षिणी ताटका और उसके पुत्र मारीच ने आकर यहाँ की प्रजा को त्रास पहुँचाना आरम्भ किया (१. २४, २४–२७)। विश्वामित्र ने श्रीराम को बताया कि यह देश अत्यन्त रमणीय है तो भी इस समय कोई यहाँ आ नहीं सकता (१. २४, ३१)।

मलय, एक पर्वत का नाम है जहाँ हनुमान् का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, २८)। भरद्वाज के आश्रम में इस पर्वत का स्पर्श करके बहनेवाली वायु धीरे-धीरे बही (२. ९१, २४)। पर्वतराज ऋष्यमूक पर श्रीराम और लक्ष्मण के पधारने से भयभीत होकर अपने साथियों सहित सुग्रीव इस पर्वत पर चले आये (४. २, १४)। ऋष्यमूक पर्वत के एक शिखर का नाम है (४. ५, १)। इस पर्वत के सभी स्थानों में सुन्दर चन्दन के वृक्ष हैं; यहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १४)। अगस्त्य ऋषि इसके समीप निवास करते थे (४. ४१, १५–१६)। हनुमान् ने इसका दर्शन किया (५. १)। वानर सेना के साथ श्रीराम ने इसके विचित्र काननों, नदियों, तथा झरनों की शोभा देखते हुये यात्रा की (६. ४, ७३)।

महा-कपाल, दूषण के एक सेनापति का नाम है जो राम के विरुद्ध युद्ध करने के लिये आया था (३. २३, ३४)। दूषण की मृत्यु के पश्चात् सेना के आगे चलने वाले महाकपाल ने एक विशाल शूल से श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, १७–१८)। श्रीराम ने इसका सिर एवं कपाल काट दिया (३. २६, २०)।

महा-ग्राम—सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को कोशल, विदेह, मालव, काशी आदि देशों के महाग्रामों में भेजा (४. ४, २२)।

महादेव—स्थाणु—ने सरयू और गङ्गा के संगम-क्षेत्र में घोर तपस्या की (१. २३, १०)। एक दिन जब ये समाधि से उठकर मरुद्गणों के साथ कहीं जा रहे थे तो कान्दर्प ने इनके मन को विचलित करने का प्रयास किया जिस पर क्रुद्ध होकर इन्होंने उसे (कन्दर्प को) भस्म कर दिया (१. २३, ११–१३)। 'पुरा राम कृतोद्वाहः शितिकण्ठो महातपाः। दृष्ट्वा च भगवान्देवीं मैथुनायोपचक्रमे ॥ तस्य संक्रीडमानस्य महादेवस्य धीमतः। शितिकण्ठस्य देवस्य दिव्यं वर्षशतं गतम् ॥', (१. ३६, ६–७)। जब देवी उमा के साथ क्रीड़ा करते इनको सौ वर्ष व्यतीत हो गये किन्तु कोई पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ

तब देवों ने चिन्तित होकर इनसे निवेदन किया कि त्रिलोकी के हित के लिये ये अपने तेज को स्वयं अपने में ही धारण करें (१. ३६, ७–१२)। 'सर्वलोक महेश्वरः', (१. ३६ १३)। देवताओं के अनुरोध को स्वीकार करते हुये इन्होंने कहा कि समस्त लोकों के शान्ति-लाभ के लिये उमा सहित ये अपने तेज से ही तेज को धारण कर लेंगे (१. ३६, १४)। इन्होंने देवों से पूछा कि यदि इनका तेज स्खलित हो जाय तो उसे कौन धारण करेगा (१. ३६ १५)। जब देवों ने इस कार्य के लिये पृथिवी का नाम बताया तो इन्होंने अपने तेज को छोड़ दिया, जिससे पर्वत और वनों-सहित यह सम्पूर्ण पृथिवी व्याप्त हो गई (१. ३६, १६–१७)। "देवताओं के अनुरोध करने पर उस तेज को अग्नि ने अपने भीतर रख लिया। इस प्रकार अग्नि से व्याप्त होकर वह तेज श्वेत पर्वत के रूप में परिणत हो गया और वहीं सरकण्डों का वन भी प्रकट हुआ जो सूर्य के समान तेजस्वी प्रतीत होता था। इसी वन में अग्नि-जनित महातेजस्वी कार्तिकेय का प्रादुर्भाव हुआ। तदनन्तर ऋषि-सहित देवताओं ने अत्यन्त प्रसन्न हो उमा देवी और महादेव का पूजन किया (१. ३६, १८–२०)।" उमा के शाप से देवों और पृथिवी को पीड़ित देखकर ये उमा के साथ उत्तर में स्थित हिमालय पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगे (१. ३६, २५–२६)। 'शंकरः', (१. ३९, ४)। ब्रह्मा ने भगीरथ से कहा कि वे स्वर्ग से गङ्गा के गिरने के वेग को धारण करने के लिये महादेव को प्रसन्न करें क्योंकि अन्य किसी में इसकी सामर्थ्य नहीं जो गङ्गा के वेग को रोक सके (१. ४२, २४–२५)। 'अथ संवत्सरे पूर्णे सर्वलोकनमस्कृतः। उमापतिः पशुपती राजानमिदमब्रवीत् ॥', (१. ४३, २)। भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उन्हें गङ्गा को धारण करने का वचन दिया (१. ४३, २–३)। "स्वर्ग से पृथिवी पर आने के समय गंगा ने यह विचार किया कि वे अपने वेग से शंकर को लिये-दिये पाताल में प्रवेश कर जायँगी, परन्तु इन्होंने उनके इस अभिप्राय को जान कर उन्हें अपने जटा-जाल में ही वर्षों तक उलझा रक्खा। इनके जटामण्डल में गङ्गा को इस प्रकार अदृश्य देखकर भगीरथ ने इन्हें प्रसन्न करने के लिये पुनः तपस्या की जिस पर प्रसन्न होकर इन्होंने गङ्गा को बिन्दु सरोवर में छोड़ दिया (१. ४३, ४–१०)।" सागर मन्थन के समय वासुकि नाग के विष से प्रकट हलाहल को देवों और विष्णु के आग्रह पर इन्होंने ग्रहण किया (१. ४५, २१–२५)। ये तपस्या कर रहे विश्वामित्र के समक्ष प्रकट हुये (१. ५५, १३)। इन्होंने विश्वामित्र को उनके मनोनुकूल वर दिया (१. ५५, १८)। दक्ष-यज्ञ के विध्वंस के समय इन्होंने अपने महान धनुष को उठाकर उससे देवों का मस्तक काट देने की धमकी दी, जिस पर देवों ने इनकी स्तुति

करके इन्हें प्रसन्न और इन से इनका धनुष भी प्राप्त किया (१. ६६, ९–१२)। त्रिपुरासुर का वध करने के लिये देवों ने इन्हें एक महान शैव धनुष दिया (१. ७५, १२)। "एक बार देवों ने ब्रह्मा से पूछा कि शिव और विष्णु में से कौन अधिक बलशाली है। इस पर दोनों के बलाबल का परीक्षण करने के लिये ब्रह्मा ने इनमें (शिव और विष्णु में) विरोध उत्पन्न कर दिया। परिणाम-स्वरूप दोनों में भयंकर युद्ध हुआ। उस समय विष्णु ने अपनी हुङ्कार से शिव के धनुष को शिथिल करके उन्हें भी स्तम्भित कर दिया। शिव के धनुष को शिथिल हुआ देख कर देवों ने विष्णु को श्रेष्ठ माना। तदनन्तर कुपित हुए रुद्र ने बाण सहित अपने उस धनुष को विदेहराज देवरात को दे दिया (१. ७५, १४–२०)।" कौसल्या ने बताया कि वे अन्य देवों सहित शिव का भी सदैव पूजन करती हैं (२. २५, ४३)। गङ्गा इनके जटाजूट में उलझी रहीं (२. ५०, २५)। श्रीराम ने चित्रकूट में इनका भी पूजन किया (२. ५६, ३१)। इन्होंने श्वेतवन में अन्धकासुर को जलाकर भस्म कर दिया (३. ३०, २७)। इन्होंने कामदेव को भस्म कर दिया था (३. ५६, १०)। इनके द्वारा त्रिपुरासुर के वध का उल्लेख (३. ६४, ७२)। पूर्वकाल में इन्होंने हिमालय पर्वत पर स्थित एक विशाल-वृक्ष के नीचे यज्ञ किया था (४. ३७, २८)। ये उत्तर के सोमगिरि पर निवास करते थे (४. ४३, ५५)। इन्होंने त्रिपुरासुर का वध किया था (५. ५४, ३१)। इन्होंने अन्धकासुर के साथ युद्ध किया था (६. ४३, ६)। देवताओं के स्तुति करने पर इन्होंने उन्हें आश्वासन दिया कि राक्षसों के विनाश के लिए एक दिव्य नारी का आविर्भाव होगा (६. ९४, ३४–३५)। सीता का अनादर करने पर इन्होंने राम के सम्मुख उपस्थित हो उन्हें समझाया (६. ११७, २–८)। जब श्रीराम ने सीता को ग्रहण कर लिया तब इन्होंने उन्हें अयोध्या लौट कर इक्ष्वाकुवंश का प्रवर्तन तथा अश्वमेघ यज्ञ करने का परामर्श देते हुए इन्द्रलोक से आये राजा दशरथ को दिखाया (६. ११९, १–८)। "एक समय जब ये बैल पर आरूढ़ होकर पार्वती के साथ आकाश-मार्ग से जा रहे थे तो सालकटङ्कटा के बालक, सुकेश, के रोने की आवाज सुना। उस समय पार्वती की प्रेरणा से उस बालक पर दया करते हुए इन्होंने उसे आयु में युवा बना दिया। इतना ही नहीं, उसे अमरत्व प्रदान करते हुए निवास के लिए आकाशचारी नगाराकार एक विमान भी दिया (७. ४, २७–३०)।" सुकेश आदि राक्षसों से त्रस्त होकर देवता उन महादेव की शरण में गये जो जगत की सृष्टि और संहार करनेवाले, अजन्मा, अव्यक्त, सम्पूर्ण जगत् के आधार, आराध्य देव, परम गुरु, कामनाशक, त्रिपुरविनाशक, प्रजाध्यक्ष और त्रिनेत्रधारी हैं (७. ६, १–४)। 'कपर्दी नीललोहितः,' (७. ६, ९)। देवों की स्तुति पर

इन्होंने माल्यवान् का वध करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुये उन लोगों को विष्णु की शरण में जाने के लिए कहा (७, ६, ९–१२) कुवेर की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उन्हें अपना घनिष्ठ मित्र वना लिया (७. १३, २६–३१)। जब रावण ने उस पर्वत को उठाने का प्रयास किया जिस पर ये क्रीड़ा करते थे, तो इन्होंने उस पर्वत को अपने पैर के अंगूठे से दवा दिया जिससे रावण की भुजायें उसी पर्वत के नीचे दब गईं (७. १६, २५–२८)। "रावण की स्तुतियों से प्रसन्न होकर इन्होंने उसकी भुजाओं को मुक्त करते हुए उससे कहा : 'तुमने पर्वत से दब जाने के कारण जो अत्यन्त भयानक आर्तनाद (राव) किया था इसलिये तुम 'रावण' के नाम से प्रसिद्ध होगे। अब तुम जिस मार्ग से जाना चाहो, निर्भय होकर जा सकते हो।' तदनन्तर रावण की प्रार्थना को स्वीकार करते हुये इन्होंने उसे चन्द्रहास नामक खड्ग और उसकी आयु के व्यतीत अंश को भी पुनः प्रदान कर दिया। (७. १६, ३२–४४)। "ब्रह्मा के कहने पर इन्होंने हनुमान् को अपने आयुधों से अवध्य होने का वरदान दिया (७. ३६, १८)। मधु की तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उसे एक शूल देते हुए कहा कि जब तक वह (मधु) ब्राह्मणों और देवताओं से विरोध नहीं करेगा तव तक ही वह शूल उसके पास रहेगा (७. ६१, ५–१०)। मधु के इस अनुरोध पर कि वह शूल उसके वंशजों के पास भी रहे, इन्होंने उसके पुत्र, लवणासुर, के पास तक ही शूल को रहने देना स्वीकार किया (७. ६१, ११–१६)। "जिस स्थान पर कार्तिकेय का जन्म हुआ था वहाँ ये स्त्रीरूप में रहकर उमा का मनोरञ्जन करते थे। अन्य जो कोई भी उस स्थान पर आता था, स्त्री-रूप में परिणत हो जाता था (७. ८७, ११–१४)।" राजा इल उस क्षेत्र में अपने को स्त्री-रूप में परिणत हुआ देख कर इनकी शरण में गये, परन्तु इन्होंने उन्हें पुरुषत्व के अतिरिक्त ही अन्य कोई वर माँगने के लिए कहा (७. ८७, १६–१९)। "इल के लिए मरुत्त द्वारा किये गये अश्वमेध से प्रसन्न होकर इन्होंने ऋषियों से राजा इल की सहायता करने का उपाय पूछा। तदन्तर ऋषियों के अनुरोध पर इन्होंने राजा को पुनः पुरुषत्व प्रदान किया (७. ९०, १३–२०)।"

महानदी, दक्षिण दिशा की एक नदी का नाम है, जहाँ सुग्रीव ने अङ्गद को सीता की खोज के लिये भेजा था (४. ४१, ९)।

महानाद, प्रहस्त के एक सचिव का नाम है जिसने अपने स्वामी के साथ युद्ध के लिये प्रस्थान किया (६. ५७ ३१)। इसने निर्दयतापूर्वक वानरों का वध किया (६. ५८, १९)। जाम्बवान् ने इसका वध कर दिया (६. ५८, २२)।

महापद्म, अपने मस्तक पर पृथिवी को धारण करनेवाले दक्षिण दिशा के एक दिग्गज का नाम है जिसकी, भूमि का भेदन करते हुये सगर-पुत्रों ने, दर्शन करके प्रदक्षिणा की (१. ४०, १७–१८)।

महापार्श्व, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन का हनुमान् ने दर्शन किया (५. ६, १७)। हनुमान् ने इसको रावण के सिंहासन के समीप स्थित देखा (५. ४९, ११)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, ९)। यह रावण की राजसभा में कवचों से सुसज्जित होकर राम आदि का वध करने के लिये सन्नद्ध खड़ा था (६. ९, १)। 'महापार्श्वो महाबलः', (६. १३, १)। इसने रावण को सीता पर बलात्कार करने के लिये उकसाया (६. १३, १–८)। इसे लंका के दक्षिण-द्वार की रक्षा के लिये नियुक्त किया गया (६. ३६, १७)। राम के वाणों से आहत होकर इसने युद्धभूमि से पलायन किया (६. ४४, २०)। कुम्भकर्ण के वध पर इसने शोक प्रगट किया (६. ६८, ८)। यह छः अन्य महाबली राक्षसों के साथ राम के विरुद्ध युद्ध करने के लिये गया (६. ६९, १९)। यह हाथ में गदा लेकर युद्धस्थल में गदाधारी कुवेर के समान शोभित हुआ (६. ६९, ३२)। रावण की आज्ञा पर (६. ९५, २१)। इसने सेनापतियों से सेना को शीघ्र ही प्रस्थान करने की आज्ञा देने के लिये कहा (६. ९५, २२)। रावण की आज्ञा प्राप्त करके यह रथारूढ़ हुआ (६. ९५, ३९)। "महोदर के वध से संतप्त होकर इसने वानर-सेना का भयंकर संहार करते हुए गवाक्ष और जाम्बवान् को क्षत-विक्षत कर दिया। अन्ततः अङ्गद के साथ युद्ध करते हुये इसका अङ्गद ने वध कर दिया (६. ९८, १–२२)।" देवों के विरुद्ध युद्ध करते हुये सुमाली का इसने साथ दिया (७. २७, २८)। इसने अर्जुन के साथ युद्ध करते हुये रावण का अनुसरण किया (७. ३२, २२)।

महामाली, खर के एक सेनापति का नाम है जो राम के विरुद्ध युद्ध करने गया था (३. २३, ३३)। खर की आज्ञा से इस महावीर बलाध्यक्ष ने सेना सहित राम पर आक्रमण किया (३. २६, २७–२८)।

महारुण, एक पर्वत का नाम है जहाँ रहनेवाले वानरों को बुलाने के लिये सुग्रीव ने हनुमान् को आज्ञा दी (४. ३७, ७)।

महारोमा, कीर्तिरात के पुत्र और स्वर्णरोमा के पिता, एक राजा, का नाम है (१. ७१, ११–१२)।

महावीर, बृहद्रथ के शूरवीर और प्रतापी पुत्र, तथा सुधृति के पिता का नाम है (१. ७१, ७)।

मही, एक नदी का नाम है जहाँ सुग्रीव ने विनत को सीता की खोज के लिये भेजा था (४. ४०, २१)।

महीध्रक, विबुध के पुत्र और कीर्तिरात के पिता का नाम है (१. ७१, १०–११)।

महेन्द्र, एक पर्वत का नाम है जहाँ परशुराम, कश्यप को पृथिवी का दान करने के पश्चात् आश्रम बनाकर रहते थे (१. ७५, ८. २५–२६)। परशुराम महेन्द्र पर्वत से शिव के धनुष के तोड़े जाने का समाचार सुनकर श्रीराम के पास उनकी शक्ति की परीक्षा लेने आये (१. ७५, २६)। श्रीराम से पराजित होकर परशुराम शीघ्र ही महेन्द्र पर्वत पर चले गये (१. ७६, २२)। यहाँ निवास करनेवाले वानरों को बुलाने के लिये सुग्रीव ने हनुमान् को आज्ञा दी (४. ३७, २)। अगस्त्य ने समुद्र के भीतर इस पर्वत को स्थापित किया (४. ४१, २०)। 'चित्रसानुनगः श्रीमान्महेन्द्रः पर्वतोत्तमः। जातरूपमयः श्रीमानवगाढो महार्णवम् ।। नानाविधैर्नगैः फुल्लैर्लताभिश्चोपशोभितम् । देवर्षियक्षप्रवरैरप्सरोभिश्च सेवितम् ।। सिद्धचारणसङ्घैश्च प्रकीर्णं सुमनोहरम् ।', (४. ४१, २१–२३)। सहस्र नेत्रधारी इन्द्र प्रत्येक पर्व के दिन इस पर्वत पर पदार्पण करते थे (४. ४१, २३)। सुपार्श्व मांस प्राप्त करने की इच्छा से महेन्द्रपर्वत के द्वार को रोक कर खड़ा हो गया (४. ५९, १२)। 'नगस्यास्य शिलासंकटशालिनः', (४. ६७, ३६)। 'येषु वेगं गमिष्यामि महेन्द्रशिखरेष्वहम् । नानाद्रुमविकीर्णेषु धातुनिष्पन्दशोभिषु ।।', (४. ६७, ३७) । 'वृतं नानाविधैः पुष्पैर्मृगसेवितशाद्वलम् । लताकुसुमसंबाधं नित्यपुष्पफलद्रुमम् ।।', (४. ६७, ४०)। 'सिंहशार्दूलसहितं मत्तमातङ्गसेवितम् । मत्तद्विजगणोद्घुष्टं सलिलोत्पीडसंकुलम् ।।', (४. ६७, ४१)। 'नीललोहितमाञ्जिष्ठपद्मवर्णैः सितासितैः। स्वभावसिद्धैर्विमलैर्धातुभिः समलंकृतम् ।। कामरूपिभिराविष्टमभीक्ष्णं सपरिच्छदैः। यक्षकिन्नरगन्धर्वैर्देवकल्पैश्च पन्नगैः ।।', (५. १, ५–६)। हनुमान् इस पर्वत के समतल प्रदेश में, समुद्र के उस पार जाने के लिये, खड़े हुये (५. १, ७)। "जब हनुमान् ने इस पर्वत पर स्थित होकर विकराल रूप धारण किया तो उनके भार से यह पर्वत काँपने लगा और कुछ समय तक डगमगाता रहा। इसके ऊपर जो वृक्ष उगे थे उनकी शाखाओं के अग्रभाग में लगे फूल भी उस समय नीचे गिर गये जिससे आच्छादित होकर यह ऐसा प्रतीत होने लगा मानो पुष्पों का ही बना हो। इस प्रकार, हनुमान् के चरणों से दबकर इस पर्वत के जलस्रोत प्रवाहित होने लगे और बड़ी-बड़ी शिलायें भी टूट कर गिर पड़ीं। उस समय इस पर स्थित समस्त जीव गुफाओं में प्रवेश करके तीव्र आर्त्तनाद करने लगे (५. १, १२–१७)।" लंका से लौटते समय हनुमान् ने

इस पर्वत पर दृष्टि पड़ते ही मेघ के समान बड़े जोर से गर्जना की (५. ५७, १४)। श्रीराम ने इस पर्वत के समीप पहुँचकर भाँति-भाँति के वृक्षों से सुशोभित इसके शिखर पर चढ़कर कछुओं और मत्स्यों से भरे हुये समुद्र को देखा (६. ४, ९५–९६)।

१. महोदय, एक नगर का नाम है जिसे कुश के पुत्र कुशनाभ ने बसाया था (१. ३२, ५)।

२. महोदय—इन्होंने त्रिशङ्कु के यज्ञ में सम्मिलित होने के लिये विश्वामित्र के निमन्त्रण को अस्वीकार कर दिया (१. ५९, ११)। विश्वामित्र ने इन्हें दीर्घकाल तक सब लोगों में निन्दित, दूसरे प्राणियों की हिंसा में तत्पर, और दयाशून्य निषादयोनि को प्राप्त करके दुर्गति भोगने का शाप दे दिया (१. ५९, २०–२१)।

महोदर, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन को हनुमान् ने देखा था (५. ६, १९)। यह रावण की सभा में कवचों से सुसज्जित होकर राम आदि का वध करने के लिये सन्नद्ध खड़ा था (६. ९, १)। रावण का आदेश पाकर इसने शीघ्र ही गुप्तचरों को रावण के समक्ष उपस्थित होने की आज्ञा दी (६. २९, १६)। इसने नगर के दक्षिण द्वार की रक्षा का भार ग्रहण किया (६. ३६, १७)। राम के बाणों से आहत होकर यह युद्धभूमि से भाग गया (६. ४४, २०)। जिसके नेत्र प्रातःकाल उदित हुये सूर्य के समान लाल हैं तथा जिसकी आवाज घण्टे की ध्वनि से भी उत्कृष्ट है, ऐसे क्रूर स्वभाव वाले गजराज पर आरूढ़ होकर जोर-जोर से गर्जना करता हुआ यह महामनस्वी वीर युद्धभूमि में रावण के साथ हो लिया (६. ५९, १७)। 'महोदरो नैर्ऋतयोधमुख्यः', (६. ६०, ८२)। कुम्भकर्ण के बढ़े हुये दोष-रोष से युक्त अहङ्कारपूर्ण वचन सुनकर (६. ६०, ८०–८१) इसने कुम्भकर्ण को बताया कि पहले रावण की बात सुनकर गुण-दोष का विचार करने के पश्चात् ही वह युद्ध में शत्रुओं को परास्त करे (६. ६०, ८२–८३)। राजा के सम्मुख कुम्भकर्ण द्वारा पाण्डित्य प्रदर्शन करने पर इसने उसे फटकारा (६. ६४, १–१०)। कुम्भकर्ण के इस कथन का कि वह अकेले ही युद्धभूमि में जाकर शत्रुओं को पराजित करेगा, इसने उपहास करते हुये उसे मूर्खतापूर्ण बताया (६. ६४, ११–१८)। तदनन्तर इसने रावण को छलपूर्वक सीता को विजित करने का परामर्श दिया (६. ६४, १९–३६)। इसने अपने भ्राता, कुम्भकर्ण, की मृत्यु पर शोक प्रकट किया (६. ६८, ८)। यह एक हाथी पर आरूढ़ हो अतिकाय, त्रिशिरा, और देवान्तक आदि राक्षसों के साथ, युद्ध के लिये पुरी से बाहर निकला (६. ६९, १९–२१)। नरान्तक का वध हो जाने पर, यह हाथी पर

आरूढ़ ही अङ्गद की ओर झपटा (६. ७०, १–२)। "अङ्गद द्वारा फेंके गये वृक्षों को इसने अपने परिघ के अग्रभाग से तोड़ डाला। तदनन्तर इसने एक बाण से अङ्गद के हृदय को भी बींध दिया (६. ७०, ६–१९)। इसने नील से द्वन्द्वयुद्ध किया जिसमें यह गम्भीर रूप से आहत हुआ (६. ७०, २८–३२)। रावण की आज्ञा से यह एक रथ पर आरूढ़ हुआ (६. ९५, ३९)। रावण की आज्ञा का पालन करते हुये इसने वानर-सेना पर आक्रमण कर के उसका भीषण संहार किया, किन्तु अन्त में सुग्रीव ने इसका वध कर दिया (६. ९७, ६–३४)। रावण के अभिनन्दन के लिये सुमाली के साथ यह भी गया (७. ११, २)। कुवेर के विरुद्ध युद्ध करने के लिये यह भी रावण के साथ गया (७. १४, १–२)। इसने यक्षों का भीषण संहार किया (७. १४, १६)। इसने एक सहस्र यक्षों का वध किया (७. १५, ७)। वरुण-पुत्रों के विरुद्ध युद्ध के समय इसने उन सब को रथ-विहीन कर दिया किन्तु स्वयं भी आहत हुआ (७, २३, ३६–४१)। मान्धाता के विरुद्ध युद्ध में इसने भीषण पराक्रम दिखाया (७. २३ग, ३५)। देवों के विरुद्ध युद्ध के लिये यह भी सुमाली के साथ गया (७. २७, २८)। नर्मदा में स्नान करके इसने रावण के लिये पुष्प एकत्र किये (७. ३१, ३४–३६)। अर्जुन के विरुद्ध युद्ध में यह भी रावण के साथ गया (७ ३२, २२)।

माण्डकर्णि—"दण्डक वन में निवास करने वाले एक मुनि का नाम है जिनके तप से अत्यन्त व्यथित होकर अग्नि आदि सब देवताओं ने इनकी तपस्या में विघ्न डालने के लिये पाँच प्रधान अप्सराओं को भेजा। उन अप्सराओं ने देवों का कार्य सिद्ध करने के लिये इन्हें काम के अधीन कर दिया। तदनन्तर तपस्या के प्रभाव से युवावस्था को प्राप्त हुये इन मुनि ने पञ्चाप्सरस सरोवर, जिसका इन्होंने अपने तप के प्रभाव से निर्माण किया था, के अन्दर बने हुये भवन में अप्सराओं के साथ सुखपूर्वक निवास किया (३. ११, ११–१९)।"

माण्डवी, जनक द्वारा भरत को विवाहित कुशध्वज की पुत्री का नाम है (१. ७३, २९)। कौसल्या आदि इन्हें सवारी से उतार कर मंगलगान के साथ राजभवन में ले गईं (१. ७७, ११--१२)। इन्होंने देवमन्दिरों में देवताओं का पूजन करके सास-श्वसुर आदि के चरणों में प्रणाम किया (१. ७७, १३--१४)। इन्होंने अपने पति के साथ एकान्त में अत्यन्त आनन्द के साथ समय व्यतीत किया (१. ७७, १४)।

मातलि, इन्द्र के सारथि का नाम है। इन्होंने इन्द्र की आज्ञानुसार (६. १०२, ६–७) भूतल पर इन्द्र के दिव्यरथ को श्रीराम के समक्ष ले जाकर

उनसे अपने को सारथि के रूप में ग्रहण करने के लिये कहा (६. १०२, ८--१७)। रावण ने इन्हें अपने बाण-समूहों से घायल कर दिया (६. १०२,२९)। श्रीराम की इच्छा के अनुसार (६. १०६, ८--१२) देवताओं के श्रेष्ठ सारथि, मातलि ने अत्यन्त सावधानी के साथ रथ हाँका (६. १०६, १३)। रावण द्वारा छोड़े गये वेगशाली बाण युद्धस्थल में मातलि के शरीर पर पड़कर उन्हें थोड़ा-सा भी व्यथित न कर सके (६. १०७, ४०)। जब श्रीराम रावण के नवीन उत्पन्न सिरों को काटते जाने में सफलता न मिलने के कारण चिन्तित हुये (६. १०७, ५४–६७) तब मातलि ने उनसे ब्रह्मा द्वारा निर्मित ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करने की प्रार्थना की (६. १०८, १–२)। राम की आज्ञा से (६. ११२, ४) ये दिव्यरथ पर आरूढ़ होकर पुनः दिव्यलोक को लौट गये (६. ११२, ५–६)। देवराज इन्द्र की आज्ञा पर (७. २८, २३) ये स्वयं विशाल रथ लेकर उनके सम्मुख उपस्थित हुये (७. २८, २४)। इन्द्रजित् ने इन्हें अपने उत्तम बाणों से घायल कर दिया (७. २९, २४)।

मातङ्गी, क्रोधवशा और कश्यप की पुत्री का नाम है (३. १४, २२)। इसने हाथियों को जन्म दिया (३. १४, २६)।

१. मानस—कैलास पर्वत पर स्थित एक सुन्दर सरोवर का नाम है जिसे ब्रह्मा ने अपने मानसिक संकल्प से प्रगट किया था। मन के द्वारा प्रगट होने से ही यह उत्तम सरोवर 'मानस' कहलाता है (१. २४, ८)। इसी सरोवर से सरयू नदी निकली है (१. २४, ९)।

२. मानस, कैलास पर्वत के समीप स्थित एक पर्वत शिखर का नाम है जहाँ शून्य होने के कारण कभी पक्षी तक नहीं रह जाते। इसके शिखरों और घाटियों में सीता को खोजने के लिये सुग्रीव ने शतबलि को भेजा था (४. ४३, २८–२९)।

मान्धाता, युवनाश्व के पुत्र और सुसन्धि के पिता, एक राजा, का नाम है (१. ७०, २४–२५)। इन्होंने एक श्रमण को पाप करने के कारण कठोर दण्ड दिया (४. १८, ३५)। 'स तु राजा महातेजाः सप्तद्वीपेश्वरो महान्', (७. २३ग, २२)। इन्होंने सोमलोक में रावण के विरुद्ध एक भयंकर युद्ध किया जिसे पुलस्त्य और गालव ने हस्तक्षेप करते हुये रोका (७. २३ग, २६–५६)। ये अयोध्या के राजा थे और इन्होंने सम्पूर्ण पृथिवी को अपने अधिकार में करके देवलोक पर विजय पाने का उद्योग आरम्भ किया (७. ६७, ५–६)। इन्द्र ने मान्धाता से कहा : 'तुम समस्त पृथ्वी को वश में किये बिना ही देवताओं का राज्य कैसे लेना चाहते हो ?' (७. ६७, ७–११)। मान्धाता ने इन्द्र से कहा : 'बताइये इस पृथिवी पर कहाँ मेरे आदेश की

अवहेलना हुई है' (७. ६७, १२)। इन्द्र ने बताया कि मधुवन में मधु का पुत्र लवणासुर उसकी आज्ञा नहीं मानता (७. ६७, १३)। इन्द्र के कथन को सुनकर ये लवणासुर के विरुद्ध युद्ध करने के लिये आगे बढ़े किन्तु लवणासुर ने अपने शूल से सेवक, सेना और सवारियों सहित इनको भस्म कर दिया (७. ६७, १४–२२)।

मायाविन्, दुन्दुभि के पुत्र, एक राक्षस, का नाम है जिसका वालिन् के साथ वैर था (४. ९, ४)। इसने एक दिन अर्धरात्रि के समय वालिन् को युद्ध के लिये ललकारा (४. ९, ५)। यह वालिन् और सुग्रीव को देखकर भयभीत हुआ और भागकर एक विशाल बिल में प्रविष्ट हो गया (४. ९, ९–११)। वालिन् ने इसका समस्त वन्धु-बान्धवों सहित वध कर दिया (४. १०, २०)। ऐसा भी उल्लेख है कि यह मय और हेमा का पुत्र तथा दुन्दुभि का भ्राता था (७. १२, १३)।

१. मारीच, एक राक्षस का नाम है। अपने बन्धु-बान्धवों का श्रीराम के द्वारा वध होने का समाचार सुनकर रावण ने इससे सहायता माँगी (१. १, ४९–५०)। इसने रावण को समझाने का प्रयास किया परन्तु रावण ने इसकी बातों को स्वीकार नहीं किया (१. १, ५१)। फिर भी, यह रावण के साथ श्रीराम के आश्रम में गया और कपटमृग बनकर राम और लक्ष्मण को आश्रम से दूर बुला लिया जिससे रावण सीता का हरण करने में सफल हुआ (१. १, ५२)। वाल्मीकि ने इसकी मृत्यु का पूर्वदर्शन कर लिया था (१, ३, २०)। यह विश्वामित्र की यज्ञवेदी पर रक्त और मांस फेंककर उनके यज्ञ में विघ्न डाला करता था (१. १९, ५–६)। 'वीर्योत्सिक्तः', (१. १९, १२)। यह सुन्द का पुत्र था (१. २०, २७)। यह ताटका के गर्भ से उत्पन्न हुआ था : 'तौ हि यक्षस्य कन्यायां जातौ दैत्यकुलोद्वहौ । मारीचश्च सुबाहुश्च वीर्यवन्तौ सुशिक्षितौ ॥ तयोरन्यतरं योद्धुं यास्यामि ससुहृद्गणः । अन्यथा त्वनुनेष्यामि भवन्तं सहबान्धवः ॥', (१. २०, २७–२८)। 'ताटका नाम भद्रं ते भार्या सुन्दस्य धीमतः । मारीचो राक्षसः पुत्रो यस्याः शक्रपराक्रमः ॥ वृत्तबाहुर्महाशीर्षो विपुलास्यतनुर्महान् । राक्षसो भैरवाकारो नित्यं त्रासयते प्रजाः ॥ इमौ जनपदौ नित्यं विनाशयति राघव । मलदांश्च करूषांश्च ताटका दुष्टचादिणी ॥', (१. २४, २६–२८)। यह अगस्त्य मुनि के शाप से राक्षस हो गया था (१, २५, ५)। सुन्द की मृत्यु होने पर यह अगस्त्य मुनि की ओर झपटा जिस पर क्रुद्ध होकर मुनि ने इसे राक्षस बना दिया (१. २५, १०–१२)। क्रुद्ध होकर यह अगस्त्य के आवास-क्षेत्र का विध्वंस करने लगा (१. २५, १४)। "जब विश्वामित्र यज्ञ कर रहे थे तो इसने आकाश में स्थित

होकर भयंकर शब्द किया। तदनन्तर यह सब ओर अपनी माया फैलाते हुये अपने अनुचरों के साथ विश्वामित्र के यज्ञस्थल पर रक्त की वर्षा करने लगा। उस समय श्रीराम ने इसे आकाश में स्थित देखा (१. ३०, १०–१३)।" राम ने मानवास्त्र से इसकी छाती पर प्रहार किया (१. ३०, १७)। मानवास्त्र के प्रहार से अचेत होकर यह दूर समुद्र में जा गिरा (१, ३०, १७–१९)। इसने रावण का यथोचित सत्कार करते हुये उसके असमय पधारने का कारण पूछा (३. ३१, ३६–३८)। जब रावण ने सीता के हरण के लिये इसकी सहायता माँगी तब इसने नरव्याघ्र श्रीराम का विरोध करने से रावण को विरत करने का प्रयास किया (३. ३१, ४०–४९)। यह समुद्र के उस पार एक सुन्दर आश्रम में निवास करता था (३. ३५, ३७)। 'तत्र कृष्णाजिनधरं जटावल्कलधारिणम्। ददर्श नियताहारं मारीचं नाम राक्षसम्॥', (३. ३५, ३८)। रावण का उचित सत्कार करने के पश्चात् इसने उससे इतने शीघ्र पुनः आने का कारण पूछा (३. ३५, ३९–४१)। 'तत्सहायो भव त्वं मे समर्थो ह्यसि राक्षस। वीर्ये युद्धे च दर्पे च न ह्यस्ति सदृशस्तव॥ उपायतो महाञ्छूरो महामायाविशारदः। एतदर्थमहं प्राप्तस्त्वत्समीपं निशाचर॥', (३. ३६, १५–१६)। 'तस्य रामकथां श्रुत्वा मारीचस्य महात्मनः। शुष्कं समभवद्वक्त्रं परित्रस्तो बभूव च॥', (३. ३६, २२)। रावण के प्रस्ताव से अत्यन्त चिन्तित होकर इसने उसे सत्परामर्श दिया (३. ३६, २२–२४)। "इसने रावण को श्रीराम के गुण और प्रभाव को बताया और उसे सीताहरण के उद्योग से रोकने का प्रयास किया (३. ३७, १०)।" इसने श्रीराम की शक्ति के विषय में अपना अनुभव बताकर रावण को उनके प्रति अपराध करने से विरत करने का प्रयास किया (३,३८)। "अपने गत अनुभवों को, जब इसने दण्डकारण्य में श्रीराम पर आक्रमण किया था, बताते हुये कहा कि उस समय राम ने इसके साथियों का वध कर दिया था और यह किसी प्रकार भाग का अपनी प्राणरक्षा करने में सफल हुआ। इसने कहा कि उसी समय से राम के भय से त्रस्त होकर इसने सन्यास ले लिया क्योंकि इस भय के कारण इसे सर्वत्र श्रीराम खड़े दिखाई देते हैं। तदनन्तर इसने रावण को राम के साथ युद्ध न करने के लिये प्रेरित करते हुये कहा कि यदि शूर्पणखा का प्रतिशोध लेने के लिये खर ने श्रीराम पर आक्रमण किया और उसके फलस्वरूप मारा गया तो इसमें राम का क्या अपराध है (३. ३९)।" पहले तो इसने रावण की उसके कुटिल अभिप्राय के लिये अत्यधिक भर्त्सना की परन्तु बाद में सीताहरण के कार्य में सहायता देना स्वीकार कर लिया (३. ४१; ४२, १–४)। रावण ने इसकी प्रशंसा की (३. ४२, ६–८)। यह रावण के साथ रथ पर बैठकर अनेक देशों से होता

हुआ दण्डकारण्य में श्रीराम के आश्रम के निकट पहुँचा (३. ४२, ९–११)। "रावण के आदेश पर इसने एक सुन्दर सुवर्ण मृग का रूप धारण किया जो देखने में अत्यन्त अद्भुत था : जिसकी सींग के ऊपरी भाग इन्द्र नीलमणि के बने हुये प्रतीत हो रहे थे; जिसके मुखमण्डल पर श्वेत और काले रंग की बूंदें थीं; जिसके खुर वैदूर्यमणि के समान और जिसकी देह-कान्ति अत्यन्त मनोहर थी। इस प्रकार के अद्भुत मृग का रूप धारण करके यह सीता को लुभाने के उद्देश्य से उनके निकट ही विचरने लगा। विविध प्रकार से क्रीड़ा करता हुआ यह अन्य मृगों का भी भक्षण नहीं करता था यद्यपि मारीच मृगों के वध में अत्यन्त प्रवीण था। उस समय पुष्पों को चुनती हुई सीता ने इस रत्नमय मृग को देखा और अत्यन्त स्नेह से इसकी ओर निहारने लगीं (३. ४२, १४–३५)। 'एतेन हि नृशंसेन मारीचेनाकृतात्मना। वने विचरता पूर्व हिंसिता मुनिपुङ्गवाः ॥', (३. ४३, ३९)। "श्रीराम को आते देखकर यह सुवर्ण मृग विभिन्न प्रकार से छिपते और प्रगट होते हुये भागने लगा। यह कभी श्रीराम के अत्यधिक निकट आ जाता था और कभी भय से आकाश में उछल कर दूर चला जाता था। कभी पूरी तरह दृष्टिगत होने लगता था और कभी सघन वन में छिप जाता था (३. ४४, ४–७)।" इस प्रकार प्रगट और अप्रगट होते हुये श्रीराम को आश्रम से बहुत दूर हटा ले गया (३. ४४, ८)। तदनन्तर यह मृगों से घिरा हुआ पुनः प्रगट हुआ जिससे श्रीराम इसे पकड़ने के लिये अत्यन्त उद्विग्न हो गये, परन्तु ज्यों ही राम ने इसे पकड़ने का प्रयास किया यह पुनः भागकर दूर चला गया (३–४४, १०–११)। जब यह पुनः प्रगट हुआ तब श्रीराम ने इसके हृदय को विदीर्ण कर दिया (३. ४४, १५)। वाण के प्रहार से इसने अपने कृत्रिम शरीर का त्याग कर दिया और ताड़ के बराबर उछल कर पुनः पृथिवी पर गिर पड़ा (३. ४४, १६)। मृत्यु के समय इसने अपने कपट रूप का परित्याग करके रावण के आदेशानुसार 'हा सीते, हा लक्ष्मण।' कहकर पुकारा और अपने प्राणों का परित्याग कर दिया (३. ४४, १७–२१)। रावण का अभिनन्दन करने के लिये सुमाली के साथ यह भी गया (७. ११, २)। कुवेर के विरुद्ध युद्ध करने के लिये यह भी रावण के साथ गया (७. १४, १–२)। इसने संयोधकण्टक नामक यक्ष के साथ द्वन्द्व युद्ध करके उसे पराजित किया (७. १४, २१–२३)। इसने २,००० यक्षों का वध किया (७. १५, ८)। जब विमान की गति अवरुद्ध हो जाने पर रावण चकित हुआ तब इसने कहा कि विमान के रुकने का कारण कुवेर का न होना है क्योंकि वह कुवेर का ही वाहन है (७. १६, ६–७)। अनरण्य के विरुद्ध युद्ध में यह उन्हें देखते ही भाग खड़ा हुआ (७. १९, १९)। जब यम को पराजित

करके रावण लौटा तो इसने उसका अभिनन्दन किया (७. २३, ३)। देवों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये यह भी सुमाली के साथ युद्धभूमि में गया (७. २७, २८)।

२. मारीच, एक वानर यूथपति का नाम है जो महर्षि मरीचि का पुत्र था। सीता की खोज के लिए सुग्रीव ने इसे पश्चिम दिशा की ओर भेजा था—'मरीचिपुत्रं मारीचमर्चिष्यन्तं महाकपिम्। वृतं कपिवरैः शूरैर्महेन्द्रसदृशद्युतिम्॥ बुद्धिविक्रमसंपन्नं वैनतेयसमद्युतिम्। मरीचिपुत्रान्मारीचानर्चिर्मालान्महाबलान्॥' (४. ४२, ३–४)।

मारुत, वायुदेवता का नाम है जो रावण के भय से उसके पास जोर से नहीं बहते थे (१. १५, १०)। ब्रह्माजी की इच्छानुसार इन्होंने श्रीराम की सहायता के लिए अपने सपुत्र के रूप में हनुमान् को जन्म दिया (१. १७, १६) इन्द्र ने दिति के उदर में प्रविष्ट होकर उसमें स्थित हुए गर्भ के सात टुकड़े कर दिये (१. ४६, १८)। दिति ने इन्द्र से कहा कि उसके गर्भ के वे सातों खण्ड सात व्यक्ति होकर सातों मरुग्दणों के स्थानों का पालन करनेवाले हो जायँ (१. ४७, ३)। "दिति ने इन्द्र से कहा : 'ये मेरे दिव्यरूप धारी पुत्र मारुत नाम से विख्यात होकर आकाश में सुप्रसिद्ध सात वातस्कन्धों में विचरें। इनमें से जो प्रथम गण है वह ब्रह्मलोक में, द्वितीय इन्द्रलोक में और तृतीय दिव्यवायु के नाम से सुप्रसिद्ध हो अन्तरिक्ष में विचरण करें, तथा शेष चार पुत्रों के गण तुम्हारी आज्ञा से समयानुसार सम्पूर्ण दिशाओं में संचार करें।' (१. ४७, ४–६)।" इन्द्र ने रोते हुए गर्भस्थ शिशु से 'मा रुदः' कहा इसलिए उसका नाम 'मारुत' पड़ा (१. ४६, २०)।

मार्कण्डेय, दशरथ के एक ऋत्विज का नाम है—'मार्कण्डेयस्तु दीर्घायुस्तथा,' (१. ७, ५)। जब दशरथ मिथिला जा रहे थे तो उस समय इनका रथ भी उनके आगे-आगे चल रहा था (१. ६९, ४–५)। दशरथ की मृत्यु होने पर दूसरे दित प्रातःकाल इन्होंने राजसभा में उपस्थित होकर वसिष्ठ को दूसरा राजा नियुक्त करने का परामर्श दिया (२. ६७, ३–८)। राम के बुलाने पर ये उनके सभाभवन में गये जहाँ राम ने इनका सत्कार किया (७. ७४, ४–५)। श्रीराम की सभा में सीता के शपथग्रहण के समय ये भी साक्षी थे (७. ९६, ३)।

मालव, एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिए सुग्रीव ने विनत को भेजा था (४. ४०, २२)।

मालिनी, अपरताल नामक गिरि के दक्षिण और प्रलम्ब गिरि के उत्तर, दोनों पर्वतों के बीच से बहने वाली एक नदी का नाम है। केकय जाते समय वसिष्ठ के दूत इसके तट से होकर गये थे (२. ६८, १२)।

माली, सुकेश और देववती के शक्तिशाली पुत्र का नाम है जिसने घोर तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न किया और उनसे अजेयत्व तथा चिरजीवत्व का वर प्राप्त करके देवताओं और असुरों को कष्ट देना आरम्भ किया; इसने विश्वकर्मा से अपने आवास के लिए एक नगर का निर्माण करने के लिए भी कहा (७. ५, ४–२१)। विश्वकर्मा के परामर्श पर इसने लंका पर अपना अधिकार किया (७. ५, २७–३०)। इसने नर्मदा की पुत्री, वसुदा, से विवाह करके चार पुत्र उत्पन्न किये (७. ५, ४२–४४)। इस प्रकार यह देवताओं और ऋषि-मुनियों को त्रस्त करता हुआ विचरण करने लगा (७. ५, ४५–४६)। माल्यवान् के अनुरोध पर इसने राक्षणों के विरुद्ध विष्णु को उकसानेवाले देवों का तत्काल विनाश कर देने का परामर्श दिया (७. ६, ३९–४४)। अनेक अपशकुनों के विपरीत भी इसने स्वर्गलोक पर आक्रमण के लिये लंका से प्रस्थान किया (७. ६, ४५–६२)। इसने विष्णु के साथ द्वन्द युद्ध करते हुये गरुड़ को आहत कर दिया, परन्तु अन्ततः विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र से इसका वध किया (७. ७, ३१–४३)।

माल्यवती, एक नदी का नाम है जो चित्रकूट से होकर बहती थी (२. ५६, ३५)।

१. माल्यवान्, एक पर्वत का नाम है जहाँ से केसरी गोकर्ण पर्वत पर चले गये (५. ३५, ८०)।

२. माल्यवान्, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जो रावण का नाना था (६. ३५, ६)। इसने विविध प्रकार के तर्कों से रावण को सीता को लौटा कर श्रीराम से सन्धि कर लेने के लिये समझाया (६, ३५, ६–३८)। रावण के फटकारने पर यह बहुत लज्जित हुआ और रावण को विजय-सूचक आशीर्वाद देकर अपने घर चला गया (६. ३६, १–१५)। रावण का अन्त्येष्टि संस्कार करने में इसने विभीषण की सहायता की (६. १११, १०६)। यह सुकेश और देववती का पुत्र था (७. ५, ५–६)। ब्रह्मा को तपस्या से प्रसन्न करके इसने अपराजेयता तथा चिरजीवन का वर प्राप्त किया (७. ५, ९–१६)। तदनन्तर इसने देवों और असुरों को अत्यन्त त्रस्त करते हुए विश्वकर्मा से अपने निवास के लिये एक भव्य निवास-स्यान बनाने के लिये कहा (७. ५, १७–२१)। विश्वकर्मा के कहने पर (७. ५, २२–२८) यह लङ्कापुरी में आकर रहने लगा (७. ५, २९–३०)। इसने नर्मदा की पुत्री, सुन्दरी, के साथ विवाह करके उसके गर्भ से अनेक सन्तान उत्पन्न कीं (७. ५, ३५–३७)। इस प्रकार, यह अपने पुत्रों तथा अन्यान्य निशाचरों के साथ रहकर इन्द्र आदि देवताओं, महर्षियों, नागों तथा यक्षों को पीड़ा देने लगा (७. ५, ४५–४६)। राक्षसों का विनाश करने के देवों के प्रयास के सम्बन्ध में सुन कर

इसने अपने भ्राताओं से देवों को पराजित करने के विषय पर परामर्श किया (७, ६, २३–२८)। अपकुशनों की चिन्ता किये विना यह देवलोक पर आक्रमण करने के लिये लङ्का से बाहर निकल पड़ा (७. ६, ४५–६२)। माली की मृत्यु हो जाने पर यह भाग कर लङ्का चला आया (७, ७, ४५)। भागती हुई सेना का वध करने के कारण इसने विष्णु की भर्त्सना की और क्रुद्ध होकर उनसे युद्ध करने लगा (७. ८, १–५)। इसने विष्णु के साथ भयंकर द्वन्द्व-युद्ध करते हुये उन्हें तथा उनके वाहन, गरुड़, को आहत कर दिया, किन्तु क्रुद्ध होकर गरुड़ ने अपने पंखों को वेगपूर्वक हिलाकर वायु के वेग से इसे उड़ा दिया (७. ८, ९–२०)।

माहिषक, दक्षिण के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज करने के लिये सुग्रीव ने अङ्गद से कहा (४. ४१, ११)।

मित्र, एक देवता का नाम है जो वरुण के साथ रहकर समस्त देवेश्वरों द्वारा पूजित होते थे (७. ५६, १२)। इनके साथ मिलने का निश्चय करके भी जब उर्वशी वरुण के साथ क्रीड़ा करती रही तो इन्होंने क्रुद्ध होकर उसे यह शाप दे दिया कि वह पृथिवी पर गिर राजा पुरूरवा की पत्नी बन जायगी (७. ५६, २२–२५)। इन्होंने राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान करके वरुण का पद प्राप्त किया था (७. ८३, ६)।

मित्रघ्न, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसने श्रीराम से युद्ध किया (६, ४३, ११)। श्रीराम ने इसका वध किया (६. ४३, २७)।

मिथि, निमि के पुत्र और जनक के पिता का नाम है (१. ७१, ४)। इनका जन्म निमि के मृत शरीर के मन्थन से हुआ था, इसीलिये इनका नाम 'मिथि' पड़ा और जनक वंश भी मैथिल कहलाया (७. ५७, १७–२०)।

मिथिला, एक देश का नाम है जहाँ राम और लक्ष्मण सहित विश्वामित्र आये (१. ४८, ९)। यहाँ पहुँच कर जनक की इस पुरी की शोभा देख सभी महर्षि साधु-साधु कहकर इसकी प्रशंसा करने लगे (१. ४८, १०)। श्रीराम आदि ने अहल्या के आश्रम के उत्तर-पूर्व में स्थित इस देश के लिये प्रस्थान किया (१. ४९, २३; ५०, १)। सीता के साथ विवाह की इच्छा रखनेवाले तिरस्कृत राजाओं ने इस पर एक वर्ष तक घेरा डाल रक्खा था, किन्तु अन्त में देव-सेना की सहायता से जनक ने उन राजाओं से इसे मुक्त करा लिया (१. ६६, १७. २०–२४)। कुछ काल के पश्चात् पराक्रमी राजा सुधन्वा ने सांकाश्य नगर से आकर मिथिला को चारों ओर से घेर लिया (१. ७१, १६)।

मिश्रकेशी, एक अप्सरा का नाम है जिसका भरद्वाज मुनि ने भरत-सेना के सत्कार के लिये आवाहन किया था (२. ९१, १७)। भरद्वाज की आज्ञा से इसने भरत के समक्ष नृत्य किया (२. ९१, ४६)।

मुरचीपत्तन, पश्चिम के एक नगर का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने सुषेण आदि को भेजा था (४. ४२, १३)।

मुष्टिक, एक जाति के लोगों का नाम है जो कुत्ते का मांस खानेवाले, मृतकों की रखवाली करनेवाले, और निर्दय थे (१. ५९, १९)।

मृगमन्दा, कश्यप और क्रोधवशा की पुत्री का नाम है (३. १४, २१)। यह रीछों, सृमरों और चमरों की माता हुई (३. १४, २३)।

मृगी, कश्यप और क्रोधवशा की पुत्री का नाम है (३. १४, २१)। यह मृगों की माता हुई (३. १४, २३)।

मृत्यु—रावण के विरुद्ध युद्ध करने के लिये यह भी प्रास और मुग्दर आदि लेकर यम के साथ गये (७. २२, ३)। रावण ने इन्हें आहत कर दिया (७. २२, २०)। "जब रावण ने यम को भी आहत कर दिया तो इन्होंने यम से कहा : 'आप आज्ञा दीजिये। मैं समराङ्गण में इस पापी राक्षस रावण का अभी वध कर डालूँगा।' इस प्रकार इन्होंने रावण का वध करने के लिये यम से आज्ञा माँगी (७. २२, २३–३०)।"

मेखला, दक्षिण के एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने अङ्गद को भेजा था (४. ४१, १०)।

मेघ, एक पर्वत का नाम है जिसके उस पार ६०,००० पर्वतों के बीच मेरु पर्वत स्थित था (४. ४२, ३३)।

मेघनाद—इसकी मृत्यु का वालमीकि ने पूर्वदर्शन किया (१. ३, ३५)। हनुमान् ने इसके भवन को देखा (५. ६, २०)। रावण के आदेश पर यह अपने बन्धु-बान्धवों को लेकर हनुमान् के विरुद्ध युद्ध करने गया (५. ४८) : 'मनः समाधाय स देवकल्पं समादिदेशेन्द्रजितं सरोषः', (५. ४८, १)। 'त्वमस्त्रविच्छस्त्रभृतां वरिष्ठः सुरासुराणामपि शोकदाता। सुरेषु सेन्द्रेषु च दृष्टकर्मा पितामहाराधनसंचितास्त्रः ॥' (५. ४८, २)। 'न कश्चित्त्रिषु लोकेषु संयुगेन गतश्रमः। भुजवीर्याभिगुप्तश्च तपसा चाभिरक्षितः ॥ देशकालप्रधानश्च त्वमेव मतिसत्तमः।', (५. ४८, ४)। 'ततः पितुस्तद्वचनं निशम्य प्रदक्षिणं दक्षसुतप्रभावः। चकार भर्त्तारमतित्वरेण रणाय वीरः प्रतिपन्नबुद्धिः ॥', (५. ४८, १६)। 'श्रीमान्पद्मविशालाक्षो राक्षसाधिपतेः सुतः। निर्जगाम महातेजाः समुद्र इव पर्वाणि ॥', (५. ४८, १८)। यह चार सिंहो से जुते हुये उत्तम रथ पर आरूढ़ हुआ : 'स पक्षिराजोपमतुल्यवेगैर्व्यालैश्चतुर्भिः स तु तीक्ष्णदंष्ट्रैः। रथं समायुक्तमसह्यवेगं समारुरोहेन्द्रजिदिन्द्रकल्पः ॥ स रथी धन्विनां श्रेष्ठः शस्त्रज्ञोऽस्त्रविदां वरः। रथेनाभिययौ क्षिप्रं हनूमान्यत्र सोऽभवत् ॥', (५, ४८-१९–२०)। 'हनुमन्तमभिप्रेत्य जगाम रणपण्डितः', (५. ४८, २२)। यह

तीखे अग्रभाग वाले सायकों को लेकर हनुमान् पर टूट पड़ा (५. ४८, २२–२६), और उनपर वाणवर्षा आरम्भ कर दी (५. ४८, २९)। 'तावुभौ वेगसंपन्नौ रणकर्मविशारदौ', (५. ४८, ३३)। 'परस्परं निर्विपहौ वभूवतु: समेत्य तौ देवसमानविक्रमौ', (५. ४८, ३४)। "जब लक्ष्यवेध के लिये चलाये हुये इसके अपने अमोघ बाण व्यर्थ होकर गिर पड़े तब इसने हनुमान् को अवध्य समझकर उन्हें ब्रह्मास्त्र से बाँध लिया (५. ४८, ३३–३८)।" राक्षसों द्वारा जब वल्कल के रस्से से बँध जाने पर हनुमान् ब्रह्मास्त्र के बन्धन से मुक्त हो गये, क्योंकि ब्रह्मास्त्र का बन्धन किसी दूसरे बन्धन के साथ नहीं रहता, तब इसे महान् चिन्ता हुई (५. ४८, ५०–५१) । यह हनुमान् को रावण के समक्ष लाया (५. ४८, ५४)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १०)। इसने माहेश्वरयज्ञ का अनुष्ठान किया; इन्द्र को विजित करके बन्दी बनाकर लंका ले आया (६. ७, १९–२३)। यह अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर राम आदि का वध करने के लिये रावण के दरबार में सन्नद्ध खड़ा था (६. ९, २)। रावण के समक्ष विभीषण द्वारा सीता को श्रीराम को लौटा देने के परामर्श पर (६. १४, ९–२२) इसने विभीषण का उपहास करते हुये उन्हें कायर, डरपोक तथा शौर्य और तेज से रहित कहा (६. १५, १–७)। 'ततो महात्मा वचनं बभाषे तत्रेन्द्रजिन्नैर्ऋतयूथमुख्य:', (६. १५, १) 'अथेन्द्रकल्पस्य दुरासदस्य महौजसस्तद्वचनं निशम्य', (६. १५, ८)। "इसने अग्निदेव को तृप्त करके ऐसी शक्ति प्राप्त की थी जिससे यह गोह के चमड़े के बने हुये दस्ताने पहनकर और अवध्य कवच धारण किये हुये हाथ में धनुष लेकर संग्राम में अदृश्य रूप से शत्रुओं पर प्रहार करता था (६. १९, १२–१३)। यह महामायावी लंका के पश्चिम-द्वार की रक्षा के लिये सन्नद्ध था (६. ३६, १८)। इसने अङ्गद के साथ द्वन्द्वयुद्ध किया (६. ४३, ६)। अङ्गद ने इसको घायल करके इसके सारथि तथा अश्वों का वध कर दिया (६. ४४, २८)। इसने कुपित होकर सर्पाकार बाणों की वर्षा से श्रीराम और लक्ष्मण को नागपाश में आबद्ध कर दिया (६. ४४, ३२–४०)। 'इन्द्रजित्तु तदानेन निर्जितो', (६. ४४, ३३)। 'सोऽन्तर्धानगत: पापो रावणी रणकर्शित: । ब्रह्मदत्तवरो वीरो रावणि: क्रोधमूर्च्छित: ॥', (६. ४४, ३७) । 'अदृश्य: सर्वभूतानां कूटयोधी निशाचर:', (६. ४४, ३९)। इसने वाणों की वर्षा करके अपने अस्त्रों द्वारा उन वेगवान् वानरों के वेग को रोक दिया जो इसका अनुसन्धान कर रहे थे (६. ४५, ५)। 'पर्यन्तरक्ताक्षो भिन्नाञ्जनचयोपम:', (६. ४५, १०) । अलक्ष्य रहते हुये इसने राम और लक्ष्मण को कंकपत्रयुक्त बाण के जाल में

फँसा लिया (६. ४५, १०–१२) और उन पर बाणवर्षा करने लगा (६. ४५, १३–१५)। 'तमप्रतिमकर्माणमप्रतिद्वन्द्वमाहवे। ददर्शान्तर्हितं वीरं वरदानाद्विभीषणः ॥', (६. ४६, १०)। "युद्धभूमि में मूर्च्छित राम और लक्ष्मण को मृत समझ कर इसे महान् प्रसन्नता हुई। इसने समस्त वानर-यूथपतियों को भी बाणवर्षा करके घायल कर दिया। युद्धभूमि से आते देख राक्षसों ने इसकी उन्मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की (६. ४६, १२–२९)।" 'ननाद बलवांस्तत्र महासत्त्वः स रावणिः', (६. ४६, २३)। 'हर्षेण तु समाविष्ट. इन्द्रजित्समितिंजयः', (६. ४६, २९)। इसने अपने पिता, रावण, के पास जाकर राम और लक्ष्मण की मृत्यु का समाचार सुनाया (६. ४६, ४६–४७)। इस प्रिय समाचार को सुनकर रावण ने इसे अपने हृदय से लगा लिया (६. ४६, ४८)। वरदान के प्रभाव से प्रबल हुआ यह सिंह के चिह्न से चिह्नित रथ पर आरूढ़ होकर रावण के साथ युद्धभूमि में आया (६. ५९, १५)। देवान्तक, त्रिशिरा और अतिकाय आदि राक्षस-प्रमुखों के वध का समाचार सुनकर शोक-निमग्न और चिन्तित रावण को (६. ७३, १–२) इसने विभिन्न प्रकार से आश्वासन देकर विशाल राक्षस-सेना के साथ युद्धभूमि के लिये प्रस्थान किया (६. ७३, ३–१५)। "युद्धभूमि में पहुँचकर इसने अग्नि की स्थापना करके चन्दन, पुष्प तथा लावा आदि के द्वारा अग्निदेव का पूजन किया। तदनन्तर विधिपूर्वक श्रेष्ठ मन्त्रों का उच्चारण करते हुये उस अग्नि में हविष्य की आहुति दी। आहुति देने के पश्चात् धनुष, बाण, रथ, खड्ग, अश्व और सारथि सहित आकाश में अदृश्य हो गया (६. ७३, १६–२७)।" "इसके बाद यह अश्व और रथों से व्याप्त तथा पताकाओं से सुशोभित होकर राक्षस-सेना में गया। इसने वहाँ राक्षसों से कहा कि वे वानरों से युद्ध करें (६. ७३, २८–२९)।" "इसने स्वयं भी वानरों का भीषण संहार आरम्भ किया। इसने अनेक वानर-यूथपतियों तथा श्रेष्ठ वानरों को बाणों से मारकर अत्यन्त व्यथित कर दिया। इस प्रकार इसके बाणों से विदीर्ण होकर अनेक वानर आहत और हत हो गये। इसने हनुमान्, सुग्रीव, अङ्गद, जाम्बवान्, सुषेण, नल, नील आदि सभी श्रेष्ठ वानरों को आहत कर दिया (७. ७३, ३१–६०)।" "इसने राम और लक्ष्मण को भी विविध अस्त्रों से अत्यन्त त्रस्त करते हुये सुग्रीव की समस्त सेना को पराजित कर दिया। इस प्रकार, संग्राम में वानरों की सेना तथा राम और लक्ष्मण को आहत करके यह लंकापुरी में लौट आया (७. ७३, ६१–६९)।" "अपने पिता की आज्ञा से इसने यज्ञभूमि में जाकर अग्नि की स्थापना करके उसमें विधिपूर्वक हवन किया। तदनन्तर अग्नि में आहुति दे आभिचारिक यज्ञ सम्बन्धी देवता, दानव तथा राक्षसों को तृप्त करने के पश्चात् यह अन्तर्धान

होने की शक्ति से सम्पन्न सुन्दर रथ पर आरूढ़ हुआ। इस प्रकार सन्नद्ध होकर यह युद्धभूमि में आया और अपने रथ को आकाश में स्थित करके अदृश्य रूप से राम तथा लक्ष्मण और उनकी सेना पर भीषण बाण-वर्षा करने लगा (६. ८०, ५–३३)।" "श्रीराम के अभिप्राय को जानकर यह युद्ध से निवृत्त हो लंका चला गया परन्तु अनेक बलवान् राक्षसों के वध का समाचार सुनकर नगर के पश्चिम-द्वार से पुनः बाहर आया। उस समय इसने एक मायामयी सीता का निर्माण करके अपने रथ पर बैठा लिया और सबके सामने ही उसके वध का उपक्रम करने लगा (५. ८१, १–६)।" "वानर सेना को अपनी ओर बढ़ते देख इसने तलवार को म्यान से बाहर निकाला और मायामयी सीता का केश पकड़ कर उन्हें घसीटने लगा। उस समय रथ पर बैठी वह मायामयी स्त्री 'हा राम ! हा राम ! हा राम !' कहती हुई आर्त्तनाद कर रही थी और यह सबके समक्ष उसको पीट रहा था (६. ८१, १५–१६)।" "हनुमान् के फटकारने पर इसने कहा कि यह वह सब कुछ करने पर तुला हुआ है जिससे हनुमान् आदि को कष्ट हो। इस प्रकार कह कर भीषण गर्जना करते हुये इसने उस मायामयी सीता का अपनी तलवार से वध कर दिया (६. ८१, २७–३६)।" राक्षस सेना को वानरों के आक्रमण से त्रस्त देखकर इसने शत्रु सेना पर भीषण आक्रमण किया और विविध आयुधों से अनेक का वध कर दिया (६. ८२, १६–१८)। जब इसके आक्रमण से पराजित होकर वानर-सेना पीछे हट गई तो यह यज्ञ करने के लिये निकुम्भिला के स्थान पर चला गया (६. ८२, २५–२८)। अपनी तपस्या से ब्रह्मा को प्रसन्न करके इसने ब्रह्मशिरस् नामक अस्त्र और मनोनुकूल गति से चलने वाले अश्व प्राप्त किये (६. ८५, १३)। ब्रह्मा ने इसे वरदान देते हुये कहा था कि निकुम्भिला नामक वट वृक्ष के निकट पहुँचने तथा हवन सम्बन्धी कार्य पूर्ण करने के पूर्व जो शत्रु इस पर आक्रमण करेगा उसी के हाथों इसका वध होगा (६. ८५, १५–१६)। 'स हि ब्रह्मास्त्रवित्प्राज्ञो महामायो महाबलः। करोत्यसंज्ञान्संग्रामे देवान्सवरुणानपि ॥', (६. ८५, १८)। "अपनी सेना को शत्रुओं द्वारा पीडित देखकर यह अपना अनुष्ठान समाप्त करने के पूर्व ही युद्ध के लिये उद्यत हो रथ पर बैठकर युद्धभूमि में उपस्थित हुआ। इसे रथ पर आरूढ़ देखकर इसकी सेना भी इसके चतुर्दिक् सन्नद्ध हो गई (६. ८६, १४–१७)।" "अपने सैनिकों को हनुमान् के द्वारा पराजित होते देखकर इसने सारथि को अपना रथ हनुमान् की ओर ले चलने के लिये कहा। हनुमान् के निकट पहुँच कर इसने विभिन्न प्रकार के आयुधों से हनुमान् के मस्तक पर प्रहार करना आरम्भ कर दिया (६. ८६, २५–२८)।" लक्ष्मण ने इसे अग्नि के समान तेजस्वी रथ पर बैठे हुये कवच,

खड्ग और ध्वजा आदि से युक्त देखा (६. ८७, ८)। लक्ष्मण द्वारा युद्ध के लिये ललकारने पर इसने वहाँ विभीषण को भी उपस्थित देखकर उनसे कहा : 'तुम मेरे पिता के भ्राता और मेरे चचा हो, अतः तुम मुझसे क्यों द्रोह करते हो ?' (६. ८७, ९–१७)। "विभीषण के शब्दों का कठोर शब्दों में उत्तर देते हुये यह लक्ष्मण की ओर देखकर अपने धनुष पर टंकार देता हुआ बोला : 'आज मैं तुम सब लोगों को यमलोक पहुँचा दूंगा। उस दिन, रात्रि युद्ध में, जब मैंने तुम्हें और तुम्हारे भ्राता राम को रणभूमि में मूच्छित कर दिया था वह घटना कदाचित् अब तुम्हें स्मरण नहीं है। तुम इस समय जो मुझसे युद्ध करने के लिये उपस्थित हो गये हो उससे ऐसा प्रतीत होता है कि शीघ्र ही यमलोक जाने के लिये उद्यत हो।' (६. ८८, १–११)।" लक्ष्मण के साथ कठोर शब्दों का आदान-प्रदान करते हुये जब भीषण युद्ध में यह आहत हुआ तब इसका मुख उदास हो गया (६. ८८, २६–३९)। इसने विना कवच के ही और सर्वथा रक्तरंजित होकर भी लक्ष्मण के साथ लगातार घोर युद्ध किया (६. ८८, ४२–७८)। इसने लक्ष्मण के साथ घोर द्वन्द्व युद्ध किया जिसमें यह रथ और उसके अश्वों से रहित हो गया। तदनन्तर इसने पैदल ही युद्ध करना आरम्भ किया (६. ८९, २६–५२)। जब राक्षस और वानर एक दूसरे से युद्ध कर रहे थे तब यह नगर में जाकर शीघ्र ही एक नवीन रथ पर बैठकर पुनः लक्ष्मण और विभीषण के निकट युद्ध के लिये उपस्थित हुआ (६. ९०, १–१२)। "इसने क्रोध में आकर निर्दयतापूर्वक वानरों का संहार किया जिसमें दो बार इसके धनुष, रथ, सारथि और रथाश्व आदि नष्ट हुये। उस समय इसने लक्ष्मण के ललाट को तीन बाणों से बींध दिया। तदनन्तर इसने विभीषण को भी आहत किया। इस प्रकार घोर युद्ध करने के विपरीत भी लक्ष्मण ने ऐन्द्रास्त्र से इसका वध कर दिया (६. ९०, १४–७३)।" इसका वध हो जाने पर देवता, गन्धर्व, और दानव, सब ने सन्तुष्ट होकर कहा कि अब ब्राह्मण निश्चिन्त और क्लेश-शून्य होकर विचरण करेंगे (६. ९०, ८९)। "यह मन्दोदरी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था और जन्म के समय ही रोते हुये मेघ के समान गम्भीर नाद करने लगा। इसके मेघ-तुल्य नाद से समस्त लंका जड़वत् स्तब्ध हो गई थी जिससे इसके पिता, रावण, ने स्वयं ही इसका नाम मेघनाद रक्खा था। रावण के सुन्दर अन्तःपुर में माता-पिता को महान् हर्ष प्रदान करता हुआ यह श्रेष्ठ नारियों से सुरक्षित हो काष्ठ से आच्छादित अग्नि के समान विकसित होने लगा (७. १२, २८–३२)।" "खर को राक्षसों की भयंकर सेना और बहन शूर्पणखा को सान्त्वना देकर रावण ने निकुम्भिला नामक उत्तम उपवन में जाकर उशना (शुक्राचार्य) की सहायता

से मेघनाद को यज्ञ करते देखा। इस यज्ञ के फलस्वरूप इसने एक दिव्य रथ, अभिचारीय शक्तियाँ, अक्षय तरकस तथा अन्य अनेक आयुध प्राप्त किये (७. २५, २–१३)।" यह अपने पिता के आदेश पर राजभवन लौटा (७. २५, १६)। मधु के विरुद्ध युद्ध में यह समस्त सैनिकों को लेकर सेना के आगे-आगे चला (७. २५, ३४)। "सुमाली की मृत्यु हो जाने पर इसने राक्षस-सेना को एक बार पुनः एकत्रित करके देवताओं पर आक्रमण किया। उस समय इसके सम्मुख कोई भी खड़ा नहीं हो सकता था (७. २८, १–५)। "इसने जयन्त के साथ द्वन्द्वयुद्ध करते हुए भीषण वाणवर्षा से उन्हें आच्छादित कर दिया। तदनन्तर इसने माया से चारों ओर भीषण अन्धकार उत्पन्न किया जिससे समस्त शत्रुसेना अस्त-व्यस्त हो कर आपस में ही एक दूसरे का वध करने लगी (७. २८, ८–१८)।" जब जयन्त के अपहृत हो जाने पर देवगण भागने लगे तो इसने उनका पीछा किया (७. २८, १९–२२)। यह जानकर कि इसके पिता रावण इन्द्र के चंगुल में फँस गये हैं, इसने अत्यन्त क्रोधपूर्वक शत्रुसेना में प्रवेश करके अपनी अभिचारीय शक्तियों से इन्द्र को भी वन्दी बना लिया (७. २९, १३–२७)। "अपने पिता के शरीर को वाणों के प्रहार से जर्जर देखकर इसने उससे कहा—'अब हम लोग घर चलें क्योंकि हमारी विजय हो गई और मैंने इन्द्र को बन्दी बना लिया है। आप अब इच्छानुसार तीनों लोकों के राज्य का उपभोग कीजिये। यहाँ व्यर्थ श्रम करना निरर्थक है।' (७. २९, ३२–३५)।" यह अपने वन्दी, इन्द्र, को लेकर लंका लौटा (७. २९. ४०)। ब्रह्मा के वर देने पर इसने अमरत्व का वर माँगा (७. ३०, १–८)। "जब ब्रह्मा ने यह वर देना अस्वीकार कर दिया तब इसने उनसे कहा—'मेरे विषय में यह सदा के लिए नियम बन जाय कि जब मैं शत्रु पर विजय पाने की इच्छा से संग्राम में उतरना चाहूँ और मन्त्रयुक्त हव्य की आहुति से अग्निदेव का पूजन करूँ तो उस समय अग्नि से मेरे लिये ऐसा रथ प्रकट हो जाया करे जो अश्वों आदि से युक्त रहे। उस रथ पर बैठकर मैं जब तक युद्ध करता रहूँ तब तक कोई मेरा वध न कर सके। जब युद्ध के निमित्त किये जानेवाले जप और होम को पूर्ण किये बिना ही मैं समराङ्गण में युद्ध करने लगूँ तभी मेरा विनाश हो।' (७. ३०, १०–१५)।" जब ब्रह्मा ने इसको यह वर दे दिया तब इसने इन्द्र को मुक्त कर दिया (७. ३०, १६)।

मेधातिथि के पुत्र एक महर्षि थे, जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनका अभिनन्दन करने के लिए पूर्वदिशा से पधारे थे (७. १, २)।

मेनका, एक प्रसिद्ध अप्सरा का नाम है। जब यह पुष्कर में स्नान करने

का उपक्रम करने लगी तब महर्षि विश्वामित्र इसके अप्रतिम सौन्दर्य को देखकर इस पर आसक्त हो गये (१. ६३, ३–६)। इसने कामक्रीड़ा करते हुये विश्वामित्र के साथ दस वर्ष व्यतीत किये (१. ६३, ७–९)। जब विश्वामित्र ने देखा कि इसकी उपस्थिति से उनकी तपस्या में विघ्न पड़ रहा है तब उन्होंने इसे विदा कर दिया (१. ६३, १०–१४)।

मेना, मेरु की पुत्री और हिमवान् की पत्नी का नाम है (१. ३५, १५)। इसने दो पुत्रियों, गङ्गा और उमा, को जन्म दिया (१. ३५, १६)।

मेरु, मेना के पिता का नाम है (१. ३५, १५)। पूर्वकाल में वामन अवतार के समय विष्णु ने अपना दूसरा पैर इस पर्वत के शिखर पर रक्खा था (४. ४०, ५६)। "यह ६०,००० पर्वतों के मध्य में स्थित था। पूर्वकाल में सूर्य ने इसे यह वर दिया था कि जो इसके आश्रय में रहेगा वह सुवर्ण के समान कान्तिमान होकर सूर्य का भक्त हो जायगा। विश्वेदेव, वसु, मरुद्गण तथा अन्य देवता सायंकाल इस उत्तम पर्वत पर आकर सूर्यदेव का उपस्थान करते हैं। अस्ताचल इस पर्वत से १०,००० योजन की दूरी पर स्थित है। इसके शिखर पर विश्वकर्मा द्वारा निर्मित एक दिव्य भवन है जो वरुण का निवासस्थान है। इस पर्वत पर धर्म के ज्ञाता महर्षि मेरुसावर्णि भी निवास करते हैं। सुग्रीव ने सुषेण आदि से इस पर्वत पर सीता की खोज करने के लिये कहा (४. ४२, ३४. ३६–४७)।" वालिन् के भय से भागते हुये सुग्रीव इस पर्वत पर भी आये थे (४. ४६, २०)। 'मेरुर्नगवरः श्रीमाञ्जाम्बूनदमयः शुभः। तस्य यन्मध्यमं शृङ्गं सर्वदैवतपूजितम् ॥', (७. ३७क, ७)।

मेरुसावर्णि, "एक महर्षि का नाम है जो मेरुगिरि पर निवास करते थे। ये धर्म के ज्ञाता थे। इन्होंने तपस्या से उच्च स्थिति प्राप्त की थी और प्रजापति के समान शक्तिशाली एवं विख्यात ऋषि थे। सुग्रीव ने सुषेण तथा अन्य वानरों से सूर्यतुल्य तेजस्वी इन महर्षि के चरणों में प्रणाम करके इनसे सीता का पता पूछने के लिए कहा (४. ४२, ४६–४७)।" इनकी पुत्री का नाम स्वयंप्रभा था जो ऋक्ष-विल में निवास करती थी (४. ५१, १६)।

मैनाक, एक पर्वत का नाम है। वाल्मीकि ने श्रीराम के इस पर पधारने का पूर्वदर्शन किया (१. ३, २७)। "यह कौञ्चगिरि के उस पार स्थित था। मयासुर का भवन इसी पर निर्मित्त था। इस पर घोड़े के समान मुखवाली किन्नरियाँ निवास करती थीं। सुग्रीव ने शतवलि आदि वानरों से इसके शिखरों, मैदानों, और कन्दराओं में सीता की खोज करने के लिये कहा (४. ४३, ३०–३१)। 'हिरण्यनाभं मैनाकमुवाच गिरिसत्तमम् ,' (५, १, ९२)। "देवराज इन्द्र ने इसे पातालवासी असुरों के निकलने के मार्ग को रोकने के लिये परिघरूप-से स्थापित

किया था। इसमें ऊपर-नीचे और अगल-बगल, सब ओर बढ़ने की शक्ति थी (५.१, ९२–९५)।', समुद्र के अनुरोध पर इसने हनुमान् के विश्राम के लिये वृक्षों से आच्छादित अपने सुवर्णमय शिखर को ऊपर उठाया (५. १, ९६–१०७)। "समुद्र के बीच में अविलम्ब उठकर सामने खड़े हुये मैनाक पर्वत को देखकर हनुमान् ने इसे कोई नवीन विघ्न समझा, अतः उन्होंने अपनी छाती के धक्के से इसे नीचे गिरा दिया। हनुमान् के पराक्रम को देखकर इसने मनुष्य रूप धारण करके हनुमान को अपने शिखर पर कुछ क्षण विश्राम करने के लिये आमन्त्रित किया। इसने बताया कि हनुमान् के साथ इसका सम्बन्ध भी है क्योंकि पूर्वकाल में हनुमान् के पिता, वायु देवता, ने इसकी उस समय रक्षा की थी जब इन्द्र अपने वज्र से इसके पंखों को काट देना चाहते थे। इस प्रकार इसने अनेक प्रकार से हनुमान् को विश्राम के लिये प्रेरित किया (५. १, १०८–१०३)।" हनुमान् का आतिथ्य-सत्कार करने के इसके इस आग्रह की इन्द्र ने प्रशंसा की (५. १, १३८–१४४)। लङ्का से लौटते समय हनुमान् ने इसका स्पर्श किया (५. ५७, १३ : सुनाभ')। श्रीराम का विमान इस पर से भी होकर उड़ा (६. १२३, १९ : 'हिरण्यनाभ')।

मैन्द, एक वानर का नाम है जिसको अश्विनीकुमारों ने श्रीराम की सहायता के लिये जन्म दिया था (१. १७, १४)। इन्होंने सुग्रीव के अभिषेक में भाग लिया था (४. २६, ३४)। लक्ष्मण ने किष्किन्धा में इनके अत्यन्त सुदृढ़ और श्रेष्ठ भवन को देखा (४. ३३, ९)। महाबली मैन्द दस अरब वानर सैनिकों के साथ सुग्रीव की सेवा में उपस्थित हुये (४. ३९, २५)। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये इन्हें दक्षिण दिशा में भेजा (४. ४१, ४)। विन्ध्य-पर्वत पर सीता को खोजते हुये जल के लिये इन्होंने ऋक्षबिल गुफा में प्रवेश किया (४. ५०, १–८)। अङ्गद द्वारा समुद्र-लङ्घन की शक्ति पूछने पर (४. ६४, १५–१९) इन्होंने बताया कि ये साठ योजन तक एक छलांग में कूद सकते हैं (४. ६५, ७)। इन्होंने ब्रह्मा से अमरत्व का वर प्राप्त करके देवों की विशाल सेना को मथ कर अमृत का पान किया था (५. ६०, १–४)। वानरसेना का संरक्षण करते हुये इन्होंने समुद्र तट पर पड़ाव डाला (६. ५, २)। श्रीराम के पूछने पर इन्होंने बताया कि विभीषण को ग्रहण करने के पूर्व उसके अभिप्राय को जान लेना आवश्यक है (६. १७, ४७–४९)। यह एक अप्रतिम योद्धा थे जिन्होंने ब्रह्मा की आज्ञा से अमृत पान किया था (६. २८, ६–७)। इन्होंने नील के नेतृत्व में पूर्वद्वार पर युद्ध किया (६. ४१, ३८)। इन्होंने वज्रमुष्टि के साथ द्वन्द्वयुद्ध किया (६. ४३, १२)। इन्होंने मुष्टि-प्रहार से अपने शत्रु का वध कर दिया (६. ४३, २९)। यह भी उस स्थान पर आये

जहाँ श्रीराम और लक्ष्मण मूर्च्छित पड़े थे (६. ४६, ३)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ४६, १९)। इन्होंने राक्षस-सेना का भीषण संहार किया (६. ५५, ३०)। इन्होंने अतिकाय पर आक्रमण किया किन्तु आहत होकर युद्धभूमि से हट गये (६. ७१, ३९–४२)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ७३, ४४)। अङ्गद को राक्षसों से घिरा देखकर यह उनकी सहायता के लिये दौड़े (६. ७६, १६)। इन्होंने युद्ध करते हुये यूपाक्ष का वध किया (६. ७६, ३२–३४)। इन्होंने कुम्भ के साथ भीषण युद्ध किया जिसमें अन्ततः बुरी तरह आहत हुये (६. ७६, ४३–४६)। राम के द्वारा सत्कृत होकर ये किष्किन्धा लौटे (६. १२८, ८८)। श्रीराम की सहायता के लिये ही देवों ने इनकी सृष्टि की थी (७. ३६, ४९)। राम ने इनका आदर-सत्कार किया (७. ३९, २१)। श्रीराम ने इन्हें कलियुग अथवा प्रलय आने तक पृथिवी पर जीवित रहने का आशीर्वाद दिया (७. १०८, ३४)।

मौद्गल्य, एक राजकर्त्ता और ब्राह्मण का नाम है (२. ६७, ३)। दशरथ की मृत्यु हो जाने पर दूसरे दिन प्रातःकाल राजसभा में उपस्थित होकर इन्होंने वसिष्ठ को दूसरा राजा नियुक्त करने का परामर्श दिया (२. ६७, ५–८)। राम के आमन्त्रण पर ये सभाभवन में उपस्थित हुये जहाँ राम ने इनका सत्कार किया (७. ७४, ४)। इन्होंने श्रीराम की सभा में सीता के शपथ-ग्रहण को देखा (७. ९६, ३)।

म्लेच्छों की, वसिष्ठ की गाय के रोमकूपों से उत्पत्ति हुई थी (१. ५५, ३)। ये भी दशरथ की राजसभा में बैठकर दशरथ की उपासना कर रहे थे (२. ३, २५)। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये शतबलि को इनके उत्तर दिशा में स्थित प्रदेश में भेजा था (४. ४३, ११)।

य

यक्ष—रावण को ब्रह्मा का यह वरदान था कि वह यक्षों से अवध्य रहेगा (१. १५, १३)। रावण का विनाश कराने के उद्देश्य से ये भी विष्णु की शरण में गये (१. १५, २४)। ब्रह्मा ने देवों को यक्षिणियों के गर्भ से वानर-सन्तान उत्पन्न करने का आदेश दिया (१. १७, ५)। 'अल्पवीर्या यदा यक्षी श्रूयते मुनिपुङ्गवः। कथं नागसहस्रस्य धारयत्यबला वलम् ॥', (१. २५, २)। ये रात्रि के समय विचरण करनेवाले प्राणी हैं (१. ३४, १८)। इन्होंने भी गंगावतरण के दृश्य को देखा (१. ४३, १८)। ये गंगा की धारा का अनुसरण करते हुये चलने लगे (१. ४३, ३२)। श्रीराम और परशुराम के युद्ध को देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये (१. ७६, १०)। अगस्त्य का आश्रम इनसे सेवित था (३. ११, ९२)। क्रीड़ा-विहार के लिये ये सुदर्शन

सरोवर के क्षेत्र में जाते थे (४. ४०, ४४)। महेन्द्रगिरि इनसे सेवित था (४. ४१, २२; ५. १, ६)। हनुमान् द्वारा सागर का लङ्घन करते समय इन लोगों ने उनका प्रशस्ति-गायन किया (५. १, ८७)। ये अन्तरिक्ष क्षेत्र में निवास करते थे (५. १, १९८)। हनुमान् के हाथों अक्ष को मारा गया देखकर इन लोगों ने आश्चर्य प्रगट किया (५. ४७, ३७)। हनुमान् और इन्द्रजित् का युद्ध देखने के लिये इनका भी दल उपस्थित हुआ (५. ४८, २४)। अरिष्ट पर्वत इनसे सेवित था (५. ५६, ३५)। जब हनुमान् के भार से अरिष्ट पर्वत धँसने लगा तब ये योग उस पर से हट गये (५, ५६, ४७)। इनकी आकाशरूपी सागर के पुष्पित कमलों के साथ तुलना की गई है (५. ५७, ३)। जब श्रीराम ने कुम्भकर्ण का वध कर दिया तब ये लोग बड़े प्रसन्न हुये (६. ६७, १७५)। महोदर का वध कर देने पर ये लोग सुग्रीव को आश्चर्यपूर्वक देखने लगे (६. ९७, ३८)। ये लोग सारी रात श्रीराम और रावण का युद्ध देखते रहे (६. १०७, ६५)। जब ब्रह्मा ने जलजन्तुओं की सृष्टि की तो उस समय इन लोगों ने कहा था कि ये 'यक्षण' (पूजन) करेंगे, अतः इनका नाम यक्ष पड़ा (७. ४, १२–१३)। जब विष्णु माल्यवान् आदि का वध करने के लिये निकले तब इन लोगों ने विष्णु की स्तुति की (७. ६, ६७)। इन लोगों ने कुवेर को रावण के कैलास पर्वत पर आने का समाचार दिया और कुवेर की आज्ञा से ही उनसे युद्ध करने गये (७. १४, ४–६)। रावण ने इन्हें पराजित करके छिन्न-भिन्न कर दिया (७. १४, १४–१९)। शैशव काल में ही हनुमान् को सूर्य की ओर उड़कर जाते हुये देखकर इनको भी विस्मय हुआ (७. ३५, २५)। वायु देवता को गोद में अपने आहत शिशु को लिये हुये देखकर इन लोगों को भी उन पर अत्यधिक दया आई (७. ३५, ६५)। भयभीत होकर ये लोग भी राजा इल की सेवा करते थे (७. ८७, ५–६)। विष्णु के पुनः अपने लोक में लौट आने पर इन लोगों ने हर्ष प्रगट किया (७. ११०, १४)।

यज्ञकोप, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जो श्रीराम आदि का वध करने के लिये अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर रावण की सभा में सन्नद्ध खड़ा था (६. ९, १)। इसने राम के साथ युद्ध किया (६. ४३, ११)। श्रीराम ने इसका वध किया (६. ४३, २७)। यह माल्यवान् और सुन्दरी का पिता था (७. ५, ३५–३७)।

१. यज्ञसूत्र, खर के एक सेनापति का नाम था जो श्रीराम से युद्ध करने के लिये उपस्थित हुआ (३. २३, ३२)। इस महावीर बलाध्यक्ष ने खर के आदेश पर अपनी सेनासहित श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, २६–२८)।

२. यज्ञसूत्र, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने आग लगा दी थी (५. ५४, १५)। श्रीराम के द्वारा आहत होकर यह युद्धभूमि से भाग गया (६. ४४, २०)।

यदु, ययाति और देवयानी के पुत्र का नाम है, जिन्होंने अपने सौतेले भ्राता के प्रति पिता के पक्षपात को देखकर आत्महत्या करने का निश्चय किया (७. ५८, १०–१४)। अपने पिता के प्रस्ताव को (७. ५९, १–३) अस्वीकृत करते हुये इन्होंने उनसे कहा : 'आप अपने प्रिय पुत्र, पूरु, से ही यह प्रार्थना करें क्योंकि आपको वही अधिक प्रिय हैं।' (७. ५९, ४–५)। अपने पिता के शाप के अनुसार यह क्रौञ्चवन में चले गये और वहाँ अनेक राक्षसों को उत्पन्न किया (७. ५९, २०)।

यम—श्रीराम को वनवास दिये जाने पर अत्यन्त विलाप करते हुये कौसल्या ने कहा कि उनके लिये अब यमलोक में भी कोई स्थान नहीं है अन्यथा उनकी मृत्यु क्यों न हो जाती (२. २०, ५०)। श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा के लिये कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, २३)। 'तं रथस्थं धनुष्पाणिं राक्षसं पर्यवस्थितम्। ददृशुः सर्वभूतानि पाशहस्तमिवान्तकम् ॥', (३, २८, ११)। 'अजेयं समरे घोरं व्यात्ताननमिवान्तकम्', (३. ३२, ६)। 'कालचक्रमिवान्तकः', (४. १६, ३२)। पितृलोक को इनकी राजधानी कहा गया है (४. ४१, ४५)। ये दक्षिण दिशा के अधिपति हैं (४. ५२, ७)। कुम्भकर्ण ने इन्हें पराजित किया (६. ६१, ९)। सीता का तिरस्कार करने पर इन्होंने श्रीराम को समझाया (६. ११७, २–९)। रावण के भय से एक कौये का रूप धारण करके ये मरुत्त के यज्ञ में उपस्थित हुये (७. १८, ४–५)। रावण के चले जाने के पश्चात् इन्होंने अपने रूप में प्रकट होकर कौओं को वरदान दिया (७. १८, २५)। जब रावण के आक्रमण का समाचार बताने के लिये नारद मुनि यमलोक पधारे तब इन्होंने नारद का आतिथ्य-सत्कार करने के पश्चात् उनसे पूछा : 'हे देवर्षि ! कुशल तो है ? धर्म का नाश तो नहीं हो रहा है ? आपके शुभागमन का क्या उद्देश्य है ?' (७. २१, २–४)। जब रावण ने इनकी सेना का विनाश करना आरम्भ किया तो ये कालदण्ड तथा अन्य आयुध धारण कर मृत्यु के साथ रथ पर बैठकर युद्धभूमि में आये (७. २२, १–८)। इन्होंने अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का प्रहार करते हुये सतत् सात रात्रियों तक रावण के साथ युद्ध किया (७. २२, १५)। यद्यपि इस युद्ध में इन्होंने शत्रुओं को अत्यधिक पीड़ित और आहत किया, तथापि जब इनके मर्मस्थानों को रावण ने गहरी क्षति पहुँचाई तब इनके मुख से क्रोध अग्नि बनकर प्रगट हुआ जो ज्वाल-मालाओं से मण्डित,

श्वासवायु से संयुक्त तथा धूम से आच्छन्न दिखाई देता था (७. २२, १६–२१)। "मृत्यु के पूछने पर इन्होंने कहा : 'तुम ठहरो, मैं स्वयं ही इसका वध कर डालता हूँ।' इस प्रकार कहकर इन्होंने अमोघ कालदण्ड को हाथ से उठाया, परन्तु ज्यों ही ये उससे रावण पर प्रहार करने के लिये उद्यत हुये, ब्रह्मा ने वहाँ उपस्थित होकर इन्हें रोका (७. २२, ३१–४५)।" तदनन्तर ये युद्धभूमि से अन्तर्धान हो गये (७. २२, ४६–४८)। 'मया प्रेतेश्वरो दृष्टः कृतान्तः सह मृत्युना। पाशहस्तो महाज्वाल ऊर्ध्वरोमा भयानकः ॥ दंष्ट्राली विद्युज्जिह्वश्च सर्पवृश्चिकरोमवान् ॥ रक्ताक्षो भीमवेगश्च सर्वसत्त्वभयंकरः। आदित्य इव दुष्प्रेक्ष्य समरेष्वनिवर्तकः ॥ पापानां शासिता चैव समया युधि निर्जितः। न च मे तत्र भीः काचिद्यथा वा दानवेश्वर ॥', (७. २३क, ७५–७७)। ब्रह्मा की आज्ञा पर (७. ३६, ७–९) इन्होंने हनुमान् को अपने दण्ड से अवध्य, और निरोग होने का वर दिया (७. ३६, १६)।

यमल, एक असुर का नाम है जिसका विष्णु ने वध किया था (७.६,३५)।

यमुना—श्रीराम आदि उस स्थान की ओर अग्रसर हुये जो गंगा और यमुना का संगम था (२. ५४, २)। गंगा और यमुना के जलों के मिलन से उत्पन्न शब्द को सुनकर श्रीराम यह समझ गये कि वे संगम-स्थल पर आ गये हैं (२. ५४, ६)। भरद्वाज का आश्रम गंगा और यमुना के संगम पर स्थित था (२. ५४, ८)। 'अवकाशो विविक्तोऽयं महानद्योः समागमे। पुण्यश्च रमणीयश्च वसत्विह भवान्सुखम् ॥', (२. ५४, २२)। 'गंगायमुनयोः संधिमासाद्य मनुजर्षभौ। कालिन्दीमनुगच्छेतां नदीं पश्चान्मुखाश्रिताम् ॥', (२. ५५, ४)। श्रीराम आदि ने बेड़े में बैठकर इसे पार किया (२. ५५, १८)। 'कालिन्दीं शीघ्रस्रोतस्विनीं नदीम्', (२. ५५, १३)। सीता ने इसकी स्तुति की (२. ५५, १९–२०)। श्रीराम आदि इसके दक्षिण तट पर आये (२. ५५, २१)। 'ततः प्लवेनांशुमतीं शीघ्रगामूर्मिमालिनीम्। तीरजैर्बहुभिर्वृक्षैः संतेरुर्यमुनां नदीम् ॥', (२. ५५, २२)। 'विचित्रबालुकजलां हंससारसनादिताम्। रेमे जनकराजस्य सुता प्रेक्ष्य तदा नदीम् ॥', (२. ५५, ३१)। "केकय से लौटते समय भरत ने इसे पार किया था। उन्होंने इसमें स्नान और जलपान करने के पश्चात् इसका जल भी अपने साथ लिया (२. ७१, ६–७)।" चित्रकूट से लौटते समय भरत ने इस ऊर्मिमालिनी नदी को पुनः पार किया (२. ११३, २१)। यह यामुन पर्वत से निकली है, और सुग्रीव ने विनत को इसके क्षेत्र में सीता की खोज करने के लिये कहा (४. ४०, २०)।

ययाति, नहुष के पुत्र और नाभाग के पिता का नाम है (१. ७०, ४२)। पूर्वकाल में ये स्वर्गलोक का त्याग करके पुनः भूतल पर उतर आये परन्तु सत्य

के प्रभाव से फिर स्वर्ग लौट गये (२. २१, ४७. ६२)। ये इन्द्र के समान लोक प्राप्त करने में समर्थ हुये थे (३. ६६, ७)। 'नहुषस्य सुतो राजा ययाति पौरवर्धनः', (७. ५८, ७)। 'अन्या तूशनसः पत्नी ययातेः पुरुषर्षभ। न तु सा दयिता राज्ञो देवयानी सुमध्यमा ।।', (७. ५८, ९)। शुक्राचार्य के शाप के कारण जीर्ण, वृद्ध, और शिथिल हो जाने के कारण इन्होंने अपने पुत्र यदु से कहा कि वे इनकी वृद्धावस्था को कुछ समय के लिये ले लें (७. ५८, २२–२५; ५९, १–३)। यदु के अस्वीकार कर देने पर इन्होंने अपने दूसरे पुत्र, पूरु, से यही प्रस्ताव किया (७. ५९, ६)। "अपने वृद्धत्व को पूरु को देकर इन्होंने अनेक वर्षों तक सुखभोग किया। तदनन्तर अपनी वृद्धावस्था वापस लेकर पूरु का राज्याभिषेक किया और स्वयं संन्यास ले लिया। मृत्यु के पश्चात् ये स्वर्गलोक को चले गये (७. ५९, ८–१८)।"

यवक्रीत, एक ऋषि का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये पूर्व दिशा से पधारे थे (७. १, २)।

यवद्वीप, सात राज्यों से सुशोभित एक देश का नाम है जहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने विनत को भेजा था (४. ४०, २८–२९)।

यवन—विश्वामित्र की सेना का संहार करने के लिये वसिष्ठ की शबली गाय ने यवनों को उत्पन्न किया जो अत्यन्त तेजस्वी, सुवर्ण के समान कान्तिमान्, सुवर्ण वस्त्रों से विभूषित, तीक्ष्ण खड्गों से युक्त तथा पट्टिश आदि लिये हुये थे (१. ५४, २०–२२)। विश्वामित्र ने इन पर अनेक अस्त्रों से प्रहार किया जिससे ये अत्यन्त व्याकुल हो उठे (१. ५४, २३)। ये वसिष्ठ की शबली गाय के योनि देश से उत्पन्न हुये थे (१. ५५, ३)। सुग्रीव ने शतवलि को इनके नगरों में भी सीता की खोज करने के लिये कहा (४. ४३, १२)।

यामुन, एक पर्वत का नाम है जहाँ से यमुना निकली हैं। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को इसके क्षेत्र में भेजा (४. ४०, २०)।

युद्धोन्मत्त, एक राक्षस-प्रमुख का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये थे (५. ६, २५)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी थी (५. ५४, १३)। रावण ने राक्षस-कुमारों के साथ युद्धभूमि में जाने के लिये इससे अनुरोध किया (६. ६९, १६)।

युधाजित्—श्रीराम के विवाह के एक दिन पूर्व ये भी केकय से मिथिला पधारे (१. ७३, १)। ये केकय के राजकुमार और भरत के मामा थे (१. ७३, २)। ये पहले भरत को देखने के लिये अयोध्या पधारे और वहीं से मिथिला आये (१. ७३, ४–५)। दशरथ ने इनका हार्दिक स्वागत किया (१. ७३, ६)। ये भरत और शत्रुघ्न के लेकर केकय लौट गये (१. ७७, १७–

२०)। इन्होंने वसिष्ठ के दूतों का हार्दिक स्वागत किया (२. ७०, २)। इन्होंने भरत को विदा किया (२. ७०, २८)। कैकेयी ने भरत से इनका कुशल समाचार पूछा (२. ७२, ६)। वसिष्ठ ने इन्हें बुलवाया (२. ८१, १३)। राम ने उचित आदर-सत्कार के साथ इन्हें विदा किया (७. ३८, ८–१४)। इन्होंने अपने पुरोहित, गार्ग्य, के द्वारा अनेक उपहार और समाचार राम के पास भेजे (७. १००, १–३)। भरत के आने पर इन्होंने भी उनके साथ सम्मिलित होकर गन्धर्व देश में प्रवेश किया (७. १०१, १–३)।

युवनाश्व, धुन्धुमार के पुत्र तथा मान्धाता के महातेजस्वी और महारथी पिता का नाम है (१. ७०, २४)।

यूपाक्ष, रावण के एक सेनापति का नाम है जिसने रावण के आदेश पर हनुमान् से द्वन्द्व युद्ध किया और आहत हुआ (५. ४६, १–१७. २९–३२)। रावण के एक सचिव का नाम है (६. ६०, ७२)। कुम्भकर्ण के पूछने पर इसने बताया कि किस प्रकार वानरों ने लंका को घेर लिया है और राक्षसों का मनुष्यों के हाथ विनाश होने वाला है (६. ७, ७२–७८)। रावण ने कुम्भ और निकुम्भ के साथ इसे भी युद्धभूमि में जाने का आदेश दिया (६. ७५, ४६)। शोणिताक्ष को अङ्गद के द्वारा त्रस्त देखकर यह उसकी सहायता के लिये दौड़ पड़ा (६. ७६, १२)। इसने प्रजङ्घ और शोणिताक्ष के साथ मिलकर अङ्गद से युद्ध किया (६. ७६, १४–१५)। मैन्द ने इसका वध किया (६. ७६, २८–३३)।

यौगन्धर, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ६)।

र

रंह, एक वानर यूथपति का नाम है जो किष्किन्धा में सुग्रीव के समक्ष उपस्थित हुये थे (४. ३९. ३८, गीता-प्रेस संस्करण)।

रति, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ८)।

१. रभस, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ४)।

२. रभस, एक राक्षस का नाम है जो श्रीराम आदि के वध की प्रतिज्ञा करके अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हो रावण के समीप उपस्थित हुआ (६. ९, १)।

३. रभस, एक वानर-प्रमुख का नाम है जो वानरी-सेना को आगे बढ़ने की प्रेरणा देता हुआ चल रहा था (६. ४, ३७)।

रम्भ, एक वानर यूथपति का नाम है जो प्रातःकाल के सूर्य की भाँति रक्त-वर्ण था : यह ग्यारह हजार एक सौ वानरों की सेना लेकर सुग्रीव के पास आया (४, ३९, ३२)। "सारण ने रावण को इसका परिचय देते हुये कहा : 'यह सिंह के समान पराक्रमी, कपिल-वर्ण, जिसकी ग्रीवा पर लम्बे-लम्बे बाल हैं, और जो लंका की ओर इस प्रकार देख रहा है मानो उसे भस्म कर देगा, रम्भ नामक वानर यूथपति है। यह निरन्तर विन्ध्य, कृष्णगिरि, सह्य और सुदर्शन आदि पर्वतों पर रहा करता है। इसके युद्ध के लिये प्रस्थान करने पर एक करोड़ तीस श्रेष्ठ, भयंकर, अत्यन्त क्रोधी, प्रचण्ड, और ऐसे पराक्रमी वानर इसका अनुसरण करते हैं जो सबके सब अपने वल से लंका को मसल डालने के लिये इसको घेर कर खड़े हैं।' (४. २६, ३१-३३ ।" इसने सावधानी के साथ अपनी सेना की व्यूह रचना करके हाथ में वृक्ष लिये हुये श्रीराम की रक्षा की (६. ४७, २)।

रम्भा, एक अप्सरा का नाम है जिसे इन्द्र ने विश्वामित्र की तपस्या भङ्ग करने का आदेश दिया (१. ६४, १)। इसने इन्द्र से विश्वामित्र के प्रति अपने भय को प्रगट किया (१. ६४, २-५)। इन्द्र के आश्वासन पर इसने विश्वामित्र को मोहित करना आरम्भ किया परन्तु विश्वामित्र ने देवों का अभिप्राय समझकर इसे दस सहस्र वर्षों तक पाषाण-प्रतिज्ञा बनी रहने का शाप दे दिया और कहा कि इस अवधि के पश्चात् एक तपोबल-सम्पन्न ब्राह्मण इसका उद्धार करेंगे (१. ६४, ८-१५)। "विराध ने बताया कि वह पहले तुम्बुरु नामक गन्धर्व था। रम्भा के प्रति आसक्ति के कारण वह कुवेर की सेवा में उचित समय पर नहीं पहुँच सका, जिससे कुवेर ने उसे राक्षस बन जाने का शाप दिया (३. ४, १८)।" "एक समय रावण कैलास-पर्वत पर सेना-सहित रुका। विविध कुसुमों के मधुर मकरन्द तथा पराग से मिश्रित वहाँ की वायु ने रावण की कामवासना को उद्दीप्त कर दिया। उसी समय रम्भा—दिव्याभरणभूषिता। सर्वाप्सरोवरा रम्भा पूर्णचन्द्रनिभानना——उस मार्ग से आ निकली (७. २६, १. ११. १४)"। 'दिव्यचन्दनलिप्ताङ्गी मन्दारकृतमूर्धजा। दिव्योत्सवकृतारम्भा दिव्यपुष्पविभूषिता॥ चक्षुर्मनोहरं पीनं मेखलादामभूषितम्। समुद्वहन्तीजघनं रतिप्राभृतमुत्तमम्॥ कृतैर्विशेषकैरार्द्रैः षडर्तुकुसुमोद्भवैः॥ वभावन्यतमेव श्रीः कान्तिश्रीद्युतिकीर्तिभिः। नीलं सतोयसेघाभं वस्त्रं समवगुण्ठिता॥ यस्या वक्त्रं शशिनिभं भ्रुवौ चापनिभे शुभे। ऊरू करिकराकारौ करौ पल्लवकोमलौ॥,' (७. २६, १५-१९)। "उस समय रावण इसे देखकर इस पर आसक्त हो गया। रावण के समागम का प्रस्ताव करने पर इसने बताया कि यह रावण की पुत्र-वधू है क्योंकि उस समय यह

रावण के भ्राता, कुबेर, के पुत्र नलकूबर से मिलने जा रही है। रावण ने इसके अनेक अनुनय-विनय करने पर भी इसके साथ बलात्कार किया। उपभोग के बाद रावण ने इसे छोड़ दिया। उस समय इसकी दशा उस नदी के समान हो गई जिसे किसी गजराज ने क्रीड़ा करके मथ डाला हो। इस दयनीय अवस्था में नलकूबर के पास जाकर इसने समस्त वृत्तान्त बताया. जिस पर क्रुद्ध होकर नलकूबर ने रावण को शाप दिया (७. २६, १९-५३)।"

रश्मिकेतु, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में सीता की खोज करते हुये हनुमान् ने प्रवेश किया (५. ६, २१)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १२)। यह भी अन्य राक्षसों के साथ अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर श्रीराम आदि के वध की प्रतिज्ञा करके रावण की सभा में उपस्थित था (६. ९, २)। इसने श्रीराम पर आक्रमण किया (६. ४३. ११-२७)। श्रीराम ने इसका वध कर दिया (६. ४३, २८)। विभीषण ने वानरों को इसके वध का समाचार बताया (६. ८९, १३)।

राजगृह, केकय देश की राजधानी का नाम है। वसिष्ठ के दूत यहाँ पहुँचे (२. ७०, १)। यहाँ से निकल कर पराक्रमी भरत ने पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान किया (२. ७१, १)।

रात्रि—श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा के लिए कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, १४)। 'शशिना विमलेनेव शारदी रजनीयथा', (२. १०१, ११)। अग्नि-परीक्षा के लिए अग्नि में प्रवेश करते समय सीता ने अपने चरित्र की शुद्धता प्रमाणित करने के लिए इनका भी आवाहन किया (६. ११६, २८, गीताप्रेस संस्करण)।

राधेय, एक बहुमायावी राक्षस का नाम है जिसे विष्णु ने पराजित किया था (७. ६, ३५)।

राम—सम्पूर्ण रामायण में श्रीराम के ही जीवन-वृत्त और चरित्र का वर्णन है। इनके जन्म के उल्लेख के पश्चात् से तो प्रायः सभी सर्गो में इनका किसी न किसी रूप में वर्णन है ही, जन्म-पूर्व सर्गों में भी इनके जन्म तथा जीवन की घटनाओं की पूर्वपीठिका है। अतः उन समस्त स्थलों का उल्लेख करना, जहाँ इनका नाम या प्रसङ्ग आता है, सम्पूर्ण रामायण का सारांश प्रस्तुत करना होगा। अधिकांश ऐसे सर्गों में भी जिनमें ये एक पात्र के रूप में उपस्थित नहीं हैं, अन्य पात्र इनके लिये या इनका नाम लेकर ही अपना कार्य करते हैं। फिर भी, यहाँ हम ऐसे स्थलों का उल्लेख कर रहे हैं जहाँ एक प्रमुख पात्र के रूप में ये उपस्थित हैं : नारद जी ने वाल्मीकि मुनि को संक्षेप में श्रीराम चरित्र सुनाया (१. १)। तमसा के तट पर क्रौञ्चवध से संतप्त हुये

महर्षि वाल्मीकि का शोक श्लोक-रूप में प्रगट हुआ तथा ब्रह्माजी ने उन्हें रामचरित्रमय काव्य के निर्माण का आदेश दिया (१. २)। महर्षि वाल्मीकि ने चौबीस हजार श्लोकों से युक्त रामायण-काव्य का निर्माण करके उसे लव और कुश को पढ़ाया जिसे उन लोगों ने राम दरवार में सुनाया (१. ४)। श्रीराम आदि के जन्म, संस्कार, शील-स्वभाव एवं सद्गुणों का वर्णन (१. १८)। विश्वामित्र के मुख से श्रीराम को साथ ले जाने की माँग सुनकर राजा दशरथ दु:खित एवं मूर्छित हो गये (१. १९)। दशरथ ने विश्वामित्र को अपने पुत्र श्रीराम को देना अस्वीकार कर दिया जिस पर विश्वामित्र कुपित हो गये (१. २०)। "राजा दशरथ ने स्वस्तिवाचनपूर्वक राम को मुनि के साथ भेज दिया। मार्ग में श्रीराम को विश्वामित्र से 'वला' और 'अतिबला' नामक विद्या की प्राप्ति हुई (१. २२)।" श्रीराम और लक्ष्मण ने विश्वामित्र के साथ सरयू-गंगा संगम के समीप पुण्य आश्रम में रात्रि व्यतीत की (१. २३)। "लक्ष्मण सहित श्रीराम ने गंगा पार करते समय विश्वामित्र से जल में उठती हुई तुमुलध्वनि के विषय में प्रश्न किया। विश्वामित्र ने उन्हें इसका कारण बताया तथा मलद, करूष एवं ताटकावन का परिचय देते हुये ताटकावध के लिए आज्ञा प्रदान की (१. २४)।" श्रीराम के पूछने पर विश्वामित्र ने उनसे ताटका की उत्पत्ति, विवाह, एवं शाप आदि का प्रसङ्ग सुनाकर उन्हें ताटका-वध के लिये प्रेरित किया (१. २५)। श्रीराम ने ताटका का वध कर दिया (१. २६)। विश्वामित्र ने श्रीराम को दिव्यास्त्र प्रदान किये (१.२७)।" "त्रिश्वामित्र मुनि ने श्रीराम को अस्त्रों की संहार-विधि बताकर अन्यान्य अस्त्रों का उपदेश दिया। श्रीराम ने मुनि से एक आश्रम एवं यज्ञस्थान के विषय में प्रश्न किया (१. २८)।" विश्वामित्र ने श्रीराम से सिद्धाश्रम का पूर्ववृत्तान्त वताया तथा राम और लक्ष्मण के साथ अपने आश्रम पर पहुँचकर सुशोभित हुये (१. २९)। श्रीराम ने विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा तथा राक्षसों का संहार किया (१. ३०)। लक्ष्मण, ऋषियों, तथा विश्वामित्र के साथ श्रीराम ने मिथिला को प्रस्थान किया और मार्ग में सन्ध्या होने पर शोणभद्र-तट पर विश्राम किया (१. ३१)। श्रीराम के पूछने पर विश्वामित्र ने उन्हें गंगाजी की उत्पत्ति की कथा सुनाई (१. ३५, १२-२४)। राजा सुमति से सत्कृत हो एक रात विशाला में रहकर मुनियों सहित श्रीराम मिथिलापुरी में पहुँचे और वहाँ सूने आश्रम के विषय में प्रश्न करने पर विश्वामित्र ने श्रीराम को अहल्या को शाप प्राप्त होने की कथा सुनाया (१. ४८)। श्रीराम ने अहल्या का उद्धार और गौतम-दम्पती ने राम का सत्कार किया (१. ४९, ११-२२)। श्रीराम आदि के मिथिलापुरी जाने पर राजा जनक ने विश्वामित्र का सत्कार करके श्रीराम और लक्ष्मण के

विषय में जिज्ञासा प्रगट करते हुये उनका परिचय प्राप्त किया (१. ५०)। शतानन्द के पूछने पर विश्वामित्र ने उन्हें श्रीराम के द्वारा अहल्या के उद्धार का समाचार बताया तथा शतानन्द ने श्रीराम का अभिनन्दन करते हुये विश्वामित्र के पूर्वचरित्र का वर्णन किया (१. ५१)। राजा जनक ने श्रीराम-लक्ष्मण, और विश्वामित्र का सत्कार करके उन्हें अपने यहाँ रक्खे हुए धनुष का परिचय दिया और धनुष चढ़ा देने पर सीता के साथ श्रीरामके विवाह का निश्चय प्रकट किया (१. ६६)। श्रीराम ने धनुर्भङ्ग किया (१. ६७)। राजा दशरथ के अनुरोध से वसिष्ठ ने सूर्यवंश का परिचय देते हुए श्रीराम और लक्ष्मण के लिए सीता और ऊर्मिला का वरण किया (१. ७०)। राजा जनक ने अपने कुल का परिचय देते हुए श्रीराम और लक्ष्मण के लिए सीता और ऊर्मिला को देने का निश्चय किया (१. ७१)। राजा दशरथ ने अपने श्रीराम आदि प्रत्येक पुत्र के मंगल के लिये एक-एक लाख गौएँ दान कीं (१. ७२, २२–२५)। श्रीराम आदि चारों भ्राताओं का विवाह हुआ (१. ७३)। राजा दशरथ की बात अनसुनी करके परशुराम ने श्रीराम को वैष्णव धनुष पर बाण चढ़ाने के लिए ललकारा (१. ७५)। श्रीराम ने वैष्णव धनुष को चढ़ाकर अमोघ बाण द्वारा परशुराम के तप से प्राप्त पुण्यलोकों का नाश किया (१. ७६)। "श्रीराम ने वधुओं सहित भ्राताओं के साथ अयोध्या में प्रवेश किया। इनके व्यवहार से सबको संतोष हुआ। श्रीराम तथा सीता के पारस्परिक प्रेम का उल्लेख (१. ७७)।" "श्रीराम के सद्गुणों का वर्णन। राजा दशरथ ने श्रीराम को युवराज बनाने का निश्चय किया तथा विभिन्न नरेशों और नगर एवं जनपद के लोगों को मन्त्रणा के लिए बुलाया (२. १)।" राजा दशरथ ने श्रीराम के राज्याभिषेक का प्रस्ताव किया तथा सभासदों ने श्रीराम के गुणों का वर्णन करते हुए उक्त प्रस्ताव का सहर्ष युक्तियुक्त समर्थन किया (२. २)। "दशरथ ने वसिष्ठ और वामदेव को श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारी करने के लिए कहा और उन्होंने सेवकों को तदनुरूप आदेश दिया। राजा की आज्ञा से सुमन्त्र श्रीराम को राजसभा में बुला लाये। श्रीराम के आने पर राजा दशरथ ने उन्हें हितकर राजनीति की शिक्षा दी (२. ३)।" "श्रीराम को राज्य देने का निश्चय करके दशरथ ने सुमन्त्र द्वारा श्रीराम को पुनः बुलवाकर उन्हें आवश्यक बातें बताया। श्रीराम ने कौसल्या के भवन में जाकर माता को यह समाचार बताया और माता से आशीर्वाद प्राप्त करके लक्ष्मण से प्रेमपूर्वक वार्तालाप करने के पश्चात् अपने महल में प्रवेश किया (२. ४)।" दशरथ के अनुरोध से वसिष्ठ ने सीता सहित श्रीराम को उपवास-व्रत की दीक्षा दी (२. ५)। "सीता सहित श्रीराम नियमपरायण हो गये। श्रीराम के राज्या-

भिषेक का समाचार सुनकर समस्त पुरवासी अत्यन्त प्रसन्न होकर अयोध्या को सजाने में लग गये। राज्याभिषेक देखने के लिए अयोध्यापुरी में जनपद-वासी मनुष्यों की भीड़ एकत्र हो गई (२. ६)।" श्रीराम के अभिषेक का समाचार पाकर खिन्न हुई मन्थरा ने कैकेयी को उभारा (२. ७, १–३०)। "मन्थरा द्वारा पुनः श्रीराम के राज्याभिषेक को कैकेयी के लिए अनिष्टकारी बताने पर कैकेयी ने श्रीराम के गुणों को बताकर उनके अभिषेक का समर्थन किया। तदनन्तर कुब्जा ने पुनः श्रीरामराज्य को भरत के लिए भयकारक बताकर कैकेयी को भड़काया (२. ८)।" कैकेयी ने दशरथ को पहले उनके दिये हुए दो वरों का स्मरण दिलाकर भरत के लिये अभिषेक और राम के लिये चौदह वर्षों का वनवास माँगा (२, ११)। कैकेयी द्वारा वरों की पूर्ति का दुराग्रह करने पर दशरथ ने वसिष्ठ के आगमन के पश्चात् सुमन्त्र को श्रीराम को बुलाने के लिए भेजा (२. १४)। राजा दशरथ की आज्ञा से सुमन्त्र श्रीराम को बुलाने के लिए उनके भवन में गये (२. १५)। सुमन्त्र ने श्रीराम के भवन में पहुँच कर महाराज का संदेश सुनाया और श्रीराम ने सीता से अनुमति ले लक्ष्मण के साथ रथारूढ़ होकर गाजे-बाजे के साथ स्त्री-पुरुषों की बातें सुनते हुए प्रस्थान किया (२. १६)। श्रीराम ने राजपथ की शोभा देखते और सुहृदों की बातें सुनते हुए पिता दशरथ के भवन में प्रवेश किया (२.१७)। श्रीराम द्वारा कैकेयी से पिता के चिन्तित होने का कारण पूछने पर कैकेयी ने कठोरतापूर्वक अपने माँगे हुये वरों का वृत्तान्त सुनाकर श्रीराम को वनवास के लिये प्रेरित किया (२. १८)। श्रीराम कैकेयी के साथ वार्त्तालाप और वन में जाना स्वीकार करके माता कौसल्या के पास आज्ञा लेने के लिये गये (२. १९) "श्रीराम ने कौसल्या के भवन में जाकर उन्हें अपने वनवास की बात बताया जिससे कौसल्या अचेत होकर धरती पर गिर पड़ीं। श्रीराम के उठा देने पर उन्होंने राम की ओर देखकर विलाप किया (२. २०)।" रोष में भरे हुये लक्ष्मण ने श्रीराम को बलपूर्वक राज्य पर अधिकार कर लेने के लिये प्रेरित किया परन्तु श्रीराम ने पिता की आज्ञा के पालन को ही धर्म बताकर माता और लक्ष्मण को समझाया (२. २१)। श्रीराम ने लक्ष्मण को समझाते हुये अपने वनवास में दैव को ही कारण बताया और अभिषेक की सामग्री को हटा देने का आदेश दिया (२. २२)। लक्ष्मण, राम के समक्ष दैव का खण्डन और पुरुषार्थ का प्रतिपादन करके श्रीराम के अभिषेक के निमित्त विरोधियों से लोहा लेने के लिए उद्यत हुये (२. २३)। विलाप करती हुई कौसल्या ने श्रीराम से अपने को भी साथ ले चलने का आग्रह किया परन्तु 'पतिसेवा ही नारी का धर्म है' यह बताकर श्रीराम ने उन्हें वन जाने से विरत करके अपने वन

जाने की अनुमति माँगी । (२. २४) । "कौसल्या ने श्रीराम की वनयात्रा के के लिए मङ्गलकामना पूर्वक स्वस्तिवाचन किया । श्रीराम ने उन्हें प्रणाम करके सीता के भवन की ओर प्रस्थान किया (२. २५) ।" श्रीराम को उदास देखकर सीता ने उनसे इसका कारण पूछा । श्रीराम ने इसके उत्तर में पिता की आज्ञा से वन जाने का निश्चय बताते हुये सीता को घर में रहने के लिये ही समझाया (२. २६)। सीता ने श्रीराम से अपने को भी साथ ले चलने की प्रार्थना की (२. २७)। श्रीराम ने वनवास के कष्टों का वर्णन करते हुए सीता को वहाँ चलने से मना किया (२. २८)। सीता ने श्रीराम के समक्ष उनके साथ अपने वनगमन का औचित्य बताया (२. २९) । "सीता का वन में चलने के लिये अधिक आग्रह, विलाप और घबराहट देखकर श्रीराम ने उन्हें साथ चलने की स्वीकृति दे दी । पिता-माता और गुरुजनों की सेवा का महत्व बताते हुये श्रीराम ने सीता को वन में चलने की तैयारी के लिये घर की वस्तुओं का दान करने की आज्ञा दी (२. ३०) ।" "श्रीराम और लक्ष्मण का संवाद हुआ । राम की आज्ञा से लक्ष्मण सुहृदों से पूछ और दिव्य आयुध लेकर वनगमन के लिये तैयार हुये । श्रीराम ने लक्ष्मण से ब्राह्मणों को धन बाँटने का विचार व्यक्त किया (२. ३१) ।" सीता सहित श्रीराम ने वसिष्ठपुत्र सुयज्ञ को बुलाकर उनके तथा उनकी पत्नी के लिये बहुमूल्य आभूषण, रत्न और धन आदि का दान, तथा ब्राह्मणों, ब्रह्मचारियों, सेवकों, त्रिजट ब्राह्मण और सुहृज्जनों को धन का वितरण किया (२. ३२) । सीता और लक्ष्मण सहित श्रीराम दुःखी नगरवासियों के मुख से तरह-तरह की बातें सुनते हुये पिता के दर्शन के लिये कैकेयी के महल में गये (२. ३३) । "सीता और लक्ष्मण सहित श्रीराम ने रानियों सहित राजा दशरथ के पास जाकर वनवास के लिये विदा माँगी । दशरथ शोक-संतप्त हो मूर्च्छित हो गये । श्रीराम ने उन्हें समझाया तथा दशरथ श्रीराम को हृदय से लगाकर पुनः मूर्च्छित हो गये (२. ३४) ।" "जब दशरथ ने श्रीराम के साथ सेना और खजाना भेजने का आदेश दिया तो कैकेयी ने इसका विरोध किया । सिद्धार्थ ने कैकेयी को समझाया तथा दशरथ ने श्रीराम के साथ जाने की इच्छा प्रकट की (२. ३६) ।।" श्रीराम आदि ने वल्कल-वस्त्र धारण किया (२. ३७, १–१४) । श्रीराम ने दशरथ से कौसल्या पर कृपादृष्टि रखने के लिये अनुरोध किया (२. ३८, १४–१७) । "राजा दशरथ ने राम के वनवास पर विलाप करना आरम्भ किया । दशरथ की आज्ञा से राम के लिये सुमन्त्र रथ जोत कर लाये । श्रीराम ने अपनी माता से पिता के प्रति कोपदृष्टि न रखने का अनुरोध करके अन्य माताओं से भी वन-गमन की विदा माँगी (२. ३९, १–१३: ३३–४१) ।" सीता और

लक्ष्मण सहित श्रीराम ने दशरथ की परिक्रमा करके कौसल्या आदि को प्रणाम तथा रथ में बैठकर वन की ओर प्रस्थान किया (२. ४०)। श्रीराम के वनगमन से अन्तःपुर की स्त्रियों ने विलाप तथा नगरवासियों ने शोक प्रगट किया (२, ४१)। दशरथ ने श्रीराम के लिये विलाप किया तथा सेवकों की सहायता से कौसल्या के भवन में आकर वहाँ भी दुःख का ही अनुभव किया (२. ४२)। "श्रीराम ने पुरवासियों से भरत और महाराज दशरथ के प्रति प्रेमभाव रखने का अनुरोध करते हुये लौट जाने के लिये कहा। नगर के वृद्ध ब्राह्मणों ने श्रीराम से लौट चलने के लिये आग्रह किया तथा उन सबके साथ श्रीराम तमसा-तट पर पहुँचे (२. २५.)।" सीता और लक्ष्मण सहित श्रीराम ने रात्रि में तमसा-तट पर निवास, माता-पिता और अयोध्या के लिये चिन्ता, तथा पुरवासियों को सोते छोड़कर वन की ओर प्रस्थान किया (२. ४६)। "नगरवासियों की बातें सुनते हुये श्रीराम कौसल जनपद को लाँघते हुये आगे गये। वेदश्रुति, गोमती एवं स्यन्दिका नदियों को पार करके सुमन्त्र से कुछ कहा (२. ४९)।" "श्रीराम ने मार्ग में अयोध्यापुरी से वनवास की आज्ञा माँगी और शृङ्गवेरपुर में गंगा तट पर पहुँच कर रात्रि में निवास किया। निषादराज गुह ने उनका सत्कार किया (२. ५०)।" "श्रीराम की आज्ञा से गुह ने नौका मँगायी। श्रीराम ने सुमन्त्र को समझा-बुझाकर अयोध्यापुरी लौट जाने की आज्ञा देते हुये माता-पिता आदि के लिये संदेश दिया। सुमन्त्र के वन में ही चलने का आग्रह करने पर श्रीराम ने उन्हें युक्तिपूर्वक समझा कर लौटने के लिये विवश किया और तदनन्तर नौका पर बैठे। सीता ने गंगाजी की स्तुति की। नौका से उतकर श्रीराम आदि वत्सदेश में पहुँचे और सायंकाल एक वृक्ष के नीचे रहने के लिये गये (२. ५२)।" "श्रीराम ने राजा को उपालम्भ देते हुये कैकेयी से कौसल्या आदि के अनिष्ट की आशंका बताकर लक्ष्मण को अयोध्या लौटाने का प्रयत्न किया। लक्ष्मण ने श्रीराम के बिना अपना जीवन असम्भव बताकर वहाँ जाना अस्वीकार किया। श्रीराम ने उन्हें वनवास की अनुमति प्रदान की (२. ५२)।" "लक्ष्मण और सीता सहित श्रीराम प्रयाग में गंगा-यमुना के संगम के समीप भरद्वाज-आश्रम में गये। भरद्वाज मुनि ने उनका आदर-सत्कार कर उन्हें चित्रकूट पर्वत पर ठहरने का आदेश तथा चित्रकूट की महत्ता एवं शोभा का वर्णन किया (२. ५४)।" "भरद्वाज ने श्रीराम आदि के लिये स्वस्तिवाचन करके उन्हें चित्रकूट का मार्ग बताया। श्रीराम आदि ने अपने ही बनाये हुये बेड़े से यमुना को पार करने के बाद उसके किनारे के मार्ग से एक कोस तक जाकर वन में भ्रमण तथा उसके समतल तट पर रात्रि में निवास किया

(२. ५५)।" "वन की शोभा देखते-दिखाते हुये श्रीराम आदि चित्रकूट पहुँचे। वाल्मीकि का दर्शन करके श्रीराम की आज्ञा से लक्ष्मण ने पर्णशाला का निर्माण तथा वास्तुशान्ति करके सबने कुटी में प्रवेश किया (२. ५६)।" सुमन्त्र के अयोध्या लौटने पर उनके मुख से श्रीराम का संदेश सुनकर पुरवासियों ने विलाप किया, राजा दशरथ और कौसल्या मूर्च्छित हो गये तथा अन्तःपुर की रानियों ने आर्तनाद किया (२. ५७)। महाराज दशरथ की आज्ञा से सुमन्त्र ने श्रीराम और लक्ष्मण के सन्देश सुनाये (२. ५८)। सुमन्त्र द्वारा श्रीराम के शोक से जड़-चेतन एवं अयोध्यापुरी की दुरवस्था का वर्णन सुनकर राजा दशरथ ने विलाप किया (२. ५९)। ननिहाल से लौटकर भरत ने राम के विषय में पूछा जिसका उत्तर देते हुये कैकेयी ने श्रीराम के वनगमन के वृत्तान्त से भरत को अवगत कराया (२. ७२, ४०–५४)। भरत ने श्रीराम को ही राज्य का अधिकारी बताकर उन्हें लौटा लाने के लिये चलने के निमित्त व्यवस्था करने की सेवकों को आज्ञा दी (२. ७९, ८–१७; ८२, ११–३१)। भरत द्वारा गुह से श्रीराम आदि के भोजन और शयन आदि के विषय में पूछने पर गुह ने उन्हें समस्त बातों का उत्तर दिया (२. ८७, १३–२४)। श्रीराम की कुश-शय्या देखकर भरत ने शोकपूर्ण उद्गार तथा स्वयं भी वल्कल और जटा धारण करके वन में रहने का विचार प्रकट किया (२. ८८)। भरत ने भरद्वाज मुनि से श्रीराम के आश्रम पर जाने का मार्ग जानकर सेना सहित चित्रकूट के लिये प्रस्थान किया (२. ९२)। श्रीराम ने सीता को चित्रकूट की शोभा का दर्शन कराया (२. ९४)। श्रीराम ने सीता से मन्दाकिनी नदी की शोभा का वर्णन किया (२. ९५)। वनजन्तुओं के भागने का कारण जानने के लिये श्रीराम की आज्ञा से लक्ष्मण ने साल-वृक्ष पर चढ़कर भरत की सेना को देखा और उनके प्रति श्रीराम के समक्ष अपना रोषपूर्ण उद्गार प्रकट किया (२. ९६)। "श्रीराम ने लक्ष्मण के रोष को शान्त करके भरत के सद्भाव का वर्णन किया। लक्ष्मण लज्जित होकर श्रीराम के पास खड़े हो गये (२. ९७)।" भरत ने श्रीराम के आश्रम की खोज का प्रबन्ध किया और अन्ततः उन्हें आश्रम का दर्शन प्राप्त हुआ (२. ९८)। "भरत ने शत्रुघ्न आदि के साथ श्रीराम के आश्रम पर जाकर उनकी पर्णशाला का दर्शन किया तथा रोते-रोते श्रीराम के चरणों में गिर पड़े। श्रीराम ने उन सबको हृदय से लगाकर आलिङ्गन किया (२. ९९)।" श्रीराम ने भरत को कुशल-प्रश्न के बहाने राजनीति का उपदेश दिया (२. १००)। श्रीराम के भरत से वन में आगमन का प्रयोजन पूछने पर भरत ने उनसे राज्य-ग्रहण करने के लिये कहा जिसे श्रीराम ने

अस्वीकार कर दिया (२. १०१)। भरत ने पुनः श्रीराम से राज्य ग्रहण करने का अनुरोध करके उनसे पिता की मृत्यु का समाचार बताया (२. १०२)। पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर श्रीराम आदि ने विलाप, जलाञ्जलि, पिण्डदान और विलाप किया (२. १०३)। श्रीराम आदि माताओं की चरण-वन्दना तथा वसिष्ठ को प्रणाम करके सबके साथ बैठे (२. १०४, १८–३२)। भरत ने श्रीराम को अयोध्या में चलकर राज्य ग्रहण करने के लिये कहा परन्तु श्रीराम ने जीवन की अनित्यता बताते हुये पिता की मृत्यु के लिये शोक न करने का भरत को उपदेश दिया और पिता की आज्ञा का पालन करने के लिये ही स्वयं राज्य-ग्रहण न करके वन में रहने का दृढ़ निश्चय बताया (२. १०५)। भरत ने पुनः श्रीराम से अयोध्या लौटने और राज्य-ग्रहण करने की प्रार्थना की (२. १०६)। श्रीराम ने भरत को समझाकर उन्हें अयोध्या जाने का आदेश दिया (२. १०७)। जाबालि ने नास्तिकों के मत का अवलम्बन करके श्रीराम को समझाया (२. १०८)। श्रीराम ने जाबालि के नास्तिक मत का खण्डन करके आस्तिक मत की स्थापना की (२. १०९)। वसिष्ठ ने ज्येष्ठ के ही राज्याभिषेक का औचित्य सिद्ध करके श्रीराम से राज्य ग्रहण करने के लिये कहा (२. ११०)। "वसिष्ठ के समझाने पर भी श्रीराम पिता की आज्ञा के पालन से विरत नहीं हुये। भरत के धरना देने को तैयार होने पर श्रीराम ने उन्हें समझाकर अयोध्या लौटने की आज्ञा दी (२. १११)।" "ऋषियों ने भरत को श्रीराम की आज्ञा के अनुसार लौट जाने की सलाह दी। भरत ने श्रीराम के चरणों में गिर कर पुनः लौट चलने की प्रार्थना की। श्रीराम ने भरत को समझाया और अपनी चरणपादुका देकर सबको विदा किया (२. ११२)।" भरत ने नन्दिग्राम में जाकर श्रीराम की चरण-पादुकाओं को राज्य पर अभिषिक्त करके उन्हें निवेदनपूर्वक राज्य-कार्य किया (२. ११५)। श्रीराम आदि अत्रि मुनि के आश्रम पर गये जहाँ मुनि ने उनका तथा अनसूया ने सीता का सत्कार किया (२. ११७)। अनसूया की आज्ञा से सीता उनके दिये हुये वस्त्राभूषणों को धारण करके श्रीराम के पास आईं, तथा श्रीराम आदि ने रात्रि में आश्रम पर निवास करके प्रातःकाल अन्यत्र जाने की ऋषियों से विदा की याचना की (२. ११९)। श्रीराम आदि का तापसों के आश्रम-मण्डल में सत्कार (३. १)। वन के भीतर श्रीराम आदि पर विराध ने आक्रमण किया (३. २)। विराध और श्रीराम का वार्त्तालाप, श्रीराम और लक्ष्मण द्वारा विराध पर प्रहार तथा विराध का इन दोनों भ्राताओं को साथ लेकर दूसरे वन में चला जाना (३. ३)। श्रीराम और लक्ष्मण ने विराध का वध कर दिया (३. ४)। श्रीराम आदि शरभङ्ग मुनि के आश्रम पर गये जहाँ देवताओं का

दर्शन करके मुनि से सम्मानित हुये (३. ५)। वानप्रस्थ मुनियों की राक्षसों के अत्याचार से अपनी रक्षा के लिये प्रार्थना पर श्रीराम ने उन्हें आश्वासन दिया (३. ६)। भ्राता तथा पत्नी सहित श्रीराम ने सुतीक्ष्ण के आश्रम पर जाकर उनसे वार्त्तालाप तथा सत्कृत हो रात्रि में वहीं विश्राम किया (३. ७)। प्रातःकाल सुतीक्ष्ण से विदा लेकर श्रीराम आदि ने वहाँ से प्रस्थान किया (३. ८)। सीता ने श्रीराम से निरपराध प्राणियों को न मारने और अहिंसा धर्म का पालन करने के लिये अनुरोध किया (३. ९)। श्रीराम ने ऋषियों की रक्षा के लिये राक्षसों के वध के निमित्त की हुई प्रतिज्ञा के पालन पर दृढ़ रहने का विचार प्रकट किया (३. १०)। विभिन्न आश्रमों में घूम कर श्रीराम आदि सुतीक्ष्ण के आश्रम पर आये और वहाँ कुछ समय तक निवास करके उनकी आज्ञा से अगस्त्य के भ्राता तथा अगस्त्य के आश्रम पर गये (३. ११)। श्रीराम आदि को अगस्त्य के आश्रम में प्रवेश करने पर आतिथ्य-सत्कार तथा मुनि की ओर से दिव्य अस्त्र-शस्त्र प्राप्त हुये (३. १२)। "महर्षि अगस्त्य ने श्रीराम के प्रति अपनी प्रसन्नता प्रकट करके सीता की प्रशंसा की। श्रीराम के पूछने पर मुनि ने उन्हें पञ्चवटी में आश्रम बनाकर रहने का आदेश दिया। श्रीराम आदि ने प्रस्थान किया (३. १३)।" पञ्चवटी के मार्ग में जटायु ने श्रीराम को अपना विस्तृत परिचय दिया (३. १४)। पञ्चवटी के रमणीय प्रदेश में श्रीराम की आज्ञा से लक्ष्मण ने सुन्दर पर्णशाला का निर्माण किया जिसमें श्रीराम आदि निवास करने लगे (३. १५)। श्रीराम आदि ने गोदावरी नदी में स्नान किया (३. १६, ४१–४३)। श्रीराम के आश्रम में आकर शूर्पणखा ने उनका परिचय प्राप्त किया और अपना परिचय देकर उनसे अपने को भार्या के रूप में ग्रहण करने के लिये अनुरोध किया (३. १७)। श्रीराम ने शूर्पणखा की प्रणय-याचना अस्वीकृत कर दी (३. १८, १–५)। शूर्पणखा के मुख से उसकी दुर्दशा का वृत्तान्त सुनकर क्रोध में भरे हुये खर ने श्रीराम आदि के वध के लिये चौदह राक्षसों को भेजा (३. १९)। श्रीराम ने खर के भेजे गये चौदह राक्षसों का वध कर दिया (३. २०)। शूर्पणखा ने खर को राम का भय दिखाकर युद्ध के लिये उत्तेजित किया (३. २१, १४–२२)। राक्षस-सेना श्रीराम के आश्रम के समीप पहुँची (३. २३, ३४)। श्रीराम तात्कालिक शकुनों द्वारा राक्षसों के विनाश और अपनी विजय की सम्भावना करके सीता सहित लक्ष्मण को पर्वत की गुफा में भेज युद्ध के लिये उद्यत हुये (३. २४)। राक्षसों ने श्रीराम पर आक्रमण किया; श्रीराम ने राक्षसों का संहार किया (३. २५)। श्रीराम ने दूषण सहित चौदह सहस्र राक्षसों का वध कर दिया

(३. २६)। श्रीराम द्वारा त्रिशिरा का वध (३. २७)। खर के साथ श्रीराम का भयंकर युद्ध हुआ (३. २८)। श्रीराम के खर को फटकारने पर खर ने भी उन्हें कठोर उत्तर देते हुये उनके ऊपर गदा का प्रहार किया जिससे कुपित हो श्रीराम ने उस गदा का खण्डन किया (३. २९)। "श्रीराम के व्यङ्ग करने पर खर ने उन्हें फटकार कर उनके ऊपर सालवृक्ष का प्रहार किया। श्रीराम ने उस वृक्ष को काटकर एक तेजस्वी बाण से खर को मार गिराया। देवताओं और महर्षियों ने श्रीराम की प्रशंसा की (३. ३०)।" शूर्पणखा ने रावण को श्रीराम आदि का परिचय दिया (३. ३४)। रावण ने मारीच से श्रीराम का अपराध बताकर उनकी पत्नी सीता के अपहरण में उसकी सहायता माँगी (३. ३६)। मारीच ने रावण को श्रीराम का गुण और प्रभाव बताकर उनकी पत्नी सीता के अपहरण के उद्योग से रोका (३. ३७)। श्रीराम की शक्ति के विषय में अपना अनुभव बताकर मारीच ने रावण को श्रीराम का अपराध न करने के लिये समझाया (३. ३८)। मारीच सुवर्णमय मृग का रूप धारण करके श्रीराम के आश्रम पर गया (३. ४२)। "सीता ने उस मृग को जीवित या मृत अवस्था में भी ले आने के लिये श्रीराम को प्रेरित किया। श्रीराम, लक्ष्मण को समझा-बुझाकर सीता की रक्षा का भार सौंप उस मृग का वध करने गये (३. ४३)।" श्रीराम ने मारीच का वध कर दिया। मारीच के द्वारा सीता और लक्ष्मण के पुकारने का शब्द सुनकर श्रीराम को चिन्ता हुई (१. ४४)। सीता के मार्मिक वचनों से प्रेरित होकर लक्ष्मण श्रीराम के पास गये (३. ४५)। सीता ने रावण के समक्ष श्रीराम के प्रति अपना अनन्य अनुराग दिखाया (३. ५६, १–२३)। मारीच का वध करके लौटते समय श्रीराम मार्ग में अपशकुन देखकर चिन्तित हुये तथा लक्ष्मण से मिलने पर उन्हें उलाहना देकर उन्होंने सीता पर संकट आने की आशङ्का प्रकट की (३. ५७)। मार्ग में अनेक प्रकार की आशङ्का करते हुये लक्ष्मण सहित श्रीराम आश्रम आये और वहाँ सीता को न पाकर व्यथित हुये, वृक्षों और पशुओं से सीता का पता पूछा, और भ्रान्त होकर रुदन करते हुये बारम्बार उनकी खोज की (३. ६०)। श्रीराम और लक्ष्मण ने सीता की खोज की और उनके न मिलने पर श्रीराम व्याकुल हो उठे (३. ६१)। श्रीराम ने विलाप किया (३. ६२, ६३)। "श्रीराम और लक्ष्मण ने सीता की खोज की। श्रीराम ने शोकोद्गार किया। मृगों द्वारा संकेत पाकर दोनों भ्राता दक्षिण दिशा की ओर गये। पर्वत पर क्रोध करके सीता के बिखरे हुये पुष्प, आभूषणों के कण और युद्ध के चिह्न देखकर श्रीराम ने देवों आदि सहित समस्त त्रिलोकी पर

रोष प्रकट किया (४. ६४) ।" लक्ष्मण ने श्रीराम को समझा-बुझा कर शान्त किया (३. ६५–६६) । श्रीराम और लक्ष्मण की पक्षिराज जटायु से भेंट हुई तथा श्रीराम ने उन्हें गले के लगाकर विलाप किया (३. ६७) । जटायु के प्राण-त्याग पर श्रीराम ने उनका दाह-संस्कार किया (३. ६८) । श्रीराम और लक्ष्मण कबन्ध के वाहु-बन्ध में पड़कर चिन्तित हुये (३. ७०. २६–५१) । "श्रीराम और लक्ष्मण ने विचार करके कबन्ध की दोनों भुजायें काट डालीं । कवन्ध न उनका स्वागत किया (३. ७०) ।" अपनी आत्मकथा सुनाकर अपने शरीर का दाह हो जाने पर कवन्ध ने श्रीराम को सीता के अन्वेषण में सहायता देने का आश्वासन दिया (३. ७१) । "श्रीराम और लक्ष्मण ने चिता की अग्नि में कबन्ध का दाह-संस्कार किया । उसने दिव्य रूप में प्रकट होकर श्रीराम को सुग्रीव से मित्रता करने का सुझाव दिया (३. ७२) ।" दिव्य रूपधारी कवन्ध ने श्रीराम और लक्ष्मण को ऋष्यमूक और पम्पा सरोवर का मार्ग बताया तथा मतङ्गमुनि के वन एवं आश्रम का परिचय देकर प्रस्थान किया (३. ७३) । "श्रीराम और लक्ष्मण ने पम्पा सरोवर के तट पर मतङ्ग वन में शबरी के आश्रम पर जाकर उसका सत्कार ग्रहण किया और उसके साथ मतङ्गवन को देखा । श्रीराम की कृपा से शबरी ने अपने शरीर की आहुति देकर दिव्यधाम को प्रस्थान किया (३. ७४) ।" श्रीराम और लक्ष्मण का वार्तालाप हुआ तथा दोनों भ्राता पम्पासरोवर के तट पर गये (३. ७५) । "पम्पा सरोवर के दर्शन से व्याकुल हुये श्रीराम ने लक्ष्मण से पम्पा की शोभा तथा वहाँ की उद्दीपन सामग्री का वर्णन किया । लक्ष्मण ने श्रीराम को समझाया । दोनों भ्राताओं को ऋष्यमूक की ओर आते देख सुग्रीव तथा अन्य वानर भयभीत हो गये (४. १) ।" सुग्रीव ने हनुमान्जी को श्रीराम और लक्ष्मण के पास उनका भेद लाने के लिये भेजा (४. २, २८–२९) । "हनुमान् ने राम और लक्ष्मण से वन में आने का कारण पूछा तथा अपना और सुग्रीव का परिचय दिया । श्रीराम ने उनके वचनों की प्रशंसा करके लक्ष्मण को अपनी ओर से वार्त्तालाप करने की आज्ञा दी (४. ३) ।" "लक्ष्मण ने हनुमान् को श्रीराम के वन आने का कारण तथा सीताहरण का वृत्तान्त सुनाया । हनुमान् उन्हें आश्वासन देकर अपने साथ ले गये (४-४) । श्रीराम और सुग्रीव की मैत्री तथा श्रीराम ने वालि-वध की प्रतिज्ञा की (४. ५) । सुग्रीव ने श्रीराम को सीता के आभूषण दिखाये तथा श्रीराम ने शोक एवं रोषपूर्ण वचन कहा (४. ६) । सुग्रीव ने श्रीराम को समझाया और श्रीराम ने सुग्रीव को उनकी कार्यसिद्धि का विश्वास दिलाया (४. ७) । सुग्रीव ने श्रीराम से अपने दुःख का निवेदन किया और

श्रीराम ने उन्हें आश्वासन देते हुये दोनों भ्राताओं में वैर होने का कारण पूछा (४. ८)। सुग्रीव ने श्रीराम को वालिन् के साथ अपने वैर का कारण बताया (४. ९. १०)। श्रीराम ने दुन्दुभि के अस्थि-समूह को दूर फेंक दिया और सुग्रीव ने उनसे साल-भेदन के लिये आग्रह किया (४. ११, ८४–९३)। "श्रीराम ने सात साल-वृक्षों का भेदन किया। श्रीराम की आज्ञा से सुग्रीव ने किष्किन्धा में जाकर वालिन् को ललकारा और युद्ध में पराजित हो भागने पर श्रीराम ने उन्हें आश्वासन देते हुए गले में पहचान के लिये गजपुष्पी माला डालकर पुनः युद्ध के लिये भेजा (४. १२)। श्रीराम आदि ने मार्ग में वृक्षों, विविध जन्तुओं, जलाशयों तथा सप्तजन आश्रम का दूर से दर्शन करते हुये पुनः किष्किन्धापुरी में प्रवेश किया (४. १३)। वालिन् के वध का श्रीराम ने सुग्रीव को आश्वासन दिया (४. १४)। तारा ने वालिन् को सुग्रीव और श्रीराम के साथ मैत्री करने के लिये समझाया (४. १५)। वालिन् श्रीराम के बाण से घायल होकर पृथिवी पर गिर पड़े (४. १६, ३५–३९)। वालिन् ने श्रीराम को फटकारा (४. १७)। 'श्रीराम ने वालिन् की बात का उत्तर देते हुये उसे दिये गये दण्ड का औचित्य वताया। वालिन् ने निरुत्तर होकर अपने अपराध के लिये क्षमा माँगते हुये अङ्गद की रक्षा के लिये प्रार्थना की। श्रीराम ने उन्हें आश्वासन दिया (४. १८)।" "सुग्रीव ने शोक-मग्न होकर श्रीराम से प्राणत्याग के लिये आज्ञा माँगी। तारा ने श्रीराम से अपने वध के लिये प्रार्थना की और श्रीराम ने उसे समझाया (४. २४)।" लक्ष्मण सहित श्रीराम ने सुग्रीव, तारा और अङ्गद को समझाया तथा वालिन् के दाह-संस्कार के लिये आज्ञा प्रदान की (४. २५, १–१८)। "हनुमान् ने सुग्रीव के अभिषेक के लिये श्रीराम से किष्किन्धा में पधारने की प्रार्थना की। श्रीराम ने पुरी में न जाकर केवल अनुमति प्रदान की (४. २६)।" प्रस्रवण गिरि पर लक्ष्मण और श्रीराम का परस्पर वार्त्तालाप (४. २७)। श्रीराम ने वर्षाऋतु का वर्णन किया (४. २८)। श्रीराम ने लक्ष्मण को सुग्रीव के पास जाने का आदेश दिया (४. २९)। सुग्रीव पर लक्ष्मण के रोष करने पर श्रीराम ने उन्हें समझाया (४. ३०, १–८)। सुग्रीव ने अपनी लघुता तथा श्रीराम की महत्ता बनाते हुये लक्ष्मण से क्षमा माँगी (४. ३६, १–११)। "लक्ष्मण सहित सुग्रीव ने भगवान् श्रीराम के पास आकर उनके चरणों में प्रणाम किया। श्रीराम ने उन्हें समझाया। सुग्रीव ने अपने किये सैन्यसंग्रह विषयक उद्योग को वताया जिसे सुनकर श्रीराम प्रसन्न हो गये (४. ३८)।" श्रीराम ने सुग्रीव के प्रति कृतज्ञता प्रकट की (४. ३९, १–७)। श्रीराम की आज्ञा से सुग्रीव नें सीता की खोज के लिये वानरों को पूर्व दिशा में भेजा

(४. ४०)। श्रीराम ने हनुमान् को अँगूठी देकर सीता की खोज के लिये भेजा (४. ४४)। सुग्रीव ने श्रीराम से अपने भूमण्डल-भ्रमण का वृत्तान्त बताया (४. ४६)। अङ्गद ने सम्पाति को राम-सुग्रीव की मित्रता का वृत्तान्त सुनाया (४. ५७)। निशाकर मुनि ने सम्पाति को भावी श्रीराम के कार्य में सहायता देने के लिये जीवित रहने का आदेश दिया (४. ६२)। हनुमान् ने श्रीराम को सीता के न मिलने की सूचना देने से अनर्थ की सम्भावना बता कर पुनः सीता को खोजने का विचार किया (५. १३, २३–२५)। सीता ने रावण को समझाते हुये उसे श्रीराम के सामने नगण्य बताया (५. २१)। त्रिजटा ने श्रीराम की विजय का स्वप्न देखा (५. २७)। हनुमान् ने सीता को सुनाने के लिये श्रीराम-कथा का वर्णन किया (५. ३१)। हनुमान् ने सीता के सन्देह को दूर करने के लिये उनके समक्ष श्रीराम के गुणों का गान किया (५. ३४)। सीता के पूछने पर हनुमान् ने श्रीराम के शारीरिक चिह्नों और गुणों का वर्णन करते हुए नर-वानर की मित्रता का प्रसङ्ग सुनाया (५. ३५)। "हनुमान् ने सीता को श्रीराम की दी हुई मुद्रिका दी और सीता ने उत्सुक होकर पूछा : 'श्रीराम कब मेरा उद्धार करेंगे'। हनुमान् ने श्रीराम के सीता विषयक प्रेम का वर्णन करके उन्हें सान्त्वना दी (५. ३६)।" "सीता ने हनुमान् से श्रीराम को शीघ्र बुला लाने के लिये अनुरोध किया और चूडामणि दी। पहचान के रूप में उन्होंने चित्रकूट पर्वत पर घटित हुये एक कौये के प्रसंग को भी सुनाया (५. ३८)।" चूड़ामणि लेकर जाते हुये हनुमान् से सीता ने श्रीराम को उत्साहित करने के लिये कहा (५. ३९, १–१२)। सीता ने श्रीराम से कहने के लिये पुनः सन्देश दिया (५. ४०, १–११)। हनुमान् ने रावण के समक्ष अपने को श्रीराम का दूत बताया (५. ५०, १३–१९)। हनुमान् ने श्रीराम के प्रभाव का वर्णन करते हुये रावण को समझाया (५. ५१)। सुग्रीव ने वानरों को देखकर, तथा हनुमान् ने श्रीराम को प्रणाम करके सीता के दर्शन का समाचार बताया (५. ६४, २७–४५)। हनुमान् ने श्रीराम को सीता का समाचार सुनाया (५. ६५)। चूड़ामणि को देख तथा सीता का समाचार पाकर श्रीराम ने उनके लिये विलाप किया (५. ६६)। हनुमान् ने श्रीराम को सीता का संदेश सुनाया (५. ६७)। हनुमान् की प्रशंसा करके श्रीराम ने उन्हें हृदय से लगाया और समुद्र पार करने के लिये चिन्तित हो गये (६. १)। सुग्रीव ने श्रीराम को उत्साह प्रदान किया (६. २)। हनुमान् ने श्रीराम से सेना को कूच करने की आज्ञा प्रदान करने की प्रार्थना की (६. ३, ३३)। श्रीराम आदि के साथ वानर-सेना ने प्रस्थान किया (६. ४)। श्रीराम ने सीता के लिये

शोक और विलाप किया (६. ५)। राक्षसों ने रावण को इन्द्रजित् द्वारा श्रीराम पर विजय पाने का विश्वास दिलाया (६. ७, २४–२५)। विभीषण ने रावण से श्रीराम की अजेयता का वर्णन कर उससे सीता को लौटा देने का अनुरोध किया (६. ९–१४)। विभीषण श्रीराम की शरण में आये और श्रीराम ने अपने मन्त्रियों के साथ उन्हें आश्रय देने के विषय में विचार किया (६. १७)। श्रीराम शरणागत की रक्षा का महत्व एवं अपना व्रत बताकर विभीषण से मिले (६. १८)। "विभीषण ने आकाश से उतर कर भगवान् श्रीराम के चरणों में शरण ली। श्रीराम के पूछने पर उन्होंने रावण की शक्ति का परिचय दिया तथा श्रीराम भी रावण-वध और विभीषण को लंका के राज्य पर अभिषिक्त करने की प्रतिज्ञा करके उनकी सम्मति से समुद्र तट पर सत्याग्रह करने बैठे (६. १९)।" रावण-दूत शुक की जब वानरों ने दुर्दशा कर दी तब वह श्रीराम की कृपा से संकट-मुक्त हुआ (६. २०, १५–२०)। "श्रीराम ने समुद्र के तट पर कुश बिछाकर तीन दिनों तक सत्याग्रह किया। फिर भी समुद्र के प्रकट न होने पर कुपित होकर उसे बाणों के प्रहार द्वारा विक्षुब्ध कर दिया (६. २१)।" नल द्वारा सागर पर बनाये गये पुल से श्रीराम वानर-सेना सहित समुद्र-पार हो गये (६. २२, ८१–८९)। श्रीराम ने लक्ष्मण से उत्पातसूचक लक्षणों का वर्णन और लंका पर आक्रमण किया (६. २३)। "श्रीराम ने लक्ष्मण से लङ्का की शोभा का वर्णन करके सेना को व्यूहबद्ध खड़ी होने के लिये आदेश दिया। श्रीराम की आज्ञा से बन्धन-मुक्त हुये शुक ने रावण के पास जाकर राम की सैन्य-शक्ति की प्रबलता का उल्लेख किया (६. २४)।" श्रीराम की कृपा से रावण के शुक और सारण नामक गुप्तचरों ने छुटकारा पाया और श्रीराम के संदेश सहित लङ्का लौटकर रावण को समझाया (६. २५, १३–३३)। शुक ने रावण को श्रीराम का परिचय दिया (६. २८, १८–२३)। रावण के भेजे गये गुप्तचर श्रीराम की दया से ही वानरों के चंगुल से छूटकर लंका आये (६. २९)। रावण ने सीता को मायारचित श्रीराम का कटा मस्तक दिखाकर मोह में डालने का प्रयत्न किया (६. ३१)। श्रीराम के मारे जाने का विश्वास करके सीता ने विलाप किया (६. ३२, १–३३)। सरमा ने सीता को श्रीराम के आगमन का प्रिय समाचार सुनाया और उनके विजयी होने का विश्वास दिलाया (६. ३३)। माल्यवान् ने रावण को श्रीराम से संधि कर लेने के लिये समझाया (६. ३५)। विभीषण ने श्रीराम से रावण द्वारा किये गये लंका के रक्षा के प्रबन्ध का वर्णन किया तथा श्रीराम ने लंका के विभिन्न द्वारों पर आक्रमण करने के लिये अपने सेनापतियों की नियुक्ति की (६. ३७)। श्रीराम नें प्रमुख वानरों के साथ सुवेल पर्वत पर चढ़कर वहाँ

रात्रि में निवास किया (६. ३८)। वानरों सहित श्रीराम ने सुवेल शिखर से लंकापुरी का निरीक्षण किया (६. ३९)। श्रीराम ने सुग्रीव को दुःसाहस से रोका और लंका के चारों द्वारों पर वानर-सैनिकों की नियुक्त की (६. ४१)। इन्द्रजित् के बाणों से श्रीराम और लक्ष्मण अचेत हो गये (६. ४५, ४६, १–७)। वानरों ने श्रीराम और लक्ष्मण की रक्षा की, तथा रावण की आज्ञा से राक्षसियों ने सीता को पुष्पक विमान द्वारा रणभूमि में ले जाकर श्रीराम और लक्ष्मण का दर्शन कराया (६. ४७)। विलाप करती हुई सीता को त्रिजटा ने राम-लक्ष्मण के जीवित होने का विश्वास दिलाया (६. ४९)। श्रीराम ने सचेत हाकर लक्ष्मण के लिये विलाप किया और स्वयं प्राण-त्याग का विचार करके वानरों को लौट जाने की अनुमति दी (६. ४९)। गरुड़ ने श्रीराम और लक्ष्मण को नागपाश से मुक्त कर दिया (६. ५०, ३८–६५)। श्रीराम के बन्धनमुक्त होने का समाचार पाकर चिन्तित हुये रावण ने धूम्राक्ष को युद्ध के लिये भेजा (६. ५१)। श्रीराम से परास्त होकर रावण ने लंका में प्रवेश किया (६. ५९, १२६–१४६)। विभीषण ने श्रीराम से कुम्भकर्ण का परिचय दिया और श्रीराम की आज्ञा से वानर युद्ध के लिये लंका के द्वारों पर डट गये (६. ६१)। रावण ने राम से भय बताकर कुम्भकर्ण को शत्रु-सेना के विनाश के लिये प्रेरित किया (६. ६२)। भयंकर युद्ध करते हुये कुम्भकर्ण का श्रीराम ने वध कर दिया (६. ६७)। इन्द्रजित् के ब्रह्मास्त्र से वानर-सेना सहित श्रीराम और लक्ष्मण मूर्च्छित हो गये (६. ७३)। हनुमान् द्वारा लाये गये दिव्य ओषधियों की गंध से श्रीराम आदि ने चेतना प्राप्त की (६. ७४)। श्रीराम ने मकराक्ष का वध कर दिया (६. ७९)। घोर युद्ध करते हुये इन्द्रजित् के वध के विषय में श्रीराम और लक्ष्मण का वार्तालाप (६. ८०)। हनुमान् वानरों सहित युद्धभूमि से श्रीराम के पास आये (६. ८२, २२–२४)। सीता के मारे जाने का समाचार सुनकर श्रीराम शोक से मूर्च्छित हो गये तथा लक्ष्मण उन्हें समझाते हुये पुरुषार्थ के लिये उद्यत हुये (६, ८३)। विभीषण ने श्रीराम को इन्द्रजित् की माया का रहस्य बताकर सीता के जीवित होने का विश्वास दिलाया (६. ८४, १–१३)। विभीषण के अनुरोध पर श्रीराम ने लक्ष्मण को इन्द्रजित् का वध करने के लिये जाने की आज्ञा दी (६. ८५)। लक्ष्मण और विभीषण आदि ने श्रीराम के पास आकर इन्द्रजित् के वध का समाचार सुनाया तथा प्रसन्न हुये श्रीराम ने लक्ष्मण को हृदय से लगाकर उनकी प्रशंसा की (६. ९१)। श्रीराम ने राक्षस-सेना का संहार किया (६. ९३)। श्रीराम और रावण का युद्ध (६. ९९, १००)। रावण द्वारा मूर्छित किये गये लक्ष्मण के लिए श्रीराम ने विलाप किया (६. १०१,

१-३३)। इन्द्र के भेजे हुए रथ पर बैठकर श्रीराम ने रावण के साथ युद्ध किया (६, १०२)। श्रीराम ने रावण को फटकारा तथा आहत कर दिया (६. १०३)। अगस्त्य मुनि ने श्रीराम को विजय के लिये 'आदित्यहृदय' के पाठ की सम्मति दी (६, १०५)। "रावण के रथ को देखकर श्रीराम ने मातलि को सावधान किया। राम की विजय सूचित करने वाले शुभ शकुनों का वर्णन (६. १०६)।" श्रीराम और रावण का घोर युद्ध (६. १०७)। श्रीराम द्वारा रावण का वध (६. १०८)। श्रीराम ने विलाप करते हुए विभीषण को समझाकर रावण के अन्त्येष्टि-संस्कार के लिए आदेश दिया (६. १०९)। श्रीराम की आज्ञा द्वारा विभीषण का राज्याभिषेक तथा श्रीराम ने सीता के पास संदेश लेकर हनुमान् को भेजा (६. ११२)। हनुमान् ने लौट कर सीता का संदेश श्रीराम को सुनाया (६. ११३)। श्रीराम की आज्ञा से विभीषण, सीता को उनके समक्ष लाये (६. ११४)। सीता के चरित्र पर संदेह करके श्रीराम ने उन्हें ग्रहण करना अस्वीकार करते हुए अन्यत्र जाने की अनुमति दी (६. ११५)। सीता ने श्रीराम को उपालम्भपूर्ण उत्तर देकर सतीत्व की रक्षा के लिए अग्नि में प्रवेश किया (६. ११६)। श्रीराम के पास देवताओं का आगमन तथा ब्रह्मा ने उनकी भगवत्ता का प्रतिपादन एवं स्तवन किया (६. ११७)। मूर्तिमान् अग्निदेव सीता को लेकर चिता से प्रकट हुये और श्रीराम को समर्पित करके उन के सतीत्व का प्रतिपादन किया जिससे श्रीराम ने सीता को सहर्ष स्वीकार कर लिया (६. ११८)। महादेव की आज्ञा से श्रीराम और लक्ष्मण ने विमान द्वारा आये हुये राजा दशरथ को प्रणाम किया और दशरथ ने उनको आवश्यक संदेश दिया (६. ११९)। श्रीराम के अनुरोध से इन्द्र ने मृत वानरों को जीवित किया (६. १२०)। श्रीराम अयोध्या जाने के लिए उद्यत हुए और उनकी आज्ञा से विभीषण ने पुष्पक विमान मँगाया (६. १२१)। श्रीराम की आज्ञा से विभीषण ने वानरों का विशेष सत्कार किया तथा विभीषण और सुग्रीव सहित वानरों को साथ लेकर श्रीराम ने पुष्पक विमान द्वारा अयोध्या को प्रस्थान किया (६. १२२)। अयोध्या की यात्रा करते समय श्रीराम ने सीता को मार्ग के स्थान दिखाये ((६. १२३)। श्रीराम भरद्वाज आश्रम पर उतरकर महर्षि से मिले और उनसे वर प्राप्त किया (६. १२४)। हनुमान् ने निषादराज गुह और भरत को श्रीराम के आगमन की सूचना दी (६. १२५, १-३९)। हनुमान् ने भरत को श्रीराम आदि के वनवास सम्बन्धी समस्त वृत्तान्त सुनाये (६. १२६)। "अयोध्या में श्रीराम के स्वागत की तैयारी। भरत के साथ सभी लोग श्रीराम के स्वागत के लिये नन्दिग्राम पहुँचे। श्रीराम का आगमन तथा भरत आदि के साथ उनका मिलाप हुआ

(६. १२७) ।" भरत ने श्रीराम को राज्य लौटाया, श्रीराम नगरयात्रा की और उनका राज्याभिषेक हुआ (६. १२८)। श्रीराम के दरबार में महर्षियों का आगमन तथा श्रीराम ने उनके साथ वार्त्तालाप और प्रश्न किये (७. १) । श्रीराम ने अगस्त्य आदि ऋषियों से अपने यज्ञ में पधारने के लिए प्रस्ताव करके उन्हें विदा किया (७. ३६, ५५–६३) । श्रीराम के द्वारा राजा जनक, युधाजित्, प्रतर्दन तथा अन्य नरेशों की विदाई (७. ३७) । राजाओं ने श्रीराम के लिए भेंट अर्पित किया और श्रीराम ने वह सब लेकर अपने मित्रों, वानरों, रीछों और राक्षसों को बाँट दिया (७. ३९) । "कुबेर के भेजे हुए पुष्पक विमान का आगमन हुआ और श्रीराम से पूजित एवं अनुगृहीत होकर अदृश्य हो गया । भरत ने श्रीरामराज्य के विलक्षण प्रभाव का वर्णन किया (७. ४१) ।" अशोकवाटिका में श्रीराम और सीता का विहार, गर्भिणी सीता के तपोवन देखने की इच्छा प्रगट करने पर श्रीराम ने उसके लिए स्वीकृति प्रदान की (७. ४२) । भद्र ने पुरवासियों के मुख से सीता के विषय में सुनी हुई अशुभ चर्चा से श्रीराम को अवगत कराया (७. ४३) । श्रीराम के बुलाने पर समस्त भ्राता उनके पास उपस्थित हुए (७. ४४) । श्रीराम ने भ्राताओं के समक्ष सर्वत्र फैले हुए लोकापवाद की चर्चा करके सीता को वन में छोड़ आने के लिए लक्ष्मण को आदेश दिया (७. ४५) । सीता ने लक्ष्मण को श्रीराम के लिये संदेश दिया (७. ४८, १२–१८) । अयोध्या के राजभवन में पहुँच कर लक्ष्मण ने दुःखी श्रीराम से मिलकर उन्हें सान्त्वना दी (७. ५२) । श्रीराम ने कार्यार्थी पुरुषों की उपेक्षा से राजा नृग को मिलने वाले शाप की कथा सुनाकर लक्ष्मण को देखभाल के लिये आदेश दिया (७. ५३) । श्रीराम के द्वार पर एक कार्यार्थी कुत्ता आया और श्रीराम ने उसे दरबार में लाने का आदेश दिया (७ ५९ क) । कुत्ते के प्रति श्रीराम ने न्याय किया तथा उसकी इच्छा के अनुसार उसे मारने वाले ब्राह्मण को मठाधीश बना दिया (७. ५९ ख) । "श्रीराम के दरबार में च्यवन आदि ऋषियों का शुभागमन । श्रीराम ने उनका सत्कार करके उनके अभीष्ट कार्य को पूर्ण करने की प्रतिज्ञा और ऋषियों ने उनकी प्रशंसा की (७. ६०) ।" ऋषियों ने मधु को प्राप्त हुए वर तथा लवणासुर के बल और अत्याचार का वर्णन करके उससे प्राप्त होने वाले भय को दूर करने के लिए श्रीराम से प्रार्थना की (७. ६१) । श्रीराम ने ऋषियों से लवणासुर के आहार-विहार के विषय में पूछा और शत्रुघ्न की रुचि जानकर उन्हें लवण-वध के कार्य में नियुक्त किया (७, ६२) । श्रीराम ने शत्रुघ्न का राज्याभिषेक तथा लवणासुर के शूल से बचने के उपाय का प्रतिपादन किया (७. ६३) । श्रीराम की आज्ञा के अनु-

सार शत्रुघ्न ने सेना को आगे भेजकर एक मास के पश्चात् स्वयं भी प्रस्थान किया (७. ६४)। शत्रुघ्न ने मधुरापुरी को बसाकर वहाँ से बारहवें वर्ष श्रीराम के पास आने का विचार किया (७. ७०)। वाल्मीकि से विदा लेकर शत्रुघ्न अयोध्या में जाकर श्रीराम आदि से मिले (७. ७२)। एक ब्राह्मण अपने मरे हुये बालक को राज-द्वार पर लाया और राजा (राम) को ही दोषी बताकर विलाप करने लगा (७. ७३)। नारद ने श्रीराम से एक तपस्वी शूद्र के अधर्माचरण को ब्राह्मण बालक की मृत्यु में कारण बताया (७. ७४)। श्रीराम ने पुष्पक विमान द्वारा अपने राज्य की सभी दिशाओं में घूमकर दुष्कर्मों का पता लगाया किन्तु सर्वत्र सत्कर्म ही देखकर दक्षिण दिशा में एक शूद्र तपस्वी के पास पहुँचे (७, ७५)। "श्रीराम ने शम्बूक का वध कर दिया। देवताओं ने उनकी प्रशंसा की। अगस्त्याश्रम पर महर्षि अगस्त्य ने उनका सत्कार और उनके लिये आभूषणदान दिया (७. ७६)।" श्रीराम अगस्त्य-आश्रम से अयोध्यापुरी वापस आये (७. ८२)। भरत के कहने से श्रीराम राजसूय-यज्ञ करने के विचार से निवृत्त हुये (७. ८३)। श्रीराम ने लक्ष्मण को राजा इल की कथा सुनाई (७. ८७)। श्रीराम के आदेश से अश्वमेध यज्ञ की तैयारी (७. ९१)। श्रीराम के अश्वमेध यज्ञ में दान-मान की विशेषता (७. ९२)। श्रीराम के यज्ञ में महर्षि बाल्मीकि का आगमन और उनका रामायण गान के लिये कुश और लव को आदेश (७. ९३)। लव और कुश द्वारा रामायण के गान को श्रीराम ने भरी सभा में सुना (७. ९४)। श्रीराम ने सीता से उनकी शुद्धता प्रमाणित करने के लिये शपथ कराने का विचार किया (७. ९५)। "सीता के लिये श्रीराम ने खेद प्रगट किया। ब्रह्मा ने उन्हें समझाया और उत्तरकाण्ड का शेष अंश सुनने के लिये प्रेरित किया (७. ९८)।" सीता के रसातल-प्रवेश के पश्चात् श्रीराम की जीवन-चर्या, रामराज्य की स्थिति तथा माताओं के परलोक आदि का वर्णन (७. ९९)। श्रीराम की आज्ञा से कुमारों सहित भरत ने गन्धर्व देश पर आक्रमण करने के लिये प्रस्थान किया (७. १००)। श्रीराम की आज्ञा से भरत और लक्ष्मण ने अङ्गद और चन्द्रकेतु की कारुपथ देश के विभिन्न राज्यों पर नियुक्ति की (७. १०२)। श्रीराम के यहाँ काल का आगमन और एक कठोर शर्त के साथ उसकी श्रीराम के साथ वार्त्ता (७. १०३)। काल ने श्रीराम को ब्रह्मा का संदेश सुनाया और श्रीराम ने उसे स्वीकार किया (७. १०४)। "दुर्वासा के शाप के भय से लक्ष्मण ने नियम-भङ्ग करके श्रीराम के पास उनके आगमन का समाचार दिया। श्रीराम ने दुर्वासा मुनि को भोजन कराया और उनके चले जाने पर लक्ष्मण के लिये चिन्तित हुये

(७. १०५)।" श्रीराम के त्याग देने पर लक्ष्मण ने सशरीर स्वर्गगमन किया (७. १०६)। वसिष्ठ के कहने से श्रीराम ने पुरवासियों को अपने साथ ले जाने का विचार तथा कुश और लव का राज्याभिषेक किया (७. १०७)। श्रीराम ने भ्राताओं, सुग्रीव आदि वानरों, तथा रीछों के साथ परमधाम जाने का निश्चय किया और विभीषण, हनुमान्, जाम्बवान्, मैन्द एवं द्विविद को इस भूतल पर ही रहने का आदेश दिया (७. १०८)। परमधान जाने के लिये निकले हुये श्रीराम के साथ समस्त अयोध्यावासियों ने प्रस्थान किया (७. १०९)। भ्राताओं सहित श्रीराम ने विष्णुस्वरूप में प्रवेश किया तथा उनके साथ आये हुये सब लोगों को सन्तानक लोक की प्राप्ति हुई (७. ११०)।

रावण—जनस्थान-निवासी अपने कुटुम्ब के राक्षसों के वध का समाचार सुनकर यह क्रोध से मूर्च्छित हो उठा (१. १, ४९)। मारीच के मना करने पर भी इसने सीता का अपहरण कर लिया और मार्ग में जटायु का भी वध किया (१. १, ५०–५३)। इसके द्वारा सीता का हरण तथा जटायुवध; हमुमान् का इसके मद्यपान-स्थान में जाना तथा इसके अन्तःपुर की स्त्रियों को देखना; इसके सेवकों का हमुमान् द्वारा संहार तथा वन्दी होकर इसकी सभा में जाना; विभीषण का श्रीराम को इसके वध का उपाय वताना और श्रीराम के द्वारा रावण के विनाश का वाल्मीकि द्वारा पूर्वदर्शन (१. ३, २०. २९. ३०. ३२. ३३. ३५. ३६)। दशरथ के यज्ञ में अदृश्य रूप से उपस्थित होकर देवताओं ने इसके अत्याचारों का वर्णन करते हुये इसके विनाश का यत्न करने का निवेदन किया (१, १५, ६–१४)। देवताओं ने विष्णु से इसका वध करने का उपाय करने के लिये कहा (१. १५, २२–२५. ३२–३३)। विष्णु ने देवों से इसके वध का उपाय पूछा (१. १६, १–२)। यह विश्रवा मुनि का औरस पुत्र और कुवेर का भ्राता था (१. २०, १८)। युद्ध में देव, दानव आदि कोई भी इसके वेग को सहन नहीं कर सकते थे (१. २०, २३)। श्रीराम साक्षात् सनातन विष्णु थे जो इसके वध की अभिलाषा रखनेवाले देवताओं की प्रार्थना पर मनुष्यलोक में अवतीर्ण हुये (२. १, ७)। खर नामक राक्षस इसका छोटा भ्राता था, और जनस्थान में रहनेवाले तापसों को कष्ट देता था (२. ११६, ११)। शूर्पणखा ने राम को अपना परिचय देते हुये इसे अपना भ्राता बताया (३. १७, ६. २२)। जनस्थान के राक्षसों का वध हो जाने के पश्चात् अकम्पन ने लंका में आकर इसे एतद्विषयक समाचार दिया (३. ३१, १)। इस समाचार को सुनकर यह अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा और उन सब लोगों का वध कर द्रेने की धमकी दी जिन्होंने राक्षसों का विनाश किया था (३. ३१, ३–७)। अकम्पन के परामर्श पर यह सीता का अपहरण करने के लिये गया, परन्तु मारीच के कहने से पुनः

लंका लौट आया (३. ३१, १२-५०)। जनस्थान के राक्षसों का विनाश हो जाने के पश्चात् सहायता के लिये शूर्पणखा ने लंका में आकर रावण—इसके पराक्रम, पूर्वकर्मों तथा शोभा का विस्तृत वर्णन है—को देखा और इससे अपनी दुर्दशा का वर्णन किया (३. ३२, ४–३२)। शूर्पणखा ने इसे फटकारा जिस पर यह बहुत देर तक सोच-विचार करता हुआ चिन्तित रहा (३. ३३)। शूर्पणखा की बात सुनकर समुद्रतटवर्ती प्रान्त की शोभा देखते हुये यह पुनः मारीच के पास गया (३. ३५)। इसने मारीच से श्रीराम के अपराध को बताकर सीता के अपहरण में उसकी सहायता माँगी (३ ३६)। मारीच ने श्रीराम के गुण और प्रभाव का वर्णन करते हुये इसे सीता-हरण के उद्योग से रोकने का प्रयास किया (३. ३७–३९) मारीच के परामर्श को अस्वीकार करते हुये इसने उसे फटकारा और सीताहरण के कार्य में सहायता करने की आज्ञा दी (३. ४०)। मारीच ने विनाश का भय दिखाकर इसे पुनः समझाने का प्रयास किया (३. ४१)। "मारीच ने सीताहरण में सहायक बनने के प्रस्ताव को स्वीकार किया जिस पर इसने मारीच की प्रशंसा की और उसे लेकर श्रीराम के आश्रम पर आया। आश्रम के निकट पहुँच कर इसने मारीच को कपटमृग बनने का आदेश दिया (३. ४२, १–१३)।" "लक्ष्मण के भी आश्रम से चले जाने के पश्चात् यह सीता के समीप आया। उस समय इसे देखकर जनस्थान के वृक्षों ने हिलना बन्द कर दिया और हवा का वेग रुक गया। गोदावरी नदी भी भयग्रस्त हो धीरे-धीरे बहने लगी। इसने सीता की प्रशंसा करते हुये उनका परिचय पूछा और सीता ने भी इसे आतिथ्य ग्रहण करने के लिये आमन्त्रित किया (३. ४६)।" सीता ने इसे अपने पति का परिचय देते हुये वन में आने का कारण बताया जिस पर इसने सीता को अपनी पटरानी बनाने की इच्छा प्रगट की, परन्तु सीता ने इसे फटकारा (३. ४७)। सीता के समक्ष इसने अपने पराक्रम का वर्णन किया परन्तु सीता ने इसे कड़ी फटकार दी (३. ४८)। इसने सीता का कठोर वचन सुनकर अपने सौम्य रूप का परित्याग कर दिया और सीता का अपहरण करके आकाशमार्ग से जाने लगा (३. ४९, १–२३)। जटायु ने पहले तो इसे सीताहरण के दुष्कर्म से निवृत्त होने के लिये समझाया परन्तु जब यह विरत नहीं हुआ तो युद्ध के लिये ललकारा (३. ५०)। जटायु के साथ घोर युद्ध करने के पश्चात् इसने उनका वध कर दिया (३. ५१)। यह जटायु-वध करने के पश्चात् , विलाप करती हुई सीता का अपहरण करके, आकाशमार्ग से चला (३, ५२)। सीता ने इसे धिक्कारा (३. ५३)। इसने सीता को लंका लाकर अपने अन्तःपुर में रक्खा तथा जनस्थान में गुप्तचर के रूप में रहने

के लिये आठ राक्षसों को भेजा (३. ५४)। इसने सीता को अपने अन्त:पुर का दर्शन कराया और अपनी भार्या बन जाने के लिये आग्रह किया (३. ५५)। सीता ने इसे फटकारा जिस पर इसने राक्षसियों को सीता को अशोकवाटिका में ले जाकर डराने-धमकाने का आदेश दिया (३. ५६, २६–३२)। जब विलाप करते हुये श्रीराम ने गोदावरी नदी से सीता का पता पूछा तो वह रावण के भय से चुप रही (३. ६४, ७–९)। गोदावरी के तट पर श्रीराम ने उस स्थल को देखा जहाँ रावण के भय से संत्रस्त सीता इधर-उधर भागती फिरी थीं (३. ६४, ३७)। जटायु ने श्रीराम को इसके द्वारा सीता-हरण, इसके साथ अपने युद्ध, तथा इसके द्वारा आहत हो जाने का सम्पूर्ण वृत्तान्त बताया (३. ६७, १५–२१)। श्रीराम ने इसके द्वारा आहत जटायु को देखा (३. ६८, १)। श्रीराम ने इसके द्वारा सीता-हरण की लक्ष्मण से चर्चा करते हुये जटायु के लिये विलाप किया (३. ६८, ५. ९)। श्रीराम ने कहा कि यदि सीता को लेकर रावण दिति के गर्भ में जाकर छिप जाय तो भी वे उसका वध कर देंगे (४. १, १२१)। हनुमान् ने सुग्रीव को इसके द्वारा सीताहरण का समाचार देते हुये श्रीराम का परिचय दिया (४. ५. ६)। सुग्रीव ने सीता द्वारा गिराये हुये वस्त्राभूषण आदि श्रीराम को दिखाते हुये कहा कि रावण ने सीता का अपहरण कर लिया (४. ६, ३)। सुग्रीव ने इसके वध का श्रीराम को आश्वासन दिया (४. ७, ४)। श्रीराम ने सुग्रीव से इसका पता लगाने के लिये कहा (४. ७, १९)। 'शरत्काल प्रतीक्षस्व प्रावृट्कालोऽयमागतः। ततः सराष्ट्रं सगणं राबणं तं वधिष्यसि ॥', (४. २७, ३९)। 'स्फुरन्ती रावणस्याङ्के वैदेहीव तपस्विनी,' (४. २८, १२)। 'अहत्वा तांश्च दुर्धर्षान्राक्षसान्कामरूपिणः। अशक्यो रावणो हन्तुं येन सा मैथिली हृता ॥', (४. ३५, १६)। 'मीतां प्राप्स्यति धर्मात्मा वधिष्यति च रावणम्', (४. ३६, ७)। 'गच्छतो रावणं हन्तुं वैरिणं सपुरःसरम्', (४. ३६, १०)। 'न चिरात् तं वधिष्यामि रावणं निशितैः शरैः', (४. ३९, ७)। 'अधिगम्य तु वैदेहीं निलयं रावणस्य च। प्राप्तकालं विधास्यामि तस्मिन्काले सह त्वया ॥', (४. ४०, १२)। 'लक्ष्मणेन सह भ्राता वैदेह्या सह भार्यया। यस्य भार्या जनस्थानाद् रावणेन हृता बलात् ॥', (४. ५२, ५)। 'तस्य भार्या जनस्थानाद् रावणेन हृता बलात्', (४. ५७, ९)। सम्पाति ने कहा कि रावण द्वारा हत जटायु उनका भ्राता था। (४, ५८, २)। यह विश्रवा का पुत्र और कुबेर का भ्राता था (४. ५८, १९)। सम्पाति ने बताया कि सीता रावण के अन्त:पुर में बन्दी हैं (४. ५८. २२)। सम्पाति ने कहा कि उन्हें भी रावण से अपने भ्राता के वध का प्रतिशोध लेना है (४. ५८, २७)। 'इहस्थोऽहं प्रपश्यामि

रावणं जानकीं तथा', (४. ५८, २८)। 'एवमुक्तस्ततोऽहं तैः सिद्धैः परमशोभनैः ॥ स च मे रावणो राजा रक्षसां प्रतिवेदितः ॥', (४. ५९, १८–१९)। सम्पाति ने बताया कि रावण को पराजित करना श्रीराम और वानरों के लिये कठिन नहीं है (४. ५९, २७)। सम्पाति ने बताया कि वे रावण के वल को जानते हैं (४. ६३, ६)। 'गच्छेत् तद्वद् गमिष्यामि लङ्कां रावणपालिताम्', (५. १, ३९)। 'यदि वा त्रिदिवे सीतां न द्रक्ष्यामि कृतश्रमः। वद्ध्वा राक्षसराजानमानयिष्यामि रावणम् ॥', (५. १, ४१)। 'लङ्कां समुत्पाठ्य सरावणाम्', (५. १, ४२)। 'न शक्यं खल्वियं लङ्का प्रवेष्टुं वानर त्वया। रक्षिता रावणवलैरभिगुप्ता समन्ततः ॥', (५. ३, २४)। 'सीतानिमित्तं राज्ञस्तु रावणस्य दुरात्मनः। रक्षसां चैव सर्वेषां विनाशः समुपागतः ॥', (५. ३, ५०)। 'रावणस्तवसंयुक्तान्गर्जतो राक्षसानपि', (५. ४, १३)। हनुमान् ने इसके अन्तःपुर में प्रवेश किया (५. ४, २८)। सीता को खोजते हुये हनुमान् इसके महल में पहुँचे जो चारों ओर से सूर्य के समान चमचमाते हुये सुवर्णमय परकोटों से घिरा था (५. ६, २)। इसके भवन एवं पुष्पक विमान का वर्णन (५. ७)। 'युद्धकामेन ताः सर्वा रावणेन हृताः स्त्रियः। समदा मदनेनैव मोहिताः काश्चिदागताः ॥', (५. ९, ७०)। हनुमान् ने इसे अपने भवन में सोते देखा (५. १०, ७–२९)। इसके समस्त अन्तःपुर में खोजने पर भी सीता को हनुमान् ने नहीं देखा (५. ११, ४६; १२, ६)। 'किं नु सीताथ वैदेही मैथिली जनकात्मजा। उपतिष्ठेत विवशा रावणं दुष्टचारिणम् ॥" (५. १३, ६) 'रावणं वा वधिष्यामि दशग्रीवं महाबलम् ॥ काममस्तु हृता सीता प्रत्याचीर्णं भविष्यति ॥', (५. १३, ४९)। यह अपनी स्त्रियों के साथ अशोकवाटिका में सीता के पास आया (५. १८)। "इसे देखकर दुःखी सीता अत्यन्त भयभीत और चिन्तित हुईं। उस समय यह सीता को प्रलोभन देने लगा (५. १९, १–२, २३)।" इसने सीता को अनेक प्रलोभन दिये (५. २०)। इसे समझाते हुये सीता ने इसे श्रीराम की तुलना में नगण्य वताया (५. २१)। "इसने सीता को दो मास की अवधि दी जिस पर सीता ने इसे फटकारा। यह सीता को धमका कर राक्षसियों के नियन्त्रण में रखते हुये अपने महल को लौट गया (५. २२)। त्रिजटा नामक राक्षसी ने अपने स्वप्न में इसके विनाश को देखकर उसकी सूचना दी (५. २७)। सीता ने हनुमान् से श्रीराम को शीघ्र वुलाने का आग्रह करते हुये बताया कि रावण ने उनके जीवन की जो अवधि निश्चित की है उसमें अव थोड़ा समय ही शेष है (५. ३७, ६–८)। सीता ने वताया कि विभीषण और अविन्ध्य के कहने पर भी रावण ने उन्हें लौटाना स्वीकार नहीं किया (५. ३७, ९–१३)।

'रावणेनोपरुद्धां मां निकृत्या पापकर्मणा', (५. ३८, ६८)। 'बलैः समग्रैर्युधि मां रावणं जित्य संयुगे। विजयी स्वपुरं यायात्तत्तु मे स्याद्यशस्करम् ॥', (५. ३९, २९)। 'सगणं रावणं हत्वा राघवो रघुनन्दनः । त्वामादाय वरारोहे स्वपुरीं प्रतियास्यति ॥', (५. ३९, ४३)। हनुमान् ने सीता को सान्त्वना देते हुये बताया कि श्रीराम और लक्ष्मण इसका और इसके बन्धु-बान्धवों का वध करके उनको अपनी पुरी में ले जायेंगे (५. ४०, १६)। राक्षसियों के मुख से एक वानर के द्वारा प्रमदावन के विध्वंस का समाचार सुनकर इसने किंकर नामक राक्षसों को भेजा (५. ४२, ११–२४)। जम्बुमाली और किंकरों के वध का सामाचार सुनकर यह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और अपने मंत्री के पुत्रों को युद्ध के लिये जाने की आज्ञा दी (५. ४४, १९–२०)। मंत्री के पुत्रों के वध का समाचार सुनकर इसने भयभीत होने पर भी अपने आकार को प्रयत्नपूर्वक छिपाते हुये विरूपाक्ष आदि पाँच सेनापतियों को हनुमान् को पकड़ने की आज्ञा दी (५. ४६, १–१६)। हनुमान् के द्वारा अपने पाँच सेनापतियों के वध का समाचार सुनकर इसने अपने पुत्र, अक्ष कुमार, को हनुमान् से युद्ध के लिये भेजा (५. ४७, १–२)। अक्ष कुमार का वध हो जाने पर अपने मन को किसी प्रकार सुस्थिर करके इसने अपने पुत्र, मेघनाद, को हनुमान् को पकड़ने के लिये भेजा (५. ४८, १–१५)। हनुमान् ने मेघनाद के ब्रह्मास्त्र से बँध जाने पर भी अपने को इसलिये मुक्त करने का प्रयास नहीं किया कि उन्हें इस प्रकार रावण के साथ वातचीत का अवसर मिलेगा (५. ४८, ४५)। हनुमान् को इसके पास पहुँचाया गया जिन्हें देखकर इसने अपने मन्त्रियों को हनुमान् का परिचय पूछने की आज्ञा दी (५. ४८, ५२–६१)। हनुमान् ने इसके अत्यन्त प्रभावशाली स्वरूप को देखा (५. ४९, १)। "यह सोने के बने हुये वहुमूल्य मुकुट से उद्भासित हो रहा था। इसके विभिन्न अङ्गों में सुवर्ण के आभूषण थे और रेशमी वस्त्र इसके शरीर की शोभावृद्धि कर रहे थे। इसके नेत्र लाल और भयानक थे। बड़े बड़े दाढ़ों और लम्बे होठों के कारण यह विचित्र प्रतीत हो रहा था। इसके दस मुख थे और शरीर का रंग कोयले के ढेर के समान काला था। यह अपने मन्त्रियों से घिरा हुआ सिंहासन पर विराजमान् था। हनुमान् अत्यन्त विस्मय से इसे देखते रहे (५. ४९, २–१५)।" इसने प्रहस्त के द्वारा हनुमान् से लंका आने का कारण पुछवाया (५. ५०, ४–६)। श्रीराम के प्रभाव का वर्णन करते हुये हनुमान् ने इसे समझाया (५. ५१)। विभीषण ने दूत के बध को अनुचित बताकर इससे हनुमान् को कोई अन्य दण्ड देने का अनुरोध किया जिसे इसने स्वीकार कर लिया (५. ५२)। इसने हनुमान् की पूँछ में आग लगाकर नगर

भर में घुमाने की आज्ञा दी (५. ५३, १–५)। 'आससादाथ लक्ष्मीवान्रावणस्य निवेशनम्', (५. ५४, १८)। 'दर्शनं चापि लङ्कायाः सीताया रावणस्य च', (५. ५७, ५०)। 'तस्य सीता हृता भार्या रावणेन दुरात्मना', (४. ५८, २६)। 'प्रहितो रावणेनैष सह वीरैर्मदोद्धतैः', (५. ५८. १२८)। 'हत्वा च समरे रौद्रं रावणं सहबान्धवम्', (५. ६७, २८)। 'रावणं पापकर्माणम्', (६. २, ९)। 'हर्तं च रावणं युद्धे दर्शनादवधारय', (६. २, ११)। 'हृतामवाप्य वैदेहीं क्षिप्रं हत्वा च रावणम्। समृद्धार्थः समृद्धार्थामयोध्यां प्रति यास्यसि ॥', (६. ४, ४५)। इसने कर्तव्य निर्णय के लिये अपने मंत्रियों से समुचित परामर्श देने का अनुरोध किया (६. ६)। राक्षसों ने इसके वलपराक्रम का वर्णन करते हुये इसे श्रीराम पर विजय पाने का विश्वास दिलाया (६. ७)। विभीषण ने श्रीराम की अजेयता बताकर इससे सीता को लौटा देने का अनुरोध किया (६. ९)। विभीषण ने इसके महल में जाकर अपशकुनों का भय दिखाते हुये सीता को लौटा देने का पुनः अनुरोध किया परन्तु इसने विभीषण की बात को अस्वीकार कर दिया (६. १०)। इसने अपने सभासदों को सभाभवन से एकत्र किया (६. ११)। इसने नगर की रक्षा के लिये सैनिकों को नियुक्त किया और तदनन्तर सीता के प्रति अपनी आसक्ति तथा उनके हरण का प्रसङ्ग बताकर अपने सभासदों से सम्मति माँगी (६. १२, १–२६)। कुम्भकर्ण ने पहले तो इसे फटकारा परन्तु बाद में शत्रुओं का वध करने का आश्वासन दिया (६. १२, २७–४०)। महापार्श्व ने इसे सीता पर बलात्कार करने के लिये उकसाया परन्तु शाप के कारण अपने को ऐसा करने में असमर्थ बताते हुये इसने अपने पराक्रम का वर्णन किया (६. १३)। विभीषण ने राम को अजेय बताते हुये सीता को उन्हें लौटा देने की सम्मति दी (६. १४)। इसने विभीषण का तिरस्कार किया परन्तु विभीषण भी इसे फटकार कर चले आये (६. १६)। विभीषण ने अपने को इस दुराचारी राक्षस का भ्राता बताते हुये श्रीराम को अपना परिचय दिया (६. १७, १२)। विभीषण ने बताया कि काल से प्रेरित होने के कारण रावण ने उनके परामर्श को स्वीकार नहीं किया (६. १७, १५)। वानरों ने विभीषण को इसका गुप्तचर समझकर उन पर शंका प्रगट की (६. १७, १८–३०)। विभीषण ने श्रीराम के पूछने पर रावण की शक्ति का परिचय दिया जिस पर श्रीराम ने रावण-वध की प्रतिज्ञा करते हुये विभीषण को लंका के राज्य पर अभिषिक्त करने का आश्वासन दिया (६. १९, १–२५)। शार्दूल के परामर्श पर इसने शुक को दूत बनाकर सुग्रीव के पास संदेशा भेजा (६. २०, १–१४)। शुक ने रावण के पास आकर श्रीराम के सैन्यशक्ति की प्रबलता

वताया जिसे सुनकर इसने अपने बल के सम्बन्ध में गर्वोक्ति की (६. २४, २५–४७)। इसने शुक और सारण नामक अपने गुप्तचरों को राम की सैन्य शक्ति का पता लगाने के लिये भेजा (६. २५, १–८)। शुक और सारण ने इसके पास आकर राम की शक्ति का वर्णन किया (६. २५, २६–२३)। सारण ने इसे पृथक्-पृथक् वानर-यूथपतियों का परिचय दिया (६. २६–२८) इसने शुक और सारण को फटकारते हुये अपनी सभा से निकाल दिया (६. २९, १–१४)। इसने राम की सैन्यशक्ति का पता लगाने के लिये गुप्तचर भेजे (६. २९, १८–२१)। इसके गुप्तचरों ने वानर सेना का समाचार वताते हुये इसे मुख्य-मुख्य वानरों का परिचय दिया (६. ३०)। इसने मायारचित् श्रीराम का कटा मस्तक दिखाकर सीता को मोह में डालने के लिये विद्युज्जिह्व को आदेश दिया (६. ३१, १–७)। "यह सीता को भ्रमित करने के उद्देश्य से सीता के समीप गया और विविध प्रकार से श्रीराम के वध का वर्णन करते हुये मायारूपी राम का मस्तक दिखाकर कहा : 'अव तुम मेरे वश में हो जाओ।' (६. ३१, १०–४५)।" राम के कटे हुये मस्तक को देखकर जब सीता विलाप करने लगीं तो उसी समय प्रहस्त के आगमन का समाचार सुनकर यह अपनी सभा में लौट आया और मन्त्रियों के परामर्श से युद्धविषयक उद्योग करने लगा (६. ३२. ३४–४४)। माल्यवान् ने इसे श्रीराम से संधि करने के लिये समझाया (६. ३५)। माल्यवान् पर आक्षेप और नगर की रक्षा का प्रबन्ध करके यह अपने अन्तःपुर में चला गया (६. ३६)। सुग्रीव ने इसके साथ मल्लयुद्ध किया (६. ४०)। अपना परिचय देते हुये अङ्गद ने इसके समक्ष उपस्थित होकर इसकी भर्त्सना की परन्तु इसने अङ्गद को वन्दी बना लेने का आदेश दिया (६. ४१, ७५–८३)। जब अङ्गद ने इसके महल को तोड़ दिया तो यह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ परन्तु विनाश की घड़ी को उपस्थित देखकर दीर्घ निःश्वास छोड़ने लगा (६. ४१, ९२)। इसने क्रोध में आकर अपनी सेना को वाहर निकलने की आज्ञा दी (६. ४२, ३२)। जब मेघनाद ने श्रीराम और लक्ष्मण को मूर्च्छित कर दिया तो इसने अपने पुत्र का सहर्ष अभिनन्दन किया (६. ४६, ४८–५०)। इसने राक्षसियों को पुष्यक विमान द्वारा सीता को रणभूमि में ले जाकर मूर्च्छित श्रीराम और लक्ष्मण का दर्शन कराने का आदेश दिया (६. ४७, ७–१०)। 'सत्वहीनं मया राजन्रावणोऽभिभविष्यति', (६. ४९, २४)। 'प्राप्तप्रतिज्ञश्च रिपुः सकामो रावणः कृतः', (६. ५०, १९)। सुग्रीव ने विभीषण को वताया कि राम और लक्ष्पण मूर्च्छा त्यागने के पश्चात् गरुड़ की पीठ पर वैठकर रणभूमि में राक्षसों सहित इसका वध करेंगे (६. ५०, २२)। 'अहं तु रावणं हत्वा सपुत्रं सहबान्धवम्।

मैथिलीमानयिष्योमि शक्रो नष्टामिव श्रियम् ॥', (६. ५०, २५) श्रीराम के बन्धन-मुक्त होने का पता पाकर चिन्तित होते हुये इसने धूम्राक्ष को युद्ध के लिये भेजा (६. ५१, १–२२)। वज्रदंष्ट्र के वध का समाचार सुनकर इसने अकम्पन आदि राक्षसों को श्रीराम के विरुद्ध युद्ध के लिये भेजा (६. ५५, ४) अकम्पन के वध से दु:खित होकर इसने लङ्का के समस्त मोरचों का निरीक्षण किया और प्रहस्त को विशाल सेना सहित युद्ध के लिये भेजा (६, ५७, १–१९)। "प्रहस्त के वध का समाचार पाकर दु:खी हो इसने स्वयं ही युद्ध के लिये प्रस्थान किया। यह अग्नि के समान प्रकाशमान् रथ पर आरूढ हुआ जिसमें उत्तम अश्व जुते हुये थे। इसके प्रस्थान करते समय शङ्ख, भेरी और पणय आदि बाजे बचने लगे; योद्धागण ताल ठोकने, गरजने और सिंहनाद करने लगे, वन्दीजनों ने पवित्र स्तुतियों द्वारा इसकी आराधना की (६. ५९, १–१०)।" "विभीषण ने श्रीराम से इसका परिचय देते हुये कहा : 'यह जो व्याघ्र, ऊँट, हाथी, हिरन और अश्व जैसे मुखवाले, चढी हुई आखों वाले तथा अनेक प्रकार के भयंकर रूपवाले भूतों से घिरा हुआ है, जो देवताओं का भी दर्प दलन करने वाला है, तथा यहाँ. जिसके ऊपर पूर्ण चन्द्र के समान श्वेत एवं पतली कमानीवाला सुन्दर छत्र शोभा पाता है, वही यह राक्षसराज महामना रावण है जो भूतों से घिरे हुये रुद्रदेव के समान सुशोभित होता है। यह सिर पर मुकुट धारण किये हुये है। इसका मुख कानों में हिलते हुये कुण्डलों से अलंकृत है। इसका शरीर गिरिराज हिमालय और विन्ध्याचल के समान विशाल और भयंकर है, तथा यह इन्द्र और यमराज के घमंड को भी चूर करने वाला और साक्षात् सूर्य के समान प्रकाशित हो रहा है :' (६. ५९, २३–२५)। श्रीराम ने इसे दृष्टिगोचर किया (६. ५९, २६–३१)। इसने राक्षसों को सावधान करते हुये युद्ध किया जिसमें सुग्रीव इसकी मार से अचेत हो गये (६. ५९. ३३–४१)। "इसने गवाक्ष, गवय सुषेण, ऋषभ, ज्योतिर्मुख और नल के साथ युद्ध करते हुये उन्हें घायल किया। श्रीराम की आज्ञा से लक्ष्मण इसके साथ युद्ध करने के लिये आये (६. ५९, ४२–५२)। हनुमान् और इसमें थप्पड़ों की मार हुई तथा इसने नील को मूर्च्छित कर दिया (६. ५९, ५३–९०)। नील के अचेत हो जाने पर इसने शक्ति के आघात से लक्ष्मण को भी मूर्छित कर दिया किन्तु अन्ततः श्रीराम से पराजित होकर लंका में प्रविष्ट हो गया (६. ५९, ९२–१४६)। इसके युद्धस्थल से भाग जाने पर इसके पराजय का विचार करके देवता, असुर, भूत, दिशायें, समुद्र, ऋषिगण, बड़े-बड़े नाग तथा भूचर और जलचर प्राणी भी अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. ५९, १४८)। अपनी पराजय से दु:खी होकर इसने सोये हुये

कुम्भकर्ण को जगाने की आज्ञा दी (६, ६०, १–२१)। महोदर ने कुम्भकर्ण के जग जाने पर रावण से मिलने के लिये कहा (६. ६०, ८३)। "राक्षसों ने इसे कुम्भकर्ण के जग जाने का समाचार सुनाया जिससे प्रसन्न होकर इसने उसे शीघ्र बुलाने की आज्ञा दी। कुम्भकर्ण ने इसके महल की ओर प्रस्थान किया (६, ६०, ८५–८८)।" जब कुम्भकर्ण इसके समक्ष उपस्थित हुआ तो इसने खड़े होकर उसका स्वागत करने के पश्चात् राम से भय बताकर उसे शत्रुसेना का विनाश करने के लिए प्रेरित किया (६. ६२)। कुम्भकर्ण ने इसके कुकृत्यों के लिए इसे उपालम्भ दिया परन्तु बाद में इसे धैर्य बँधाते हुये युद्ध विषयक उत्साह प्रकट किया (६. ६३)। महोदर ने इसे बिना युद्ध के ही अभीष्ट-सिद्धि का उपाय बताया (६. ६४, २०–३६)। कुम्भकर्ण की वीरोचित बातों को सुनकर इसने उसकी सराहना की (६. ६५, ९–१५)। इसने कुम्भकर्णं को युद्ध के लिये भेजते हुए उसे विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित किया (६. ६५, २२–२७)। कुम्भकर्ण के वध का समाचार सुनकर इसने विलाप किया (६. ६८)। इसने अपने दोनों भ्राताओं, महापार्श्व और महोदर को भी राक्षस कुमारों के साथ युद्ध में जाने के लिए कहा (६. ६९. १६–१७)। अतिकाय की मृत्यु का समाचार सुनकर यह उद्विग्न हो उठा और राक्षसों को लंकापुरी की रक्षा के लिए सावधान रहने का आदेश दिया (६. ७२)। "संग्राम में अनेक राक्षस-प्रमुखों का वध हो जाने की बात सुनकर सहसा इसके नेत्रों से अश्रु उमड़ पड़े। इसे उस समय शोक समुद्र में निमग्न देखकर इन्द्रजित् स्वयं युद्ध करने के लिये प्रस्तुत हुआ (६. ७३, १–३)।" निकुम्भ और कुम्भ की मृत्यु का समाचार सुनकर यह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और खर-पुत्र मकराक्ष को श्रीराम और लक्ष्मण से युद्ध करने की आज्ञा दी (६. ७८, १–२)। मकराक्ष की मृत्यु का समाचार सुनकर यह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और इन्द्रजित् को युद्ध के लिये जाने की आज्ञा दी (६. ८०, १–४)। "इन्दजित् के वध का समाचार सुनकर यह मूर्च्छित हो गया। तदनन्तर चेतना लौटने पर इसने सीता का वध कर देने का निश्चय किया परन्तु सुपार्श्व के समझाने पर इस कुकृत्य से निवृत्त हुआ (६. ९२)।" "सभा में पहुँचकर यह अत्यन्त दुःखी एवं दीन हो सिंहासन पर बैठा दीर्घ निःश्वास लेने लगा। उस समय इसने अपने प्रधान योद्धाओं को श्रीराम आदि का वध कर देने का आदेश देते हुये कहा कि यदि वे इस कार्य को न कर सकेंगे तो यह स्वयं ही करेगा (६. ९३, १–५)।" "इसने राक्षसों के वध के कारण लंका के प्रत्येक गृह में शोकमग्न राक्षसियों का करुणाजनक विलाप सुना और क्रोध में भर कर अपने सेनापतियों तथा अन्य राक्षसों को युद्ध के लिये

सन्नद्ध होने का आदेश दिया। यह स्वयं भी राक्षसों के साथ युद्धभूमि में आकर अपना पराक्रम दिखाने लगा (६.९५)।" इसके प्रहार से वानरसेना पलायन करने लगी (६. ९६, १–५)। सुग्रीव द्वारा विरूपाक्ष के वध का समाचार सुनकर इसने महोदर को युद्ध के लिए भेजा (६. ९७, २–५)। "विरूपाक्ष, महोदर और महापार्श्व के वध के पश्चात् इसके हृदय में क्रोध का आवेश हुआ। इसने अपने सारथि से कहा —'मैं रणभूमि में उस राम रूपी वृक्ष को उखाड़ फेकूंगा जो सीता रूपी पुण्य के द्वारा फल देने वाला है, तथा सुग्रीव, जाम्बवान्, कुमुद, नल, द्विविद, मैन्द, अङ्गद, गन्धमादन, हनुमान्, और सुषेण आदि समस्त वानर यूथपति जिसकी प्रशाखाये हैं।' इस प्रकार कहकर यह श्रीराम से युद्ध करने के लिए अग्रसर हुआ। इसने विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग करते हुये श्रीराम से घोर युद्ध किया (६. ९९)।" श्रीराम के साथ घोर युद्ध करते हुये इसने अपनी शक्ति से लक्ष्मण को मूर्च्छित कर दिया (६. १००, १–३६)। श्रीराम ने क्रुद्ध होकर इससे भीषण युद्ध किया जिसमें आहत एवं पीड़ित होकर यह युद्धभूमि से भाग गया (६. १००, ५८–६२)। इसने श्रीराम के साथ पुनः घोर युद्ध किया (६. १०२)। श्रीराम ने इसे फटकारते हुये इसे आहत कर दिया। उस समय इसका सारथि इसे रणभूमि से बाहर हटा ले गया (६ १०३)। इसने इस कार्य के लिये सारथि को फटकारा (६. १०४, १–९)। सारथि के उत्तर से सन्तुष्ट होकर इसने उसे पुनः रथ को युद्धभूमि में ले चलने का आदेश दिया जिसका पालन करते हुये सारथि ने इसे श्रीराम के समीप पहुँचा दिया (६. १०४, २४–२८)। इसके रथ को देखकर श्रीराम ने अपने सारथि, मातलि, को सावधान किया। उस समय इसकी पराजय तथा राम की विजय के सूचक अनेक चिह्न प्रकट हुये (६. १०६)। इसने श्रीराम के साथ घोर युद्ध किया (६. १०७)। मातलि के परामर्श पर श्रीराम ने ब्रह्मास्त्र द्वारा इसके हृदय को विदीर्ण कर दिया और यह प्राणहीन होकर भूमि पर गिर पड़ा (६. १०८, १–२३)। इसके वध पर विभीषण ने इसके लिये विलाप किया (६. १०९, १)। श्रीराम ने विभीषण को इसका अन्त्येष्टि संस्कार करने का आदेश दिया (६. १०९, १३–२५)। इसकी स्त्रियों ने इसकी मृत्यु पर विलाप किया (६. ११०)। "इसकी प्रिय पत्नी मन्दोदरी ने इसकी मृत्यु पर विलाप किया। तदनन्तर श्रीराम ने विभीषण को स्त्रियों को धैर्य बँधाने तथा इसका अन्त्येष्टि संस्कार करने का आदेश दिया (६. १११, १–९१)। "जब विभीषण ने इसका दाह-संस्कार करने में संकोच प्रगट किया तो श्रीराम ने उनसे कहा : 'रावण भले ही अधर्मी और असत्यवादी रहा हो, परन्तु संग्राम में सदैव तेजस्वी, बलवान्, और शूरवीर रहा। इन्द्र

आदि देवता भी उसे परास्त नहीं कर सके। वह बल पराक्रम से सम्पन्न तथा महामनस्वी था। वैर का अन्त मृत्यु के साथ हो जाता है, अतः रावण इस समय जैसे तुम्हारा भाई है वैसे ही मेरा भी है। इसलिये तुम इसका दाह संस्कार करो।' श्रीराम के ये वचन सुनकर विभीषण ने इसका विधिवत् दाह संस्कार किया (६. १११, ९८–१२१)। लंका से अयोध्या लौटते समय श्रीराम ने पुष्पक विमान से सीता को वह स्थान दिखाया जहाँ से इसने उनका बलपूर्वक अपहरण किया था (६. १२३, ४५)। 'दिष्ट्या त्वया हतो राजन्रावणो लोकरावणः। नहि भारः स ते राम रावणः पुत्रपौत्रवान् ॥', (७. १, १८)। 'दिष्ट्या त्वया हतो राम रावणो राक्षसेश्वरः', (७. १, १९)। वेदवेत्ता महर्षियों ने श्रीराम से कहा कि युद्ध में उनके द्वारा जो इसकी पराजय हुई है उससे भी बढ़कर महत्त्व लक्ष्मण द्वारा इसके पुत्र इन्द्रजित् का वध है (७. १, २५)। 'रावणं च निशाचरम्', (७. १, ३१)। "कैकसी ने अत्यन्त भयानक और क्रूर स्वभाव वाले इस राक्षस को जन्म दिया। इसके दस मस्तक, बड़ी-बड़ी दाढ़ें, तवे जैसे होठ, बीस भुजायें, विशाल मुख और चमकीले केश थे। इसके शरीर का रंग कोयले के पहाड़ जैसा काला था। इसके पैदा होते ही मुख में अङ्गारों के कौर लिये गीदड़ियाँ और मांसभक्षी गृध्र आदि पक्षी दायीं ओर मण्डलाकार घूमने लगे। इन्द्रदेव रुधिर की वर्षा करने लगे, मेघ भयंकर स्वर में गरजने लगे, सूर्य की प्रभा फीकी पड़ गई, पृथिवी पर उल्कापात होने लगा, धरती काँप उठी, भयानक आँधी चलने लगी तथा किसी के द्वारा क्षुब्ध न होनेवाला सरित्पति समुद्र विक्षुब्ध हो उठा। उस समय ब्रह्मा के समान तेजस्वी पिता विश्रवा मुनि ने दशग्रीवाओं सहित उत्पन्न होने के कारण इस पुत्र का 'दशग्रीव' नामकरण किया (७. ९, २७–३२)।" कुम्भकर्ण और दशग्रीव (रावण) दोनों महाबली राक्षस, लोक में उद्वेग उत्पन्न करने वाले थे (७. ९, ३६)। माता कैकसी के कथनानुसार वैश्रवण की भाँति तेज और वैभव-सम्पन्न होने के लिये यह तपस्या करने के गोकर्ण-आश्रम में गया (७ ९, ४०–४७)। "इसने दस हजार वर्षों तक लगातार उपवास किया। प्रत्येक सहस्र वर्ष के पूर्ण होने पर यह अपना एक मस्तक काटकर अग्नि में होम कर देता था। इस प्रकार जब मस्तकों के कट जाने पर दसवें सहस्र वर्ष में यह (दशग्रीव) अपना दसवाँ मस्तक काटने के लिये उद्यत हुआ तो ब्रह्मा जी प्रकट हो गये और प्रसन्न होकर उन्होंने इससे वर माँगने के लिये कहा। इसके अमरत्व की याचना करने पर ब्रह्मा ने कहा : "तुम्हें सर्वथा अमरत्व नहीं मिल सकता इसलिये कोई दूसरा वर माँगो।' तदनन्तर ब्रह्मा ने इसे गरुड़, नाग, यक्ष, दैत्य, दानव, राक्षस तथा देवताओं से अवध्य होने का वर दिया और

प्रसन्न होकर इसे इसके उन सभी मस्तकों, जिनका इसने अग्नि में हवन किया था, के पूर्ववत् प्रकट होने और इच्छानुसार रूप धारण करने का भी वर दिया । तदनन्तर इसके वे सभी मस्तक नये रूप में प्रगट हो गये (७. १०, १०–२६) ।" सुमाली ने इसके अपने सचिवों सहित ब्रह्मा द्वारा वरप्राप्ति का समाचार सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हो इससे लंका का राज्य लेने के लिये कहा (७. ११, १–९) । इसने अपने बड़े भ्राता, कुवेर, के रहते हुये ऐसा करना अस्वीकार कर दिया (७. ११, १०) । प्रहस्त के समझाने पर इसने कुवेर के पास प्रहस्त के द्वारा ही यह संदेश भेजा कि वह (कुवेर) इसे लंका का राज्य लौटा दें (७. ११, २२–२५) । जब कुवेर ने लंका छोड़ दिया तो इसने उस नगरी में पदार्पण किया । उस समय निशाचरों ने लंका में इसका राज्याभिषेक किया और उसके पश्चात् इसने इस नगरी को बसाया (७. ११, ४९–५१) । अपनी बहन का विवाह करके एक दिन जब यह शिकार के लिये वन में घूम रहा था तो इसने दिति-पुत्र मय तथा उसकी पुत्री को देखा और दोनों का परिचय पूछा (७. १२, ३–४) । मय को अपना परिचय देते हुये इसने अपने को विश्रवा का पुत्र बताया (७. १२, १५) । "मय ने इससे अपनी पुत्री का बिवाह करते हुये इसे एक अमोघ शक्ति भी प्रदान की । उसी अमोघशक्ति से इसने लक्ष्मण को आहत किया था (७. १२, १७–२१) ।" जब कुम्भकर्ण के भीतर निद्रा का वेग प्रगट हुआ तो उसने इससे अपने लिये एक शयनकक्ष बनवाने का अनुरोध किया जिसे सुनकर इसने विश्वकर्मा को तदनुसार सुन्दर भवन बनाने का आदेश दिया (७. १३, २–४) । इसने कुवेर के दूत का वध कर दिया (७. १३, ३४–४१) । अपने मंत्रियों सहित इसने यक्षों पर आक्रमण करके उन्हें पराजित किया (७. १४) । इसने मणिभद्र तथा कुवेर को पराजित करके कुवेर के पुष्पक विमान का भी अपहरण कर लिया (७. १५) । "अपने भ्राता कुवेर को पराजित करके यह 'शरवण' नामक वन में गया । उस वन के समीप स्थित पर्वत पर जब यह चढ़ने लगा तो इसके विमान की गति रुक गई । उस समय इसने अपने मंत्रियों से विमान के रुकने का कारण पूछा (७. १६, १–५) ।" जब यह मंत्रियों से इस प्रकार परामर्श कर रहा था तो वहाँ शंकर के पार्षद, नन्दी, ने उपस्थित होकर इसे लौट जाने के लिये कहा (७. १६, ८–११) । इसने नन्दी की बातों की उपेक्षा करते हुये उनके वानर-मुख का उपहास किया (७. १६, १४) । क्रुद्ध नन्दीश्वर ने इसे यह शाप दिया कि इसका तथा इसके कुल का वानरों के हाथ ही विनाश होगा (७. १६, १६–२०) । इसने नन्दी के वचन की उपेक्षा करते हुये उस पर्वत को ही उठाकर मार्ग से हटा देने का प्रयास

किया (७. १६, २२–२५)। इसके उठाने के प्रयास के फलस्वरूप जब वह पर्वत हिलने लगा तो उस पर विराजमान् महादेव ने अपने पैर के अँगूठे से पर्वत को दबा दिया जिससे इसकी दोनों भुजायें उसके नीचे दब गईं (७. १६, २७–२८)। अपनी भुजाओं के दबने की पीड़ा से इसने भीषण 'विराव' (रोदन अथवा आर्तनाद) किया (७. १६, २९)। "अपने मंत्रियों के परामर्श पर इसने एक सहस वर्ष तक शंकर की स्तुति की जिससे प्रसन्न होकर उन्होंने इसकी भुजाओं को मुक्त करते हुये इससे कहा : 'तुमने पर्वत से दब जाने के कारण जो अत्यन्त भयानक 'राव' किया था उसी के कारण अब तुम रावण के नाम से प्रसिद्ध होगे।' उस समय इसने शंकर से अपनी अवशिष्ट आयु को पुरी की पूरी प्राप्त करने तथा एक शस्त्र की भी याचना की (७. १६, ३४–४३)।" शंकर ने इसे चन्द्रहास नामक खड्ग दिया तथा इसकी आयु का व्यतीत अंश भी पूर्ण कर दिया। (७. १६, ४४) "शंकर से वरदान प्राप्त करने के पश्चात् लौट कर यह समस्त पृथ्वी पर दिग्विजय के लिये भ्रमण करने लगा। उस समय सभी ने इसके सामने अपनी पराजय स्वीकार कर ली (७. १६, ४६–४९)।" एक समय वन में विचरण करते हुये इसने एक तपस्विनी कन्या को देखा और उस पर मोहित होकर उसका परिचय पूछा (७. १७, १–८)। कन्या ने अपना नाम वेदवती बताते हुये जब अपना पूर्ण परिचय दिया तो इसने उससे अपनी पत्नी बन जाने का प्रस्ताव किया (७. १७, २०–२४)। वेदवती के अस्वीकार करने पर इसने अपने हाथ से उसके केश पकड़ लिये (७. १७, २७)। उस समय वेदवती ने इससे कहा कि वह इसके वध के लिये पुनः जन्म लेगी, और इसके पश्चात् वह अग्नि में प्रवेश कर गई (७. १७, २८–३४)। "जब वह कन्या दूसरे जन्म में एक कमल से प्रकट हुई तो इसने उसे पुनः प्राप्त कर लिया और अपने घर लाया। मन्त्रियों ने जब इसे यह बताया कि वह कन्या इसके वध का कारण होगी तो इसने उसे समुद्र में फेंक दिया (७. १७, ३५–३९, गीता प्रेस संस्करण)।" "इसने उशीरबीज नामक देश में पहुँचकर मरुत्त को देवताओं के साथ बैठकर यज्ञ करते देखा। इसे देखकर समस्त देवता भयभीत हो तिर्यग्योति में प्रवेश कर गये। मरुत्त के निकट पहुँचकर इसने उनसे युद्ध करने अथवा पराजय स्वीकार करने के लिये कहा। मरुत्त के पूछने पर इसने अपना परिचय दिया, जिस पर मरुत्त इससे युद्ध करने के लिये उद्यत हुये (७. १८, १–१३)।" यज्ञ की दीक्षा ग्रहण कर चुकने के कारण जब महर्षि संवर्त ने मरुत्त को युद्ध करने से विरत कर दिया तो इसने अपने को विजयी मानकर वहाँ उपस्थित महर्षियों का भक्षण किया और पृथिवी पर विचरने लगा (७.१८, १९–२०)।

"इसने मरुत्त को विजित करने के पश्चात् अनेक राजाओं को विजित किया। इसके पश्चात् इसने अयोध्यापुरी में आकर वहाँ के राजा अनरण्य को युद्ध के लिये ललकारा। अनरण्य के साथ इसका घोर युद्ध हुआ जिसमें इसके प्रहार से आहत होकर अनरण्य धराशायी हो गये। भूमि पर पड़े महाराज अनरण्य ने इसे शाप देते हुये कहा : 'तूने अपने व्यंगपूर्ण वचन से इक्ष्वाकु कुलका अपमान किया है अतः मैं तुझे यह शाप देता हूँ कि इक्ष्वाकु-वंशी नरेशों के इस वंश में ही दशरथनन्दन श्रीराम प्रगट होकर तेरा वध करेंगे।' इतना कहकर राजा स्वर्गवासी हुये और यह वहाँ से अन्यत्र चला गया (७. १९)।" "जब यह मनुष्यों को भयभीत करता हुआ पृथिवी पर विचरण कर रहा था तो महर्षि नारद ने इसके पास आकर इसकी प्रशंसा करते हुये इसे यमराज को वशीभूत करने का परामर्श दिया। उस समय इसने नारद का परामर्श स्वीकार करते हुये यमराज को विजित करने के लिये दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान किया (७. २०, १–२६)।" यमलोक पर आक्रमण करके इसने घोर युद्ध करते हुये यमराज के सैनिकों का संहार किया (७. २१)। "यमराज के साथ घोर युद्ध करते हुये जब इसने उन्हें अत्यन्त त्रस्त कर दिया तो उन्होंने इसका वध कर देने के लिये कालदण्ड हाथ में उठाया। उस समय ब्रह्मा ने वहाँ उपस्थित होकर उन्हें रोकते हुये कहा : 'मैंने रावण को देवताओं से अवध्य होने का वर दिया है, अतः आप कालदण्ड से इसका वध न करें क्योंकि उस दशा में मेरी बात मिथ्या हो जायगी।' ब्रह्मा के ऐसा कहने पर जब यमराज कालदण्ड का प्रहार करने से विरत होकर इसकी दृष्टि से ओझल हो गये तो इसने अपने को यमराज पर विजयी माना (७, २२)।" इसने निवातकवचों से मैत्री, कालकेयों का वध तथा वरुणपुत्रों को परजित किया (७. २३)। वरुणालय से लौटते समय इसने अनेक नरेशों, ऋषियों, देवताओं और दानवों की कन्याओं का अपहरण कर लिया (७. २४, १–३)। उन अपहृत कन्याओं ने इसे यह शाप दिया कि स्त्री के कारण ही इसका वध होगा (७. २४, २०–२१)। "उन कन्याओं के शाप से निस्तेज होकर जब यह लंकापुरी में आया तो इसकी बहन, राक्षसी शूर्पणखा, ने आकर इस पर अपने पति का वध कर देने का अक्षेप किया। अपनी बहन को सान्त्वना देते हुये इसने उसे दण्डकारण्य में जाकर अपने भ्राता खर के पास निवास करने के लिये कहा। इसने चौदह सहस्र पराक्रमी राक्षसों की सेना को भी खर के साथ जाने की आज्ञा दी (७. २४, २२–४२)।" इसने निकुम्भिला में जाकर अपने पुत्र, मेघनाद, को यज्ञ करते देखा (७. २५, १–५)। "जब मेघनाद का यज्ञ करा रहे शुक्राचार्य ने इसे मेघनाद के यज्ञ

का परिचय दिया तो इसने कहा : 'बेटा ! तुमने यह अच्छा नहीं किया, क्योंकि इस यज्ञ सम्बन्धी द्रव्यों से मेरे शत्रुभूत इन्द्र आदि देवताओं का पूजन हुआ है ।' तदनन्तर यह अपने पुत्र तथा विभीषण के साथ अपने घर लौटा और पुष्पक विमान से उन सब स्त्रियों को उतारा जिनका अपहरण करके यह अपने साथ लाया था । उस समय उन स्त्रियों के विलाप को सुनकर विभीषण ने इसे परस्त्री-हरण का दोष बताते हुये कहा : 'आप इन अबलाओं का अपहरण करके लाये हैं और उधर आपका उल्लङ्घन करके हम लोगों की बहन, कुम्भीनसी, का मधु ने अपहरण कर लिया है ।' जब इसने विभीषण की बातों को समझने में अपनी असमर्थता प्रगट की तब विभीषण ने कुम्भीनसी का परिचय दिया । विभीषण की बात सुनकर इसने मधु की नगरी, मधुपुर, पर आक्रमण किया परन्तु कुम्भनसी के कहने पर मधु को क्षमा करते हुये मधु को साथ लेकर देवलोक पर आक्रमण के लिए प्रस्थान किया (७. २५, १४–५२) ।" "देवलोक पर आक्रमण के लिये जाते समय जब यह कैलास पर्वत पर रुका तो वहाँ रम्भा नामक अप्सरा को देखकर उस पर आसक्त हो गया । जब इसने रम्भा से समागम का प्रस्ताव किया तो उसने बताया कि वह इसकी पुत्रवधू है क्योंकि उस समय वह इसके भ्रातापुत्र नलकूबर के पास जा रही है । रम्भा की बात की उपेक्षा करते हुये इसने उसके साथ बलात्कार करके छोड़ दिया । जब रम्भा ने नलकूबर को समस्त वृत्तान्त सुनाया तो उन्होंने इसे शाप देते हुये कहा : 'यदि रावण काम-पीड़ित होकर किसी ऐसी स्त्री के साथ बलात्कार करेगा जो उसे न चाहती हो तो उसके मस्तक के सात टुकड़े हो जायेंगे ।' उस शाप को सुनकर इसने अपने को न चाहने वाली स्त्रियों के साथ बलात्कार करना छोड़ दिया (७. २६) ।" "कैलास पर्वत को पार करके इसने सेना सहित देवलोक पर आक्रमण किया । उस समय भयभीत इन्द्र ने विष्णु से सहायता की प्रार्थना की (७. २७, १–६) ।" "विष्णु ने इसका वध करना अस्वीकार करते हुये इन्द्र को बताया कि इस समय यह वरदान से सुरक्षित है । फिर भी यथानुकूल समय उपस्थित होने पर इसका वध करने का विष्णु ने आश्वासन दिया (७. २७, १७–२०) ।" तदनन्तर देवों और राक्षसों में भयंकर युद्ध हुआ जिसमें सवितृ ने सुमाली का वध किया (७. २७, २७–४९) । देवों और राक्षसों के इस युद्ध में जब इसने देखा कि देवगण इसके सैनिकों का वध कर रहे हैं तो इसने इन्द्र से घोर युद्ध करना आरम्भ किया (७. २८, ४३–४८) । इस युद्ध में जब बाणवर्षा से सब ओर अन्धकार छा गया तब इन्द्र, रावण, और मेघनाद ही उस समराङ्गण में मोहित नहीं हुये (७. २९, १–४) । तदनन्तर यह देवों पर आक्रमण करने के उद्देश्य से देव

सेना के बीच उपस्थित हुआ (७ २९, ५–९)। "जब इन्द्र ने इसे बन्दी बना लेने का देवों को आदेश देते हुये दूसरी ओर से समराङ्गण में प्रवेश किया तो इसने भी इन्द्र पर आक्रमण किया। इन्द्र ने इसे चारों ओर से घेर कर युद्ध से विमुख किया। (७. २९, १५–१८)। अपने पिता को इस प्रकार इन्द्र के वश में हुआ देख मेघनाद ने माया का आश्रय लेकर इन्द्र को वन्दी बना लिया और अपने पिता को लेकर लंका लौट आया (७. २९, २७–४०)। इन्द्र को मुक्त कराने के उद्देश्य से ब्रह्मा को आगे करके देवगण इसके पास आये (७. ३०, १–२)। "श्रीराम के यह पूछने पर कि जब रावण पृथिवी पर विजय करता हुआ घूम रहा था तो क्या पृथिवी वीरों से रहित थी, महर्षि अगस्त्य ने बताया कि एक बार रावण ने युद्ध के उद्देश्य से महिष्मती पुरी में पदार्पण किया। उस समय वहाँ के राजा, अर्जुन स्त्रियों के साथ नर्मदा नदी में जलक्रीडा करने चले गये थे। रावण ने अर्जुन के मन्त्रियों से जब राजा को पूछा तो उन लोगों ने इसे राजा की अनुपस्थिति का समाचार बताया। तदनन्तर यह विन्ध्य गिरि की शोभा देखता हुआ नर्मदा नदी के तट पर आया (७. ३१, १–२०)।" नर्मदा तट पर इसने शिव का पूजन करने के उद्देश्य से नर्मदा में स्नान किया और तट पर ही शिवलिङ्ग की स्थापना करके पूजन करने लगा (७. ३१, २५–४३)। जब यह शिव को पुष्पों का उपहार समर्पित कर रहा था तो उसी समय नर्मदा का जल बढ़कर इसके पुष्पहारों को बहा ले गया (७. ३२, १. ७)। उस समय इसने अपने मन्त्रियों को नर्मदा के जल के विपरीत दिशा में वहने का कारण जानने का आदेश दिया (७. ३२, ११)। मन्त्रियों से समाचार जानकर इसने जल रोकनेवाले व्यक्ति को अर्जुन समझा और उसकी ओर प्रस्थान किया (७. ३२, २०–२१)। "इसने अर्जुन को देखकर उन्हें युद्ध के लिए ललकारा। इसका आह्वान सुनकर अर्जुन ने इसके साथ युद्ध किया और अन्त में अपनी एक सहस्र भुजाओं से पकड़कर इसे रस्सों से बाँध दिया। इस प्रकार वन्दी बनाकर अर्जुन इसे महिष्मती पुरी ले आये (७. ३२, २४–७३)।" पुलस्त्य ने महिष्मती पुरी में उपस्थित होकर इसे अर्जुन से मुक्त कराया (७. ३३, १५–२१)। "यह वालिन् से युद्ध के उद्देश्य से किष्किन्धा पुरी में आया। उस समय वालिन् वहाँ उपस्थित नहीं थे (७. ३४, १–५)।" "वालिन् के मंत्रियों आदि द्वारा वालिन् की प्रशंसा सुनकर इसने उन लोगों को भला बुरा कहते हुये दक्षिण समुद्र की ओर प्रस्थान किया। समुद्रतट पर वालिन् को देखकर जब इसने उन्हें पकड़ने का प्रयास किया तो वालिन् ने सतर्क होकर स्वयं ही इसे पकड़ कर अपनी कांख में लटका लिया। इस प्रकार इसे काँख में लटकाये हुये वालिन् चारो

समुद्रों के तट पर सन्ध्योपासना करने के पश्चात् किष्किन्धा लौटे । वहाँ आकर जब उन्होंने इसका परिचय पूछा तो इसने उनके पराक्रम की सराहना करते हुये उनसे मित्रता कर ली (७. ३४, ११–४५) ।" 'अङ्कमारोप्य तु पुरा रावणेन बलाद्धृताम्', (७. ४३. १७) । 'मम मातृष्वसुर्भ्राता रावणो नाम राक्षसः । हतो रामेण दुर्बुद्धे स्त्रीहेतोः पुरुषाधम ।। तच्च सर्वं मया क्षान्तं रावणस्य कुलक्षयम् ।', (७. ६८, १४–१५) ।

राष्ट्रवर्धन, दशरथ के एक मन्त्री का नाम है (१, ७, ३) ।

राहु, एक ग्रह का नाम है जो सूर्य और चन्द्रमा को समय-समय पर ग्रस लेता है (२. ११४, ३) । 'तं दृष्ट्वा वदनान्मुक्तं चन्द्रं राहुमुखादिव:' (५. १, १७०) । "जिस दिन हनुमान् सूर्य को पकड़ने के लिये उछले उसी दिन राहु भी सूर्यदेव पर ग्रहण लगाना चाहता था । हनुमान् ने सूर्य के रथ के ऊपरी भाग में जब राहु का स्पर्श किया तब राहु भयभीत होकर वहाँ से भाग खड़ा हुआ (७. ३५, ३१–३२) ।" यह सिंहिका का पुत्र था और हनुमान् के भय से भागकर इन्द्र की शरण में आया (७. ३५, ३३) । "इसने इन्द्र से कहा कि एक दूसरे राहु के रूप में हनुमान् ने सूर्य को पकड़ लिया है । इसकी बात सुनकर इन्द्र ने हनुमान् पर आक्रमण करने के लिये प्रस्थान किया । इधर यह भी इन्द्र को छोड़कर हनुमान् के समीप आया । हनुमान् सूर्य को छोड़कर इसे ही पकड़ने के लिये उछले जिससे भयभीत होकर यह पुनः इन्द्र की शरण में गया । उस समय इन्द्र ने इसे सान्त्वना देते हुये हनुमान् के वध का आश्वासन दिया (७. ३५, ३४–४२) ।" ब्रह्मा ने कहा कि राहु की बात सुनकर इन्द्र द्वारा हनुमान् पर व्रज-प्रहार कर देने के कारण ही वायुदेव कुपित हो उठे हैं (७. ३५, ५९) ।

रुचिर, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र, का नाम है जिसको विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ७) ।

रुधिराशन, एक राक्षस का नाम है जो श्रीराम के विरुद्ध युद्ध के लिये खर के साथ आया (३. २३, ३३) । इसने खर के साथ श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, २७) । श्रीराम ने इसका वध कर दिया (३. २६ २९–३५) ।

रुमा—राम ने कहा कि सुग्रीव-पत्नी रुमा वालिन की पुत्रवधू के समान है (४. १८, १९) । सुग्रीव ने इसे प्राप्त किया (४. २६, ४१) । लक्ष्मण की कठोर वाणी सुनकर अङ्गद ने आकर इसके चरणों में भी प्रणाम किया (४. ३१ ३६–३७) । 'सकामो भव सुग्रीव रुमां त्वं प्रतिपत्स्यसे', (४. २०, २०) । सुग्रीव के उठते ही रुमा आदि स्त्रियाँ भी सिंहासन से उतरकर खड़ी हो गईं (४. ३४, ४) । सुग्रीव के साथ उनकी पत्नी रुमा भी थी । (४. ३४, ६) ।

'प्राप्तवानिह सुग्रीवो रुमां मां च परंतप'। (४. ३५, ५)। 'रुमां मां चाङ्गदं राज्यं धनधान्यवसूनि च', (४. ३५, १३) 'पिता रुमायाः संप्राप्तः सुग्रीवश्वशुरो विभुः', (४. ३९, १६)। 'राज्यं च सुमहत्प्राप्य तारां च रुमया सह ॥ मित्रैश्च सहितस्तत्र वसामि विगतज्वरः ।', (४. ४६, ८–९) 'आरोग्यपूर्वं कुशलं वाच्या माता रुमा च मे', (४. ५५, १४)।

रेणुका—'संगता मुनिना पत्नी भार्गवेणेव रेणुका', (१. ५१, ११)। जमदग्नि की पत्नी तथा परशुराम की माता का नाम है जिसका परशुराम ने अपने पिता की आज्ञा से, फरसे से, सर काट दिया था (२. २१, ३३)।

रोमपाद, अङ्गदेश के एक महाप्रतापी और बलवान् राजा का नाम है (१. ९, ७)। "सुमन्त्र ने दशरथ को बताया कि 'इनके द्वारा धर्म का उल्लंघन हो जाने के कारण अङ्गदेश में भयंकर अनावृष्टि हुई जिससे समस्त प्राणी भयभीत हो गये। दुखी होकर इन्होंने ब्राह्मणों के परामर्शानुसार प्रायश्चितस्वरूप अपनी पुत्री शान्ता का विवाह विभाण्डक मुनि के पुत्र, ऋष्यशृङ्ग, से कर दिया।" (१. ९, ८–१७)।" इनके मन्त्रियों ने इन्हें ऋष्यशृङ्ग को वेश्याओं द्वारा अङ्गदेश में बुला लाने का परामर्श दिया (१. १० २–५)। इनकी आज्ञा से वेश्यायें ऋष्यशृङ्ग को अङ्गदेश में ले आईं (१. १०, ६–२८)। "ऋष्यशृङ्ग के आते ही सहसा वर्षा होने लगी जिससे प्रसन्न होकर इन्होंने अत्यन्त विनय के साथ उनकी आगवानी की और पृथिवी पर मस्तक टेक कर साष्टाङ्ग प्रणाम किया। कपटपूर्वक अङ्गदेश में ऋष्यशृङ्ग को उनके लाये जाने का समाचार बताते हुये अन्तःपुर में ले जाकर इन्होंने अपनी पुत्री शान्ता का विधिपूर्वक ऋष्यशृङ्ग के साथ विवाह कर दिया (१. १०, ३०–३३)।" ऋष्यशृङ्ग को आमन्त्रित करने के लिये अङ्गदेश में जाकर दशरथ ने इनसे ऋष्यशृङ्ग को अयोध्या जाने की अनुमति देने का निवेदन किया जिसे इन्होंने स्वीकार कर लिया (१. ११, १५–२३)।

रोमश, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने आग लगा दी (५. ५४, १२)।

१. रोहिणी, चन्द्रमा की प्रिय पत्नी का नाम है। यह राहु नामक ग्रह के द्वारा अपने पति के ग्रस लिये जाने पर अकेली और असहाय हो जाती है (२. ११४, ३)। सम्पूर्ण स्त्रियों में श्रेष्ठ तथा स्वर्ग की देवी, यह पति-सेवा के प्रभाव से ही एक मुहूर्त्त के लिये भी चन्द्रमा से विलग नहीं होती (२. ११८, ११)।

२ रोहिणी, सुरभि की पुत्री का नाम है जिसने गायों को जन्म दिया (३. १४, २७–२८)।

रोहित, गन्धर्वों के एक वर्ग का नाम है जो ऋषभ पर्वत पर निवास करते थे (४. ४१, ४२)।

ल

लक्ष्मण, श्रीराम के छोटे भ्राता का नाम है जो श्रीराम के साथ वन गये (१. १, २५. ३०)। इनके द्वारा शूर्पणखा के कुरूप किये जाने तथा कबन्ध के साथ इनकी भेंट होने का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन किया (१. ३, १९. २१)। श्रीराम ने इनसे लव-कुश के मुख से रामायण महाकाव्य सुनने के लिये कहा (१. ४, ३१)। ये आश्लेषा नक्षत्र और कर्क लग्न में सुमित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुये (१. १८, १३–१४)। ये बाल्यावस्था से ही श्रीराम के प्रति अत्यन्त अनुराग रखते थे और श्रीराम को भी इनके विना निद्रा नहीं आती थी (१. १८, २९–३२)। ये वस्त्र और आभूषणों से अच्छी तरह अलंकृत हो, हाथों की अँगुलियों में गोह के चमड़े के बने हुये दस्ताने पहन कर धनुष ग्रहण करते हुये तथा कटि प्रदेश में खड्ग धारण करके अद्भुत कान्ति से उद्भासित हो श्रीराम सहित महर्षि विश्वामित्र के साथ गये (१. २२, ६–९)। सरयू-गंगा संगम के समीप पुण्य आश्रम-निवासी मुनियों ने इनका आतिथ्य-सत्कार किया (१. २३, १९)। इन्होंने श्रीराम और विश्वामित्र के साथ गंगा पार होते समय जल में उठती हुई तुमुल ध्वनि का श्रवण किया (१. २४, १–५)। श्रीराम ने इनसे ताटका को स्वयं ही पराजित करने के लिये कहा (१. २६, ९–१२)। ताटका ने धूल उड़ाकर राम सहित इनको दो घड़ी तक मोह में डाल दिया (१. २६, १५)। सुमित्राकुमार लक्ष्मण ने ताटका की नाक और कान काट लिये परन्तु इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली वह यक्षिणी इनको मोह में डालती हुई अदृश्य होकर पत्थरों की वर्षा करने लगी (१. २६, १८–१९)। इन्होंने विश्वामित्र के साथ सिद्धाश्रम में प्रवेश किया (१. २९, २५)। इन्होंने विश्वामित्र से यज्ञ में राक्षसों के आक्रमण का समय पूछा (१. ३०, १–२)। श्रीराम ने इनसे सावधानीपूर्वक विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करने के लिये कहा (१. ३०, ७)। श्रीराम ने इनको बताते हुये मारीच, रक्तभोजी राक्षसों, तथा सुबाहु आदि यज्ञ में विघ्न डालनेवाले राक्षसों का वध कर दिया (१. ३०, १९–२२)। इन्होंने विश्वामित्र की यज्ञरक्षा करके यज्ञशाला में ही रात्रि व्यतीत की (१. ३१, १)। इन्होंने राम और विश्वामित्र के साथ मिथिला को प्रस्थान तथा मार्ग में संध्या के समय शोणभद्र के तट पर विश्राम किया (१. ३१, २–२२)। इन्होंने श्रीराम के साथ अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक अहल्या के दोनों चरणों का स्पर्श किया (१. ४९, १८)। वसिष्ठ ने इनके लिये ऊर्मिला का वरण किया (१. ७०, ४५)। जनक ने

ऊर्मिला को इनके लिये समार्पित करने की प्रतिज्ञा की तथा विवाह के तीन दिन पूर्व मघा नक्षत्र में इनके अभ्युदय के लिये गो, भूमि, तिल, और सुवर्ण आदि का दान करने का दशरथ को परामर्श दिया (१. ७१, २१–२४)। जनक ने इनको भार्या के रूप में ऊर्मिला समार्पित कर दी (१. ७३, २८)। ये अपने देवोपम पिता, दशरथ, की सेवा में लगे रहते थे (१. ७७, २१)। श्रीराम इनके ज्येष्ठ भ्राता थे (२. २, १३)। श्रीराम इनके साथ संग्रामभूमि से बिना विजय प्राप्त किये नहीं लौटते थे (२. २, ३८)। ये श्रीराम के राज्याभिषेक का समाचार सुनकर उनकी सेवा में उपस्थित हुये (२. ४, ३१–३२)। श्रीराम ने इनको अपनी अन्तरात्मा बताते हुये इनको सुख-समृद्धि के लिये ही राज्य की अभिलाषा का कारण बताया (२. ४, ४२–४५)। 'लक्ष्मणो हि महाबाहू रामं सर्वात्मना गतः। शत्रुघ्नश्चापि भरतं काकुत्स्थं लक्ष्मणो यथा ॥', (२. ८, ६)। 'लक्ष्मणो हि यथा रामं तथायं भरतं गतः', (२. ८, २९)। 'गोप्ता हि रामं सौमित्रिर्लक्ष्मणं चापि राघवः। अश्विनोरिव सौभ्रात्रं तयोर्लोकेषु विश्रुतम् ॥ तस्मान्न लक्ष्मणे रामः पापं किंचित्करिष्यसि।', (२. ८, ३१–३२)। 'मया च रामेण सलक्ष्मणेन प्रशास्तु हीनो भरतस्त्वया सह', (२. १२, १०७).। अपने भवन से बाहर निकलने पर श्रीराम ने इन्हें द्वार पर हाथ जोड़े हुये स्थित देखा (२. १६, २६)। श्रीराम के ये लघुभ्राता भी हाथ में विचित्र चवँर लिये रथ पर आरूढ़ होकर पीछे से अपने ज्येष्ठ भ्राता श्रीराम की रक्षा करने लगे (२. १६, ३२)। श्रीराम के वनवास से कुपित होकर सुमित्रा के आनन्द को बढ़ाने वाले लक्ष्मण दोनों नेत्रों में आँसू भर कर चुपचाप श्रीराम के पीछे-पीछे चले गये (२. १९, ३०. ३९)। श्रीराम इनके साथ माता के अन्तःपुर में गये (२. २०, ८)। 'उवाच पुरुषव्याघ्रमुपश्रृण्वति लक्ष्मणे', (२. २०, ३५)। इन्होंने रोष प्रगट करते हुये श्रीराम को बलपूर्वक राज्य पर अधिकार कर लेने के लिये प्रेरित किया परन्तु श्रीराम ने पिता की आज्ञा के पालन को ही धर्म बताकर कौसल्या और इन्हें समझाया (२. २१)। इनको समझाते हुये श्रीराम ने अपने वनवास में दैव को ही कारण बताया और अभिषेक की सामग्री को हटा लेने का आदेश दिया (२. २२)। इन्होंने ओजभरी बातें कहते हुये भाग्यवाद का खण्डन और पुरुषार्थ का प्रतिपादन किया तथा श्रीराम के अभिषेक के लिये विरोधियों से युद्ध करने के लिये उद्यत हुये (२. २३)। इन्होंने श्रीराम तथा सीता का चरण पकड़ कर अपने को भी वन ले चलने का आग्रह किया (२. ३१, २–९)। श्रीराम ने इन्हें समझाते हुये पहले तो मना किया परन्तु बाद में आज्ञा प्रदान कर दी (२. ३१, १०–१७. २८)। श्रीराम ने इन्हें सुहृदों से आज्ञा लेने तथा दिव्य

आयुध आदि लेकर तैयार होने का आदेश देते हुये ब्राह्मणों को धनदान देने का विचार व्यक्त किया (२. ३१, २९–३७)। श्रीराम ने इनसे ब्राह्मणों, ब्रह्मचारियों, सेवकों आदि को बुलवाकर धन का वितरण कराया (२. ३२, १२–४५)। वन जाने के लिये उद्यत हो श्रीराम और सीता के साथ ये भी पिता का दर्शन करने के लिये गये (२. ३३. १–२)। दुःखी नगरवासियों के मुख से तरह-तरह की बातें सुनते हुये ये पिता के दर्शन के लिये कैकेयी के महल में गये (२. ३३, ३–३१)। श्रीराम को देखकर जब शोक-विह्वल दशरथ मूर्च्छित हो गये तब ये शीघ्रतापूर्वक उनके समीप आ पहुँचे (२. ३४, १७–१८)। ये भी श्रीराम और सीता के साथ शोक-विह्वल होकर रोने लगे (२. ३४, २०)। इन्होंने हाथ जोड़कर दीनभाव से दशरथ के चरणों का स्पर्श करके उनकी प्रदक्षिणा की (२. ४०, १)। इन्होंने अपनी माता के चरणों में प्रणाम किया (२. ४०, ३)। राम ने तमसातट पर पहुँचने के पश्चात् अयोध्यावासियों के लिये इनसे चिन्ता प्रगट की (२. ४६, १–१०)। इनसे परामर्श करके श्रीराम ने तमसातट पर पुरवासियों को सोता छोड़कर वन्य प्रदेश में चले जाने का निश्चय किया (२. ४६, १९–२४)। संध्योपासना के पश्चात् श्रीराम ने भोजन के नाम पर इनके द्वारा लाये हुये जल मात्र को ही ग्रहण किया (२. ५०, ४८)। ये भी सुमन्त्र और गुह के साथ बातचीत करते हुये सारी रात जागते रहे (२. ५०, ५०)। इन्होंने गुह के समक्ष श्रीराम के वनवास तथा उससे सम्बद्ध परिस्थितियों की चर्चा करते हुये विलाप किया (२. ५१)। श्रीराम ने गंगा पार करने के पश्चात् इन्हें सीता की रक्षा के लिये तत्पर होने का आदेश दिया (२. ५२, ९४–९८)। "श्रीराम ने कैकेयी से कौसल्या आदि के अनिष्ट की आशंका बताकर इनको अयोध्या लौटाने का प्रयत्न किया परन्तु इन्होंने राम के बिना अपना जीवन असम्भव बताते हुये लौटना अस्वीकार कर दिया जिस पर श्रीराम ने इन्हें वनवास की अनुमति दी (२. ५३)।" ये श्रीराम और सीता के साथ गंगा और यमुना के संगम पर स्थित भरद्वाज-आश्रम में पहुँचे जहाँ मुनि ने इन लोगों का सत्कार किया (२. ५४)। श्रीराम ने इन्हें सीता को उनकी इच्छानुसार फल-फूल आदि लाकर देने के लिये कहा (२. ५५, २७–३०)। चित्रकुट पहुँचकर श्रीराम की आज्ञा से इन्होंने पर्णशाला का निर्माण किया (२. ५६, १८–२१)। भरत ने वसिष्ठ के दूतों से इनका कुशल समाचार पूछा (२.७०, १८)। कैकेयी ने भरत को बताया कि दशरथ ने राम और सीता सहित इनके वनवास से दुःखित होकर प्राण-त्याग कर दिया (२. ७२, ३६. ३८. ४०. ४२. ५०)। भरत ने कैकेयी से कहा कि वह लक्ष्मण के बिना राज्य की रक्षा करने

में असमर्थ हैं (२. ७३, १४)। 'विवासनं च सौमित्रेः सीतायाश्च यथाभवत्', (२. ७५, ३)। निषादराज गुह ने भरत से इनके सद्भाव और विलाप का वर्णन किया (२. ८६; ८७, १८–२४)। 'धन्यः खलु महाभागो लक्ष्मणः शुभलक्षणः। भ्रातरं विषमे काले यो राममनुवर्तते ॥', (२. ८८, २०)। भरत ने भरद्वाज मुनि को इनका परिचय दिया (२. ९२, २३)। 'लक्ष्मणेन च वत्स्यामि न मां शोकः प्रधक्ष्यति', (२. ९४, १५)। ये सदैव श्रीराम की आज्ञा के अधीन रहते थे (२. ९५, १६)। श्रीराम की आज्ञा से इन्होंने वन-जन्तुओं के भागने का कारण जानने के लिए शाल-वृक्ष पर चढ़कर भरत की सेना को देखा और उनके प्रति अपना रोषपूर्ण उद्गार प्रगट किया (२. ९६)। श्रीराम ने इनके रोष को शान्त करके भरत के सद्भाव का वर्णन किया; तदनन्तर ये लज्जित होकर श्रीराम के पास खड़े हो गये (२. ९७, १–२८)। भरत ने बताया कि जब तक वे श्रीराम और सीता सहित इनको न देख लेगें तब तक शान्ति प्राप्त नहीं करेंगे (२. ९८, ६)। भरत ने आश्रम पर जाने के लिए इनके द्वारा निर्मित मार्गबोधक चिन्हों को वृक्षों में लगा हुआ देखा (२. ९९, ६. १०)। 'निष्क्रान्तमात्रे भवति सहसीते सलक्ष्मणे', (२. १०२, ६)। इन्होंने अपने पिता दशरथ के निधन का समाचार सुना (२. १०३, १५)। श्रीराम ने इन्हें दशरथ को जलदान देने के लिये इङ्गुदी का पिसा हुआ फल, चीर तथा उत्तरीय ले आने की आज्ञा दी (२. १०३, २०)। दशरथ की महिषियों ने मन्दाकिनी के तट पर इनके स्नान करने के घाट को देखा (२, १०४, २)। इन्होंने माताओं की चरणवन्दना की (२. १०४, २०–२१)। 'भरतं लक्ष्मणाग्रजः', (२. १०७, १)। श्रीराम ने भरत को सीता और इनके साथ शीघ्र ही दण्डकारण्य में प्रविष्ट होने का समाचार सुनाया (२. १०७, १६)। 'सौमित्रिर्मम विदितः प्रधानमित्रम्', (२. १०७, १९)। ये श्रीराम और सीता के साथ अत्रिमुनि के आश्रम पर आकर सत्कृत हुए (२. ११७, ४. ६)। 'लक्ष्मणश्च महारथः', (२. ११९, १४)। 'वनं सभार्यः प्रविवेश राघवः सलक्ष्मणः सूर्य इवाभ्रमण्डलम्', (२. ११९, २१)। तापसों ने श्रीाम आदि के साथ इन्हें मङ्गलमय आशीर्वाद प्रदान किये (३. १, १२)। वन के मध्य में विराध ने इन पर आक्रमण किया (३. २, १ ८–२६)। इन्होंने विराध पर प्रहार किया जिससे विराध इन्हें श्रीराम के सहित कंधे पर रखकर दूसरे वन में चला गया (३. ३, १५–२६)। विराध का वध करने में इन्होंने भी श्रीराम की सहायता की (३. ४)। ये भी श्रीराम के साथ शरभङ्ग के आश्रम पर गये (३. ५)। ये श्रीराम के साथ सुतीक्ष्ण के आश्रम पर गये (३. ७–८)। श्रीराम ने अगस्त्य के आश्रम पर पहुँच कर इन्हें महर्षि को अपने आगमन की

सूचना देने के लिये भेजा (३. ११, ९५)। इन्होंने महर्षि अगस्त्य के शिष्यों के द्वारा राम आदि के आगमन का समाचार महर्षि के पास भेजा (३. १२, १–४)। इन्होंने अगस्त्य के शिष्य के साथ आश्रम के द्वार पर जाकर उसे श्रीराम और सीता का दर्शन कराया (३. १२, १४)। श्रीराम ने इन्हें वताया कि तेज के आधिक्य से ही उन्होंने जान लिया कि अगस्त्य मुनि आश्रम से बाहर निकल रहे हैं (३. १२, २२–२३)। अगस्त्य ने कहा कि वे इनसे अत्यन्त सन्तुष्ट हैं (३. १३, १)। श्रीराम ने इन्हें पञ्चवटी में एक सुन्दर पर्णशाला का निर्माण करने के लिये कहा और इनके द्वारा पर्णशाला का निर्माण हो जाने पर इनके सहित श्रीराम और सीता उसमें निवास करने लगे (३. १५)। इन्होंने हेमन्त ऋतु का वर्णन करते हुयें भरत की प्रशंसा की (३. १६, १–३६)। श्रीराम ने सीता और इनके साथ गोदावरी के जल में स्नान किया (३. १६, ४३)। "राम ने शूर्पणखा को इनके पास भेजा परन्तु इन्होंने पुनः राम के पास ही लौटा दिया। तदनन्तर श्रीराम के आदेश पर इन्होंने शूर्पणखा की नाक और कान काट लिया (३. १८)।" खर की राक्षसी-सेना के आगमन पर श्रीराम ने इन्हें सीता को साथ लेकर पर्वत की गुफा में चले जाने के लिए कहा जिसका इन्होंने पालन किया (३. २४, १–१५)। खर आदि राक्षसों का वध हो जाने पर ये सीता को लेकर राम के पास आ गये (३. ३०, ३७–४१)। शूर्पणखा ने इनके पराक्रम का वर्णन किया (३. ३४, १२–१३)। रावण ने राम को आश्रम से दूर हटा ले जाने और इनका नाम लेकर पुकारने का मारीच को परामर्श दिया (३. ४०, २०–२१)। कपटमृग को देखकर इनके मन में सन्देह हुआ (३. ४३, ५–८)। श्रीराम ने कपटमृग को पकड़ने के सीता के आग्रह को सुनकर उसे पकड़ने का निश्चय व्यक्त करते हुये इनसे सीता की रक्षा करने के लिये कहा (३. ४३, २२–५१)। श्रीराम ने जव मारीच पर बाण से प्रहार किया और उसने इनका नाम लेकर पुकारा तो श्रीराम चिन्तित होकर शीघ्रता-पूर्वक पञ्चवटी की ओर चले (३. ४४, १७–२६)। वन में मारीच के स्वर को अपने पति का स्वर जानकर सीता ने इन्हें राम की सहायता करने के लिए प्रेरित किया जिसे पहले तो इन्होंने अस्वीकार किया परन्तु सीता का अत्यन्त आक्षेपयुक्त वचन सुनकर ये राम के पास चल दिये (३. ४५)। मारीच का वध करने के पश्चात् आश्रम की ओर लौटते समय जव श्रीराम ने इन्हें देखा तो सीता को अकेले छोड़कर चले आने के इनके कार्य को अनुचित बताते हुये सीता की सुरक्षा पर आशंका प्रगट की (३. ५७, १५–२३)। सीता की सुरक्षा पर आशका प्रगट करते हुये श्रीराम इनके साथ आश्रम पर आये और वहाँ सीता को न देखकर इनकी भर्त्सना करते हुये

विषाद में डूब गये (३. ५८–५९)। इन्होंने भी श्रीराम के साथ सीता की खोज की और उनके न मिलने से व्यथित हुये श्रीराम को अनेक प्रकार से सान्त्वना दी (३, ६१)। सीता-वियोग में विलाप करते हुये श्रीराम को इन्होंने समझाने का प्रयास किया (३. ६३, १८–२०)। श्रीराम के आदेश पर ये गोदावरी नदी के तट पर सीता की खोज के लिये गये और वहाँ से लौटकर राम से कहा कि सीता वहाँ भी नहीं हैं (३. ६४, २–४)। इन्होंने श्रीराम को समझा-बुझाकर शान्त किया (३. ६५–६६)। इन्होंने श्रीराम से जनस्थान में सीता को खोजने के लिये कहा (३. ६७, ४–७)। जब अयोमुखी ने इनके साथ रमण करने का प्रस्ताव किया तो इन्होंने उसके नाक, कान, और स्तन काट लिये (३. ६९, १४–१७)। "गहन वन में प्रवेश करने पर इन्होंने श्रीराम से अपशकुनों की चर्चा की। तदनन्तर जब कबन्ध नामक राक्षस ने इन्हें तथा श्रीराम को पकड़ लिया तो इन्होंने उस राक्षस के वध के सम्बन्ध में विचार किया (३. ६९, २०–५१)।" परस्पर विचार करके श्रीराम और इन्होंने कबन्ध की दोनों भुजायें काट दीं जिसके पश्चात् कबन्ध ने इन लोगों का स्वागत किया (३. ७०)। कबन्ध ने बताया कि इन्द्र ने शाप देते हुये उससे कहा था कि जब लक्ष्मण सहित श्रीराम उसकी भुजायें काट देंगे तो उसी समय उसकी मुक्ति होगी (३. ७१, १५)। कबन्ध के दाह-संस्कार में इन्होंने श्रीराम की सहायता की (३. ७२, १–२)। ये श्रीराम के साथ वार्तालाप करते हुये पम्पा सरोवर के तट पर गये (३. ७५)। श्रीराम ने इनसे पम्पा की शोभा तथा वहाँ की उद्दीपन सामग्री का वर्णन किया और इन्होंने श्रीराम को सान्त्वना दी (४. १, १–१२६)। श्रीराम सहित इन्हें देखकर सुग्रीव आदि वानर चिन्तित हो उठे (४. १, १३१–१३२)। सुग्रीव श्रीराम सहित इन्हें देखकर आशङ्कित हो गये (४. २, १–३)। सुग्रीव की आज्ञा से हनुमान् इनका भेद लेने के लिये आये (४. २, २८–२९)। "हनुमान् ने श्रीराम सहित इनसे वन में आने का कारण पूछा और इनको अपना तथा सुग्रीव का परिचय दिया। श्रीराम ने हनुमान् के वचनों की प्रशंसा करके इनको अपनी ओर से वार्तालाप करने की आज्ञा दी। तदनन्तर इन्होंने हनुमान् से सुग्रीव के साथ मैत्री करने की इच्छा व्यक्त की (४. ३)।" "इन्होंने हनुमान् से श्रीराम के वन में आने और सीता के हरे जाने का वृत्तान्त बताया तथा सीता को खोजने में सुग्रीव के सहयोग की इच्छा प्रकट की। हनुमान् इन्हें आश्वासन देते हुये श्रीराम सहित अपने साथ ऋष्यमूक ले आये (४. ४)।" हनुमान् ने सुग्रीव को श्रीराम के साथ इनके पधारने का समाचार सुनाया (४. ५, २)। श्रीराम ने सुग्रीव द्वारा प्रदत्त सीता के आभूषणों को

पहचानने के लिये इनसे कहा जिस पर इन्होंने श्रीराम से कहा : 'भैया ! मैं इन बाजूबन्दों को तो नहीं जानता और न इन कुण्डलों को ही समझ पाता हूँ कि किसके हैं; परन्तु प्रतिदिन भाभी के चरणों में प्रणाम करने के कारण मैं इन दोनों नूपुरों को अवश्य पहचानता हूँ।' (४. ६, १८–२२)। 'लक्ष्मणस्याग्रतः', (४. ८, १०)। 'ततो रामं स्थितं दृष्ट्वा लक्ष्मणं च महाबलम्', (४. ८, ११)। 'लक्ष्मणस्याग्रतो रामं तपन्तमिव भास्करम्', (४. ११, ८६)। श्रीराम अपने इन भ्राता के साथ मतङ्गवन में गये जहाँ सुग्रीव वर्त्तमान थे (४. १२, २४)। इन्होंने श्रीराम की आज्ञा से पर्वत के किनारे उत्पन्न हुई फूलों से भरी गजपुष्पी लता उखाड़कर सुग्रीव के गले में पहना दी (४. १२, ३९–४०)। ये किष्किन्धापुरी के मार्ग में श्रीराम के आगे-आगे सुग्रीव के साथ चल रहे थे (४. १३, ३)। श्रीराम के साथ इन्होंने भी सप्तजन ऋषियों के उद्देश्य से प्रणाम किया (४. १३, २५–२८)। श्रीराम आदि के साथ ये भी किष्किन्धापुरी आये (४. १३, ३०)। 'इक्ष्वाकूणां कुले जातौ प्रथितौ रामलक्ष्मणौ', (४. १५, १७)। युद्धस्थल में पड़े हुये वालिन् के समीप श्रीराम के साथ ये भी गये (४. १७, १२–१३)। 'सुग्रीवेण च मे सख्यं लक्ष्मणेन यथा तथा (४. १८, २७)। इनके सहित श्रीराम ने सुग्रीव, अङ्गद, और तारा को सान्त्वना दी (४. २५, १)। इन्होंने वालिन् के दाह-संस्कार की समुचित सामग्रियों को एकत्र करने की सुग्रीव, अङ्गद और तार को आज्ञा दी (४. २५, १२–२०)। सुग्रीव का राज्याभिषेक हो जाने के पश्चात् इन्होंने प्रस्रवण गिरि पर आकर श्रीराम के साथ वार्तालाप किया (४. २७)। "श्रीराम ने माल्यवान् पर्वत पर इनसे वर्षाऋतु का वर्णन करते हुये सीता के वियोग-जनित कष्टों का वर्णन किया। तदनन्तर इन्होंने बताया कि सुग्रीव शीघ्र ही उनका कष्ट दूर कर देंगे (४. २८)।" पर्वतों के शिखरों से फल लाने के पश्चात् लौट कर इन्होंने सीता के लिये वियोग करते हुये श्रीराम को समझाया (४. ३०, १४–२०)। श्रीराम ने शरद्ऋतु का इनसे विस्तार के साथ वर्णन किया और तदनन्तर इन्हें सुग्रीव को समझाने के लिये उनके पास भेजा (४. ३०, २२–८५)। "इन्होंने सुग्रीव के प्रति रोष प्रकट किया जिसे श्रीराम ने शान्त किया। तदनन्तर इन्होंने किष्किन्धा के द्वार पर जाकर अङ्गद को सुग्रीव के पास भेजा। वानर इन्हें देखकर भयभीत हो उठे और प्लक्ष तथा प्रभाव ने सुग्रीव को इनके आगमन की सूचना देते हुये इनके चरणों में प्रणाम करके इनका रोष शान्त करने की प्रार्थना की (४. ३१)।" इनके कुपित होने के समाचार से सुग्रीव अत्यन्त चिन्तित हुये और हनुमान् ने सुग्रीव को समझाते हुये इनसे मिलने का परामर्श दिया (४. ३२)। इन्होंने किष्किन्धापुरी की

शोभा देखते हुये सुग्रीव के भवन में प्रवेश करके क्रोधपूर्वक अपने धनुष पर टंकार दी जिससे भयभीत होकर सुग्रीव ने तारा को इन्हें शान्त करने के लिये भेजा और तारा इन्हें समझा-बुझाकर अन्तःपुर में ले गई (४. ३३)। "इन्हें अपने अन्तःपुर में प्रविष्ट देखकर सुग्रीव की समस्त इन्द्रियाँ व्यथित हो उठीं और वे इनके समक्ष उपस्थित हुये। तदनन्तर इन्होंने सुग्रीव को अनार्य, कृतघ्न और मिथ्यावादी इत्यादि कहते हुये फटकारा (४. ३४)।" तारा ने इन्हें युक्तियुक्त वचनों द्वारा शान्त किया (४. ३५)। तारा के वचन को सुनकर ये शान्त हुये (४. ३६, १–२)। जब सुग्रीव ने अपनी लघुता और श्रीराम की महत्ता बताते हुये इनसे क्षमा माँगी तब इन्होंने सुग्रीव की प्रशंसा करते हुये उन्हें अपने साथ चलने के लिये कहा (४. ३६, १२–२०)। इन्होंने सुग्रीव को श्रीराम के पास चलने के लिये कहा (४. ३८, ३)। 'नाहमस्मिन्प्रभुः कार्ये वानरेन्द्र न लक्ष्मणः', (४. ४०, १३)। 'अब्रवीद्रामसांनिध्ये लक्ष्मणस्य च धीमतः', (४. ४०, १६)। 'लक्ष्मणस्य च नाराचा बहवः सन्ति तद्विधाः। वज्राशनिसमस्पर्शा गिरीणामपि दारकाः ॥', (४. ५४, १५)। 'हा राम लक्ष्नणेत्येवं हाऽयोध्येति च मैथिली', (५. १३, १४)। 'नमोस्तु रामाय सलक्ष्मणाय', (५. १३, ५९)। 'इषवो निपतिष्यन्ति रामलक्ष्मणलक्षिताः', (५. २१, २५)। 'रामः सलक्ष्मणः', (५. २६, २५)। 'लक्ष्मणेन', (५. २७, १७. २०)। हनुमान् ने अशोकवाटिका में सीता को बताया कि लक्ष्मण ने भी उनका कुशल-समाचार पूछा है (५. ३४, ३५)। सीता ने हनुमान् से श्रीराम और इनके चिह्नों का वर्णन करने के लिये कहा (५. ३५, ४)। 'विशोकं कुरु वैदेहि राघवं सहलक्ष्मणम्', (५. ३७, ४०)। हनुमान् के पूछने पर सीता ने इनके प्रति शुभकामना प्रगट करते हुये अपनी ओर से इनका कुशल-समाचार पूछने का हनुमान् को आदेश दिया (५. ३८, ६१)। 'रामलक्ष्मणौ', (५. ३९, ४२)। 'रामं च लक्ष्मणं चैव', (५. ६२, ३८; ६४, १)। 'रूरोद सहलक्ष्मणः', (५. ६६, १)। 'लक्ष्मणं च धनुष्मन्तम्', (५. ६८, २५)। 'लक्ष्नणश्च महावलः', (६. १, ११)। 'अङ्गदेनैष संयातु लक्ष्मणश्चान्तकोपमः', (६. ४, २०)। ६. ४, २४. ३२। 'तमङ्गदगतो रामं लक्ष्मणः शुभया गिरा', (६. ४, ४४)। 'सलक्ष्मणः', (६. ४, ९८. १०६; ८, १०. ११ २४)। 'लक्ष्मणस्याग्रतो रामं संरब्धमिदमब्रवीत्', (६. १७, १८)। 'लक्ष्मणं पुण्यलक्षणम्', (६. १८, ७)। 'रामः सलक्ष्मणः', (६. १९, ३२)। श्रीराम ने लङ्का पर आक्रामण करने के पूर्व इनसे उत्पात सूचक लक्षणों का वर्णन किया (६. २३, १–१४)। श्रीराम ने इनसे लङ्का की शोभा का वर्णन किया (६. २४, ८–१३)। 'सह भ्रात्रा लक्ष्मणेन महौजसा', (६. ३७, ३५)।

श्रीराम ने इनसे लङ्का के चारों द्वारों पर वानर सैनिकों की नियुक्ति तथा विभिन्न प्रकार के अपशकुनों आदि के सम्बन्ध में परामर्श किया (६. ४१, १०–२३)। 'लक्ष्मणानुचरो वीरः', (६. ४१ ३४)। 'रामं च लक्ष्मणं चैव', (६. ४४, ३८)। भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ', (६. ४४, ३९) । इन्द्रजित् के साथ युद्ध करते हुये श्रीराम सहित ये भी अचेत हो गये जिससे वानरों ने शोक किया (६. ४५–४६, १–७)। श्रीराम और इनके शरीर के सभी अङ्गों को बाणों से व्याप्त देखकर सुग्रीव के मन में भय उत्पन्न हो गया (६. ४६, ३०)। जब राम सहित ये मूर्च्छित पड़े थे तो सभी वानर प्रमुख इन लोगों की रक्षा करने लगे (६. ४७, १–३)। 'ततः सींता ददर्शोभौ शयानौ शरतल्पगौ। लक्ष्मणं चैव रामं च विसंज्ञौ शरपीडितौ ॥', (६. ४७, १८)। 'भर्त्तारमनवद्याङ्गीं लक्ष्मणं चासितेक्षणा। प्रेक्ष्य पांसुषु चेष्टन्तौ रुरोद जनकात्मजा ॥', (६. ४७, २२)। नागपाश में आवद्ध होने पर भी अपने शरीर की दृढ़ता और शक्तिमत्ता के कारण मूर्च्छा से जागकर श्रीराम ने इनकी शक्ति, पराक्रम, भ्रातृनिष्ठा तथा अन्य गुणों का उल्लेख करते हुये इनके लिये विलाप किया (६. ४९, १–३०)। गरुड़ ने श्रीराम और इन्हें नागपाश से मुक्त कर दिया (६. ५०, ३९)। 'लक्ष्मणोऽथ हनूमांश्च रामश्चापि सुविस्मिताः', (६. ५९, ८१)। "नल को आहत करने के पश्चात् रावण ने इनके साथ युद्ध किया। तदनन्तर रावण ने ब्रह्माजी की दी हुई शक्ति से इनके वक्षस्थल पर प्रहार किया जिससे ये मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़े। उस समय रावण ने इन्हें अपनी दोनों भुजाओं से उठाने का प्रयास किया परन्तु सफल नहीं हो सका (६. ५९, ९२–११३)।" हनुमान् इन्हें दोनों हाथों से उठाकर श्रीराम के निकट लाये और उस समय युद्ध में पराजित हुये इन्हें छोड़कर वह शक्ति पुनः रावण के पास लौट आई (६. ५९, ११९–१२१)। भगवान् विष्णु के अचिन्तनीय अंश रूप से अपना चिन्तन करके ये स्वस्थ हो गये (६. ५९, १२२)। 'हरिसैन्यं सलक्ष्मणम्', (६. ६०, ८०)। 'रामलक्ष्मणयोश्चापि स्वयं पास्यामि शोणितम्'. (६. ६०, ८१)। "जब कुम्भकर्ण पुनः युद्ध करने के लिये उपस्थित हुआ तो इन्होंने उसके साथ युद्ध किया। उस समय कुम्भकर्ण ने इनको बालक कहते हुये इनका तिरस्कार किया जिसका इन्होंने कठोर शब्दों में उत्तर दिया। परन्तु कुम्भकर्ण इन्हें लाँघकर श्रीराम की ओर अग्रसर हुआ (६ ६७, १०२–११७)।" जब श्रीराम कुम्भकर्ण से युद्ध कर रहे थे तो इन्होंने कुम्भकर्ण के वध के सम्बन्ध में श्रीराम को अपने विचार बताये (६. ६७, १२८–१३२)। जब श्रीराम ने कुम्भकर्ण पर आक्रमण किया तो ये भी श्रीराम के पीछे-पीछे चल रहे थे (६. ६७, १३७)। "जब आतिकाय वानरों का भीषण संहार

करता हुआ श्रीराम के निकट आकर अहंकारोक्तियाँ करने लगा तब क्रुद्ध होकर इन्होंने उसके साथ कठोर शब्दों का आदान-प्रदान करते हुये भीषण युद्ध आरम्भ किया। अन्त में इन्होंने ब्रह्मास्त्र द्वारा अतिकाय का वध कर दिया। इस प्रकार अतिकाय का वध हो जाने पर समस्त वानर इनकी प्रशंसा करने लगे (६. ७१, ४६–१११)।" इन्द्रजित् के ब्रह्मास्त्र के प्रहार से श्रीराम और वानरों सहित ये भी मूर्च्छित हो गये (६. ७३)। हनुमान् हिमालय से दिव्य ओषधियों का पर्वत लाये और उन ओषधियों की गंध से ये पुनः स्वस्थ हो गये (६. ७४, ६९–७०)। इन्द्रजित् से घोर युद्ध करते हुये उसके वध के सम्बन्ध में श्रीराम ने इनसे परामर्श किया (६. ८०, ३७–४२)। 'भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ', (६. ८१, ४)। जब मायामयी सीता के वध का समाचार सुनकर श्रीराम शोक से मूर्च्छित हो गये तो ये उन्हें सान्त्वना देते हुये स्वयं पुरुषार्थ के लिये उद्यत हुये (६. ८३, १३–४४)। 'लक्ष्मणे भ्रातृवत्सले', (६. ८४, १)। विभीषण ने श्रीराम को लक्ष्मण की गोद में लेटे हुये देखा। उस समय उन्होंने रावण की माया का रहस्य बताते हुये सीता के जीवित होने का विश्वास दिलाया और श्रीराम से निवेदन किया कि वे मेघनाद का वध करने के लिये लक्ष्मण को निकुम्भिला के मन्दिर में भेजें (६. ८४)।" विभीषण के अनुरोध पर श्रीराम ने इन्हें इन्द्रजित् के वध के लिये जाने की आज्ञा दी और ये सेना सहित निकुम्भिला मन्दिर के पास पहुँचे (६. ८५)। बिभीषण ने इन्हें मेघनाद पर वाण-प्रहार करने के लिये कहा (६. ८६, १–६)। जब मेघनाद धनुष उठाकर हनुमान् का वध करने के लिये उद्यत हुआ तब विभीषण के संकेत पर इन्होंने मेघनाद को देखा (६. ८६, ३२–३५)। 'लक्ष्मणाय', (६. ८७, २–३)। विभीषण ने इन्हें निकुम्भिला की वस्तुयें दिखाते हुये इनसे मेघनाद का वध करने के लिये कहा (६. ८७, ४–६)। मेघनाद को देखकर ये धनुष की टंकार करते हुये युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गये और उसे ललकारा (६. ८७, ७–९)। इन्होंने इन्द्रजित् के साथ परस्पर रोषपूर्ण वचनों का आदान-प्रदान करते हुये घोर युद्ध किया (६. ८८)। विभीषण ने कहा कि लक्ष्मण ही मेघनाद का विनाश करेंगे (६. ८९, १८)। मेघनाद ने इनके साथ घोर युद्ध किया जिसमें इन्होंने उसके सारथि और रथ आदि का विनाश कर दिया (६, ८९, २५–५३)। इन्द्रजित् के साथ भयंकर युद्ध करते हुये इन्होंने उसका वध कर दिया (६. ९०)। "विभीषण के साथ आकर इन्होंने श्रीराम को इन्द्रजित् के वध का समाचार सुनाया जिस पर प्रसन्न होकर श्रीराम ने हृदय से लगाते हुये इनकी प्रशंसा की। तदनन्तर सुषेण ने इनकी चिकित्सा करके इन्हें स्वस्थ किया (६. ९१)।" ये रावण के साथ स्वयं ही

युद्ध करना चाहते थे अतः उस पर वाण प्रहार करने लगे, परन्तु रावण ने इनके वाणों को काट दिया और इन्हें लाँघकर श्रीराम के समीप पहुँचा (६. ९९, १८–२१)। रावण के साथ युद्ध करते हुये इन्होंने उसके धनुष और सारथि को काट दिया (६. १००, १३–२०)। "विभीषण को प्राणसंशय की अवस्था में पड़ा देख ये स्वयं उनकी रक्षा करते हुये रावण से युद्ध करने लगे परन्तु अन्ततः रावण के शक्ति प्रहार से मूर्च्छित हो गये। उस समय श्रीराम ने अत्यन्त शोक और क्रोध में भरकर रावण से स्वयं युद्ध करते हुये सुग्रीव आदि को इनकी रक्षा करने का आदेश दिया (६. १००, २४–४६)।" इन्हें मूर्च्छित देखकर श्रीराम ने विलाप किया परन्तु अन्ततः हनुमान् की लाई हुयी ओषधियों द्वारा सुषेण ने इन्हें स्वस्थ कर दिया (६. १०१)। रावणवध करने के पश्चात् जब श्रीराम ने मातलि आदि को विदा कर दिया तब इन्होंने श्रीराम के चरणों में प्रणाम किया (६. ११२, ७)। श्रीराम ने इनसे विभीषण को लङ्का के राज्य पर अभिषिक्त देखने की अपनी इच्छा व्यक्त की (६. ११२, ८–१०)। इन्होंने विभीषण का राज्याभिषेक सम्पन्न कराया (६. ११२, ११–१७)। 'सलक्ष्मणम्', (६. ११२, २५)। जब श्रीराम द्वारा तिरस्कृत हुई सीता ने अपने लिये चिता तैयार करने की इनको आज्ञा दी तो इन्होंने श्रीराम की आज्ञा से चिता तैयार की (६. ११६, १७–२१)। महादेव की आज्ञा से इन्होंने भी विमान में उच्चस्थान पर बैठे हुये अपने पिता को प्रणाम किया (६. ११९, ९–१०)। दशरथ ने इन्हें आशीर्वाद दिया (६. ११९, २९)। हनुमान् ने श्रीराम, सीता, और इनसे सम्बद्ध समस्त वृत्तान्त भरत को सुनाया (६. १२६)। भरत इनसे भी मिले (६. १२७, ३८)। शत्रुघ्न ने भी इन्हें प्रणाम किया (६. १२७, ४५)। इन्होंने भी स्नान आदि करने के पश्चात् शृङ्गार धारण किया (६. १२८, १४–१६)। श्रीराम ने जब इनसे युवराजपद ग्रहण करने का प्रस्ताव किया तो इन्होंने उस पद को स्वीकार नहीं किया (६. १२८, ९१–९३)। इनको साथ लेकर श्रीराम ने पृथिवी का शासन किया (६. १२८, ९६)। 'राघवेण यथा माता सुमित्रा लक्ष्मणेन च॥ भरतेन च कैकेयी जीवपुत्रास्तथा स्त्रियः) । भविष्यन्ति सदानन्दाः पुत्रपौत्रसमन्विताः ॥', (६. १२८, १०८–१०९) । 'लक्ष्मणेन च धर्मात्मन्भ्रात्रा त्वद्धितकारिणा,' (७. १, २०)। 'भरतो लक्ष्मणश्चात्र शत्रुघ्नश्च महायशाः', (७. ३७, १७)। 'लक्ष्मणेनानुयात्रेण पृष्टतोऽनुगमिष्यते', (७. ३८, ११)। 'लक्ष्मणेन सहायेन प्रयातः केकयेश्वरः', (७. ३८, १४)। 'रामस्य बाहुवीर्येण रक्षिता लक्ष्मणस्य च', (७. ३९ ५)। 'भरतो लक्ष्मणश्चैव', (७. ३९, ११)। श्रीराम ने सीता

सम्बन्धी लोकापवाद पर विचार करने के लिये इन्हें भी बुलाया (७ ४४, २–६)। लोकापवाद की चर्चा करते हुये श्रीराम ने सीता को वन में छोड़ आने के लिए इन्हें आदेश दिया (७. ४५, ५–२३)। ये वन में छोड़ने के लिए सीता को रथ पर बैठाकर ले गये और गङ्गा तट पर पहुँचे (७. ४६)। इन्होंने सीता को नाव से गङ्गा के उस पार पहुँचाकर अत्यन्त दुःख से उन्हें उनके त्यागे जाने की बात बताया (७. ४७)। सीता ने श्रीराम के लिये इनके द्वारा संदेश भेजा (७, ४८, १–२१)। तदन्तर सीता को प्रणाम करके ये लौट पड़े (७. ४८, २२–२५)। सीता को वन में छोड़कर लौटते समय सुमन्त्र ने इन्हें दुर्वासा द्वारा श्रीराम के भविष्य-कथन आदि के सम्बन्ध में बताया (७. ५०)। दुर्वासा के मुख से सुनी हुई भृगु ऋषि के शाप की कथा कहते हुये भविष्य में होने वाली कुछ बातों को बताकर सुमन्त्र ने इनके दुःखी हृदय को शान्त किया (७. ५१)। ये अयोध्या के राजभवन में पहुँचकर श्रीराम से मिले और उन्हें सान्त्वना दी (७. ५२)। कार्यार्थी पुरुषों की उपेक्षा से राजा नृग को मिलनेवाले शाप की कथा सुनाकर श्रीराम ने इन्हें कार्यार्थी पुरुषों की देखभाल का आदेश दिया (७. ५३)। इन्होंने श्रीराम से राजा नृग की कथा विस्तार से बताने का अनुरोध किया (७. ५४, १–४)। "श्रीराम ने निमि और वसिष्ठ के एक दूसरे के शाप से देहत्याग की कथा का इनसे वर्णन किया। इन्होंने श्रीराम से पूछा कि विदेह होने पर वसिष्ठ आदि ने किस प्रकार पुनः शरीर प्राप्त किया (७. ५६, १–२; ५७, १–२)।" इन्होंने श्रीराम से कहा कि निमि ने वसिष्ठ के प्रति उचित व्यवहार नहीं किया (७. ५८, १–३)। श्रीराम ने इन्हें कार्यार्थियों को अपने सम्मुख उपस्थित करने का आदेश दिया (७. ५९क, ५)। श्रीराम के आदेश पर इन्होंने बाहर निकलकर एक कुत्ते को देखा और उसे भीतर आकर श्रीराम से अपना प्रयोजन कहने का अनुरोध किया; परन्तु श्रीराम की आज्ञा के बिना जब कुत्ते ने राजभवन में प्रवेश करना अस्वीकार कर दिया तो इन्होंने श्रीराम की अनुमति ली (७. ५९क, १४–२८)। इन्होंने कुत्ते को श्रीराम के पास पहुंचाया (७. ५९ख, १)। नारद का वचन सुनकर श्रीराम ने इनको राज द्वार पर विलाप कर रहे ब्राह्मण को सान्त्वना देने का आदेश दिया (७. ७५, १–५)। श्रीराम ने इनसे और भरत से राजसूययज्ञ करने के विषय पर वार्त्तालाप किया (७. ८२, १–८)। इन्होंने अश्वमेध यज्ञ का प्रस्ताव करते हुये श्रीराम को इन्द्र और वृत्रासुर की कथा सुनाया (७. ८४–८६)। श्रीराम ने इन्हें राजा इल की कथा सुनाया (७. ८७–९०)। श्रीराम ने इनसे अश्वमेध करने का अपना निश्चय व्यक्त किया और उसे सुनकर इन्होंने वसिष्ठादि सभी द्विजों को बुलाकर

श्रीराम से मिलाया (७. ९१, १–४)। ब्राह्मणों की स्वीकृति मिल जाने पर श्रीराम ने इन्हें अश्वमेध यज्ञ सम्बन्धी आवश्यक तैयारी करने का आदेश दिया (७. ९१, ९–२५)। ऋत्विजों सहित लक्ष्मण को यज्ञाश्व की रक्षा के लिये नियुक्त करके श्रीराम सेना-सहित नैमिषारण्य गये (७. ९२, २)। 'एवं सुविहितो यज्ञो ह्यश्वमेधो ह्यवर्तत । लक्ष्मणेनाभिगुप्ता सा ह्यचर्या प्रवर्तत ॥', (७. ९२, ९)। श्रीराम ने इन्हें और भरत को कुमार अङ्गद और चन्द्रकेतु की कारुपथ के विभिन्न राज्यों पर नियुक्ति करने का आदेश दिया (७. १०२, २–४)। कुमारों के अभिषेक पर श्रीराम और भरत सहित इन्हें भी अत्यन्त प्रसन्नता हुई (७. १०२, १०)। "ये अङ्गद के साथ गये और एक वर्ष तक उसके साथ रहे। जब वह दृढ़तापूर्वक राज्य सभालने लगा तो ये पुनः अयोध्या लौट आये (७. १०२, १२–१३)।" 'उभौ सौमित्रिभरतौ रामपादानुव्रतौ । कालं गतमपि स्नेहान्न जज्ञातेऽतिधार्मिकौ ॥', (७. १०२, १५)। श्रीराम के द्वार पर जब तपस्वी के वेष में काल उपस्थित हुआ तो इन्होंने श्रीराम को उसके आगमन की सूचना दी और तदनन्तर श्रीराम के आदेश पर उसे उनके पास लाये (७. १०३, २–७)। लक्ष्मण को द्वार पर नियुक्त करके श्रीराम ने काल से वार्तालाप आरम्भ किया (७. १०३, १४–१६)। "जब श्रीराम काल से वार्त्तालाप कर रहे थे तो महर्षि दुर्वासा ने, श्रीराम से मिलने की इच्छा से वहाँ पदार्पण करके, इन्हें श्रीराम को अपने आगमन की तत्काल सूचना देने के लिये कहा। दुर्वासा ने यह भी कहा कि सूचना देने में विलम्ब करने पर वे श्रीराम आदि सहित समस्त भ्राताओं और नगर को शाप दे देंगे। उनका वचन सुनकर इन्होंने, यह सोचकर कि 'अकेले मेरी ही मृत्यु हो सबकी नहीं', भीतर जाकर श्रीराम को ऋषि के आगमन की सूचना दी (७. १०५, १–१०)।" दुर्वासा के चले जाने पर श्रीराम नियम-भङ्ग कर देने के कारण इनकी आसन्न मृत्यु पर चिन्तित हुये (७. १०५, १६–१८)। "श्रीराम को इस प्रकार चिन्तित देखकर इन्होंने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा : 'आप निश्चिन्त होकर मेरा वध कर डालें, क्योंकि प्रतिज्ञा भङ्ग कर देनेवाले मनुष्य नरक में पड़ते हैं। अतः आप मुझे प्राणदण्ड देकर अपने धर्म की वृद्धि करें।' (७, १०६, १–४)।" "वसिष्ठ के कहने पर श्रीराम ने इनका त्याग किया। श्रीराम का वचन सुनते ही ये तत्काल वहाँ से सरयूतट पर आये और जल से आचमन करके प्राणवायु को रोक लिया। तदनन्तर सशरीर ही ये मनुष्यों की दृष्टि से ओझल हो गये। उस समय देवराज इन्द्र इन्हें लेकर स्वर्गलोक चले गये (७. १०६, ८–१७)।" भगवान् विष्णु के चतुर्थ अंश, लक्ष्मण को आया देख सभी देवताओं ने हर्षपूर्वक लक्ष्मण का पूजन किया (७. १०६, १८)।

लक्ष्य, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र, का नाम है जिसको विश्वामित्र ने श्रीराम को प्रदान किया (१. २८, ५)।

१. लङ्का, रावणपालित एक पुरी का नाम है जहाँ पहुँचकर हनुमान् ने अशोकवाटिका में सीता को चिन्तामग्न देखा (१. १, ७३)। हनुमान् ने इसमें आग लगा दी (१. १, ७७)। यहाँ आकर श्रीराम ने रावण का वध कर दिया (१. १, ८१)। तारा ने लक्ष्मण को बताया कि यहाँ सौ सहस्र करोड़, छत्तीस अयुत, छत्तीस सहस्र और छत्तीस सौ राक्षस रहते हैं (४. ३५, १५)। हनुमान् ने सागर-लङ्घन के पश्चात् पर्वत-शिखर पर स्थित हो इसकी शोभा का अवलोकन किया (५. १, २१३–२१४)। "यह वन-उपवनों से व्याप्त, सुन्दर फल-पुष्पों के वृक्षों से सुशोभित, सुन्दर सरोवरों से युक्त, और सुरक्षित थी। यह विश्वकर्मा द्वारा निर्मित तथा आकाश में तैरती सी प्रतीत होती थी। इसकी सुदृढ़ रक्षा-व्यवस्था, विशाल अट्टालिकाओं, और सुदृढ़ प्राचीर आदि को देखकर हनुमान् चिन्तित हो विचार करने लगे कि इसमें प्रवेश करना कैसे सम्भव होगा (५. २, १–३०)।" 'अचिन्त्यामद्भुताकारां दृष्ट्वा लङ्कां महाकपिः। आसीद्विषण्णो हृष्टश्च वैदेह्या दर्शनोत्सुकः ।। स पाण्डुराविद्धविमानमालिनीं महार्हजाम्बूनदजालतोरणाम्। यशस्विनीं रावणबाहुपालितां क्षपाचरैर्भीमबलैः समावृताम् ।।', -(५. २, ५५–५६)। 'स लम्बशिखरे लम्बे लम्बतोयदसंनिभे। सत्त्वमास्थाय मेधावी हनुमान्मारुतात्मजः ।। निशि लङ्कां महासत्त्वो विवेश कपिकुञ्जरः। रम्यकाननतोयाढ्यां पुरीं रावणपालिताम् ।।', (५.३,१–२)। "शरत्काल के बादलों की भाँति श्वेत कान्तिवाले सुन्दर भवन इसकी शोभा बढ़ाते थे। यहाँ समुद्र की गर्जना के समय भयंकर गम्भीर शब्द होता रहता था। सागर की लहरों को छूकर बहनेवाली वायु इस नगरी की सेवा करती थी। इस पुरी के सुन्दर फाटकों पर मतवाले हाथी शोभा पाते थे तथा इसके अन्तर्द्वार और बहिर्द्वार दोनों ही श्वेत कान्ति से सुशोभित थे। इसकी रक्षा के लिये बड़े-बड़े सर्पों का संचरण होता रहता था जिससे यह नागों से सुरक्षित होने के कारण सुन्दर भोगवतीपुरी के समान जान पड़ती थी। अमरावतीपुरी के समान यहाँ आवश्यकता के अनुसार बिजलियों सहित मेघ छाये रहते थे। ग्रहों और नक्षत्रों के सदृश विद्युत्-दीपों के प्रकाश से यह पुरी प्रकाशित और प्रचण्ड वायु की ध्वनि से युक्त थी। सुवर्ण के बने हुये विशाल परकोटों से घिरी हुई यह पुरी क्षुद्र घण्टिकाओं की झनकार से युक्त पताकाओं द्वारा अलंकृत थी (५. ३, ३–७)।" "सुवर्ण के बने हुये द्वारों से इस नगरी की अपूर्व शोभा हो रही थी। उन सभी द्वारों पर नीलम के चबूतरे बने हुये थे। वे समस्त द्वार हीरों, स्फटिकों और मोतियों से जड़े गये थे। मणिमयी फर्शें उनकी शोभा बढ़ा

रही थीं। उनके दोनों ओर तपाये सुवर्ण के बने हुये हाथी शोभा पाते थे। उन द्वारों का ऊपरी भाग चाँदी से निर्मित होने के कारण स्वच्छ और श्वेत था। उनकी सीढ़ियाँ नीलम की बनी हुई थीं। उन द्वारों के भीतरी भाग स्फटिक मणि के बने हुये और धूल से रहित थे। वे समस्त द्वार रमणीय सभा-भवनों से युक्त और सुन्दर तथा ऊँचाई में आकाश में उठे हुये से जान पड़ते थे। वहाँ क्रौञ्च और मयूरों के कलरव गूँजते रहते थे। उन द्वारों पर राजहंस नामक पक्षी भी निवास करते थे। यहाँ भाँति-भाँति के वाद्यों और आभूषणों की मधुर-ध्वनि होती रहती थी जिससे यह पुरी सभी ओर से प्रतिध्वनित हो रही थी। कुवेर की अलका के समान शोभा पानेवाली यह नगरी त्रिकूट के शिखर पर प्रतिष्ठित होने के कारण आकाश में उठी हुई सी प्रतीत होती थी (५. ३, ९–१२)।" 'तां समीक्ष्य पुरीं लङ्कां राक्षसाधिपतेः शुभाम्। अनुत्तमामृद्धिमतीं चिन्तयामास वीर्यवान् ॥', (५. ३, १३)। रावण के सैनिक हाथों में अस्त्र-शस्त्र लेकर इसकी रक्षा करते थे, अतः इसे कोई दूसरा बलपूर्वक अधिकार में नहीं कर सकता था (५. ३, १४)। "राक्षसराज रावण की यह नगरी वस्त्राभूषणों से विभूषित सुन्दरी युवती के समान प्रतीत होती थी। रत्नमय परकोटे ही इसके वस्त्र और गोष्ठ (गोशाला) तथा अन्य दूसरे भवन आभूषण थे। परकोटों पर लगे हुये यन्त्रों के जो गृह थे वे ही मानो इस लङ्का रूपी युवती के स्तन थे। यह सव प्रकार की समृद्धियों से सम्पन्न थी (५. ३, १८–१९)" 'प्रजज्वाल तदा लङ्का रक्षोगणगृहैः शुभैः; (५. ४. ६)। 'शरैस्तु संकुलां कृत्वा लङ्कां परवलार्दनः; (५. ३९, ३०)। हनुमान् ने इसमें आग लगा दी (५. ५४)। 'लङ्कायाः कश्चिदुद्देशः सर्वा भस्मीकृता पुरी,' (५. ५५, ११)। जाम्ववान् के पूछने पर हनुमान् ने अपनी लङ्कायात्रा का समस्त वृत्तान्त सुनाया (५. ५८, ८–१६६)। हनुमान् ने वानरों को बताया कि वे अकेले ही राक्षसों और रावण सहित इसका विध्वंस करने में समर्थ हैं (५. ५९, ७)। 'मयैव निहता लङ्का दग्धा भस्मीकृता पुरी', (५. ५९, १८)। 'लङ्का नाशयितुं शक्ताः सर्वे तिष्ठन्तु वानराः।' (५. ६०, ५)। 'तां लङ्कां तरसा हन्तुं रावणं च महावलम्', (५. ६०, ६)। 'वायुसूनोर्बलेनैव दग्धा लङ्केति नः श्रुतम्', (५. ६०, ७)। जित्वा लङ्कां सरक्षौघां हत्वा तं रावणं रणे', (५. ६०, ११)। 'त्वद्दर्शनकृतोत्साहौ लङ्कां भस्मीकरिष्यतः' (५. ६७, २७)। "शैलाम्बुदनिकाशानां लङ्कामलयसानुषु', (५. ६८, २७)। हनुमान् ने इस नगरी के दुर्ग, फाटकों, सेना-विभाग, और संक्रम आदि का श्रीराम से वर्णन किया (६. ३, १–३२)। 'यन्निवेदयसे लङ्कां पुरीं भीमस्य रक्षसः। क्षिप्रमेनां वधिष्यामि सत्यमेतदब्रवीमि

ते ॥', (६. ४, २)। 'लङ्कायां तु कृतं कर्म घोरं दृष्ट्वा भयावहम् । राक्षसेन्द्रो हनुमता शक्रेणेव महात्मना ॥', (६. ६, १)। 'अबद्ध्वा सागरे सेतुं घोरेऽस्मिन्वरुणालये । लङ्का नासादितुं शक्या सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥', (६. १९, ४०)। 'एष वै वानरर्क्षौघो लङ्कां समभिवर्तते', (६. २०, ३)। 'नहीयं हरिभिर्लङ्का प्राप्तुं शक्या कथञ्चन', (६. २०, १३)। 'प्रतस्थे पुरतो रामो लङ्कामभिमुखो विभुः' (६. २३, १५)। श्रीराम ने विचित्र ध्वजा पताकाओं से सुशोभित लंकापुरी को देखकर व्यथित चित्त से सीता का चिन्तन करते हुये लक्ष्मण से इस पुरी की शोभा का वर्णन किया (६. २४, ३–१२)। 'इयं सा लक्ष्यते लङ्कापुरी रावणपालिता । सासुरोरगगन्धर्वैः सर्वैरपि सुदुर्जया ॥' (६. ३७, ४)। विभीषण ने श्रीराम से रावण द्वारा की गई लंका की रक्षा-व्यवस्था का वर्णन किया और श्रीराम ने इस नगरी के विभिन्न द्वारों पर आक्रमण करने के लिये सेनापतियों की नियुक्ति की (६. ३७, ७–३७)। वानर यूथपतियों ने सुवेल-पर्वत के शिखर पर खड़े होकर लंका का निरीक्षण किया (६. ३८, १४–१८)। वानरों सहित श्रीराम ने सुवेल-शिखर से लंकापुरी का निरीक्षण किया (६. ३९)। 'त्रिकूटशिखरे रम्ये निर्मितां विश्वकर्मणा ॥ ददर्श लङ्कां सुन्यस्तां रम्यकाननशोभिताम् ॥', (६. ४० २)। 'हत्वाहं रावणं युद्धे सपुत्रबलवाहनम् । अभिषिच्य च लङ्कायां विभीषणमथापि च ॥', (६. ४१, ७)। श्रीराम ने इसके चारों द्वारों पर वानर-सैनिकों की नियुक्ति की (६. ४१, २२. २६. ३०–१००) । 'स ददर्शावृतां लङ्कां सशैलवनकाननाम्', (६. ४२, ३)। 'लङ्कां ददर्श', (६. ४२, ६) । 'दृष्ट्वा दाशरथिर्लङ्कां', (६. ४२, ७)। 'लङ्कामारुरुहुस्तदा', (६. ४२, १३) । 'लङ्कामेवाभ्यवर्तन्त', (६. ४२, १४) । 'लङ्कामारुरुहुस्तदा', (६. ४२, १७) । 'लङ्का तामभिधावन्ति महावारणसंनिभाः', (६. ४२, १९) । 'अभ्यधावन्त लङ्कायाः प्राकारं कामरूपिणः' (६. ४२, २१)। 'विमानं पुष्पकं तत्तु संनिवर्त्य मनोजवम् । दीना त्रिजटया सीता लङ्कामेव प्रवेशिता ॥', (६. ४८, ३६)। 'शरार्दितो भग्नमहाकिरीटो विवेश लङ्कां सहसा स्म राजा', (६. ५९, १४६) । 'पुरीं लङ्कां', (६. ६०, १)। 'द्वाराण्यादाय लङ्कायाश्चर्याश्चास्याथ संक्रमान्', (६. ६१, ३५)। "सुग्रीव ने कहा कि कुम्भकर्ण तथा पुत्रों की मृत्यु के पश्चात् रावण अब पुरी की रक्षा नहीं कर सकता अतः वानरों को चाहिये कि वे लंका में आग लगा दें। सुग्रीव की इस आज्ञानुसार वानरों ने लंका में आग लगा दी। (६. ७५, २–३२)।" आर्तानां राक्षसीनां तु लङ्कायां वै कुले-कुले', (६. ९५, १) । 'विभीषणमिमं सौम्य लङ्कायामभिषेचय', (६. ११२, ९) । 'लंकायां सौम्य पश्येयमभिषिक्तं', (६.११२,१०)। 'लंकायां रक्षसां मध्ये राजानं रामशास-

नात्', (६. ११२, १४) । 'दृष्ट्वाभिषिक्तं लङ्कायां राक्षसेन्द्रं विभीषणम्', (६. ११२, १६) । 'इति प्रतिसमादिष्टो हनूमान्मारुतात्मजः । प्रविवेश पुरीं लंङ्कां पूज्यमानो निशाचरैः ॥', (६, ११३, १) । 'प्रविश्य च पुरीं लङ्कामनुज्ञाप्य विभीषणम्', (६. ११३, २) । 'रावणश्च हतः शत्रुर्लङ्का चैव वशीकृता', (६. ११३, ११) । 'विभीषणविधेयं हि लङ्कैश्वर्यमिदं कृतम्', (६. ११३, १३) । 'लङ्कास्थाहं त्वया राजन्कि तदा न विसर्जिता', (६. ११६, ११) । श्रीराम ने अयोध्या की यात्रा करते समय सीता से कहा : 'विदेहराजनन्दिनि ! कैलास शिखर के समान सुन्दर त्रिकुट पर्वत के विशाल श्रृङ्ग पर बसी और विश्वकर्मा की बनाई हुई लंकापुरी को देखो, कैसी सुन्दर दिखाई देती है', (६. १२३, ३) । 'उद्योजयिष्यन्नुद्योगं दध्रे लङ्कावधे मनः', (६. १२६, ४९) । विश्रवा ने अपने पुत्र, कुवेर, से इसकी स्थिति और विशेषताओं का उल्लेख करते हुये इसमें निवास करने की आज्ञा दी (७, ३, २५–३१) । अपने पिता की आज्ञानुसार कुवेर (वैश्रवण) ने त्रिकूट पर्वत के शिखर पर बसी हुई इस पुरी में निवास किया (७. ३, ३२ । "विश्वकर्मा ने सुकेश के राक्षस-पुत्रों को इस पुरी की स्थिति आदि का वर्णन करते हुये यहाँ रहने का परामर्श दिया और बताया कि जब वे लोग लङ्का के दुर्ग का आश्रय लेकर बहुत से राक्षसों के साथ निवास करेंगे तो उस समय शत्रुओं के लिये उन पर विजय पाना अत्यन्त कठिन होगा । विश्वकर्मा की बात सुनकर वे श्रेष्ठ राक्षस सहस्रों अनुचरों के साथ इस पुरी में जाकर बस गये (७. ५, २२–२९) ।" 'दृढप्राकारपरिखा हैमैर्गृहशतैर्वृताम् । लङ्कामवाप्य ते हृष्टा न्यवसन्रजनीचराः ॥', (७. ५, ३०) । समस्त देशद्रोही राक्षस लङ्का छोड़कर युद्ध के लिये देवलोक की ओर गये (७. ६. ४९) । 'लङ्काविपर्ययं दृष्ट्वा यानि लङ्कालयान्यथ । भूतानि भयदर्शीनि विमनस्कानि सर्वशः ॥', (७. ६. ५०) । 'यत्कृते च वयं लङ्कां त्यक्त्वा याता रसालताम्', (७. ११, ५) । 'अस्मदीया च लङ्केयं नगरी राक्षसोषिता । निवेशिता तव भ्रात्रा धनाध्यक्षेण धीमता ॥', (७. ११, ७) । 'इयं लङ्का पुरी राजन्राक्षसानां महात्मनाम्', (७. ११, २४) । 'स तु गत्वा पुरीं लङ्कां धनदेन सुरक्षिताम्', (७, ११, २६) । 'लङ्का शून्या निशाचरैः', (७. ११, ३२) । 'दीयतां नगरी लङ्का पूर्वं रक्षोगणोषिता', (७. ११, ३६) 'शून्या सा नगरी लङ्का', (७. ११, ४८) । 'विवेश नगरीं लङ्काम्', (७. ११, ४९) । 'विभीषणश्च धर्मात्मा लङ्कायां धर्ममाचरन्', (७. २५, ३५) । 'प्रजापतिं पुरस्कृत्य ययुर्लङ्कां सुरास्तदा', (७. ३०, १) ।

२. लंका, लंका की अधिष्ठात्री देवी का नाम है जो विकट रूप धारण करके हनुमान् के सम्मुख उपस्थित हुई (५. ३, २०–२१)। इसने लंका की सुदृढ

रक्षा-व्यवस्था का वर्णन करते हुये हनुमान् से उनका परिचय पूछा (५. ३, २२–२४)। हनुमान् ने क्रुद्ध होकर इसका परिचय पूछा (५. ३, २५–२६)। अपना परिचय देते हुये इसने कहा : 'मैं रावण की आज्ञा की प्रतीक्षा करनेवाली उनकी सेविका और इस नगरी की रक्षा करने वाली हूँ। मेरी अवहेलना करके इस नगरी में प्रवेश करना कठिन है। मैं स्वयं ही लंका नगरी हूँ, अतः आज मेरे हाथ से तेरा वध होगा।' (५. ३, २७–३०)। इसके वचन को सुनकर हनुमान् ने विशाल रूप धारण करके इससे कहा कि वे लंकापुरी की शोभा देखना चाहते हैं (५. ३, ३१–३४)। इसने हनुमान् को कठोर वाणी में लंका देखने का निषेध किया (५. ३, ३५–३६)। "हनुमान् के आग्रह करने पर इसने उन्हें जोर से थप्पड़ मारा। हनुमान् ने उस समय भीषण सिंहनाद करते हुये इस पर मुष्टि प्रहार किया जिससे यह पृथिवी पर गिर पड़ी। इस पर दया करके हनुमान् ने इसका वध नहीं किया (५. ३, ३८–४३)।" "इसने गद्गद वाणी में हनुमान् से कहा : 'मैं स्वयं लंकापुरी हूँ और आप ने मुझे परास्त कर दिया। पूर्वकाल में ब्रह्मा ने मुझे वरदान दिया था कि जब मैं किसी वानर से परास्त हो जाऊँगी तब मुझे यह समझ लेना होगा कि राक्षसों के विनाश का समय आ गया। अब सीता के कारण रावण तथा समस्त राक्षसों का विनाश अवश्य होगा। ब्रह्मा के इस शाप के कारण यह पुरी अब नष्ट-प्राय है, अतः अब आप इसमें प्रवेश करके सीता की खोज कीजिये।' (५. ३, ४४–५२)।" इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली इस श्रेष्ठ राक्षसी को अपने पराक्रम से परास्त करके हनुमान् लङ्कापुरी के भीतर प्रविष्ट हुये (५. ४, १)।

लवण, मधु और कुम्भीनसी के पुत्र, एक असुर का नाम है जो महापराक्रमी और भयंकर स्वभावाला था (७. ६१, १७–१८)। देश छोड़कर जाते समय इसके पिता, मधु, ने इसे एक शूल दिया जो उसने महादेव से प्राप्त किया था (७. ६१, २०)। उस शूल के प्रभाव से यह तीनों लोकों और विशेषतः तपस्वी मुनियों को संतप्त करने लगा (७. ६१, २१–२२)। इसके प्रभाव तथा इससे उत्पन्न भय का वर्णन करते हुये ऋषियों ने श्रीराम से इसका वध करने की प्रार्थना की (७. ६१, २३–२५)। श्रीराम ने ऋषियों से इसके अहार-विहार के सम्बन्ध में पूछा जिसका ऋषियों ने विस्तार से उत्तर दिया (७. ६२, १–५)। श्रीराम ने इसके वध का आश्वासन देते हुये अपने भ्राता भरत तथा शत्रुघ्न से पूछा कि उनमें से कौन इसका वध करेगा (७. ६२, ६–८)। भरत ने इसका वध करने की इच्छा प्रगट की (७. ६२, ९,)। शत्रुघ्न ने इसके वध की प्रबल इच्छा व्यक्त की जिसे सुन कर श्रीराम ने उन्हें

ही इस कार्य के लिये आज्ञा प्रदान की (७. ६२, १०–१९)। 'व्याहृतं दुर्वचो घोरं हन्तास्मि लवणं मृधे। तस्यैवं मे दुरुक्तस्य दुर्गतिः पुरुषर्षभ ।।', (७. ६३, ५)। शत्रुघ्न का राज्याभिषेक होते ही यमुनातट-वासी ऋषियों को इसके वध का विश्वास हो गया (७. ६३, १८)। श्रीराम ने इसके वध के लिये एक अमोघ बाण देते हुये शत्रुघ्न को इसके शूल से बचने का उपाय भी बताया (७. ६३, १९–३१)। इसके बध का उपाय बताते हुये श्रीराम ने शत्रुघ्न से कहा कि वे ग्रीष्म ऋतु के बाद वर्षा ऋतु में ही इसका वध करें (७. ६४, ९–१२)। शत्रुघ्न ने अपनी सेना को भेज कर माताओं आदि से विदा ली और उसके बाद इसके वध के लिये अयोध्या से प्रस्थित हुये (७. ६४, १३–१८)। शत्रुघ्न के पूछने पर महर्षि च्यवन ने इसकी तथा इसके शूल की शक्ति का वर्णन करते हुये इसके द्वारा राजा मान्धाता के वध का प्रसंग सुनाया (७. ६५)। "प्रातःकाल के समय आहार के लिये जब यह नगर से बाहर निकला तो अवसर देखकर शत्रुघ्न मधुपुरी के द्वार पर अस्त्र-शस्त्रों से युक्त होकर सन्नद्ध हो गये। मध्याह्न के समय अपने आहार का बोझ लिये हुये जब यह लौटा तो शत्रुघ्न को अपने नगर का द्वार रोक कर खड़े देखा। इसने शत्रुघ्न को कठोर शब्दों में सम्बोधित किया (७. ६८, १–७)।" शत्रुघ्न ने भी रोषपूर्ण स्वर में इसे युद्ध के लिये ललकारा (७. ६८, १०–१३)। शत्रुघ्न को रोषपूर्वक सम्बोधित करते हुये पहले तो इसने श्रीराम द्वारा अपने बन्धु-बान्धवों के वध का उल्लेख किया और फिर अपना शूल लाकर युद्ध करने की इच्छा प्रकट की (७. ६८, १४–१७)। शत्रुघ्न ने इसे शूल लाने का अवसर नहीं दिया (७. ६८, १८–२०)। विना शूल के ही शत्रुघ्न के साथ भयंकर युद्ध करते हुये इसने एक वृक्ष के प्रहार से शत्रुघ्न को मूर्छित कर दिया (७. ६९, १–१२)। शत्रुघ्न को भूमि पर गिरा देख इसने उन्हें मृत समझा (७. ६९, १४–१५)। 'वधाय लवणस्याजौ शरः शत्रुघ्नधारितः। तेजसा तस्य सम्मूढाः सर्वे स्मः सुरसत्तमाः ।।', (७. ६९, २५)। ब्रह्मा ने देवों को आश्वास्त करते हुये उन लोगों को इसका वध देखने के लिये कहा (७. ६९, २९)। देवगण उस स्थान पर आये जहाँ शत्रुघ्न इससे युद्ध कर रहे थे (७. ६९, ३०)। शत्रुघ्न ने दिव्य बाण का सन्धान करके इसकी ओर दृष्टिपात किया (७. ६९, ३२)। " शत्रुघ्न के आह्वान को सुन कर यह उनके सामने आया और शत्रुघ्न ने इस पर अपना बाण चला दिया। उस बाण के प्रहार से विदीर्ण होकर यह पर्वत के समान सहसा पृथिवी पर गिर पड़ा। इसका वध होते ही इसका महान शूल महादेव के पास लौट गया (७. ६९, ३३–३८)। इसका वध कर देने पर इन्द्र और अग्नि ने शत्रुघ्न को वर देने की इच्छा प्रगट की (७. ७०, १–२)।

लोला, मधु नामक असुर के पिता का नाम है (७. ६१, ३)।

लोहित, लाल रंग के जल से परिपूर्ण एक भयंकर समुद्र का नाम है जिसके तट पर सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये एक लाख वानरों के साथ विनत को भेजा था (४. ४०, ३७)।

लोहित्य, एक ग्राम का नाम है। केकय से लौटते समय भरत इससे भी होते हुये आये थे (५. ७१, १५)।

व

वङ्ग, एक समृद्धिशाली देश का नाम है जिस पर दशरथ का अधिपत्य था। दशरथ ने यहाँ उत्पन्न होनेवाली वस्तुयें भी कैकेयी को अर्पित करने के लिये कहा (२. १०, ३९–४०)।

वज्र, पारियात्र पर्वत के निकट ही समुद्र में स्थित एक पर्वत का नाम है। सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने सुषेण आदि वानरों को इसके क्षेत्र में भेजा (४. ४२, २३)।

वज्रकाय, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये (५. ६, २२)।

वज्रज्वाला, विरोचनकुमार बलि की दौहित्री का नाम है जिसका कुम्भकर्ण के साथ विवाह हुआ (७. १२, २३)।

वज्रदंष्ट्र, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये (५. ६, २०, गीता प्रेस संस्करण)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १०)। इसने क्रोध में भरकर परिघ हाथ में लिये हुये रावण को श्रीराम आदि के वध का आश्वासन दिया (६. ८, ९–१८) यह विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर रावण के समीप उपस्थित हुआ (६. ९, ३)। श्रीराम ने इसे आहत कर दिया (६. ४४,२०)। रावण की आज्ञा से विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों को लेकर यह युद्धभूमि में उपस्थित हुआ (६. ५३, २–७)। इसने वानर सेना का भीषण संहार किया (६. ५३, २५)। इसने अङ्गद के साथ घोर युद्ध किया जिसमें अङ्गद ने इसका वध कर दिया (६. ५४)। इसके वध का समाचार सुनकर रावण ने प्रहस्त को युद्ध के लिए भेजा (६. ५५, १)। विभीषण ने इसके वध का उल्लेख किया (६. ८९, ११)। अयोध्या की यात्रा करते समय श्रीराम ने सीता को इसके वध का स्थान दिखाया (६. १२३, ११)।

वज्रमुष्टि—इसके साथ मैन्द ने द्वन्द्व युद्ध किया (६. ४३, १२)। मैन्द ने इसका वध कर दिया (६. ४३, २९)। यह माल्यवान् का पुत्र था (७. ५, ३६)।

वज्रहनु, एक राक्षस का नाम है जिसने अकेले ही समस्त शत्रुसेना का वध कर देने का रावण को आश्वासन दिया (६. ८, २१–२४)।

वडवामुख, महर्षि और्व के कोप से जलोद सागर में प्रगट हुये महान् तेज का नाम है। उस समुद्र में जो चराचर प्राणियों सहित जल है वही इस बड़वामुख नामक अग्नि का आहार बताया जाता है। इसे देखकर इसमें पतन के भय से चीखते-चिल्लाते हुये समुद्रनिवासी असमर्थ प्राणियों का आर्तनाद निरन्तर सुनाई देता है (४. ४०, ४६–४७)।

वरदा, दक्षिण की एक नदी का नाम है जिसके क्षेत्र में सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने हनुमान् आदि प्रमुख वानरों को भेजा (४. ४१, ९)।

१. वरुण, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र, का नाम है जिसको विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित कर दिया (१. २८, ९)।

२. वरुण ने सुषेण नामक वानर को जन्म दिया (१. १७, १५)। 'उभौ भरतशत्रुघ्नौ महेन्द्रवरुणोपमौ', (२. १, ४)। सुमन्त्र ने श्रीराम की स्तुति करते हुये कहा कि वरुण, अग्नि आदि आपको विजय प्रदान करें (२. १५, २१)। श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका आवाहन किया (२. २५, १३)। भरद्वाज मुनि ने भरत का आतिथ्य-सत्कार करने के लिये इनका आवाहन किया (२. ९१, १३)। श्रीराम ने अगस्त्य के आश्रम पर इनके स्थान का दर्शन किया (३. १२, १९)। इनका निवास-स्थान अस्ताचल पर स्थित था (४. ४२, ४३)। सम्पाति इनके लोकों से परिचित थे (४. ५८, १३)। हनुमान् ने अपनी सफलता के लिये इनकी स्तुति की (५. १३, ६६)। जब श्रीराम ने सीता का तिरस्कार किया तो अन्य देवताओं के साथ इन्होंने भी उपस्थित होकर उन्हें समझाया (६. ११७, २)। रावण के भय से मरुत्त के यज्ञ में इन्होंने हंस का रूप धारण किया (७. १८, ५)। इन्होंने हंसो को वर दिया (७. १८, २९–३१)। इनके निवास क्षेत्र में प्रवेश करके रावण ने इनके भवन को देखा (७. २३, २५)। रावण ने इनके सेनापतियों को आहत करके उनसे इनके पास युद्ध का ससाचार देने के लिये कहा (७. २३, २६–२७)। इनके पुत्रों ने रावण से युद्ध किया किन्तु पराजित हुये (७. २६, २८–४९)। "इनके पुत्रों को पराजित करके रावण ने इनके मन्त्रियों से इनके पास युद्ध करने का समाचार भेजा किन्तु मन्त्रियों ने वताया कि उस समय ये ब्रह्मलोक में संगीत सुनने के लिये गये हैं। मन्त्रियों की वात सुनकर रावण ने अपने को इन पर विजयी माना (७. २३, ५१–५३)।" एक समय मित्र देवता भी इनके साथ रहते थे (७. ५६, १२)। "उर्वशी नामक अप्सरा को देख कर उसे इन्होंने समागम के लिये आमन्त्रित

किया। उर्वशी ने बताया कि उस समय मित्र देवता ने उसका वरण किया है। यह सुनकर कामपीड़ित हो इन्होंने कहा कि ये उसके निकट एक कुम्भ में ही अपना वीर्य छोड़कर सन्तुष्ट हो जायेंगे। उर्वशी की स्वीकृति मिलने पर अपना वीर्य कुम्भ में छोड़ दिया (७. ५६, १४–२१)।" इनके वीर्य से युक्त उस कुम्भ से दो ब्राह्मण उत्पन्न हुये (७. ५७, ४–६)।

वरुण-कन्या—'उमा नन्दीश्वरश्चापिरूमा वरुणकन्यका', (६. ६० ११)।

वरूथ, एक ग्राम का नाम है। कैकय से लौटते समय भरत इससे होकर आये थे (२. ७१, ११)।

वरूथी, एक नदी का नाम है जिसे भरत को श्रीराम का संदेश देने के लिये जाते समय हनुमान् ने देखा था (६. १२५, २६)।

वषट्कार—जब इल को पुरुषत्व प्राप्त कराने के लिये बुध अन्य महर्षियों से परामर्श कर रहे थे तो ये भी वहाँ उपस्थित हुये (७. ९०, ९)। श्रीराम के महाप्रस्थान के समय ये भी उनके साथ-साथ चले (७. १०९, ८)।

वसिष्ठ, एक महर्षि का नाम है जिन्होंने दशरथ की मृत्यु के पश्चात् भरत को राज्य-संचालन के लिये नियुक्त करना चाहा परन्तु भरत ने अस्वीकार कर दिया (१. १, ३३)। ये राजा दशरथ के माननीय ऋत्विज थे (१. ७, ४; ८, ६)। दशरथ सन्तान के लिये अश्वमेध यज्ञ की दीक्षा ग्रहण करने के निमित्त इनके समीप गये (१. १३, १–२)। इन्होंने दशरथ का यज्ञ सम्पन्न कराने के लिये आवश्यक आदेश दिये (१. १३, ६)। कर्मचारियों ने इन्हें सुचारु रूप से कार्य सम्पन्न करने का आश्वासन दिया (१. १३, १७)। इन्होंने राजाओं तथा अन्य अतिथियों को आमन्त्रित करने के लिये सुमन्त्र को आवश्यक आदेश दिये (१. १३, १८–३०)। इन्होंने यज्ञ सम्बन्धी व्यवस्था पूर्ण हो जाने की दशरथ को सूचना दी जिसके पश्चात् दशरथ ने इनके साथ यज्ञ-मण्डप में जाकर यज्ञ की दीक्षा ली (१. १३, ३५–४१)। राजा दशरथ द्वारा प्रदत्त समस्त दक्षिणा ऋत्विजों ने वितरण के लिये इन्हें सौंप दी (१. १४, ५१)। इन्होंने दशरथ-पुत्रों का नामकरण तथा अन्य संस्कार सम्पन्न कराये (१. १८, २०–२५)। इन्होंने श्रीराम को विश्वामित्र के साथ भेज देने का परामर्श दिया (१. २१, ५–२१)। दशरथ ने इनके परामर्श को स्वीकार कर लिया (१. २१, २२)। इन्होंने विश्वामित्र का सत्कार करते हुये कामधेनु को अभीष्ट वस्तुओं की सृष्टि करने का आदेश दिया (१. ५२)। उत्तम अन्नपान आदि से सेना सहित तृप्त हुये विश्वामित्र द्वारा कामधेनु माँगने पर इन्होंने उसे देना अस्वीकार कर दिया (१. ५३, ११–२६)। इन्होंने विश्वामित्र द्वारा बलपूर्वक ले जायी जाती हुई अपनी कामधेनु की विनती

सुनकर उसे शत्रुओं का विनाश करने वाली सेना की सृष्टि करने का आदेश दिया (१, ५४, ९–१६)। शिव के वर के फलस्वरूप अस्त्रों से समृद्ध होकर जब विश्वामित्र ने इनके आश्रम पर आक्रमण किया तब ये यमदण्ड के समान भयंकर एक दण्ड हाथ में लेकर विश्वामित्र का सामना करने के लिये प्रस्तुत हुये (१. ५५, २५–२८)। इन्होंने विश्वामित्र के समस्त दिव्यास्त्रों का अपने ब्रह्मदण्ड से शमन कर दिया (१. ५६, १३–२१)। इन्होंने त्रिशङ्कु के लिये यज्ञ करना अस्वीकार कर दिया (१. ५७, १२)। इनके पुत्रों ने भी त्रिशङ्कु का यज्ञ करना अस्वीकार करते हुए उन्हें चाण्डाल होने का शाप दे दिया (१. ५८, १–१०)। जापकों में श्रेष्ठ ब्रह्मर्षि वसिष्ठ ने देवों से प्रसन्न होकर 'एवमस्तु' कहा और विश्वामित्र का ब्रह्मर्षि होना स्वीकार करते हुये उनके साथ मित्रता स्थापित कर ली (१. ६५, २२–२३)। विश्वामित्र ने उत्तम ब्राह्मणत्व प्राप्त करने के पश्चात् इनका पूजन किया (१. ६५, २५)। दशरथ ने इनसे मिथिला जाने की अनुमति माँगी (१. ६८, १४)। इन्होंने दशरथ के साथ मिथिला के लिये प्रस्थान किया (१. ६९, ४)। मिथिला में इनकी उपस्थिति (१. ६९, १०)। "ये इक्ष्वाकु कुल के देवता थे। ये ही दशरथ आदि को कर्त्तव्य का उपदेश देते थे और वे इन्हीं की आज्ञा का पालन करते थे। दशरथ के अनुरोध से इन्होंने जनक को सूर्यवंश का परिचय दिया तथा श्रीराम और लक्ष्मण के लिये क्रमशः सीता और ऊर्मिला का वरण किया (१. ७०, १६–४५)।" जनक ने इनके समक्ष अपने कुल का परिचय देते हुये श्रीराम और लक्ष्मण के लिए क्रमशः सीता और ऊर्मिला को देने की प्रतिज्ञा की (१. ७१, १–२१)। विश्वामित्र सहित इन्होंने भरत और शत्रुघ्न के लिये कुशध्वज की कन्याओं का वरण किया जिसे जनक ने स्वीकार कर लिया (१. ७२, १–१६)। इन्होंने श्रीराम आदि चारों भ्राताओं के विवाह के समय समस्त वैवाहिक कार्य करके मन्त्रपाठपूर्वक प्रज्वलित अग्नि में हवन किया (१. ७३, १२–२२)। विवाह के पश्चात् यात्रा के समय प्रगट शुभ और अशुभ शकुनों से चिन्तित दशरथ को इन्होंने उनका फल समझाकर शान्त किया (१. ७४, १०–१३)। मार्ग में भयंकर आँधी से ये मूर्छित नहीं हुये (१. ७४, १६)। 'अभिवाद्य ततो रामो वसिष्ठप्रमुखानृषीन्', (१. ७७, २)। दशरथ ने इनसे श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारी करने के लिये कहा और इन्होंने सेवकों को तदनुरूप आदेश दिया (२. ३, ३–७)। दशरथ के अनुरोध से इन्होंने सीता सहित श्रीराम को उपवास-व्रत की दीक्षा दी और राजभवन में आकर दशरथ को इस समाचार से अवगत कराया (२, ५, १–२३)। इन्होंने श्रीराम के राज्याभिषेक की समस्त सामग्रियों के एकत्र कर देने के समाचार से दशरथ को

अवगत कराने के लिये अन्तःपुर में जाकर सुमन्त्र को भेजा (२. १४, २६–४२) मार्कण्डेय आदि का वचन सुनकर इन्होंने भरत को बुलाने के लिये पाँच दूतों को राजगृह भेजा (२. ६८)। इन्होंने भरत को दशरथ का दाह-संस्कार करने के लिए उत्तम प्रबन्ध करने की अनुमति दी (२. ७६, १–३)। 'तथेति भरतो वाक्यं वसिष्ठस्याभिपूज्य तत्', (२. ७६, १२)। दैवी प्रकृति से युक्त सर्वज्ञ पुरोहित वसिष्ठ ने भरत को दशरथ की मृत्यु के तेरहवें दिन अस्थिसंचय और शोक का परित्याग करने के लिये कहा (२. ७७, २१–२३)। इन्होंने सभा में आकर मन्त्रियों आदि को बुलाने के लिये दूत भेजा (२, ८१, ९–१३)। इन्होंने भरत को राज्य पर अभिषिक्त होने के लिये आदेश दिया (२. ८२, ४–८)। भरत इनको आगे करके भरद्वाज ऋषि के पास गये (२. ९०, ३)। भरद्वाज ने अपने आसन से उठकर अर्घ्य, पाद्य, फल आदि निवेदन करके इनसे कुशल-समाचार पूछा (२. ९०, ४–६)। इन्होंने भी भरद्वाज से उनका कुशल समाचार पूछा (२. ९०, ८)। 'ऋषिं वसिष्ठं संदिश्य मातृर्मे शीघ्रमानय', (२. ९९, २)। 'स कच्चिद् ब्राह्मणो विद्वान्धर्मंनित्यो महाद्युतिः। इक्ष्वाकूणामुपाध्यायो यथावत्तात पूज्यते ॥', (२. १००, ९)। ये दशरथ की रानियों को आगे करके श्रीराम के आश्रय में गये (२. १०४, १)। श्रीराम ने इनका चरण स्पर्श करके प्रणाम किया और इनके साथ ही पृथिवी पर बैठ गये (२. १०४, २७–२८)। इन्होंने सृष्टि-परम्परा के साथ इक्ष्वाकु-कुल की परम्परा का वर्णन किया और ज्येष्ठ के ही राज्याभिषेक का औचित्य सिद्ध करते हुये श्रीराम से राज्य-ग्रहण करने के लिये कहा (२. ११०)। इन्होंने श्रीराम को समझाया परन्तु श्रीराम ने अपने पिता की आज्ञा के पालन से विरत न होने के लिये कहा (२. १११, १–११)। ये श्रीराम के आश्रम से अयोध्या के लिए लौटे (२. ११३, २)। श्रीराम के न लौटने पर इन्होंने श्रीराम से प्रतिनिधि के रूप में स्वर्णभूषित पादुकायें भरत को दे देने के लिए कहा (२. ११३. ९–१३)। वनवास से श्रीराम के लौटने की अवधि तक नन्दिग्राम में रहने के भरत के विचार का इन्होंने अनुमोदन किया (२. ११५, ४–६)। ये भरत के नन्दिग्राम जाते समय आगे-आगे चल रहे थे (२. ११५, १०) इन्होंने श्रीराम का राज्याभिषेक सम्पन्न कराया (६. १२८, ६१)। "सीता को छोड़कर लौटते समय मार्ग में सुमन्त्र ने लक्ष्मण को बताया कि एक समय महर्षि दुर्वासा वसिष्ठ के आश्रम में निवास कर रहे थे। उस समय राजा दशरथ वसिष्ठ का दर्शन करने गये (७. ५१, २–४)।" "राजर्षि निमि ने अपने यज्ञ के लिये इनका वरण किया किन्तु इन्होंने इन्द्र का यज्ञ पूरा कराने तक राजा से प्रतीक्षा करने के लिये कहा। फिर भी राजा ने गौतम ऋषि से अपना यज्ञ पूरा कर लिया।

(७, ५५, ८–११)।" "इन्द्र का यज्ञ समाप्त करा कर लौटने पर इन्होंने देखा कि राजा, गौतम आदि महर्षियों से, अपना यज्ञ करा रहे हैं। इस पर क्रुद्ध होकर इन्होंने राजा निमि को विदेह हो जाने का शाप दे दिया (७. ५५, १३–१७)।" इनके शाप की बात सुनकर राजा निमि ने भी इन्हें विदेह हो जाने का शाप दिया (७. ५५, १८–२०)। लक्ष्मण के यह पूछने पर कि इन्होंने अपना शरीर पुनः किस प्रकार प्राप्त किया, श्रीराम ने वताया : शरीर-रहित होने पर वसिष्ठ ब्रह्मा की शरण में गये जहाँ ब्रह्मा ने उनसे वरुण के छोड़े हुये तेज में प्रविष्ट होने के लिये कहा (७. ५६, ५–१०)। मित्र और वरुण के वीर्य से युक्त कुम्भ से इनका प्रादुर्भाव हुआ, और इनके जन्म ग्रहण करते ही राजा इक्ष्वाकु ने अपने पुरोहित पद के लिये इनका वरण कर लिया (७. ५७, ७–९)। जव राजा मित्रसह ने अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया तो ये अपने तपोवल से उस यज्ञ की रक्षा करते थे (७. ६५, १८)। यज्ञ की समाप्ति पर एक राक्षस पूर्व-वैर का स्मरण कर वसिष्ठ के रूप में राजा के सम्मुख उपस्थित हुआ और मांसयुक्त भोजन माँगा (७. ६५, २०–२१)। "जब राजा की पत्नी ने इनके सम्मुख मांसयुक्त भोजन रक्खा तो ये क्रुद्ध हो उठे और राजा से कहा कि उनका भोजन भी मांसयुक्त होगा। इस पर क्रुद्ध होकर जव राजा ने भी इन्हें शाप देना चाहा तो उनकी पत्नी ने उन्हें रोकते हुये इनसे कहा कि इनका रूप धारण करके ही किसी ने मांसयुक्त भोजन प्रस्तुत करने के लिये कहा था। उस समय सारी बात जान कर इन्होंने राजा को वर दिया (७. ६५, २६–३६)।" राजद्वार पर ब्राह्मण के विलाप को सुनकर श्रीराम ने इन्हें आमन्त्रित किया (७. ७४, २)। अपने साथ वामदेव आदि आठ ब्राह्मणों को लेकर ये श्रीराम के समक्ष उपस्थित हुये और श्रीराम ने इनका सत्कार किया (७. ७४, ४–५)। श्रीराम ने इनसे अश्वमेव के सम्बन्ध में परामर्श किया (७. ९१, २–८)। जब काल से वार्तालाप कर रहे श्रीराम के सम्मुख उपस्थित होकर लक्ष्मण नियमभङ्ग के दोषी हुये तो इन्होंने श्रीराम के चिन्तित होने पर उन्हें लक्ष्मण का परित्याग कर देने का परामर्श दिया (७. १०६, ७–११)। इन्होंने श्रीराम के महाप्रस्थान काल के लिये उचित समस्त धार्मिक क्रियाओं का विधिवत् अनुष्ठान किया (७. १०९, ३)।

१. वसु, कुश और वैदर्भी के एक पुत्र का नाम है (१. ३२, २)। इन्होंने 'गिरिव्रज' नगर की स्थापना की (१. ३२, ६)। इनकी पाँच पर्वतों से घिरी हुई राजधानी, गिरिव्रज, 'वसुमती' के नाम से प्रसिद्ध हुई (१. ३२, ७)। मागधी नाम से प्रसिद्ध हुई सोन नदी इनसे सम्बन्धित थी (१. ३२, ९)।

२. वसु—श्रीराम ने अगस्त्य के आश्रम पर इनके स्थान का दर्शन किया (३. १२, १९)। इनकी संख्या आठ बताई गई है (३. १४, १४)। दुर्धर इनका पुत्र था (६. ३०, ३४)। आठवें वसु का नाम सावित्र था जिन्होंने सुमाली का वध किया (७. २७, ३४–५०)। 'सुमालिनं हतं दृष्ट्वा वसुना भस्मसात्कृतम्', (७. २८, १)। ये भी राक्षसों के साथ युद्ध के लिये निकले (७. २८, २७)। रावण इनके सामने युद्ध में ठहर नहीं सका (७. २९, ३१)। श्रीराम की सभा में शपथ-ग्रहण के समय अपनी शुद्धता प्रमाणित करने के लिये सीता ने इनका भी आवाहन किया (७. ९७, ८)।

३. वसु, राजा नृग के पुत्र का नाम है। इनका राज्याभिषेक करके राजा नृग ने ब्राह्मणों का शाप भोगने के लिये गड्ढे में प्रवेश किया (७. ५४, ८–१९)।

वसुदा, एक गन्धर्व-कन्या का नाम है जो माली की पत्नी थी (७. ५, ४२)। इसने चार निशाचरों को जन्म दिया (७. ५, ४४)।

वसुमती, वसु की राजधानी का नाम है (१. ३२, ६)।

वस्वौकसारा, कुवेर-नगरी (अलका) का नाम है (२. ९४, २६)।

वह्नि, एक वानर यूथपति का नाम है जो सेना सहित सुग्रीव के समक्ष उपस्थित हुये (४. ३९, ३८)।

वातापि—श्रीराम ने लक्ष्मण से अगस्त्य द्वारा वातापि और इल्वल के वध की कथा का वर्णन किया (३. ११, ५५–६७)। श्रीराम ने अगस्त्य द्वारा इसके वध का वर्णन किया (३. ४३, ४१–४५)।

वामदेव, एक महर्षि का नाम है जो राजा दशरथ के माननीय ऋत्विज थे (१. ७, ४)। दशरथ ने इनसे पुत्र-प्राप्ति के लिये अश्वमेध यज्ञ के अनुष्ठान का परामर्श लिया (१. ८, ६)। दशरथ ने इन्हें आमन्त्रित करने के लिये कहा (१. १२, ५)। दशरथ ने इनसे मिथिला जाने की अनुमति माँगी (१. ६८, १४)। इन्होंने भी दशरथ के साथ मिथिला के लिये प्रस्थान किया (१. ६९, ४)। दशरथ ने इनसे श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारी करने के लिये कहा (२. ३, ३)। दशरथ की मृत्यु के पश्चात् दूसरे दिन प्रातःकाल सभा में उपस्थित होकर इन्होंने वसिष्ठ को दूसरा राजा नियुक्त करने का परामर्श दिया (२. ६७, ३)। ये श्रीराम के आश्रम से वसिष्ठ आदि के साथ अयोध्या लौटे (२. ११३, २)। इन्होंने श्रीराम का राज्याभिषेक कराने में वसिष्ठ की सहायता की (६. १२८, ६१)। राजद्वार पर ब्राह्मण का विलाप सुनकर श्रीराम ने इन्हें आमन्त्रित किया (७. ७४, २)। ये वसिष्ठ के साथ श्रीराम के पास आये और श्रीराम ने इनका सत्कार किया (७. ७४,

४–५)। श्रीराम ने अश्वमेध के आयोजन के सम्बन्ध में इनसे परामर्श किया ७. ९१, २–८)।

वामन—ये सिद्धाश्रम में निवास करते थे : 'एष पूर्वाश्रमो राम वामनस्य महात्मनः (१. २९, ३)। देवों ने विष्णु को वामन रूप धारण करके बलि के यज्ञ में जाने के लिये प्रेरित किया (१. २९, ९)। विश्वामित्र इनमें भक्ति रखते थे (१. २९, २२)।

वामना, एक अप्सरा का नाम है जिसने भरद्वाज मुनि की आज्ञा से भरत के सत्कार में उनके समीप नृत्य किया (२. ९१, ४६)।

वायव्य, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २७. १०)।

वायु—इन्होंने कुशनाभ की सौ पुत्रियों को अपनी भार्या बन जाने के लिये कहा (१, ३२. १४–१६)। कुशनाभ की पुत्रियों ने हँसते हुये अवहेलना-पूर्वक इनके इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया (१. ३२, १७–२१)। इन्होंने कुपित होकर उनके शरीर में प्रविष्ट हो उनके अङ्गों को मोड़कर टेढ़ा कर दिया जिससे वे कुबड़ी हो गईं (१. ३२, २२–२३)। कुब्जत्व को प्राप्त होकर कुशनाभ की पुत्रियों ने अपने पिता को अशुभ मार्ग का अवलम्बन करके बलात्कार करने की वायु की इच्छा को बताया (१. ३३, २–३)। ब्रह्मदत्त के साथ विवाह के समय उन कन्याओं के कुब्जत्व को इन्होंने दूर कर दिया (१. ३३, २३–२४)। देवताओं ने अग्नि को इनके सहयोग से शिव का तेज धारण करने के लिये कहा (१. ३६, १८)। इन्द्र ने दिति के गर्भ के जो सात टुकड़े कर दिये उनमें से तीसरा दिव्य वायु के नाम से विख्यात हुआ (१. ४७, ५. ८)। श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका आवाहन किया (२. २५, १३)। श्रीराम ने अगस्त्य के आश्रम पर इनके स्थान का दर्शन किया (३. १२, १८)। श्रीराम ने इनसे भी सीता का पता पूछा (३. ६३, २७)। मैनाक पर्वत ने बताया कि पूर्व काल में जब इन्द्र अपने वज्र से उसका पंख काट देना चाहते थे तो वायु देवता ने सहसा उसे समुद्र में गिरा दिया (५. १, १२६)। ये भी रावण के भय से अशोक वाटिका में अधिक वेग से नहीं बहते थे (५. १३, ६३)। हनुमान् ने अपनी सफलता के लिये इनकी स्तुति की (५. १३, ६५)। रावण को अपना परिचय देते हुये हनुमान् ने अपने को इनका औरस पुत्र बताया (५. ५१, १५)। सीता ने अग्नि में प्रवेश करते समय अपनी शुद्धता प्रमाणित करने के लिये इनका भी आवाहन किया (६. ११६, २८, गीता प्रेस संस्करण)। "जब इन्द्र के वज्र-प्रहार से आहत होकर इनके पुत्र, हनुमान्, आहत हो गये तो क्रुद्ध होकर

इन्होंने अपनी गति रोक दी। इनकी गति रुक जाने से पीड़ित होकर देवगण ब्रह्मा की शरण में आये। ब्रह्मा ने बताया कि इनके पुत्र पर वज्र प्रहार होने के कारण ही ये कुपित हैं। तदनन्तर इन्हें ही.सुख और सम्पूर्ण जगत बताते हुये देवों के साथ ब्रह्मा इनके पास आये। उस समय इन्हें अपने गोद में अपने पुत्र को लिये हुये देखकर ब्रह्मा सहित समस्त देवताओं को अत्यन्त दया आई (७. ३५, ४८–६५)।" देवताओं ने इनके पुत्र, हनुमान्, को जीवित करके वरदान दिये और उसके बाद ये हनुमान् को लेकर अञ्जना के घर आये (७. ३६, १–२६)।

वाराणसी, काशिराज की पुरी का नाम है। यह सुन्दर परकोटों और मनोहर फाटकों से सुशोभित थी (७. ३८, १७) श्रीराम से सत्कृत् होकर काशिराज ने अपनी इस पुरी की ओर प्रस्थान किया (७. ३८, १९)।

वायुभक्ष, एक प्रकार के ऋषियों का नाम है जिन्होंने शरभङ्गमुनि के स्वर्गलोक चले जाने के पश्चात् श्रीराम के समक्ष उपस्थित होकर राक्षसों से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की (३. ६, ४. ८–२६)।

वारुण-पाश, वरुण के पाश का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २७, ८)।

वारुणी, वरुण की कन्या, सुरा, की अभिमामिनि देवी का नाम है जो समुद्र-मन्थन से प्रकट हुई थी (१. ४५, ३६)। अदिति के पुत्रों ने इस अनिन्द्य सुन्दरी को ग्रहण कर लिया जिससे (सुरा के सेवन के कारण) ही वे 'सुर' कहलाये (१. ४५, ३७–३८)।

वालखिल्य, एक प्रकार के ऋषियों का नाम है जिन्होंने शरभङ्ग मुनि के स्वर्गलोक चले जाने के पश्चात् श्रीराम के समक्ष उपस्थित होकर राक्षसों से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की (३. ६, २. ८–२६)। रावण ने समुद्र के तटवर्ती प्रान्त को इन महात्माओं से भी सुशोभित देखा (३. ३५, १४)। ये मैनाक पर्वत के उस पार निवास करते थे (४. ४३, ३२)।

वालिन्, एक वानर का नाम है जो सुग्रीव के ज्येष्ठ भ्राता और उनसे शत्रुता रखते थे (१. १, ६२)। सुग्रीव के गर्जन करने पर इन्होंने अपने भवन से बाहर निकल कर उनसे युद्ध किया परन्तु श्रीराम ने एक बाण से ही इनका वध कर दिया (१. १, ६८–६९)। इनके सुग्रीव के साथ युद्ध, श्रीराम द्वारा इनके विनाश, तथा तारा के इनके लिये विलाप का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, २३–२४)। इन्द्र ने इन्हें उत्पन्न किया (१. १७, १०)। ये सुग्रीव के भ्राता थे, और हनुमान् आदि समस्त वानर इनकी सेवा में तत्पर रहते थे (१. २७, ३१–३२)। "सुग्रीव ने श्रीराम को

बताया कि उन्हें उनके बड़े भ्राता वालिन् ने घर से निकाल कर उनके साथ वैर बाँध लिया है। इन्हीं के त्रास और भय से उद्भ्रान्त-चित्त हो वन में निवास करने और अपनी भार्या के छीन लिये जाने का समाचार बताकर सुग्रीव ने श्रीराम से इनके भय से अभयदान देने की प्रार्थना की जिसे सुनकर श्रीराम ने इनके वध की प्रतिज्ञा की (४. ५, २३–३०)।" "सुग्रीव ने श्रीराम को बताया कि वालिन् ने उनका तिरस्कार करते हुये युवराज पद से भी च्युत कर दिया। इतना ही नहीं उनकी स्त्री को भी छीन लिया। सुग्रीव ने बताया कि इतना होने पर भी वालिन् उनके विनाश के लिये यत्नशील है (५. ८, ३२–३४)।" सुग्रीव ने श्रीराम को इनके साथ अपने वैर का कारण बताया (४. ९)। सुग्रीव ने इनके साथ अपने वैर तथा इनके द्वारा निष्कासित कर दिये जाने का वृत्तान्त बताते हुये श्रीराम से इनके विनाश का निवेदन किया (४. १०, १–३०)। श्रीराम ने इनके वध का सुग्रीव को आश्वासन दिया (४. १०, ३१–३५)। सुग्रीव ने इनके पराक्रम का वर्णन करते हुये कहा : वालिन् चारों समुद्र का सूर्योदय के पूर्व ही भ्रमण करके भी थकते नहीं थे। वे पर्वतों के शिखरों पर चढकर बड़े-बड़े शिखरों को उठा लेते थे (४. ११, ३–६)। 'वाली नाम महाप्राज्ञ शक्रपुत्रः प्रतापवान्। अध्यास्ते वानरः श्रीमान्किष्किन्धामतुलप्रभाम् ॥' (४. ११, २१)। इन्होंने दुन्दुभि नामक दैत्य से, जो भैंसे का रूप बनाकर इनसे युद्ध के लिये उपस्थित हुआ, घोर युद्ध करते हुए उसका वध करके उसके मृत शरीर को दोनों हाथों से उठाकर एक योजन दूर फेंक दिया (४. ११, २८–४७)। 'जब मतङ्गमुनि ने इन्हें शाप दे दिया तो ये मुनि से क्षमा-याचना के लिये उनके पास गये परन्तु मुनि ने इनका आदर नहीं किया। मुनि के ही शाप के कारण ये ऋष्यमूक क्षेत्र में प्रवेश नहीं करते थे (४. ११, ५९–६३)।" 'कथं तं वालिनं हन्तुं समरे शक्ष्यसे नृप', (४. ११, ६८)। 'कस्मिन्कर्मणि निर्वृत्ते श्रृद्दध्या वालिनो वधम्', (४. ११, ६९)। सुग्रीन ने लक्ष्मण से कहा : 'पूर्वकाल में वालिन् ने शाल के सात वृक्षों को एक-एक करके कई बार बींध डाला था, अतः श्रीराम भी यदि इनमें से किसी एक वृक्ष का भेदन कर देंगे तो मुझे उनके द्वारा वालिन् के वध का विश्वास हो जायगा (४. ११, ७०–७१)।' 'शूरश्च शूरमानी च प्रख्यातबलपौरुषः। बलवान्वानरो वाली संयुगेष्वपराजितः ॥', (४. ११, ७४)। 'आर्द्रः समांसः प्रत्यग्रः क्षिप्तः कायः पुरा सखे। लघु संप्रति निर्मांसस्तृणभूतश्च राघवः ॥" (४. ११, ८७)। श्रीराम की प्रेरणा पर जब सुग्रीव ने आकर इन्हें ललकारा तो इन्होंने सुग्रीव को पराजित कर दिया, और जब सुग्रीव भाग खड़े हुये तो उनका पीछा किया; परन्तु उनके मतङ्गवन में प्रवेश कर जाने के कारण

ये लौट आये (४. १२, १३–२३)। 'अलंकारेण वेषेण प्रमाणेन गतेन च। त्वं च सुग्रीव वाली च सदृशौ स्थः परस्परम् ॥', (४. १२, ३०)। श्रीराम ने सुग्रीव को इनके भय को समाप्त कर देने का आश्वासन दिया (४. १४, १०–१८)। "जब सुग्रीव ने किष्किन्धापुरी में आकर इन्हें ललकारा तो ये अन्तःपुर में थे। सुग्रीव की गर्जना सुनकर इनका समस्त शरीर क्रोध से तमतमा उठा और ये राहुग्रस्त सूर्य के समान निष्प्रभ दिखाई पड़ने लगे (४. १५, १–३)। 'वाली दंष्ट्राकरालस्तु क्रोधाद्दीप्ताग्निलोचनः। भात्युत्पतितपद्मस्तु समृणाल इव ह्रदः ॥" (४. १५, ४)। सुग्रीव की गर्जना सुनकर जब ये वाहर निकलने को उद्यत हुये तो इनकी पत्नी ने इन्हें समझाया (४. १५, ५–६)। इन्होंने अपनी पत्नी, तारा, के शुभ परामर्श को ग्रहण नहीं किया (४. १५, ३१)। इन्होंने तारा को फटकारते हुये अपने पराक्रम का वर्णन किया और तारा को लौटाकर स्वयं युद्ध के लिये सन्नद्ध हुये (४. १६, १–१०)। तारा ने इनका मंगलकामना से स्वस्तिवाचन किया (४. १६, ११–१२)। "तारा के लौट जाने पर ये सुग्रीव से युद्ध के लिये वाहर निकले। सुग्रीव को देखकर इन्होंने अपना लँगोट कस लिया और उनसे मल्लयुद्ध करने लगे। इन्होंने सुग्रीव को अत्यन्त त्रस्त कर दिया जिससे सुग्रीव भयभीत होकर इधर-उधर श्रीराम की ओर देखने लगे (४. १६, १४–३०)।" श्रीराम ने अपने महान् वाण से इनके वक्षस्थल पर प्रहार किया जिससे ये तत्काल पृथिवी पर गिर पड़े (४. १६, ३४–३५)। इनके शरीर से जल के समान रक्त की धारा वहने लगी जिससे ये सर्वथा रक्तरंजित हो गये (४. १६, ३८)। "श्रीराम के वाण से आहत होकर ये भूमि पर गिर पड़े। उस समय भी इनके शरीर को शोभा, प्राण, तेज और पराक्रम इन्हें छोड़ नहीं सके थे, क्योंकि इन्द्र की दी हुई रत्न जटित श्रेष्ठ सुवर्ण माला इनके प्राण, तेज, और शोभा को धारण किये हुये थी (४. १७, १–७)।" 'महेन्द्रपुत्रं पतितं वालिनं हेममालिनम्', (४. १७, ११)। "जब श्रीराम इनके समीप आये तो इन्होंने छिपकर वाण प्रहार करने के कारण श्रीराम की भर्त्सना की और कहा : 'जिस प्रकार मधु-कैटभ द्वारा अपहृत श्वेताश्वतरी श्रुति का हयग्रीव ने उद्धार किया था वैसे ही मैं आपके आदेश से सीता को, यदि वे समुद्र के जल या पाताल में भी होंती, तो वहाँ से ला देता। मेरे स्वर्गलोकवासी होने पर सुग्रीव को जो यह राज्य प्राप्त होगा वह उचित ही है। अनुचित इतना ही हुआ कि आपने रणभूमि में मेरा अधर्मपूर्वक वध किया।' ऐसा कहकर ये चुप हो गये। उस समय इनका मुख सूख गया और बाण के आघात से इन्हें अत्यन्त पीड़ा होने लगी (४. १७, १३–५२)।" इन्हें उत्तर देते हुये

श्रीराम ने इनके वध का औचित्य बताया जिससे निरुत्तर होकर इन्होंने क्षमा माँगते हुये सुग्रीव तथा अङ्गद आदि की रक्षा के लिये प्रार्थना की और श्रीराम ने इन्हें तदनुकूल आश्वासन दिया (४. १८)। युद्धभूमि में इनके आहत होने का समाचार सुनकर इनकी पत्नी, तारा, ने इनके पास आने का आग्रह किया और फिर इनके पास आकर विलाप करने लगी (४. १९)। तारा ने इनके निकट घोर विलाप किया (४. २०)। तारा ने कहा कि अपने पति का अनुगमन करने से बढ़कर और कोई कार्य उसके लिये उचित नहीं हो सकता (४. २१, १६)। "इन्होंने सुगीव और अङ्गद से अपने हृदय की बातों को प्रगट किया। तदनन्तर सुग्रीव को अपनी दिव्य सुवर्णमाला देते हुए उनसे श्रीराम के प्रति निष्ठावान् रहने के लिये कहा। अपने पुत्र, अङ्गद, को भी इन्होंने सुग्रीव के प्रति आदर-भाव रखने का उपदेश किया। इस प्रकार कहकर इन्होंने प्राण-त्याग किया (४. २२, १–२४)।" इनकी मृत्यु हो जाने पर समस्त वानर यूथपति विलाप करने लगे और किष्किन्धा पुरी, उसके उद्यान, पर्वत, और वन भी सूने हो गये (४. २२, २५–२६)। इन्होंने गोलभ नामक गन्धर्व से पन्द्रह वर्षों तक अहोरात्र चलने वाला युद्ध किया और सोलहवाँ वर्ष आरम्भ होते ही उसका वध कर दिया (४. २२, २७–२९)। अपने मृत पति को देखकर तारा विलाप करती हुई पृथिवी पर गिर पड़ीं (४. २२, ३१)। नील ने इनके शरीर में धँसे हुये बाण को निकाला जिससे इनके शरीर के समस्त घावों से रक्त की धारा निकलने लगी (४. २३, १७–२०)। माता की आज्ञा से अङ्गद ने इनका चरण स्पर्श किया (४. २३, २४)। इनके लिये विलाप करते हुये तारा ने अपना वध कर देने के लिये भी श्रीराम से निवेदन किया जिससे वह परलोक में भी इनके साथ रह सके (४. २४, ३१–४०)। लक्ष्मण ने सुग्रीव से ईनका दाह-संस्कार करने के लिये कहा (४. २५, १२–१८)। श्मशान भूमि में ले जाने के लिये सुग्रीव ने इनके शव को शिबिका में रखकर उसे पुष्पमालाओं से अलंकृत किया (४, २५, २८–२९)। 'स वालिपुत्राभिहतो वक्त्राच्छोणितमुद्वमन्', (४. ४८, २०)। 'सुग्रीवश्चैव वाली च पुत्रौ धनबलावुभौ। लोके विश्रुतकर्माऽभूद्राजा वाली पिता मम ॥', (४. ५७, ६)। 'हतो वाली महाबलः', (५. १६, ७)। 'वाली च सह सुग्रीवो', (५. ४६, १०)। 'वाली वानरपुङ्गवः', (५. ५१, ११)। 'त्वया न च वालिना', (५. ६३, ५)। इन्होंने रावण को पराजित कर दिया जिसके पश्चात् रावण इनका मित्र बन गया (७. ३४)। इनके पिता का नाम ऋक्षराज था (७. ३६, ३६)। इनके पिता ने ही इन्हें राजा बनाया (७. ३६, ३८)। यद्यपि इनमें और इनके भ्राता सुग्रीव में बचपन से ही

सख्य-भाव था, तथापि बाद में दोनों में वैर हो गया (७. ३६, ३९–४१)।

वाल्मीकि, एक महर्षि का नाम है। इन्होंने देवर्षि नारद से इस संसार के गुणवान्, वीर्यवान्, धर्मज्ञ, उपकारक, सत्यवक्ता और दृढ़प्रतिज्ञ पुरुष के सम्बन्ध में पूछा जिससे देवगण भी भयभीत होते हैं (१. १, १–५)। इन्होंने अपने शिष्यों सहित देवर्षि नारद का पूजन किया (१. २, १–२)। "देवर्षि नारद के देवलोक पधारने के पश्चात् ये शिष्यों सहित तमसा के तट पर पहुँचे। वहाँ इन्होंने व्याध के द्वारा क्रौञ्चपक्षी के जोड़े में से नर पक्षी के मारे जाने से दुःखी हुई उसकी भार्या के करुण विलाप को सुनकर व्याध को शाप देते हुये कहा : 'निषाद! तुझे नित्य-निरन्तर कभी भी शान्ति न मिले क्योंकि तूने इस क्रौञ्च के जोड़े में से एक नरपक्षी की, जो काम से पीड़ित हो रहा था, बिना किसी अपराध के ही हत्या कर दी है।' (१. २, ३–१५)।" "तदनन्तर इन्हें इस बात की चिन्ता हुई कि इन्होंने जो कुछ कहा उसे श्लोक रूप ही होना चाहिये अथवा नहीं। इनके शिष्य, भरद्वाज, ने कहा कि इनके वाक्य को श्लोक रूप ही होना चाहिये। अपने श्लोक पर विचार करते हुये ही ये शिष्य सहित अपने आश्रम पर आये। उस समय वहाँ लोककर्त्ता ब्रह्मा ने उपस्थित होकर इनकी मनःस्थिति को समझते हुए इन्हें श्रीराम के सम्पूर्ण चरित्र का श्लोकबद्ध वर्णन करने के लिये कहा। ब्रह्मा ने कहा कि श्रीराम का गुप्त या प्रगट वृत्तान्त, तथा लक्ष्मण, सीता और राक्षसों का गुप्त या प्रगट चरित्र इन्हें पूर्णतया ज्ञात और इनके द्वारा अंकित कोई भी वर्णन त्रुटिपूर्ण नहीं होगा। तदनन्तर इनकी तथा इनके रामायण की चिरन्तन कीर्ति का आशीर्वाद देकर ब्रह्मा अन्तर्धान हो गये। ब्रह्मा के चले जाने पर इन्होंने श्रीराम के चरित्र को लेकर सहस्रों श्लोकों से युक्त और मनोहर पदों से समृद्ध रामायण नामक महाकाव्य की रचना की जिसकी रचना में समता, पदों में माधुर्य और अर्थ में प्रासादगुण की अधिकता है (१. २, १६–४३)।" इन्होंने नारद के मुख से धर्म, अर्थ एवं कामरूपी फल से युक्त हितकर तथा प्रगट और गुप्त, सम्पूर्ण रामचरित्र को सुनकर पुनः भलीभाँति साक्षात्कार करने का प्रयत्न किया (१. ३, १)। इन्होंने सम्पूर्ण महाकाव्य, रामायण, का पूर्वदर्शन करते हुये संक्षेप में रामकथा का निरूपण किया (१. ३)।" "इन्होंने श्रीराम के सम्पूर्ण चरित्र के आधार पर विचित्र पद और अर्थ से युक्त रामायण काव्य का निर्माण किया जिसमें चौबीस हज़ार श्लोक, पाँच सौ सर्ग तथा सात काण्ड हैं। तदनन्तर इन्होंने कुशऔर लव को इस काव्य का गायन करना सिखाया (१. ४, १–१३)।" महर्षि वाल्मीकि द्वारा वर्णित आश्चर्यमय रामायण काव्य परवर्त्ती कवियों के लिये श्रेष्ठ आधारशिला बना (१. ४, २६)। श्रीराम आदि ने इनके आश्रम

में प्रवेश करके इनको प्रणाम करने के पश्चात् अपना परिचय दिया (२. ५६, १५–१७)। 'शृणोति य इदं काव्यं पुरा वाल्मीकिना कृतम्', (६. १२८, १११–११२)। श्रीराम ने लक्ष्मण को आदेश दिया कि वे सीता को तमसा-तट स्थित इनके आश्रम के निकट छोड़ आयें (७, ४५, १७–१९)। विलाप करती हुई सीता का समाचार मुनि-कुमारों ने इनके पास पहुँचाया (७. ४९, १–२)। मुनि-कुमारों की बात सुनकर ये उस स्थान पर आये जहाँ सीता विराजमान थीं (७. ४९, ७–९, गीता प्रेस संस्करण)। "शोकग्रस्त सीता को पहचानते हुए इन्होंने उनसे कहा कि उनका समस्त वृत्तान्त इन्होंने जान लिया है। तदनन्तर इन्होंने सीता को अपने आश्रम में ही निवास करने के लिये कहा (७. ४९, ६–१२)।" सीता ने इनके चरणों में प्रणाम किया और तदनन्तर इनकी आज्ञा शिरोधार्य की (७. ४९, १३–१४)। इन्होंने आश्रम में निवास करनेवाली मुनिपत्नियों को सीता का परिचय देते हुये उनसे सीता की देख-रेख करने के लिये कहा (७, ४९, १७–२०)। "लवणासुर का वध करनेके लिये जाते समय शत्रुघ्न इनके आश्रम पर पहुँचे जहाँ इन्होंने उनका स्वागत किया। तदनन्तर इन्होंने शत्रुघ्न को कलमाषपाद की कथा सुनाया (७. ६५)।" अर्धरात्रि के समय मुनिकुमारों ने इन्हें सीता के प्रसव होने का शुभ-समाचार दिया (७. ६६, २)। "इन्होंने प्रसन्न होकर सूतिका-गृह में प्रवेश किया और कुशाओं की मुट्ठा तथा उनके लव लेकर भूत-बाधा के निवारण की रक्षा-विधि का उपदेश दिया। तदन्तर इन्होंने सीता के बड़े और छोटे बालकों का क्रमशः 'कुश' और 'लव' नाम रक्खा (७. ६६, ४–९)।" लवणासुर का वध करने के बाद बारहवें वर्ष अयोध्या लौटते समय शत्रुघ्न मार्ग में इनके आश्रम पर रुके (७. ७१, ३–४)। इन्होंने शत्रुघ्न को भाँति-भाँति की कथायें सुनाते हुये लवण वध के लिये उन्हें धन्यवाद दिया (७. ७१, ५–१३)। इनके आश्रम में रामचरित्र से सम्बद्ध गायन सुनकर जब चकित हुये सैनिकों ने शत्रुघ्न से इस सम्बन्ध में इनसे पूछने के लिये कहा तो शत्रुघ्न ने उस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया (७. ७१, २१–२४)। शत्रुघ्न ने इनसे विदा ली (७. ७२, ३–६)। "श्रीराम के अश्वमेध यज्ञ में ये भी उपस्थित हुये। तदनन्तर इन्होंने अपने दो शिष्यों को सब ओर घूम-फिर कर रामायण-काव्य का गायन करने का आदेश देते हुये कहा कि यदि श्रीराम भी उनका गायन सुनना चाहें तो वे उन्हें सुनायें किन्तु अपने परिचय के रूप में उनसे अपने को वाल्मीकि का शिष्य कहें (७. ९३)।" श्रीराम के पूछने पर रामायण-गान करनेवाले दोनो मुनि-कुमारों (लव-कुश) ने बताया कि उनके काव्य के रचयिता वाल्मीकि हैं जो उस समय यज्ञ स्थल पर पधारे हैं (७. ९४,

२३–२९)। श्रीराम ने इनके पास संदेश भेजा कि यदि सीता का चरित्र शुद्ध है तो ये उन्हें लेकर आयें और जनसमुदाय में उनकी शुद्धता प्रमाणित करें (७. ९५, २–६)। जब श्रीराम के दूतों ने इन्हें यह समाचार दिया तो इन्होंने उसे स्वीकार किया (७. ९५, ७–१०)। इनका उत्तर सुनकर श्रीराम प्रसन्न हुये (७. ९५, १२)। ये सीता को अपने साथ लेकर श्रीराम की सभा में आये (७. ९६, १०–१२)। जनसमुदाय के बीच में आकर इन्होंने विश्वासपूर्वक सीता के चरित्र की शुद्धता प्रमाणित की (७. ९६, १५–२४)। 'वाल्मीकिनैवमुक्तस्तु राघवः प्रत्यभाषत। प्राञ्जलिर्जगतो मध्ये दृष्ट्वा तां वरवर्णिनीम् ॥', (७. ९७, १)। 'जन्मप्रभृति ते वीर सुखदुःखोपसेवनम्। भविष्यदुत्तरं चेह सर्वं वाल्मीकिना कृतम् ॥" (७. ९८, १७)। श्रीराम ने इनसे अपने भावी चरित्र से युक्त उत्तरकाण्ड को सुनाने के लिये कहा (७. ९८, २५–२६)। 'एतावदेतदाख्यानं सोत्तरं ब्रह्मपूजितम्। रामायणमिति ख्यातं मुख्यं वाल्मीकिना कृतम् ॥', (७. १११, १)। 'आदिकाव्यमिदं त्वार्षं पुरा वाल्मीकिना कृतम्। यः शृणोति सदा भक्त्या स गच्छेद् वैष्णवीं तनुम् ॥' (७. १११, १६, गीता प्रेस संस्करण)।

वासुकि, एक सर्प का नाम है जो भोगवती पुरी में निवास करते थे। इनके क्षेत्र में सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये हनुमान् आदि वानरों को भेजा (४. ४१, ३८)।

विकट, एक राक्षस का नाम है जिसके वध का विभीषण ने उल्लेख किया (६. ८९, १२)। श्रीराम ने अयोध्या लौटते समय सीता को वह स्थल दिखाया जहाँ अङ्गद ने इसका वध किया था (६. १२३, ८)। यह सुमाली का पुत्र था (७. ५, ४० ?)।

विकटा, एक राक्षसी का नाम है जिसने सीता को रावण की भार्या बन जाने के लिये धमकाया (५. २३, १५)।

विकुक्षि, कुक्षि के कान्तिमान् पुत्र, एक सूर्यवंशी राजा का नाम है। इनसे महाप्रतापी बाण उत्पन्न हुये (१. ७०, २२–२३; २. ११०, ८–९)

विकृत, दूसरे प्रजापति का नाम है जो कर्दम के बाद हुये थे (३. १४, ७)।

विघन, एक राक्षस का नाम है, जिसके भवन में हनुमान् गये (५. ६, २३)।

१. विजय, दशरथ के एक मंत्री का नाम है (१. ७, ३)। श्रीराम के स्वागत के लिये ये भी हाथी पर चढ़ कर अयोध्या से चले (६. १२७. १०)।

अन्य मन्त्रियों के साथ ये श्रीराम के अभ्युदय तथा नगर की समृद्धि के लिये परस्पर मन्त्रणा करने लगे (६. १२८, २४)। इन्होंने श्रीराम का राज्याभिषेक कराने में वसिष्ठ की सहायता की (६. १२८, ६१)।

२. विजय, एक दूत का नाम है जिन्हें दशरथ की मृत्यु के पश्चात् वसिष्ठ ने भरत को अयोध्या बुलाने के लिये भेजा था (२. ६८, ५)। ये राजगृह पहुँचे (२, ७०, १)। केकयराज ने इनका स्वागत किया जिसके पश्चात् इन्होंने भरत को वसिष्ठ का समाचार तथा उपहार आदि दिया (२. ७०, २–५)। भरत की बातों का उत्तर देने के बाद इन्होंने उनसे शीघ्र अयोध्या चलने के लिये कहा (२. ७०, ११–१२)।

३. विजय, एक हास्यकार का नाम है जो श्रीराम का मनोरंजन करने के लिये उनके साथ रहता था (७. ४३, २)।

विदेह, एक देश का नाम है जहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को भेजा था (४. ४०, २२)।

विद्याधर, एक प्रकार के अर्ध-देवताओं का नाम है (१. १७, ९. २३)। श्रीराम ने सीता को चित्रकूट की शोभा दिखाते हुये इनकी स्त्रियों के मनोरम क्रीड़ा-स्थलों और वृक्षों की शाखाओं पर रक्खे हुये सुन्दर वस्त्रों को दिखाया (२. ९४, १२)। "जब समुद्र-लङ्घन के लिये हनुमान् महेन्द्र पर्वत पर आरूढ़ हुये तो उनके भार से दबने पर वह पर्वत टूटने लगा। उस समय इन लोगों ने समझा कि भूत लोग उसे तोड़ रहे हैं (५. १, २२)।" ये लोग अन्तरिक्ष में खड़े होकर उस पर्वत को देखने लगे (५. १, २७)।

१. विद्युज्जिह्व, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये (५. ६, १९–२५)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १३)। रावण ने इसे साथ लेकर प्रमदानव में प्रवेश किया (६. ३१ ६)। रावण ने इससे माया रूपी श्रीराम का कटा हुआ सर दिखाकर सीता को मोहित करने की आज्ञा दी जिसे सुनकर इसने अपनी माया प्रगट की (६. ३१, ७–९)। रावण ने इसे बुलाकर सीता को राम का कटा हुआ सर दिखाने के लिये कहा जिसका पालन करते हुये इसने वह मस्तक सीता के निकट रख दिया (६. ३१, ३८–४२. ४५)। विभीषण ने इसके वध का उल्लेख किया (६. ८९, १३)। अयोध्या लौटते समय मार्ग में श्रीराम ने सीता को इसके वध का स्थान दिखाया (६. १२३, १३)।

२. विद्युज्जिह्व, कालका के पुत्र, एक राक्षस का नाम है जिसके साथ रावण ने अपनी बहन, शूर्पणखा, का विवाह किया (७. १२, २)।

विद्युत्केश, एक राक्षस का नाम है जो हेति और भया का पुत्र था (७. ४, १७)। यह सूर्य के समान प्रकाशित और तेजस्वी था (७. ४, १८)। इसका सालकटङ्कटा के साथ विवाह हुआ जिसके गर्भ से इसने एक पुत्र (सुकेश) को जन्म दिया (७. ४, १९–२५)। इसका पुत्र सुकेश के नाम से विख्यात हुआ (७. ४, ३२)।

विद्युद्दंष्ट्र, एक वानर-प्रमुख का नाम है जिसे इन्द्रजित् ने आहत कर दिया (६. ७३, ५८)।

विद्युद्रूप, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये (५. ६, २३)।

विद्युन्माली, एक वानर प्रमुख का नाम है जिसके भवन को लक्ष्मण ने देखा (४. ३३, १०)। हनुमान् इसके भवन में गये (५. ६, १९)। सुषेण इसके साथ युद्ध करने लगे (६. ४३, १४)। सुषेण ने इसके साथ घोर युद्ध करते हुये अन्ततः इसका वध कर दिया (६. ४३, ३६–४२)।

विधाता—श्रीराम ने अगस्त्य के आश्रम पर इनके स्थान का दर्शन किया (३. १२, १८)।

विधूत, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसको विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ८)।

१. विनत, एक वानर यूथपति का नाम है जो पर्वत के समान विशालकाय, मेघ के समान गम्भीर गर्जना करनेवाले, बलवान्, तथा वानरों के शासक थे। ये चन्द्रमा और सूर्य के समान कान्तिवाले वानरों के साथ सुग्रीव की सेवा में उपस्थित हुये। सुग्रीव ने इन्हें एक लाख वानरों के साथ पूर्वदिशा में सीता की खोज के लिये भेजा (४. ४०, १६–१९)। इन्होंने पूर्व दिशा की ओर सीता की खोज के लिये प्रस्थान किया (४. ४५, ५)। 'एष दर्दरसंकाशो विनतो नाम यूथपः। पिबंश्चरति पर्णासां नदीनामुत्तमां नदीम् ॥ षष्टिः शतसहस्राणि बलमस्य प्लवंगमाः', (६. २६, ४३–४४)।

२. विनत, एक ग्राम का नाम है जिसके निकट भरत ने केकय से लौटते समय गोमती को पार किया था (२. ७१, १६)।

१. विनता—कौसल्या ने कहा कि पूर्वकाल में विनता ने अमृत लाने की इच्छावाले अपने पुत्र गरुड़ के लिये जो मंगल कृत्य किया था वही मङ्गल श्रीराम को प्राप्त हो (२. २५, ३३)।

२. विनता, एक राक्षसी का नाम है : 'ततस्तु विनता नाम राक्षसी भीमदर्शना (५. २४, २०)।

विनिद्र, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित कर दिया (१. २८, ६)।

विन्ध्य—सुग्रीव ने यहाँ निवास करनेवाले वानरों को भी आमन्त्रित करने का आदेश दिया (४. ३७, २)। यहाँ से लाल रंगवाले भयानक, पराक्रमी और भयंकर रूपधारी दस अरब वानर सुग्रीव के पास आये (४. ३७, २४)। इसकी गुफाओं में हनुमान् आदि वानरों ने सीता की खोज की (४. ५०, १)। 'एष विन्ध्यो गिरिः श्रीमान्नानाद्रुमलतायुतः', (४. ५२, ३१)। इसके पार्श्ववर्ती पर्वत पर बैठे हुये वानर समय की अवधि बीत जाने पर भी सीता की खोज में सफल न होने के कारण चिन्तित हो गये (४. ५३, ३)। सम्पाति अपने पंख जल जाने के कारण इस पर्वत पर गिरे (४. ६०, १६)।

विपाशा, एक नदी का नाम है। केकय जाते समय वसिष्ठ के दूत इसके तट से होते हुये गये थे (२. ६८, १९)।

विबुध, देवमीढ के पुत्र और महीध्रक के पिता का नाम है (१. ७१, १०)।

विभाण्डक, काश्यप के पुत्र एक महर्षि का नाम है (१. ९, ३)। इनके पुत्र ऋष्यशृङ्ग वेदों के पारगामी विद्वान् थे (१. ९, ११)। ऋष्यशृङ्ग ने अपने पिता के रूप में इनका परिचय दिया (१. १०, १४)।

विभीषण, श्रीराम ने इन्हें लंका के राज्य पर अभिषिक्त किया (१. १, ८५)। इनकी श्रीराम के साथ मैत्री तथा इनके श्रीराम को रावण-वध का उपाय बताने का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन किया (१. ३, ३५)। राम को अपना परिचय देते हुये शूर्पणखा ने इन्हें अपना भ्राता बताया (३. १७, २३)। हनुमान् इनके भी भवन में गये (५. ६, १८)। सीता ने हनुमान् को बताया कि इनके समझाने पर भी रावण ने उन्हें श्रीराम को लौटाना स्वीकार नहीं किया (५. ३७, ९)। इनकी पुत्री का नाम कला था (५, ३७, ११)। इन्होंने दूत-वध अनुचित बताकर रावण से हनुमान् को कोई अन्य दण्ड देने का निवेदन किया (५. ५२)। रावण ने इनके निवेदन को स्वीकार कर लिया (५. ५३, १–२)। हनुमान् ने लंकादहन के समय इनके भवन में आग नहीं लगाई (५. ५४, १६)। इन्होंने रावण से श्रीराम की अजेयता बताकर सीता को लौटा देने का अनुरोध किया (६. ९, ७–२३)। इन्होंने रावण के महल में जाकर अपशकुनों का भय दिखाते हुये सीता को लौटा देने का आग्रह किया परन्तु रावण ने इनकी बात को न मानकर इन्हें वहाँ से विदा किया (६. १०)। इन्होंने रावण की सभा में उपस्थित होकर उसके चरणों में मस्तक झुकाया (६. ११, २८)। इन्होंने श्रीराम को अजेय बताकर सीता को लौटा देने की

सम्मति दी (६. १४)। जब इन्द्रजित् ने इनका उपहास किया तो उसे फटकारते हुये इन्होंने रावण की सभा में अपनी उचित सम्मति प्रदान की (६. १५)। रावण ने इनका तिरस्कार किया, परन्तु ये भी उसे फटकार कर वहाँ से चले आये (६. १६)। ये श्रीराम की शरण में उपस्थित हुये (६. १७, १–४)। इन्हें देखकर सुग्रीव ने अन्य वानरों के साथ इनके सम्बन्ध में विचार किया (६. १७, ५)। इन्होंने आकाश में ही स्थित रहकर अपना परिचय देते हुये कहा कि जब रावण ने सीता को लौटा देने की इनकी सम्मति का तिरस्कार किया तो ये श्रीराम की शरण में उपस्थित हुये (६. १७, ११–१७)। इनकी बात सुनकर सुग्रीव ने श्रीराम को इनका समाचार देते हुये इन पर सन्देह प्रगट किया (६. १७, १८–२९)। श्रीराम ने सुग्रीव की बात सुनकर अन्य वानरों से इनके सम्बन्ध में परामर्श किया (६. १७, ३२)। अङ्गद ने इनकी परीक्षा लेने का परामर्श दिया (६. १७, ३८–४२)। इसी प्रकार अन्य वानरों ने भी इन पर शङ्का प्रगट की (६. १७, ४३–६६)। "श्रीराम शरणागत की रक्षा का महत्त्व एवं अपना व्रत बताकर इनसे मिले (६. १८)। "आकाश से उतरकर इन्होंने श्रीराम के चरणों में शरण ली और उनके पूछने पर रावण की शक्ति का परिचय दिया। इनकी बात सुनकर श्रीराम ने रावण-वध की प्रतिज्ञा करते हुये इन्हें लङ्का के राज्य पर अभिषिक्त करने का वचन दिया (६. १९, १–२६)।" जब हनुमान् और सुग्रीव ने सागर-लङ्घन के सम्बन्ध में इनसे पूछा तो इन्होंने श्रीराम को समुद्र की शरण लेने का परामर्श दिया (६. १९, २८–३०)। सुग्रीव ने इनके इस विचार को श्रीराम से कहा (६. १९, ३२–३३)। श्रीराम ने इनकी सम्मति को स्वीकार किया (६. १९, ३६)। वानर-वेश में छिपकर श्रीराम की सेना का निरीक्षण करते हुये शुक और सारण को पहचान कर इन्होंने श्रीराम को उनकी सूचना दी (६. २५, १३–१४)। श्रीराम ने रावण के गुप्तचरों से कहा कि ये उन्हें पूर्णरूप से सेना दिखा देगें (६. २५, १९)। शुक ने रावण को इनका परिचय दिया (६. २८, २६–२७)। 'विभीषणेन सचिवैं राक्षसैः परिवारितः', (६. २८, ४२)। 'भ्रातरं च विभीषणम्', (६. २९, १)। रावण के गुप्तचर को इन्होंने देख लिया (६. २९, २४–२५)। इन्होंने श्रीराम से रावण द्वारा किये गये लङ्का के रक्षा-प्रबन्ध का वर्णन किया (६. ३७, ६–२५)। श्रीराम ने इन्हें नगर के बीच के मोर्चे पर नियुक्त किया (६. ३७, ३२)। श्रीराम ने सेनापतियों की नियुक्ति का इनसे वर्णन किया (६. ३७, ३६)। श्रीराम ने इनका अभिषेक करने की प्रतिज्ञा की (६. ४१, ७)। श्रीराम की आज्ञा से इन्होंने लङ्का के प्रत्येक द्वार पर एक-एक करोड़ वानरों को नियुक्त कर दिया

(६. ४१, ४३)। 'धर्मात्मा राक्षसश्रेष्ठः संप्राप्तोऽयं विभीषणः। लङ्कैश्वर्यमिदं श्रीमान्ध्रुवं प्राप्नोत्यकण्टकम् ॥', (६. ४१. ६८)। अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर ये भी श्रीराम के पास खड़े हुये (६. ४२, ३०)। इन्होंने शत्रुघ्न नामक राक्षस के साथ द्वन्द्व युद्ध किया (६. ४३, ८)। ये भी उस स्थान पर आये जहाँ श्रीराम और लक्ष्मण मूर्छित थे और उन लोगों को देखकर व्यथित हो उठे (६. ४६, २–७)। इन्होंने माया के प्रभाव से इन्द्रजित् को देख लिया (६. ४६, ९–११)। श्रीराम और लक्ष्मण को वाणों से व्याप्त देखकर जब सुग्रीव चिन्तित हुये तो इन्होंने उन्हें सान्त्वना दी (६. ४६, ३०–४४)। इन्होंने पलायनशील वानर सेना को सान्त्वना दी (६. ४६, ४५)। मूर्च्छित लक्ष्मण के लिये विलाप करते हुये श्रीराम ने कहा कि वे विभीषण को राक्षसों का राजा नहीं बना सके (६. ४९, २३)। इन्हें हाथ में गदा लिये हुये देखकर जब इन्हें ही इन्द्रजित् समझ वानर भागने लगे तो जाम्ववान् ने वानरों को सान्त्वना दी (६. ५०, ७–१२)। श्रीराम और लक्ष्मण के शरीर को वाणों से व्याप्त देखकर ये विलाप करने लगे (६. ५०, १३–१९)। सुग्रीव ने इन्हें सान्त्वना दी (६. ५०, २०)। इन्होंने श्रीराम को प्रहस्त का परिचय दिया (६. ५८, ३–४)। इन्होंने श्रीराम को कुम्भकर्ण का परिचय दिया (६. ६१, ४–३३)। 'तदिदं मामनुप्राप्तं विभीषणवचः शुभम्। यदज्ञानान्मया तस्य न ग्रहीतं महात्मनः ॥', (६. ६८, २१)। विभीषणवचस्तावत्कुम्भकर्णप्रहस्तयोः। विनाशोऽयं समुत्पन्नो मां व्रीडयति दारुणः" (६. ६८, २२)। 'तस्यायं कर्मणः प्राप्तो विपाको मम शोकदः। यन्मया धार्मिकः श्रीमान्स निरस्तो विभीषणः ॥', (६. ६८, २३)। जब श्रीराम और लक्ष्मण मूर्च्छित हो गये तो इन्होंने वानरों को सान्त्वना दी (६. ७४, २–४)। ये हाथ में मशाल लेकर रणभूमि में विचरने लगे (६. ७४, ७)। इन्होंने वानरों को युद्धभूमि में आहत पड़े देखा (६. ७४, ११)। आहत जाम्बवान् के पास जाकर इन्होंने उनका कुशल समाचार पूछा (६. ७४, १५–२१)। 'हर्युत्तमेभ्यः शिरसाभिवाद्य विभीषणं तत्र च सस्वजे सः ; (६. ७४, ६८)। इन्होंने श्रीराम को इन्द्रजित् की माया का रहस्य बताकर सीता के जीवित होने का विश्वास दिलाया और लक्ष्मण को सेना सहित निकुम्भिला के मन्दिर में भेजने का अनुरोध किया (६. ८४)। इनके अनुरोध पर श्रीराम ने लक्ष्मण को इन्द्रिजित् के वध के लिये जाने की आज्ञा दी (६. ८५, १–२४)। इन्होंने लक्ष्मण के हित के लिये इन्द्रजित् के हवन-कर्म की समाप्ति के पूर्व ही उस पर आक्रमण करने का परामर्श दिया जिसके अनुसार ही लक्ष्मण ने वाण-वर्षा आरम्भ की (६, ८६, १–६)।

इन्होंने इन्द्रजित् के साथ रोणपूर्ण वार्तालाप किया (६. ८७)। 'विभीषणवचः श्रुत्वा रावणिः क्रोधमूर्च्छितः। अब्रवीत्परुषं वाक्यं क्रोगेनाभ्युत्पपात च ॥', (४. ८८, १। इन्होंने लक्ष्मण को इन्द्रजित् के वध के लिये शीघ्रता करने का परामर्श किया (६. ८८, ४०–४१)। इन्होंने राक्षसों से युद्ध और वानर यूथपतियों को प्रोत्साहित् किया (६. ८९, १–१९)। इन्होंने भी इन्द्रजित् का वध कर देने पर लक्ष्मण का अभिनन्दन किया (६. ९०, ९१)। लक्ष्मण इनका सहारा लेकर इन्द्रजित् के वध का समाचार देने के लिये श्रीराम के के पास आये (६. ९१, ३)। लक्ष्मण ने इनके पराक्रम की श्रीराम से सराहना की (६. ९१, १५)। सुषेण ने इनकी चिकित्सा की जिससे ग्रे स्वस्थ हो गये (६. ९१, २५. २७)। 'विभीषणसहायेन मिषतां नो महाद्युतिः' '(६. ९२, २)। 'धर्मार्थसहितं वाक्यं सर्वेषां रक्षसां हितम्। युक्तं विभीषणेनोक्तं मोहात्तस्य न रोचते ॥ विभीषणवचः कुर्याद्यदि स्म धनदानुजः।" (६. ९४, १९–२०)। इन्होंने अपनी गदा से रावण के आश्वों को मार गिराया (६. १००, १७)। रावण ने इनके वध के लिये एक प्रज्वलित शक्ति चलाया (६. १००, १९)। रावण के विरुद्ध युद्ध में लक्ष्मण ने इनकी रक्षा की (६. १००, २४–२५)। रावण वध पर जब ये विलाप करने लगे तब श्रीराम ने इन्हें समझाकर रावण का अन्त्येष्टि-संस्कार करने का ।आदेश दिया (६. १०९)। मन्दोदरी ने कहा कि इनका कथन युक्ति और प्रयोजन से पूर्ण था (६. १११, ७६)। "श्रीराम ने इन्हें स्त्रियों को धैर्य बँधाने तथा रावण का दाह-संस्कार करने का आदेश दिया। उस समय श्रीराम का मनोरथ जानने के लिये इन्होंने कुछ संकोच प्रकट किया। परन्तु जब श्रीराम ने मृत्यु के साथ ही वैर के अन्त का उपदेश देकर रावण के पराक्रम की चर्चा करते हुये उसके दाह-संस्कार का आदेश दिया तब इन्होंने विधिवत् रावण का संस्कार किया (६. १११, ९२–१२२)।" श्रीराम ने लक्ष्मण को इनका राज्याभिषेक कराने का आदेश दिया जिस पर लक्ष्मण ने इनका अभिषेक सम्पन्न कराया। इन्हें राज्य पर अभिषिक्त हुआ देखकर श्रीराम आदि सब अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. ११२, ९–१७)। अपने राज्य को पाकर इन्होंने प्रजा को सान्त्वना दी और उसके पश्चात् श्रीराम के पास आये (६. ११२, १७)। इन्होंने श्रीराम और लक्ष्मण को माङ्गलिक वस्तुयें भेंट कीं जिसे उन लोगों ने ग्रहण किया (६. ११२, १९–२०)। श्रीराम ने हनुमान् को इनकी आज्ञा लेकर सीता का कुशल समाचार पूछने के लिये प्रस्थान करने का आदेश दिया (६. ११२, २२)। हनुमान् ने सीता को बताया कि इनकी सहायता से श्रीराम आदि ने रावण का वध कर दिया (६. ११३, ८)।

श्रीराम ने सीता को ले आने के लिये इन्हें आदेश दिया जिसका पालन करते हुये ये सीता को श्रीराम के पास लाये (६. ११४, ६–१६)। श्रीराम की आज्ञा सुनकर इन्होंने तत्काल ही अन्य लोगों को वहाँ से हटाना प्रारम्भ किया (६. ११४, २०)। श्रीराम ने इन्हें इसका निषेध किया (६. ११४, २५) । ये सीता के पीछे-पीछे श्रीराम के पास आये (६. ११४, ३४)। सीता का तिरस्कार करते हुये श्रीराम ने उनसे इच्छानुसार विभीषण के पास भी रहने के लिये कहा (६. ११५, २३)। "इन्होंने प्रातःकाल जब स्नान आदि के लिये जल अङ्गराग तथा वस्त्राभूषण आदि श्रीराम की सेवा में समर्पित किया तो उन्हें अस्वीकार करते हुए श्रीराम ने अयोध्या लौटने की व्यवस्था करने के लिये इन्हें आदेश दिया। उस समय इन्होंने श्रीराम से कुछ दिन और लङ्का में रहकर अपना अतिथ्य ग्रहण करने के लिये कहा परन्तु जब श्रीराम रुकने के लिये प्रस्तुत नहीं हुये तो इन्होंने उनकी यात्रा के लिये पुष्पक विमान मँगाया (६. १२१ १–२३)।" श्रीराम की आज्ञा से इन्होंने वानरों का विशेष सत्कार किया और उसके पश्चात् स्वयं भी पुष्पक विमान में बैठकर श्रीराम के साथ अयोध्या चलने के लिये प्रस्तुत हुये (६. १२२, १–२४)। अयोध्या लौटते समय श्रीराम ने सीता को वह स्थान दिखाया जहाँ ये उनसे मिले थे (६. १२३, २१–२३)। अयोध्यापुरी का दर्शन करके ये लोग उल्लसित हुये (६. १२३, ५५)। भरत ने श्रीराम की सहायता करने के लिये इन्हें धन्यवाद दिया (६. १२७, ४४)। जब भरत ने श्रीराम को समस्त राज्य सौंपा तो उस मार्मिक दृश्य को देखकर इनके नेत्रों से अश्रु छलक पड़े (६. १२७, ५४)। अयोध्या में इन्होंने स्नान किया (६. १२८, १४)। ये श्रीराम को चँवर डुलाने लगे (६. १२८, २९–६९)। श्रीराम का राज्याभिषेक देखने के पश्चात् ये लङ्का लौट गये। (६. १२८, ९०)। अनल, अनिल, हर और सम्पाति, ये चार निशाचर इनके मन्त्री थे (७, ५, ४४)। कैकसी ने इन्हें जन्म दिया (७. ९, ३४)। ये बचपन से ही धर्मात्मा थे (७. ९, ३८)। "ये सदा से धर्मात्मा थे। इन्होंने एक पांव पर खड़े होकर पाँच हजार वर्षो तक तपस्या की। तदनन्तर इन्होंने पुनः अपनी दोनों बाहें और मस्तक उठाकर और पाँच हजार वर्षों तक सूर्य की अराधना की (७, १०, ६–९)।" इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने इन्हें वर माँगने के लिये कहा (७. १०, २७–२८)। इन्होंने केवल यही वर माँगा कि बड़ी से बड़ी विपत्ति में पड़ने पर भी इनकी बुद्धि धर्म में ही लगी रहे (७. १०, २९–३३)। ब्रह्माने इन्हें मनोवांच्छित वर देते हुये अमरत्व भी प्रदान किया (७. १०, ३३–३५)। गन्धर्वराज महात्मा शैलूष की कन्या, सरमा, इनकी पत्नी थी (७. १२, २४)। रावण को अत्याचार से विरत करने के

लिये कुवेर ने जो दूत भेजा वह पहले इनसे ही मिला और इन्होंने उसे रावण से मिलाया (७. १३, १३–१४)। "जब रावण ने पुष्पक विमान पर से अपहृत स्त्रियों को उतारा तो इन्होंने उसे परस्त्री-हरण का दोष बताते हुये उपदेश दिया। इन्होंने कहा कि जहाँ वह (रावण) दूसरों की स्त्रियों का अपहरण कर रहा है वहीं मधु ने उसकी बहन, कुम्भीनसी, का अपहरण कर लिया। जब इन्होंने ने कुम्भीनसी का परिचय दिया तो रावण ने मधु पर आक्रमण करने के लिये मधुपुरी के लिये प्रस्थान किया। उस समय ये लङ्का में ही रह कर धर्म का आचरण करते रहे (७. २५, १७–३५)। इन्होंने श्रीराम से विदा ली (७. ४०, २८)। श्रीराम ने अपने अश्वमेध में इन्हें भी आमन्त्रित किया (७. ९१, ११)। श्रीराम के अश्वमेध यज्ञ के समय इन्होंने मुनियों के स्वागत-सत्कार का भार सँभाला (७. ९१, २९; ९२, ७)। "श्रीराम ने इन्हें आशीर्वाद देते हुये कहा कि जब तक संसार की प्रजा जीवन धारण करेगी, जब तक चन्द्रमा और सूर्य रहेंगे, तब तक ये इस संसार में रहेंगें। तदनन्तर श्रीराम ने इनसे विष्णु की आराधना करते रहने के लिये कहा। इन्होंने श्रीराम की आज्ञा को शिरोधार्य किया (७. १०८, २३–२९)।"

विमल, प्रजापति कृशश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ६)।

विमुख, दक्षिण दिशा के एक महर्षि का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये उपस्थित हुये (७. १, ३)।

विराध, एक राक्षस का नाम है जिसका श्रीराम ने वध किया (१. १, ४१)। श्रीराम द्वारा इसके वध का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन किया (१, ३, १७)। "यह पर्वत शिखर के समान ऊँचा, नरभक्षी, और भयंकर राक्षस था : 'गभीराक्षं महावक्त्रं विकटं विकटोदरम् । वीभत्सं विषमं दीर्घं विकृतं घोरदर्शनम् ॥ वसानं चर्मं वैयाघ्रं वसार्द्रं रुधिरोक्षितम् । त्रासनं सर्वभूतानां व्यादितास्यमिवान्तकम् ॥ त्रीन्सिहांश्चतुरो व्याघ्रान्द्वौ वृकौ पृषतान्दश । सविषाणं वसादिग्धं गजस्य च शिरो महत् ॥ अवसज्ज्यायसे शूले विनदन्तं महास्वनम् ॥' (३. २, ५–७)।" "इसने श्रीराम आदि पर आक्रमण किया और सीता को गोद में लेकर कुछ दूर जाकर खड़ा हो गया। तदनन्तर इसने अपना परिचय देते हुये कहा कि यह सीता को अपनी भार्या बनाकर राम और लक्ष्मण का रक्तपान करेगा (३. २, ८–१३)।" "श्रीराम ने सीता को इसके चंगुल में फँसा देखकर लक्ष्मण से चिन्ता व्यक्त की जिसपर लक्ष्मण ने राम को प्रोत्साहित करते हुये इसके वध का निश्चय किया (३. २, १४–२६)।" "अपना परिचय देते हुये इसने बताया कि यह जव नामक राक्षस का पुत्र है और इसकी माता

का नाम शतह्रदा है । इसने यह भी बताया कि ब्रह्मा के वरदान से यह अच्छेद्य और अभेद्य हो गया है जिससे कोई भी इसके शरीर को छिन्न-भिन्न नहीं कर सकेगा (३. ३, ५–७) ।" श्रीराम ने इस पर सात बाणों से प्रहार किया जिससे क्रुद्ध होकर इसने सीता को अलग रख दिया और दोनों भ्राताओं पर आक्रमण किया तथा अन्ततः अपने बल-पराक्रम से उन लोगों को अपने कन्धे पर बैठाकर वन के भीतर चला गया (३. ३, ११–२६) । जब यह श्रीराम और लक्ष्मण को उठा ले गया तब सीता ने विलाप करते हुये इससे राम और लक्ष्मण को मुक्त कर देने का निवेदन किया । (३. ४, १–३) । "सीता का वचन सुनकर राम और लक्ष्मण ने क्रमशः इसकी एक-एक भुजायें तोड़ दीं और मुष्टि-प्रहार आदि से इसे आहत किया परन्तु इस पर भी इसकी मृत्यु नहीं हुई । उस समय श्रीराम ने लक्ष्मण को एक बड़ा गड्ढा खोदने का आदेश दिया जिससे इसे उसी में गाड़ दिया जाय, और स्वयं एक पैर से इसका गला दबाकर खड़े हो गये (३. ४, ५–१२) ।" "इसने श्रीराम से कहा : 'अब मैं आपको पहचान गया हूँ कि आप श्रीराम हैं और आपके साथ आपके अनुज लक्ष्मण तथा आपकी भार्या सीता हैं । मैं तुम्बुरु नामक गन्धर्व हुँ । एक दिन रम्भा नामक अप्सरा में आसक्त होने के कारण मैं समय से कुवेर की सभा में नहीं पहुँच सका जिस पर कुवेर ने मुझे राक्षस होने का शाप देकर यह भी कहा कि जब श्रीराम मेरा वध कर देंगे तभी मैं पुनः स्वर्गलोक प्राप्त कर लूँगा । अतः आज आपकी कृपा से मुझे उस भयंकर शाप से मुक्ति मिल गई (३. ४, १३–१९) ।" तदनन्तर शरभङ्ग मुनि का पता बताते हुये इसने राम को उनसे मिलने के लिये कहा और अपने शरीर को छोड़कर स्वर्ग चला गया (३. ४, २०–२३) । श्रीराम और लक्ष्मण ने इसे गड्ढे में गाड़ दिया (३. ४, २४–३३) । 'हत्वा तु तं भीमबलं विराधं राक्षसं वने', (३. ५, १) । 'विराधश्च हतः', (५. १६, ८) । 'विराधो दण्डकारण्ये येन राक्षसपुंगवः', (५. २६, १६) । 'विराधं प्रेक्ष्य राक्षसाम्', (६. ९४, १३) । अयोध्या लौटते समय श्रीराम ने सीता को वह स्थल दिखाया जहाँ उन्होंने विराध का वध किया था (६. १२३, ४९) ।

विरुच, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित कर दिया (१. २८, ७) ।

१. विरूपाक्ष, एक दिग्गज का नाम है जिसको पृथिवी को खोदते समय सगर-पुत्रों ने पृथिवी को धारण किये हुये देखा था (१. ४०, १३–१४) । जिस समय यह थक कर विश्राम के लिये अपने मस्तक को इधर-उधर हटाता है उस समय भूकम्प होने लगता है (१. ४०, १५) । पूर्व दिशा के रक्षक

इस विशाल गजराज की प्रदक्षिणा करके सगर-पुत्र रसातल का भेदन करते हुए आगे बढ़े (१. ४०, १६)।

२. विरूपाक्ष, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् गये (५. ६, १९)। रावण ने इसे हनुमान् को पकड़ने की आज्ञा दी (५. ४६, २)। यह हनुमान् से युद्ध करने के लिये गया (५. ४६, १५)। इसने हनुमान् पर आक्रमण किया (५. ४६, २७–२८)) हनुमान् ने इसका वध कर दिया (५. ४६, ३०)। यह विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर रावण के समीप उपस्थित हुआ (६. ९, ३)। 'राक्षसं तु विरूपाक्षं महावीर्यपराक्रमम् । मध्यमेऽस्थापयद्गुल्मे बहुभिः सह राक्षसैः ॥', (६. ३६, २०)। 'विरूपाक्षस्तु महता शूलमुद्गधनुष्मता । बलेन राक्षसैः सार्धं मध्यमं गुल्ममाश्रितः ॥', (६. ३७, १४)। लक्ष्मण ने इसके साथ युद्ध किया (६. ४३, १०)। लक्ष्मण ने इसका वध कर दिया (६. ४३, २६)। 'महोदरं प्रहस्तं च विरूपाक्षं च राक्षसम्', (७. १, ३२)। यह माल्यवान का पुत्र था (७. ५, ३६ ?)। जब रावण ने ब्रह्मा से वर प्राप्त कर लिया तो मारीच आदि के साथ यह भी रसातल से ऊपर उठा (७. ११, २)। देवों के विरुद्ध युद्ध में यह भी रावण के साथ गया (७. २७, २९)।

३ विरूपाक्ष, एक राक्षस का नाम है जिसे रावण ने युद्ध के लिए आज्ञा दी (६. ९५, ५–९)। रावण की आज्ञा पाकर यह रथ पर आरूढ़ हुआ (६. ९५, ३९)। इसने सुग्रीव से घोर युद्ध किया परन्तु अन्त में सुग्रीव ने इसका वध कर दिया (६. ९६, १४–३५)। इसके वध का समाचार सुनकर रावण क्रुद्ध हुआ (६. ९७, २)।

विरोचन की पुत्री, मन्थरा, समस्त पृथिवी का विनाश करना चाहती थी जिससे इन्द्र ने उसका वध कर दिया (१. २५, २०)। इनके पुत्र का नाम बलि था जिसने इन्द्र और मरुद्गणों सहित समस्त देवों को पराजित करके उनके राज्य पर अधिकार कर लिया था (१. २९, ४. १९)।

विवस्वान् कश्यप के पुत्र और वैवस्वत मनु के पिता का नाम है (१. ७०, २०; २. ११०, ६)। पन्द्रहवें प्रजापति का नाम है (३. १४, ९)।

विशल्या—'सञ्जीवकरणीं दिव्यां विशल्यां देवनिर्मिताम्', (६. ५०, ३०)। 'विशल्यकरणीं नाम्ना सावर्ण्यकरणीं तथा', (६. १०१, ३२)।

विशाख, स्थाणु (महादेव) का अनुसरण करनेवाले एक अग्निकुमार का नाम है : 'स्थाणुं देवमिवाचिन्त्यं कुमाराविव पावकी', (१. २२, ९)।

१. विशाल, इक्ष्वाकु के पुत्र का नाम है जो अलम्बुषा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे (१. ४७, ११)। इनके पुत्र का नाम हेमचन्द्र था (१. ४७, १२):

२. विशाल, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने आग लगा दी (५. ५४, १४))

विशाला, गंगा के तट पर स्थित एक पुरी का नाम है जो अपनी सुन्दर शोभा से स्वर्ग के समान प्रतीत होती थी। इसकी ओर प्रस्थान करते हुये राम-लक्ष्मण ने विश्वामित्र से इसका प्राचीन इतिहास पूछा (१. ४५. ९–१२)। विश्वामित्र ने इसके प्राचीन इतिहास का वर्णन किया (१. ४५, १३–४५)। इक्ष्वाकुपुत्र विशाल ने इसकी स्थापना की थी (१. ४७, १२)। इस नगरी के राजवंश के सभी नरेश दीर्घायु, महात्मा, पराक्रमी और परम धार्मिक हुये थे (१. ४७, १८)।

विश्रवा, एक मुनि का नाम है जो रावण के पिता थे (३. १७, २२)। ये पुलस्त्य के मानस पुत्र थे (५. २३, ७)। "राजर्षि तृणविन्दु की कन्या की सेवा से प्रसन्न होकर महर्षि पुलस्त्य ने कहा : 'मैं तुम्हारे गुणों से प्रसन्न हूँ, अतः आज मैं तुम्हें अपने समान पुत्र प्रदान करता हूँ जो पौलस्त्य के नाम से विख्यात होगा। मैं यहाँ वेद का स्वाध्याय कर रहा था, उस समय तुमने आकर उसका विशेष रूप से श्रवण किया इसलिये तुम्हारा वह पुत्र 'विश्रवा', या 'वैश्रवण' भी कहलायेगा। (७. २, ३०–३२)।" ये वेद के विद्वान, समदर्शी, तथा व्रत और आचार का पालन करनेवाले थे (७. २, ३४)। "थोड़े समय में ये पिता की भाँति तपस्या में संलग्न हो गये। इनके उत्तम आचरण को जानकर भरद्वाज ने अपनी कन्या का इनके साथ विवाह कर दिया। तदनन्तर इन्होंने उस कन्या से एक पुत्र उत्पन्न किया जिसे इनके पिता ने 'वैश्रवण' के नाम से विख्यात होने का आशीर्वाद दिया (७. ३, १–८)।" अपने पुत्र, वैश्रवण (कुवेर), के पूछने पर इन्होंने उन्हें विश्वकर्मा द्वारा निर्मित लंका नगरी को आवास बनाने का परामर्श दिया (७. ३, २४–३१)। श्रीराम ने अगस्त्य से पूछा कि जब राक्षस-कुल की उत्पत्ति विश्रवा से मानी जाती है तो विश्रवा के पूर्व भी लङ्का में निवास करने वाले राक्षसों की उत्पत्ति कैसे हुई ? (७. ४, १)। "श्रीराम की जिज्ञासा शान्त करते हुये महर्षि अगस्त्य ने विश्रवा के पूर्व और पश्चात् के राक्षस-वंश का वर्णन करते हुये कहा कि कमल से प्रगट होने के पश्चात् ब्रह्मा ने समुद्र-गत जल की सृष्टि करके उसकी रक्षा के लिये जीवों को उत्पन्न किया। वे सब जन्तु भूखे प्यासे थे और उनमें से कुछ ने कहा कि वे जल की रक्षा और अन्य ने कहा कि वे उसका यक्षण करेंगें। जिन लोगों ने यक्षण करने की बात कही वे 'यक्ष' और जिन्होंने रक्षण की बात कही वे 'राक्षस' कहलाये। इन्हीं राक्षसों से आदि राक्षस-वंश का आरम्भ हुआ (७. ४, ९–१३)। तदनन्तर अगस्त्य ने राक्षस-वंश का इस प्रकार वर्णन किया" (७. ४–९):

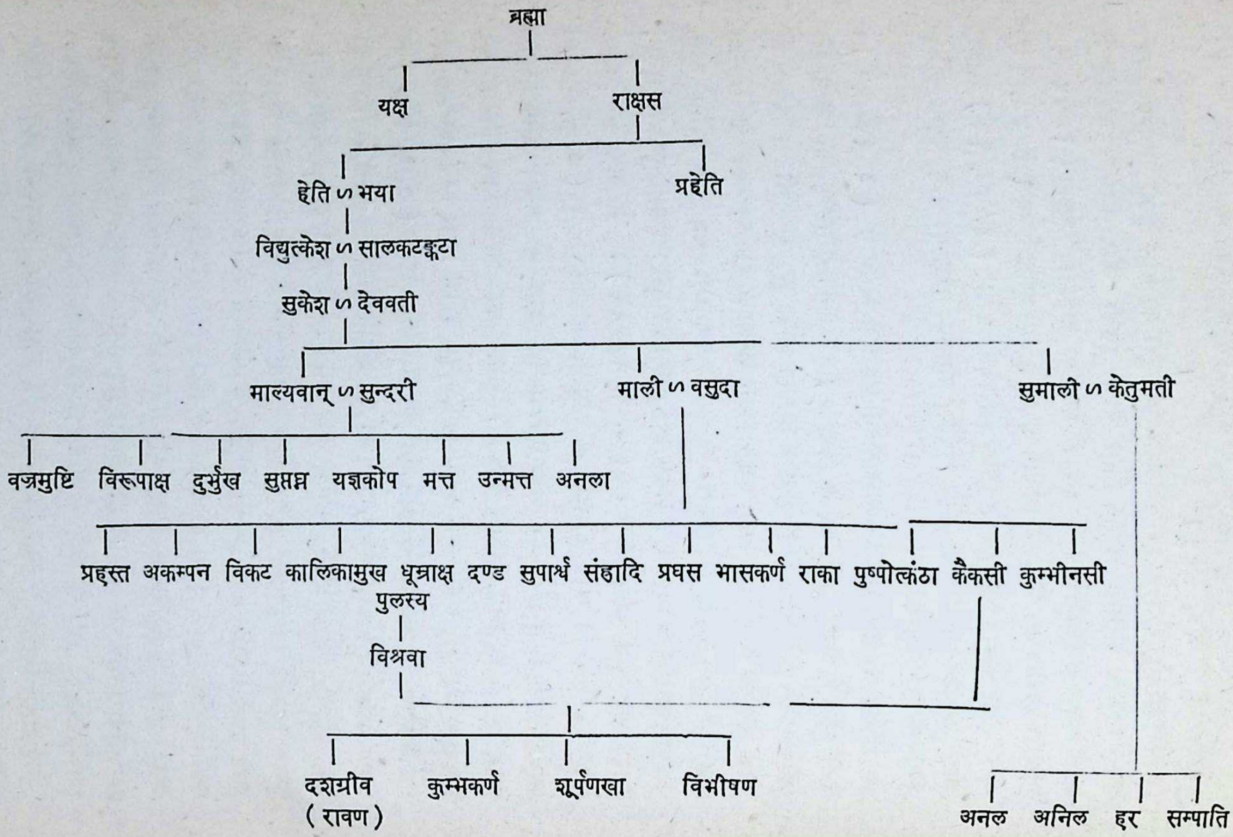
ब्रह्मा
यक्ष
राक्षस
हेति ᔕ भया
प्रहेति
विद्युत्केश ᔕ सालकटङ्कटा
सुकेश ᔕ देववती
माल्यवान् ᔕ सुन्दरी
माली ᔕ वसुदा
सुमाली ᔕ केतुमती
वज्रमुष्टि
विरूपाक्ष
दुर्मुख
सुप्तघ्न
यज्ञकोप
मत्त
उन्मत्त
अनला
प्रहस्त
अकम्पन
विकट
कालिकामुख
धूम्राक्ष
दण्ड
सुपार्श्व
संह्रादि
प्रघस
भासकर्ण
राका
पुष्पोत्कंठा
कैकसी
कुम्भीनसी
पुलस्य
विश्रवा
दशग्रीव
(रावण)
कुम्भकर्ण
शूर्पणखा
विभीषण
अनल
अनिल
हर
सम्पाति

"कुछ काल के बाद जब सुमाली अपनी पुत्री, कैकसी, को लेकर भूतल पर विचरण कर रहा था तो उसने इनका (विश्रवा का) दर्शन करके अपनी पुत्री को इनका ही वरण करने का आदेश दिया। पिता के आदेश पर जब कैकसी इनके समक्ष उपस्थित हुई तो इन्होंने उसका अभिप्राय समझ कर उससे कहा : 'तुम इस दारुण वेला में मेरे पास आई हो अतः तुम क्रूर स्वभाववाले पुत्रों को जन्म दोगी।' इनका यह वचन सुनकर जब कैकसी ने श्रेष्ठ पुत्रों की याचना की तो इन्होंने कहा कि उसका सबसे छोटा पुत्र श्रेष्ठ होगा। (७. ९, ११–२५)।" जब इनके पुत्र, कुवेर (वैश्रवण), ने इनको रावण का संदेश बताया तो इन्होंने उन्हें (कुवेर को) लङ्का छोड़कर कैलास पर्वत पर चले जाने का परामर्श दिया (७. ११, ३७–४५)। रावण ने मयासुर को अपना परिचय देते हुये अपने को इनका पुत्र बताया (७. १२, १५)। रावण को इनसे क्रूर प्रकृति का होने का शाप मिला था जिससे मयासुर भी परिचित था (७, १२, २०)।

विश्वकर्मा—इन्होंने नल नामक वानर को जन्म दिया (१. १७, १२)। इनका अत्यन्त दारुण अस्त्र विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित कर दिया (१. २७, १९)। भरद्वाज मुनि ने भरत का सत्कार करने के लिये इनका आवाहन किया (२. ९१, १२)। भरत की सेना ने इनका निर्माण-कौशल देखा (२. ९१, २८–३५)। इनका बनाया हुआ विनतानन्दन गरुड का सुन्दर, नाना प्रकार के रत्नों से विभूषित, तथा कैलास पर्वत के समान उज्ज्वल एवं विशाल भवन शाल्मली द्वीप के निकट स्थित था (४. ४०, ३८)। इन्होंने चक्रवान् नामक पर्वत पर सहस्रार चक्र का निर्माण किया था (४. ४२, २५)। इन्होंने लङ्कापुरी का निर्माण किया था (५. २, २०)। इन्होंने पुष्पक विमान का निर्माण किया था (५. ९, ११. १५)। अशोकवाटिका में इनके द्वारा निर्मित बड़े-बड़े भवन सुशोभित हो रहे थे (५. १४, ३४)। नल इनके पुत्र थे (६. २२, ४४–५०)। माल्यवान् आदि राक्षसों ने जब इनसे अपने लिये भवन-निर्माण के लिये कहा तो इन्होंने उन सब को अपने द्वारा ही निर्मित दक्षिण समुद्र में स्थित लङ्का में जाने के लिये कहा (७. ५, १९–२९)।

विश्वाची, एक अप्सरा का नाम है जिसका भरद्वाज मुनि ने भरत का आतिथ्य-सत्कार करने के लिये आवाहन किया था (२. ९१, १७)।

विश्वामित्र के साथ जाकर श्रीराम और लक्ष्मण ने जो-जो पराक्रम किये, नाना प्रकार की जो लीलायें तथा अद्भुद् बातें घटित हुईं उन सबका वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, ११)। एक दिन जब राजा दशरथ अपने

पुत्रों के विवाह के विषय में विचार कर रहे थे तब ये उनके पास आये (१. १८, ३८–४३)। ये कठोर व्रत का पालन करनेवाले तपस्वी और अपने तेज से प्रज्ज्वलित हो रहे थे (१. १८, ४४)। कुशल समाचार पूछने के पश्चात् दशरथ ने इनके आगमन का प्रयोजन पूछा (१. १८, ४५–६०)। इन्होंने मारीच और सुबाहु नामक दो राक्षसों का उल्लेख करते हुए उनके वध के लिये दशरथ से श्रीराम को माँगा (१. १९, १–१९)। इनका वचन दशरथ का हृदय विदीर्ण करने वाला था (१. १९, २०–२२)। दशरथ ने पहले इन्हें अपना पुत्र देना अस्वीकार किया जिस पर ये अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे (१, २०; २१, १–३)। इनके कुपित होते ही समस्त पृथिवी काँप उठी और देवताओं के मन में भी महान् भय समा गया (१. २१, ४)। वसिष्ठ ने दशरथ से इनकी विभिन्न प्रकार से प्रशंसा करते हुये, श्रीराम को इनके साथ भेज देने के लिये कहा (१. २१, ८–२१)। वसिष्ठ के वचन को सुनकर दशरथ को श्रीराम को महर्षि विश्वामित्र के साथ भेज देना रुचिकर लगा (१. २१, २२)। "दशरथ ने स्वस्तिवाचन-पूर्वक राम-लक्ष्मण को इनके साथ भेज दिया। मार्ग में राम ने इनसे बला और अतिबला नामक विद्यायें, जिनका अभ्यास कर लेने से भूख-प्यास का कष्ट नहीं होता, ग्रहण कीं (१. २२, १–२१)।" श्रीराम ने इनकी समस्त गुरुजनोचित सेवायें करके सरयू के तट पर इनके स्नेह से युक्त हो निवास किया (१. २२, २२–२३) "राम और लक्ष्मण को इन्होंने गंगा-सरयू संगम के समीप स्थित एक पुण्य आश्रम का परिचय दिया तथा उस आश्रम के निवासी मुनियों ने अपनी दूरदृष्टि से इनका आगमन जानकर इनको अर्घ्य, पाद्य और अतिथि-सत्कार की सामग्री अर्पित की। विश्वामित्र ने उस आश्रम में मनोहर कथाओं द्वारा राम और लक्ष्मण का मनोरञ्जन करते हुये सुखपूर्वक निवास किया (१. २३)।" "श्रीराम और लक्ष्मण द्वारा गंगा पार होते समय जल में उठती हुई तुमुल ध्वनि के विषय में प्रश्न करने पर इन्होंने उन्हें इसका कारण बताया तथा मलद, करूष और ताटका वन का परिचय देते हुये ताटका वध के लिये श्रीराम को आज्ञा दी (१. २४)।" श्रीराम के पूछने पर इन्होंने ताटका की उत्पत्ति, विवाह और शाप आदि का प्रसङ्ग सुनाकर उन्हें ताटका-वध के लिये प्रेरित किया (१. २५)। दशरथ ने श्रीराम को इनकी आज्ञा का पालन करने का उपदेश दिया था जिससे श्रीराम इन ब्रह्मवादी महर्षि की आज्ञा से ताटका वध के लिये उद्यत हुये (१. २६, ३–४)। इन्होंने ताटका को अपनी हुंकार से डाँटते हुये राम और लक्ष्मण के कल्याण तथा विजय की कामना की (१. २६, १४)। इन गाधिपुत्र ने संध्याकाल के पूर्व ही ताटका का वध कर देने क

श्रीराम को अनुमति दी, क्योंकि संन्ध्याकाल में राक्षस दुर्जय हो जाते हैं (१ २६ २०–२२)। ताटका-वध से प्रसन्न होकर इन्द्र आदि देवताओं ने इनकी प्रशंसा करते हुये श्रीराम को अस्त्रदान करने के लिये कहा (१. २६, २७–३१)। इन्होंने राम के साथ ताटकावन में रात्रि व्यतीत की (१. २६, ३२–३६)। इन्होंने श्रीराम को त्रिशूल, ब्रह्मास्त्र, वरुणपाश आदि दिव्यास्त्रों का दान किया (१. २७)। "इन्होंने श्रीराम को अस्त्रों की संहार-विधि बताया और अन्यान्य अस्त्रों का उपदेश किया। श्रीराम ने इनसे एक आश्रम और यज्ञ-स्थान के विषय में प्रश्न पूछा (१. २८)।" इन्होंने श्रीराम से सिद्धाश्रम का पूर्ववृत्तान्त बताया और राम-लक्ष्मण के साथ अपने आश्रम पर पहुँचकर उनसे पूजित हुये (१. २९)। श्रीराम ने इनके यज्ञ की रक्षा और राक्षसों का विनाश किया (१. ३०)। "इन्होंने राम और लक्ष्मण सहित मिथिला को प्रस्थान किया। मार्ग में संध्या के समय सब ने शोणभद्रतट पर विश्राम किया (१. ३१)।" इन्होंने श्रीराम से ब्रह्मापुत्र कुश के चार पुत्रों का वर्णन किया; शोणभद्रतटवर्ती प्रदेश को वसु की भूमि बताया; और कुशनाभ की सौ कन्याओं का वायु के कोप से कुब्जा होने का प्रसङ्ग सुनाया (१. ३२) इन्होंने अपने वंश की कथा का वर्णन करने के पश्चात् अर्धरात्रि का वर्णन करके सबको शयन करने का आदेश दिया (१. ३४)। "ये शोणभद्र पार करके गंगातट पर पहुँचे। वहाँ रात्रिवास करते हुये इन्होंने श्रीराम के पूछने पर गंगा की उत्पत्ति की कथा सुनाया (१. ३५)।" "इन्होंने गिरिराज हिमवान् की छोटी पुत्री उमा का विस्तृत वृत्तान्त बताते हुये देवताओं का उमा और शिव को सुरतिक्रीड़ा से निवृत्त करने, तथा उमा द्वारा देवताओं और पृथिवी को शाप प्राप्त होने का वर्णन किया (१. ३६)।" इन्होंने राजा सगर की उत्पत्ति आदि का श्रीराम से वर्णन किया (१. ३८)। राम के पूछने पर इन्होंने इन्द्र के द्वारा सगर के यज्ञाश्व के अपहरण, सगर-पुत्रों द्वारा समस्त पृथिवी के भेदन, और देवताओं के ब्रह्मा से यह सब समाचार बताने का वर्णन किया (१. ३९)। "इन्होंने श्रीराम को सगर-पुत्रों के भावी विनाश की सूचना देकर ब्रह्मा द्वारा देवताओं को शान्त करने, सगर के पुत्रों के पृथिवी को खोदते हुये कपिल के पास पहुँचने और उनके रोष से जलकर भस्म हो जाने आदि का विवरण सुनाया (१. ४०)।" इन्होंने श्रीराम को सगर की आज्ञा से अंशुमान् द्वारा रसातल में जाकर यज्ञाश्व को ले आने और अपने चाचाओं के निधन का समाचार सुनाने के वृत्तान्त को बताया (१. ४१)। इन्होंने श्रीराम को अंशुमान् और भगीरथ की तपस्या, तथा ब्रह्मा द्वारा भगीरथ को अभीष्ट वर देकर गंगा को धारण करने के लिये भगवान् शंकर को राजी करने के निमित्त प्रयत्न करने

के परामर्श की कथा सुनाया (१. ४२)। इन्होंने श्रीराम को भगीरथ की तपस्या से संतुष्ट हुये भगवान् शंकर का गंगा को अपने सर पर धारण करके विन्दु सरोवर में छोड़ने और गङ्गा का सात धाराओं मे विभक्त हो भगीरथ के साथ जाकर उनके पितरों का उद्धार करने की घटनाओं से अवगत कराया (१. ४३)। इन्होंने राम से ब्रह्मा द्वारा भगीरथ की प्रशंसा करते हुये उन्हें गंगाजल से पितरों के तर्पण की आज्ञा देने, राजा द्वारा वह समस्त कार्य पूर्ण करके अपने नगर को जाने तथा गङ्गावतरण के उपाख्यान की महिमा की कथा का वर्णन किया (१. ४४)। देवताओं और दैत्यों द्वारा क्षीर-समुद्र मन्थन, भगवान् रुद्र द्वारा हलाहल विष का पान, भगवान् विष्णु के सहयोग से मन्दराचल का पाताल से उद्धार और उसके द्वारा मन्थन, धन्वन्तरि, अप्सरा, वारुणी, उच्चैःश्रवा, कौस्तुभ तथा अमृत की उत्पत्ति और देवासुर-संग्राम में दैत्यों के संहार की कथा को इन्होंने श्रीराम को सुनाया (१. ४५)। विशाला के समीप इनके आगमन का समाचार सुनकर राजा सुमति स्वयं इनके स्वागत के लिये उपस्थित हुये (१. ४५, २०)। इन्होंने सुमति को श्रीराम और लक्ष्मण का परिचय दिया (१. ४८, ७)। श्रीराम के पूछने पर इन्होंने गौतम के आश्रम तथा अहल्या के शापग्रस्त होने की कथा सुनाया (१. ४८, ११–३४)। इन्होंने गौतम के शाप द्वारा इन्द्र के अण्डकोश-रहित होने, पितृ देवताओं द्वारा उन्हें भेड़े का अण्डकोश लगाने आदि की कथा का श्रीराम से वर्णन किया (१. ४९, १–१३)। ये राम और लक्ष्मण को साथ लेकर मिथिला-नरेश के यज्ञमण्डप में पहुंचे (१. ५०, १)। राजा जनक ने इनका स्वागत करते हुये इन्हें अर्घ्य समर्पित किया (१. ५०, ७)। जनक ने इन्हें मुनीश्वरों के साथ उत्तम आसन पर विराजमान होने के लिये कहा (१. ५०, १०)। जनक ने इनसे मिथिला में रुककर यज्ञ में पधारनेवाले देवताओं का दर्शन करने के लिये कहा (१. ५०, १२–१५)। जनक के पूछने पर इन्होंने राम और लक्ष्मण का परिचय देते हुये दोनों के सिद्धाश्रम में निवास, राक्षसों के वध, विशाला के दर्शन, अहल्या के साक्षात्कार आदि का वर्णन किया (१. ५०, २२–२५)। महर्षि वसिष्ठ ने इनका सत्कार करते हुये कामधेनु को अभीष्ट वस्तुओं की सृष्टि करने का आदेश दिया (१. ५२)। उत्तम अन्नपान द्वारा सेना सहित तृप्त होकर इन्होंने वसिष्ठ से उनकी कामधेनु को माँगा परन्तु वसिष्ठ ने अस्वीकार कर दिया (१. ५३)। इन्होंने वसिष्ठ की गाय को बलपूर्वक ले जाने का प्रयास किया (१. ५४, १–२)। इन्होंने वसिष्ठ की गाय, कामधेनु, द्वारा उत्पन्न सैनिकों को सर्वथा नष्ट कर दिया (१. ५४, १९–२३)। वसिष्ठ द्वारा अपनी सेना तथा सौ पुत्रों का संहार हुआ देखकर ये अत्यन्त खिन्न हुये

और अपने एक मात्र बचे हुये पुत्र को राज्य देकर हिमालय पर्वत पर तपस्या करने के लिये चले गये (१. ५५, ६–१२)। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर जब महादेव ने इनसे वर माँगने के लिये कहा तो इन्होंने महादेव से विविध प्रकार के अस्त्रों की याचना की (१. ५५, १३–१८)। तदनन्तर ये वसिष्ठ के आश्रम पर आकर विविध प्रकार के अस्त्रों का प्रयोग करने लगे जिससे वह आश्रम जन-शून्य हो गया (१. ५५, २१–२४)। इन्होंने वसिष्ठ पर मानव, मोहन, गान्धर्व, स्वापन, जृम्भण, मादन, सन्तापन, विलापन, शोषण, विदारण, सुदुर्जय वज्रास्त्र, ब्रह्मपाश, कालपाश, वारुणपाश, शुष्कार्द्र अशनि, दण्डास्त्र, पैशाचास्त्र, क्रौञ्चास्त्र, धर्मचक्र, कालचक्र, विष्णुचक्र, वायव्यास्त्र, मन्थनास्त्र, हयशिरा, शक्तिद्वय, कंकाल, मुसल, वैद्याधरास्त्र, कालास्त्र, त्रिशूलास्त्र, कापालास्त्र, कंकणास्त्र, ब्रह्मास्त्र आदि नाना प्रकार के दिव्यास्त्रों का प्रयोग किया, परन्तु जब वसिष्ठ ने अपने ब्रह्मदण्ड से उन सबका शमन कर दिया तब इन्होंने ब्राह्मणत्व की प्राप्ति के लिये तप करने का निश्चय किया (१. ५६)। इन्होंने वसिष्ठ से पराजित होने के पश्चात् दक्षिण दिशा में जाकर भयंकर तपस्या आरम्भ की और वहीं चार पुत्र उत्पन्न किये (१. ५७, १–३)। ब्रह्मा ने इन्हें राजर्षि माना (१. ५७. ५)। जब ब्रह्मा इन्हें राजर्षि कहकर अन्तर्धान हो गये तो ये पुनः घोर तपस्या करने लगे (१. ५७, ७–९)। इन्होंने त्रिशङ्कु का यज्ञ कराना स्वीकार कर लिया (१. ५८, १३–१६)। इन्होंने त्रिशङ्कु का यज्ञ पूर्ण करने का आश्वासन देते हुये ऋषि-मुनियों को आमन्त्रित किया और जिन्होंने इनके आमन्त्रण को स्वीकार नहीं किया उन्हें शाप देकर नष्ट कर दिया (१. ५९)। इन्होंने त्रिशङ्कु का यज्ञ सम्पन्न करके उन्हें सशरीर स्वर्ग भेजा किन्तु इन्द्र द्वारा उन्हें स्वर्ग से गिरा दिये जाने पर क्षुब्ध होकर इन्होंने एक नूतन देवसर्ग का निर्माण करने का निश्चय किया परन्तु देवताओं के अनुरोध से इस कार्य से विरत हुये (१. ६०)। इन्होंने पुष्कर तीर्थ में जाकर तपस्या की (१. ६१, १–४)। राजा अम्बरीष, ऋचीक के मध्यम पुत्र शुनःशेप को यज्ञाश्व बनाने के लिये खरीद कर इनके आश्रम के निकट आये और वहीं विश्राम करने लगे (१. ६२, १)। शुनःशेप ने इनसे अपनी रक्षा की याचना की जिससे द्रवित होकर इन्होंने शुनःशेप की रक्षा का सफल प्रयत्न किया और तदनन्तर एक सहस्र वर्ष तक घोर तपस्या की (१. ६२)। इन्होंने तपस्या से ऋषि एवं महर्षि पद की प्राप्ति की परन्तु मेनका द्वारा तपोभङ्ग हो जाने पर हिमवान् पर्वत पर जाकर ब्रह्मर्षि पद की प्राप्ति के लिये पुनः घोर तपस्या आरम्भ कर दी (१. ६३)। इन्होंने रम्भा को शाप देकर पुनः घोर तपस्या की दीक्षा ली (१. ६४)। "इन्होंने घोर तपस्या करके

ब्राह्मणत्व की प्राप्ति की। राजा जनक ने इनकी प्रशंसा की तथा इनकी आज्ञा से राजभवन लौटे (१. ६५)।" जनक ने राम और लक्ष्मण सहित इनका स्वागत करके अपने यहाँ रक्खे हुये धनुष का परिचय दिया और धनुष चढ़ा देने पर श्रीराम के साथ सीता के विवाह का निश्चय प्रगट किया (१. ६६)। "इनकी आज्ञा से राजा जनक ने वह दिव्य धनुष सभाभवन में मँगवाया। श्रीराम द्वारा धनुर्भङ्ग कर देने पर इन्होंने जनक को दशरथ को बुलाने के लिये मन्त्रियों को भेजने की आज्ञा दी (१. ६७; ६८, ८–१३. १५)। इन्होंने भरत और शत्रुघ्न के लिये कुशध्वज की कन्याओं का वरण किया जिसको जनक ने स्वीकार कर लिया (१. ७२, १–१६)। वसिष्ठ मुनि ने इनके सहयोग से श्रीराम आदि के विवाह के समय विवाह-मण्डप के मध्यभाग में विधिपूर्वक वेदी का निर्माण किया (१. ७३, १८)। श्रीराम आदि चारों भ्राताओं का विवाह-कार्य पूर्ण हो जाने पर ये जनक और दशरथ से अनुमति लेकर उत्तर-पर्वत पर चले गये (१. ७४, १–२)। 'ब्राह्मणोऽसीति पूज्यो मे विश्वामित्र कृतेन च' (१. ७६, ६)। 'विश्वामित्रेण सहितो यज्ञं द्रष्टुं समागतः', (२. ११८, ४४)। 'विश्वामित्रस्तु धर्मात्मा', (२. ११८, ४५)। मारीच ने इनके आश्रम की रक्षा करते समय श्रीराम के पराक्रम सम्बन्धी अपने अनुभवों को रावण से बताया (३. ३८, ३–१२)। "तारा ने लक्ष्मण को बताया कि विश्वामित्र ने घृताची नामक अप्सरा में आसक्त होने के कारण दस वर्ष के समय को एक दिन ही माना था। काल का ज्ञान रखनेवाले श्रेष्ठ और महातेजस्वी विश्वामित्र को भी जब भोगासक्त होने पर काल का ज्ञान नहीं रह गया तब फिर दूसरे साधारण प्राणियों को कैसे रह सकता है (४. ३५, ७–८)।" श्रीराम के अयोध्या लोटने पर अन्य सप्तर्षियों के साथ ये भी उनके अभिनन्दन के लिये उपस्थित हुये (७. १, ५)।

विश्वेदेव, देवों के एक वर्ग का नाम है जो मेरु पर्वत पर आकर सूर्यदेव का उपस्थान करते थे (४. ४२, ३९)। श्रीराम की सभा में शपथ-ग्रहण के समय अपनी शुद्धता प्रमाणित करने के लिये सीता ने इनका भी आवाहन किया (७. ९७, ८)।

विश्वावसु, एक देव-गन्धर्व का नाम है। भरद्वाज मुनि ने भरत का आतिथ्य-सत्कार करने के लिये इनका आवाहन किया था (२. ९१, १६)। 'विश्वावसुनिषेविते,' (५. १, १७८)।

विष्णु—गरुड़ पर आरूढ होकर ये भी दशरथ के यज्ञस्थल पर पधारे : 'एतस्मिन्नन्तरे विष्णुरुपयातो महाद्युतिः। शङ्खचक्रगदापाणिः पीतवासा जगत्पतिः॥ वैनतेयं समारुह्य भास्करस्तोयदं यथा।', (१. १५, १६)। देवों आदि की

स्तुति को सुनकर इन्होंने रावणवध का आश्वासन देते हुये मनुष्य रूप में जन्म लेने के सम्बन्ध में विचार किया (१. १५, २६–२९)। इन्होंने देवों से रावणवध का उपाय पूछा (१. १६, १–२)। राजा दशरथ को अपना पिता बनाने का निश्चय प्रगट करने के पश्चात् ये वहाँ से अन्तर्धान हो गये (१. १६, ८–१०)। इनके दशरथ के पुत्रभाव को प्राप्त हो जाने के पश्चात् ब्रह्मा ने देवताओं को इनकी सहायता के लिये वानररूपी सन्तान उत्पन्न करने का आदेश दिया (१. १७, १–४)। शुक्राचार्य की माता तथा भृगु की पत्नी त्रिभुवन को इन्द्र से शून्य कर देना चाहती थीं जिससे इन्होंने उनका वध कर दिया (१. २५, २१)। इन्होंने सिद्धाश्रम में बहुत समय तक तपस्या की (१. २९, २)। अग्नि आदि देवताओं ने बलि के यज्ञ में वामन रूप धारण करके जाने के लिये इनसे प्रार्थना की (१. २९, ६–९)। "ये अदिति के गर्भ से प्रगट हुये और वामन-रूप धारण करके बलि के पास गये। इन्होंने बलि से तीन पग भूमि की याचना करके तीनों लोकों को आक्रान्त कर लिया और पुनः त्रिलोकी को इन्द्र को लौटा दिया (१, २९, १९–२१)।" समुद्र-मन्थन से हलाहल के प्राप्त होने पर ये शङ्ख-चक्र धारण करके प्रगट हुये और उस हलाहल को भगवान् रुद्र का भाग बताकर अन्तर्धान हो गये (१. ४५, २२–२५)। इन्होंने (हृषीकेश) कच्छप का रूप धारण करके मन्दराचल को अपनी पीठ पर उठाया (१. ४५, २९)। परशुराम के पास जो वैष्णव धनुष था उसे पूर्वकाल में देवताओं ने विष्णु को दिया था (१. ७५, १२–१३)। 'विभुः श्रिया विष्णुरिवामरेश्वरः' '(१. ७७, ३०)। श्रीराम साक्षात् विष्णु थे जो परम प्रचण्ड रावण के वध की अभिलाषा रखनेवाले देवताओं की प्रार्थना पर मनुष्यलोक में अवतीर्ण हुये थे (२. १. ७)। 'साक्षाद्विष्णुरिव', (२. २, ४५)। कौसल्या ने पुत्र की मङ्गलकामना के लिये प्रातःकाल विष्णु की पूजा की (२. २०, १४)। कौसल्या ने कहा कि तीन पगों को बढ़ाते हुये अनुपम तेजस्वी विष्णु के लिये जो मङ्गलाशंसा की गई थी वही श्रीराम को भी प्राप्त हो (२. २५, ३५)। श्रीराम ने अगस्त्य के आश्रम पर इनके स्थान का दर्शन किया (३. १२, १७)। महर्षि अगस्त्य ने इनका धनुष श्रीराम को प्रदान किया (३. १२, ३२–३७)। लक्ष्मण ने श्रीराम को बताया कि जिस प्रकार भगवान् विष्णु ने बलि को बाँधकर यह पृथिवी प्राप्त कर ली थी उसी प्रकार वे भी मिथिलेशकुमारी सीता को प्राप्त कर लेंगे (३. ६१, २४)। वामनावतार के समय इन्होंने जहाँ-जहाँ अपने तीन पग रक्खे उन स्थानों का सम्पाति को ज्ञान था (४. ५८, १३)। इनके वज्र से किसी समय रावण की भुजायें क्षत-विक्षत हो चुकी थीं (५. १०, १६)। 'असुरेभ्यः श्रियं दीप्तां विष्णुस्त्रिभिरिव क्रमैः,' (५. २१. २८) इनके अचिन्तनीय अंश

से अपना चिन्तन करके लक्ष्मण स्वस्थ हो गये (६. ५९, १२२) सुकेश के पुत्रों से त्रस्त होकर देवगण इनकी शरण में आये (७. ६, १२–१८)। इन्होंने राक्षसों का निवाश करने का आश्वासन दिया (७. ६, १९–२१) । हिरण्यकशिपु आदि अनेक राक्षसों और दैत्यों का इन्होंने बध किया था (७. ६, ३४–३८)। 'विष्णोर्द्वेषस्य नास्त्येव कारण राक्षसेश्वर। देवानामेव विष्णोः प्रचलितं मनः ॥', (७ ६, ४३)। ये राक्षसों के साथ युद्ध करने के लिये गरुड़ पर आरूढ़ होकर आये (७. ६, ६२–६९)। इन्होंने माल्यवान् आदि राक्षसों की सेना का भीषण संहार किया (७. ७)। माल्यवान् ने इनके साथ युद्ध किया परन्तु पराजित होकर सुमाली आदि समस्त राक्षसों सहित रसातल में प्रवेश कर गया (७. ८)। रावण ने जब ब्रह्मा से वर प्राप्त कर लिया तो सुमाली आदि राक्षसों ने इनके भय को समाप्त समझा (७. ११, ५–६) । 'निहत्य तांस्तु समरे विष्णुना प्रभविष्णुना। देवानां वशमानीतं त्रैलोक्यमिदमव्यय ॥ ', (७. ११, १८)। जब रावण ने इन्द्रलोक पर आक्रमण किया तो इन्द्र इनकी शरण में आये। उस समय वरदान से रक्षित होने के कारण रावण-वध करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुये उचित समय पर रावण-वध करने का आश्वासन दिया (७. २७, ७–२०)।" "एक समय जब भृगुपत्नी ने दैत्यों को आश्रय दिया तो कुपित होकर इन्होंने अपने चक्र से उनका सर काट दिया। अपनी पत्नी का वध हुआ देखकर भृगु ने इन्हें शाप दिया कि इन्हें मनुष्य लोक में जन्म लेकर वर्षों तक पत्नी-वियोग का कष्ट सहन करना पड़ेगा। इस प्रकार शाप देकर भृगु को पश्चाताप हुआ और उन्होंने इन्हीं की अराधना की। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर इन्होंने उनका शाप ग्रहण किया। तदनन्तर इन्हीं विष्णु ने श्रीराम के रूप में मनुष्य लोक में अवतार लिया अतः यहाँ उन्हें पत्नि-वियोग कर कष्ट सहन करना पड़ा (७. ५१, १३–२१)।" 'एक एव प्रजानाति विष्णुस्तेजोमयं शरम्। एषा एव तनुः पूर्वा विष्णोस्तस्य महात्मनः ॥" (७. ६९, २८)। वृत्रासुर के भय का निवारण कराने के लिये जब इन्द्र सहित समस्त देवता इनकी शरण में आये तो इन्होंने वृत्र के साथ स्नेहबन्धन में वँधे होने के कारण स्वयं वृत्र-वध में असमर्थता प्रगट करते हुये अपने तेज का एक अंश इन्द्र में और एक अन्य उनके वज्र में प्रवेश कराकर इन्द्र को ही वृत्र का वध करने का आदेश दिया (७. ८५, ३–९)। वृत्र का वध हो जाने पर अग्नि आदि देवताओं ने इनकी स्तुति करते हुये इन्द्र को ब्रह्महत्या से मुक्त कराने का उपाय पूछा जिसपर इन्होंने इन्द्र को अपना (विष्णु का) ही यजन करने का परामर्श दिया (७. ८५, १९–२२)। ब्रह्मा का संदेश देते हुये, काल ने श्रीराम को वताया कि प्राणियों की रक्षा के लिये

विष्णु ही उनके रूप में प्रगट हुये हैं (७. १०४, ९)। लक्ष्मण इनके चतुर्थ अंश थे (७. १०६, १८)। जब श्रीराम सरयू के जल में प्रवेश करने के लिये आगे वढ़े तो ब्रह्मा ने कहा : 'विष्णुस्वरूप रघुन्दन ! आइये, आपका कल्याण हो' (७ ११०, ८)। ब्रह्मा की बात सुनकर भ्राताओं सहित श्रीराम ने सशरीर वैष्णवतेज में प्रवेश किया (७. ११०, १२)। 'अथ विष्णुर्महातेजाः पितामहमुवाच ह । एषां लोकं जनौघानां दातुमर्हसि सुव्रत ॥', (७. ११०, १६)। 'चच्छ्रुत्वा विष्णुवचनं ब्रह्मा लोकगुरुः प्रभुः । लोकान्संतानकान्नाम यास्यन्तीमेसमागताः ॥', (७. ११०, १८)। 'ततः प्रतिष्ठितो विष्णुः स्वर्गलोके यथा पुरा । येन व्याप्तमिदं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥', (७. १११, २)। 'यस्त्विदं रघुनाथस्य चरितं सकलं पठेत् । सोऽसुक्षये विष्णुलोकं गच्छत्येव न संशयः ॥', (७. १११, २१, गीता प्रेस संस्करण)। 'पिता पितामहस्तस्यतथैव प्रपितामहः । तत्पिता तत्पिता चैव विष्णुं यान्ति न संशयः ॥', (७. १११, २२ गीताप्रेस संस्करण)।

विहंगम, एक राक्षस का नाम है जो राम के विरुद्ध युद्ध के लिये खर के साथ आया (३. २३, ३२)। खर के साथ इसने श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, २६)। श्रीराम ने इसका वध कर दिया (३. २६, २९–३५)।

वीरबाहु, एक वानर प्रमुख का नाम है। किष्किन्धा पुरी की शोभा देखते हुये लक्ष्मण ने इनके भवन को देखा (४. ३३, १०)।

वृत्तिमान्, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसको विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ७)।

वृत्र, एक असुर का नाम है जिसका वध करने के पश्चात् देवराज इन्द्र मल से लिप्त हो गये थे। (१. २४, १८)। कौसल्या ने कहा कि वृत्रासुर का नाश करने के निमित्त सर्वदेववन्दित इन्द्र को जो मंगल प्राप्त हुआ था वही श्रीराम को भी प्राप्त हो (२. २५, ३२)। सुग्रीव ने श्रीराम को वताया कि जैसे वृत्रासुर का वध करने से इन्द्र पाप के भागी हुये थे उसी प्रकार वे भी अपने भ्राता, वालिन्, का वध कराकर पाप के भागी हुये हैं (४. २४, १३)। "लक्ष्मण ने अश्वमेध के माहात्म्य का वर्णन करते हुये श्रीराम को इन्द्र और वृत्रासुर की कथा सुनाया। उन्होंने कहा : पूर्वकाल में वृत्रासुर लोकों को संत्रस्त करने लगा। वृत्र के भय से पृथिवी उसके राज्य में बिना जोते-वोये ही अन्न उत्पन्न करती थी। कुछ काल के बाद जब वृत्र ने तपस्या आरम्भ की तब देवताओं सहित इन्द्र ने विष्णु की शरण में आकर वृत्र से रक्षा करने का अनुरोध किया (७. ८४, ४–१८)।" "श्रीराम के पूछने पर लक्ष्मण ने कहा : विष्णु ने अपने तेज का एक अंश इन्द्र में और एक उनके वज्र में प्रवेश

कराकर इन्द्र को वृत्र का वध करने के लिये कहा। विष्णु के तेज से संयुक्त होकर इन्द्र आदि देवता उस स्थान पर आये जहाँ वृत्र तप कर रहा था। वहाँ इन्द्र ने वज्र से वृत्र का वध कर दिया। तदनन्तर यह सोच कर कि निरपराध वृत्र का वध उचित नहीं था, चिन्तित इन्द्र अन्धकारमय प्रदेश में चले गये (७. ८५, ३–१५)।" 'हतश्चायं त्वया वृत्रो ब्रह्महत्या च वासवम्', (७. ८५, १९)।

वृषपर्वन्, शर्मिष्ठा के पिता का नाम है (७. ५८, ८)।

वृषभ को सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये दक्षिण दिशा में भेजा (४. ४१, ३)।

वेगदर्शी, एक वानर का नाम है जिन्हें वानरी सेना के पृष्ठभाग की रक्षा के लिये नियुक्त किया गया (६. ४, २१)। ये सेना के कुक्षिभाग की रक्षा के लिये नियुक्त हुये (६. २४, १८)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत कर दिया (६. ७३, ५७)। ये युद्ध-भूमि में आहत पड़े थे (६. ७४, १०)। इन्होंने कुपित होकर कुम्भकर्ण-कुमार पर आक्रमण किया (६. ७६, ६२)। श्रीराम के अभिषेक के लिये ये चारों समुद्रों और पाँच सौ नदियों का जल लाये (६. १२८, ५२)।

वेदवती—पूर्वकाल में, बलात्कार करने के कारण, इन्होंने रावण को शाप दे दिया था (६. ६०, १०)। "एक समय रावण ने हिमालय के वन में आकार एक तपस्वी कन्या को देखा। रावण द्वारा परिचय पूछने पर उस कन्या ने कहा : 'बृहस्पति-पुत्र कुशध्वज मेरे पिता थे और मेरा नाम वेदवती है। मेरे पिता की इच्छा थी कि विष्णु ही उनके जामाता हों। इस पर क्रुद्ध होकर दैत्यराज शम्भु ने मेरे पिता का सोते समय वध कर दिया। उस समय मैं अपने पिता के शव के साथ ही अग्नि में प्रवेश कर गई। तबसे मैंने प्रतिज्ञा कर ली है कि विष्णु के प्रति मेरे पिता का जो मनोरथ था उसे मैं सफल करूँगी। यही प्रतिज्ञा करके मैं तपस्या कर रही हूँ। नारायण ही मेरे पति हैं। मैंने आपको पहचान लिया है क्योंकि तपस्या के प्रभाव से मैं त्रिलोकी की समस्त बस्तुओं को जानती हूँ।' (७. १७, १–१९)।" जब रावण ने इन्हें प्रलोभन देते हुये अपनी भार्या बनाने का प्रस्ताव किया तो इन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया (७. १७, २५–२६)। जब बलात्कार करने की इच्छा से रावण ने इनका केश पकड़ लिया तो इन्होंने अपने हाथों से अपना केश काटते हुये रावण को यह शाप दिया कि उसके वध के लिये ये पुनः जन्म लेंगी (७. १७, २७–३३)। तदन्तर ये अग्नि में प्रवेश कर गईं (७. १७, ३४)। "दूसरे जन्म में ये एक कमल से प्रगट हुईं। उस समय रावण इन्हें पुनः प्राप्त

करके अपने घर लाया किन्तु मन्त्रियों ने जब बताया कि वह कन्या उसकी मृत्यु का कारण होगी तो उसने उसे समुद्र में फेंक दिया (७. १७, ३५–३९, गीता प्रेस संस्करण)।" यही वेदवती महाराज जनक की पुत्री के रूप में प्रादुर्भूत होकर विष्णु के अवतार, श्रीराम, की पत्नी बनीं (७. १७, ३५)। इन्होंने श्रीराम के शत्रु, रावण को अपने शाप से पहले ही मार डाला था (७. १७, ३६)। इस प्रकार ये देवी विभिन्न कल्पों में पुनः रावण-वध के लिये अवतीर्ण होती रहेंगी (७. १७, ३७)। "ये वेदवती पहले सत्ययुग में प्रगट हुईं। फिर त्रेता में रावण-वध के लिये सीता के रूप में अवतीर्ण हुईं। सीता (हल जोतने से भूमि पर बनी रेखा) से उत्पन्न होने के कारण मनुष्य इन्हें 'सीता' कहते हैं (७. १७, ४३–४४, गीता प्रेस संस्करण)।" इनके अग्नि में प्रवेश कर जाने पर रावण पुनः पृथिवी पर भ्रमण करने लगा (७. १८, १)।

वेदश्रुति, एक नदी का नाम है जिसे पार करके श्रीराम आदि अगस्त्य सेवित दक्षिण दिशा की ओर बढ़े (२. ४९, ९)।

वैखानस, एक प्रकार के ऋषियों का नाम है जिन्होंने शरभङ्ग मुनि के स्वर्गलोक चले जाने के पश्चात् श्रीराम के समक्ष उपस्थित होकर राक्षसों से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की (३. ६, २. ८–२६)। ये लोग मैनाक पर्वत के उस पार निवास करते थे (४. ४३, ३२)।

वैजयन्त, राजा निमि की राजधानी का नाम है (७. ५५, ६)।

वैदर्भी, विदर्भ देश की राजकुमारी, कुश की पत्नी, का नाम है जिसके गर्भ से चार पुत्र उत्पन्न हुये (१. ३२, २)।

वैद्युत, एक पर्वत का नाम है जो सूर्यवान् के उस पार स्थित था। सुग्रीव ने इसके क्षेत्र में सीता की खोज के लिये हनुमान् आदि वानरों को भेजा था (४. ४१, ३३)।

श

शकुन, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ६)।

शक्ति, एक महर्षि का नाम है जो सीता के शपथग्रहण को देखने के लिये श्रीराम की सभा में उपस्थित हुये (७. ९६, ३)।

शङ्ख, धन के अधिष्ठाता देवता का नाम है (७. १५, १७)।

शङ्खण, कल्माषपाद के पुत्र और सुदर्शन के पिता, एक सूर्यवंशी राजा का नाम है (१. ७०, ४०–४१; २, ११०, २७–२८)।

शङ्खचूड—सुग्रीव को विदा करते हुये श्रीराम ने इनपर प्रेमपूर्ण दृष्टि रखने के लिये कहा (७. ४०, ७)।

शठ, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में सीता की खोज करते हुये हनुमान् गये थे (५. ६, २४)।

शतद्रु, एक नदी का नाम है जिसे केकय से लौटते समय भरत ने पार किया था (२. ७१, २)।

शतबलि, एक वानर-यूथपति का नाम है जो दस अरब वानरों के साथ सुग्रीव के पास आये (४. ३९, १४)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने इन्हें उत्तर दिशा की ओर भेजा (४. ४३, १)। इन्होंने सीता की खोज के लिये उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान किया (४. ४५, ४)। ये उत्तर दिशा में सीता की निष्फल खोज करके लौट आये (४. ४७, ८)। "ये अत्यन्त बलवान् और विजय की प्राप्ति के लिये सदैव सूर्यदेव की उपासना करते थे। ये श्रीराम का प्रिय करने के लिये अपने प्राणों की भी चिन्ता नहीं करते थे (६. २७, ४३-४५)।" ये भी श्रीराम की रक्षा करने लगे (६. ४७, २)। सुग्रीव को विदा करते हुये श्रीराम ने इन पर प्रेमपूर्ण दृष्टि रखने के लिये कहा (७. ४०, ५)।

शतवक्त्र, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ५)।

शतह्रदा, विराध की माता, एक राक्षसी का नाम है (३. ३, ५)।

शतानन्द, गौतम के ज्येष्ठ पुत्र का नाम है जो विश्वामित्र द्वारा अहल्या के उद्धार का समाचार सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुये और विश्वामित्र से समस्त वृत्तान्त विस्तार से वर्णन करने के लिये कहा (१. ५१, १-९)। इन्होंने श्रीराम का अभिनन्दन करते हुये विश्वामित्र के पूर्व-चरित्र का वर्णन किया (१. ५१, १२-२८; ५२-६५)। इन्होंने राजा जनक को विश्वामित्र की घोर तपस्या और ब्राह्मणत्व की प्राप्ति की कथा सुनाया (१. ६५, १-२८)। 'शतानन्दमते स्थितः; (१. ६८, १३)। ये राजा जनक के पुरोहित थे (१. ७०, १. ५. ९)। 'शतानन्दं च धार्मिकम्', (१. ७३, १८)। सीता के शपथ-ग्रहण को देखने के लिये ये भी श्रीराम की सभा में उपस्थित हुये (७. ९६, ४)।

शतोदर, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ५)।

शत्रुघाती, शत्रुघ्न के पुत्र का नाम है जो विदिशा के राजा हुये (७. १०८, १०-११)।

१. शत्रुघ्न, श्रीराम के भ्राता का नाम है जिनको श्रीराम ने लव-कुश के मुख से रामायण-काव्य को सुनने के लिये कहा (१. ४, ३१)। ये आश्लेषा नक्षत्र और कर्कलग्न में सुमित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुये थे (१. १८, १३-१४)। ये भरत को प्राणों से भी अधिक प्रिय थे (१. १८, ३३)। विश्वामित्र ने इनके

लिये कुशध्वज की कन्या का वरण किया (१. ७२, ६. ८)। जनक ने इन्हें कुशध्वज की पुत्री को समर्पित करने की स्वीकृति प्रदान की (१. ७२, ११)। जनक ने श्रुतकीर्ति का इनके साथ विवाह कर दिया (१. ७३, ३०)। दशरथ की आज्ञा से ये अपने भ्राता भरत के साथ उनके मामा युधाजित् के साथ केकय गये (१. ७७, १८–२०; २, १)। दशरथ वरुण के समान पराक्रमी अपने पुत्र शत्रुघ्न का सदैव स्मरण किया करते थे (२. १, ४)। ये भरत का अनुसरण करते थे (२. ८, ६. २९)। 'विप्रकृष्टे ह्यहं देशे शत्रुघ्नसहितोऽवसम्', (२. ७५, २)। इन्होंने कौसल्या को दुःख से व्याकुल और अचेत होकर पृथिवी पर पड़ा देखा और दुःखित होकर दौड़कर उनके पास चले गये (२. ७५, ८)। भरत को शोक में डूबा हुआ देखकर ये अपने पिता दशरथ का बार-बार स्मरण करते हुये अचेत होकर पृथिवी पर गिर पड़े (२. ७७, ११)। सुमन्त्र ने दशरथ की चिताभूमि पर विलाप करते हुये इन्हें उठाकर इनके चित्त को शान्त किया (२. ७७, २४)। राम आदि के वनवास से दुःखित होकर इन्होंने रोष प्रकट करते हुये इस कार्य के मूलकारण, कुब्जा, को घसीटा और भरत के कहने से उसे मूर्च्छित अवस्था में छोड़ दिया (२. ७८)। वसिष्ठ ने इन्हें सभाभवन में बुलाने के लिये दूतों को भेजा (२. ८१, १३)। 'शत्रुघ्नेन समं श्रीमाञ्छयनं पुनरागमत्' (२. ८५, १५)। गुह के मुख से श्रीराम का समाचार सुनकर मूर्छित हुये भरत को देखकर ये शोक से पीडित हो अचेत हो गये (२. ८७, ५)। ये गंगा पार होने के लिये स्वस्तिक-नौका में आरूढ हुये (२, ८९, १३)। भरत ने भरद्वाज मुनि को इनका परिचय दिया (२. ९२, २३)। 'भरतो भ्रातरं वाक्यं शत्रुघ्नमिदमब्रवीत्', (२. ९८, २)। भरत आदि के साथ ये भी श्रीराम के आश्रम की ओर गये (२. ९९. ३–८)। 'शत्रुघ्नेन च सर्वेषु प्रेतकृत्येषु सत्कृतः', (२. १०३, १०)। 'शत्रुघ्नस्त्वतुलमतिः', (२. १०७, १९)। श्रीराम की चरणपादुकाओं को लिये हुये भरत के साथ ये रथारूढ होकर अयोध्या के लिए प्रस्थित हुए (२. ११३, १)। ये अयोध्या से नन्दिग्राम जाने के लिये भरत के साथ रथारूढ़ हो प्रस्थित हुये (२. ११५, ८–९)। श्रीराम ने पञ्चवटी में उस दिन का उत्सुकतापूर्वक स्मरण किया जब वनवास की अवधि समाप्त होने पर वे इनसे मिलेंगे (३. १६, ४०)। लक्ष्मण के मूर्च्छित हो जाने पर श्रीराम ने इनका स्मरण किया (६. ४९ १०)। श्रीराम के आगमन का समाचार सुनकर भरत ने उनके स्वागत के लिये तैयारी करने का इन्हें आदेश दिया (६. १२७, १)। इन्होंने श्रीराम के आगमन-पथ आदि को ठीक करने, भवनों को सजाने तथा अन्य व्यवस्था सम्बन्धी आवश्यक आदेश दिए (६. १२७, ५–१०)। इन्होंने श्रीराम और

लक्ष्मण को प्रणाम करने के पश्चात् सीता के चरणों में मस्तक झुकाया (६. १२७, ४५)। इन्होंने निपुण नाइयों को बुलवाया और श्रीराम आदि के शृङ्गार कर लेने के पश्चात् सुमन्त्र को रथ लाने के लिये कहा (६. १२८, १३ १९)। इन्होंने सुग्रीव के लिये विविध सामग्रियाँ लाने की आज्ञा दी (६. १२८, ४७)। 'भरतो लक्ष्मणश्चात्र शत्रुघ्नश्च महायशाः। उपासांचक्रिरे हृष्टा वेदास्त्रय इवाध्वरम् ।।" (७. ३७, १७)। 'भरतो लक्ष्मणश्चैव शत्रुघ्नश्च महाबलः', (७. ३९, ११)। सीता-सम्बन्धी लोकापवाद पर परामर्श के लिये श्रीराम ने इन्हें बुलाया (७. ४४, २) ये श्रीराम का संदेश पाकर उनके भवन की ओर चल दिये (७. ४४, ९–१०)। श्रीराम के पूछने पर इन्होंने स्वयं लवणासुर का वध करने का प्रबल आग्रह किया (७. ६२, १०–१४)। इनका वचन सुनकर श्रीराम ने इन्हें मधुपुर के राजा के पद पर अभिषिक्त करने का प्रस्ताव करते हुये अभिषेक स्वीकार करने का इनसे आग्रह किया (७. ६२, १५–२१)। श्रीराम का कथन सुनकर ये लज्जित हुये और अत्यन्त संकोचपूर्वक ही उनके प्रस्ताव को स्वीकार किया (७. ६३, १–८)। श्रीराम ने भरत और लक्ष्मण से इनके अभिषेक का आयोजन करने के लिये कहा (७. ६३. ९)। इनका अभिषेक हुआ और उसके पश्चात् यमुनातट वासी ऋषियों को लवणासुर का वध हो जाने का निश्चय हो गया (७. ६३, १३–१७)। श्रीराम ने इन्हें लवणासुर के शूल से बचने का उपाय बताया (७. ६३, १८–३१; ६४, १–१२)। इन्होंने पहले अपनी सेना को भेजकर उसके एक मास के पश्चात् लवणवध के लिये प्रस्थान किया (७. ६४, १३–१८)। ये वाल्मीकि के आश्रम पर पहुँचे जहाँ मुनि ने इनका सत्कार किया (७. ६५, १–७)। वाल्मीकि ने इन्हें सुदास-पुत्र कल्माषपाद की कथा सुनाया (७. ६५, ८–३९)। जिस समय ये वाल्मीकि की पर्णशाला में रुके हुये थे उसी समय सीता ने दो पुत्रों को जन्म दिया (७, ६६, १)। अर्धरात्रि के समय इन्हें सीता के दो पुत्रों के जन्म का समाचार प्राप्त हुआ जिससे ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (७. ६६, ११–१३)। इन्होंने प्रातःकाल वाल्मीकि मुनि से विदा ली (७. ६६, १४)। च्यवन मुनि ने इन्हें लवणासुर के शूल की शक्ति का परिचय देते हुये राजा मान्धाता के वध का प्रसङ्ग सुनाया (७. ६७)। "जब प्रातःकाल अपने भक्ष्यपदार्थ की इच्छा से प्रेरित हो लवण नगर से बाहर निकला तो ये यमुना पार करके मधुपुरी के द्वार पर खड़े हो गये। लौट कर जब उस राक्षस ने इन्हें नगर-द्वार पर खड़े देखा तो क्रुद्ध होकर इनका परिचय पूछा। इन्होंने कटु शब्दों का आदान-प्रदान करते हुये उसे युद्ध के लिये ललकारा। लवण ने जब अपना शूल लाने का प्रस्ताव किया

तो इन्होंने उसे अस्वीकृत करते हुये तत्काल युद्ध के लिये आवाहन किया (७. ६८)।" इन्होंने लवणासुर के साथ घोर युद्ध किया जिसमें लवण ने एक विशाल वृक्ष से प्रहार करके इन्हें मूर्च्छित कर दिया (७. ६९, १–१४)। मूर्च्छा दूर होने पर इन्होंने एक दिव्य, अमोघ और उत्तम बाण का सन्धान किया जिससे देवता, असुर, गन्धर्व आदि सब अस्वस्थ हो ब्रह्मा की शरण में गये (७. ६९, १७–२१)। ब्रह्मा ने उस बाण का इतिहास बताते हुये देवों से कहा कि वे शत्रुघ्न और लवण के युद्ध के स्थल पर जाकर उस राक्षस के वध को देखें (७. ६९, २८–२९)। इन्होंने उस बाण से लवणासुर का वध कर दिया (७. ६९, ३२–३७)। इन्होंने देवताओं से वरदान प्राप्त करके मधुरापुरी को बसाया और उसके पश्चात् बारहवें वर्ष श्रीराम के पास जाने क विचार किया (७. ७०)। "ये थोड़े से सेवकों और सैनिकों को साथ लेकर अयोध्या के लिये प्रस्थित हुये। मार्ग में ये वाल्मीकि मुनि के आश्रम में रुके और वहाँ रात्रि के समय श्रीरामचरित का गान सुनकर आश्चर्यचकित हुये। सैनिकों ने जब इनसे इस सम्बन्ध में वाल्मीकि मुनि से पूछने के लिये कहा तो इन्होंने यह उचित नहीं समझा, और प्रातःकाल मुनि से विदा लेकर अयोध्या आये। अयोध्या में श्रीराम के साथ सात दिनों तक निवास करने के बाद इन्होंने मधुपुरी के लिये प्रस्थान किया (७. ७१–७२)।" श्रीराम के अश्वमेध यज्ञ के समय नैमिषारण्य में ये भरत के साथ वानरों और ब्राह्मणों को भोजन कराने की व्यवस्था करते थे (७. ९१, २७)। महाप्रस्थान का निश्चय करके श्रीराम ने इन्हें भी अयोध्या बुलाया (७. १०७, ८)। श्रीराम के दूत से अपने कुल के क्षय का समाचार सुनकर इन्होंने अपने दोनों पुत्रों का राज्याभिषेक किया और अयोध्या आकर श्रीराम से मिले (७. १०८, २–१२)। श्रीराम को प्रणाम करके इन्होंने भी उनके साथ ही परमधाम जाने की आज्ञा माँगी जिसे श्रीराम ने प्रदान किया (७. १०८, १३–१६)। भरत के साथ ये अन्तःपुर की स्त्रियों और अग्निहोत्र आदि को लेकर महायात्रा के लिये श्रीराम के पीछे-पीछे चले (७. १०९, ११)। इन्होंने भी श्रीराम के साथ वैष्णव तेज में प्रवेश किया (७. ११०, १२)।

२. शत्रुघ्न, एक राक्षस का नाम है जिसके साथ विभीषण ने द्वन्द्वयुद्ध किया (६. ४३, ८)।

शत्रुञ्जय, एक विशालकाय गजराज का नाम है जो महान् मेघ से युक्त पर्वत के समान प्रतीत होता था। इसके गण्डस्थल से मद की धारा बहती थी और इसे अंकुश से भी वश में नहीं किया जा सकता था। इसका वेग शत्रुओं के लिये असह्य था। इसके नाम के अनुसार ही इसका गुण भी था। सुमन्त्र ने

इसे श्रीराम के भवन के समीप देखा (२. १५, ४६)। श्रीराम ने इसे सुयज्ञ को दान कर दिया (२. ३२, १०)। यह भरत की सेना के अग्रभाग में झूमता हुआ चल रहा था (२. ६७, २५)।

शबरी—स्वर्गलोक जाते समय कबन्ध ने श्रीराम को इससे मिलने के लिये कहा (१. १, ५६)। श्रीराम इसके आश्रम पर गये (१. १, ५७)। इससे श्रीराम के मिलने और इसके द्वारा दिये हुये फल-मूल को ग्रहण करने का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, २२)। कबन्ध ने श्रीराम को इसका परिचय देते हुये उन्हें इससे मिलने का परामर्श दिया (३. ७३, २५–२६)। "श्रीराम और लक्ष्मण पम्पा नामक पुष्करिणी के पश्चिमी तट पर स्थित इसके आश्रम में जाकर इससे मिले। यह एक सिद्ध तपस्विनी थी। दोनों भ्राताओं को अपने आश्रम पर उपस्थित देखकर इसने उनके चरणों में प्रणाम किया (३. ७४, ४–७)।" "श्रीराम के पूछने पर इसने उनसे कहा : 'आपका दर्शन मिलने से आज मेरी पूजा सार्थक हो गई और मुझे अब आपके दिव्यधाम की प्राप्ति भी होगी।' इसने यह भी बताया कि इसके गुरुजनों ने इससे बता दिया था कि श्रीराम और लक्ष्मण का आतिथ्य-सत्कार करने पर इसे अक्षयलोक प्राप्त होगा। तदनन्तर इसने श्रीराम से कहा : 'मैंने आपके लिये पम्पातट पर उत्पन्न होनेवाले अरण्य फल-मूलों का संचय किया है' (३. ७४, १०–१७)।" "श्रीराम के पूछने पर इसने मतङ्ग वन को दिखाते हुये अपने गुरुजनों की प्रत्यक्स्थली नामक वेदी को भी श्रीराम को दिखाया। इसने सप्तसागर नामक तीर्थ दिखाते हुये श्रीराम से बताया कि इसके गुरुजन उसी में स्नान किया करते थे। इसने दिव्यलोक में अपने गुरुजनों के पास जाने की आज्ञा माँगी। श्रीराम से आज्ञा प्राप्त करके इसने अग्नि में प्रवेश किया और दिव्यरूप धारण करके उस पुण्यधाम की यात्रा की जहाँ इसके गुरुजन विहार करते थे (७. ७४, २०–३५)।" अयोध्या लौटते समय श्रीराम ने सीता को वह स्थान दिखाया जहाँ वे इससे मिले थे (६. १२३, ४१)।

शबला, वसिष्ठ की कामधेनु का नाम है जिसे वसिष्ठ ने विश्वामित्र के लिये अभीष्ट वस्तुओं की सृष्टि करने का आदेश दिया (१. ५२, २०–२३)। इसने वसिष्ठ की आज्ञा का पालन करते हुये विश्वामित्र तथा उनकी समस्त सेना को अभीष्ट वस्तुओं से तृप्त किया (१. ५३, १–७)। विश्वामित्र ने वसिष्ठ से इसे माँगा परन्तु वसिष्ठ ने अस्वीकार कर दिया (१. ५६, ९–१६. २२–२६)। विश्वामित्र ने इसको बलपूर्वक ले जाने का प्रयास किया जिस पर इसने वसिष्ठ के सम्मुख उपस्थित होकर उनसे निवेदन किया (१. ५४, १–७)। वसिष्ठ ने इसे शत्रुसेना का संहार करने के लिये सैनिकों की सृष्टि

करने का आदेश दिया (१. ५४, १६)। तदनन्तर इसने (सुरभि ने) अपनी हुंकार से पल्लव, यवन-मिश्रित शक, काम्बोज और वर्बरादि जाति के सैनिकों को उत्पन्न किया (१. ५४, १७–२३)। जब विश्वामित्र नें इसके द्वारा उत्पन्न सैनिकों को नष्ट कर दिया तब वसिष्ठ के आदेश पर इसने पुनः हुंकार से काम्बोज, थन से शास्त्रधारी वर्वर, योनि-देश से यवन, शकृ देश से शक, रोमकूपों से म्लेच्छ, हारीत तथा किरात आदि को उत्पन्न किया (१. ५५, १–३)

शम्बर, "एक प्रसिद्ध और महान् असुर का नाम है जो दक्षिण दिशा में दण्डकारण्य के भीतर वैजयन्त नामक नगर में निवास करता था। यह अपनी ध्वजा में तिमि (ह्वेल मछली) का चिह्न धारण करता था और शताधिक मायाओं का इसे ज्ञान था। देवताओं के समूह भी इसे पराजित नहीं कर पाते थे। एक समय इसने इन्द्र के साथ युद्ध किया (२. ९, १२–१३)।" इसका देवराज इन्द्र ने वध किया (५. १६, ८)। मृत्यु ने इसके वध का उल्लेख किया (७. २२, २४)।

शम्बसाधन, एक असुर का नाम है जिसका महर्षियों की प्रेरणा से कपिवर केसरी ने वध किया था (५. ३५, ८९)।

शम्बूक, एक शूद्र का नाम है जो सर नीचे की ओर कर देवलोक पर विजय पाने की इच्छा से श्रीराम की राज्य-सीमा में ही शैवल पर्वत के उत्तर भाग में स्थित एक सरोवर के तट पर घोर तपस्या कर रहा था। श्रीराम ने इसका वध कर दिया (७. ७६, १–४)।

शरगुल्म, को सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये दक्षिण दिशा में भेजा (४. ४१, ३)।

शरदण्डा, एक नदी का नाम है जिसे वसिष्ठ के दूतों ने केकय जाते समय पार किया था (२. ६८, १५)।

शरभ, एक वानर का नाम है जिन्हें पर्जन्य ने उत्पन्न किया था (१. १७, १५)। इन्होंने महर्षियों की बताई हुई शास्त्रोक्त विधि के अनुसार सुवर्णमय कलशों में रक्खे हुये स्वच्छ और सुगन्धित जल तथा वृषभ के सींगों द्वारा सुग्रीव का अभिषेक किया (४. २६, ३४)। किष्किन्धा जाते समय लक्ष्मण ने इनके भी सुसज्जित भवन को देखा (४. ३३, ९)। ये भी सुग्रीव की सेवा में उपस्थित हुये (४. ३९. ३८)। इन्होंने अपनी शक्ति का वर्णन किया और बताया कि ये तीस योजन तक एक छलाँग में जा सकते हैं (४. ६५, २. ४)। 'महाजवो वीतभयो रम्यं साल्वेयपर्वतम्। राजन्सततमध्यास्ते शरभो नाम यूथपः ॥', (६. २६, ३६)। ये यमराज के पुत्र एवं अन्तक के समान

पराक्रमी थे (६. ३०, २७)। ये वानर सेना की रक्षा कर रहे थे (६. ४२, ३१)। ये भी उस स्थान पर आये जहाँ राम और लक्ष्मण अचेत पड़े थे (६. ४५, २)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत किया (६. ४६, २१)। ये श्रीराम की रक्षा करने लगे (६. ४७, २ गीता प्रेस संस्करण)। श्रीराम ने कहा कि इन्होंने अपने प्राणों का मोह छोड़कर युद्ध किया (६. ४९, २८)। ये कुम्भकर्ण का सामना करने के लिये रणक्षेत्र की ओर बढ़े (६. ६६, ३५)। इन्होंने कुम्भकर्ण पर आक्रमण किया (६. ६७, २४)। कुम्भकर्ण ने इन पर मुष्टि प्रहार किया (६. ६७, २९)। इन्होंने भी अतिकाय पर आक्रमण किया (६. ७१, ३९)। इन्होंने राक्षसों के विरुद्ध महान् वेग प्रगट किया (६. ८९, ४८)। सुग्रीव को विदा करते हुये श्रीराम ने उनसे इन पर भी प्रेमपूर्ण दृष्टि रखने के लिये कहा (७. ४०, ५. ७)।

शरभङ्ग, एक मुनि का नाम है (१. १, ४१)। श्रीराम द्वारा इनके दर्शन का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १८)। विराध ने इनके निवास-स्थान का पता बताते हुये श्रीराम से इनसे मिलने के लिये कहा (३. ४, २०–२१)। श्रीराम इनके पास गये (३. ५, २–३)। इनके समीप पहुँचकर श्रीराम ने एक अद्भुत दृश्य देखा (३. ५, ४)। श्रीराम ने इन्हें इन्द्र के साथ वार्तालाप करते देखा (३. ५, ११)। सीता को लक्ष्मण के संरक्षण में छोड़कर श्रीराम इनके आश्रम में गये (३. ५, २०)। राम को आते देखकर इन्द्र ने इनसे विदा ली (३, ५, २१)। अपनी पत्नी और भ्राता के साथ श्रीराम इनके पास आये और इन्होंने आतिथ्य के पश्चात् उन लोगों को ठहरने का स्थान दिया (३. ५, २५–२६)। श्रीराम द्वारा इन्द्र के उनके पास आने का प्रयोजन पूछने पर इन्होंने बताया कि इन्द्र इन्हें ब्रह्मलोक ले जाना चाहते थे परन्तु इन्होंने श्रीराम का दर्शन करके ही ब्रह्मलोक जाने का निश्चय किया (३. ५, २७–३१)। श्रीराम ने इनसे कहा : 'मैं आपको उन सब लोकों की प्राप्ति कराऊँगा परन्तु मैं इस समय अपके वताये हुये स्थान पर निवासमात्र करना चाहता हूँ।' (३. ५, ३२–३३)। इन्होंने सुतीक्ष्ण मुनि का पता बताकर श्रीराम को उन्हीं के पास जाने के लिये कहा (३. ५, ३४–३६)। मार्ग का पता वताते हुये इन्होंने श्रीराम से कहा : 'यहाँ से प्रस्थान करने के के पूर्व आप उस समय तक मेरी ओर देखते रहें जबतक मैं अपने इन जरा-जीर्ण अङ्गों का परित्याग न कर दूं।' तदनन्तर इन्होंने अग्नि में प्रवेश करके अपने समस्त शरीर को भस्म कर दिया और उसके पश्चात् एक तेजस्वी कुमार के रूप में अग्निराशि से ऊपर उठकर सुशोभित होने लगे। इस प्रकार इन्होंने ब्रह्मलोक प्राप्त किया जहाँ ब्रह्मा ने इनका स्वागत किया (३. ५, ३७–४३)।"

इनके स्वर्गलोक चले जाने पर श्रीराम के सम्मुख अनेक मुनि उपस्थित हुये (३. ६, १)। खर आदि राक्षसों का वध हो जाने के पश्चात् मुनियों ने बताया कि राक्षसों का विनाश कराने के लिये ही इन्द्र इनके आश्रम पर पधारे थे (३. ३०, ३४)।

शरवण, एक वन का नाम है जहाँ कार्तिकेय की उत्पत्ति हुई थी। कुवेर को विजित करके लौटते समय इस स्थान पर रावण के पुष्पक विमान की गति रुक गई (७. १६, १–२)।

शरारि को सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये दक्षिण दिशा की ओर भेजा (४. ४१, ३)।

शल्यकर्षण, एक देश का नाम है। केकय से लौटते समय भरत इससे होते हुये आये थे (२. ७१, ३)।

शर्मिष्ठा, वृषपर्वा की पुत्री और ययाति की एक पत्नी का नाम है जिसने पूरु को जन्म दिया (७. ५८, ८–१०)। यदु ने अपनी माता से कहा : 'हम दोनों अग्नि में प्रवेश कर जाँय और राजा ययाति शर्मिष्ठा के साथ अनेक रात्रियों तक रमते रहें' (७. ५८, १३)।

१. शशविन्दु, एक राजा का नाम है जो असित के साथ शत्रुता रखते थे (१. ७०, २७; २. ११०, १५)।

२. शशविन्दु, एक राजर्षि का नाम है जिन्होंने वह्लिक देश का राज्य ग्रहण किया (७. ९०, २२)।

शान्ता, अङ्गराज रोमपाद की पुत्री का नाम है जिसका महर्षि ऋष्यश्रृङ्ग के साथ विवाह हुआ (१. ९, १२. १७)। रोमपाद ने इनका ऋष्यश्रृङ्ग के साथ विवाह कराया (१. १०, ३३)। सुमन्त्र ने इनके वंश, तथा ऋष्यश्रृङ्ग के साथ इनके विवाह का वर्णन किया (१. ११, ३. ६)। अपने पति के साथ यह अयोध्या आईं जहाँ दशरथ की रानियों ने इनका सत्कार किया (१. ११, २९–३०)।

शार्दूल, रावण के एक गुप्तचर का नाम है जिसने सागर-तट पर श्रीराम की विशाल सेना को देखकर रावण को उसका समाचार देते हुये गुप्तचर भेज कर वानरी-सेना का विस्तृत भेद लेने का परामर्श दिया (३. २०, १–७)। इसकी बात सुनकर रावण व्यग्र हो उठा और शुक तथा सारण को श्रीराम की सेना का भेद लेने के लिये कहा (६. २०, ८)। "रावण की आज्ञा से यह श्रीराम की सेना का भेद लेने के लिये गया परन्तु विभीषण ने इसे पहचान कर पकड़वा लिया और वानरों ने इसे पीटा। तदनन्तर लंका लौटकर यह रावण के पास आया (६. २९, २२–२८)।" इसकी मलिन अङ्ग-कान्ति

देखकर जब रावण ने इससे समाचार पूछा तो इसने अपने पकड़े जाने आदि का वृत्तान्त बताते हुये रावण को मुख्य-मुख्य वानर-वीरों का परिचय दिया (६. ३०)।

शार्दूली, क्रोधवशा की पुत्री का नाम है जिसने व्याघ्र नामक पुत्र उत्पन्न किये (३. १४, २२. २५)।

शिंशपा, एक स्त्रीलिङ्ग वृक्ष का नाम है जो नारी का रूप धारण करके भरत के सत्कार के लिये भरद्वाज के आश्रम में आ बसी (२. ९१, ५०)। हनुमान् ने इसे लङ्का की अशोकवाटिका में अनेक लतावितानों और अगणित पत्तों से व्याप्त, तथा सब ओर सुवर्णमयी वेदिकाओं से घिरा देखा (५. १४, ३७)।

शिक्ष, ऋषभ पर्वत पर निवास करनेवाले एक गन्धर्व का नाम है (४. ४१, ४३ गीता प्रेस संस्करण)। देखिये **शिग्रु**।

शिग्रु, ऋषभ पर्वत पर निवास करनेवाले एक गन्धर्व का नाम है (४. ४१, ४३)। देखिये **शिक्ष**।

शिलावहा, एक नदी का नाम है। केकय से लौटते समय भरत ने इसका दर्शन किया था (२. ७२, ४)।

१. शिशिर, एक पर्वत का नाम है जिसके ऊपर देवता और दानव निवास करते थे। यह ऊँचाई में अपने उच्च शिखर से स्वर्गलोक का स्पर्श करता सा जान पड़ता था। यहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये एक लाख वानरों के साथ विनत को भेजा (४. ४०, २९–३०)।

२. शिशिर, आदित्य-हृदय नामक स्तोत्र में सूर्य का एक नाम है (६. १०५, १२)।

शिशिरनाशन, आदित्य-हृदय नामक स्तोत्र में सूर्य का एक नाम है (६. १०५, १२)।

शीघ्रग, अग्निवर्ण के पुत्र, एक सूर्यवंशी राजा का नाम है। इनके पुत्र का नाम मरु था (१. ७०, ४१; २. ११०, २९)।

१. शुक, ऋषभ पर्वत पर निवास करनेवाले एक गन्धर्व का नाम है (४. ४१, ४३)।

२. शुक, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने आग लगा दी (५. ५४, १०)। "शार्दूल के कहने से रावण ने इसको दूत बनाकर सुग्रीव के पास संदेश लेकर भेजा। इसने सुग्रीव के पास जाकर आकाश में ही स्थित हो रावण का संदेश सुनाया। उस समय वानरों ने इस निशाचर को बलपूर्वक पकड़ लिया और बन्दी बनाकर आकाश से पृथिवी पर उतारा, परन्तु

श्रीराम ने इसे मुक्त करा दिया। वानरों द्वारा नोंच दिये जाने के कारण इसके पंखों का भार कुछ हल्का हो गया। तदनन्तर श्रीराम द्वारा अभय प्राप्त करके इसने आकाश में स्थित होकर सुग्रीव से रावण के लिये उत्तर माँगा। रावण से कहने के लिये आवश्यक उत्तर देने के पश्चात् सुग्रीव ने वानरों द्वारा इसे पुनः पकड़वा लिया परन्तु श्रीराम ने वानरों को इसे मुक्त कर देने की आज्ञा दी (६. २०, ८–३६)।" श्रीराम की आज्ञा से सुग्रीव ने इसे बन्धन-मुक्त कर दिया और इसने रावण के पास जाकर उसे राम की सेना तथा वानर यूथपतियों के पराक्रम का समाचार सुनाया (६. २४, २३–३६)।" "रावण ने सारण के साथ इसे पुनः श्रीराम की सेना में भेद लेने के लिये भेजा। इसने वानर का वेष धारण करके राम की सेना का भेद लेने का प्रयास किया परन्तु विभीषण ने इसे पहचान कर बन्दी बना लिया और श्रीराम के पास ले गये। श्रीराम ने इससे रावण के पास संदेश भेजते हुये इसे मुक्त करा दिया। श्रीराम का अभिनन्दन करके लङ्का लौटकर रावण को इसने वानरों की शक्ति का समाचार देते हुये सीता को लौटा देने का परामर्श दिया (६. २५)।" "इसने सुग्रीव, मैन्द, द्विविद, हनुमान्, श्रीराम, लक्ष्मण, विभीषण आदि का रावण को परिचय देते हुये वानरसेना की संख्या का निरूपण किया। इसकी बात सुनकर रावण ने इस पर क्रोध करके इसे अपने दरबार से निकाल दिया जिसके बाद यह वहाँ से चला गया (६. २९, १–१५)।" 'शुकसारणौ', (६. ३६, १९; ४४, २०; ७. १४, १)। इसने मरुत्त की पराजय और रावण के विजय की घोषणा की (७. १८, १९)। 'मारीच शूकसारणाः', (७. १९, १९)। 'शुकः सारण एव च', (७. २७, २८)। 'शुकसारणौ', (७. ३१, २६. ३४; ३२, ११. १७. २०. २२. ३६. ४८)।

शुकनाभ, एक राक्षस का नाम है। सीता की खोज करते हुये हनुमान् इसके भवन में भी गये (५. ६, २४)।

शुकी, ताम्रा की एक पुत्री का नाम है, जिसने नता नामवाली कन्या को जन्म दिया (३. १४, १७. २०)। विनता इसकी पौत्री थी (३. १४, ३१)।

१. शुक्र—श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा के लिये कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, २३)।

२. शुक्र, कुबेर के एक मन्त्री का नाम है (७. १५, १७)।

३. शुक्र, (उशनस्), ययाति की पत्नी, देवयानी, के पिता का नाम है (७. ५८, ९)। इनके कुल में उत्पन्न होकर भी देवयानी राजा से अपमानित रहीं (७. ५८, १२)। देवयानी ने इनका स्मरण किया जिसे जानकर ये उनके समीप आये और उनका समाचार पूछा (७. ५८, १५–१७)। जब

देवयानी ने अपनी स्थिति का वर्णन किया तो उसे सुनकर इन्होंने ययाति को जराजीर्ण हो जाने का शाप दे दिया (७. ५८, २२–२४)। 'एष तूशनसा मुक्तः शापोत्सर्गो ययातिना,' (७. ५९, २१)। राजा दण्ड ने इन्हें अपना पुरोहित बनाया (७. ७९, १८)। राजा दण्ड ने इनकी कन्या के साथ बलात्कार किया (७. ८०)। अपनी कन्या, अरजा, के साथ बलात्कार करने के कारण इन्होंने राजा दण्ड को राज्य-सहित नष्ट हो जाने का शाप दिया (७. ८१, १–१०)। इन्होंने अपने आश्रम में निवास करनेवाले लोगों को दण्ड का राज्य छोड़ देने के लिये कहा (७. ८१, ११)। अपनी पुत्री, अरजा, से इन्होंने उसी आश्रम में रहकर परमात्मा के ध्यान में एकाग्र रहते हुये अपने अपराध-निवृत्ति की प्रतीक्षा करने के लिये कहा (७. ८१, १४–१५)। इन्होंने दण्ड का राज्य-क्षेत्र छोड़ दिया (७. ८१, १७)।

शुचिबाहु, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसको विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था १. २८, ७)।

शुनःशेप, ऋचीक मुनि के मझले पुत्र का नाम है (१. ६१, १९)। इन्होंने स्वयं ही राजा अम्बरीष के हाथ बिकना और उनका यज्ञपशु बनना स्वीकार कर लिया (१. ६१, २०–२२)। इन्होंने विश्वामित्र से अपनी रक्षा की याचना की (१. ६२, २–७)। इन्होंने राजा अम्बरीष को यज्ञ सम्पन्न करने के लिये कहा और यज्ञस्थल पर इन्द्र की स्तुति की जिससे इन्द्र ने इन्हें दीर्घायु प्रदान किया (१. ६२, १८–२६)।

१ शूरसेन, एक जाति का नाम है जिसके नगरों में सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने शतबलि आदि वानरों को भेजा (४. ४३, ११)।

२. शूरसेन, एक जनपद का नाम है जिसे शत्रुघ्न ने बसाया (७. ७०, ९)।

शूर्पणखा, जनस्थान-निवासिनी एक राक्षसी का नाम है जिसे श्रीराम ने कुरूप करा दिया (१. १, ४६)। इसके कहने पर खर और दूषण आदि चौदह सहस्र राक्षसों ने श्रीराम पर आक्रमण किया परन्तु श्रीराम ने अकेले ही सबका वध कर दिया (१. १, ४७–४८)। 'शूर्पणखा-संवाद' तथा श्रीराम की आज्ञा से लक्ष्मण द्वारा इसके नाक और कान काटने तथा इसके द्वारा उत्तेज्जित रावण का श्रीराम से बदला लेने की घटना का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १९)। यह रावण की बहन थी जो पञ्चवटी में श्रीराम के समक्ष उपस्थित हुई (३. १७, ६)। यह श्रीराम को देखते ही काम से मोहित हो गई (३. १७, ९)। यह अत्यन्त कुरूप, क्रूर, और घृणास्पद थी (३. १७, १०–१२)। कामभाव से आविष्ट हो मनोहर रूप बनाकर यह राम के समीप आई और उनसे उनका परिचय पूछा (३. १७, १२–१४)।

"श्रीराम के पूछने पर इसने अपना परिचय देते हुये कहा : 'मैं कामरूपिणी राक्षसी और रावण की बहन हूँ। मेरे अन्य दो भ्राताओं का नाम कुम्भकर्ण और विभीषण है।' इस प्रकार अपना परिचय देकर इसने श्रीराम को अपने साथ विहार करने के लिये आमन्त्रित किया (३. १७, २०–२९)।" श्रीराम ने इसे लक्ष्मण के पास जाने का परामर्श दिया जिस पर इसने लक्ष्मण के पास जाकर अपने को अङ्गीकार कर लेने का प्रस्ताव किया (३. १८, १–७)। लक्ष्मण ने इसे पुनः श्रीराम के पास भेजा (३. १८, ८–१३)। इसने पुनः श्रीराम के पास आकर क्रोध में सीता का भक्षण करने के उद्देश्य से उनपर आक्रमण किया (३. १८ १४–१७)। "श्रीराम ने लक्ष्मण को इसे कुरूप कर देने का आदेश दिया जिसपर लक्ष्मण ने इसकी नाक और कान काट लिये। इस प्रकार कुरूप हो जाने पर इसने जनस्थाननिवासी अपने भ्राता के पास जाकर समस्त वृत्तान्त सुनाया (३. १८, १९–२६)।" "इसे अङ्गहीन तथा रक्तरंजित देखकर जब इसके भ्राता, खर, ने इसकी दुर्दशा का वृत्तान्त पूछा तो इसने राम आदि के द्वारा अपने कुरूप किये जाने का सम्पूर्ण विवरण बताया। यह खर की आज्ञा से राम आदि का वध कराने के लिये चौदह राक्षसों को लेकर पञ्चवटी आई (३. १९)।" इसने पञ्चवटी में आकर राम आदि को उन राक्षसों का परिचय दिया (३. २०, १)। राम ने सीता को लक्ष्मण के संरक्षण में देते हुए इसके साथ आये चौदह राक्षसों का वध कर दिया जिससे भागकर यह अपने भ्राता, खर, के पास आई और उससे समस्त वृत्तान्त कहा (३. २०)। इसने खर के पास आकर चौदह राक्षसों के वध का समाचार बताते हुये खर को राम से युद्ध करने के लिये उत्तेजित करने का प्रयास किया (३. २१)। इसके विलाप को सुनकर खर ने इसे राम आदि के साथ स्वयं युद्ध करने का आश्वासन दिया (३. २२, १–५)। यह खर आदि राक्षसों का वध हो जाने के पश्चात् सहायता के लिये अपने भ्राता, रावण, के पास आई और उसे सिंहासन पर विराजमान देखा (३. ३२, १–३)। इसने रावण की भर्त्सना की (३. ३३)। रावण के पूछने पर इसने राम, लक्ष्मण और सीता का परिचय देते हुये रावण को सीता को अपनी भार्या बनाने के लिये प्रेरित किया (३. ३४)। इसने अजामुखी के कथन का अभिनन्दन करते हुये सुरा तथा मनुष्य (सीता) के मांस का भक्षण करके निकुम्भिला देवी के समक्ष नृत्य करने का प्रस्ताव किया (५. २४, ४६–४७)। 'कथं शूर्पणखा वृद्धा कराला निर्णतोदरी। आससाद वने रामं कंदर्पसमरूपिणम्॥', (६. ९४, ६)। कैकसी के गर्भ से इसका जन्म हुआ : 'ततः शूर्पणखा नाम संजज्ञे विकृतानना', (७. ९, ३४)। रावण ने दानवराज विद्युज्जिह्व से इसका विवाह किया (७. १२, १–२)।

इसने लङ्का में रावण के सम्मुख उपस्थित होकर विलाप करना आरम्भ किया (७. २४, २४)। "रावण के पूछने पर इसने बताया कि कालकेयों का वध करते समय रावण ने इसके पति का भी वध कर दिया। जब यह इस प्रकार उपालम्भ करने लगी तो रावण ने क्षमा-याचना करते हुये इससे अपने भ्राता खर के साथ चौदह सहस्त्र राक्षसों से रक्षित हो दण्डकारण्य में सुखपूर्वक निवास करने का आग्रह किया जिसे स्वीकार करते हुये यह दण्डकारण्य में रहने लगी (७ २४, २५–४२)।"

शेष, तृतीय प्रजापति का नाम है जो विकृत के वाद हुये थे (३. १४, ७)।

शैलूष, ऋषभपर्वत पर निवास करनेवाले एक गन्धर्व का नाम है (४. ४१, ४३)। इनकी सरमा नामक पुत्री का विभीषण के साथ विवाह हुआ (७. १२, २४)।

शैलोदा, एक नदी का नाम है जिसके तट पर कुरु-देश स्थित था (४. ४३, ३८)।

शैवल, दक्षिण के एक पर्वत का नाम है (७. ७५, १३; ७९, १६; ८१, १८)।

शैव्य, एक राजा का नाम है जिन्होंने कपोत की प्राणरक्षा के लिये श्येन (वाज) को अपने शरीर का मांस काट कर दिया था (२. १२, ४३; १४, ४)। दशरथ द्वारा हत अपने पुत्र के लिये शोक करते हुये मुनि-दम्पति ने मृतपुत्र के लिये उस लोक की कामना की जो इन्हें प्राप्त हुआ था (२. ६४, ४२)।

शोणभद्र, एक नदी का नाम है जिसके तट पर श्रीराम, लक्ष्मण, और विश्वामित्र ने मिथिला जाते समय रात्रि व्यतीत की (१. ३१, २०)। विश्वामित्र ने राम आदि के साथ इसे पार किया (१. ३५, १–५)। यहाँ सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने विनत को भेजा (४. ४०, २१. ३१)।

शोणिताक्ष, एक राक्षस का नाम है। सीता की खोज करते हुए हनुमान् इसके भवन में गये (५. ६, २६)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १४)। रावण की आज्ञा से युद्ध करने के लिए कुम्भकर्ण के दोनों पुत्रों के साथ यह भी गया (६. ७५, ४६)। इसने अङ्गद पर आक्रमण किया (६. ७६, ४)। 'शोणिताक्षस्ततः क्षिप्रमसिचर्म समाददे। उत्पपात तदा क्रुद्धो वेगवानविचारयन् ॥', (६. ७६, ८)। इसने अङ्गद और द्विविद से युद्ध किया परन्तु अन्त में द्विविद ने इसका वध कर दिया (६. ७६, १३. १५. २१. ३०. ३४)। अयोध्या लौटते समय श्रीराम ने सीता को वह स्थान भी दिखाया जहाँ इसका वध हुआ था (६. १२३, १२)।

श्येनगामी, एक राक्षस का नाम है जो राम के विरुद्ध युद्ध के लिये खर के साथ आया (३. २३, ३२)। इसने खर के साथ श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, २६)। श्रीराम ने इसका वध कर दिया (३. २६, २९–३५)।

श्येनी, ताम्रा की पुत्री का नाम है, जिसने श्येनों और गृध्रों को उत्पन्न किया (३. १४, १७–१८)।

श्रुतकीर्ति, कुशध्वज की पुत्री का नाम है जिसका दशरथ की पत्नियों ने अपनी पुत्र-वधू के रूप में स्वागत किया (१. ७७, १२)।

शृङ्गवेरपुर, गङ्गा के तट पर स्थित एक नगर का नाम है (१. १, २९; २. ५०, २५)। यहाँ के राजा का नाम गुह था (२. ५०, ३२)। यहाँ गंगा के तट पर भरत ने सेनासहित रात्रिवास किया (२. ८३, १९–२६; ८९, १)। श्रीराम के आश्रम से लौटते समय सेनासहित भरत यहाँ आये (२. ११३, २२–२३)। अयोध्या लौटते समय श्रीराम का विमान इस पर से भी होकर उड़ा (६. १२३, ५३)। श्रीराम ने यहाँ के राजा, निषादराज गुह, के पास हनुमान् से संदेश भेजा (६. १२५, ४. २१)।

१. श्वेत, एक वानर यूथपति का नाम है: 'श्वेतो रजतसंकाशश्चपलो भीमविक्रमः। बुद्धिमान्वानरः शूरस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः।। तूर्णं सुग्रीवमागम्य पुनर्गच्छति वानरः। विभजन्वानरीं सेनामनीकानि प्रहर्षयन्।।', (६. २६, २५–२६)। ये सूर्य के औरस पुत्र थे (६. ३०, ३३)।

२. श्वेत, विदर्भ के राजा और सुदेव के पुत्र का नाम है। इन्होंने अपनी आयु का पता लग जाने पर वन में जाकर घोर तपस्या की और उसके फलस्वरूप ब्रह्मलोक चले गये। ब्रह्मलोक में भी ये क्षुधा से अत्यन्त पीड़ित रहते थे। एक दिन जब इन्होंने ब्रह्मा से इसका कारण पूछा तो उन्होंने कहा कि ये मर्त्यलोक में स्थित हो कर अपने ही शरीर का सुस्वाद मांस खाया करें। इसका कारण बताते हुये ब्रह्मा ने कहा कि इन्होंने अपने जीवन में कभी किसी अतिथि, ब्राह्मण, देवता, या पितर के लिये कोई दान नहीं किया इसीलिये ब्रह्मलोक में भी ये क्षुधा से पीड़ित रहते हैं। साथ ही ब्रह्मा ने यह भी बताया कि महर्षि अगस्त्य ही इन्हें इस शाप से मुक्त करेंगे। उसी समय से ये घोर वन में अपने शरीर के मांस का आहार ग्रहण करते हुये घृणित जीवन व्यतीत करने लगे। अन्ततः महर्षि अगस्त्य ने इनका दान ग्रहण करके इन्हें शाप से मुक्त किया (७. ७८)।

श्वेता, क्रोधवशा की पुत्री का नाम है जिसने अपने पुत्र के रूप में एक दिग्गज को जन्म दिया (३. १४, २२. २६)।

श्वेताश्वतरी, श्रुति का नाम है जिसका, मधु-कैटभ द्वारा अपहृत होने पर, हयग्रीव ने उद्धार किया था (४. १७, ४९)।

स

संजीवकरणी, एक ओषधि का नाम है (६. ५०, ३०)।

संतानक—जब श्रीराम ने अपने साथ आये हुये पुरवासियों को उत्तमलोक प्रदान करने का ब्रह्मा से अनुरोध किया तो उन्होंने उन सबके लिये सन्तानक लोक की व्यास्था की (७. ११०, १८–१९)।

संनादन, एक वानर यूथपति का नाम है जो वानरों का पितामह था। सारण ने रावण को बताया कि यह चलते समय एक योजन दूर स्थित पर्वत को भी अपने पार्श्वभाग से छू, और एक योजन ऊँचाई तक की वस्तुओं को अपने शरीर से ही पहुँच कर ग्रहण कर लेता है (६, २७, १७–१९)। राम ने इसके प्रति स्नेह प्रगट किया (७. ३९, २२)।

संयोधकण्टक, एक यक्ष का नाम है जिसने एक विशाल सेना लेकर मारीच आदि पर आक्रमण किया परन्तु अन्त में उससे पराजित होकर भाग गया (७. १४, २१–२२)।

संवत्सर—श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा के लिये कौसल्या ने ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, १५)।

संश्रय, चतुर्थ प्रजापति का नाम है जो शेष के बाद हुये थे (३. १४, ७)।

संह्राद, एक राक्षस का नाम है जिसके वध का सुमालि आदि राक्षसों ने उल्लेख किया (७. ६, ३४)। इसने भी रावण के साथ देवसेना पर आक्रमण किया (७. २७, २९)।

संह्रादी, एक राक्षस का नाम है जिसके वध का विभीषण ने उल्लेख किया (६. ८९, १२)। यह सुमालि का पुत्र था (७. ५, ४१)।

सगर, अयोध्या के एक धर्मात्मा राजा का नाम है। ये सदैव पुत्र-प्राप्ति के लिये उत्सुक रहा करते थे (१. ३८, २)। इनके दो पत्नियाँ, केशिनी और सुमति, थीं। इन्होंने अपनी दोनों पत्नियों के साथ हिमालय पर्वत पर जाकर भृगुप्रस्रवण नामक शिखर पर सौ वर्षों तक तपस्या की जिससे प्रसन्न होकर भृगु ने इन्हें एक पत्नी से एक और दूसरी से साठ हजार पुत्र-प्राप्ति का वर दिया (१. ३८, ३–८)। केशिनी ने इनके समक्ष वंश-प्रवर्त्तक एक ही पुत्र का तथा सुमति ने साठहजार पुत्रों को जन्म देने का वर ग्रहण किया (१. ३८, १३–१४)। इन्होंने अपनी पत्नियों-सहित भृगु की परिक्रमा करके नगर को प्रस्थान किया (१. ३८, १५)। केशिनी ने सगर के औरस पुत्र, असमञ्ज,

को जन्म दिया (१. ३८, १६)। इनके साठ हजार पुत्र रूप और युवावस्था से सुशोभित हो गये (१. ३८, १९)। इन्होंने अपने पापाचारी पुत्र असमञ्ज को नगर से बाहर निकाल दिया और यज्ञ करने का निश्चय किया (१. ३८. २०–२४)। "इन्द्र ने इनके यज्ञाश्व का अपहरण किया। सगर-पुत्रों ने समस्त पृथिवी का भेदन किया। देवताओं ने ब्रह्मा से इनके पुत्रों के इस तथा अन्य हिंसाकार्यों का वर्णन किया। (१. ३९)।" सगर-पुत्रों के भावी विनाश की सूचना देकर ब्रह्मा ने देवताओं को शान्त किया। सगर के पुत्र पृथिवी को खोदते हुये कपिल के पास पहुँचे और उनके रोष से जलकर भस्म हो गये (१. ४०)। "इनकी आज्ञा से अंशुमान् ने रसातल में प्रवेश करके यज्ञाश्व को लाकर अपने चाचाओं के निधन का समाचार सुनाया। इस समाचार को सुनकर इन्होंने कल्पोक्त विधि के अनुसार अपना यज्ञ पूर्ण किया और अपनी राजधानी लौटकर गंगा को ले आने के विषय में दीर्घकाल तक विचार करते रहे परन्तु इन्हें कोई निश्चित उपाय नहीं सूझा। तदनन्तर तीस हजार वर्षों तक राज्य करके ये स्वर्गलोक चले गये (१. ४१)।" इनकी मृत्यु के पश्चात् अंशुमान् ने राज्यभार ग्रहण किया (१. ४२, १–२)। सगर-पुत्रों की भस्मराशि को गंगा के जल ने आप्लावित कर दिया जिससे वे सभी राजकुमार निष्पाप हो स्वर्गलोक चले गये (१. ४३, ४१; ४४, ३)। ब्रह्मा ने भगीरथ को बताया कि जब तक सागर में जल रहेगा तब तक सगर-पुत्र देवों की भाँति स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित रहेंगे (१. ४४. ४)। भगीरथ ने इनके पुत्रों का विधिवत् तर्पण किया (१. ४४, १७)। "ये राजा असित द्वारा कालिन्दी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे। जब ये कालिन्दी के गर्भ में ही थे तो उनकी सौत ने उनके गर्भ को नष्ट करने के लिये जो गर (विष) दिया था, उसके साथ ही उत्पन्न होने के कारण ये 'सगर' कहलाये: 'सपत्न्या तु गरस्तस्यै दत्तो गर्भजिघांसया। सह तेन गरेणैव संजातः सगरोऽभवत् ॥', (१. ७०, ३७; २. ११०. २१)।" इनके एक पुत्र का नाम असमञ्ज था (१. ७०, ३८)। इनके पुत्र इनकी आज्ञा से पृथिवी खोदते हुये बुरी तरह मारे गये (२. २१, ३२; २. ११०, २२)। कैकेयी ने कहा कि इन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र, असमञ्ज, को निर्वासित कर दिया था (२. ३६, १६; २. ११०, २३)। दशरथ द्वारा हत अपते पुत्र के लिये शोक करते हुये मुनि-दम्पति ने मृतपुत्र के लिये उस लोक की कामना की जो इन्हें प्राप्त हुआ था (२. ६४. ४२)। विभीषण ने हनुमान् और सुग्रीव को बताया कि महासागर को राजा सगर ने खुदवाया था और श्रीराम उन्हीं के वंशज हैं (६. १९, ३१)।

सजप, एक प्रकार के ऋषियों का नाम है जिन्होंने शरभङ्ग मुनि के

स्वर्गलोक चले जाने के पश्चात् श्रीराम के समक्ष उपस्थित होकर राक्षसों से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की (३. ६, ५. ८–२६)।

सत्यकीर्ति, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसको महर्षि विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ४)।

सत्यवती, विश्वामित्र की ज्येष्ठ भगिनी का नाम है जो ऋचीक मुनि की पत्नी थी (१. ३४, ७)। यह अपने पति का अनुसरण करके स्वर्गलोक चली गई और यही हिमालय का आश्रय लेकर कौशिकी नदी के रूप में भूतल पर प्रवाहित है (१. ३४, ८–११)।

शत्यवान् प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को अर्पित किया (१. २८, ४)।

सनत्कुमार—इन्होंने पूर्वकाल में ऋषियों के समक्ष दशरथ के पुत्रप्राप्ति से सम्बन्ध रखनेवाली एक कथा सुनाई (१. ९, २)। सुमन्त्र ने इनकी कही हुई कथा का दशरथ के समक्ष वर्णन किया (१. ९, १८)।

सप्तजन, एक आश्रम का नाम है जहाँ सात मुनि निवास करते हुये कठोर व्रत का पालन करते थे। वे नीचे सर करके तपस्या करते हुये जल में शयन करते थे तथा सात दिन और सात रात्रियाँ व्यतीत करके केवल वायु का आहार करते हुये एक स्थान पर निश्चल भाव से रहते थे। उनके आश्रम का विस्तृत वर्णन किया गया है। लक्ष्मण सहित श्रीराम इस आश्रमवासी ऋषियों के उद्देश्य से उन्हें प्रणाम करके आगे बढ़े (४. १३, १८–२९)।"

सप्तर्षिगण—श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका भी आवाहन किया (२. २५, ११)।

सप्तसप्ति, अगस्त्य द्वारा वर्णित आदित्य-हृदय स्तोत्र में सूर्य का एक नाम है (६. १०५, ११)।

सप्तसागर, एक तीर्थ का नाम है जहाँ शबरी के गुरुजनों ने अपने चिन्तनमात्र से सात समुद्रों का जल प्रगट कर दिया था (७. ७४, २५)।

समुद्र–जब इसके तट पर जाकर श्रीराम ने सूर्य के समान तेजस्वी बाणों से इसे क्षुब्ध कर दिया तब इसने प्रगट होकर श्रीराम से नल द्वारा सेतु-निर्माण कराने के लिये कहा (१. १, ७९–८०)। इस पर बने सेतु से लङ्कापुरी में जाकर श्रीराम ने रावण का वध कर दिया (१. १, ८१)। इसने देवताओं के समक्ष अपनी नियत सीमा को न लाँघने की प्रतिज्ञा की थी जिसका इसने उल्लङ्घन नहीं किया (२. १२, ४४)। श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इसका आवाहन किया (२. २५, १३. ३६)। हनुमान् ने इसका लङ्घन किया और इसने अपने जल में छिपे हुये सुवर्णमय

गिरिश्रेष्ठ मेनाक से ऊपर उठकर हनुमान् को विश्राम देने के लिये कहा जिस पर मैनाक इसकी आज्ञा से इसके जल का भेदन करके ऊपर उठ गया (५. १, ८८–१०४)। मैनाक ने हनुमान् से कहा कि वे उसकी और समुद्र की भी प्रीति का सम्पादन करें (५. १, १२९)। मैनाक सहित इसने हनुमान् का सत्कार और अभिनन्दन किया; तदनन्तर हनुमान् इसका परित्याग करके आकाश में चलने लगे (५. १, १३४–१३५)। 'समुद्रमध्ये सुरसा बिभ्रती राक्षसं वपुः', (५. १, १४९)। "हनुमान् और सुग्रीव ने विभीषण से वानर-सेना के साथ इसे पार करने का उपाय पूछा जिस पर विभीषण ने कहा : 'रघुवंशी राजा श्रीराम को समुद्र की शरण लेनी चाहिये। इस अपार महासागर को राजा सगर ने खुदवाया था। श्रीराम सगर के वंशज हैं इसलिये समुद्र को उनका कार्य अवश्य करना चाहिये।' (६. १९, २८–३१)।" 'सागरस्योपवेशनम्', (६. १९, ३३)। श्रीराम इसके तट पर कुश बिछाकर तीन दिनों तक धरना देकर बैठे रहे परन्तु इसके दर्शन न देने से अन्ततः कुपित हो उन्होंने बाण द्वारा इसे बिक्षुब्ध कर दिया (६. २१)। "राम के इस प्रकार क्रोध करने पर क्षुब्ध सागर मूर्तिमान् होकर प्रगट हुआ। उस समय इसने विविध प्रकार के आभूषण धारण कर रक्खे थे और गंगा तथा सिन्धु आदि नदियाँ इसे घेर कर खड़ी थीं। निकट आकर इसने श्रीराम को सेना सहित सागर पार होने का उपाय बताने का वचन दिया। श्रीराम के यह पूछने पर कि वे अपने अमोघ वाण को किस स्थान पर छोड़ें, इसने उत्तर में स्थित द्रुमकुल्य नामक स्थान का नाम बताया (६. २२, १–३४)।" इसने श्रीराम को यह परामर्श दिया कि वे विश्वकर्मा-पुत्र नल से सागर पर पुल का निर्माण करायें (६. २२, ४३–४६)।

समुन्नत, एक राक्षस का नाम है जो प्रहस्त का सचिव था। दुर्मुख ने इसे कुचल डाला (६. ५८, १९. २१)।

१. सम्पाति, एक गृध्र का नाम है जिन्होंने हनुमान् को समुद्रलङ्घन के लिये प्रोत्साहित किया (१. १, ७२)। "ये जटायु के भ्राता तथा अपने बल और पुरुषार्थ के लिये सर्वत्र प्रसिद्ध थे। प्रायोपवेशन करते हुये वानर इन्हें देखकर भयभीत हो गये। अङ्गद के मुख से अपने भ्राता, जटायु, के वध का समाचार सुनकर ये अत्यन्त व्यथित हो उठे और अपने को उस पर्वत से नीचे उतार देने के लिये वानरों से अनुरोध करने लगे, क्योंकि सूर्य की किरणों से पंख जल गये होने के कारण ये उड़ने में असमर्थ थे (४. ५६, १–५. १७–२४)।" "शोक के कारण इनका स्वर विकृत हो गया था तथा वानर इनके कर्म पर शङ्कित थे। अङ्गद ने इन्हें पर्वत-शिखर से नीचे उतारकर जटायु के

वध आदि का वृत्तान्त, राम-सुग्रीव की मित्रता, और वालि-वध का प्रसंग सुनाकर अपने आमरण उपवास का कारण निवेदन किया (४. ५७)।" "अपनी आत्माकथा बताते हुये इन्होंने कहा : 'पूर्वकाल में जब इन्द्र ने वृत्रासुर का वध कर दिया तब हम दोनों भाईयों ने इन्द्र पर आक्रमण करके उन्हें विजित किया। लौटते समय सूर्य के निकट हो जाने के कारण जब मेरा छोटा भाई, जटायु, दग्ध होने लगा तो मैंने अपने पंखों से उसे ढँक लिया। उस समय मेरे दोनों पंख जल गये और मैं विन्ध्य पर्वत पर गिर गया। यहाँ आकर मैं कभी अपने भाई का समाचार नहीं पा सका (४. ५८, १–७)।" "इन्होंने कहा : 'मैं वरुण के लोकों को जानता हूँ और अमृतमन्थन तथा देवासुर संग्राम भी मैंने देखा है। एक दिन मैंने दुरात्मा रावण को सीता का हरण करके ले जाते हुये देखा। उस समय सीता 'हा राम ? हा राम !' कह कर विलाप कर रही थीं, इसी से मैं उन्हें पहचान गया। रावण लङ्का पुरी में निवास करता है और उसी के अन्तःपुर में सीता वन्दी हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम लोग समुद्र पार करके सीता का दर्शन कर सकोगे। गृध्र पञ्चम आकाश-मार्ग से उड़ते हैं और उससे भी ऊँची उड़ान गरुड़ की है। हम सब का जन्म गरुड़ से ही हुआ है परन्तु पूर्वजन्म के किसी निन्दित कर्म के कारण हम मांसाहारी हो गये। मैं यहीं से रावण और जानकी को देख रहा हूँ। अब तुम लोग इस समुद्र के उस पार जाकर सीता का दर्शन करो। मैं भी तुम्हारी सहायता से समुद्र के किनारे चलकर अपने भाई, जटायु, को जलाञ्जलि प्रदान करूँगा।' वानरों ने इनको समुद्र के किनारे पहुँचा दिया जहाँ इन्होंने जलाञ्जलि दी। तदनन्तर वानरों ने इन्हें पुनः इनके स्थान पर पहुँचाया (४. ५८, ११–३४)।" "वानरों के पूछने पर इन्होंने सीताहरण का विवरण बताते हुये कहा : 'मेरे पुत्र, सुपार्श्व, एक दिन मेरे लिये भोजन लाने गये परन्तु सूर्यास्त हो जाने पर खाली हाथ लौट आये। इस पर मैंने उनके लिये कठोर शब्दों का व्यवहार किया परन्तु उन्होंने बताया कि कुछ भी प्राप्त न होने पर वे समुद्र के भीतर विचरनेवाले जन्तुओं का मार्ग रोक कर खड़े हो गये। उन्होंने देखा कि एक काला पुरुष एक सुन्दर कान्तिवाली स्त्री को लेकर जा रहा है। उस पुरुष ने उनसे मार्ग की याचना की जिस पर उन्होंने उसे मार्ग दे दिया। वह पुरुष रावण था और उसके साथ की स्त्री सीता। उन्होंने बताया कि इसी कारण उन्हें विलम्ब हो गया। अपने पंखहीन होने के कारण मैंने उस समय सीता को बचाने का प्रयास नहीं किया परन्तु तुम सब वानर बलवान् और शक्ति-सम्पन्न हो, अतः तुम लोग सीता के दर्शन का उद्योग करो।' (४. ५९, ५–२८)।" इन्होंने अपनी आत्म-

कथा बताया (४. ६०)। इन्होंने विन्ध्य पर्वत पर निशाकर मुनि को अपने पंख जलने का कारण बताया (४. ६१)। निशाकर मुनि ने इन्हें सान्त्वना देते हुये भावी श्रीराम के कार्य में सहायता देने के लिये जीवित रहने का आदेश दिया और कहा कि इस प्रकार सहायता करके ये पंखयुक्त हो जायेंगे (४. ६२)। "निशाकर मुनि के आदेशानुसार श्रीराम का कार्य सिद्ध करने के लिये इन्होंने वानरों को ज्यों ही सीता का पता बताया, ये पंखयुक्त हो गये। तदनन्तर वानरों को सीता का दर्शन प्राप्त करने का आदेश देकर ये आकाश में उड़ गये (४. ६३, १–१३)।" इनकी बातों से रावण के निवास-स्थान तथा उसके भावी विनाश की सूचना प्राप्त कर वानर समुद्र तट पर आये (४. ६४, २)। हनुमान् ने सीता को बताया कि वे इनके कहने से ही समुद्र-लङ्घन करके लङ्का आये (५. ३१, १४)।

२. सम्पाति, एक वानर-प्रमुख का नाम है। किष्किन्धा पुरी की शोभा देखते हुये लक्ष्मण ने मार्ग में इनके भवन को भी देखा (४. ३३, १०)। इन्होंने प्रजङ्घ नामक राक्षस के साथ द्वन्द्व-युद्ध किया (६. ४३, ७)। प्रजङ्घ ने इन्हें आहत किया (६. ४३, २०)। श्रीराम ने समराङ्गण में इनके पराक्रम का उल्लेख किया (६. ४९, २७)। सुषेण ने बताया कि ये क्षीरसागर के तट पर उपलब्ध संजीवकरणी तथा विशल्या नामक ओषधियों को जानते हैं (६. ५०, २९)।

३. सम्पाति, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने सीता की खोज की (५. ६, २२)। यह विभीषण का मन्त्री था (६. ३७, ७)। यह माली का पुत्र था जो विभीषण का मंत्री बना (७. ५, ४४)।

सम्प्रक्षाल, एक प्रकार के ऋषियों का नाम है जिन्होंने शरभङ्ग मुनि के स्वर्गलोक चले जाने के पश्चात् श्रीराम के समक्ष उपस्थित होकर राक्षसों से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की (३. ६, २. ८–२६)।

१. सरमा, एक राक्षसी का नाम है जो रावण की आज्ञा से सीता की रक्षा करती थी। यह अत्यन्त दयालु स्वभाव की राक्षसी थी। सीता को मोह में पड़ा हुआ देखकर इसने उन्हें सान्त्वना दी। तदनन्तर रावण की माया का भेद खोलते हुये श्रीराम के आगमन का प्रिय समाचार सुनकर इसने उनके विजयी होने का सीता को विश्वास दिलाया (६. ३३)। सीता के अनुरोध से इसने उन्हें मन्त्रियों-सहित रावण का निश्चित विचार बताया (६. ३४)।

२. सरमा, गन्धर्वराज महात्मा शैलूष की पुत्री का नाम है जिसे विभीषण ने अपनी पत्नी के रूप में प्राप्त किया (७. १२, २४)। "इसका जन्म

मानसरोवर के तट पर हुआ था। जब इसका जन्म हुआ तो उस समय वर्षा ऋतु का आगमन होने से मानसरोवर बढ़ने लगा। उस समय इसकी माता ने पुत्री के स्नेह से युक्त होकर करुण-क्रन्दन करते हुये उस सरोवर से कहा : 'सरो मा वर्धयस्व'। घबराहट में उसने 'सरः मा' कहा इसीलिये इस कन्या का नाम 'सरमा' हो गया (७. १२, २५–२६)।

सरयू, एक नदी का नाम है जिसके उत्तर-तट पर यज्ञ-भूमि के निर्माण के लिये दशरथ ने अपने मंत्रियों को आज्ञा दी (१. ८, १५; १२, १५)। इसके तट पर दशरथ का यज्ञ आरम्भ हुआ (१. १४, १)। विश्वामित्र ने श्रीराम को इसके जल से आचमन करने के लिये कहा (१. २२, ११)। श्रीराम ने लक्ष्मण और विश्वामित्र के साथ इसके तट पर रात्रि में सुखपूर्वक निवास किया (१. २२, २२)। श्रीराम और लक्ष्मण गंगा-सरयू के शुभ संगम पर गये (१. २३, ५)। यह अयोध्या का स्पर्श करती हुई बहती है, और ब्रह्मसर (मानस) से निकलने के कारण इस पवित्र नदी का नाम सरयू पड़ा : 'तस्मात्सुस्राव सरसः सायोध्यामुपगूहते। सरःप्रवृत्ता सरयूः पुण्या ब्रह्मसरश्चच्युता ॥', (१. २४, ९)। श्रीराम ने इसका स्मरण किया (२. ४९, १४–१५)। इसके तट पर ही दशरथ ने भ्रमवश मुनि-कुमार का वध कर दिया था (२. ६४, १४–१६)। श्रीराम ने सीता से मन्दाकिनी नदी को सरयू के सदृश समझने के लिये कहा (२. ९५, १५)। परमधाम जाने के लिये श्रीराम इसके तट की ओर प्रस्थित हुये (७. १०९, ४)। श्रीराम ने अयोध्या से डेढ़ योजन दूर जाकर इसका दर्शन किया (७. ११०, १)। श्रीराम प्रजाजनों के साथ इसके तट पर आये (७. ११०, २)। श्रीराम ने इसके जल में प्रवेश किया (७. ११०, ७)। श्रीराम के साथ आये हुये समस्त पुरवासियों ने इसके जल में डुबकी लगाई (७. ११०, २३)। जिस-जिस ने इसके जल में गोता लगाया उसे सन्तानक लोक की प्राप्ति हुई (७. ११०, २४–२५)।

१. सरस्वती, पश्चिमवाहिनी एक नदी का नाम है। केकय से लौटते समय भरत इसके और गंगा के संगम स्थल से होकर आये थे (२. ७१, ५)। यहाँ सीता की खोज करने के लिये सुग्रीव ने विनत को भेजा (४. ४०, २१)।

२. सरस्वती—जब कुम्भकर्ण को वर देने के लिये उद्यत हुये ब्रह्मा को देवताओं ने रोका तो ब्रह्मा ने इन देवी का स्मरण किया (७. १०, ४१)। इन्होंने ब्रह्मा के समक्ष उपस्थित होकर जब अपने बुलाये जाने का प्रयोजन पूछा तो ब्रह्मा ने इन्हें कुम्भकर्ण की जिह्वा पर विराजमान् होकर देवताओं के अनुकूल वाणी के रूप में प्रगट होने के लिये कहा (७, १०, ४२–४३)। जब

कुम्भकर्ण को वर देकर ब्रह्मा चले गये तब इन्होंने कुम्भकर्ण को छोड़ दिया (७. १०, ४७) ।

सर्पनाथ, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ९) ।

सर्पास्य, एक राक्षस का नाम है जो श्रीराम के विरुद्ध युद्ध के लिये खर के साथ आया (३. २३, ३३) । इसने खर के साथ श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, २७) । श्रीराम ने इसका वध कर दिया (३. २६, २९–३५) ।

सर्वतापन, अगस्त्य द्वारा वर्णित आदित्यहृदय-स्तोत्र में सूर्य का एक नाम है (६. १०५, १४) ।

सर्वतीर्थ, एक ग्राम का नाम है । केकय से लौटते समय भरत ने यहाँ एक रात्रि निवास किया था (२. ७१, १४) ।

सर्वभवोद्भव, अगस्त्य द्वारा वर्णित आदित्यहृदय-स्तोत्र में सूर्य का एक नाम है (६. १०५, १४) ।

सलिलाहार, एक प्रकार के ऋषियों का नाम है जिन्होंने शरभङ्ग मुनि के स्वर्गलोक चले जाने के पश्चात् श्रीराम के समक्ष उपस्थित होकर राक्षसों से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की (३. ६, ४. ८–२६) ।

सविता, अगस्त्य मुनि द्वारा वर्णित आदित्यहृदय-स्त्रोत्र में सूर्य का एक नाम है (६, १०५, १०) ।

सहदेव, धूम्राश्वपुत्र सृञ्जय के पुत्र का नाम है (१. ४७, १५) ।

सह्य, एक पर्वत का नाम है जहाँ पर उत्पन्न होने वाले मृग जाति के हाथी अयोध्या में दशरथ के शासनकाल में वर्त्तमान थे (१. ६, २५) । श्रीराम आदि ने सेना सहित इसे देखा (६. ४, ३८. ७३) ।

सानुप्रस्थ, एक वानर का नाम है जिसे श्रीराम ने अन्य लोगों के साथ इन्द्रजित् का पता लगाने के लिये भेजा (६. ४५, ३) ।

सारण, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में सीता की खोज करते हुये हनुमान् गये (५. ६, २०) । हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १०) । "रावण ने शुक के साथ इसको गुप्तरूप से वानरों का भेद लेने के लिये भेजा । शुक-सहित इसने वानर का रूप धारण करके वानरी सेना में प्रवेश किया परन्तु छिपकर सेना का निरीक्षण करते हुये इन दोनों राक्षसों को पहचान कर विभीषण ने पकड़वा लिया । श्रीराम ने रावण के पास इसके द्वारा सन्देश भेजते हुये इसे मुक्त करा दिया (६. २५, १–२५) ।" श्रीराम का अभिनन्दन करने के पश्चात् इसने लङ्का लौटकर श्रीराम के पराक्रम आदि

का रावण से वर्णन किया (६. २५, २६–३३)। इसने रावण को पृथक-पृथक वानर यूथपतियों का परिचय दिया (६. २६–२७)। रावण ने इसे फटकार कर अपने दरबार से निकाल दिया (६. २९, १–१५)। रावण ने इस लङ्का के उत्तर द्वार की रक्षा करने के लिये कहा (६. ३६, १९)। 'शुकसारणौ', (६. ४४, २०; ७. १४, १; १९, १९; २७, २८; ३१, २६. ३४; ३२, ११. १७. २०. २२. ३६. ४८)।

सार्चिमाली, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र एक, अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित कर दिया था (१. २८, ७)।

सार्वभौम, एक गजराज का नाम है जो वैखानस सरोवर के क्षेत्र में विचरण करता था (४. ४३, ३५)।

सालकटङ्कटा, सन्ध्या की पुत्री का नाम है जिसका विद्युत्केश नामक राक्षस के साथ विवाह हुआ। गर्भ-धारण के पश्चात् इसने मन्दराचल पर्वत पर एक बालक को जन्म दिया। तदन्तर अपने उस नवजात पुत्र को वहीं छोड़कर यह अपने पति के साथ रमण करने चली गई (७. ४, २३–२५)। 'स्थिताः प्रख्यातवीर्यास्ते वंशे सालकटङ्कटे', (७. ८, २३)।

सालवन, कलिङ्ग नगर के निकट स्थित एक स्थान का नाम है। केकय से लौटते समय भरत इससे होकर आये थे (२. ७१, १६)। भरत के पास श्रीराम का संदेश ले जाते समय हनुमान् ने मार्ग में इस भयंकर वन को देखा (६. १२५, २६ : शालवन)।

साल्वेय, एक पर्वत का नाम है जहाँ शरभ नामक वानरयूथपति निवास करते थे (६. २६, ३६)।

सावित्र—देखिये **वसु**।

सांकाश्या, एक नगरी का नाम है जहाँ जनक के भ्राता, कुशध्वज, निवास करते थे। इसके चारों ओर परकोटों की रक्षा के लिये शत्रुओं के निवारण में समर्थ बड़े-बड़े यन्त्र लगाये गये थे। यह नगरी पुष्पक विमान के समान विस्तृत तथा पुण्य से उपलब्ध होने वाले स्वर्गलोक के सदृश सुन्दर थी (१. ७०, २–३)। जनक के दूतों ने यहाँ पहुँचकर कुशध्वज को मिथिला का यथार्थं समाचार और जनक का अभिप्राय भी सुनाया (१. ७०, ७)। यहाँ सुधन्वा राज्य करते थे जिन्होंने जनक पर आक्रमण किया (१. ७१, १६)। जनक ने सुधन्वा का वध करके यहाँ अपने भ्राता, कुशध्वज, को अभिषिक्त कर दिया (१. ७१, १९)।

सिद्धगण—श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका आवाहन किया (२. २५, १२)।

१. सिद्धार्थ, दशरथ के एक वयोवृद्ध मंत्री का नाम है जिन्होंने कैकेयी को समझाते हुये स्वयं भी राम के साथ वन जाने की इच्छा प्रगट की (२. ३६, १८–३३)। श्रीराम के स्वागत के लिये ये हाथी पर सवार होकर नगर से बाहर निकले (६. १२७, १०)। ये अन्य मन्त्रियों के साथ श्रीराम के अभ्युदय के लिये मन्त्रणा करने लगे (६. १२८, २४)।

२. सिद्धार्थ, एक दूत का नाम है जिन्हें दशरथ की मृत्यु के पश्चात् वसिष्ठ ने भरत को अयोध्या बुलाने के लिये भेजा था (२. ६८, ५)। ये राजगृह पहुँचे (२. ७०, १)। केकयराज ने इनका स्वागत किया जिसके पश्चात् इन्होंने भरत को वसिष्ठ का समाचार तथा उपहार आदि दिया (२. ७०, २–५)। भरत की बातों का उत्तर देने के बाद इन्होंने उनसे शीघ्र अयोध्या चलने के लिये कहा (२. ७०, ११–१२)

सिद्धाश्रम, एक आश्रम का नाम है जहाँ विष्णु को सिद्धि प्राप्त हुई थी (१. २९, ३, २६)। यहाँ के निवासियों (तपस्वियों) ने श्रीराम, लक्ष्मण और विश्वामित्र का आतिथ्य-सत्कार किया (१. २९, २६)। 'सिद्धाश्रमोऽयंसिद्धः स्यात्', (१. २९, २९)। श्रीराम ने यज्ञ में विघ्न डालने वाले मारीच तथा सुबाहु आदि का वध करके इस सिद्धाश्रम का नाम सफल कर दिया (१. ३०, २६)।

१. सिन्धु, एक समृद्धिशाली देश का नाम है जिस पर दशरथ का आधिपत्य था (२. १०, ३८)। दशरथ ने कैकेयी को प्रसन्न करने के लिये उसे यहाँ उत्पन्न होने वाले उत्तम उपहार देने के लिये कहा (२. १०, ३९–४०)।

२. सिन्धु, एक नदी का नाम है जिसके किनारे सीता की खोज करने के लिये सुग्रीव ने विनत को भेजा था (४. ४०, २१)।

सिन्धुनद, एक देश का नाम है जहाँ के निकट के अश्व उच्चैःश्रवा (इन्द्र के घोड़े) के समान होते हैं (१. ६, २२)।

सिंहिका—"जब हनुमान् सागर-लङ्घन कर रहे थे तो इस विशालकाया राक्षसी ने उनका भक्षण करने का निश्चय करके उनकी छाया पकड़कर अपनी ओर खींच लिया। हनुमान् से सुग्रीव इसका उल्लेख कर चुके थे, अतः अपने को संकुचित करके हनुमान् ने इसके मुख में प्रवेश किया और अपने तीखे नखों से इसके मर्मस्थानों को विदीर्ण कर डाला। इस प्रकार इसका वध करके हनुमान् पुनः बाहर निकल आये (५. १, १८५–१९७)।" 'तां हतां वानरेणाशु पतितां वीक्ष्य सिंहिकाम्। भूतान्याकाशचारीणि तमूचुः प्लवगोत्तमम्॥', (५. १, २००)। हनुमान् ने लङ्का से लौटने के पश्चात् वानरों से इसके वध का समाचार सुनाया (५. ५८, ३४–४६)। 'सिंहिकासुतः', (७. ३५, ३३. ४२)।

सीता, जनक की पुत्री और श्रीराम की पत्नी का नाम है जो श्रीराम के साथ वन गईं : 'जनकस्य कुले जाता देवमायेव निर्मिता । सर्वलक्षणसम्पन्ना नारीणामुत्तमा वधूः । सीताऽप्यनुगता रामं शशिनं रोहिणी यथा ।', (१. १, २७–२८. ३०) । श्रीराम आदि के साथ ये भी एक वन से दूसरे वन में गईं (१. १, ३०) । मारीच की सहायता से रावण ने इनका अपहरण कर लिया (१. १, ५३) । श्रीराम ने सुग्रीव से इनके अपहरण का वृत्तान्त सुनाया (१. १, ६०) । हनुमान् ने इनके स्थान के अतिरिक्त समस्त लङ्का को भस्म कर दिया (१. १, ७७) । रावण का वध करने के पश्चात् श्रीराम इनसे मिलकर अत्यन्त लज्जित हुये (१. १, ८१) । भरी सभा में श्रीराम के मर्मभेदी वचनों को न सह सकने के कारण साध्वी सीता अग्नि में प्रवेश कर गईं (१. १, ८२) । अग्नि के कहने पर श्रीराम ने इन्हें निष्कलङ्क माना (१. १, ८३) । वाल्मीकि ने इनसे सम्बन्धित समस्त बातों का पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, ३) । वाल्मीकि ने इनके श्रीराम के साथ विवाह का भी पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, ११) । अनुसूया के साथ इनकी कुछ काल तक की स्थिति तथा अंगराग समर्पण का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१, ३, १८) । रावण द्वारा इनके हरण तथा श्रीराम के इनके लिये विलाप, सुग्रीव द्वारा इनकी खोज के लिये वानर सेना के संग्रह, श्रीहनुमान् द्वारा इनके दर्शन तथा पहचान के लिये अगूंठी देने और इनसे वार्त्तालाप, राक्षसियों द्वारा इनके डाँट फटकार, इनके दर्शन के हनुमान् द्वारा श्रीराम से निवेदन, श्रीराम के इन्हें वन में त्याग देने आदि का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, २०–२२. २४. ३०–३२, ३६, ३८) । इनके चरित्र से युक्त रामायण महाकाव्य का वाल्मीकि ने लव-कुश को अध्ययन कराया (१. ४, ७) । जनक द्वारा यज्ञ के लिये भूमिशोधन करते समय हल के अग्रभाग से जोती गयी भूमि से उत्पन्न होने के कारण इनका नाम सीता रक्खा गया 'अथ मे कृषतः क्षेत्रं लाङ्गलादुत्थिता ततः । क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुता ।।", (१. ६६, १३) । ये अयोनिजा और वीर्यशुल्का थीं अतः जनक ने शिव के धनुष की प्रत्यन्चा चढ़ा देने वाले पराक्रमी राजा के साथ ही इनका विवाह करने का निश्चय किया (१. ६६, १४–२६) । जनक ने इन्हें श्रीराम को प्रदान करने की प्रतिज्ञा की (१. ६८, १०; ७१, २१) । जनक ने श्रीराम को अपनी पुत्री सीता को भार्या के रूप में समर्पित कर दिया (१. ७३, २४–२७) । राम और सीता परस्पर एक दूसरे पर अनुरक्त रहते हुये सुखपूर्वक क्रीडा-विहार करते थे (१. ७७, २६–३०) । ये श्रीराम के राज्याभिषेक का समाचार सुनकर उपस्थित हुईं (२. ४, ३१–३२) । श्रीराम इनके साथ

अपने भवन में गये (२. ४, ४५)। दशरथ ने कैकेयी को बताया कि सीता श्रीराम के वनवास पर शोक करेंगी जिससे दशरथ की मृत्यु हो जायगी (२. १२, ७३–७६)। ये श्रीराम के पास बैठकर अपने हाथ से चँवर डुला रही थीं; इनके अत्यन्त समीप बैठे हुये श्रीराम चित्रा से संयुक्त चन्द्रमा की भाँति शोभा पाते थे (२. १६, १०)। इन्होंने श्रीराम की शुभकामना की (२. १६, २१–२४)। 'अथ सीतायनुज्ञाप्य कृतकौतुकमङ्गलः', (२. १६, २५)। 'सर्वसीमन्तिनीभ्यश्च सीता सीमन्तिनीं वरा। अमन्यन्त हि ता नार्यो रामस्य हृदयप्रियाम् ॥ तया सुचरितं देव्या पुरा नुनं महत् तपः। रोहिणीव शशाङ्केन रामसंयोगमाप या ॥', (२. १६. ४०–४१)। श्रीराम ने सीता को समझा-बुझाकर उसी दिन विशाल दण्डक वन की यात्रा करने का निश्चय किया (२. १९, २५)। कौसल्या से वन जाने के लिये आशीर्वाद प्राप्त कर लेने के पश्चात् श्रीराम सीता के महल की ओर चल दिये। (२. २५, ४५)। इन्होंने श्रीराम को उदास देखकर उनसे उदासी का कारण पूछा (२. २६, ३–१८)। श्रीराम ने इन्हें सत्य-व्रत में तत्पर रहकर अयोध्या में ही निवास करने के लिये कहा (२. २६, २३–३८)। इन्होंने श्रीराम से अपने को भी साथ ही वन ले चलने की प्रार्थना की (२. २७)। श्रीराम ने वन के कष्टों का वर्णन करते हुये इन्हें वन चलने से मना किया (२. २८)। इन्होंने श्रीराम के समक्ष अपने वन-गमन का औचित्य सिद्ध करने का प्रयास किया (२. २९)। "इन्होंने श्रीराम के साथ वन चलने का प्रबल-आग्रह करते हुये कहा : 'जिस प्रकार सावित्री वीरवर सत्यवान् की अनुगामिनी थीं उसी प्रकार आप भी मुझे अपनी आज्ञा के अधीन समझिये। आपके विरह का शोक मैं सहन नहीं कर सकूँगी अतः आप मुझे भी अपने साथ ले चलें।' इस प्रकार आग्रह करती हुइ ये घोर विलाप करने लगी (२. ३०, १–२५)।" श्रीराम ने इन्हें वन चलने की स्वीकृति देते हुये पिता-माता और गुरुजनों की सेवा का महत्व बताया और वन चलने की तैयारी के लिये घर की वस्तुओं का दान करने की आज्ञा दी (२. ३०, २६—४७)। लक्ष्मण और इन्हें साथ लेकर श्रीराम दुःखी नगरवासियों के मुख से तरह-तरह की बातें सुनते हुये पिता के दर्शन के लिये कैकेयी के महल में गये (२. ३३) "चीर धारण करने में कुशल न होने के कारण जब ये एक वल्कल गले में डालकर और दूसरा हाथ में ले चुपचाप खड़ी रहीं तब श्रीराम ने इन्हें वल्कल पहनाया। उस समय राम तथा अन्तःपुर की अन्य स्त्रियाँ विलाप करने लगीं। स्त्रियों ने कहा कि इस प्रकार सीता को वल्कल धारण करके वन जाने की आज्ञा नहीं दी गई हैं (२. ३७, १३–२०)।" उस समय वसिष्ठ ने कैकेयी को धिक्कारते हुये इनके वल्कल-धारण को अनुचित बताया (२.

३७, २१–३७)। इन्हें वल्कल धारण करते हुये देखकर जब वहाँ उपस्थित लोग दशरथ को धिक्कारने लगे तो दशरथ ने भी इनके वल्कलधारण को अनुचित बताते हुये कैकेयी को फटकारा (२. ३८, १–१२)। "दशरथ ने कोषाध्यक्ष को इनके पहनने योग्य बहुमूल्य वस्त्र और आभूषण आदि देने का आदेश दिया। जब कोषाध्यक्ष ने इन्हें ये सब वस्तुयें समर्पित कर दीं तो इन्होंने अपने सभी अङ्गों को उन विचित्र आभूषणों से विभूषित किया (२. ३९, १५–१८)।" कौसल्या ने इन्हें गले से लगते हुये उपदेश दिया (२. ३९, १९–२६)। इन्होंने अपनी सास के उपदेशों को ग्रहण किया (२. ३९, २७–३२)। इन्होंने हाथ जोड़कर दीनभाव से दशरथ के चरणों का स्पर्श करके उनकी प्रदक्षिण की (२. ४०, १)। ये अपने अङ्गों में उत्तम अलङ्कार धारण करके वन जाने के लिये प्रसन्नचित्त से रथारूढ़ हुईं (२. ४०, १३, १४)। इनके वनके लिये प्रस्थान करने पर पुरवासियों ने कहा कि ये कृतार्थ हो गईं क्योंकि ये पतिव्रत धर्म में तत्पर रहकर छाया की भाँति अपने पति के साथ चलीं (२. ४०, २४)। श्रीराम ने इन्हें उस भूमि का दर्शन कराया जिसे पूर्वकाल में मनु ने इक्ष्वाकु को दिया था (२. ४९, १२)। श्रीराम ने इन्हें नाव पर बैठाया (२. ५२, ७५–७६)। इन्होंने हाथ जोड़कर गंगा से प्रार्थना की (२. ५२, ८२–९१)। ये श्रीराम और लक्ष्मण के साथ भरद्वाज आश्रम पहुँची (२. ५४)। (२. ५४)। इन्होंने श्रीराम और लक्ष्मण के साथ यमुना को पार करते समय यमुना और श्यामवट की प्रार्थना की (२. ५५, १६–२१. २४–२५)। कैकेयी ने भरत को बताया कि दशरथ ने राम और लक्ष्मण सहित इनके वनवास पर विलाप करते हुये प्राणत्याग कर दिया (२. ७२, ३६. ३८. ४०. ५०)। 'विवासनं च सौमित्रेः सीतायाश्च यथाभवत्', (२. ७५, ३)। "औपवास्यं तदाकार्षीद्राघवः सह सीतया', (२. ८७, १८)। भरत ने भूमि पर इनकी कुश-शय्या को देखकर शोकपूर्ण उद्गार प्रगट किये (२. ८८, १२. १४–१६)। श्रीराम ने इनको चित्रकूट की शोभा दिखाया (२. ९४)। श्रीराम ने इन्हें मन्दाकिनी नदी का दर्शन कराकर उसकी शोभा का वर्णन किया (२. ९५)। 'सीता च भजतां गुहाम्', (२. ९६, १४)। वैदेही', (२. ९७, २३; ९८, ६, ११)। 'निष्क्रान्तमात्रे भवति सहसीते सलक्ष्मणे', (२. १०२, ६)। अपने श्वशुर, दशरथ, के निधन का समाचार सुनकर इनके नेत्रों में आँसू भर आये जिससे श्रीराम ने इन्हें सान्त्वना दी (२. १०३, १५. १८–१९)। 'सीता पुरस्ताद् व्रजतु', (२. १०३, २१)। इन्होंने मन्दाकिनी के तट पर श्रीराम के आश्रम में आयी हुई सासुओं के चरणों में प्रणाम किया और कौसल्या ने इनका आलिङ्गन करके शोक प्रगट किया

(२. १०४, २२–२६)। ये श्रीराम और लक्ष्मण के साथ अत्रिमुनि के आश्रम पर जाकर उनके द्वारा सत्कृत हुईं (२. ११७, ४, ६)। श्रीराम की आज्ञा से इन्होंने अनसूया को प्रणाम करके उनका कुशल समाचार पूछा (२. ११७, १३–१५. १७–१८) और अनसूया ने इनका सत्कार करते हुये इनकी प्रशंसा की (२. ११७, १९–२७)। इन्होंने अनसूया के साथ वार्तालाप किया; अनसूया ने इन्हें प्रेमोपहार प्रदान किया, और अनसूया के पूछने पर इन्होंने उन्हें अपने स्वयंवर की कथा सुनाया (२. ११८)। ये अनसूया की आज्ञा से उनके दिये हुये वस्त्राभूषणों को धारण करके श्रीराम के पास आईं और श्रीराम इन्हें तथाविध देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुये (२. ११९. १–१४)। दण्डकारण्य के तापसों ने इन्हें मङ्गलमय आशीर्वाद प्रदान किये (३. १, १०–१२)। विराध ने इन्हें अपने अधिकार में कर लिया जिससे श्रीराम और लक्ष्मण चिन्तित हुये (३. २, १५–२१)। आहत हो जाने पर विराध ने इन्हें अलग छोड़ दिया (३. ३, १३)। जब विराध श्रीराम और लक्ष्मण को उठा ले गया तब इन्होंने विलाप करते हुये विराध से राम और लक्ष्मण को मुक्त कर देने का निवेदन किया (३. ४, १–३)। इनका यह वचन सुनकर श्रीराम तथा लक्ष्मण विराध का वध करने में शीघ्रता करने लगे (३. ४. ४)। ये भी श्रीराम के साथ शरभङ्ग के आश्रम में गईं (३. ५)। ये श्रीराम के साथ सुतीक्ष्ण के आश्रम में गईं (३. ७–८)। इन्होंने श्रीराम से निरपराध प्राणियों का वध न करने और अहिंसा-धर्म पर दृढ रहने का अनुरोध किया (३. ९)। महर्षि अगत्स्य ने इनकी प्रशंसा की (३. १३, २–८)। जटायु ने इनकी रक्षा करने का उत्तरदायित्व लिया (३. १४, ३४)। श्रीराम आदि ने सीता को जटायु के संरक्षण में सौंपा (३. १४, ३६)। राम और लक्ष्मण के साथ ये पञ्चवटी में सुखपूर्वक निवास करने लगीं (३. १५, ३१)। इनका तिरस्कार करते हुये शूर्पणखा ने अपने को इनसे श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयास किया (३. १७, २५–२७)। शूर्पणखा ने इनका तिरस्कार करते हुये स्वयं अपने को श्रीराम को समर्पित किया ओर इनका भक्षण करने के लिये इनपर झपटी (३, १८, १४–१७)। खर आदि राक्षसों से युद्ध करने के पूर्व श्रीराम ने इन्हें लक्ष्मण के साथ पर्वत की गुफा में भेज दिया (३. २४, १२–१५)। खर आदि राक्षसों का वध हो जाने के पश्चात् लक्ष्मण इन्हें पर्वत की गुफा से बाहर निकालकर श्रीराम के पास आ गये (३. ३०, ३७–४१)। अकम्पन ने इन्हें सम्पूर्ण स्त्रियों में एक रत्न बताते हुये रावण को इनके अपहरण का परामर्श दिया जिसको अङ्गीकार करसे हुये रावण ने इनका अपहरण करने का निश्चय किया (३. ३१. २९–३३)। इनके रूप और सौन्दर्य का वर्णन

करते हुये शूर्पणखा ने रावण को इन्हें अपनी भार्या बनाने के लिये प्रेरित किया (३. ३४, १४–२२)। मारीच ने इनके अपहरण करने के प्रयास से रावण को विरत होने का परामर्श दिया (३. ३७–३९)। रावण ने इन्हें लुभाने के लिये मारीच को काञ्चन-मृग बननें का परामर्श दिया (३. ४०, १९)। इन्हें लुभाने के लिये मारीच कपट-मृग बनकर इनके निकट विचरने लगा, जिसे देखकर इन्हें अत्यन्त विस्मय हुआ (३. ४२, २०–३५)। मृग को देखकर ये अत्यन्त प्रसन्न हुईं और राम तथा लक्ष्मण को भी उसे देखने के लिए बुलाया (३. ४३, १–४)। इन्होंने कपटमृग की शोभा का वर्णन करते हुये श्रीराम से उसे पकड़ लाने का प्रबल आग्रह किया। (३. ४३, ९–२१)। "मारीच की कपटवाणी सुनकर इन्होंने उसे श्रीराम का स्वर मानते हुये लक्ष्मण को राम की सहायता में लिये भेजने का प्रयास किया। लक्ष्मण के अस्वीकार करने पर उनके चरित्र पर आक्षेप करते हुये इन्होंने उन्हें राम के पास जाने के लिये विवश कर दिया (३. ४५)।" जब लक्ष्मण आश्रम से चले गये तब रावण ने साधुवेश में इनके पास आकर इनका परिचय पूछा और इन्होंने आतिथ्य के लिये उसे आमन्त्रित किया (३. ४६)। इन्होंने रावण को अपने पति का परिचय देकर वन में आने का कारण बताया और जब रावण ने इन्हें अपनी पटरानी बनाने की इच्छा प्रगट की तो इन्होंने उसे फटकारा (३. ४७)। जब रावण ने अपने पराक्रम का वर्णन किया तो इन्होंने उसे कड़ी फटकारें दी (३. ४८)। "जब रावण ने अपना सौम्यरूप त्याग कर इनका अपहरण कर लिया और आकाशमार्ग से इन्हें लेकर चला तो ये अत्यन्त विलाप करने लगीं। उस समय इन्होंने एक वृक्ष पर बैठे हुये जटायु को देखा और उनसे श्रीराम और लक्ष्मण को अपने अपहरण का समाचार बताने के लिये कहा (३. ४९)।" जब रावण ने जटायु का वध कर दिया तब दुःख से व्याकुल होकर ये जटायु को पकड़ कर विलाप करने लगीं (३. ५१, ४४–४६)। "जटायु के वध पर अत्यधिक विलाप करते हुये जब इन्होंने अपनी सहायता करने के लिये राम और लक्ष्मण का आवाहन किया तब रावण ने क्रुद्ध होकर इनका केश पकड़ लिया। उस समय वायु की गति रुक और सूर्य की प्रभा फीकी पड़ गई। इस दृश्य को देखकर ब्रह्मा ने कहा : 'बस अब कार्य सिद्ध हो गया।' इन्हें लेकर रावण आकाशमार्ग से दक्षिण दिशा की ओर चला (३. ५२)।" इन्होंने अपना अपहरण करनेवाले रावण को धिक्कारा (३. ५३)। "जब रावण आकाशमार्ग से इन्हें ले जा रहा था तो एक पर्वतशिखर पर पाँच श्रेष्ठ वानरों को देखकर इन्होंने अपने कुछ वस्त्राभूषणों को उनके बीच फेंक दिया। रावण इनके इस कार्य को जान नहीं पाया (३. ५४, १–४)।" रावण ने इन्हें

लंका लाकर अपने अन्तःपुर में रक्खा (३. ५४, ५–१३)। तदनन्तर रावण ने भयंकर राक्षसियों को इनके चतुर्दिक् पहरा देने का आदेश दिया (३. ५४, १४–१६)। रावण ने अपने अन्तःपुर का दर्शन कराते हुये इनसे अपनी भार्या बनने के लिये कहा (३. ५५)। श्रीराम के प्रति अपना अनन्य अनुराग दिखाकर इन्होंने रावण को फटकारा जिसपर रावण की आज्ञा से राक्षसियों ने इन्हें अशोकवाटिका में लाकर डराना-धमकाना आरम्भ किया (३. ५६)। ब्रह्मा की आज्ञा से देवराज इन्द्र ने निद्रा सहित लंका में आकर इन्हें दिव्य खीर अर्पित की (३. ५६ क)। इन्हें देखने की उत्सुकता में मारीच-वध के पश्चात् इनकी सुरक्षा की चिन्ता करते हुये श्रीराम शीघ्रतापूर्वक आश्रम लौटे (३. ५७, २–८)। मारीच-वध के पश्चात् इनकी चिन्ता करते हुये आश्रम लौट कर जब श्रीराम ने इन्हें वहाँ नहीं देखा तो अत्यन्त विषाद में डूब गये (३. ५८)। इन्हें आश्रम में अकेले छोड़ देने के सम्बन्ध में श्रीराम से वार्तालाप करते हुये लक्ष्मण ने इनकी कटूक्तियों को ही कारण बताया (३. ५९)। श्रीराम ने विलाप करते हुये वृक्षों और पशुओं से इनका पता पूछा और भ्रान्त होकर रुदन करते हुये बार-बार इनकी खोज की (३. ६०)। श्रीराम और लक्ष्मण ने इनकी खोज की और इनके न मिलने पर श्रीराम व्यथित हो उठे (३. ६१)। इन्हें कहीं न देखकर शोक से व्याकुल हो श्रीराम विलाप करने लगे (३. ६१–६२)। 'सीतायाश्च विनाशोऽयं मम चामित्रसूदन', (३. ६२, १८)। इनके और राक्षसों के पैरों के निशान देखकर श्रीराम घबरा उठे (३. ६४, ३८)। श्रीराम ने कबन्ध से भी इनका पता पूछा (२. ७१, २५)। श्रीराम ने लक्ष्मण से इनके बिना जीवित रहने की असमर्थता प्रगट की (३. ७५, २८)। लक्ष्मण ने हनुमान् को इनके वन में आने तथा अपहृत होने का वृत्तान्त बताया (४. ४, १०. १४)। हनुमान् ने सुग्रीव को रावण द्वारा इनके अपहृत होने का समाचार बताया (४. ५, ६)। सुग्रीव ने अपहरण का वृत्तान्त बताते हुये इन्हें ढूँढकर ला देने की प्रतिज्ञा की और इनके वस्त्रों और आभूषणों को दिखाया (४. ६, १–१४)। "श्रीराम ने इनके वस्त्राभूषणों को हृदय से लगाकर विलाप किया। तदनन्तर लक्ष्मण को उन्हें पहचानने के लिये कहा परन्तु दोनों नूपुरों को छोड़कर अन्य आभूषणों को पहचानने में लक्ष्मण ने अपनी असमर्थता प्रगट की। श्रीराम ने सुग्रीव से इनके अपहरणकर्ता का पता पूछा (४. ६, १५–२७)।" रमणीय प्रस्रवण गिरि पर भी श्रीराम इनके वियोग से दुःखी हो जाते थे (४. २७, ३०)। हनुमान् ने सुग्रीव से इनकी खोज करने के लिये कहा (४. २९, १५–२३) 'न जानकी मानव वंशनाथ त्वया सनाथा सुलभा परेण', (४. ३०, १८)। 'अथ पद्मपलाशाक्षीं

मैथिलीमनुचिन्तयन् । उवाच लक्ष्मणं रामो मुखेन परिशुष्यता ।।" (४. ३०, २१)। श्रीराम, लक्ष्मण के समक्ष इनके लिये व्यथित हो उठे (४. ३०, ६४–६६)। श्रीराम ने लक्ष्मण को बताया कि सुग्रीव इनकी खोज करने की प्रतिज्ञा करके भी खोज नहीं कर रहा है (४. ३०, ६९)। इनकी खोज के लिये सुग्रीव ने पूर्व दिशा में वानरों को भेजा (४. ४०)। इनकी खोज के लिये सुग्रीव ने दक्षिण दिशा में हनुमान् आदि वानरों को भेजा (४. ४१)। इनकी खोज के लिये सुग्रीव ने पश्चिम दिशा में सुषेण आदि वानरों को भेजा (४. ४२)। सुग्रीव ने इनकी खोज के लिये शतबलि आदि वानरों को उत्तर दिशा में भेजा (४. ४३)। 'क्व सीता केन वा दृष्टा को वा हरति मैथिलीम', (४. ५९, ३)। 'सीता श्रुतिसमाहितान्', (४. ५९, ५)। हनुमान् ने इनका दर्शन न होने पर रावण को ही बाँधकर लाने की प्रतिज्ञा की (५. १, ४०–४२)। 'तस्य सीता हृता भार्या रावणेन यशस्विनी', (५. १, १५४)। हनुमान् की मार से विह्वल होकर निशाचरी लङ्का ने बताया कि अब सीता के कारण दुरात्मा रावण तथा समस्त राक्षसों के विनाश का समय आ पहुँचा है (५. ३, ५०)। इनकी खोज करते हुये हनुमान् रावण के अन्तःपुर में भी इन्हें न पाकर व्यथित हो गये (५. ५, २३–२७)। हनुमान् ने रावण तथा अन्य राक्षस-प्रमुखों के भवनों में भी इनकी खोज की (५. ६,)। 'मार्गमाणस्तु वैदेहीं सीतामायतलोचनाम् । सर्वत्रः परिचक्राम हनुमानरिसूदनः ।।', (५. ९, ३)। 'ध्रुवं विशिष्टा गुणतो हि सीता', (५. ९, ७४)। हनुमान् रावण के अन्तःपुर में सोई हुई मन्दोदरी को सीता समझकर प्रसन्न हो गये (५. १०, ५३)। वह (मन्दोदरी) सीता नहीं है ऐसा निश्चय होने पर हनुमान् ने पुनः अन्तःपुर तथा रावण की पानभूमि में सीता की खोज की परन्तु निराश हुये (५. ११)। "लतामण्डपों, चित्रशालाओं और रात्रिकालिक विश्रामगृहों आदि में भी इन्हें न पाकर इनके मरण की आशङ्का से हनुमान् शिथिल हो गये। तदनन्तर उत्साह का आश्रय लेकर अन्य स्थानों में इनकी खोज की और कहीं भी इनका पता न लगने पर हनुमान् पुनः चिन्तित हो गये (५. १२)।" इनके विनाश की आशङ्का से हनुमान् चिन्तित हो गये और श्रीराम को इनके न मिलने की सूचना देने से अनर्थ की सम्भावना देख न लौटने का निश्चय करके पुनः इनकी खोज का विचार करते हुये अशोकवाटिका में इन्हें ढूँढ़ने के विषय में तरह-तरह की बातें सोचने लगे (५. १३)। हनुमान् ने एक अशोक वृक्ष पर छिपे रहकर वहीं से इनका अनुसन्धान किया (५. १४, ४२–५२)। हनुमान् ने एक चैत्यप्रासाद (मन्दिर) के पास इनको दयनीय दशा में देखा और इन्हें पहचान कर प्रसन्न हुये (५. १५, २०–५२)। हनुमान् ने मन ही

मन इनके शील और सौन्दर्य की सराहना करते हुये इन्हें कष्ट में पड़ी देख स्वयं भी इनके लिये शोक किया (५. १६)। इन्हें भयंकर राक्षसियों से घिरी हुई देखकर भी हनुमान् प्रसन्न हुये (५. १७)। रावण को देखकर दुःख, भय और चिन्ता में डूबी हुई इनकी अवस्था का वर्णन (५. १९)। रावण ने इन्हें विभिन्न प्रकार से प्रलोभन दिया (५. २०)। इन्होंने रावण को समझाते हुये उसे श्रीराम के सामने नगण्य बताया (५. २१)। इनके द्वारा फटकारे जाने पर रावण ने इन्हें अपने मतपरिवर्तन के लिये दो मास की अवधि दी परन्तु जब इन्होंने उसे पुनः फटकारा तो उसने इन्हें धमकाते हुये राक्षसियों के नियन्त्रण में रक्खा (५. २२, १–३७)। इन्हें धमका कर रावण अपने भवन में चला गया (५, २२, ४६)। राक्षसियों ने इन्हें विविध प्रकार से समझाने का प्रयत्न किया (५. २३)। इन्होंने जब राक्षसियों की बात को अस्वीकार कर दिया तो उन सबने इन्हें मारने-काटने की धमकी दी (५. २४)। राक्षसियों की बात अस्वीकार करने के पश्चात् इन्होंने श्रीराम के लिये अत्यन्त विलाप करते हुये अपने प्राणों को त्याग देने का निश्चय किया (५ २५–२६)। जब इन्होंने इतना भयंकर निश्चय प्रगट किया तो कुछ राक्षसियों ने इन्हें धमकाया और कुछ यह समाचार देने के लिये रावण के पास गईं (५. २७, १–३)। त्रिजटा की बात सुनकर जब राक्षसियों ने इनसे अपनी रक्षा करने के लिये कहा तो इन्होंने उसे स्वीकार किया (५. २७. ६२) विलाप करते हुये ये पुनः प्राण-त्याग के लिये उद्यत हुईं (५. २८)। जब इन्होंने यह निश्चय किया तो उस समय अनेक शुभ शकुन प्रगट हुये जिससे इनके मन का ताप शान्त हो गया (५. २९)। हनुमान् ने इनसे वार्तालाप करने के विषय में विचार किया (५. ३०)। हनुमान् ने इन्हें सुनाने के लिये रामकथा का वर्णन किया जिसे सुनकर ये अनेक प्रकार का तर्क-वितर्क करने लगीं (५. ३१–३२)। इन्होंने हनुमान् को अपना परिचय देते हुये अपने वनगमन और अपहरण का वृत्तान्त बताया (५, ३३) इन्होंने हनुमान् पर सन्देह किया (५. ३४, १–२७)। इनके पूछने पर हनुमान् ने श्रीराम के शारीरिक चिह्नों और गुणों का वर्णन करते हुये नर-वानर की मित्रता का प्रसङ्ग सुनाकर इनके मन में विश्वास उत्पन्न किया (५. ३५)। हनुमान् ने इन्हें श्रीराम की मुद्रिका दी जिससे ये अत्यन्त प्रसन्न हुईं और उत्सुकतापूर्वक हनुमान् से पूछा कि कब श्रीराम इनका उद्धार करेंगे (५ ३६, १–३२)। इन्होंने श्रीराम को शीघ्र बुलाने के लिये हनुमान् से अनुरोध किया परन्तु जब हनुमान् ने इन्हें अपने साथ ही श्रीराम के पास ले चलने का प्रस्ताव किया तो इन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया (५. ३७)।

हनुमान् को पहँचान के रूप में चित्रकूट पर्वत पर घटित हुये एक कौवे के प्रसङ्ग को सुनाते हुये इन्होंने श्रीराम को शीघ्र बुलाने का अनुरोध किया और चिह्नस्वरूप अपनी चूड़ामणि भी हनुमान् को दिया (५. ३८)। जब चूड़ामणि लेकर हनुमान् प्रस्थान करने के लिये उद्यत हुये तो इन्होंने उनसे श्रीराम आदि को उत्साहित करने का अनुरोध करते हुये समुद्रतरण के विषय में शङ्का प्रगट की परन्तु हनुमान् ने वानरों के पराक्रम का वर्णन करके इन्हें आश्वस्त किया (५. ३९)। इन्होंने श्रीराम से कहने के लिये हनुमान् को पुनः सन्देश दिया (५. ४०, १–१२)। इनके पास हनुमान् को देखकर राक्षसियों ने इनसे उनके सम्बन्ध में पूछा परन्तु इन्होंने कहा कि ये उस वानर को नहीं जानतीं (५. ४२, ५–११)। हनुमान् ने रावण को समझाते हुये इन्हें श्रीराम को लौटा देने का आग्रह किया (५. ५१, १२–३५)। हनुमान् की पूँछ में आग लगाये जाने का समाचार सुनकर ये अत्यन्त शोक-सन्तप्त होकर अग्निदेव से शीतल हो जाने की आराधना करने लगीं (५. ५३, २४–३२)। हनुमान् ने जब देखा कि सम्पूर्ण लङ्का भस्म हो गई तो वे इनके लिये चिन्तित हो उठे, किन्तु शीघ्र ही उनकी इस चिन्ता का निवारण हो गया (५. ५५)। लङ्कादहन के पश्चात् हनुमान पुनः इनसे मिले और विदा लेकर सागरलङ्घन के लिये प्रस्तुत हुये (५. ५६, १–२२)। 'शोकं सीतावियोगजम्', (५. ५७, ४७)। 'दर्शनं चापि लङ्कायाः सीताया रावणस्य च', (५. ५७, ५०)। 'नमस्यञ्शिरसा देव्यै सीतायै', (५. ५८, ७)। लङ्का से लौटने के पश्चात् हनुमान् ने वानरों से इनकी दशा का वर्णन किया (५. ५८, ५५–१०८)। हनुमान् ने इनकी दुरवस्था का वर्णन करते हुये वानरों को लङ्का पर आक्रमण करने के लिये उत्तेजित किया (५. ५९)। अङ्गद ने लङ्का को जीतकर इन्हें श्रीराम के पास पहुँचाने का उत्साहपूर्ण विचार प्रगट किया परन्तु जाम्बवान् ने इस सम्बन्ध में श्रीराम से परामर्श लेकर ही कुछ कार्य करने का अनुरोध किया (५. ६०)। हनुमान् ने श्रीराम को इनके दर्शन का समाचार दिया (५. ६४, ३८–३९)। हनुमान् ने श्रीराम को विस्तारपूर्वक इनका समाचार सुनाया (५. ६५)। इनकी चूड़ामणि देख और समाचार पाकर श्रीराम ने इनके लिये विलाप किया (५. ६६)। हनुमान् ने श्रीराम को इनका सन्देश सुनाया (५. ६७)। हनुमान् ने श्रीराम को इनके प्रति सन्देह और उसके निवारण का वृत्तान्त बताया (६. ६८)। श्रीराम ने इनके लिये शोक और विलाप किया (५. ५)। रावण ने हनुमान् द्वारा इनका दर्शन करने का उल्लेख किया (६. ६, २)। विभीषण ने इन्हें लौटा देने का रावण से अनुरोध किया (६. ९, ७–२२)। रावण के महल में जाकर विभीषण ने इन्हें श्रीराम

को लौटा देने का एक बार पुनः निष्फल आग्रह किया (६. १०)। रावण ने इनके प्रति अपनी आसक्ति बताकर राक्षसों को इनके हरण का प्रसङ्ग सुनाया (६. १२, १२–२०)। कुम्भकर्ण ने पहले इनके हरण के लिये रावण की भर्त्सना की परन्तु बाद में श्रीराम आदि से युद्ध के लिये उद्यत हुआ (६. १२, २८–४०)। महापार्श्व ने रावण को इन पर बलात्कार करने के लिये उकसाया (६. १३, ३–८)। 'इत्यहं तस्य शापस्य भीतः प्रसभमेव ताम्। नारोहये बलात्सीतां वैदेहीं शयने शुभे ॥', (६. १३, १५)। विभीषण ने श्रीराम को अजेय बताकर उनके पास इन्हें लौटा देने की रावण को सम्मति दी (६. १४, १–४)। विभीषण ने अपना परिचय देते हुये सुग्रीव को इनके रावण द्वारा हरण और श्रीराम को लौटा देने की बात कही (६. १७, १३–१४)। माया-रचित श्रीराम का कटा मस्तक दिखाकर रावण ने इन्हें मोह में डालने का प्रयत्न किया (६. ३१)। श्रीराम के मारे जाने का विश्वास करके इन्होंने विलाप किया (६. ३२, १–३४)। इन्हें मोह में पड़ी हुई देखकर सरमा नामक राक्षसी ने सान्त्वना देते हुये रावण की माया का भेद बताया और श्रीराम के आगमन का प्रिय समाचार देते हुये इन्हें उनके विजयी होने का आश्वासन दिया (६. ३३)। इन्होंने सरमा से रावण की गतिविधि के सम्बन्ध में पूछा जिस पर सरमा ने इन्हें मन्त्रियों सहित रावण का निश्चित विचार बताया (६. ३४)। रावण की आज्ञा से राक्षसियाँ इन्हें पुष्पक विमान पर बैठाकर रणभूमि में लाईं जहाँ इन्होंने मूर्च्छित श्रीराम और लक्ष्मण को देखकर शोक प्रगट किया (६. ४७, ७–२३)। जब ये अत्यन्त विलाप करने लगीं तो त्रिजटा नामक राक्षसी श्रीराम और लक्ष्मण के जीवित होने का विश्वास दिलाते हुये इन्हें लङ्का लौटा लाई (६. ४८)। इन्द्रजित् ने एक मायामयी सीता को युद्धभूमि में लाकर वानरों के समक्ष ही उसका वध कर दिया (६. ८१, ५–३२)। इनके वध का समाचार सुनकर श्रीराम शोक से मूर्च्छित हो गये (६. ८३, ८–१०)। मेघनाद के वध से शोकग्रस्त हो रावण ने इनके वध का निश्चय किया परन्तु सुपार्श्व के समझाने पर इस कुकृत्य से निवृत्त हुआ (६. ९२, ३२–६६)। श्रीराम ने हनुमान् के द्वारा इनके पास संदेश भेजा (६. ११२, २४–२५)। श्रीराम के आदेशानुसार तथा विभीषण से आज्ञा प्राप्त करके हनुमान् ने अशोकवाटिका में जाकर इनको श्रीराम का संदेश सुनाते हुये वार्तालाप किया और इनका सन्देश श्रीराम को सुनाया (६. ११३)। श्रीराम की आज्ञा से विभीषण इन्हें श्रीराम के समीप लाये और इन्होंने अपने प्रियतम, श्रीराम, के मुखचन्द्र का दर्शन किया (६. ११४)। इनके चरित्र पर सन्देह करके श्रीराम ने इन्हें ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया और अन्यत्र जाने के

लिये कहा (६. ११५)। इन्होंने श्रीराम को उपालम्भपूर्ण उत्तर देकर अपने सतीत्व की परीक्षा देने के लिये अग्नि में प्रवेश किया (६. ११६)। 'उपेक्षसे कथं सीतां पतन्तीं हव्यवाहने', (६. ११७, ६)। मूर्तिमान् अग्निदेव इनको लेकर चिता से प्रकट हुये और इन्हें श्रीराम को समर्पित करके इनकी पवित्रता को प्रमाणित किया जिसके पश्चात् श्रीराम ने इन्हें सहर्ष स्वीकार किया (६. ११८)। 'एवं शुश्रूषताऽव्यग्रं वैदेह्या सह सीतया', (६. ११९, ३२)। दशरथ ने इनको आवश्यक सन्देश दिया (६. ११९, ३३-३७)। अयोध्या की यात्रा करते समय श्रीराम ने इन्हें पुष्पक विमान से मार्ग के समस्त स्थान दिखाये (६. १२३)। भरत ने पुष्पक विमान पर श्रीराम के साथ इन्हें भी विराजमान देखा (६. १२७, २९)। भरत ने इनके चरणों में प्रणाम किया (६. १२७, ३८)। इन्होंने अपने पति की ओर देखकर हनुमान् को कुछ भेंट देने का विचार किया (६. १२८, ८०)। इन्होंने हनुमान् को वह हार दे दिया जो श्रीराम ने इन्हें दिया था (६. १२८, ७८.८२)। श्रीराम ने अशोकवनिका में विहार करते हुये इन्हें पवित्र पेय पिलाया (७. ४२, १८)। अशोकवनिका में जब श्रीराम इनके साथ विहार कर रहे थे तो उस समय ये गर्भिणी थीं और इन्होंने तपोवन देखने की इच्छा प्रकट की (७. ४२, २२–३४)। श्रीराम ने इन्हें तपोवन दिखाने का वचन दिया (७. ४२, ३५–३६)। भद्र आदि ने श्रीराम को इनके प्रति लोकापवाद का समाचार सुनाया (७. ४३, १६–१९)। श्रीराम ने सर्वत्र फैले हुये लोकापवाद की चर्चा करते हुये सीता को वन में छोड़ आने का लक्ष्मण को आदेश दिया (७. ४५)। लक्ष्मण इनको रथ पर बैठाकर वन में छोड़ने के लिये ले जाते समय गंगातट पर पहुँचे (७. ४६)। लक्ष्मण ने इन्हें नाव से गङ्गा के उस पार पहुँचा कर अत्यन्त दुःख के साथ इन्हें इनके त्यागे जाने की बात बताया (७. ४७): "त्याग की बात सुनकर ये अत्यन्त दुःखी हुई और श्रीराम के लिये लक्ष्मण के द्वारा सन्देश भेजा। लक्ष्मण के चले जाने के बाद ये घोर विलाप करने लगीं (७. ४८)।" मुनि-कुमारों ने महर्षि वाल्मीकि को इनके रोने का समाचार सुनाया (७. ४९, २)। वाल्मीकि उस स्थान पर आये जहाँ ये विराजमान थीं (७. ४९, ७, गीता प्रेस संस्करण)। महर्षि वाल्मीकि ने इन्हें पहचानते हुये अपने आश्रम में चलकर सुखपूर्वक निवास करने के लिये कहा (७. ४९, ६–१२)। महर्षि वाल्मीकि के आदेशानुसार ये उनके आश्रम में गईं जहाँ महर्षि ने इन्हें मुनि-पत्नियों के हाथ में सौंप दिया (७. ४९, १३–२०)। सुमन्त्र ने बताया कि दुर्वासा के वचनानुसार इनके दोनों पुत्रों का अयोध्या के बाहर ही अभिषेक होगा (७. ५१, २८)। वाल्मीकि की पर्णशाला में इन्होंने दो पुत्रों को जन्म

दिया (७. ६६, १–२)। श्रीराम ने इनकी शुद्धता प्रमाणित करने के लिये इन्हें शपथ कराने का विचार किया (७. ९५)। महर्षि वाल्मीकि ने इनकी शुद्धता का समर्थन किया (७. ९६, १०–२४)। जब महर्षि वाल्मीकि ने इनकी शुद्धता को प्रमाणित किया तब श्रीराम ने इनकी ओर एक दृष्टि डालकर जनसमुदाय से कहा कि यद्यपि उन्हें इनकी शुद्धता का विश्वास है तथापि वे जनसमुदाय की सम्मति मिल जाने पर ही इन्हें ग्रहण करेंगे (७. ९७, १–५)। इनके शपथ-ग्रहण के समय ब्रह्मा सहित समस्त देवता श्रीराम की सभा में उपस्थित हुये (७. ९७, ६–९)। इन्होंने अपनी शुद्धता प्रमाणित करने के लिये शपथग्रहण करते हुये कहा कि यदि इनकी कही हुई बातें सत्य हों तो पृथिवी इन्हें अपनी गोद में स्थान दें (७. ९७, १४–१६)। इनके ऐसा कहने पर एक दिव्य सिंहासन पर आरूढ़ होकर पृथिवी प्रगट हुईं और इन्हें लेकर रसातल में प्रवेश कर गईं (७, ९७, १८–२१)। इन्हें रसातल में प्रविष्ट हुआ देखकर देवताओं ने इन्हें साधुवाद दिया (७. ९७, २२–२३)। इनके भूतल में प्रवेश करने के पश्चात् उपस्थित जनसमुदाय कुछ समय के लिये अत्यन्त मोहाच्छन्न-सा हो गया (७. ९७, २७)। इनके रसातल में प्रवेश कर जाने के पश्चात् श्रीराम अत्यन्त दुःखी हुये (७. ९८, १–३) श्रीराम ने इनके लिये विलाप किया (७. ९८, ४–१०)।

१. सुकेतु, एक यक्ष का नाम है। ये महान् पराक्रमी और सदाचारी थे परन्तु इन्हें कोई सन्तान नहीं थी जिससे इन्होंने महान् तप किया। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी ने इन्हें ताटका नामक एक कन्यारत्न प्रदान किया (१. २५, ५–६)।

२. सुकेतु, नन्दिवर्धन के शूरवीर पुत्र का नाम है। इनका पुत्र देवरात था (१. ७१, ५–६)।

सुकेश, सालकटङ्कटा और विद्युत्केश के पुत्र का नाम है जिसे जन्म के पश्चात् ही छोड़कर इसकी माता अपने पति के साथ रमण करने चली गई। जब यह अकेले पड़े होने के कारण रोने लगा तो पार्वती सहित शिव ने इसे इसकी माता की अवस्था के समान ही नवयुवक बना दिया। इतना ही नहीं, शिव ने इसे एक आकाशचारी नगराकार विमान भी दिया। इस प्रकार शिव से वरदान प्राप्त कर यह सर्वत्र अबाधगति से विचरण करने लगा (७. ४, २६–३२)। ग्रामणी नामक गन्धर्व ने अपनी देववती नामक कन्या का इसके साथ विवाह कर दिया (७. ५, १–२)। इसने देववती के गर्भ से तीन पुत्र उत्पन्न किये (७. ५, ४)। यह अपने पुत्रों को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ (७. ५, ६)। इसके तीनों पुत्र त्रिविध अग्नियों के समान तेजस्वी थे (७.

५, ८)। महादेव ने इसके प्रति घनिष्ठता तथा अनुराग के कारण इसके पुत्रों का वध करने में अपनी असमर्थता व्यक्त की (७. ६, ९–१०)। महादेव के आदेश पर देवों ने विष्णु के पास आकर इसके पुत्रों से अपने भय को व्यक्त किया (७. ६, १३–१४)।

सुग्रीव, एक वानर का नाम है जिनसे हनुमान् ने श्रीराम का परिचय कराया (१. १, ५९)। श्रीराम ने इन्हें सीताहरण का वृत्तान्त सुनाया (१. १, ६०)। इन्होंने अग्नि को साक्षी करके श्रीराम को मित्र बनाया और अपने ज्येष्ठ भ्राता, वालिन्, के साथ अपनी शत्रुता का वृत्तान्त सुनाया (१. १, ६१–६२)। इन्होंने श्रीराम से वालिन् के बल का वर्णन किया क्योंकि इन्हें श्रीराम के बल के विषय में बराबर शंका बनी रहती थी (१. १, ६३)। राम के बल की प्रतीति के लिये इन्होंने, दुन्दुभि नामक दैत्य का विशाल शरीर श्रीराम को दिखाया (१. १, ६४)। श्रीराम द्वारा दुन्दुभि के शरीर को दूर फेंक देने तथा साल वृक्षों का वेधन कर देने के पराक्रम से आश्वस्त होकर इन्होंने किष्किन्धा-गुहा में प्रवेश किया (१. १, ६७)। इन्होंने वालिन् के पास जाकर गर्जना की जिससे वालिन् ने घर से बाहर निकल कर इनके साथ युद्ध किया (१. १, ६८–६९)। वालिन् का वध करने के पश्चात् श्रीराम ने सुग्रीव को राज्य दे दिया (१. १, ७०)। इन्होंने सीता की खोज के लिये वानरों को अनेक दिशाओं में भेजा (१. १, ७१)। इनके साथ महासागर के तट पर जाकर श्रीराम ने अपने बाणों से समुद्र को क्षुब्ध कर दिया (१. १, ७९)। ये श्रीराम के साथ पुष्पक विमान पर आरूढ़ होकर नन्दिग्राम आये (१. १, ८८)। इनके वालिन् के साथ युद्ध तथा श्रीराम द्वारा राज्य-समर्पण; शरत्काल में सीता की खोज कराने के लिये इनकी प्रतिज्ञा; श्रीराम के इनके प्रति क्रोध-प्रदर्शन तथा सीता की खोज के लिये वानरसेना संग्रह करके समस्त दिशाओं में वानरों को भेजने और उन्हें पृथिवी के समुद्र-द्वीप आदि विभागों का परिचय देने आदि का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था(१. ३, २३–२५)। सूर्य ने इन्हें उत्पन्न किया (१. १७, १०)। ये वालिन् के भ्राता थे और हनुमान् आदि समस्त वानर इनकी सेवा में तत्पर रहते थे (१. १७, ३१–३२)। कबन्ध ने श्रीराम और लक्ष्मण को इनकी सहायता प्राप्त करने का परामर्श देते हुये वालिन् के साथ इनके वैर आदि की चर्चा की (३. ७२, ११–२७)। कबन्ध ने श्रीराम को इनका निवास-स्थान बताया (३. ७३, ३९)। 'वीक्षन्तौ जग्मतुर्द्रष्टुं सुग्रीवं रामलक्ष्मणौ', (३. ७४, २)। "श्रीराम ने लक्ष्मण को बताया कि सूर्यपुत्र धर्मात्मा सुग्रीव वालिन् के भय से सदा डरे रहने के कारण चार वानरों के साथ ऋष्यमूक पर्वत पर

निवास करते हैं। अतः श्रीराम ने इन वानरश्रेष्ठ से शीघ्र मिलने की इच्छा व्यक्त की क्योंकि सीता के अन्वेषण का कार्य इन्हीं पर आधारित था (३. ७५, ८–९)। 'हरिर्ऋक्षरजोनाम्न: पुत्रस्तस्य महात्मनः । अध्यास्ते तु महावीर्यः सुग्रीव इति विश्रुतः ॥', (३. ७५, २६)। श्रीराम और लक्ष्मण को देखकर ये अत्यन्त चिन्तित हो उठे (४. १, १३१–१३२)। श्रीराम और लक्ष्मण को देखकर वानरों सहित ये आशङ्कित हो उठे जिसका हनुमान् ने निवारण किया और इन्होंने हनुमान् को श्रीराम तथा लक्ष्मण के पास उनका भेद लेने के लिये भेजा (४. २)। इनकी आज्ञा से हनुमान् ने ऋष्यमूक पर्वत से श्रीराम और लक्ष्मण के पास जाकर उन्हें इनका परिचय दिया और अपने आने का प्रयोजन बताया (४. ३,१. २१–२४)। श्रीराम ने लक्ष्मण को इनके सचिव, हनुमान्, का परिचय दिया (४. ३, २७–२८)। 'एवमुक्तस्तु सौमित्रिः सुग्रीवसचिवं कपिम्', (४. ३, ३७)। लक्ष्मण ने हनुमान् से बताया कि वे दोनों भ्राता इनके गुण जान चुके हैं और इन्हीं की खोज में यहाँ आये हैं (४. ३, ३९)। श्रीराम का इनके प्रति सौम्य भाव जानकर हनुमान् अत्यन्त प्रसन्न हुये और बोले : 'अब अवश्य ही महामना सुग्रीव को राज्य की प्राप्ति होने वाली है, क्योंकि ये महानुभाव श्रीराम और लक्ष्मण किसी कार्य या प्रयोजन से यहाँ आये हैं और वह कार्य सुग्रीव के ही द्वारा सिद्ध होने वाला है।' (४. ४, १–२)। "लक्ष्मण ने हनुमान् से बताया कि उन्हें दनु नामक दैत्य ने इनका परिचय बताते हुये कहा कि ये ही सीता का अपहरण करनेवाले राक्षस का पता लगा देंगे। अतः लक्ष्मण ने इस कार्य में इनके सहयोग की इच्छा प्रगट की जिससे हनुमान् आश्वासन देकर श्रीराम सहित लक्ष्मण को इनके पास ऋष्यमूक पर्वत पर ले आये (४. ४, १५–३६)।" हनुमान् से श्रीराम और लक्ष्मण का परिचय प्राप्त करके इन्होंने श्रीराम से मिलकर अग्नि को साक्षी बनाकर उनसे मैत्री की। इन्होंने श्रीराम से वालिन् के वैर, उनके द्वारा घर से निकाल दिये जाने तथा अपनी पत्नी को छीन लेने का वृत्तान्त बताया जिसे सुनकर श्रीराम ने वालिन् के वध की प्रतिज्ञा की। इस पर ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (४. ५, ८–३३)।" इन्होंने श्रीराम को सीता-हरण का समाचार बताते हुये सीता के आभूषण दिखाये और श्रीराम ने इनसे सीता का अपहरण करनेवाले अपने शत्रु का पता पूछा (४. ६, १–१४. २३–२७)। इन्होंने शोक से पीड़ित हुये श्रीराम को समझाया जिससे प्रसन्न होकर श्रीराम ने भी इनको इनकी कार्यसिद्धि का विश्वास दिलाया (४. ७)। इन्होंने श्रीराम से अपने दुःख का निवेदन किया और श्रीराम ने इन्हें आश्वासन देते हुये इनके भ्राता, वालिन्, के साथ वैर होने का कारण पूछा (४. ८)। इन्होंने श्रीराम को वालिन् के साथ अपने वैर का

कारण बताया (४. ९)। "अपने भ्राता के साथ वैर का वृत्तान्त बताते हुये इन्होंने वालिन् को मनाने तथा अन्ततः उनके द्वारा निष्कासित कर दिये जाने का कारण बताया। इन्होंने यह भी बताया कि इस प्रकार निष्कासित और पत्नी-रहित कर दिये जाने के पश्चात् अब ये ऋष्यमूक पर्वत पर रहते हैं। समस्त वृत्तान्त बताकर इन्होंने श्रीराम से वालिन का दमन करने का निवेदन किया (४. १०, १–३०)।" श्रीराम ने इन्हें वालिन् का वध करने का आश्वासन दिया (४. १०, ३१–३५)। इन्होंने वालिन् के पराक्रम, वालिन् द्वारा दुन्दुभि दैत्य का वध करके उसके शव को मतङ्गवन में फेंकने, मतङ्गमुनि द्वारा वालिन् को दिये गये शाप आदि का श्रीराम से वर्णन किया (४. ११, १–६८)। पुनः इन्होंने वालिन् द्वारा पूर्वकाल में सात साल-वृक्षों के भेदन का उल्लेख किया (४. ११, ७०–७१)। इन्होंने श्रीराम से सालवृक्षों का भेदन करने के लिए कहा (४. ११, ८७–९३)। जब श्रीराम ने एक ही बाण से सात साल-वृक्षों का भेदन कर दिया तो इन्होंने प्रसन्न होकर श्रीराम के चरणों में प्रणाम किया (४. १२, ५–६)। श्रीराम के कहने पर इन्होंने किष्किन्धा में जाकर वालिन् को मल्लयुद्ध के लिये ललकारा जिसे सुनकर वालिन् ने बाहर निकल कर इनके साथ घोर युद्ध करते हुये इन्हें आहत कर दिया (४. १२, १२–२१)। "वालिन् से पराजित होकर ये ऋष्यमूक पर्वत पर भाग आये और श्रीराम के उपस्थित होने पर उनको वालिन् का वध न करने पर उपालम्भ दिया। उस समय श्रीराम ने इन्हें बताया कि वालिन् के साथ इनकी आकृति की समानता के कारण वे यह समझ नहीं सके कि कौन वालिन् है और कौन सुग्रीव, और इसी कारण उन्होंने बाण नहीं चलाया। श्रीराम के आग्रह पर गजपुष्पी माला धारण करके ये पुनः किष्किन्धा गये (४. १२, २२–४२)।" इन्होंने श्रीराम आदि से सप्तजनाश्रम का वर्णन किया (४. १३, १७–२८)। श्रीराम के द्वारा आश्वस्त होकर इन्होंने वालिन् को युद्ध के लिये ललकारा (४. १४, २–३)। 'गर्जन्निव महामेघो वायुवेग-पुरःसरः ॥ अथ बालार्कसदृशो दृप्तसिंहगतिस्ततः ।', (४. १४, ३–४)। श्रीराम का आश्वासन पाकर सुवर्ण के समान पिङ्गल वर्ण वाले सुग्रीव ने आकाश को विदीर्ण करते हुये कठोर स्वर में भयंकर गर्जना की (४. १४, १९)। ये सूर्यपुत्र थे (४. १४, २२)। वालिन् को समझाते हुये उनकी पत्नी ने इनके साथ समझौता करने का परामर्श दिया (४. १५, ७–३०)। इन्होंने वालिन् के साथ भयंकर मल्लयुद्ध किया परन्तु अन्त में उनसे परास्त होकर श्रीराम के लिये इधर-उधर दृष्टि दौड़ाने लगे (४. १६, १५–३०)। श्रीराम के कथन से निरुत्तर हुये वालिन् ने अपने अपराध के लिये क्षमा

माँगते हुये उनसे इनकी रक्षा करने का भी निवेदन किया (४. १८, ५५–६०)। श्रीराम ने वालिन् को आश्वासन दिया कि अङ्गद सुग्रीव के पास भी पूर्ववत् सुखपूर्वक निवास करेंगे (४. १८, ६७)। करुण क्रन्दन करती हुई तारा तथा उसके साथ आये हुये अङ्गद को देखकर इन्हें अत्यन्त कष्ट हुआ और ये विषाद में डूब गये (४. १९, २८)। जब मरणासन्न वालिन् ने अपनी सुवर्णमाला देते हुये इनके प्रति भ्रातृप्रेम से युक्त वचन कहे तो ये अत्यन्त दुःखी हो उठे और इनके हृदय में अपने भ्राता के प्रति वैरभाव समाप्त हो गया (४. २२, १७–१८)। 'कृतकृत्योऽद्य सुग्रीवो वैरेऽस्मिन्नतिदारुणे। यस्य रामविमुक्तेन हृतमेकेषुणा भयम् ॥', (४. २३, १५)। वालिन् की मृत्यु तथा उनकी पत्नी, तारा, को शोकमग्न देखकर ये अत्यन्त खिन्न हुये और अपने जीवन का अन्त कर देने के लिये श्रीराम से आज्ञा माँगने लगे (४. २४, १–२३)। श्रीराम ने इन्हें सान्त्वना दी (४. २५, १)। लक्ष्मण ने इन्हें वालिन् का दाह-संस्कार करने के लिये कहा (४. २५, १२–१८)। इन्होंने वालिन् के शव को शिबिका में रखकर पुष्पों आदि से अलंकृत किया (४, २५, २८–२९)। इन्होंने शास्त्रानुकूल विधि से अपने मृत भ्राता का और्ध्व दैहिक संस्कार सम्पन्न किया (४. २५, ३०)। इन्होंने वालिन् के लिये जलाञ्जलिं दी (४. २५, ५०)। जब हनुमान् ने इनके अभिषेक के लिये श्रीराम से किष्किन्धा पधारने का निवेदन किया तो पिता की आज्ञा से वनवास कर रहे श्रीराम ने किसी नगर या ग्राम में प्रवेश करने की अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुये इनके राज्याभिषेक की आज्ञा दी और अङ्गद को युवराज के पद पर प्रतिष्ठित करने के लिये कहा (४. २६ ८–१७)। श्रीराम की आज्ञा से ये किष्किन्धा पुरी में आये जहाँ वानरों ने इनका स्वागत किया (४. २६, १८–२०)। अन्तःपुर में पधारने पर इनके सुहृदों तथा अन्तःपुर की स्त्रियों ने इनका सत्कार किया और उसके पश्चात् इनका अभिषेक किया गया (४. २६, २१–३६)। इन्होंने अङ्गद को भी युवराज के पद पर अभिषिक्त किया जिससे समस्त वानर इनकी प्रशंसा करने लगे (४. २६, ३७–३८)। इन्होंने श्रीराम के पास जाकर अपने महाभिषेक का समाचार दिया (४. २६, ४१)। राज्याभिषेक के पश्चात् ये किष्किन्धा में निवास करने लगे (४. २७, १)। श्रीराम ने कहा कि वे सुग्रीव की प्रसन्नता और नदियों के जल की स्वच्छता चाहते हुये शरत्काल की प्रतीक्षा कर रहे हैं (४. २८, ६३)। लक्ष्मण ने कहा कि ये शीघ्र ही श्रीराम का मनोरथ सिद्ध करेंगे (४. २८, ६६)। 'समृद्धार्थं च सुग्रीवं मन्दधर्मार्थसंग्रहम्', (४. २९, २)। हनुमान् ने इन्हें श्रीराम का प्रिय कार्य करने के लिये वानरों को आज्ञा

देने का अनुरोध किया (४. २९, २१)। ये सत्वगुण से सम्पन्न थे अतः इन्होंने हनुमान् के कहने पर वानरों को एकत्र करने का आदेश दिया (४. २९, २८–३३)। इस प्रकार का आदेश देकर ये अपने महल में चले गये (४. ३०, १)। 'कामवृत्तं च सुग्रीवं नष्टां च जनकात्मजाम्', (४. ३०, ३)। श्रीराम ने इनसे कोई समाचार न प्राप्त होने के कारण लक्ष्मण से कहा कि वे किष्किन्धा में जाकर विषय-भोग में लिप्त इस मूर्ख वानर सुग्रीव को उसके कर्तव्य का स्मरण दिलायें अन्यथा वे (राम) उसका (सुग्रीव का) वध कर देंगे (४. ३०, ७०–८४)। लक्ष्मण ने इनपर रोष प्रकट किया (४. ३१, १–४)। श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा : 'तुम्हें कटु वचनों का परित्याग करके सुग्रीव से इतना ही कहना चाहिये कि उन्होंने सीता की खोज के लिये जो समय नियत किया था वह व्यतीत हो गया है।' (४. ३१, ८)। 'रोषात्प्रस्फुरमाणोष्ठः सुग्रीवं प्रति लक्ष्मणः', (४. ३१, १७)। जब एक वानर ने इन्हें लक्ष्मण के आगमन तथा लक्ष्मण के क्रोध का समाचार दिया तो विषयासक्ति के कारण इन्होंने उसे नहीं सुना (४, ३१, २१–२२)। 'सुग्रीवस्य प्रमादम्', (४. ३१, २८)। जब अङ्गद ने आकर इन्हें लक्ष्मण के क्रोध का समाचार दिया तो ये निद्रामग्न होने के कारण उसे सुन नहीं सके (४. ३१, ३७–३८)। कुपित लक्ष्मण को देखकर अनेक वानर सिंहनाद करने लगे जिससे इनकी निद्रा भङ्ग हो गई (४. ३१, ४०–४१)। "लक्ष्मण के कुपित होने का समाचार पाकर ये चिन्तित हुये और अपने मंत्रियों से परामर्श करने लगे। उस समय हनुमान् ने इन्हें समझाते हुये श्रीराम को दिये हुये वचन का स्मरण कराया (४. ३२)।" इनका भवन इन्द्रसदन के समान रमणीय, विद्विध फल-पुष्पों से युक्त और भली भाँति सुरक्षित था (४. ३३, १४–१७)। लक्ष्मण ने इनके भवन में प्रवेश किया (४. ३३, १८)। लक्ष्मण ने इनके अन्तःपुर में अनेक सुन्दरी स्त्रियाँ देखीं (४. ३३, २२)। "लक्ष्मण के धनुष की टंकार सुनकर ये समझ गये कि लक्ष्मण आ पहुँचे हैं अतः भयभीत होकर सिंहासन से उठ खड़े हुये। उस समय इन्होंने तारा को लक्ष्मण को शान्त करने के लिये भेजा (४. ३३, २८–३७)।" लक्ष्मण ने तारा से इनके कर्तव्यच्युत होने की बात कही (४. ३३, ४४–४५)। इनके महल के भीतर प्रवेश करके लक्ष्मण ने इन्हें देखा (४. ३३, ६२–६४)। जब ये लक्ष्मण के समीप उपस्थित हुये तो उन्होंने कटु शब्दों में इनकी भर्त्सना की (४. ३४)। तारा ने युक्तियुक्त वचनों से इनका समर्थन करते हुये लक्ष्मण को शान्त करने का प्रयास किया (४. ३५)। इन्होंने अपनी लघुता तथा श्रीराम की महत्ता बताते हुये लक्ष्मण से क्षमा माँगी (४. ३६, ४–११)।

इनकी बातों से प्रसन्न होकर लक्ष्मण ने इनकी प्रशंसा करते हुये अपने साथ चलने के लिये कहा (४. ३६, १२–२०)। इन्होंने हनुमान को वानर सेना का संग्रह करने का आदेश दिया (४. ३७, १–१५)। वानरों के उपस्थित होने पर ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (४. ३७, ३७)। ये लक्ष्मण सहित श्रीराम के पास आकर उनके समक्ष करबद्ध खड़े हो गये (४. ३८, ४–१७)। इन्होंने श्रीराम के प्रति अपना आभार प्रगट करते हुये सीता को पुनः प्राप्त कर लेने का आश्वासन दिया (४. ३८, २७–३५)। श्रीराम ने इनके प्रति कृतज्ञता प्रगट की (४. ३९, १–७)। आमन्त्रित वानर-यूथपति सभी दिशाओं से इनके पास आने लगे (४. ३९, ८–४५)। इन्होंने पूर्वदिशा के स्थानों का वर्णन करते हुये सीता की खोज के लिये वानरों को भेजा (४. ४०)। इन्होंने दक्षिण दिशा का परिचय देते हुये वहाँ प्रमुख वानरों को सीता की खोज के लिये भेजा (४. ४१)। इन्होंने पश्चिम दिशा के स्थानों का परिचय देते हुये वहाँ सीता की खोज के लिये सुषेण आदि वानरों को भेजा (४. ४२)। इन्होंने उत्तर दिशा के स्थानों का परिचय देते हुये वहाँ सीता की खोज के लिये शतबलि आदि वानरों को भेजा (४. ४३)। इन्होंने सीता की खोज के लिये हनुमान् को विशेष रूप से उपयुक्त बताया (४. ४४, १–७)। इन्होंने समस्त वानरों को बुलाकर श्रीराम के कार्य की सिद्धि के लिये उन्हें प्रेरित किया (४. ४५, १–२)। "जब श्रीराम ने इनसे पूछा कि ये समस्त भूमण्डल के स्थानों से कैसे परिचित हो गये तो इन्होंने उसका विस्तृत वृत्तान्त बताते हुये कहा कि वालिन् के भय से ये समस्त भूमण्डल पर भागते फिरे और अन्ततः ऋष्यमूक पर्वत पर आकर शरण ली क्योंकि यहाँ वालिन् का प्रवेश नहीं था (४.४६)।" 'सुग्रीवश्चोग्रशासनः', (४. ४९, ४)। इनके कठोर स्वभाव और कठोर दण्ड से भयभीत होनेवाले अङ्गद आदि वानरों ने सीता की खोज न कर सकने के कारण उपवास करके प्राण त्याग देने का निश्चय किया (४. ५३, १३–२७)। 'सुग्रीवोः वानरेश्वरः', (४. ५५, १३)। 'सुग्रीवश्चैव वाली च पुत्रौ घनबलावुभौ', (४. ५७, ६)। 'न मेऽस्ति सुग्रीवसमीपगा गतिः सुतीक्ष्णदण्डो बलवांश्च वानरः', (५. १२, ५)। किं वा वक्ष्यति सुग्रीवो हरयो वापि संगताः', (५. १३, २२)। 'सुग्रीवव्यसनेन', (५. १३, ३१)। हनुमान् ने सीता को देखे विना इन्हें भी न देखने का विचार किया (५. १३, १८)। 'नमस्कृत्वा सुग्रीवाय च मारुतिः', (५. १३, ६०)। हनुमान् ने कहा कि सीता के कारण ही सुविख्यात सुग्रीव को दुर्लभ ऐश्वर्य प्राप्त हुआ (५. १६, ११)। हनुमान् ने सीता को बताया कि इन्होंने उनकी खोज के लिये वानरों को विविध दिशाओं में भेजा (५. ३१, १३)। 'रामस्य च सखा देवि सुग्रीवो नाम वानरः'

(५. ३४, ३६)। 'नित्यं स्मरति ते रामः ससुग्रीवः सलक्ष्मणः', (५. ३४, ३७)। 'मध्ये वानरकोटीनां सुग्रीवं चामितौजसम्', (५. ३४, ३८)। अहं सुग्रीवसचिवो हनूमान्नाम वानरः', (५. ३४, ३९)। हनुमान् ने सीता को इनके साथ श्रीराम की मैत्री होने का प्रसङ्ग सुनाया (५. ३५, २४–६०)। 'सुग्रीवो वापि तेजस्वी', (५. ३८, ५४)। 'सुग्रीवं च सहामात्यम्', (५. ३९, ८)। 'राजा जयति सुग्रीवो राघवेणाभिपालितः', (५. ४३, ८)। 'वाली च सहसुग्रीवः', (५. ४६, १०)। 'अहं सुग्रीवसंदेशादिह प्राप्तस्तवान्तिके', (५. ५१, २)। 'स सीतामार्गणे व्यग्रः सुग्रीवः सत्यसंगरः। हरीन्संप्रेषयामास दिशः सर्वा हरीश्वरः ॥', (५. ५१, १२)। जब वानरों ने मधुवन का विध्वंस करते हुये वहाँ मधुपान और उसके रक्षक दधिमुख को पराभूत किया तो दधिमुख इनके पास आये (५. ६२, ३१–४०)। "इन्होंने दधिमुख को आश्वासन देते हुये उनके आने का कारण पूछा और उनके मुख से वानरों द्वारा मधुवन के विध्वंस का समाचार सुनकर हनुमान् आदि वानरों की सीता की खोज में सफलता का अनुमान किया। तदनन्तर इन्होंने दधिमुख से हनुमान् आदि को शीघ्र भेजने के लिये कहा (५. ६३)।" दधिमुख से इनका समाचार सुनकर अङ्गद और हनुमान् आदि वानरों ने इनसे मिलने के लिये प्रस्थान किया (५. ६४, १–२१)। अङ्गद के निकट पहुँचते ही इन्होंने श्रीराम से कहा कि हनुमान् आदि को सीता का दर्शन प्राप्त करने में सफलता मिल गई है (५. ६४, २४–३२)। इन्होंने पहले ही निश्चय कर लिया कि हनुमान् ही को सीता की खोज करने में सफलता मिली (५. ६४, ४०)। हनुमान के कार्य से ये अत्यन्त सन्तुष्ट हुये (६, १, १०)। इन्होंने श्रीराम को उत्साह प्रदान किया (६. २)। इनकी बात सुनकर श्रीराम आश्वस्त हुये (६. ३, १)। श्रीराम ने इन्हें वानरसेना सहित प्रस्थान करने का आदेश दिया (६. ४, ३–६)। श्रीराम के आदेशानुसार इन्होंने वानरों को यथोचित आज्ञा दी (६. ४, २२)। ये सेना के मध्यभाग में स्थित होकर चले (६. ४. ३२)। इनसे रक्षित वानर अत्यन्त प्रसन्न थे (६. ४. ७०)। इनके साथ श्रीराम आदि सेना सहित सागर-तट पर पहुँचे (६. ४, ९८–११०)। वज्रदंष्ट्र ने कहा कि राम, सुग्रीव और लक्ष्मण के रहते हुये हनुमान् की कोई गणना नहीं करनी चाहिये (६. ८, १०)। राक्षसों ने रावण के समक्ष इनका वध कर देने की गर्वोक्ति की (६. ९, ६)। श्रीराम की शरण में अनुचरों सहित आये हुये विभीषण को देखकर इन्होंने उनका सामना करने के लिये वानरों का सावधान होने का आदेश दिया (६. १७, ५–७)। इनके वचन को सुनकर समस्त वानर विभीषण आदि राक्षसों का वध करने के लिये उद्यत हो गये (६. १७, ८–९)। विभीषण ने

आकाश में ही स्थित होकर इन्हें अपना परिचय दिया (६. १७, ११)। इन्होंने श्रीराम को विभीषण के आगमन की सूचना देते हुये उन पर आशंका प्रगट की और उनका वध कर देने का परामर्श दिया (६. १७, १८–२९)। श्रीराम ने इनका वचन सुनकर हनुमान् आदि से भी उस विषय में परामर्श ग्रहण किया (६. १७, ३०–३२)। 'वालिनं च हतं श्रुत्वा सुग्रीवं चाभिषेचितम्', (६. १७, ६६)। श्रीराम को इन्होंने विभीषण को शरण न देने का परामर्श दिया (६. १८, ४–६)। इन्होंने श्रीराम द्वारा विभीषण को शरण देने की बात का अनुमोदन किया (६. १८, ३५–३९)। इन्होंने विभीषण से वानरों की सेना के साथ अक्षोभ्य समुद्र को पार करने का उपाय पूछा (६. १९, २८)। 'आजगामाथ सुग्रीवो यत्र रामः सलक्ष्मणः', (६. १९, ३२) इन्होंने समुद्र को पार करने के लिये उसकी शरण लेने के विभीषण के विचार को श्रीराम को बताया (६. १९, ३३. ३५)। 'सुग्रीवः पण्डितो नित्यं भवान्मन्त्रविचक्षणः', (६. १९, ३७)। इन्होंने विभीषण के वचन का अभिनन्दन किया (६. १९, ३७–४०)। रावण ने शुक को दूत वनाकर इनके पास संदेश भेजा (६. २०, ९–१३) तदनन्तर शुक ने इन्हें रावण का सन्देश सुनाया (६. २०, १५)। शुक के पूछने पर इन्होंने रावण को अपना शत्रु बताते हुये उसके लिये यथोचित संदेश दिया (६. २०, २२–३०)। इनके आदेश से वानरों ने शुक को पकड़ कर बाँध दिया (६. २०, ३३)। इन्होंने श्रीराम को हनुमान् की पीठ पर तथा लक्ष्मण को अङ्गद की पीठ पर बैठकर समुद्र पार करने के लिये कहा (६. २२, ८२)। इन्होंने फल, मूल और जल की अधिकता देख सागर के तट पर ही सेना का पड़ाव डाला (६. २२, ८८)। श्रीराम ने इनको वानर-वाहिनी के पिछले भाग की रक्षा में लगे रहने का आदेश दिया (६. २४, १८)। श्रीराम ने इनसे शुक को मुक्त कर देने के लिये कहा (६. २४, २३)। श्रीराम की आज्ञा से इन्होंने शुक को मुक्त कर दिया (६. २४, २४)। शुक ने रावण को इनका परिचय दिया (६. २८, २८–३२)। रावण ने इन्हें देखा (६. २९, २)। 'सुग्रीवो ग्रीवया सीते भग्नया प्लवगाधिपः', (६. ३१, २६)। श्रीराम ने इन्हें नगर के बीच के मोर्चे पर आक्रमण करने के लिये कहा (६. ३७, ६२)। जब श्रीराम सुवेल पर्वत से लङ्का का निरीक्षण कर रहे थे तो ये उस समय रावण को देखकर सहसा उसके पास पहुँच गये (६. ४०, ७–११)। इन्होंने रावण के साथ घोर मल्लयुद्ध किया और अन्त में उसे अत्यधिक थका कर श्रीराम के पास लौट आये (६. ४०, १२–३०)। श्रीराम ने इन्हें दुःसाहस करने से रोका (६. ४१, १–७)। इन्होंने श्रीराम को बताया कि रावण को देखकर ये उसे क्षमा नहीं

कर सके (६. ४१, ८–९) । श्रीराम ने इनकी सहायता से सेना को सुसज्जित करके युद्ध के लिये कूच की आज्ञा दी (६. ४१, २५) । इन्होंने उत्तर और पश्चिम के मध्यभाग में स्थित राक्षस सेना पर आक्रमण किया (६. ४१, ४१–४२) । लक्ष्मण सहित ये उत्तर द्वारा को घेर कर खड़े हुये (६. ४२, २७) । इन्होंने प्रघस के साथ युद्ध किया (६. ४३, १०) । इन्होंने प्रघस का वध किया (६. ४३, २५) । शत्रुओं को पराजित हुआ देख ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. ४४, ३२) । ये भी उस स्थान पर आये जहाँ श्रीराम और लक्ष्मण मूछित थे (६. ४६, २) । श्रीराम और लक्ष्मण के अङ्ग-उपाङ्गों को वाणों से व्याप्त देखकर जब ये अत्यन्त भयभीत हो उठे तो विभीषण ने इन्हें सान्त्वना दी (४. ४६, ३०–४५) । जव श्रीराम मूच्छित लक्ष्मण के लिये विलाप करने लगे तो ये भी शोकमग्न हो गये (६. ४९, २) । इन्होंने वानरों से पूछा कि सेना के सहसा व्यथित हो जाने का क्या कारण है (६. ५०, १) इन्होंने जाम्बवान को भागती हुई वानर सेना को सन्त्वना देने के लिये कहा (६. ५०. ११) । इन्होंने विलाप करते हुये विभीषण को सान्त्वना दी (६. ५०, २०–३३) । इन्होंने सुषेण को श्रीराम और लक्ष्मण को लेकर किष्किन्धा चले जाने के लिये कहा (६. ५०, २३–२५) । रावण को युद्धस्थल में देखकर इन्होंने उसके साथ युद्ध किया परन्तु उसके बाण से आहत होकर भूमि पर गिर पड़े (६. ५९, ३६–४१) । कुम्भकर्णं ने रावण को इनका वध कर देने का अश्वासन दिया (६. ६३, ३८) । कुम्भकर्ण ने एक विशाल पर्वत शिखर के प्रहार से इन्हें आहत कर दिया और उठाकर लङ्का की ओर चला (६. ६७, ६७–७२) । इन्हें कुम्भकर्ण के द्वारा बन्दी वना देखकर पहले तो हनुमान् ने इन्हें मुक्त कराने का विचार किया परन्तु यह सोचकर कि किसी की सहायता से मुक्त होने पर इन्हें खेद होगा उन्होंने अपना विचार त्याग दिया (६. ६७, ७३–८०) । "जब कुम्भकर्ण इन्हें लेकर लङ्का चला तो गन्धयुक्त जल से अभिषिक्त राजमार्ग की शीतलता के कारण इनकी मूर्च्छा दूर हो गई । उस समय इन्होने तीखे नखों द्वारा कुम्भकर्ण के दोनों कान नोंच लिये, दाँतों से उसकी नाक काट ली, और अपने पैरों के नखों से उसकी दोनों पसलियाँ भी फाड़ डाली । इस प्रकार त्रस्त कुम्भकर्ण इन्हें भूमि पर पटक कर घिसने लगा । उस समय ये सहसा गेंद की भाँति वेगपूर्वक आकाश में उछले और श्रीराम के पास आ गये (६. ६७, ८३–८९) ।" जब नरान्तक के पराक्रम के कारण वानरसेना पलायन करने लगी तो इन्होंने अङ्गद को उस राक्षस का वध करने के लिये भेजा (६. ६९, ८१–८४) । इन्द्रजित् ने इन्हें आहत कर दिया (६. ७३, २७) । विभीषण ने इन्हें युद्धभूमि में आहत

देखा (६. ७४. १०)। 'नैव राजनि सुग्रीवे नाङ्गदे नापि राघवे। आर्य संदर्शितः स्नेहो यथा वायुसुते परः', (६. ७४, २०)। इन्होंने कुम्भकर्ण आदि का वध हो जाने के पश्चात् वानरों को लङ्का पुरी में आग लगा देने के लिये कहा (६. ७५, १–४)। इन्होंने प्रमुख वातरों को अपने-अपने निकटवर्ती द्वारों पर जाकर युद्ध करने का आदेश दिया (६. ७५, ४१–४३)। इन्होंने कुम्भ के साथ घोर युद्ध करते हुये अन्त में उसका वध कर दिया (६. ७६, ६५–९५)। इन्होंने राक्षस सेना का भीषण संहार करते हुये विरूपाक्ष का वध कर दिया (६. ९६)। इन्होंने महोदर के साथ घोर युद्ध किया और अन्ततः उसका वध कर दिया (६. ९७)। श्रीराम द्वारा रावण का वध हो जाने पर उनकी विजय से ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (६. १०८, ३३)। श्रीराम ने इन्हें हृदय से लगा लिया (६. ११२, ६–७)। श्रीराम ने हनुमान् को अपना, लक्ष्मण का, तथा इनका कुशल समाचार सीता से निवेदन करने की आज्ञा दी (६. ११२, २४)। सीता के चरित्र पर संदेह करते हुये श्रीराम ने उन्हें इनके पास भी रह सकने के लिये कहा (६. ११५, २३)। श्रीराम ने लङ्का से इन्हें सेना सहित किष्किन्धा लौट जाने के लिये कहा (६. १२२, १३–१५) परन्तु इनकी प्रार्थना पर इन्हें अपने साथ पुष्पक विमान पर आरूढ़ हो अयोध्या चलने की अनुमति दी (६. १२२, २१–२४)।

अयोध्या लौटते समय जब श्रीराम ने सीता को किष्किन्धापुरी का दर्शन कराया तो सीता ने इनकी पत्नियों आदि को भी अपने साथ अयोध्या ले चलने की इच्छा से इनसे अनुरोध किया जिसे सुनकर इन्होंने तारा आदि अपनी पत्नियों को तदनुसार आदेश दिया (६. १२३, २४–३६)। भरत ने पुष्पक विमान पर इन्हें भी श्रीराम के साथ विराजमान् देखा (६. १२७, २९)। भरत ने इनका आलिङ्गन करते हुये इनके प्रति विशेष रूप से आभार प्रगट किया (६. १२७, ३९. ४२–४३)। इन्होंने भी अयोध्या में स्नान आदि किया (६. १२८, १४)। 'सुग्रीवो हनुमांश्चैव महेन्द्रसदृशद्युती', (६. १२८, २१)। इनकी पत्नियाँ भी नगर देखने की उत्सुकता से सवारियों पर बैठकर चलीं (६. १२८, २२)। ये शत्रुञ्जय नामक विशाल हाथी पर बैठे (६. १२८, ३१)। श्रीराम इनकी मित्रता की चर्चा करते चल रहे थे (६. १२८, ३९)। "श्रीराम ने अशोकवाटिका से विरे हुये सुन्दर भवन को सुग्रीव को देने के लिये कहा। श्रीराम की आज्ञा से भरत ने इन्हें उस भवन में प्रवेश कराया और इनसे चारों समुद्रों से जल मँगाने के लिये वानरों को भेजने का निवेदन किया। इन्होंने चार श्रेष्ठ वानरों को सुवर्ण पात्र देकर जल लाने के लिये भेजा (६. १२८, ४३–५१)।" श्रीराम का अभिषेक देखकर इन्होंने किष्किन्धापुरी

के लिये प्रस्थान किया (६. १२८, ८९)। जब वालिन् से युद्ध के लिये रावण उपस्थित हुआ तो वालिन् की अनुपस्थिति का समाचार देते हुये इन्होंने उसे दक्षिणसमुद्र के तट पर जाकर वालिन् का दर्शन करने के लिये कहा (७. ३४, ४–११)। रावण इनकी ही भाँति सम्मानित होकर एक मास तक किष्किन्धा में वालिन् के अतिथि के रूप में रहा (७. ३४, ४४)। 'सुग्रीव प्रियकाम्यया', (७. ३५, ११)। इनके और वालिन् के पिता का नाम ऋक्षरजस् था (७. ३६, ३६)। ऋक्षरजस् की मृत्यु के पश्चात् मंत्रियों ने इन्हें वालिन् के स्थान पर युवराज बनाया (७. ३६, ३८)। इनके साथ वालिन् का बचपन से ही सख्य भाव, अटूट प्रेम, और किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं था (७. ३६, ३९)। 'वालिसुग्रीवयोर्वैरम्', (७. ३६, ४०)। 'सुग्रीवो भ्राम्यमाणोऽपि (७. ३६, ४१)। राजाओं द्वारा प्राप्त रत्नों को श्रीराम ने इनको, विभीषण तथा अन्य वानरों को भी बाँट दिया (७. ३९. १३)। "श्रीराम ने इनसे कहा : 'सुग्रीव ! अङ्गद तुम्हारे सुपुत्र हैं और पवनकुमार हनुमान् मंत्री। वानरराज ! ये दोनों मेरे लिये मन्त्री का भी काम देते थे और सदा मेरे हित-साधन में लगे रहते थे। इसलिये, और विशेषत: तुम्हारे नाते, ये मेरी ओर से विविध आदर-सत्कार एवं भेंट पाने के योग्य हैं' (७. ३९, १७–१८)।" श्रीराम ने इन्हें विभिन्न वानरों के प्रति स्नेह दृष्टि रखने के लिये कहा (७. ४०, १–९)। इन्होंने श्रीराम से विदा ली (७. ४०, २८)। अपने अश्वमेध में सम्मिलित होने के लिये श्रीराम ने इन्हें आमन्त्रित करने का आदेश दिया (७. ९१, ९)। साकेतधाम जाने के लिये उद्यत हुये श्रीराम के दर्शन की इच्छा से वानरों सहित ये भी अयोध्या पधारे (७. १०८, १८)। इन्होंने भी श्रीराम के साथ ही परमधाम जाने की इच्छा प्रगट की (७. १०८, २१–२२)। श्रीराम ने इन्हें अपने साथ परमधाम चलने की स्वीकृति दी (७. १०८, २५, गीता प्रेस संस्करण)। इन्होंने सूर्यमण्डल में प्रवेश किया (७. ११०, २२)।

सुचन्द्र, विशालपुत्र हेमचन्द्र के पुत्र का नाम है (१. ४७, १३)।

सुतीक्ष्ण, एक मुनि का नाम है (१. १, ४२)। श्रीराम के इनके साथ समागम का वाल्मीकि मुनि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, १८)। शरभङ्ग ने श्रीराम को इनसे मिलने के लिये कहा (३. ५, ३५)। श्रीराम आदि इनके आश्रम की ओर चले (३. ७, १)। इनका आश्रम घोर वन के बीच में स्थित था जहाँ पहुँचकर श्रीराम आदि ने इन्हें पद्मासन धारण किये हुये ध्यानमग्न देखा (३. ७, ५)। इन्होंने श्रीराम का दोनों भुजाओं से आलिङ्गन करते हुये उनका स्वागत किया (३. ७, ७–११)। इन्होंने श्रीराम आदि को अपने आश्रम में निवास करने के लिये आमन्त्रित किया (३. ७, १३)।

श्रीराम ने इनसे बताया कि शरभङ्ग मुनि से वे इनका परिचय जान चुके हैं (३. ७, १५)। श्रीराम के पूछने पर इन्होंने अपने आश्रम का वर्णन करते हुये बताया कि वहाँ मृगों आदि से कोई भय नहीं है (३. ७, १६–१९)। सायंकालीन संध्योपासना करने के पश्चात् श्रीराम ने लक्ष्मण और सीतासहित इनके आश्रम में निवास किया और इन्होंने उन लोगों को फल आदि लाकर दिया (३. ७, २३–२४)। दूसरे दिन प्रातःकाल श्रीराम आदि ने इनसे विदा ली (३. ८, १–९)। इन्होंने श्रीराम आदि को हृदय से लगाते हुये उन्हें विदा किया (३. ८, १०–१७)। श्रीराम आदि वन में भ्रमण करने के पश्चात् पुनः इनके आश्रम पर लौट आये (३. ११, २८)। श्रीराम ने इनसे अगस्त्य मुनि के आश्रम का पता पूछा (३. ११, ३०–३५)। इन्होंने श्रीराम आदि को अगस्त्य मुनि के आश्रम का पता बताया (३. ११, ३६–४४)। इनके निर्देशानुसार श्रीराम आदि अगस्त्य-आश्रम की ओर चले (३. ११, ४७. ५४. ७४)। अयोध्या की यात्रा करते समय श्रीराम ने पुष्पकविमान से सीता को इनका आश्रम दिखाया (६. १२३, ४७, गीता प्रेस संस्करण)।

१. **सुदर्शन,** शङ्खण के पुत्र और अग्निवर्ण के पिता, एक सूर्यवंशी राजा का नाम है (१. ७०, ४१; २. ११०, २८)।

२. **सुदर्शन,** एक सरोवर का नाम है जिसमें चाँदी के समान श्वेत रंग वाले कमल खिले रहते थे तथा जो राजहंसों से सेवित था। देवता, चारण, यक्ष, किन्नर और अप्सरायें बड़ी प्रसन्नता के साथ यहाँ जल-विहार करने के लिये आया करती थीं। सुग्रीव ने इसके तट पर सीता की खोज करने के लिये एक लाख वानरों के साथ विनत को भेजा था (४. ४०, ४३–४४)।

सुदामन्, जनक के एक मन्त्रिश्रेष्ठ का नाम है जो जनक की आज्ञा से दशरथ को बुलाने के लिये गये थे (१. ७०, १०–१३)। इनकी बात सुनकर दशरथ जनक के पास आये (१. ७०, १४)।

१. **सुदामा,** बाह्लीक देश के मध्यभाग में स्थित एक पर्वत का नाम है, जिसके शिखर पर विष्णु के चरणचिह्नों का दर्शन करने के पश्चात् केकय जाते हुये वसिष्ठ के दूतों ने विपाशा नदी की ओर प्रस्थान किया (२. ६८, १८–१९)।

२. **सुदामा,** एक नदी का नाम है जिसे केकय से आते समय भरत ने पार किया था (२. ७१, १)।

सुदेव, राजा श्वेत के पिता का नाम है (७. ७८, ३)।

सुधन्वा, एक राजा का नाम है जिसने सांकाश्य नगर से आकर मिथिला को चारों ओर से घेर लिया (१. ७१, १६)। इसने जनक से शिव के उत्तम

धनुष और कमलनयनी सीता को समर्पित करने के लिये कहा (१. ७१, १७)। जनक के ऐसा न करने पर यह जनक के साथ युद्ध करता हुआ मारा गया (१. ७१, १८)। इसकी मृत्यु के पश्चात् जनक ने सांकाश्य नगर के राज्य पर अपने भ्राता, कुशध्वज को अभिषिक्त कर दिया (१. ७१, १९)।

१. सुनाभ, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ५)।

२. सुनाभ, पर्वत-श्रेष्ठ मैनाक का नाम है : 'सुनाभं पर्वतश्रेष्ठम्', (५, १, १३९; ५७, १३)।

सुनेत्र, एक वानर प्रमुख का नाम है। किष्किन्धापुरी की शोभा देखते हुये लक्ष्मण ने मार्ग में इनके भवन को भी देखा था (४. ३३, ११)।

सुन्दरी, माल्यवान् की पुत्री का नाम है जो नर्मदा नामक गन्धर्वी की पुत्री थी (७. ५, ३१. ३२. ३५)। इसने सात पुत्रों तथा एक पुत्री को जन्म दिया (७. ५, ३६-३७)।

सुपाटल, एक वानर-प्रमुख का नाम है। किष्किन्धापुरी की शोभा देखते हुये लक्ष्मण ने इनके भवन को भी देखा था (४. ३३, ११)।

१. सुपार्श्व, सम्पाति के पक्षिप्रवरपुत्र का नाम है जो यथासमय आहार देकर प्रतिदिन सम्पाति का भरण-पोषण करते थे। इन्होंने अपने पिता को सीता और रावण को देखने की घटना का वृत्तान्त सुनाया (४. ५९, ८–२१)।

२. सुपार्श्व, एक राक्षस का नाम है जिसके वध का उल्लेख है (६. ८९, १४)। अपने पुत्र, मेघनाद, के वध का समाचार सुनकर जब रावण ने सीता का वध कर देने का निश्चय किया तब इसने रावण को समझाकर इस कुकृत्य से निवृत्त किया (६. ९२, ६०–६५)। यह सुमालि का पुत्र था (७. ५, ४०)।

सुप्तघ्न, एक राक्षस का नाम है जो अस्त्र-शस्त्रों से युक्त होकर रावण की सभा में उपस्थित हुआ (६. ९, १)। इसने श्रीराम के साथ युद्ध किया (६. ४३, ११, गीता प्रेस संस्करण)। इसने श्रीराम को बाणों से आहत कर दिया (६. ४३, २६, गीता प्रेस संस्करण)। इसके वध का उल्लेख (६. ८९, ११)। अयोध्या जाते समय श्रीराम ने पुष्पकविमान से सीता को वह स्थान दिखाया जहाँ इसका वध किया गया था (६. १२३, १४)। यह माल्यवान् और सुन्दरी का पुत्र था (७. ५, ३७)। इसने भी रावण के साथ देवसेना पर आक्रमण किया (७. २७, ३०)।

सुप्रभ—श्रीराम की सभा में सीता के शपथग्रहण को देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये (७. ९६, ४)।

सुप्रभा, प्रजापति दक्ष की एक सुन्दरी पुत्री का नाम है, जिसने एक सौ

परम प्रकाशमान अस्त्र-शस्त्रों को उत्पन्न किया (१. २१. १५)। "इसने संहार नामक पचास पुत्रों को जन्म दिया। इसके ये पुत्र अत्यत्त दुर्जय थे और उनपर आक्रमण करना किसी के लिये भी सर्वथा कठिन था। ये सबके सब अत्यन्त बलिष्ठ थे (१. २१, १७)।"

१. सुबाहु, एक राक्षस का नाम है जो विश्वामित्र के यज्ञ में विघ्न उपस्थित करता था (१. १९, ५–७)। यह रावण की प्रेरणा से यज्ञों में विघ्न डालता था (१. २०, १९–२०)। यह उपसुन्द का पुत्र था (१, २०, २६–२७)। इसने अपने अनुचरों के साथ विश्वामित्र के यज्ञमण्डप में रक्त की धाराओं की वर्षा की (१. ३०, ११–१२)। यह श्रीराम की ओर दौड़ा (१.३०, १४)। श्रीराम ने इसका वध कर दिया (१. ३०, २२)।

२. सुबाहु, एक वानरप्रमुख का नाम है। किष्किन्धा की शोभा देखते हुये लक्ष्मण ने इनके भवन को देखा (४. ३३, ११)। ये लङ्का के परकोटे पर चढ़ गये और अपनी सेना का पड़ाव डाल दिया (६. ४२, २२)।

३. सुबाहु, शत्रुघ्न के पुत्र का नाम है जिनका मथुरा के राज्य पर अभिषेक हुआ (७. १०८, १०–११)।

सुमति, सोमदत्तपुत्र काकुत्स्थ के पुत्र का नाम हे (१. ४७, १७)। इन्होंने विश्वामित्र का स्वागत किया (१. ४७, २०)। कुशल समाचार पूछने के पश्चात् इन्होंने विश्वामित्र से श्रीराम और लक्ष्मण का परिचय बताने का निवेदन किया (१. ४८, १–६)। इनके द्वारा आहत होकर राम और लक्ष्मण ने विशाला में एक रात्रि व्यतीत करने के पश्चात् मिथिला के लिये प्रस्थान किया (१. ४८, ९)।

सुमन्त्र, राजा दशरथ के एक श्रेष्ठ मंत्री का नाम है जिन्हें दशरथ ने, अश्वमेध यज्ञ का परामर्श ग्रहण करने के लिये, अपने समस्त गुरुजनों एवं पुरोहितों को बुलाने के लिये भेजा (१. ८, ४)। दशरथ के आदेश पर ये वेदविद्या के पारंगत मुनियों को बुला लाये (१. ८, ५)। "इन्होंने दशरथ को ऋष्यश्रृङ्ग मुनि को अश्वमेध यज्ञ में बुलाने की सलाह देते हुये उनके अङ्गदेश में जाने और शान्ता से विवाह करने का प्रसङ्ग सुनाया (१. ९)।" सुमन्त्र ने दशरथ को अङ्गराज के पास जाकर उनके यहाँ से ऋष्यश्रृङ्ग को अयोध्या लाने का परामर्श दिया (१.११, १–१३)। दशरथ ने इन्हें वेदविद् ब्राह्मणों और ऋत्विजों को आमन्त्रित करने का आदेश दिया (१. १२, ४–५)। वसिष्ठ के आदेश पर ये स्वयं ही विभिन्न राजाओं को आमन्त्रित करने के लिये गये (१. १३, ३१)। ये दशरथ की आज्ञा से श्रीराम को रथपर बैठाकर लाये (२. ३, २२–२३. ३०)। इन्होंने दशरथ की आज्ञा पर पुनः श्रीराम

को राज्याभिषेक के लिये दशरथ के सम्मुख उपस्थित किया (१. ४, ४–८)। "ये महर्षि वसिष्ठ की आज्ञा से राज्याभिषेक की तैयारी का समाचार सुनाने के लिये दशरथ के पास गये। दशरथ इनकी स्तुति को सुनकर पुनः (श्रीराम के वनवास सम्बन्धी) शोक से ग्रस्त हो गये। तदनन्तर कैकेयी से वार्तालाप करते हुये दशरथ की आज्ञा से ये श्रीराम को बुलाने के लिये उनके भवन में गये (२ १४, ३३–६८; १५)।" इन्होंने श्रीराम के भवन में पहुँचकर दशरथ का सन्देश सुनाया और श्रीराम, सीता से अनुमति लेकर, लक्ष्मण के साथ इनके रथ पर आरूढ़ हो गाजे-बाजे के साथ मार्ग में स्त्री-पुरुषों की बातें सुनते हुये चले (२. १६)। वन जाने के लिये उद्यत हो श्रीराम ने दशरथ के भवन के समीप पहुँचकर इनके द्वारा दशरथ के पास अपने आगमन का समाचार प्रेषित किया (२. ३३, ३०–३१)। इन्होंने राम की आज्ञा का पालन करते हुये दशरथ को यह समाचार दिया (२. ३४, १–९)। दशरथ ने अपनी अन्य रानियों को बुलाने के लिये इनसे कहा और जब इन्होंने इस आज्ञा का पालन कर दिया तब दशरथ ने इनसे श्रीराम आदि को बुलाने के लिये कहा, (२. ३४, १०–१४)। दशरथ की आज्ञा से ये श्रीराम आदि को उनके पास लाये (२. ३४, १५)। दशरथ की दशा को देखकर ये भी शोक-विह्वल होकर मूर्च्छित हो गये (२. ३४, ६१)। चेतना लौटने पर इन्होंने कैकेयी को उसकी कुटिलता पर बहुत अधिक धिक्कारा (२. ३५)। दशरथ ने इन्हे श्रीराम के साथ सेना और धन आदि भी भेजने का आदेश दिया (२. ३६, १–९)। दशरथ की आज्ञा शिरोधार्य करके ये श्रीराम आदि के वनगमन के लिये एक सुशोभित रथ लाये (२. ३९, १२–१३)। इन्होंने विनयपूर्वक श्रीराम आदि से वन चलने के लिये रथ पर आरूढ़ होने का निवेदन किया (२. ४०, १०–१२)। सीता और लक्ष्मण सहित श्रीराम के रथारूढ़ हो जाने पर इन्होंने रथ को हाँका (२. ४०, १७)। वन के लिये प्रस्थान करते समय जब शोकाकुल पुरवासी तथा राजा दशरथ आदि रथ के पीछे-पीछे चलने लगे तो श्रीराम ने इन्हें रथ को शीघ्र आगे बढ़ाने का आदेश दिया (२. ४०, ४७)। तमसा के तट पर पहुँचकर इन्होंने घोड़ों को रथ से खोलकर टहलाया तथा जल आदि पीने के लिये दिया (२. ४५, ३३)। इन्होंने श्रीराम की आज्ञा से घोड़ों को चारा इत्यादि दिया और उसके पश्चात् लक्ष्मण के साथ श्रीराम के गुणों की चर्चा करते हुये सारी रात जागते रह २. ४६, ११–१६)। "श्रीराम ने तमसातट पर इन्हें प्रातःकाल शीघ्र ही रथ तैयार करने के लिये कहा जिससे पुरवासियों को सोता ही छोड़कर वे सब लोग दूर दुर्गम वन्य प्रदेश में चले जायँ। इन्होंने श्रीराम

की आज्ञा का पालन किया (३. ४६, २५–२८)।" शृङ्गवेरपुर पहुँचकर जब राम ने गंगातट पर निवास करने का निश्चय किया तब इन्होंने भी रथ के घोड़ों को खोल कर खाना आदि दिया (२. ५०, २७–२१)। ये भी लक्ष्मण और गुह के साथ बात चीत करते हुये सारी रात जागते रहे (२. ५०, ५०)। इन्हें विदा करते हुये श्रीराम ने इनके द्वारा माता-पिता आदि के लिये सन्देश भेजे (२. ५२, १३–३७)। इन्होंने स्वयं भी वन चलने का आग्रह किया (२, ५२, ३८–५८)। श्रीराम ने इन्हें अयोध्या लौटने के लिये समझाया (२. ५२, ५९–६४)। श्रीराम आदि गंगा के उस पार पहुँच कर भी जब तक दिखाई देते रहे तब तक ये निरन्तर उन्हीं लोगों को देखते रहे (२. ५२, १००)। श्रीराम ने इनका स्मरण किया (२. ५३, २)। गुह से विदा लेकर ये अयोध्या लौटे और दशरथ तथा कौसल्या आदि को श्रीराम का सन्देश सुनाया (२. ५७)। दशरथ के आदेश पर इन्होंने श्रीराम और लक्ष्मण का सन्देश सुनाया (२. ५८)। इन्होंने श्रीराम के शोक से जड़-चेतन तथा अयोध्यापुरी की दुरवस्था का वर्णन किया जिसे सुनकर दशरथ विलाप करने लगे (२. ५९, १–१७)। इन्होंने विलाप करती हुई कौसल्या को समझाया (२. ६०)। इन्होंने अचेत होकर भूमि पर पड़े शत्रुघ्न को उठाकर शान्त किया (२. ७७, २४)। वसिष्ठ ने इन्हें बुलाने के लिये दूतों को भेजा (२. ८१, १३)। इन्होंने भरत की आज्ञा से श्रीराम को लौटा लाने के लिये वन चलने की तैयारी के निमित्त सबको भरत का संदेश सुनाया (२. ८२, २१–२४)। इन्होंने भरत से निषादराज गुह को मिलने का अवसर देने के लिये कहा, क्योंकि गुह को दण्डकारण्य के मार्ग और श्रीराम आदि के आवास का पता था (२. ८३, ११–१४)। श्रीराम के आश्रम पर जाने के लिये ये शत्रुघ्न के पीछे-पीछे चल रहे थे (२. ९९, ३)। श्रीराम इनके साथ दशरथ को जलाञ्जलि देने के लिये मन्दाकिनी के तट पर गये (२. १०३, २३)। श्रीराम के स्वागत के लिये यह हाथी पर सवार होकर नगर से बाहर निकले (६. १२७, १०)। सीता को वन में छोड़ने के लिये लक्ष्मण ने इनसे रथ लाने के लिये कहा (७. ४६, १–३)। ये लक्ष्मण की आज्ञानुसार रथ लाये (७. ४६, ४–६)। सीता और लक्ष्मण सहित रथ को लेकर ये गङ्गा तट पर पहुँचे (७. ४६, २२)। सीता को छोड़कर लौटते समय इन्होंने लक्ष्मण को सान्त्वना देते हुये राम के सम्बन्ध में महर्षि दुर्वासा की भविष्यवाणी का उल्लेख किया (७. ५०)। इन्होंने दुर्वासा के मुख से सुनी हुई भृगु ऋषि के शाप की कथा कहकर भविष्य में होनेवाली कुछ बातें भी बताईं और लक्ष्मण को शान्त किया (७. ५१)।

सुमागध, एक हास्यकार का नाम है जो श्रीराम का मनोरंजन करने के लिये उनके साथ रहता था (७. ४३, २)।

सुमालि (सुमाली भी), एक राक्षस का नाम है। सीता की खोज करते हुये हनुमान् इसके भवन में गये (५. ६, २१)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, ११)। यह सुकेश का द्वितीय पुत्र था (७. ५, ६)। ब्रह्मा इसे वर देने के लिये उपस्थित हुये (७. ५, १२)। इसने ब्रह्मा से अजेयता तथा चिरजीवन का वरदान माँगा जो ब्रह्मा जी ने इसे प्रदान किया (७. ५, १४–१६)। विश्वकर्मा के परामर्श पर अपने भ्राताओं सहित यह भी लङ्का में आकर निवास करने लगा (७. ५, २२–२९)। इसकी पत्नी का नाम केतुमती था जो नर्मदा नामक गन्धर्वी की पुत्री थी (७. ५, ३८)। इसने केतुमती के गर्भ से अनेक पुत्र-पुत्रियों को उत्पन्न किया (७. ५, ३९–४१)। भ्राताओं सहित इसने देवताओं और ऋषियों को त्रस्त करना आरम्भ किया जिससे वे सब लोग महादेव की शरण में गये (७. ६. १)। देवताओं ने महादेव के बताया कि ये राक्षस अपने को विष्णु, रुद्र, ब्रह्मा, देवराज इन्द्र, यमराज, वरुण, चन्द्रमा और सूर्य कहते हैं (७. ६, ६–७)। माल्यवान् की बात सुनकर इसने अपने पराक्रम का उल्लेख करते हुये विष्णु से युद्ध करने का परामर्श दिया (७. ६, ३९–४४)। विष्णु से युद्ध करने के लिये अपने भ्राताओं सहित यह राक्षससेना के आगे-आगे चला (७. ६, ५९)। विष्णु ने इसके सारथि का वध कर दिया (७. ७, २९)। सारथि-विहीन हो जाने के कारण इसके घोड़े रणभूमि में इधर-उधर भागने लगे (७. ७, ३०–३१)। विष्णु से युद्ध करते हुये माल्यवान् के पराजित हो जाने पर अपने भ्राताओं सहित यह भाग कर रसातल में चला गया (७. ८, २२–२३)। यह रावण से भी अधिक बलवान् था (७. ८, २४)। "कुछ काल के पश्चात् जब यह अपनी पुत्री के साथ एक दिन मर्त्यलोक में विचरण कर रहा था तो पुलस्त्य-नन्दन विश्रवा को देखकर इसने अपनी पुत्री, कैकसी, को विश्रवा के पास जाकर उनका वरण करने के लिये कहा (७. ९, १–१२)। रावण आदि के वरदान प्राप्त कर लेने पर अपने भय का परित्याग करके इसने रावण के समक्ष उपस्थित होकर उसे लङ्का नगरी को धनाध्यक्ष कुबेर से माँगने का परामर्श दिया (७. ११, १–१०)। रावण का उत्तर सुनकर यह समझ गया कि रावण क्या करना चाहता है (७. ११, ११)। यह रावण का मामा था (७. २५, २२)। इसने भी रावण के साथ देवसेना पर आक्रमण किया (७. २७, ३२)। इसने देवसेना के साथ घोर युद्ध किया परन्तु अन्त में सावित्र ने इसका वध कर दिया (७. २७, ४०–५१)। सावित्र ने इसका वध करके इसके शरीर को भस्म कर दिया (७. २८, १)।

सुमित्रा, महाराज दशरथ की एक रानी का नाम है जिन्हें दशरथ ने प्राजापत्य पुरुष से प्राप्त खीर का चतुर्थांश दिया (१. १६, २७)। दशरथ ने कैकेयी को देने के पश्चात् अवशिष्ट खीर पुनः सुमित्रा को ही अर्पित कर दिया (१. १६, २८)। इन्होंने गर्भ धारण किया (१. १६, ३१)। इन्होंने आश्लेषा नक्षत्र और कर्क लग्न में लक्ष्मण और शत्रुघ्न नामक दो पुत्र उत्पन्न किये (१. १८, १३–१४)। इन्होंने अन्य सपत्नियों के साथ पुत्र-वधुओं को सवारी से उतारकर स्वागत किया (१. ७७, ११)। ये श्रीराम के राज्याभिषेक का प्रिय समाचार सुनकर उपस्थित हुईं (२. ४, ३१–३२)। 'ज्ञातीन् मे त्वं श्रिया युक्तः सुमित्रायाश्च नन्दय', (२. ४, ३९)। 'कौसल्यां च सुमित्रां च त्यजेयमपि वा श्रियम्', (२. १२, ११)। दशरथ ने कैकेयी को बताया कि ये श्रीराम के अभिषेक का निवारण और उनका वनगमन देखकर निश्चित ही भयभीत होकर दशरथ का विश्वास नहीं करेंगी (२. १२, ७२–९१)। 'लक्ष्मणः परमक्रुद्धः सुमित्रानन्दवर्धनः', (२. १९, ३०)। इन्होंने अपने पुत्र, लक्ष्मण, को श्रीराम के साथ वन जाने के समय उपदेश दिया (२. ४०, ४–९)। इन्होंने कौसल्या को विलाप करते देखकर उन्हें विविध प्रकार से सान्त्वना दी (२. ४४)। श्रीराम ने कैकेयी द्वारा इन्हें कष्ट पहुँचाये जाने की आशङ्का प्रगट की (२. ५३, १५–१६)। कौसल्या और इनके निकट विलाप करते हुये दशरथ का अन्त हो गया (२. ६४, ७६–७७)। पुत्रशोक से अक्रान्त होने के कारण ये इतनी मृतवत् हो गईं थीं प्रातःकाल इनकी निद्रा भग्न नहीं हो पाई (२. ६५, १६)। दशरथ की मृत्यु पर अन्तःपुर की स्त्रियों के आर्त्तनाद को सुनकर सहसा इनकी निद्रा भङ्ग हुई और कौसल्या के साथ इन्होंने दशरथ के शरीर का स्पर्श किया तथा 'हा नाथ !' कह कर पृथिवी पर गिर पड़ीं (२. ६५, २१–२२)। भरत ने वसिष्ठ के दूतों से इनका कुशल समाचार पूछा (२. ७०, ९)। भरत ने कैकेयी को बताया कि कौसल्या और सुमित्रा भी तुम्हारे कारण पुत्रशोक से पीडित हो गईं (२. ७३, ८; ७४, ८) कौसल्या ने इनको भरत के आगमन का समाचार बताया (२. ७५, ४–६)। 'सुमित्रानुचरा', (२. ७५, १३)। ये गंगा पार होने के लिये भरत आदि के साथ स्वस्तिक नौका पर आरूढ हुईं (२. ८९, १३)। भरत ने भरद्वाज मुनि को इनका और इनके पुत्रों का परिचय दिया (२. ९२, २२–२३)। श्रीराम ने भरत से इनका कुशल समाचार पूछा (२. १००, १०)। कौसल्या ने मन्दाकिनी के तट पर इनके समक्ष दुःखपूर्ण उद्गार व्यक्त किये (२. १०४, ३–७)। सीता-वियोग में विलाप करते हुये श्रीराम ने लक्ष्मण को इनका यथोचित सत्कार करने की आज्ञा दी (३. ६२, १७)। लक्ष्मण के लिये

विलाप करते हुये श्रीराम ने कहा कि वे इनके उपालम्भ को सहन नहीं कर सकेंगें (६. ४९, ११)। रावणवध के पश्चात् श्रीराम ने वानरों से इनको देखने की अपनी उत्कण्ठा व्यक्त की (६. १२१, २०)। श्रीराम आदि का स्वागत करने के लिये दशरथ की सभी रानियाँ कौसल्या सहित इन्हें आगे करके नन्दिग्राम आईं (६. १२७, १४)। श्रीराम ने इन्हें प्रणाम किया (६. १२७, ४७)। अपने पिता के भवन में प्रवेश करके श्रीराम ने इनके चरणों में प्रणाम किया (६. १२८, ४४)। 'राघवेण यथा माता सुमित्रा लक्ष्मणेन च ।। भरतेन च कैकेयी जीवपुत्रास्तथा स्त्रियः । भविष्यन्ति सदानन्दाः पुत्रपौत्रसमन्विताः ।।', (६. १२८, १०८–१०९)। शत्रुघ्न के अभिषेक के समय इन्होंने अन्य रानियों के साथ मिलकर शत्रुघ्न का मङ्गलकार्य सम्पन्न किया (७. ६३, १६)। लवणासुर का वध करने के लिये जाते समय शत्रुघ्न ने इनसे विदा ली (७. ६४, १५)। इनकी मृत्यु हुई (७. ९९, १६)।

१. **सुमुख,** एक वानर यूथपति का नाम है जो मृत्यु के पुत्र थे (६. ३०, २४)।

२. **सुमुख,** एक ऋषि का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये दक्षिण दिशा से महर्षि अगस्त्य के साथ उपस्थित हुये (७. १, ३)।

सुमेरु, एक पर्वत का नाम है जिसका स्वरूप भगवान् सूर्य के वरदान से सुवर्णमय हो गया था। यहाँ हनुमान् के पिता केसरी, राज्य करते थे (७. ३५, १९)।

१. **सुयज्ञ,** दशरथ के एक मंत्री का नाम है (१, ७, ५)। दशरथ ने इनका सत्कार करके अश्वमेध करने का परामर्श लिया (१. ८, ६)। दशरथ ने इन्हें आमन्त्रित करने के लिये कहा (१. १२, ५)। ये वसिष्ठ के पुत्र थे और श्रीराम ने लक्ष्नण को इन्हें बुलाने का आदेश दिया (२. ३१, ३७)। जब लक्ष्मण इन्हें बुलाने के लिये उपस्थित्त हुये तो उस समय ये अपनी यज्ञशाला में बैठे थे (२. ३२, १–२)। अपनी संध्योपासना पूर्ण करके ये लक्ष्मण के साथ श्रीराम के भवन में आये (२. ३२, ३)। श्रीराम ने इनका स्वागत किया (२. ३२, ४)। इनका पूजन करने के पश्चात् सीता की प्रेरणा से श्रीराम ने इन्हें सीता द्वारा प्रदत्त विविध आभूषण, शत्रुञ्जय नामक हाथी, तथा अन्य उपहार प्रदान किये (२. ३२, ५–१०)। इन्होंने राम द्वारा प्रदत्त वस्तुओं को ग्रहण करते हुये राम, लक्ष्मण और सीता के लिये मङ्गलमय आशीर्वाद प्रदान किये (२. ३२, ११)। इन्होंने श्रीराम का अभिषेक कराने में वसिष्ठ की सहायता की (६. १२८, ६१)।

२. सुयज्ञ—श्रीराम की सभा में सीता के शपथ-ग्रहण को देखने के लिये ये भी उपस्थित हुये (७. ९६, ५)।

१. सुरथ, एक राजा का नाम है जिन्होंने रावण की आधीनता स्वीकार कर ली थी (७. १९, ५)।

२. सुरथ, राजा श्वेत के कनिष्ठ भ्राता और सुदेव के पुत्र का नाम है (७. ७८, ४)। श्वेत ने इनका अभिषेक करके संन्यास ले लिया (७. ७८, ९)।

सुरभि—कैकेयी को धिक्कारते हुये भरत ने वताया : "एक समय सुरभि (कामधेनु) ने पृथिवी पर अपने दो पुत्रों को अत्यन्त दुर्दशा की अवस्था में देखा जिससे उसके नेत्रों से अश्रु टपक कर नीचे से जा रहे इन्द्र पर गिर पड़े। इन्द्र ने सुरभि से उसके कष्ट का कारण पूछा जिस पर उसने अपने दोनों पुत्रों की दशा का वर्णन किया। उसे रोती देखकर इन्द्र ने यह माना कि पुत्र से बढकर और कोई वस्तु नहीं है।" इस कथा का वर्णन करते हुये भरत ने कहा कि जब सहस्रों पुत्रों वाली सुरभि ने अपने दो पुत्रों के लिये इतना शोक किया तब एक पुत्रवाली माता कौसल्या श्रीराम के बिना कैसे जीवित रह सकेंगी (२. ७४, १५–२८)।" "रावण ने इसे वरुणालय में देखा। कहते हैं कि इसके दूध की धारा ही से क्षीरसागर परिपूर्ण है (७. २३, २१–२२)।

सुरभी, क्रोधवशा की पुत्री का नाम है, जिसने रोहिणी और यशस्विनी गन्धर्वी नामक दो कन्यायें उत्पन्न कीं (३. १४, २२. २७)।

सुरसा, क्रोधवशा की पुत्री का नाम है, जिसने नागों को जन्म दिया (३. १४, २२. २८)। इसकी बहन का नाम कद्रू था (३. १४, ३१)। "हनुमान् के बल और पराक्रम की परीक्षा लेने के लिये इन्द्र सहित देवताओं ने इसे राक्षसी का रूप धारण करके उनका मार्गविरोध करने के लिये कहा। इसने तदनुसार हनुमान् के सामने विकराल रूप प्रगट किया और हनुमान् के सम्मुख खड़ी होकर उनका भक्षण करने के लिये कहा। अनेक अनुनय-विनय करने पर भी जब इसने हनुमान् को जाने की अनुमति नहीं दी तो अन्त में हनुमान् इसके विशाल मुख में एक अङ्गुष्ठ के बराबर छोटा रूप बनाकर प्रवेश कर गये, और इस प्रकार इसे सन्तुष्ट करने के पश्चात् बाहर निकल आये। राहु के मुख से छूटे हुये चन्द्रमा की भाँति अपने मुख से मुक्त हुये हनुमान् को देख कर इसने अपना वास्तविक रूप प्रकट करते हुये हनुमान् को आशीर्वाद दिया (५. १, १४५–१७१)।" लङ्का से लौटने के पश्चात् हनुमान् ने इसके साथ अपने साक्षात्कार का प्रसंग सुनाया (५. ५८, २२–३२)।

सुराजि, एक हास्यकार का नाम है जो श्रीराम का मनोरंजन करने के लिये उनके साथ रहता था (७. ४३, २)।

सुराष्ट्र, दशरथ के एक मंत्री का नाम है (१. ७, ३)

सुवर्णद्वीप, सुमात्रा का नाम है जहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को भेजा था (४. ४०, २९)।

सुवर्णसदृश, आदित्यहृदय-स्तोत्र में सूर्य का एक नाम है (६. १०५, १०)।

सुवेल, एक पर्वत का नाम है जिसके निकट श्रीराम की सेना के स्थित होने का गुप्तचरों ने रावण को समाचार दिया (६. २९, २९; ३०, १. ३५; ३१, १)। इसका तट-प्रान्त अत्यन्त रमणीय था (६. ३७, ३६)। श्रीराम ने प्रमुख वानरों के साथ इस पर्वत पर चढ़कर रात्रि में निवास किया (६. ३८)। वानरों सहित श्रीराम ने इसके शिखर से लङ्कापुरी का निरीक्षण किया (६. ३९)।

सुव्रत, नाभाग के एक पुत्र का नाम है। अज इनके ज्येष्ठ भ्राता थे : 'अजश्च सुव्रतश्चैव नाभागस्य सुतावुभौ', (२. ११०, ३१)।

१. **सुषेण,** एक वानर का नाम है जिन्हें वरुण ने उत्पन्न किया (१. १७, १५)। वालिन् ने सुग्रीव को बताया कि इनकी पुत्री तारा सूक्ष्म विषयों का निर्णय करने तथा नाना प्रकार के उत्पातों के चिह्नों को समझने में सर्वथा निपुण थी (४. २२, १३)। किष्किन्धा पुरी की शोभा देखते हुये लक्ष्मण ने इनके भवन को भी देखा (४. ३३, ११)। सुग्रीव ने इन्हें सीता की खोज के लिये दक्षिण दिशा में भेजा (४. ४१, ३)। हनुमान् ने बताया कि ये भी लङ्का पुरी में प्रविष्ट हो सकते थे (५. ३, १५)। श्रीराम ने इन्हें वानर सेवा के पृष्ठभाग की रक्षा का भार सौंपा और ये तदनुसार सेना की रक्षा करते हुये चले (६. ४, २१. ३५)। श्रीराम ने इन्हें सैन्य व्यूह के कुक्षि भाग की रक्षा करने का आदेश दिया (६. २४, १८)। रावण ने इन्हें देखा (६. २९, ४)। ये धर्म के पुत्र थे (६. ३०, २३)। इन्होंने श्रीराम के साथ रहकर मध्य के मोर्चे की रक्षा की (६. ४१, ४४)। इन्होंने बहुसंख्यक वानरों के साथ लङ्का के सभी द्वारों को अपने अधिकार में कर लिया (६. ४१, ९४)। इन्होंने पश्चिम द्वार पर आक्रमण किया (६. ४२, २६)। इन्होंने विद्युन्माली के साथ द्वन्द्व युद्ध किया (६. ४३, १४)। विद्युन्माली के साथ घोर युद्ध करते हुये इन्होंने उसका वध कर दिया (६. ४३, ३६–४२)। श्रीराम ने अन्य वानरों के साथ इनके दो पुत्रों को भी इन्द्रजित् का पता लगाने के लिये भेजा (६. ४५, २)। श्रीराम और लक्ष्मण को मूर्च्छित देखकर ये भी शोक करने लगे (६. ४६, ३)। ये मूर्च्छित श्रीराम और लक्ष्मण को घेरकर उनकी रक्षा करने लगे (६. ४७, २)। जब सुग्रीव ने इन्हें श्रीराम और लक्ष्मण को

लेकर किष्किन्धा चले जाने के लिये आदेश दिया तो इन्होंने कुछ विशेष ओषधियों को मँगाकर श्रीराम और लक्ष्मण को स्वस्थ करने के लिये कहा (६. ५०, २६–३२)। जब रावण के प्रहार से सुग्रीव अचेत हो गये तो इन्होंने रावण पर आक्रमण किया (६. ५९, ५२)। ये कुम्भकर्ण के साथ युद्ध करने के लिये युद्धक्षेत्र की ओर बढ़े (६. ६६, ३५)। इन्द्रजित् ने इन्हें आहत कर दिया (६. ७३, ५७)। विभीषण ने इन्हें युद्ध भूमि में आहत देखा (६. ७४, १०)। इन्होंने कुम्भ के साथ युद्ध किया (६. ७६, ६२)। इन्द्रजित् का वध करके लौटने के पश्चात् इन्होंने उनके आहत शरीर की चिकित्सा की (६. ९१, १९–२५)। सुग्रीव ने इन्हें अपने ही समान वीर समझ कर सेना की रक्षा का कार्य सौंपा (६. ९६, ६–७)। रावण ने क्रुद्ध होकर कहा कि वह उस रामरूपी वृक्ष को उखाड़ फेंकेगा जिसकी सुषेण आदि समस्त वानर यूथपति शाखा-प्रशाखायें हैं (६. ९९, ५)। मूर्च्छित लक्ष्मण के लिये विलाप करते हुये श्रीराम को इन्होंने सान्त्वना दी और हनुमान् को महोदय पर्वत के दक्षिण शिखर पर उगी हुई विशल्यकरणी, सावर्ण्यकरणी, संजीवकरणी और संधानी नामक प्रसिद्ध महौषधियों को लाने के लिये कहा (६. १०१, २३–३२)। 'सुषेणो ह्येवमब्रवीत्', (६. १०१, ३६)। हनुमान् द्वारा उस पर्वत शिखर के ला देने पर इन्होंने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा तदनन्तर उन औषधियों को उखाड़ और कूट पीस कर लक्ष्मण की नाक में दे दिया जिससे शरीर में धँसे बाणों के निकल जाने पर लक्ष्मण सचेत हो गये (६. १०१, ४१. ४३. ४५–४६)। अयोध्या की यात्रा करते समय श्रीराम ने सीता को वह स्थान भी दिखाया जहाँ सुषेण ने विद्युन्माली का वध किया था (६. १२३, ७)। भरत ने इनका आलिङ्गन किया (६. १२७, ४०)। श्रीराम ने इनके प्रति स्नेह प्रगट किया (७. ३९, २१)। श्रीराम ने सुग्रीव को विदा करते हुये इन पर प्रेम-दृष्टि रखने के लिये कहा (७. ४०, ४)।

२. सुषेण, एक वानर-प्रमुख का नाम है जिन्हें सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने पश्चिम दिशा में भेजा था (४. ४२, १)। इन्होंने सीता की खोज के लिये पश्चिम दिशा की ओर प्रस्थान किया (४. ४५, ६)। इन्होंने अपनी शक्ति का वर्णन करते हुये बताया कि ये एक छलांग में अस्सी योजन तक जा सकते हैं (४. ६५, २. ९)।

सुसन्धि, मान्धाता के कान्तिमान् पुत्र का नाम है। इनके ध्रुवसन्धि और प्रसेनजित् नामक दो पुत्र हुये (१. ७०, २५; २. ११०, १४)।

सूर्य—इन्होंने सुग्रीव को जन्म दिया (१. १७, १०)। 'अस्तमभ्यागमत्सूर्यो रजनी चाभ्यवर्तत', (२. १३, १५)। श्रीराम के वनवास के समय

उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका आवाहन किया (२. २५, २३)। श्रीराम ने अगस्त्य के आश्रम पर इनके स्थान का दर्शन किया (३. १२, १७)। विश्वेदेव, वसु, और मरुद्गण आदि देवता सायंकाल के समय मेरु पर्वत पर आकर इनका उपस्थान करते थे (४. ४२, ३९–४०)। हनुमान् ने समुद्रलङ्घन के समय इनका स्मरण किया (५. १, ८)। जब रावण से युद्ध करते हुये श्रीराम थककर अत्यन्त चिन्तित हुये तो अगस्त्य मुनि ने उनके पास आकर उन्हें आदित्य-हृदय नामक अत्यन्त गोपनीय स्तोत्र का जप करने के लिये कहा (६. १०५, १–५)। अगस्त्य ने बताया कि सूर्य अपनी अनन्त किरणों से सुशोभित (रश्मिमान्), नित्य उदय होने वाले (समुद्यन), देवताओं और असुरों द्वारा नमस्कृत, विवस्वान्, प्रभा का विस्तार करनेवाले (भास्कर) और भुवनेश्वर हैं (६. १०५, ६)। "अगस्त्य ने बताया कि सम्पूर्ण देवता सूर्य के ही स्वरूप हैं। ये तेज की राशि तथा अपनी किरणों से जगत् को सत्ता एवं स्फूर्ति प्रदान करनेवाले हैं और ये ही अपनी रश्मियों का प्रसार करके देवताओं तथा असुरों सहित सम्पूर्ण लोकों का पालन करते हैं (६. १०५, ७)।" 'एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः। महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपां पतिः ॥ पितरो वसवः साध्या अश्विनौ मरुतो मनुः। वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः ॥ आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्। सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः ॥ हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान्। तिमिरोन्मथनः शंभुस्त्वष्टा मार्तण्डकोंऽशुमान् ॥ हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोऽहस्करो रविः। अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः ॥ व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुःसामपारगः। घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवंगमः ॥ आतपी मण्डली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः। कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः ॥ नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः। तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन्नमोऽस्तु ते ॥', (६. १०५, ८–१५)। इनकी स्तुति (६. १०५, १६–२१)। अगस्त्य मुनि ने सूर्य का महत्त्व बताते हुये श्रीराम को आदित्यहृदय का तीन बार जप करने का परामर्श दिया (६. १०५, २२–२७)। मुनि का उपदेश सुनकर श्रीराम ने प्रसन्न होकर शुद्धचित्त से आदित्यहृदय को धारण किया और तीन बार आचमन करके शुद्ध हो भगवान् सूर्य की ओर देखते हुये उसका तीन बार जप किया (६. १०५, २८–२९)। उस समय देवताओं के मध्य में खड़े हुये भगवान् सूर्य ने प्रसन्न होकर श्रीराम की ओर देखा और रावण के विनाश का समय निकट जानकर उनसे शीघ्रता करने के लिये कहा (६. १०५, ३१)।

सूर्यभानु, कुवेर के एक द्वारपाल का नाम है जिसने कुवेर के भवन में प्रवेश करते समय रावण को रोकने का प्रयास किया, परन्तु रावण ने इसका वध कर दिया (७. १४, २५–२९)।

सूर्यवान्, एक पर्वत का नाम है जिसके क्षेत्र में सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने हनुमान् आदि वानरों को भेजा था (४. ४१, ३२)।

सूर्यशत्रु, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन में हनुमान् ने सीता की खोज की (५. ६, २१)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १२)। यह भी अस्त्र-शस्त्रों से युक्त होकर रावण की सभा में उपस्थित हुआ (६. ९, १)। इसके वध का उल्लेख (६. ८९, १३)। अयोध्या लौटते समय श्रीराम ने पुष्पक विमान से सीता को वह स्थान दिखाया जहाँ इसका वध किया गया था (६. १२३, १४)। इसने भी रावण के साथ देवसेना पर आक्रमण किया (७. २७, ३०)।

सूर्याक्ष, एक वानर-प्रमुख का नाम है। लक्ष्मण ने किष्किन्धापुरी की शोभा देखते हुये इनके भवन को भी देखा (४. ३३, १०)।

सूर्यानन, एक वानर का नाम है जिन्हें इन्द्रजित् ने आहत कर दिया (६. ७३, ५९)।

सृमर, मृगमन्दा की सन्तानों में से एक का नाम है (३. १४, २३)।

सृञ्जय, सुचन्द्रपुत्र धूम्राश्व के पुत्र का नाम है (१. ४७, १४)।

सोम—श्रीराम के वनवास के समय उनकी रक्षा करने के लिये कौसल्या ने इनका आवाहन किया (२. २५, ११. २३)। 'सोमादित्यौ', (५.१३,६६)।

१. **सोमगिरि**, सिन्धुनद और समुद्र के सगम पर स्थित सौ शिखरों से युक्त एक महान् पर्वत का नाम है। इसके क्षेत्र में सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने सुषेण आदि वानरों को भेजा (४. ४२, १५, गीता प्रेस संस्करण)। देखिये **हेमगिरि**।

२. **सोमगिरि**, उत्तरवर्ती समुद्र के मध्यभाग में स्थित एक पर्वत का नाम है (४. ४३, ५३ गीता प्रेस संस्करण)। देखिये ४. ४३, ५९ भी।

सोमदत्त, सहदेवपुत्र कुशाश्व के पुत्र का नाम है (१. ४७, १५)।

सोमदा, ऊर्मिला की पुत्री का नाम है जो चूली मुनि की उपासना करती थी (१. ३३, १२)। इसकी सेवा से सन्तुष्ट होकर मुनि ने इसे मानसिक तप से प्रगट ब्रह्मदत्त नामक पुत्र प्रदान किया (१. ३३, १३–१८)। इसने अपनी पुत्रवधुओं का यथोचित अभिनन्दन किया (१. ३३, २५)।

सोमा, एक अप्सरा का नाम है। भरद्वाज मुनि ने भरत का आतिथ्य-सत्कार करने के लिये इसका आवाहन किया था (२. ९१, १७)।

सौदास, रघु के पुत्र, कल्माषपाद, का ही दूसरा नाम है जो शापवश कुछ वर्षों के लिये नरभक्षी राक्षस हो गये थे (२. ११०, २६)।

१. **सौमनस**, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसको विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित कर दिया था (१. २८, ८)।

२. सौमनस, एक पर्वत का नाम है जो उदयगिरि का एक शिखर है। इसकी चौड़ाई एक योजन और ऊँचाई दस योजन है। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये विनत को इसके क्षेत्र मे भेजा (४. ४०. ५५)।

सौराष्ट्र, एक समृद्धिशाली देश का नाम है जिसपर दशरथ का आधिपत्य था (२. १०, ३८)। दशरथ ने कैकेयी को यहाँ होनेवाले उपहार प्रदान करने के लिये कहा (२. १०, ३९–४०)। सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने सुषेण आदि वानरों को इस देश में भेजा (४. ४२, ६)।

सौवीर, एक समृद्धिशाली देश का नाम है जहाँ दशरथ का आधिपत्य था (२. १०, ३८)। दशरथ ने कैकेयी को यहाँ उत्पन्न होनेवाले उपहार देने के लिये कहा (२. १०, ३९–४०)।

स्कन्ध, एक वानर का नाम है जो मूर्च्छित श्रीराम और लक्ष्मण को घेरकर उनकी रक्षा करने लगे (६. ४७, ३, गीताप्रेस संस्करण)।

स्थण्डलशायी, एक प्रकार के ऋषियों का नाम है जिन्होंने शरभङ्ग मुनि के स्वर्गलोक चले जाने के पश्चात् श्रीराम के समक्ष उपस्थित होकर राक्षसों से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की (३. ६, ४. ८–२६)।

१. स्थाणु, महादेव का एक नाम है (१. २२, ९)।

२. स्थाणु, छठवें प्रजापति का नाम है जो बहुपुत्र के बाद हुये थे (३. १४. ८)।

स्थाणुमती, एक नदी का नाम है। केकय से लौटते समय भरत ने इसे पार किया था (२. ७१, १६)।

स्थूलाक्ष, एक राक्षस का नाम है जो श्रीराम के विरुद्ध युद्ध के लिये खर के साथ आया (३. २३, ३४)। दूषण के धराशायी होने पर इसने श्रीराम पर आक्रमण किया परन्तु श्रीराम ने इसके नेत्रों को सायकों से भर दिया जिससे यह पृथिवी पर गिर पड़ा (३. २६, १८–२२)।

स्यन्दिका, एक नदी का नाम है जिसे श्रीराम आदि ने पार किया (२. ४९, ११)।

स्वनाभ, प्रजापति कृशाश्व के पुत्र, एक अस्त्र का नाम है जिसे विश्वामित्र ने श्रीराम को समर्पित किया था (१. २८, ६)।

स्वयंप्रभा, मेरु सावर्णि की कन्या का नाम है जो ऋक्षबिल में हेमा के भवन की रक्षा करती थी। यह हेमा की सखी थी (४. ५१, १६–१७)। इसने हनुमान् आदि से उनके ऋक्षबिल में प्रवेश करने का कारण पूछा (४, ५१, १८–१९)। इसके पूछने पर हनुमान् आदि ने सीताहरण तथा अपने विफल प्रयासों का वर्णन किया (४. ५२, १–२)। यह सर्वज्ञ थी और

इसने हनुमान् आदि के वर्णन को सुनकर सन्तोष प्रगट किया (४. ५२. १८-१९)। इसने समस्त वानरों को आँख बन्द कराकर ऋक्षबिल से क्षणमात्र में बाहर निकाल दिया (४. ५२, २६-२९)।

स्वस्तिक, एक नौका का नाम है जिसपर सेना सहित भरत गंगा पार करने के लिये आरूढ़ हुये (२. ८९, ११-१२)। इस चिह्न से युक्त सर्पों का उल्लेख (५. १, १३)।

स्वस्त्यात्रेय, एक महर्षि का नाम है जो श्रीराम के अयोध्या लौटने पर उनके अभिनन्दन के लिये दक्षिण दिशा से महर्षि अगस्त्य के साथ उपस्थित हुये (७. १, ३)।

ह

हनुमान्, एक वानर का नाम है जो पम्पासर पर श्रीराम से मिले थे (१. १, ५८)। इनके कहने पर राम सुग्रीव से मिले (१. १, ५९)। ये सौ योजन विस्तार वाले क्षार समुद्र को लाँघ गये (१. १, ७२)। "इन्होंने लंका में पहुँचकर अशोकवाटिका में सीता को चिन्तामग्न देखा तथा उन्हें श्रीराम का संदेश सुनाया। अक्षकुमार आदि का वध करने के पश्चात् ये पकड़े गये। तदनन्तर लंका को भस्म करके लौट कर इन्होंने श्रीराम को सीता का संदेश सुनाया (१. १, ७३-७८)।" लंका से लौटते समय भरद्वाज मुनि के आश्रम पर पहुँच कर श्रीराम ने इनसे भरत के पास भेजा (१. १, ८७)। इनकी श्रीराम से भेंट तथा ऋष्यमूक पर्वत पर प्रस्थान से लेकर रावणवध तक की समस्त घटनाओं का वाल्मीकि ने पूर्वदर्शन कर लिया था (१. ३, २२-३८)। ये वायु देवता के औरस पुत्र थे, जिनका शरीर वज्र के समान सुदृढ़ तथा गति गरुड के समान थी (१. १७, १६)। ये सुग्रीव की सेना में तत्पर रहते थे (१. १७, ३२)। सुग्रीव और वानरों की आशङ्का का इन्होंने निवारण किया तथा सुग्रीव की आज्ञा से श्रीराम और लक्ष्मण का भेद लेने के लिये उनके पास गये (४. २, १३-२९)। "इन्होंने राम और लक्ष्मण से वन में आने का कारण पूछा और अपना तथा सुग्रीव का परिचय दिया। श्रीराम ने इनके वचनों की प्रशंसा करके लक्ष्मण को इनसे वार्तालाप करने की आज्ञा दी। लक्ष्मण ने इन्हें अपने आने का प्रयोजन बताया जिसे सुनकर ये अत्यन्त प्रसन्न हुये (४. ३)।" "लक्ष्मण ने इन्हें श्रीराम के वन में आने और सीता-हरण का वृत्तान्त बताया तथा इस कार्य में सुग्रीव के सहयोग की इच्छा प्रगट की। ये लक्ष्मण को आश्वासन देकर श्रीराम और लक्ष्मण को पीठ पर बिठाकर ऋष्यमूक आये (४. ४)।" इन्होंने सुग्रीव को श्रीराम और लक्ष्मण का परिचय देते हुये उनके आगमन का समाचार सुनाया (४. ५, १-७)।

इनका वचन सुनकर सुग्रीव श्रीराम से मिले (४. ५, ८)। सुग्रीव ने श्रीराम को बताया कि हनुमान् आदि श्रेष्ठ सचिव उनमें अनुराग रखने वाले हैं (४. ११, ७७)। श्रीराम इनके साथ मतङ्गवन में गये जहाँ सुग्रीव विद्यमान् थे (४. १२, २४)। ऋष्यमूक से किष्किन्धा के मार्ग में ये भी अन्य वानर-यूथपतियों के साथ श्रीराम के पीछे चल रहे थे (४. १३, ४)। वालिन् के वध पर शोक करती हुई तारा को इन्होंने विविध प्रकार से समझाया और वालिन् के अन्त्येष्टि संस्कार तथा कुमार अङ्गद का राज्याभिषेक करने का परामर्श दिया परन्तु तारा ने इनसे अपने पति के साथ ही सती होने का विचार व्यक्त किया (४. २१)। इन्होंने सुग्रीव के अभिषेक के लिये श्रीराम से किष्किन्धा पधारने की प्रार्थना की परन्तु श्रीराम ने इन्हें बताया कि वे अपने पिता की आज्ञापालन के कारण चौदह वर्षों के पूर्ण होने तक किसी ग्राम अथवा नगर में प्रवेश नहीं कर सकते (४. २६, १–९)। 'एवमुक्त्वा हनूमन्तं रामः सुग्रीवमब्रवीत्', (४. २६, ११)। इन्होंने सुग्रीव को सीता की खोज करने का परामर्श दिया (४. २९, १–२७)। इन्होंने चिन्तित हुये सुगीव को समझाया (४. ३२, ९–२२)। किष्किन्धा पुरी की शोभा देखते हुये लक्ष्मण ने मार्ग में इनके भवन को भी देखा (४. ३३, १०)। सुग्रीव के आदेश पर इन्होंने वानरों को आमन्त्रित करने के लिये सभी दिशाओं में दूत भेजे (४. ३७, १६)। इनके पिता भी कई सहस्र वानरों के साथ सुग्रीव के पास आये (४. ३९, १७–२८)। इनके साथ दस अरब वानर उपस्थित हुये (४. ३९, ३५)। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये इन्हें दक्षिण दिशा की ओर भेजा (४. ४१, २)। सुग्रीव ने सीता की खोज के लिये इनका विशेष रूप से उल्लेख करते हुये इनको सीता की खोज में विशेष रूप से समर्थ बताया (४. ४४, १–७)। इन्हें विशेष रूप से उपयुक्त मानकर श्रीराम ने अपनी मुद्रिका देते हुए सीता की खोज में सफल होने का आशीर्वाद दिया (४. ४४, ८–१७)। इन्होंने दक्षिण दिशा की ओर सीता की खोज के लिये प्रस्थान किया (४. ४५, ५)। 'दिशं तु यामेव गता तु सीता तामास्थितो वायुसुतो हनूमान्', (४. ४७, १४)। अङ्गद और तार के साथ ये सुग्रीव के बताये हुये मार्ग से दक्षिण दिशा के देशों की ओर गये (४. ४८, १)। इन्होंने अङ्गद के साथ विन्ध्यगिरि की गुफाओं और घने जंगलों में सीता की खोज की (४. ५०, १)। इन्होंने प्यासे वानरों को एक गुफा के अन्दर जल को प्रगट करने वाले चिह्नों को दिखाया (४. ५०, १३–१६)। इन्होंने गुफा के अन्दर एक वृद्धा तपस्विनी से उसका परिचय पूछा (४. ५०, ३९–४०; ५१, १–८)। तापसी स्वयंप्रभा के पूछने पर इन्होंने उसे अपना समस्त वृत्तान्त बताया

(४. ५२, ३–१७)। तदनन्तर इन्होंने उससे समस्त वानरों को उस गुफा से बाहर निकाल देने के लिये कहा (४. ५२, २०–२४)। इन्होंने सीता की खोज न कर सकने के कारण चिन्तित हुये वानरों को भेदनीति के द्वारा अपने पक्ष में करके अङ्गद को अपने साथ चलने के लिये समझाया (४. ५४)। 'श्रुत्वा हनुमतो वाक्यं प्रश्रितं धर्मसंहितम्', (४. ५५, १)। 'अङ्गदः परमायस्तो हनूमन्तमथाब्रवीत्', (४. ५६, ६)। इनके और अङ्गद के अतिरिक्त और कोई भी वानरी-सेना को सुस्थिर नहीं रख सकता था (५. ६४, १३)। जाम्बवान् ने इन्हें उत्साहित किया क्योंकि यही वानरों में सर्वश्रेष्ठ थे (४. ६५, ३४)। "जाम्बवान् ने इनकी उत्पत्ति की कथा सुनाकर इन्हें समुद्र-लङ्घन के लिये उत्साहित किया। उन्होंने बताया कि बाल्यावस्था में ही ये बालसूर्य को कोई फल समझकर उसको प्राप्त करने के लिये आकाश में उड़ गये थे। उस समय जब इन्द्र ने इन पर वज्र का प्रहार कर दिया तो उससे पीड़ित होने पर इन्द्र ने ही इन्हें वरदान दिया कि ये इच्छा के अनुसार मृत्यु प्राप्त करेंगे। इस प्रकार जाम्बवान् ने इनकी प्रशंसा करते हुये इन्हें उत्साहित किया (४. ६६, १–३६)।" जाम्बवान् की प्रेरणा पाकर इन्हें अपने महान् वेग पर विश्वास हो गया और इन्होंने अपना विराट रूप प्रगट किया (५. ६६, ३७)। जब जाम्बवान् की बात सुनकर ये समुद्रलङ्घन के लिये प्रस्तुत हुये और अपने शरीर को बढ़ाने लगे तो वानरों को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। वानरों की बात सुनकर इन्होंने अपनी शक्ति और सामर्थ्य का परिचय दिया (४. ६७, १–३०)। जाम्बवान् के कहने पर ये महेन्द्रपर्वत पर स्थित हो सागर-लङ्घन के लिये प्रस्तुत हुये (४. ६७, ३५–५०)। "इन्होंने समुद्र-लङ्घन किया जहाँ मैनाक ने इनका स्वागत किया। सुरसा पर विजय तथा सिंहिका का वध करके इन्होंने समुद्र के उस पार पहुँचकर लङ्का की शोभा का दर्शन किया (५. १)।" इन्होंने लङ्कापुरी में प्रवेश करने के विषय में विचार और तदनन्तर सूर्यास्त हो जाने पर अपने शरीर को बिल्ली के बराबर लघु बनाकर लङ्कापुरी में प्रवेश किया। (५. २)। लङ्कापुरी का अवलोकन करके ये विस्मित हुये और उसमें प्रवेश करते समय निशाचरी लङ्का ने इन्हें रोका परन्तु इनकी मार से विह्वल होकर उसने पुरी में प्रवेश करने की अनुमति प्रदान की (५. ३)। इन्होंने लङ्कापुरी एवं रावण के अन्तःपुर में प्रवेश किया (५. ४)। इन्होंने रावण के अन्तःपुर तथा घर-घर में सीता की खोज की और उन्हें न पाकर दुःखित हुये (५. ५)। इन्होंने रावण तथा अन्यान्य राक्षसों के भवनों में भी सीता की खोज की (५. ६)। इन्होंने लङ्कापुरी के तथा रावण के भवनों की शोभा देखी और वहाँ सीता को न पाकर अत्यन्त व्यथित हो गये (५. ७, १–५.

१६–१७)। इन्होंने पुष्पक विमान का दर्शन किया (५. ८)। इन्होंने रावण के श्रेष्ठ भवन, पुष्पक विमान, तथा रावण के रहने के सुन्दर भवन को देखकर उसके भीतर सोयी हुयी सहस्रों सुन्दरी स्त्रियों का अवलोकन किया (५. ९)। इन्होंने अन्तःपुर में सोये हुये रावण तथा गाढनिद्रा में पड़ी हुई उसकी स्त्रियों को देखा और मन्दोदरी को सीता समझकर प्रसन्न हुये (५. १०)। "मन्दोदरी में सीता के भ्रम का निवारण हो जाने के बाद इन्होंने पुनः अन्तःपुर और रावण की पानभूमि में सीता का पता लगाया। रावण के अन्तःपुर में परस्त्री-दर्शन से इनके मन में धर्मलोप की आशङ्का हुई जिसका इन्होंने अपनी तर्क बुद्धि से निवारण किया (५. ११)।" लतामण्डपों, चित्रशालाओं तथा रात्रि-कालिक विश्रामगृहों में भी सीता को न देखकर उनके मरण की आशङ्का से ये शिथिल हो गये और तदनन्तर उत्साह का आश्रय लेकर अन्य स्थानों में सीता की खोज की परन्तु कहीं भी पता न लगने से पुनः चिन्तित हो गये (५. १२)। सीता के विनाश की आशङ्का से ये चिन्तित हुये और श्रीराम को सीता के न मिलने की सूचना देने से अनर्थ की सम्भावना देखकर इन्होंने न लौटने का निश्चय किया तथा पुनः खोजने का विचार करके अशोकवाटिका में ढूंढने के विषय में तरह-तरह की बातें सोचने लगे (५. १३)। इन्होंने अशोकवाटिका में प्रवेश करके उसकी शोभा का दर्शन तथा एक अशोक वृक्ष पर छिपे रहकर वहीं से सीता का अनुसन्धान किया (५. १४)। वन की शोभा देखते हुये इन्होंने एक चैत्यप्रासाद (मन्दिर) के पास सीता को दयनीय अवस्था में देखा और पहचान कर प्रसन्न हुये (५. १५)। ये मन ही मन सीता के शील और सौन्दर्य की सराहना करते हुये उन्हें कष्ट में पड़ी देख स्वयं भी उनके लिये शोकाकुल हो गये (५. १६)। भयंकर राक्षसियों से घिरी हुई सीता का दर्शन करके ये प्रसन्न हुये (५. १७, २६–३२)। इन्होंने अपनी स्त्रियों से सेवित रावण को अशोकवाटिका में देखा (५. १८, २५–३२)। अशोक-वृक्ष पर छिप कर बैठे हुये इन्होंने सीता को फटकारती हुई राक्षसियों की बातें सुनीं (५. २४, १४)। इन्होंने सीता का विलाप, त्रिजटा की स्वप्नचर्चा तथा राक्षसियों की डाँट-डपट आदि प्रसंग ठीक-ठीक सुनने के पश्चात् सीता से वार्तालाप करने के विषय में विचार किया (५. ३०)। इन्होंने सीता को सुनाने के लिये श्रीराम-कथा का वर्णन किया (५. ३१)। इनको देखकर सीता अत्यन्त विस्मित हुईं (५. ३२, ३–४)। सीता से उनका परिचय पूछने पर सीता ने इनको अपना परिचय देते हुये अपने वनगमन और अपहरण का भी वृत्तान्त बताया (५. ३३)। सीता को इनके प्रति संदेह हुआ जिसका निवारण होने पर इन्होंने श्रीराम के गुणों का गान किया

(५. ३४)। सीता के पूछने पर इन्होंने श्रीराम के शारीरिक चिह्नों और गुणों का वर्णन तथा नर-वानर की मित्रता का प्रसङ्ग सुनाकर सीता के मन में विश्वास उत्पन्न किया (५. ३५)। "इन्होंने सीता को श्रीराम की दी हुई मुद्रिका अर्पित की। सीता ने श्रीराम द्वारा अपना उद्धार करने के विषय में प्रश्न किया। तदनन्तर इन्होंने श्रीराम के सीता विषयक प्रेम का वर्णन करके उन्हें सान्त्वना दी (५. ३६)।" सीता ने इनसे श्रीराम को शीघ्र बुलाने का आग्रह किया जिस पर इन्होंने सीता से अपने साथ चलने का अनुरोध किया परन्तु सीता ने अस्वीकार कर दिया (५. ३७)। सीता ने इनको पहचान के रूप में चित्रकूट पर्वत पर घटित हुये एक कौए के प्रसंग को सुनाया तथा श्रीराम को शीघ्र बुला लाने के लिये अनुरोध करते हुये अपनी चूड़ामणि दी (५. ३८)। चूड़ामणि लेकर जाते हुये इनसे सीता ने श्रीराम आदि को उत्साहित करने के लिये कहा, और समुद्रतरण के विषय में शङ्कित हुई सीता को वानरों का पराक्रम बताकर इन्होंने सीता को आश्वासन दिया (५. ३९)। सीता ने श्रीराम से कहने के लिये इन्हें पुनः संदेश दिया तथा इन्होंने उन्हें आश्वासन देकर उत्तरदिशा की ओर प्रस्थान किया (५. ४०)। इन्होंने प्रमदावन (अशोकवाटिका) का विध्वंस कर दिया (५. ४१)। राक्षसियों के मुख से एक वानर के (इनके) द्वारा प्रमदावन के विध्वंस का समाचार सुनकर रावण ने किंकर नामक राक्षसों को भेजा जिनका इन्होंने संहार कर दिया (५. ४२. १३–४३)। इन्होंने चैत्यप्रासाद का विध्वंस, तथा उसके राक्षसों का वध कर दिया (५. ४३)। रावण की आज्ञा पाकर प्रहस्तपुत्र जम्बुमाली इनके समक्ष उपस्थित हुआ जिसके साथ युद्ध करते हुये इन्होंने उसका वध कर दिया (५. ४४)। मन्त्री के सात पुत्रों ने फाटक पर खड़े हुये इन पर एक साथ प्रहार किया परन्तु इन्होंने उन सबका वध कर दिया जिससे भयभीत होकर उनकी अवशिष्ट सेना दशों दिशाओं में भाग गई (५. ४५)। मन्त्रिपुत्रों के वध का समाचार सुनकर रावण ने इनको पकड़ने के लिये विरूपाक्ष, यूपाक्ष, दुर्धर, प्रघस और भासकर्ण आदि पाँच सेनापतियों को भेजा जिनका इन्होंने वध कर दिया (५. ४६)। "सेवकों और वाहनों सहित पाँच सेनापतियों के वध का समाचार सुनकर रावण ने अक्षकुमार को इनसे युद्ध करने के लिये भेजा। अक्षकुमार ने महान् पराक्रम प्रकट करते हुये इनके साथ भीषण युद्ध किया परन्तु अन्ततः इनके हाथों मारा गया (५. ४७)।" इन्होंने इन्द्रजित् के साथ युद्ध किया किन्तु अन्त में उसके दिव्यास्त्र के बन्धन में बँधकर रावण की सभा में उपस्थित हुये। (५. ४८, १–५४)। रावण के समीप उपस्थित होने पर रावण ने इनसे इनके लङ्का में आने का प्रयोजन पूछा (५. ४८, ५८–६२)। रावण के

प्रभावशाली स्वरूप को देखकर इनके मन में अनेक प्रकार के विचार उठे (५. ४९)। रावण इन्हें देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और प्रहस्त को इनका परिचय पूछने की आज्ञा दी (५. ५०, १–११)। इन्होंने अपने को श्रीराम का दूत बताया (५ ५०, १२–१९)। श्रीराम के प्रभाव का वर्णन करते हुये इन्होंने सीता को लौटा देने के लिये रावण को समझाया (५. ५१, १–४४)। यद्यपि इनकी बातें युक्तियुक्त थीं तथापि रावण ने इनके वध की आज्ञा दी (५. ५१, ४५)। विभीषण के समझाने पर रावण ने इनका वध करने की अपेक्षा इनकी पूंछ में आग लगा देने की आज्ञा दी (५. ५३, १–५)। रावण की आज्ञा के अनुसार राक्षसों ने इनकी पूंछ में आग लगा दी और इन्हें नगर भर मे घुमाने लगे (५. ५३, ६–३०)। इनकी पूंछ में आग लगा दी जाने का समाचार सुनकर शोक-सन्तप्त हुई सीता ने अग्नि से शीतल हो जाने की प्रार्थना की (५. ५३, २४–३२)। जब इन्होंने देखा कि इनकी पूंछ में लगी अग्नि शीतल हो गई तो इन्होंने सीता और श्रीराम को ही इसका कारण मानते हुये अपने समस्त बन्धन खोल दिये और राक्षसों का वध करके लङ्कापुरी का निरीक्षण करने लगे (५. ५३, ३३–४५)। इन्होंने समस्त लङ्कापुरी में आग लगा दी और केवल विभीषण का भवन छोड़ दिया (५. ५४)। समस्त लङ्का में आग लगा देने के पश्चात् इन्हें सीताजी की चिन्ता हुई परन्तु उनके क्षतिरहित बच जाने का समाचार सुनकर इन्होंने उनके दर्शन के पश्चात् श्रीराम के पास लौटने का निश्चय किया (५. ५५)। सीता के दर्शन के पश्चात् ये सागर लाँघने लगे (५. ५६)। समुद्र को लाँघकर ये जाम्बवान् और अङ्गद आदि सुहृदों से मिले (५. ५७)। जाम्बवान् के पूछने पर इन्होंने अपनी लङ्कायात्रा का समस्त वृत्तान्त सुनाया (५. ५८)। सीता की दुरवस्था बता कर इन्होंने वानरों को लङ्का पर आक्रमण करने के लिये उत्तेजित किया (५. ५९)। इनके पराक्रम की चर्चा करते हुये अङ्गद ने लङ्का को जीतकर सीता को वापस ले आने का उत्साहपूर्ण विचार प्रकट किया (५. ६०, १–१२)। श्रीराम की आज्ञा के बिना लङ्का पर आक्रमण न करने के जाम्बवान् के विचार को इन्होंने स्वीकार कर लिया (५. ६१, १)। तदनन्तर इनकी प्रशंसा करते हुये समस्त वानर प्रसन्न चित्त श्रीराम से मिलने के लिये चले (५. ६१, २–४)। जब वानरों सहित ये मधुवन में मधु का पान कर रहे थे तो दधिमुख ने इनके दल पर आक्रमण किया (५. ६२, २५–२६)। दधिमुख के मुख से मधुवन के विध्वंस का समाचार सुनकर सुग्रीव ने हनुमान् आदि वानरों की सफलता का अनुमान किया (५. ६३)। दधिमुख के द्वारा सुग्रीव का संदेश सुनकर वानरों सहित ये किष्किन्धा पहुँचे और श्रीराम को प्रणाम करके सीता के दर्शन का

समाचार बताया (५. ६४)। इन्होंने श्रीराम को सीता का विस्तृत समाचार सुनाया (५. ६५)। जब इन्होंने श्रीराम को सीता की चूडामणि दिया तो वे उसे छाती से लगाकर रोने लगे (५. ६६, १)। श्रीराम ने इनसे सीता का संदेश पूछा (५. ६६, १४–१५)। इन्होंने श्रीराम को सीता का संदेश सुनाया (५. ६७)। इन्होंने सीता के सन्देह और अपने द्वारा उसके निवारण का वृत्तान्त बताया (५. ६८)। इनके कार्य की सफलता के लिये इनकी प्रशंसा करते हुये श्रीराम ने इन्हें अपने हृदय से लगाया (६. १, १–१३)। इन्होंने लङ्का के दुर्ग, फाटक, सेना विभाग और संक्रम आदि का वर्णन करके श्रीराम से सेना को कूच करने की आज्ञा देने की प्रार्थना की (६. ३)। इनका वचन सुनकर श्रीराम ने कहा कि वे शीघ्र ही लङ्का को नष्ट कर डालेंगे (६ ४, १–२)। ये श्रीराम को अपने कंधे पर बैठाकर चले (६. ४, ४२)। इनके पराक्रम को देखकर लज्जित रावण ने अपने मन्त्रियों से परामर्श किया (६. ६, १)। वज्रदंष्ट्र ने कहा कि सुग्रीव और लक्ष्मण हनुमान् से श्रेष्ठ हैं (६. ९, १०)। 'गतिं हनूमतो लोके को विद्यात्तर्कयेत वा', (६. ९, ११)। विभीषण को देखकर सुग्रीव ने इनसे परामर्श किया (६. १७, ६)। इन्होंने श्रीराम के समक्ष विभीषण को ग्रहण करने के सम्बन्ध में अपने विचार प्रगट किये (६. १७, ५०–६६)। सुग्रीव ने श्रीराम से इनके कन्धे पर बैठकर सागर पार करने का निवेदन किया (६. २२, ८२)। सारण ने बताया कि लङ्का आकर सीता का दर्शन करने की इनकी सफलता के पीछे अङ्गद की बुद्धि कार्य कर रही थी (६. २६, १९)। "शुक ने रावण को इनका परिचय देते हुये कहा कि बाल्यकाल में ये सूर्य को पकड़ने के लिये उछले परन्तु सूर्य तक न पहुँच कर उदयगिरि पर ही गिर पड़े। उस शिला-खण्ड पर गिरने के कारण इनकी 'हनु' कुछ कट गई जिससे ये हनुमान् के नाम से प्रसिद्ध हुये। उसने रावण को इनके द्वारा लङ्का में आग लगा दी जाने की घटना का भी स्मरण कराया (६. २८, ८–१७)।" 'हनूमन्तं च विक्रान्तम्', (६. २९, ३)। ये बृहस्पतिपुत्र केसरी के पुत्र थे (६. ३०, २२)। ये वायु के पुत्र थे (६. ३०, २५)। रावण ने श्रीराम का मायारचित कटा मस्तक सीता को दिखाकर बताया कि इनका भी राक्षसों ने वध कर दिया है (६. ३१, २६)। अन्य वानर वीरों को साथ लेकर इन्होंने लङ्का के पश्चिम द्वार का मार्ग रोक लिया (६. ४१, ४०)। इन्होंने जम्बुमाली के साथ युद्ध किया (६. ४३, ७,)। जम्बुमाली ने इनके वक्ष पर प्रहार किया परन्तु इन्होंने उसका वध कर दिया (६. ४३, २१–२२)। ये भी उस स्थान पर आये जहाँ श्रीराम और लक्ष्मण मूर्च्छित पड़े थे (६. ४५, ३)। इन्होंने भी श्रीराम के लिये शोक किया (६. ४६, ३)। इन्द्रजित् ने

इन पर दस बाणों से प्रहार किया (६. ४६, २०)। ये श्रीराम और लक्ष्मण की रक्षा करने लगे (६. ४७, २)। इन्होंने धूम्राक्ष के साथ युद्ध करते हुये उसका वध कर दिया (६. ५२, २६–३९)। अकम्पन के साथ युद्ध करते हुये इन्होंने उसका वध कर दिया (६. ५६, ८–३९)। जब रावण युद्ध-भूमि में भयंकर पराक्रम दिखा रहा था तो इन्होंने उसके साथ थप्पड़ों का युद्ध किया (६. ५९, ५३–७४)। रावण के विरुद्ध नील के पराक्रम को देखकर ये भी अत्यन्त विस्मित हुये (६. ५९, ८१)। जब रावण ने लक्ष्मण को मूर्च्छित कर दिया तो इन्होंने रावण की छाती में मुष्टिप्रहार करके उसे भूमि पर गिरा दिया और तदनन्तर लक्ष्मण को उठा कर श्रीराम के पास ले आये (६. ५९, ११४–१२०)। इन्होंने श्रीराम से अपने पीठ पर बैठकर रावण से युद्ध करने का निवेदन किया जिसे स्वीकार करते हुये श्रीराम इनकी पीठ पर बैठ गये (६. ५९, १२५–१२७)। रावण ने इन्हें आहत कर दिया (६. ५९, १३५–१३६)। ये भी पर्वत-शिखर लेकर लङ्का के द्वार पर डट गये (६. ६१–३८)। ये कुम्भकर्ण से युद्ध करने के लिये अग्रसर हुये (६. ६६, ३५)। इन्होंने कुम्भकर्ण से युद्ध किया परन्तु अन्त में आहत हो गये (६. ६७, १७–२०)। जब कुम्भकर्ण ने सुग्रीव पर शूल का प्रहार किया तो इन्होंने उस शूल को पकड़ कर तोड़ दिया जिससे सब लोग इनकी प्रशंसा करने लगे (६. ६७, ६३–६६)। जब सुग्रीव को पकड़ कर कुम्भकर्ण लङ्का की ओर चला तो पहले इन्होंने उन्हें मुक्त कराने का विचार किया परन्तु बाद में यह सोचकर कि किसी की सहायता से मुक्त होने को सुग्रीव अच्छा नहीं समझेंगें, इन्होंने अपना विचार त्याग दिया (६. ६७, ७४–८१)। इन्होंने देवान्तक और त्रिशिरा का वध किया (६. ७०, २०–२६. ३३–४९)। इन्द्रजित ने इन्हें आहत कर दिया (६. ७३, ५७)। ये विभीषण के साथ हाथ में मशाल लेकर युद्धभूमि का निरीक्षण करने लगे (६. ७४, ५–९)। इन्होंने सुग्रीव आदि को युद्धस्थल में आहत पड़े देखा (६. ७४, ११)। ये जाम्बवान् को ढूँढने लगे (६. ७४, १३)। युद्धस्थल में आहत जाम्बवान् ने इनकी सुरक्षा के सम्बन्ध में पूछा और कहा कि यदि ये जीवित हों तो मृतसेना भी पुनः जीवित हो जायगी (६. ७४, १८–२३)। ये भी जाम्बवान् के पास पहुँच गये (६. ७४, २४,)। जाम्बवान् के आदेश पर ये हिमालय से ओषधियुक्त पर्वत ले आये और उन ओषधियों की गन्ध से श्रीराम, लक्ष्मण, तथा समस्त वानर पुनः स्वस्थ हो गये (६. ७४, २६–६८)। ये ओषधियों से युक्त उस पर्वत को पुनः हिमालय पर पहुँचा आये (६. ७४, ७३)। अनेक राक्षसों का वध हो जाने के पश्चात् सुग्रीव ने इनसे आगे की कार्ययोजना के सम्बन्ध में परामर्श

किया (६. ७५, १)। निकुम्भ के साथ युद्ध करते हुये इन्होंने उसका वध किया (६. ७७, ११–२४)। जब इन्होंने मायामयी सीता को इन्द्रजित् के साथ देखा तो पहले तो चिन्तित हुये परन्तु जब इन्द्रजित् ने उसका वध कर दिया तो अत्यन्त विषाद-ग्रस्त हो गये (६. ८१, ८–३३)। जब इन्द्रजित् को देखकर समस्त वानर पलायन करने लगे तो उन्हें प्रोत्साहित करते हुये इन्होंने घोर युद्ध आरम्भ किया (६. ८२, १–८)। सीता के वध से इनका हृदय अत्यन्त शोक-संतप्त था (६. ८२, ९)। यद्यपि इन्होंने इन्द्रजित् की सेना का घोर संहार किया तथापि सीता की मृत्यु से अत्यन्त शोकग्रस्त होकर इन्होंने वानरों को युद्ध से विरत कर दिया और स्वयं श्रीराम के पास आये (६. ८२, २०–२५)। युद्धविरत वानरों का कोलाहल सुनकर श्रीराम ने यह समझा कि हनुमान् अकेले ही भीषण युद्ध कर रहे हैं, अतः उन्होंने ऋक्षराज आदि को इनकी सहायता के लिये भेजा, परन्तु उसी समय उपस्थित होकर इन्होंने श्रीराम को सीता के वध का समाचार दिया (६. ८३, १–९)। इन्होंने जब राक्षस-सेना का भीषण संहार आरम्भ किया तो इन्द्रजित् इनका वध करने के उद्देश्य से अस्त्र-शस्त्रों से युक्त होकर इनके समक्ष उपस्थित हुआ (६. ८६, २०–२९)। लक्ष्मण इनकी पीठ पर आरूढ़ होकर इन्द्रजित् से युद्ध करने लगे (६. ८८, ४)। इन्होंने लक्ष्मण को अपनी पीठ से उतार कर स्वयं ही राक्षस-सेना का भीषण संहार किया (६. ८९, २५)। इन्द्रजित् का वध करने के पश्चात् लक्ष्मण इनका सहारा लेकर चलते हुये श्रीराम के पास आये और इनके पराक्रम की सराहना की (६. ९१, ३. १५)। जब लक्ष्मण के मूर्छित हो जाने पर श्रीराम विलाप करने लगे तो सुषेण के आदेश पर ये हिमालय से पुनः ओषधियुक्त पर्वत लाये और उन ओषधियों की गन्ध से लक्ष्मण स्वस्थ हो गये (६. १०१, ३०–४२)। श्रीराम ने रावण-वध के पश्चात् इनसे, विभीषण की आज्ञा लेकर, लङ्का में जाने और सीता को संदेश देने के लिये कहा (६. ११२, २१–२५)। ये सीता से बात चीत करके लौटे और श्रीराम को उनका संदेश सुनाया (६. ११३)। इन्होंने श्रीराम से सीता को दर्शन देने का निवेदन किया (६. ११४, १–४)। ये भी सुग्रीव तथा वानरों सहित श्रीराम के साथ लङ्का से प्रस्थित हुये (६. १२२, २३)। श्रीराम के आदेश पर इन्होंने निषादराज गुह तथा भरत को श्रीराम के आगमन की सूचना दी जिससे प्रसन्न होकर भरत ने इन्हें उपहार देने की घोषणा की (६. १२५)। इन्होंने भरत को श्रीराम, लक्ष्मण और सीता के वनवास से सम्बन्धित समस्त वृत्तान्त सुनाया (६. १२६)। जब भरत ने कुछ दूर इनके साथ चलने के बाद भी श्रीराम का दर्शन नहीं किया तो इनसे पूछा कि इन्होंने ठीक

समाचार दिया था अथवा नहीं, परन्तु उसी क्षण इन्होंने श्रीराम के पुष्पक विमान को दिखाकर भरत की शङ्का का निवारण किया (६. १२७, २०–२७)। 'सुग्रीवो हनुमांश्चैव महेन्द्रसदृशद्युती', (६. १२८, २१)। ये चारों समुद्रों, और पाँच सौ नदियों से श्रीराम के अभिषेक के लिये जल लाये (६. १२८, ५२. ५७)। सीता ने इन्हें कुछ भेंट देने का विचार करके श्रीराम से आज्ञा माँगी और उनकी स्वीकृति मिलते ही इन्हें वह हार दे दिया जो उन्हें श्रीराम ने दिया था (६. १२८, ७९–८२)। उस हार से ये अत्यन्त सुशोभित हो उठे (६. १२८, ८३)। श्रीराम ने अगस्त्य से कहा कि वालिन् तथा रावण हनुमान् के बल की समता नहीं कर सकते थे (७. ३५, २)। 'शौर्यं दाक्ष्यं बलं धैर्यं प्राज्ञता नयसाधनम्। विक्रमश्च प्रभावश्च हनूमति कृतालयाः ॥', (७. ३५, ३)। श्रीराम ने इनके पराक्रम का उल्लेख किया (७. ३५, ४–१०)। श्रीराम ने महर्षि अगस्त्य से पूछा कि वालिन् और सुग्रीव के वैर होने पर इन्होंने वलिन् को भस्म क्यों नहीं कर दिया ? (७. ३५, ११)। श्रीराम ने महर्षि अगस्त्य से इनके विषय में विस्तार से बताने का निवेदन किया (७. ३५, १२–१३)। "महर्षि अगस्त्य ने बताया कि बल और पराक्रम में ये अतुलनीय हैं। इनके पिता, केसरी, सुमेरु पर्वत पर राज्य करते थे, और वहीं उनकी पत्नी, अञ्जना, के गर्भ से वायु देव ने इन्हें जन्म दिया। जन्म के समय इनकी अङ्गकान्ति धान के अग्रभाग के समान पिङ्गल वर्ण की थी। एक दिन अञ्जना की अनुपस्थिति में भूख से व्याकुल हो ये बाल सूर्य को पकड़ने के लिये आकाश में उड़े। अपने इन पुत्र को सूर्य की ओर जाते देखकर वायु देव भी शीतल होकर इनके पीछे चले। इस प्रकार, पिता के बलसे उड़ते हुये ये सूर्य के समीप पहुँच गये। उसी दिन राहु भी सूर्य पर ग्रहण लगाना चाहता था परन्तु जब सूर्य के रथ के ऊपरी भाग में इन्होंने राहु का स्पर्श किया तो वह भाग कर इन्द्र की शरण में गया। राहु की बात सुनकर इन्द्र ने अपने वज्र से इन पर प्रहार किया जिससे ये एक पर्वत पर गिर पड़े और इनकी बाईं ठुड्डी (हनु) टूट गई। इनके इस प्रकार आहत होते ही वायु ने अपनी गति रोक कर देवों सहित समस्त जगत् को त्रस्त कर दिया और इन्हें लेकर एक गुफा में चले गये (७. ३५, १४–४९)।" "इन्द्रादि देवताओं सहित ब्रह्मा उस स्थान पर आये जहाँ वायु देवता अपने इन आहत पुत्र को गोद में लेकर बैठे थे। उस समय ब्रह्मा को वायु देवता पर अत्यन्त दया आई (७. ३५, ५९–६५)।" ब्रह्मा ने इन्हें पुनः जीवित कर दिया (७. ३६, ४)। ब्रह्मा ने देवताओं से इन्हें वर देने के लिये कहा जिस पर इन्द्र ने इन्हें अपने वज्र से अवध्य होने का वर देते हुये हनु टूट जाने के कारण इन्हें हनुमान् के नाम

से प्रसिद्ध होने का वर दिया (७. ३६, ८–१२)। इसी प्रकार सूर्य, वरुण, यम, कुबेर, शङ्कर, विश्वकर्मा तथा स्वयं ब्रह्मा ने भी इन्हें वर दिया (७. ३६, १३–२५)। वरों से सम्पन्न होकर ये महर्षियों के आश्रमों में जाकर उपद्रव करने लगे जिससे भृगु और अङ्गिरा के वंश में उत्पन्न महर्षियों ने कुपित होकर इन्हें यह शाप दिया कि इन्हें उस समय तक अपने बल का पता नहीं चलेगा जब तक कोई इन्हें उसका स्मरण नही करा देगा (७. ३६, २८–३४)। जब वालिन् और सुग्रीव में वैर हुआ तो इसी शाप के कारण ये अपने बल को नहीं जान सके (७. ३६, ४०–४२)। 'पराक्रमोत्साहमतिप्रतापसौशील्यमाधुर्यनयानयैश्च । गाम्भीर्यचातुर्यसुवीर्यधैर्यैर्हनूमतःकोऽप्यविकोऽस्ति लोके ॥ असौ पुनर्व्याकरणं ग्रहीष्यन्सूर्योन्मुखः प्रष्टुमनाः कपीन्द्रः । उद्यद्गिरेरस्तगिरिं जगाम ग्रन्थं महद्धारयनप्रमेयः ॥', (७. ३६, ४४–४५)। 'लोकक्षयेष्वेव यथान्तकस्य हनूमतः स्थास्यति कः पुरस्तात् ॥', (७. ३६, ४८)। श्रीराम ने सुग्रीव से इनकी प्रशंसा की (७. ३९, १६–१९ । श्रीराम ने सुग्रीव से इनपर प्रेम-दृष्टि रखने के लिये कहा (७. ४०, ३)। "इन्होंने श्रीराम से कहा : 'आपके प्रति मेरा महान् स्नेह सदैव बना रहे। आप में ही मेरी निश्चल भक्ति रहे। आपके अतिरिक्त और कहीं भी मेरा आन्तरिक अनुराग न हो।' (७. ४०, १५–१९)।" "श्रीराम ने इन्हें हृदय से लगाकर कहा : 'कपिश्रेष्ठ ! ऐसा ही होगा। संसार में मेरी कथा जब तक प्रचलित रहेगी तब तक तुम्हारी कीर्ति भी अमिट रहेगी और तुम्हारे शरीर में प्राण भी रहेंगे। तुमने मुझ पर जो उपकार किये हैं उनका मैं बदला नहीं चुका सकता।' (७. ४०, २०–२४)।" श्रीरामने इन्हें एक उज्ज्वल हार दिया (७. ४०, २५)। श्रीराम ने चिरकाल तक संसार में प्रसन्नचित्त विचरण करने के लिये जीवित रहने का इन्हें आशीर्वाद दिया। (७. १०८, ३०–३१)। इन्होंने श्रीराम से कहा कि जब तक श्रीराम की पावन कथा का प्रचार रहेगा ये पृथिवी पर ही रहेंगे (७. १०८, ३२–३३)।

२. हयग्रीव, दानवों के एक वर्ग का नाम है जिनका विष्णु ने वध किया था (४. ४२, २६)।

१. हर, एक वानर-यूथपति का नाम है। "भयंकर कर्म करनेवाले इस वानर की लम्बी पूंछ पर लाल, पीले, भूरे और सफ़ेद रंग के लम्बे-लम्बे बाल थे जो सूर्य की किरणों के समान चमक रहे थे। इसके पीछे किंकर-रूप सैकड़ों और हजारों यूथपति लङ्का पर आक्रमण करने के लिये सन्नद्ध थे (६. २७, २–५ ।"

२. हर, एक राक्षस का नाम है जो माली का पुत्र था। यह विभीषण का मन्त्री हुआ (७. ५, ४४)।

हरिजटा, एक राक्षसी का नाम है जिसकी आँखे बिल्ली के समान भूरी थीं। इसने रावण के पराक्रम का वर्णन करते हुये सीता को उसकी भार्या बन जाने के लिये समझाया (५. २३, ९–१३)।

हरिदश्व—देखिये **सूर्य** ।

हरी, क्रोधवशा की पुत्री का नाम है जिसने हरि (सिंह), तपस्वी वानर तथा गोलाङ्गूलों को उत्पन्न किया (३, १४, २१–२५)।

हर्यश्व, राजर्षि धृष्टकेतु के पुत्र का नाम है (१. ७१, ८)। इनका पुत्र मरु था (१. ७१, ९)।

हविष्यन्द, विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम है (१. ५७, ३)।

हस्तिनापुर, एक नगर का नाम है जिसके निकट वसिष्ठ के दूतों ने केकय जाते समय गङ्गा को पार किया था (२. ६८, ३१)।

हस्तिपृष्ठक, एक ग्राम का नाम है। केकय से लौटते समय भरत इससे होकर आये थे (२. ७१, १५)।

हस्तिमुख, पक राक्षस का नाम है। सीता की खोज करते हुये हनुमान् ने इसके भवन में प्रवेश किया (५. ६, २५)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १३)।

हहा, देव गन्धर्व का नाम है जिसका भरद्वाज मुनि मे भरत का सत्कार करने के लिये आवाहन किया था (२. ९१, १६)।

हार्दिक्य, एक दानव का नाम है जिसका विष्णु ने वध किया था (७. ६, ३५)।

हिमवान्, एक पर्वत का नाम है जो समस्त पर्वतों का राजा और धातुओं की निधि है (१. ३५, १४)। "इसकी पत्नी का नाम मेना था जिसके गर्भ से इसने दो पुत्रियाँ, गंगा और उमा, उत्पन्न कीं (१. ३५, १५–१६)।" "देवताओं के आग्रह पर इसने त्रिभुवन का हित करने की इच्छा से अपनी पुत्री, गङ्गा, को देवताओं को दे दिया। इसने अपनी पुत्री उमा का रुद्र के साथ विवाह किया (१. ३५, १७–२१)।" देवताओं को उमा के शाप से पीडित देखकर उमा सहित शिव इसके उत्तर भाग के एक शिखर पर आकर तपस्या करने लगे (१. ३६, २६–२७)। गंगा इनकी ज्येष्ठ पुत्री थीं (१. ४१, १९; ४३, ४)। अपनी पत्नी को शाप देने के पश्चात् गौतम मुनि इसके शिखर पर आकर तपस्या करने लगे (१. ४८, ३४)। जब वसिष्ठ ने विश्वामित्र की सेना का संहार कर दिया तो खिन्न होकर विश्वामित्र इसके पार्श्वभाग में आकर तपस्या करने लगे (१. ५५, १२)। "दुन्दुभि नामक दैत्य से युद्ध करने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हुये समुद्र ने उससे

कहा : 'विशालवन में जो पर्वतों का राजा और भगवान् शंकर का श्वसुर हैं, तपस्वी जनों का सबसे बड़ा आश्रय और संसार में 'हिमवान्' नाम से विख्यात है, जहाँ से जल के बड़े-बड़े स्रोत प्रगट हुए हैं, तथा जहाँ बहुत सी कन्दरायें और झरनें हैं, वह गिरिराज हिमवान् ही तुम्हारे साथ युद्ध करने में समर्थ है। वह तुम्हें अनुपम प्रीति प्रदान कर सकता है।' इस प्रकार समुद्र के कथनानुसार दुन्दुभि इसके पास आया परन्तु इसने प्रगट होकर अपने को युद्धकर्म में अकुशल बताया जिसे सुनकर क्रुद्ध हुये दुन्दुभि ने अन्य युद्धनिपुण वीर का नाम पूछा। तदनन्तर इसने दुन्दुभि को वालिन् के पास जाने का परामर्श दिया (४. ११, १२–२३)।" इसकी बात सुनकर दुन्दुभि तत्काल वालिन् की किष्किन्धा पुरी में जा पहुँचा (४. ११, २४)। सुग्रीव ने यहाँ निवास करने वाले वानरों को भी आमन्त्रित करने के लिये कहा (४. ३७, २)। यहाँ से एक नील की संख्या में वानर सुग्रीव के पास उपस्थित हुये (४. ३७, २३)। वानरों ने इस पर्वत पर स्थित उस विशाल वृक्ष को देखा जो शंकर की यज्ञशाला में स्थित था (४. ३७, २७)।

हिरण्यकशिपु, एक असुर का नाम है जिसका विष्णु ने वध किया था (७. ६, ३४; २२, २४)।

हिरण्यगर्भ—देखिये **सूर्य**।

हिरण्यनाभ—देखिये **मैनाक**।

हिरण्यरेतस्—देखिये **सूर्य**।

हुताशन के दो पुत्रों, उल्कामुख और अनङ्ग, को सीता की खोज के लिये सुग्रीव ने दक्षिण दिशा में भेजा (४. ४१, ४)।

हूहू, एक देव-गन्धर्व का नाम है जिनका, भरत का स्वागत करने के लिये महर्षि भरद्वाज ने आवाहन किया (२. ९१, १६)।

हेति—ब्रह्मा ने आरम्भ में जल की सृष्टि करने के पश्चात् प्राणियों की सृष्टि की। उन प्राणियों से जब उन्होंने जल की रक्षा करने के लिये कहा तो उनमें से कुछ ने जल का यक्षण करने तथा अन्य ने उसकी रक्षा करने की बात कही। जिन्होंने यक्षण की बात कही वे 'यक्ष', तथा जिन्होंने रक्षा की बात कहीं वे 'राक्षस' कहलाये। इन्हीं आदि राक्षसों में से एक का नाम हेति, और दूसरे का प्रहेति था। हेति ने काल की कुमारी भगिनी, भया, के साथ विवाह कर के उसके गर्भ से एक पुत्र, विद्युत्केश, को जन्म दिया। हेति ने अपने इस पुत्र का सन्ध्या-पुत्री सालकटङ्कटा के साथ विवाह कर दिया (७. ४, १२–२०)।

हेमगिरि, सिन्धुनद और समुद्र के संगम पर स्थित सौ शिखरों से युक्त

एक महान् पर्वत का नाम है। इसके क्षेत्र में सीता की खोज के लिए सुग्रीव ने सुषेण आदि वानरों को भेजा था (४. ४२, १४)। देखिये **सोमगिरि**।

हेमचन्द्र, विशाल के पुत्र का नाम है (१. ४७, १२)।

हेमन्त, एक ऋषि का नाम है जिसका लक्ष्मण ने विस्तारपूर्वक वर्णन किया (३. १६, १–३६)।

हेममाली, एक राक्षस का नाम है जो श्रीराम के विरुद्ध युद्ध के लिये खर के साथ आया (३. २३, ३३)। इसने खर के साथ श्रीराम पर आक्रमण किया (३. २६, २७)। श्रीराम ने इसका वध कर दिया (३. २६, २९–३५)।

हेमा, एक अप्सरा का नाम है। महर्षि भरद्वाज ने भरत का आतिथ्य-सत्कार करने के लिए इसका आवाहन किया था (२. ९१, १७)। "यह मय दानव की प्रेयसि थी। देवेश्वर इन्द्र ने मय का वध करके ऋक्षबिल में स्थित उसके समस्त भवन आदि को हेमा को प्रदान कर दिया। तदन्तर हेमा ने अपनी सखी स्वयंप्रभा को उस भवन की रक्षा के लिए नियुक्त कर दिया (४. ५१, १४–१७)।" "एक समय देवताओं ने इसे मय दानव को समर्पित कर दिया। मय इसके साथ सहस्र वर्षों तक रहा किन्तु एक दिन यह देवों के कार्य से स्वर्ग चली गई और फिर नहीं लौटी। मय ने इसके लिये एक सुवर्ण का नगर निर्मित किया जहाँ इसके चले जाने के पश्चात् वह वियोग में निवास करता था। इसने मय के दो पुत्रों तथा एक पुत्री, मन्दोदरी, को जन्म दिया (७. १२, ६–१२.१८)।"

हैहय, एक देश का नाम है जहाँ के राजा, असित के साथ शत्रुता रखते थे (१. ७०, २७; २. ११०, १५)। 'अमात्याः क्षिप्रमाख्यात हैहयस्य नृपस्य वै,' (७. ३२, २६)। 'हैहयाधिपयोधानां वेग आसीत्सुदारुणः', (७. ३२, ३५)। 'हहैयाधिपः', (७. ३२, ४६; ३३, ६)।

ह्रादिनी, एक नदी का नाम है जिसे केकय से लौटते समय भरत ने पार किया था (२. ७१, २)।

ह्रस्वकर्ण, एक राक्षस का नाम है जिसके भवन मे सीता की खोज करते हुये हनुमान् ने प्रवेश किया (५. ६, २४)। हनुमान् ने इसके भवन में आग लगा दी (५. ५४, १२)।

परिशिष्ट

(परिशिष्टों में दिये गये प्रत्येक नाम वाल्मीकिरामायण में अनेक स्थानों पर आते हैं, परन्तु उनके सब सन्दर्भों का उल्लेख अनावश्यक समझ कर केवल एक-एक स्थान का उल्लेख किया गया है)।

परिशिष्ट–१

वाल्मीकीय रामायण में मिलनेवाले पशु-पक्षियों के नाम

अत्यूह : २. १०३, ४३
अर्जुन : ३. ७५, १२
इन्द्रगोप : ४. २८, २४
ईहामृग : ६. ९९, ४२
उलूक : २. ११४, २
ऊँट : ७. ७, ४७
ऋक्ष : २. २५, १९
एकशल्य : ५. ११, १७
कङ्क : ३. २३, ९
कच्छप : ७. ७, ४८
कादम्ब : ३. ११, ६
कारण्डव : २. १०३, ४३
कीर : ३. ७५, १२, गीता प्रेस सं०
कुकुट : ५. ११, १५
कुटज : ४. २८, १४
कूर्म : ४. १७, ३७
कृकल : ५. ११, १७
कोयष्टिक : ३. ७५, १२
क्रौञ्च : २. १०३, ४३
खर : ७. ७. ४७
गज : २. ११४, २१
गवय : २. १०३, ४२
गाय : २. ११४, ९
गृध्र : ३. १४, १
गोकर्ण : २. १०३, ४२
गोधा : ४. १७, ३७
गोमायु : ३. २३, ९
गोलाङ्गूल : ३. १४, २५
गोह : ३. ४७, २३, गीता प्रेस संस्करण
चक्रवाक : ३. ११, ३
चमर : ३. १४, २३
नलमीन : ३. ७३, १४
पन्नग : ३. १४, २८
पुंस्कोकिल : २. १०३, ४३
प्लव : २. १०३, ४३
बिडाल : २. ११४, २
भास : ३. १४, १८
मकर : ६. ९९, ४३
मयूर : ३. ४७, ४७
महिष : २. २५, १९
मृग : २. ९४, ७
मेष : ५. ११, १७, गीता प्रेस संस्करण
रुरु : ३. ४७, २३, गीता प्रेस संस्करण
रोहित : ३. ७३, १४
वक्रतुण्ड : ३. ७३, १४, गीता प्रेस सं०
वराह : २. १०३, ४२
वाध्रीणस : ५. ११, १६
वानर : ३. ११, ७७
वायस : ३. ४७, ४७
वृषभ : २. ११४, ९

व्याघ्र : २. २५, १९
शल्य : ५. ११, १६
शल्यक : ४. १७, ३७
शश : ४. १७, ३७
शशक : ५. ११, १७
शिशुमार : ७. ६, ४७
शृगाल : ६. ९९, ४१
श्येन : ३. १४, १८
श्वान : ६. ९९, ४३
सारस : ३. ११, ३
सिंह : २. २५, १९
सृमर : २. १०३, ४२
हंस : २. १०३, ४३

परिशिष्ट–२

वाल्मीकीय रामायण में मिलनेवाले पेड़-पौधों के नाम

अगुरु : २, ११४, २०
अग्निमुख : ३. ७३, ४
अङ्कोल : ४. १. ८०
अतिमुक्तक : ४. १७, १७
अरविन्द : ३. ७५, २१
अरिष्ट : २. ९४, ९
अशोक : ३. ७३, ४
अश्वकर्ण : २. ९९, १९
अश्वत्थ : ३. ७३, ३
असन : २. ९४, ८
आम : २. ९४, ८
आँवला : २. ९४, ९
इङ्गुदी : २. १०४, ८
उत्पल : ३. ७५, २१
उद्दालक : ४. १, ८२

कदम्ब : २. ९४, ९
कदली : ३. ३५, १३
करञ्ज : ६. ४, ७५
करवीर : ३. ७३, ४
करीर : ६. २२, ५८
कर्णिका : ३. ६०, २०
कर्पूर : ४. २८, ८
काश्मीर : २. ९४, ९
किंशुक : ३. १५, १८
कुन्द : ३. ७५, २४
कुमुद : ४. ३०, ४८
कुरण्ट : ४. १, ८०
कुरव : ३. ६०, २१, गीता प्रेस सं०
कृतमाल : ४. २७, १८
केतकी : ३. १५, १७
कोविदार : २. ९६, १८
खदिर : ३. १५, १८
खर्जूर : ३. १४, १६

गोधूम : ३. १६, १६
चन्दन : २. ११४, २०
चम्पक : ३. १५, १७
चिरिबिल्व : ३. ११, ७५
चूर्णक : ४. १, ८०
जम्बू : २. ९४, ८
जलबेंत : ४. २७, १८

तमाल : ३. १५, १६
ताल : २. ९९, १९
तिनिश : २. ९४, ८
तिन्दुक : २. ९४, ८
तिमिद : ४. २७, १८
तिलक : २. ९४, ९

दाडिम : ६. २२, ५८
धन्वन : २. ९४, ९
धव : २. ९१, ८
नक्तमाल : ३. ७३, ४
नागवृक्ष : ३. ७३, ४

नारिकेल : ३. ३५, १३
निचुल : ३. ७५, २४
नीप : ४. २७, १८
नील : ३. ७३, ४
नीलकमल : ३. ७५, २०
नीलाशोक : ६: ४, ८४
नीवार : ३, ११, ७५
न्यग्रोध : ३. ७३, ३

पद्मक : ४. १, ७९
पनस : २. ९४, ८
पर्णास : ३. १५, १८ गीता प्रेस से०
पाटल : ३. १५. १८
पारिभद्र : ३. ७३, ४
पिप्पली : ३. ११, ३९
पुन्नाग : ३. १५, १६
प्रियङ्गु : ७. २६, ५
प्रियाल : २. ९४, ८
प्लक्ष : ३. ७३, ३

बकुल : ४. १, ७८
बन्धुजीव : ४. ३०, ६२
बीजक : २. ९४, ९,
बेर : २. ९४, ९
वेल : २. ९४, ८
बेंत : २. ९४, ९
भंडीर : ३. ७५, २४
भव्य ; २. ९४, ८

मधूक : २. ९४, ९
मन्दार : ७. २६, ५
मल्लिका : ४. २, ७६
माधवी : ४. १, ७७
मालती : ३. ७५, २४
मुक्तक : ३. ७५, २४
मुचुकुन्द : ४. १, ८१

यव : ३. १६, १६

रक्त कुरबक : ४. १, ८२
रक्त चन्दन : ३. ७३, ४
रञ्जक : ६. ४, ८२

लकुच ३. १५, १८
लोध्र २. ९४, ८

वञ्जुल : ३. ११, ७५
वट : ३. ७५, २३
वरण : २. ९४, ९
वारुणी : २. ११४, २०
वासन्ती : ४. १, ७७
विभीतक : ६. ४, ५८
वेणु : २. ९४, ८

शमी : ३. १५, १८
शाल्मली : २. ६८, १९
शिरीष : ४. १, ८२
शिंशपा : ४. १, ८२
सप्तपर्ण : ३. ७५, २४
सरल : ४. २७, १७
सर्ज : ४. २७, १०
साल (शाल भी) : २. ९६, ११
सिन्दुवार : ४. १, ७७
सौगन्धिक : ३. ७५, २०
स्थल बेंत : ४. २७, १८
स्यन्दन : ३. १५, १८

हिन्ताल : ४. १, ८३

परिशिष्ट–३

वाल्मीकीय रामायण में मिलनेवाले अस्त्र-शस्त्रों के नाम

अञ्जलिक : ६. ४५, २३
अलक्ष्य : १. २८, ५
अवाङ्मुख : १. २८, ४
अशनि : १. २७, ९
आग्नेयास्त्र (शिखरास्त्र भी) :
 १. २७, १०
आवरण : १. २८, ९

ऋषि : ६. ३१, २२

ऐन्द्रचक्र : १. २७, ५
ऐषीकास्त्र : १. २७, ६

कङ्काल : १, २७, १२
कपाल : १. १७, १२
कर्णि : ३. २६, ३१
कामरुचि : १. २८, ९
कामरूप : १. २८, ९
कामुक : ३. २२, १९
कालचक्र : १. २७, ५
कालपाश : १. २७, ८
किङ्किणी : १. २७, १२
क्रौञ्चास्त्र : १. २७, ११

क्षुर : ३. २६, ७
क्षुरप्र : ६. ७६, ६

खड्ग : ३. २२, १८

गदा (मोदकी) : १. २७, ७
गदा (शिखरी) : १. २७, ७

जृम्भक : १. २८, ९
ज्योतिष : १. २८, ६

तामस : १. २७, १७
तेजःप्रभ : १. २७, १८
तोमर : ३. २२, १८
त्रिशूल : १. २७, ६

दण्ड : ६. ३१, २२
दण्डचक्र : १. २७, ५
दशशीर्ष : १. २८, ५
दशाक्ष : १. २८, ५
दारण : १. ५६, ८
दारुण : १. २७, १९
दुन्दुनाभ : १. २८, ६
दृढनाभ : १. २८, ५
दैत्यनाशक : १. २८, ६

धन : १. २८, ८
धनुष : ३. २२, १९
धर्मपाश : १. २७, ८
धान्य : १. २८, ८
धृतिमाली : १. २८, ७
धृष्ट : १. २८, ४

नन्दन : १. २७, १३
नाराच : ३. २८, १०
नारायणास्त्र : १. २७, ९
नालीक : ३. २८, १०
निष्कलि : १. २८, ७
नैरास्य : १. २८, ६

पट्टिश : १. ५४, २२
पद्मनाभ : १. २८, ६
पन्थान : १. २८, ९
परवीर : १ २८, ८
पराङ्मुख : १. २८, ४
परिघ : ३. २२, १९
परशु : ३. २२, १८
पाशुपत : १ ५६, ६
पित्र्य : १. २८..८
पिनाक : १. २७, ९
प्रतिहारतर : १. २८, ४
प्रशमन : १. २७, १४
प्रस्वापन : १. २७, १४
प्रास : ३. २५, ८
ब्रह्मशिरस् : १. २७, ६
ब्रह्मास्त्र : १. २७, ६
भगास्त्र : १. २७, १९
भिन्दिपाल : ६. ५३, ८
मल्ल : ६. ४५, २३
मकर : १. २८, ८
मन्थन : १. ५६, १०
महानाभ : १. २८, ६
महाबाहु : १. २८, ७
मादन : १. २७, १५
मानवास्त्र : १. २७, १६, गीता प्रेस सं०
मायामय : १. २७, १८
मुद्गर : ३. २५, १२
मुसल : १. २७, १२
मोह : १. २८, ९
मोहन : १. २७, १४
मोहनास्त्र : १. २७, १६
मौसल : १. २७, १७
रति : १. २८, ८
रभस : १. २८, ४
रुचिर : १. २८, ७
रौद्र : १. ५६, ६

लक्ष्य : १. २८, ५

वज्रास्त्र : १. २७, ६
वत्सदन्त : ३. ४५, २३
वरुण : १. २८, ९
वर्षन : १. २७, १५
वायव्यास्त्र : १. २७, १०
वारुणपाश : १ २७, ८
विकर्णि : ३, २८, १०
विधूत : १. १८, ८
विनिद्र : १. २८, ६
विपाठ : ६. ७६, ६
विमल : १. २८, ६
विरुच : १. २८, ७
विलापन : १. २७, १५
विष्णुचक्र : १. २७, ५
वृत्तिमान् : १. २८, ७
शकुन : १. २८, ६
शतघ्नी : ६ ८६, २२
शतवक्त्र : १. २८, ५
शतोदर : १ २८, ५
शल्य . ६ ७६, ६
शिलीमुख : ६. ७६, ६
शिशिर : १. २७, १९
शीतेषु : १. २७, १९
शुचिबाहु : १. २८, ७
शूल : ७ ६३, २५
शोषण : १. २७, १५

संतापन : १. २७, १५
संवर्त : १. २७, १७
सत्य : १. २७, १८
सत्यकीर्ति : १. २८, ४
सत्यवान् : १. २८, ४
सर्पनाथ : १. २८, ९
सार्चिमाली : १. २८, ७
सिंहदंष्ट्र : ६. ४५, २३
सुनाभ : १. २८, ५
सौमनस : १. २७, १७
सौम्य : १. २७, १४
स्वनाभ : १. २८, ६
हयशिरस् : १. २७, ११

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

३.२
~~२८८(२)~~ पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पुस्तक-वितरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित १५वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५ पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा।

४५,८६२

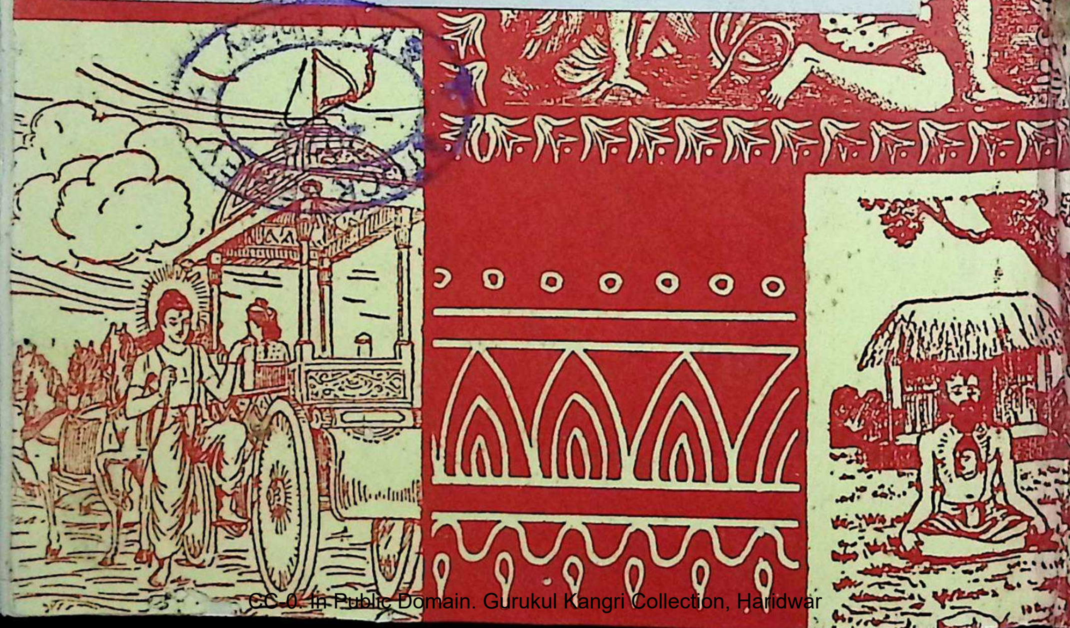

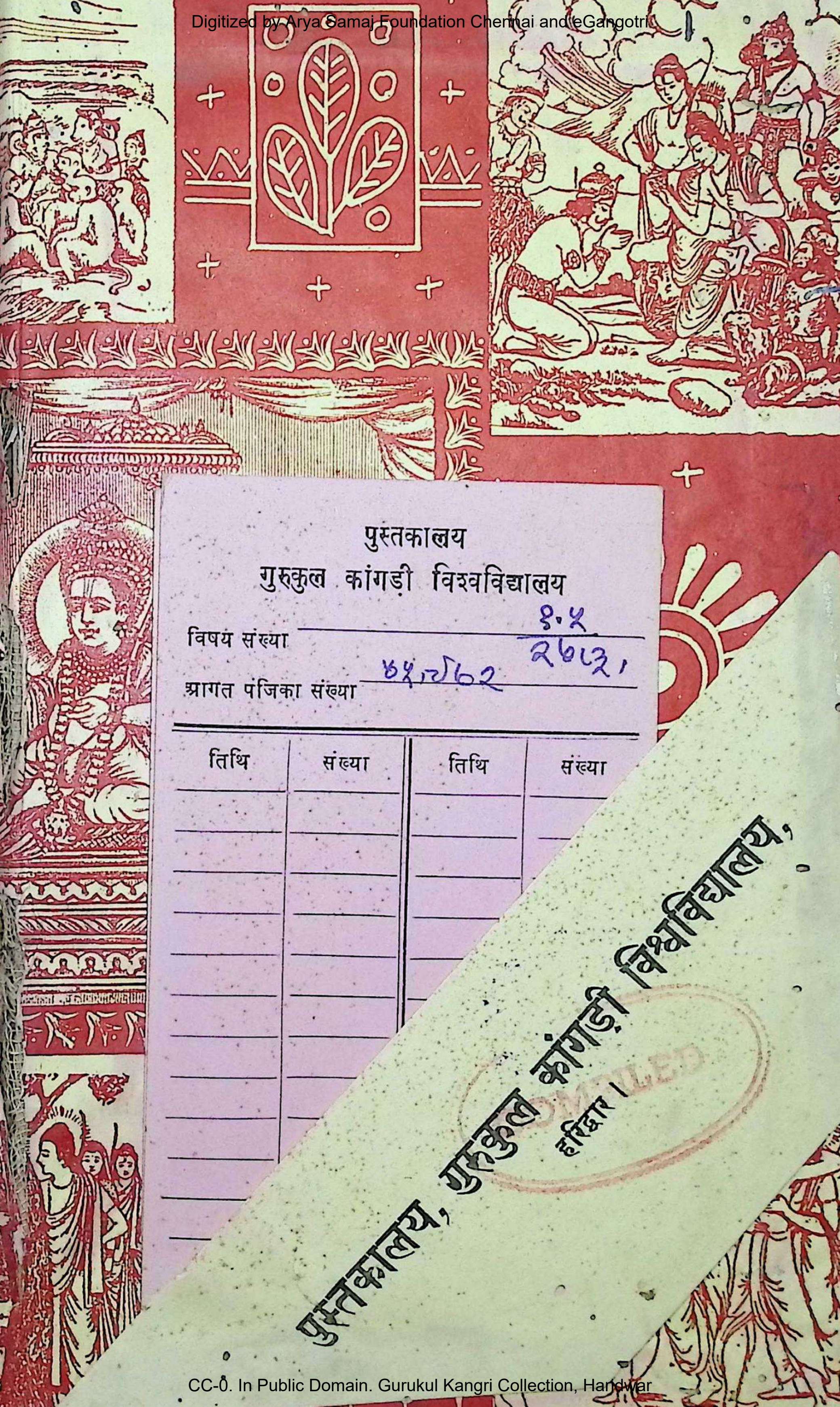

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

विषय संख्या ९.५ / २६८३,
आगत पंजिका संख्या ४५,७६२

तिथि	संख्या	तिथि	संख्या

COMPILED

पुस्तकालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,
हरिद्वार।